नमस्ते जी

ऋषि दयानंद द्वारा प्रचारित वैदिक विचारधारा ने सैकड़ो हृदय को क्रान्तिकारी विचारो से भर दिया | जो वेद उस काल में विचारो से भी भुला दिए गए थे | ऋषि दयानंद ने उन हृदयों को वेदों के विचारो से ओतप्रोत कर दिया और देश में वेद गंगा बहने लगी | ऋषि के अपने अल्प कार्य काल में समाज की आध्यात्मिक, सामाजिक, और व्यक्तिगत विचार धारा को बदल के रख दिया | ऋषि के बाद भी कही वर्षो तक यह परिपाटी चली पर यह वैचारिक परिवर्तन पुनः उसी विकृति की और लौट रहा है | और इसी विकृति को रोकने के लिए वैदिक विद्वान प्रो० राजेंद्र जी जिज्ञासु के सानिध्य में "पंडित लेखराम वैदिक मिशन" संस्था का जन्म हुआ है | इस संस्था का मुख्य उद्देश्य वेदों को समाज रूपी शरीर के रक्त धमनियों में रक्त के समान स्थापित करना है | यह कार्य ऋषि के जीवन का मुख्य उद्देश्य था और यही इस संस्था का भी मुख्य उद्देश्य है | संस्था के अन्य उद्देश्यों में सम्लित है साहित्य का सृजन करना | जो दुर्लभ आर्य साहित्य नष्ट होने की और अग्रसर है उस साहित्य को नष्ट होने से बचाना और उस साहित्य को क्रम बद्ध तरीके से हमारे भाई और बहनों के समक्ष प्रस्तुत करना जिससे उनकी स्वाध्याय में रूचि बढ़े और वे तुलनात्मक अध्यन कर सकें जिससे उनकी स्वधर्म में रूचि बढ़े और अन्य मत मतान्तरो की जानकारी उन्हें प्राप्त हो और वे विधर्मियो द्वारा लगाये जा रहे विभिन्न आक्षेपों का उत्तर दे सकें विधर्मियो से स्वयं भी बचें और अन्यो की भी सहयता करें | संस्था का उद्देश्य है समाज के समक्ष हमारे गौरव शाली इतिहास को प्रस्तुत करना जिससे हमारा रक्त जो ठंडा हो गया है वह पुनः गर्म हो सके और हम हमारे इतिहास पुरुषो का मान सम्मान करें और उनके बताये गये नीतिगत मार्ग पर चलें | संस्था का अन्य उद्देश्य गौ पालन और गौ सेवा को बढ़ावा देना जिससे पशुओ के प्रति प्रेम, दया का भाव बढ़े और इन पशुओ की हत्या बंद हो, समाज में हो रहे परमात्मा के नाम पर पाखण्ड, अन्धविश्वास, अत्याचार को जड़ से नष्ट करना और परमात्मा के शुद्ध वैदिक स्वरुप को समाज के समक्ष रखना, हमारे युवा शक्ति को अनेक भोग, विबिन्न व्यसनों, छल, कपट इत्यादि से बचाना |

इन कार्यो को हम अकेले पूरा करने का सामर्थ्य नहीं रखते पर, यह सारे कार्य है तो बड़े विशाल और व्यापक पर अगर संस्था को आप का साथ मिला तो बड़ी सरलता से पूर्ण किये जा सकते है | हमारा समाजिक ढाचा ऐसा है की हम प्रत्येक कार्य के लिए एक दुसरे पर निर्भर है | आशा करते है की इस कार्य में आप हमारी तन, मन से साहयता करेंगे | संस्था द्वारा चलाई जा रही वेबसाइट www.aryamantavya.in और www.vedickranti.in पर आप संस्था द्वारा स्थापित संकल्पों सम्बन्धी लेख पड़ सकते है और भिन्न-भिन्न वैदिक साहित्य को निशुल्क डाउनलोड कर सकते है | कृपया स्वयं भी जाये और अन्यो को भी सूचित करे यही आप की हवी होंगी इस यज्ञ में जो आप अवश्य करेंगे यही परमात्मा से प्रार्थना करते है |

जिन सज्जनों के पास दुर्लभ आर्य साहित्य है एवं वे उसे संरक्षित करने में संस्था की सहायता करना चाहते हैं वो कृपया निम्न पते पर सूचित करें

ptlekhram@gmail.com

धन्यवाद् !

पंडित लेखराम वैदिक मिशन

आर्य मंतव्य टीम

॥ओ३म्॥

अथ चतुर्थमण्डलारम्भः॥

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद्भद्रं तन्न आ सुव॥ ऋ०५.८२.५॥

अथ चतुर्थमण्डले विंशत्यृचस्य प्रथमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। १, ५, २० अग्निः। २-४ अग्निर्वा वरुणश्च देवता। १ स्वराडतिशक्वरी छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २ अतिजगती छन्दः। निषादः स्वरः। ३ अष्टिश्छन्दः। मध्यमः स्वरः। ४, ६ भुरिक्पङ्क्तिः। पञ्चमः स्वरः। ५, १८, २० स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ७, ९, १५, १७, १९ विराट् त्रिष्टुप्। ८, १०, ११, १२, १६ निचृत्त्रिष्टुप्। १३, १४ त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ वाणीविषयमाह॥

अब चतुर्थ मण्डल में बीस ऋचा वाले प्रथम सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में वाणी विषय को कहते हैं॥

त्वां ह्यग्ने सदमित्समन्यवो देवासो देवमरतिं न्येरिर इति क्रत्वा न्येरिरे।
अमर्त्यं यजत मर्त्येष्वा देवमादेवं जनत प्रचेतसं विश्वमादेवं जनत प्रचेतसम्॥१॥

त्वाम्। हि। अग्ने। सदम्। इत्। सऽमन्यवः। देवासः। देवम्। अरतिम्। निऽएरिरे। इति। क्रत्वा। निऽएरिरे। अमर्त्यम्। यजत। मर्त्येषु। आ। देवम्। आऽदेवम्। जनत। प्रऽचेतसम्। विश्वम्। आऽदेवम्। जनत। प्रऽचेतसम्॥१॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) (**हि**) यतः (**अग्ने**) विद्वन् (**सदम्**) गृहमिव स्थितिपदम् (**इत्**) एव (**समन्यवः**) मन्युना क्रोधेन सह वर्त्तमानाः (**देवासः**) विद्वांसः (**देवम्**) दिव्यगुणप्रदम् (**अरतिम्**) प्रापणीयम् (**न्येरिरे**) निश्चयेन प्राप्नुयुः (**इति**) अनेन प्रकारेण (**क्रत्वा**) (**न्येरिरे**) प्रेरयन्ति (**अमर्त्यम्**) मरणधर्मरहितम् (**यजत**) पूजयत (**मर्त्येषु**) मरणधर्मेषु (**आ**) समन्तात् (**देवम्**) देदीप्यमानम् (**आदेवम्**) समन्तात् प्रकाशकम् (**जनत**) प्रसिद्धया प्रकाशयत (**प्रचेतसम्**) प्रकृष्टप्रज्ञायुक्तम् (**विश्वम्**) सर्वम् (**आदेवम्**) समन्ताद्विद्याप्रकाशयुक्तम् (**जनत**) उत्पादयत (**प्रचेतसम्**) विविधप्रज्ञानयुक्तम्॥१॥

अन्वयः-हे अग्ने! ये समन्यवो देवासो ह्यरतिं देवं सदं त्वामिन्न्येरिरे तस्मादिति क्रत्वा माञ्च न्येरिरे तममर्त्येष्वमर्त्यं यजत। आदेवमादेवं प्रचेतसं जनत इति क्रत्वा विश्वमा देवं प्रचेतसमाजनत॥१॥

भावार्थः-यद्यदध्यापको राजा च भ्रुकुटीं कुटिलां कृत्वा विद्यार्थिनोऽमात्यप्रजाजनाँश्च प्रेरयेत्तर्हि ते सुसभ्या विद्वांसो धार्मिकाश्च जायन्ते। ये मरणधर्म्येष्वमरणधर्माणं स्वप्रकाशरूपं परमात्मानमुपास्य सर्वान् मनुष्यान् प्राज्ञान् विदुषो जनयन्ति त एव सर्वदा सत्कर्त्तव्याः सुखिनश्च भवन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान् पुरुष! जो **(समन्यवः)** क्रोध के सहित वर्त्तमान **(देवासः)** विद्वान् लोग **(हि)** जिससे कि **(अरतिम्)** पहुंचाने योग्य **(देवम्)** उत्तम गुणों के और **(सदम्)** गृह के तुल्य स्थिति के देनेवाले **(त्वाम्)** आपकी **(इत्)** ही **(न्येरिरे)** प्रेरणा करते हैं, इससे **(इति)** इस प्रकार **(क्रत्वा)** करके **(न्येरिरे)** मुझे भी निश्चयकर प्राप्त होवें और उस **(मर्त्येषु)** मरणधर्मवालों में **(अमर्त्यम्)** मरणधर्म से रहित परमात्मा की **(यजत)** पूजा करो और **(आदेवम्)** सब प्रकार विद्या आदि के प्रकाश से युक्त **(आदेवम्)** सब प्रकार देदीप्यमान **(प्रचेतसम्)** उत्तम ज्ञान से युक्त **(जनत)** उत्पन्न करो, ऐसा करके **(विश्वम्)** सब के **(आदेवम्)** सब प्रकार प्रकाश और **(प्रचेतसम्)** उत्तम ज्ञानयुक्त **(जनत)** उत्पन्न करो॥ १॥

भावार्थः-जो अध्यापक और राजा भौंहें टेढ़ी करके विद्यार्थी मन्त्री और प्रजाजनों को प्रेरणा करें तो उत्तम श्रेष्ठ विद्वान् और धार्मिक होते हैं। जो मरणधर्म वालों में मरणधर्मरहित अपने प्रकाशस्वरूप परमात्मा की उपासना करके सब मनुष्यों को बुद्धिमान् विद्वान् करते हैं, वे ही सब काल में सत्कार करने योग्य और सुखी होते हैं॥ १॥

वाणीविषयमाह

अब इस अगले मन्त्र में वाणी के विषय को कहते हैं॥

स भ्रातरं वरुणमग्न आ ववृत्स्व देवाँ अच्छा सुमती यज्ञवनसं ज्येष्ठं यज्ञवनसम्।

ऋतावानमादित्यं चर्षणीधृतं राजानं चर्षणीधृतम्॥ २॥

सः। भ्रातरम्। वरुणम्। अग्ने। आ। ववृत्स्व। देवान्। अच्छ। सुऽमती। यज्ञऽवनसम्। ज्येष्ठम्। यज्ञऽवनसम्। ऋतऽवानम्। आदित्यम्। चर्षणिऽधृतम्। राजानम्। चर्षणिऽधृतम्॥ २॥

पदार्थः-**(सः)** **(भ्रातरम्)** प्रियं बन्धुमिव **(वरुणम्)** श्रेष्ठं जनम् **(अग्ने)** **(आ)** **(ववृत्स्व)** समन्तात् वर्त्तस्व **(देवान्)** धार्मिकान् विदुषः **(अच्छ)** सम्यक् **(सुमती)** शोभनया प्रज्ञया **(यज्ञवनसम्)** यज्ञस्य विद्याव्यवहारस्य विभाजकम् **(ज्येष्ठम्)** विद्यावृद्धम् **(यज्ञवनसम्)** राज्यव्यवहारस्य विभक्तारम् **(ऋतावानम्)** सत्यस्य सम्भक्तारम् **(आदित्यम्)** सूर्यमिव वर्त्तमानम् **(चर्षणीधृतम्)** मनुष्याणां धर्त्तारं विद्वद्भिर्धृतं वा **(राजानम्)** प्रकाशमानं नरेशम् **(चर्षणीधृतम्)** चर्षणीनां सत्याऽसत्यविवेचकानां धर्त्तारम्॥ २॥

अन्वयः:-हे अग्ने! स त्वं भ्रातरमिव वरुणं सुमती यज्ञवनसं ज्येष्ठमध्यापकं यज्ञवनसं राजानं यज्ञवनसं चर्षणीधृतमादित्यमिव ऋतावानं राजानं चर्षणीधृतमध्यापकमुपदेशकं वा देवानच्छा ववृत्स्व॥२॥

भावार्थः:-हे अध्यापक राजन् वा! त्वं श्रेष्ठाञ्च्छ्रोत्रीनमात्यान् वा सुमत्या सत्याचरणेन संयोज्य सङ्गतानि कर्माणि जोषय सूर्य्यवद्विद्यान्यायप्रकाशं च सततं कुरु॥२॥

पदार्थः:-हे **(अग्ने)** विद्वन्! **(सः)** वह आप **(भ्रातरम्)** प्रियबन्धु के सदृश **(वरुणम्)** श्रेष्ठजन को **(सुमती)** श्रेष्ठ बुद्धि से **(यज्ञवनसम्)** विद्याव्यवहार के विभाग करनेवाले **(ज्येष्ठम्)** विद्या से वृद्ध अध्यापक **(यज्ञवनसम्)** राज्यव्यवहार के विभाग करनेवाले **(राजानम्)** प्रकाशमान नरेश विद्याव्यवहार के विभाग करने वाले **(चर्षणीधृतम्)** मनुष्यों के धारणकर्त्ता वा विद्वानों से धारण किये गए **(आदित्यम्)** सूर्य के सदृश वर्त्तमान **(ऋतावानम्)** सत्य के विभागकर्त्ता प्रकाशमान [राजा] **(चर्षणीधृतम्)** सत्यासत्य की विवेचना करनेवालों के धारण करने वाले अध्यापक वा उपदेशक **(देवान्)** और धार्मिक विद्वानों को **(अच्छ)** अच्छे प्रकार **(आ, ववृत्स्व)** सब ओर से वर्त्तिये अर्थात् उनके अनुकूल वर्त्तमान कीजिये॥२॥

भावार्थः:-हे अध्यापक वा राजन्! आप श्रेष्ठ श्रोतृजन वा मन्त्रियों को उत्तम मति और सत्य आचरण से संयुक्त करके संगत कर्मों का सेवन कराओ और सूर्य्य के सदृश विद्या न्याय का प्रकाश निरन्तर करो॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उस ही विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सखे सखायमभ्या ववृत्स्वाशुं न चक्रं रथ्येव रंह्यास्मभ्यं दस्म रंह्या।

अग्ने मृळीकं वरुणे सचा विदो मरुत्सु विश्वभानुषु।

तोकाय तुजे शुशुचान शं कृध्यस्मभ्यं दस्म शं कृधि॥३॥

सखे। सखायम्। अभि। आ। ववृत्स्व। आशुम्। न। चक्रम्। रथ्याऽइव। रंह्या। अस्मभ्यम्। दस्म। रंह्या। अग्ने। मृळीकम्। वरुणे। सचा। विदः। मरुत्ऽसु। विश्वऽभानुषु। तोकाय। तुजे। शुशुचान। शम्। कृधि। अस्मभ्यम्। दस्म। शम्। कृधि॥३॥

पदार्थः:-**(सखे)** मित्र **(सखायम्)** सुहृदम् **(अभि)** **(आ)** **(ववृत्स्व)** आवर्त्तय **(आशुम्)** शीघ्रगामिनमश्वम् **(न)** इव **(चक्रम्)** **(रथ्येव)** रथेषु साधूनीव **(रंह्या)** गमनीयानि **(अस्मभ्यम्)** **(दस्म)** दुःखोपनाशक **(रंह्या)** गमनीयानि **(अग्ने)** वह्निरिव प्रकाशमान **(मृळीकम्)** सुखकरम् **(वरुणे)** **(सचा)** सत्यसंयोगेन **(विदः)** प्राप्नुयाः **(मरुत्सु)** मनुष्येषु **(विश्वभानुषु)** विश्वस्मिन् भानुषु भानुषु सूर्य्येष्विव

प्रकाशकेषु **(तोकाय)** अपत्याय **(तुजे)** विद्याबलमिच्छुकाय **(शुशुचान)** पवित्रकारक **(शम्)** सुखम् **(कृधि) (अस्मभ्यम्) (दस्म)** अविद्यानाशक **(शम्)** सुखम् **(कृधि)** कुरु॥३॥

अन्वयः-हे सखे! चक्रमाशुं न सखायमभ्याववृत्स्व। हे दस्म! रंह्या रथ्येवाऽस्मभ्यं रंह्याभ्याववृत्स्व। हे अग्ने! त्वं सचा वरुणे मृळीकं विदः। हे शुशुचान! विश्व भानुषु मरुत्सु तुजे तोकाय शं कृधि। हे दस्म! त्वमस्मभ्यं शं कृधि॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं सर्वैः सह सखायो भूत्वाश्वा रथमिव सखीन्सत्कर्मसु सद्यः प्रवर्त्तयत। श्रेष्ठमार्ग इवाऽस्मान्त्सरले व्यवहारे गमय। येऽत्र जगति सूर्य्यवच्छुभगुणान्विताः सर्वात्मनः प्रकाश्य सुखं जनयेयुस्तेऽस्माभिः सत्कर्तव्याः स्युः॥३॥

पदार्थः-हे **(सखे)** मित्र! **(चक्रम्)** पहिये के और **(आशुम्)** शीघ्र चलने वाले घोड़े के **(न)** सदृश **(सखायम्)** स्नेहीजन को **(अभि, आ, ववृत्स्व)** समीप वर्त्ताइये और **(दस्म)** हे दुःख के नाशकर्त्ता! **(रंह्या)** प्राप्त होने योग्य **(रथ्येव)** वाहनों के निमित्त उत्तम स्थानों को जैसे, वैसे **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(रंह्या)** प्राप्त होने योग्यों के सब प्रकार समीप प्राप्त होइये और **(अग्ने)** हे अग्नि के सदृश प्रकाशमान! आप **(सचा)** सत्य के संयोग से **(वरुणे)** उपदेश देनेवाले के विषय में **(मृळीकम्)** सुखकर्त्ता को **(विदः)** प्राप्त होवें और **(शुशुचान)** हे पवित्र करनेवाले! **(विश्वभानुषु)** सब में सूर्य के सदृश प्रकाश करने वाले **(मरुत्सु)** मनुष्यों में **(तुजे)** विद्या और बल की इच्छा करने वाले **(तोकाय)** पुत्रादि के लिये **(शम्)** सुख को **(कृधि)** करो और **(दस्म)** हे अविद्या के नाश करने वाले! आप **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(शम्)** सुख **(कृधि)** करिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! आप लोग सब लोगों के साथ मित्र होकर जैसे घोड़े रथ को ले चलते हैं, वैसे मित्रों को उत्तम कर्म्मों में प्रवृत्त करो। और श्रेष्ठमार्ग के सदृश हम लोगों को सरल मर्य्यादा में पहुँचाइये। जो लोग इस संसार में सूर्य्य के सदृश उत्तम गुणों से युक्त हुए सब के आत्माओं को प्रकाशित करके सुख को उत्पन्न करें, वे हम लोगों से सत्कार करने योग्य होवें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं नो॑ अग्ने॒ वरु॑णस्य वि॒द्वान्दे॒वस्य॒ हेळोऽव॑ यासिसीष्ठाः।

यजि॑ष्ठो॒ वह्नि॑तमः॒ शोशु॑चानो॒ विश्वा॒ द्वेषां॑सि॒ प्र मु॑मुग्ध्य॒स्मत्॥४॥

त्वम्। नः॒। अ॒ग्ने॒। वरु॑णस्य। वि॒द्वान्। दे॒वस्य॑। हेळः॑। अव॑। या॒सि॒सी॒ष्ठाः॒। यजि॑ष्ठः। वह्नि॑ऽतमः। शोशु॑चानः। विश्वा॑। द्वेषां॑सि। प्र। मु॒मु॒ग्धि॒। अ॒स्मत्॥४॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**नः**) अस्मान् (**अग्ने**) अग्निरिव विद्वन् (**वरुणस्य**) श्रेष्ठस्य (**विद्वान्**) (**देवस्य**) विद्याप्रकाशकस्य (**हेळः**) हेळन्तेऽनादृता भवन्ति यस्मिन् सः (**अव**) निवारणे (**यासिसीष्ठाः**) प्रेरयेथाः। अत्र **वा च्छन्दसी**ति मूर्द्धन्यादेशाभावः (**यजिष्ठः**) अतिशयेनेष्टा (**वह्नितमः**) अतिशयेन वोढा (**शोशुचानः**) भृशं प्रकाशमानः (**विश्वा**) विश्वानि सर्वाणि (**द्वेषांसि**) द्वेषयुक्तानि कर्माणि (**प्र**) (**मुमुग्धि**) मुञ्च पृथक्कुरु (**अस्मत्**) अस्माकं सकाशात्॥४॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वांस्त्वं वरुणस्य देवस्य हेळः सन्नव यासिसीष्ठा यजिष्ठो वह्नितमो नोऽस्माञ्छोशुचानः सन् विश्वा द्वेषांस्यस्मत्प्र मुमुग्धि॥४॥

भावार्थः-त एव विद्वांसः सन्ति ये श्रेष्ठस्य विदुषोऽनादरं न कुर्वन्ति त एवाध्यापकोपदेशकाः श्रेयांसो योऽस्माकं दोषान् दूरीकृत्य पवित्रयन्ति त एवाऽस्माभिः सत्कर्त्तव्याः सन्ति॥४॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश विद्वान् पुरुष (**विद्वान्**) विद्यायुक्त (**त्वम्**) आप (**वरुणस्य**) श्रेष्ठ (**देवस्य**) विद्या के प्रकाश करनेवाले के (**हेळः**) आदररहित होते हैं जिसमें उसके (**अव**) निवारण में (**यासिसीष्ठाः**) प्रेरणा करो और (**यजिष्ठः**) अत्यन्त यज्ञ करने और (**वह्नितमः**) अत्यन्त पहुंचाने वाले (**नः**) हम लोगों के प्रति (**शोशुचानः**) अत्यन्त प्रकाशमान हुए आप (**विश्वा**) सब (**द्वेषांसि**) द्वेषयुक्त कर्म्मों को (**अस्मत्**) हम लोगों के समीप से (**प्र,मुमुग्धि**) अलग कीजिये॥४॥

भावार्थः-वे ही विद्वान् जन हैं कि जो श्रेष्ठ विद्वान् पुरुष का अनादर नहीं करते हैं और वे ही अध्यापक और उपदेशक कल्याणकारी होते हैं, जो हम लोगों के दोषों को दूर करके पवित्र करते हैं, वे ही हम लोगों से सत्कार करने योग्य हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स त्वं नो॑ अग्नेऽव॒मो भ॑वो॒ती नेदि॑ष्ठो अ॒स्या उ॒षसो॒ व्यु॑ष्टौ।

अव॑ यक्ष्व नो॒ वरु॑णं॒ ररा॑णो वी॒हि मृ॑ळी॒कं सु॒हवो॑ न एधि॥५॥१२॥

सः। त्वम्। नः॒। अ॒ग्ने॒। अ॒व॒मः। भ॒व॒। ऊ॒ती। नेदि॑ष्ठः। अ॒स्याः। उ॒षसः॑। विऽउ॑ष्टौ। अव॑। य॒क्ष्व॒। नः॒। वरु॑णम्। ररा॑णः। वी॒हि। मृ॒ळी॒कम्। सु॒ऽहवः॑। नः॒। ए॒धि॒॥५॥

पदार्थः-(**सः**) (**त्वम्**) (**नः**) अस्माकम् (**अग्ने**) पावक इव विद्वन् (**अवमः**) रक्षकः (**भव**) (**ऊती**) ऊत्या रक्षणाद्यया क्रियया (**नेदिष्ठः**) अतिशयेन समीपस्थः (**अस्याः**) (**उषसः**) प्रातःकालस्य (**व्युष्टौ**) विशेषेण दाहे (**अव**) (**यक्ष्व**) सङ्गच्छस्व (**नः**) अस्मभ्यम् (**वरुणम्**) श्रेष्ठमध्यापकमुपदेशकं वा (**रराणः**) ददन् (**वीहि**) व्याप्नुहि (**मृळीकम्**) सुखकरम् (**सुहवः**) शोभनाऽऽह्वानः (**नः**) अस्मान् (**एधि**) प्राप्तो भव॥५॥

अन्वयः:-हे अग्ने! स त्वमस्या उषसो व्युष्टौ नेदिष्ठः सन्नूती नोऽवमो भव। वरुणं रराणः सन्नोऽव यक्ष्व सुहवः सन्नो मृळीकं वीहि न एधि॥५॥

भावार्थः:-स एवाऽध्यापको राजा श्रेष्ठोऽस्ति यः सुशिक्षयाऽस्मानुषाइव रक्षेद् दुष्टाचारात् पृथक्कृत्य श्रेष्ठाचारं कारयेत्॥५॥

पदार्थः:-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्वी विद्वन् पुरुष **(सः)** वह **(त्वम्)** आप **(अस्याः)** इस **(उषसः)** प्रातःकाल के **(व्युष्टौ)** विशेष दाह में **(नेदिष्ठः)** अत्यन्त समीप स्थित **(ऊती)** रक्षण आदि कर्म से **(नः)** हम लोगों के **(अवमः)** रक्षा करनेवाले **(भव)** हूजिये **(वरुणम्)** श्रेष्ठ अध्यापक वा उपदेशक को **(रराणः)** देते हुए **(नः)** हम लोगों को **(अव, यक्ष्व)** प्राप्त हूजिये और **(सुहवः)** उत्तम प्रकार बुलाने वाले हुए **(नः)** हम लोगों के लिये **(मृळीकम्)** सुख करने वाले कार्य्य को **(वीहि)** व्याप्त हूजिये और हम लोगों को **(एधि)** प्राप्त हूजिये॥५॥

भावार्थः:-वह ही अध्यापक वा राजा श्रेष्ठ है कि जो उत्तम शिक्षा से हम लोगों की प्रातःकाल के सदृश रक्षा करे। दुष्ट आचरण से अलग करके श्रेष्ठ आचरण करावे॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒स्य श्रेष्ठा॑ सु॒भग॑स्य सं॒दृग्दे॒वस्य॑ चि॒त्रत॑मा॒ मर्त्ये॑षु।

शुचि॑ घृ॒तं न त॒प्तमघ्न्या॑याः स्पा॒र्हा दे॒वस्य॑ मं॒हने॑व धे॒नोः॥६॥

अ॒स्य। श्रेष्ठा॑। सु॒ऽभग॑स्य। स॒म्ऽदृक्। दे॒वस्य॑। चि॒त्रऽत॑मा। मर्त्ये॑षु। शुचि॑। घृ॒तम्। न। त॒प्तम्। अघ्न्या॑याः। स्पा॒र्हा। दे॒वस्य॑। मं॒हना॑ऽइव। धे॒नोः॥६॥

पदार्थः:-**(अस्य)** सर्वपालकस्य राज्ञः **(श्रेष्ठा)** श्रेष्ठानि कर्माणि **(सुभगस्य)** प्रशंसितैश्वर्य्यस्य **(संदृक्)** यः सम्यक् पश्यति **(देवस्य)** दिव्यगुणकर्मस्वभावस्य **(चित्रतमा)** अतिशयाद्भुतगुणकर्मस्वभावोत्पादकानि **(मर्त्येषु)** मनुष्येषु **(शुचि)** पवित्रम् **(घृतम्)** आज्यम् **(न)** इव **(तप्तम्)** **(अघ्न्यायाः)** हन्तुमयोग्यायाः **(स्पार्हा)** स्पर्हणीयानि **(देवस्य)** परमात्मनः **(मंहनेव)** महान्ति पूजनीयानीव **(धेनोः)** वाण्या गोर्वा॥६॥

अन्वयः:-हे विद्वन्! मर्त्त्येष्वस्य सुभगस्य देवस्य चित्रतमा श्रेष्ठा तप्तं शुचि घृतं न वर्त्तन्तेऽघ्न्याया धेनोस्तप्तं शुचि घृतं न देवस्य स्पार्हा मंहनेव वर्त्तन्ते तेषां संदृक् सन् राज्यं वर्द्धय॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः।[१] येषां राजादीनामग्निना तप्तं शुद्धघृतमिव विदुषः सुशिक्षिताया वाचो मधुराणि भाषणानीव भाषणानि परमेश्वरस्य गुणकर्मस्वभावा इव गुणकर्मस्वभावास्सन्ति तेऽत्याश्चर्य्यमैश्वर्यं राज्यमद्भुतां कीर्तिं च लभन्ते॥६॥

पदार्थः-हे विद्वन्! **(मर्त्येषु)** मनुष्यों में **(अस्य)** इस सब के पालन करनेवाले **(सुभगस्य)** प्रशंसित ऐश्वर्य्य और **(देवस्य)** दिव्य गुण कर्म और स्वभावयुक्त राजा के **(चित्रतमा)** अत्यन्त अद्भुत और **(श्रेष्ठा)** उत्तम कर्म **(तप्तम्)** तपाये गये **(शुचि)** पवित्र **(घृतम्)** घी के **(न)** समान वर्त्तमान हैं तथा **(अघ्न्यायाः)** न नष्ट करने योग्य **(धेनोः)** वाणी के वा गौ के तपाये गये पवित्र घी के सदृश **(देवस्य)** परमात्मा के **(स्पार्हा)** चाहने योग्य **(मंहनेव)** अतीव पूजनीय सदृश कर्म वर्त्तमान हैं, उनके **(संदृक्)** उत्तम प्रकार देखने वाले होते हुए राज्य की वृद्धि करो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमावाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जिन राजादिकों के अग्नि से तपाये गये स्वच्छ घृत के समान विद्वान् की उत्तम शिक्षित वाणी के मधुर वचनों के समान वचन और परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभावों के समान गुण, कर्म, स्वभाव हैं, वे अति आश्चर्य्यरूप ऐश्वर्य्य राज्य और अद्भुत कीर्ति को प्राप्त होते हैं॥६॥

अथाग्निदृष्टान्तेन विद्वद्गुणानाह॥

अब अग्नि के दृष्टान्त से विद्वानों के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्रिर॑स्य ता प॑र॒मा स॑न्ति स॒त्या स्पा॒र्हा दे॒वस्य॒ जनि॑मान्य॒ग्नेः।

अ॒न॒न्ते अ॒न्तः परि॑वीत॒ आगा॒च्छुचि॑ः शु॒क्रो अ॒र्यो रोरु॑चानः॥७॥

त्रिः। अ॒स्य॒। ता। प॒र॒मा। स॒न्ति। स॒त्या। स्पा॒र्हा। दे॒वस्य॑। जनि॑मानि। अ॒ग्नेः। अ॒न॒न्ते। अ॒न्तरिति॑। परि॑ऽवीतः। आ। अ॒गा॒त्। शुचि॑ः। शु॒क्रः। अ॒र्यः। रोरु॑चानः॥७॥

पदार्थः-**(त्रिः)** त्रिवारम् **(अस्य)** राज्ञः **(ता)** तानि **(परमा)** उत्कृष्टानि **(सन्ति)** **(सत्या)** सत्सु व्यवहारेषु साधूनि **(स्पार्हा)** अभिकाङ्क्षितुं योग्यानि **(देवस्य)** दिव्यगुणकर्मस्वभावस्य **(जनिमानि)** जन्मानि **(अग्नेः)** विद्युदादिरिव **(अनन्ते)** परमात्मन्याकाशे वा **(अन्तः)** मध्ये **(परिवीतः)** परितः सर्वतो व्याप्तशुभगुणकर्मस्वभावः **(आ, अगात्)** आगच्छन्ति **(शुचिः)** पवित्रः **(शुक्रः)** आशुकारी **(अर्य्यः)** सर्वस्य स्वामी **(रोरुचानः)** भृशं देदीप्यमानः॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! अग्नेरिव यस्याऽस्य देवस्य यानि सत्या स्पार्हा परमा जनिमानि सन्ति यो रोरुचानोऽर्य्यः शुक्रः शुचिः परिवीतोऽनन्तेऽन्तस्ता तानि त्रिरागात् स एव सर्वाधीशत्वमर्हति॥७॥

---

१. हिन्दीभाषायाम्- 'उपमावाचकलुप्तोपमालङ्कार है' लिखितमस्ति।

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। स एवोत्तमे कुले जायते यस्योत्तमानि कर्माणि स्युः। यथा विद्युदाद्यग्निर्निस्सीमेऽन्तरिक्षे विराजते तथैव योऽनन्तं जगदीश्वरमन्तर्ध्यात्वा सर्वज्ञानवाञ्छुद्धियुक्तो भूत्वा सर्वाण्युत्तमानि प्रशंस्यानि कर्माणि कर्तुं प्रभवति॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(अग्नेः)** अग्नि के सदृश जिस **(अस्य, देवस्य)** उत्तम गुण कर्म और स्वभाव वाले इस राजा के जो **(सत्या)** उत्तम व्यवहारो में श्रेष्ठ **(स्पार्हा)** अभिकांक्षा करने के योग्य **(परमा)** उत्तम **(जनिमानि)** जन्म **(सन्ति)** हैं और जो **(रोरुचानः)** अत्यन्त प्रकाशमान **(अर्य्यः)** सब का स्वामी **(शुक्रः)** शीघ्र करने वाला **(शुचिः)** पवित्र **(परिवीतः)** जिसके सब ओर उत्तम गुण, कर्म और स्वभाव व्याप्त वह **(अनन्ते)** परमात्मा वा आकाशविषयक **(अन्तः)** मध्य में **(ता)** उनको **(त्रिः)** तीन वार **(आ, अगात्)** प्राप्त होता है, वही सब का अधीश होने योग्य है॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वही उत्तम कुल उत्पन्न होता है कि जिसके उत्तम कर्म हों। और जैसे बिजुली आदि अग्नि सीमारहित अन्तरिक्ष में शोभित होता है, वैसे ही जो अनन्त जगदीश्वर का ध्यान करके सब ज्ञान वाला शुद्धियुक्त होकर सम्पूर्ण उत्तम प्रशंसा करने योग्य कर्मों के करने को समर्थ होता है॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स दूतो विश्वेद॒भि व॑ष्टि सद्मा होता॒ हिर॑ण्यरथो॒ रंसु॑जिह्वः।

रो॒हिद॑श्वो वपु॒ष्यो॑ वि॒भावा॒ सदा॑ र॒ण्वः पि॑तु॒मती॑व सं॒सत्॥८॥

सः। दू॒तः। विश्वा॑। इत्। अ॒भि। व॒ष्टि। सद्मा॑। होता॑। हिर॑ण्यऽरथः। रम्ऽसु॑जिह्वः। रो॒हित्ऽअ॑श्वः। व॒पु॒ष्यः॑। वि॒भाऽवा॑। सदा॑। र॒ण्वः। पि॒तु॒मती॑ऽइव। सम्ऽसत्॥८॥

पदार्थः-**(सः)** **(दूतः)** यो दुनोति दुष्टान् परितापयति सः **(विश्वा)** सर्वाणि **(इत्)** एव **(अभि)** **(वष्टि)** कामयते **(सद्म)** सद्मान्युत्तमानि कर्माणि स्थानानि वा **(होता)** दाता आदाता वा **(हिरण्यरथः)** तेजोमयरमणीयस्वरूपस्सूर्य इव रथो व्यवहारो यस्य सः **(रंसुजिह्वः)** रमणीयवाक् **(रोहिदश्वः)** रोहिता रक्तादिगुणविशिष्टा अग्न्यादयोऽश्वा आशुगामिनो यस्य सः **(वपुष्यः)** वपुष्षु रूपेषु भवः **(विभावा)** विभववान् **(सदा)** **(रण्वः)** रमणीयस्वरूपः **(पितुमतीव)** प्रशंसितबह्वन्नाद्यैश्वर्य्ययुक्तेव **(संसत्)** सम्राट्सभा॥८॥

अन्वयः-यो हिरण्यरथो रंसुजिह्वो रोहिदश्वो वपुष्यो विभावा रण्वो होता सन् राजा दूत इव विश्वा सद्माऽभि वष्टि स इत् संसत् पितुमतीव सदोन्नतिशीलो भवति॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथा दूता राज्ञां हितं चिकीर्षन्ति तथैव ये राजानः प्रजाहितं सततं कुर्वन्ति ते नृपाः सभासदश्च पुण्यभाजो भवन्ति॥८॥

पदार्थः-(**हिरण्यरथः**) तेजोमय सुन्दर स्वरूपयुक्त सूर्य्य के सदृश जिसका व्यवहार (**रंसुजिह्वः**) सुन्दर जिसकी वाणी (**रोहिदश्वः**) जिसके रक्त आदि गुणों से विशिष्ट अग्नि आदिक घोड़े शीघ्र चलने वाले वह (**वपुष्यः**) रूपों में प्रसिद्ध (**विभावा**) ऐश्वर्य्यवान् (**रण्वः**) सुन्दर स्वरूपयुक्त (**होता**) देने वा लेने वाला होता हुआ राजा (**दूतः**) दुष्टों को सन्ताप देते हुए के सदृश (**विश्वा**) सब (**सद्म**) उत्तम कर्म वा स्थानों की (**अभि, वष्टि**) कामना करता है (**सः**) वह (**इत्**) ही (**संसत्**) चक्रवर्त्तियों की सभा (**पितुमतीव**) जो कि प्रशंसित बहुत अन्न आदि ऐश्वर्य्य से युक्त उसके सदृश (**सदा**) सब काल में उन्नतिशील होता है॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमा अलङ्कार हैं। जैसे दूतजन राजाओं के हित करने की इच्छा करते हैं, वैसे ही जो राजाजन प्रजा का हित निरन्तर करते हैं, वे राजा और सभासद् पुण्य के भजने वाले होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स चे॑तय॒न्मनु॑षो य॒ज्ञब॑न्धुः॒ प्र तं म॒ह्या र॑श॒नया॑ नयन्ति।

स क्षे॑त्यस्य॒ दुर्या॑सु॒ साध॑न् दे॒वो मर्त॑स्य सध॒नि॒त्वमा॑प॥९॥

सः। चे॒तय॑त्। मनु॑षः। य॒ज्ञऽब॑न्धुः। प्र। तम्। म॒ह्या। र॒श॒नया॑। न॒य॒न्ति॒। सः। क्षे॒ति॒। अ॒स्य॒। दुर्या॑सु। साध॑न्। दे॒वः। मर्त॑स्य। स॒ध॒नि॒ऽत्वम्। आ॒प॒॥९॥

पदार्थः-(**सः**) (**चेतयत्**) ज्ञापयेत् (**मनुषः**) अमात्यप्रजाजनान् (**यज्ञबन्धुः**) यज्ञस्य न्यायव्यवहारस्य भ्रातेव वर्त्तमानः (**प्र**) (**तम्**) (**मह्या**) महत्या (**रशनया**) (**नयन्ति**) (**सः**) (**क्षेति**) निवसति (**अस्य**) (**दुर्य्यासु**) (**साधन्**) (**देवः**) दाता (**मर्त्तस्य**) मनुष्यस्य (**सधनित्वम्**) धनिनां भावेन सह वर्त्तमानं राज्यम् (**आप**) आप्नोति॥९॥

अन्वयः-यदि स यज्ञबन्धू राजा मनुष्यश्चेतयत्तं ये सभासदो मह्या रशनयाऽश्वा इव नीत्या प्र नयन्ति सोऽस्य राज्यस्य दुर्यासु न्यायगृहेषु राजव्यवहारं साधन् क्षेति स देवो मर्त्तस्य सधनित्वमाप॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽऽप्ता अध्यापकोपदेशका सुशिक्षया विद्यार्थिनो धर्म्ये मार्गं नयन्ति तथैव राजनीतिशिक्षया राजानं राजधर्मपथं नयन्तु यः सामात्यः सप्रजो राजा निर्व्यसनो भूत्वा प्रीत्या राजधर्मं करोति स ऐश्वर्य्यवज्जनं राज्यं प्राप्य सुखेन निवसति॥९॥

पदार्थः-जो (**सः**) वह (**यज्ञबन्धुः**) न्याय व्यवहार के भ्राता के सदृश वर्त्तमान राजा (**मनुषः**) मन्त्री और प्रजाजनों को (**चेतयत्**) जनावे (**तम्**) उसको जो सभासद् लोग (**मह्या**) बड़ी (**रशनया**) रस्सी से घोड़े के सदृश नीति से (**प्र**) (**नयन्ति**) अच्छे प्रकार प्राप्त करते हैं (**सः**) वह (**अस्य**) इस राज्य के (**दुर्य्यासु**) न्याय के स्थानों में राजव्यवहार को (**साधन्**) साधता हुआ (**क्षेति**) निवास करता है, वह

(देव:) देनेवाला **(मर्त्तस्य)** मनुष्यसम्बन्धी **(सधनित्वम्)** धनीपन के साथ वर्त्तमान राज्य को **(आप)** प्राप्त होता है॥९॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे यथार्थवादी अध्यापक और उपदेशक लोग उत्तम शिक्षा से विद्यार्थियों के लिये धर्मयुक्त मर्य्यादा को प्राप्त कराते हैं, वैसे ही राजनीति की शिक्षा से राजा के लिये राजधर्म के मार्ग को प्राप्त करो। और जो मन्त्री और प्रजा के सहित राजा व्यसनरहित होकर प्रीति से राजधर्म को करता है, वह ऐश्वर्य्ययुक्त जन और राज्य को प्राप्त होकर सुख से निवास करता है॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स तू नो अग्निर्नयतु प्रजानन्नच्छा रत्नं देवभक्तं यदस्य।

धिया यद्विश्वे अमृता अकृण्वन्द्यौष्पिता जनिता सत्यमुक्षन्॥१०॥१३॥

स:। तु। न:। अग्नि:। नयतु। प्रजानन्। अच्छ। रत्नम्। देवऽभक्तम्। यत्। अस्य। धिया। यत्। विश्वे। अमृता:। अकृण्वन्। द्यौ:। पिता। जनिता। सत्यम्। उक्षन्॥१०॥

पदार्थ:-**(स:)** **(तु)** पुन:। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घ:। **(न:)** अस्मान् **(अग्नि:)** स्वप्रकाश: परमात्मेव राजा **(नयतु)** प्रापयतु **(प्रजानन्)** **(अच्छ)** अत्र **संहितायामि**ति दीर्घ:। **(रत्नम्)** रमणीयं धनम् **(देवभक्तम्)** देवै: सेवितम् **(यत्)** **(अस्य)** जगत: **(धिया)** प्रज्ञया **(यत्)** यस्मिन् **(विश्वे)** **(अमृता:)** जन्ममृत्युरहिता जीवा: **(अकृण्वन्)** कुर्वन्ति **(द्यौ:)** प्रकाशमान: **(पिता)** पालक: **(जनिता)** जनक: **(सत्यम्)** **(उक्षन्)** सेवन्ते॥१०॥

अन्वय:-हे राजन्! यथा सोऽस्य पिता जनिता द्यौरग्नि: परमात्मा धिया सर्वं प्रजानन् नोऽस्मान् यद्देवभक्तं रत्नमच्छ नयति तथा भवान्नयतु। यद्यस्मिँस्तु विश्वेऽमृता: सत्यमुक्षँस्तु मोक्षमकृण्वन् तत्रैव स्थित्वा सत्यं सेवित्वा धर्म्मेण राज्यं सम्पाल्य मोक्षमाप्नुहि॥१०॥

भावार्थ:-हे राजादयो मनुष्या! यथा सर्वस्य जगत: पिता जन: परमात्मा दयया सर्वेषां जीवानां सुखाय विविधान् पदार्थान् रचयित्वा दत्वाऽभिमानं न करोति तथैव यूयं भवत। ईश्वरस्य सद्गुणकर्म्मस्वभावैस्तुल्यान्स्वगुणकर्म्मस्वभावान् कृत्वा राज्यादिकं पालयित्वाऽन्ते मोक्षमाप्नुत॥१०॥

पदार्थ:-हे राजन्! जैसे **(स:)** वह **(अस्य)** इस संसार का **(पिता)** पालन करने और **(जनिता)** उत्पन्न करनेवाला **(द्यौ:)** प्रकाशमान **(अग्नि:)** अपने से प्रकाशरूप परमात्मा के सदृश राजा **(धिया)** बुद्धि से सब को **(प्रजानन्)** जानता हुआ **(न:)** हम लोगों को **(यत्)** जो **(देवभक्तम्)** देवों से सेवित **(रत्नम्)** सुन्दर धन को **(अच्छ)** उत्तम प्रकार प्राप्त कराता है, वैसे आप **(नयतु)** प्राप्त कराइये **(यत्)** जिसमें **(तु)** फिर **(विश्वे)** सब **(अमृता:)** जन्म और मृत्यु से रहित जीव **(सत्यम्)** सत्य का **(उक्षन्)**

सेवन करते हुए मोक्ष को **(अकृण्वन्)** करते हैं, वहाँ ही स्थित हो और सत्य का सेवन और धर्म से राज्य का पालन करके मोक्ष को प्राप्त होइये॥१०॥

भावार्थ:-हे राजा आदि मनुष्यों जैसे सब जगत् का पालन और उत्पन्न करनेवाला परमात्मा दया से सब जीवों के सुख के लिये अनेक प्रकार के पदार्थों को रच और दे के अभिमान नहीं करता है, वैसे ही आप लोग होइये। और ईश्वर के उत्तम गुण, कर्म्म और स्वभावों के तुल्य अपने गुण, कर्म्म और स्वभावों को करके राज्य आदि का पालन करके अन्त में मोक्ष को प्राप्त होओ॥१०॥

अथाग्निपदेन परमात्मविषयमाह॥

अब इस अगले मन्त्र में अग्निपद से परमात्मा के विषय को कहते हैं॥

स जायत प्रथमः पस्त्यासु महो बुध्ने रजसो अस्य योनौ।

अपादशीर्षा गुहमानो अन्तायोयुवानो वृषभस्य नीळे॥११॥

सः। जायत। प्रथमः। पस्त्यासु। महः। बुध्ने। रजसः। अस्य। योनौ। अपात्। अशीर्षा। गुहमानः। अन्ता। आऽयोयुवानः। वृषभस्य। नीळे॥११॥

पदार्थ:-**(सः)** विद्युद्रूपोऽग्निः **(जायत)** जायते। अत्राडभावः **(प्रथमः)** आदिमः **(पस्त्यासु)** गृहेषु **(महः)** महति **(बुध्ने)** अन्तरिक्षे **(रजसः)** लोकसमूहस्य **(अस्य)** **(योनौ)** कारणे **(अपात्)** पादरहितः **(अशीर्षा)** शिरआद्यवयवरहितः **(गुहमानः)** संवृतः सन् **(अन्ता)** अन्ते समीपे **(आयोयुवानः)** समन्ताद् भृशं मिश्रयिता विभाजको वा **(वृषभस्य)** वर्षकस्य सूर्य्यस्य **(नीळे)** गृहे॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा स प्रथमः सूर्य्यो महो बुध्नेऽस्य रजसो योनौ जायत यथा गुहमानोऽपादशीर्षा आयोयुवानो वृषभस्य नीळेऽन्ता जायत तथैव यूयमपि पस्त्यासु जायध्वम्॥११॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाऽनन्त आकाशे प्रकृतेर्महदादि क्रमेणेदं जगज्जातमत्र निरवयवा जीवाः संवृताः सन्तः परमात्मनः समीपे वर्त्तमाना गृहेषु जायन्ते शरीरं धरन्ति त्यजन्ति च तं सर्वेश्वरमन्तर्ध्यात्वा सुखिनो भवत॥११॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे **(सः)** बिजुलीरूप अग्नि **(प्रथमः)** प्रथम सूर्य्य **(महः)** बड़े **(बुध्ने)** अन्तरिक्ष में **(अस्य)** इस **(रजसः)** लोकों के समूह के **(योनौ)** कारण में **(जायत)** उत्पन्न होता है और जैसे **(गुहमानः)** ढंपा हुआ **(अपात्)** पैरों और **(अशीर्षा)** शिर आदि **(आयोयुवानः)** सब प्रकार अत्यन्त मिलाने वा अलग करने वाला **(वृषभस्य)** वृष्टि करने वाले सूर्य्य के **(नीळे)** स्थान में **(अन्ता)** समीप में उत्पन्न होता है, वैसे ही आप लोग भी **(पस्त्यासु)** घरों में उत्पन्न अर्थात् प्रकट हूजिये॥११॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे अन्तरहित आकाश में प्रकृति से महत्तत्त्व अर्थात् बुद्धि आदि के क्रम से यह संसार उत्पन्न हुआ इस संसार में अवयवों से रहित मिलते हुए जीव परमात्मा के समीप में वर्त्तमान हो, गृहों में उत्पन्न होते शरीर को धारण करते और

त्यागते हैं, उस सब के स्वामी का हृदय में ध्यान कर सुखी हूजिये॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र शर्धं आर्त प्रथमं विपन्याँ ऋतस्य योना वृषभस्य नीळे।

स्पार्हो युवा वपुष्यो विभावा सप्त प्रियासोऽजनयन्त वृष्णे॥१२॥

प्र। शर्धः। आर्त। प्रथमम्। विपन्या। ऋतस्य। योना। वृषभस्य। नीळे। स्पार्हः। युवा। वपुष्यः। विभाऽवा। सप्त। प्रियासः। अजनयन्त। वृष्णे॥१२॥

पदार्थः-(**प्र**) (**शर्धः**) बलम् (**आर्त**) प्राप्नुयाः (**प्रथमम्**) आदिमम् (**विपन्या**) विपने विविधव्यवहारे साध्व्या (**ऋतस्य**) सत्यस्य कारणस्य (**योना**) गृहे (**वृषभस्य**) वर्षकस्याऽग्नेः (**नीळे**) स्थाने (**स्पार्हः**) स्पृहणीयः (**युवा**) प्राप्तयुवावस्था (**वपुष्यः**) वपुष्षु साधुः (**विभावा**) विविधविद्याप्रकाशयुक्तः (**सप्त**) पञ्च प्राणमनोबुद्धिश्च (**प्रियासः**) कमनीयाः सेवनीयाः (**अजनयन्त**) जनयन्ति (**वृष्णे**) वर्षकाय जीवाय॥१२॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा वृष्णे सप्त प्रियासोऽजनयन्त तथर्तस्य योना वृषभस्य नीळे स्पार्हो युवा वपुष्यो विभावा सन् भवान् विपन्या प्रथमं शर्द्धः प्रार्त प्राप्नुयाः॥१२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा प्राणान्तःकरणानि कार्य्यसाधकानि प्रियाणि भवन्ति तथैव पुरुषार्थेन कार्य्यकारणे विदित्वा परमेश्वरं विज्ञाय प्रथमे वयसि शरीरात्मबलं प्राप्य सुखानि जनयत॥१२॥

पदार्थः-हे विद्वन् पुरुष! जैसे (**वृष्णे**) वृष्टि करने वाले जीव के लिये (**सप्त**) पांच प्राण मन और बुद्धि ये सात (**प्रियासः**) सुन्दर और सेवन करने योग्य (**अजनयन्त**) उत्पन्न करते हैं, वैसे (**ऋतस्य**) सत्यकारण के (**योना**) स्थान में (**वृषभस्य**) वृष्टि करने वाले अग्नि के (**नीळे**) स्थान में (**स्पार्हः**) अभिलाषा करने योग्य (**युवा**) युवावस्था को प्राप्त (**वपुष्यः**) रूपों में श्रेष्ठ और (**विभावा**) अनेक प्रकार की विद्याओं के प्रकाशयुक्त हुए आप (**विपन्या**) अनेक प्रकार के व्यवहार में श्रेष्ठ प्रशंसा से (**प्रथमम्**) पहिले (**शर्धः**) बल को (**प्र, आर्त**) प्राप्त हूजिये॥१२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे प्राण और अन्तःकरण कार्य के साधक और प्रिय होते हैं, वैसे ही पुरुषार्थ से कार्य्य और कारण जानकर और परमेश्वर का ज्ञान करके प्रथम अवस्था में शरीर और आत्मा के बल को प्राप्त होकर सुखों को उत्पन्न करो॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्माकमत्र पितरो मनुष्या अभि प्र सेदुर्ऋतमाशुषाणाः।

अश्मव्रजाः सुदुघा वव्रे अन्तरुदुस्रा आजन्नुषसो हुवानाः॥१३॥

अस्माकम्। अत्र। पितरः। मनुष्याः। अभि। प्र। सेदुः। ऋतम्। आशुषाणाः। अश्मऽव्रजाः। सुऽदुघाः। वव्रे। अन्तः। उत्। उस्राः। आजन्। उषसः। हुवानाः॥१३॥

पदार्थः-(**अस्माकम्**) (**अत्र**) अस्मिञ्जगति व्यवहारे वा (**पितरः**) पालकाः (**मनुष्याः**) मननशीलाः समन्तात् (**अभि**) आभिमुख्ये (**प्र**) (**सेदुः**) प्रसीदन्ति (**ऋतम्**) सत्यम् (**आशुषाणाः**) प्राप्नुवन्तो ब्रह्मचर्येण शुष्कशरीरा वा (**अश्मव्रजाः**) येऽश्मसु मेघेषु व्रजन्ति (**सुदुघाः**) सुष्ठु कामानामलङ्कर्त्तारः (**वव्रे**) वृणोति (**अन्तः**) मध्ये (**उत्**) (**उस्राः**) किरणाः (**आजन्**) प्राप्नुवन्ति (**उषसः**) प्रभातान् (**हुवानाः**) कृताह्वानाः॥१३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! येऽत्राऽस्माकं मनुष्याः पितर ऋतमाशुषाणा अश्मव्रजाः सुदुघा उषस उस्रा इव हुवानाः सन्त उदाजन्नन्तरभि प्र सेदुस्तान् योऽभि वव्रे सभाग्यशाली जायते॥१३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये युष्माकं पालका ब्रह्मचारिणो यथा सूर्यकिरणा मेघान् वर्षयन्ति तथैव कृताह्वानाः सन्तः सत्यं विज्ञापयन्ति तेषां यः सत्कारं करोति स भाग्यशाली भवति॥१३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अत्र**) इस संसार वा व्यवहार में (**अस्माकम्**) हम लोगों के (**मनुष्याः**) मनन करने और (**पितरः**) पालन करने वाले (**ऋतम्**) सत्य को (**आशुषाणाः**) सब प्रकार प्राप्त हुए वा ब्रह्मचर्य से शुष्क शरीरवाले (**अश्मव्रजाः**) मेघों में चलनेवाले (**सुदुघाः**) उत्तम प्रकार कामनाओं के पूर्ण करने वाले (**उषसः**) प्रातःकालों को (**उस्राः**) किरणों के सदृश (**हुवानाः**) पुकारने वाले हुए (**उत्, आजन्**) प्राप्त होते हैं (**अन्तः**) मध्य में (**अभि**) सम्मुख (**प्र, सेदुः**) जाते हैं, उनको जो (**वव्रे**) ढांपता है, वह भाग्यशाली होता है॥१३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो लोग आप लोगों के पालन करने वाले ब्रह्मचर्य्य को धारण करके जैसे सूर्य की किरणें मेघों को वर्षाती हैं, वैसे ही बुलाये हुए सत्य का प्रकाश करते हैं, उनका जो सत्कार करता है, वह भाग्यशाली होता है॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ते मर्मृजत ददृवांसो अद्रिं तदेषामन्ये अभितो वि वोचन्।

पश्वयन्त्रासो अभि कारमर्चन्विदन्त ज्योतिश्चकृपन्त धीभिः॥१४॥

ते। मर्मृजत। ददृऽवांसः। अद्रिम्। तत्। एषाम्। अन्ये। अभितः। वि। वोचन्। पश्वऽयन्त्रासः। अभि। कारम्। अर्चन्। विदन्त। ज्योतिः। चकृपन्त। धीभिः॥१४॥

पदार्थः-(**ते**) (**मर्मृजत**) शुद्धा भूत्वा शोधयन्ति (**ददृवांसः**) विदारकाः (**अद्रिम्**) मेघम् (**तत्**) तस्मात् (**एषाम्**) मध्ये (**अन्ये**) भिन्नाः (**अभितः**) सर्वतोऽभिमुखाः (**वि**) (**वोचन्**) उपदिशन्ति (**पश्वयन्त्रासः**) पश्वानि दृष्टानि यन्त्राणि यैस्ते (**अभि**) (**कारम्**) शिल्पकृत्यम् (**अर्चन्**) सत्कुर्वन्ति (**विदन्त**) जानन्ति (**ज्योतिः**) प्रकाशम् (**चकृपन्त**) कृपालवो भवन्ति (**धीभिः**) प्रज्ञाभिः कर्मभिर्वा॥१४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! येऽस्माकं मनुष्या पितरोऽद्रिं ददृवांसः किरणा इवास्मान् मर्मृजतैषामन्ये तदभितो विवोचन् पश्वयन्त्रासः सन्तः कारमभ्यर्चन् धीभिर्ज्योतिर्विदन्त सर्वेषु चकृपन्त ते सर्वैः पूज्यास्स्युः॥१४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये वेदोपवेदाङ्गोपाङ्गपारगाश्शिल्पविद्याविदो विद्वांसः कृपया सर्वान् सुशिक्षामुपदिश्य विदुषः संपादयेयुस्ते सर्वैः सत्कर्त्तव्याः स्युः॥१४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो हम लोगों के मनन करने और पालन करने वाले (**अद्रिम्**) मेघ के (**ददृवांस**) तोड़ने वाले किरणों के सदृश हम लोगों को (**मर्मृजत**) शुद्ध होकर शुद्ध करते हैं (**एषाम्**) इसके मध्य में (**अन्ये**) दूसरे लोग (**तत्**) इस कारण (**अभितः**) चारों ओर से सम्मुख (**वि, वोचन्**) उपदेश देते (**पश्वयन्त्रासः**) देखे हैं, यन्त्र जिन्होंने ऐसे होते हुए (**कारम्**) शिल्पकृत्य का (**अभि, अर्चन्**) सत्कार करते (**धीभिः**) बुद्धियों वा कर्मों से (**ज्योतिः**) प्रकाश को (**विदन्त**) जानने और सबों में (**चकृपन्त**) कृपालु होते हैं (**ते**) वे सब लोगों से सत्कार पाने योग्य होवें॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो वेद, उपवेद, अङ्ग और उपांगों के पार जाने और शिल्पविद्या के जानने वाले विद्वान् लोग कृपा से सब को उत्तम प्रकार शिक्षा का उपदेश करके विद्यायुक्त करें, वे सब लोगों से सत्कार करने योग्य होवें॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ते ग॑व्य॒ता मन॑सा दृ॒ध्रमु॒ब्धं गा ये॑मा॒नं परि॒ षन्त॒मद्रि॑म्।

दृ॒ळ्हं नरो॒ वच॑सा॒ दैव्ये॑न व्र॒जं गोम॑न्तमु॒शिजो॒ वि व॑व्रुः॥१५॥१४॥

ते। ग॒व्य॒ता। मन॑सा। दृ॒ध्रम्। उ॒ब्धम्। गाः। ये॒मा॒नम्। परि॑। सन्त॑म्। अद्रि॑म्। दृ॒ळ्हम्। नरः॑। वच॑सा। दैव्ये॑न। व्र॒जम्। गोऽम॑न्तम्। उ॒शिजः॑। वि। व॒व्रु॒रिति॑ वव्रुः॥१५॥

पदार्थः-(**ते**) (**गव्यता**) गोः प्रचुरो गव्यं तदाचरतीव तेन (**मनसा**) (**दृध्रम्**) वर्धकम् (**उब्धम्**) उन्दकम् (**गाः**) किरणान् (**येमानम्**) नियन्तारम् (**परि**) सर्वतः (**सन्तम्**) वर्त्तमानम् (**अद्रिम्**) मेघमिव (**दृळ्हम्**) सुखवर्धकम् (**नरः**) (**वचसा**) वचनेन (**दैव्येन**) दिव्येन (**व्रजम्**) यो व्रजति तम् (**गोमन्तम्**) गावः किरणा विद्यन्ते यस्मिंस्तम् (**उशिजः**) कामयमानाः (**वि**) (**वव्रुः**) विवृण्वति॥१५॥

अन्वय:-ये नरो मनसा गव्यता दैव्येन वचसा गा दृध्रमुब्धं येमानं सन्तं दृळ्हं सूर्यो व्रजं गोमन्तमद्रिमिवोशिजः सन्तः परि वि वव्रुस्ते कामनां प्राप्नुवन्ति॥१५॥

भावार्थ:-यथा किरणा मेघमुन्नयन्ति वर्षयन्ति तथैव विद्वांसो विचारेण दृढज्ञानं जनयन्ति॥१५॥

पदार्थ:-जो **(नर:)** वीरपुरुष **(मनस:)** मन से **(गव्यता)** गौओं के समूह के सदृश आचरण करनेवाले **(दैव्येन)** सुन्दर **(वचसा)** वचन से **(गा:)** किरणों को **(दृध्रम्)** बढ़ाने वाले **(उब्धम्)** सब ओर से मिले हुए **(येमानम्)** नियन्ता अर्थात् नायक **(सन्तम्)** वर्त्तमान **(दृळहम्)** सुख के बढ़ाने वाले को सूर्य **(व्रजम्)** चलनेवाले **(गोमन्तम्)** किरणें विद्यमान जिसमें ऐसे को **(अद्रिम्)** मेघ के सदृश **(उशिज:)** कामना करते हुए **(परि, वि, वव्रु:)** प्रकट करते हैं **(ते)** वे कामना को प्राप्त होते हैं॥१५॥

भावार्थ:-जैसे किरणें मेघ को ऊपर को प्राप्त करती और वर्षाती हैं, वैसे ही विद्वान् जन विचार से दृढ़ ज्ञान को उत्पन्न करते हैं॥१५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ते म॑न्वत प्रथ॒मं नाम॑ धे॒नोस्त्रिः स॒प्त मा॒तुः प॑र॒माणि॑ विन्दन्।

तज्जा॑न॒तीर॒भ्य॑नूषत व्रा आ॒विर्भु॑वद॒रु॒णीर्य॒शसा॒ गोः॥१६॥

ते। म॒न्व॒त। प्र॒थ॒मम्। नाम॑। धे॒नोः। त्रिः। स॒प्त। मा॒तुः। प॒र॒माणि॑। वि॒न्द॒न्। तत्। जा॒न॒तीः। अ॒भि। अ॒नू॒ष॒त। व्राः। आ॒विः। भु॒व॒त्। अ॒रु॒णीः। य॒शसा॑। गोः॥१६॥

पदार्थ:-**(ते)** **(मन्वत)** मन्यन्ते **(प्रथमम्)** प्रख्यातम् **(नाम)** **(धेनो:)** वाण्याः **(त्रि:)** त्रिवारम् **(सप्त)** **(मातु:)** जनन्या इव **(परमाणि)** उत्कृष्टानि **(विन्दन्)** जानन्ति **(तत्)** **(जानती:)** विज्ञानवतीः **(अभि)** सर्वतः **(अनूषत)** स्तुवन्ति **(व्रा:)** या व्रियन्ते ताः **(आवि:)** प्राकट्ये **(भुवत्)** भवेत् **(अरुणी:)** रक्तगुणविशिष्टाः **(यशसा)** कीर्त्या **(गो:)** विद्यासुशिक्षायुक्ताया वाचः॥१६॥

अन्वय:-ये मातुरिव धेनोः सप्त परमाणि विन्दन् तेऽस्य प्रथमं नाम त्रिर्मन्वत। यो यशसा सह वर्त्तमान आविर्भुवत् स तद्गोर्विज्ञानं जानीयात्। ये यशसा प्रकटाः स्युस्तेऽरुणीर्जानतीर्व्रा अभ्यनूषत॥१६॥

भावार्थ:-यथा कामधेनुर्दुग्धादिनेच्छां पिपर्त्ति तथैव विद्यासुशिक्षायुक्ता वाणी विदुषः पिपर्त्ति। ये धर्माचरणं कुर्वन्ति ते यशस्विनो भूत्वा सर्वत्र प्रसिद्धा जायन्ते॥१६॥

पदार्थ:-जो **(मातु:)** माता के सदृश **(धेनो:)** वाणी के **(सप्त)** सात अर्थात् सात गायत्र्यादि छन्दों में विभक्त **(परमाणि)** उत्तम व्यवहारों को **(विन्दन्)** जानते हैं **(ते)** वे इसके **(प्रथमम्)** प्रसिद्ध **(नाम)** स्तुतिसाधक शब्दमात्र को **(त्रि:)** तीन वार **(मन्वत)** मानते हैं और जो **(यशसा)** कीर्ति के साथ

वर्त्तमान **(आविः)** प्रकट **(भुवत्)** होवे वह **(तत्)** उस **(गोः)** वाणी के विज्ञान को जाने और जो कीर्ति से प्रकट होवें वे **(अरुणीः)** रक्तगुण से विशिष्ट **(जानतीः)** विज्ञानवाली **(व्राः)** प्रकट होने वालियों की **(अभि)** सब प्रकार **(अनूषत)** स्तुति करते हैं॥१६॥

भावार्थः-जैसे कामधेनु दुग्ध आदि से इच्छा को पूर्ण करती है, वैसी ही विद्या और उत्तम शिक्षा से युक्त वाणी विद्वानों को प्रसन्न करती है। जो लोग धर्म का आचरण करते हैं, वे यशस्वी होकर सर्वत्र प्रसिद्ध होते हैं॥१६॥

अथ सूर्य्यदृष्टान्तेनात्मबलसंरक्षणमाह॥

अब सूर्य्य के दृष्टान्त से आत्मा के बल की रक्षा को कहते हैं॥

नेशत्तमो दुधितं रोचत द्यौरुद्देव्या उषसो भानुरर्त।
आ सूर्यो बृहतस्तिष्ठदज्राँ ऋजु मर्तेषु वृजिना च पश्यन्॥१७॥

नेशत्। तमः। दुधितम्। रोचत। द्यौः। उत्। देव्याः। उषसः। भानुः। अर्त। आ। सूर्यः। बृहतः। तिष्ठत्। अज्रान्। ऋजु। मर्तेषु। वृजिना। च। पश्यन्॥१७॥

पदार्थः-**(नेशत्)** नाशयति **(तमः)** अन्धकारम् **(दुधितम्)** पूर्णम् **(रोचत)** प्रकाशते **(द्यौः)** आकाशस्थः **(उत्)** **(देव्याः)** दिव्यसुखप्रापिकायाः **(उषसः)** प्रभातवेलायाः **(भानुः)** प्रकाशमानः **(अर्त्त)** प्रापय **(आ)** समन्तात् **(सूर्य्यः)** **(बृहतः)** महतः **(तिष्ठत्)** तिष्ठति **(अज्रान्)** जगति प्रक्षिप्तान् **(ऋजु)** सरलम् **(मर्त्तेषु)** मनुष्येषु **(वृजिना)** बलानि **(च)** **(पश्यन्)**॥१७॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा द्यौर्भानुः सूर्य्यो देव्या उषसो दुधितं तम उन्नेशद्रोचत तिष्ठत्तथा बृहतोऽज्रान् पश्यन् सँस्त्वं मर्त्तेषु वृजिना चर्ज्वार्त्त॥१७॥

भावार्थः-यथा सूर्य्य उषसा रात्रिं निवार्य प्रकाशं जनयति तथैवाऽध्यापक उपदेशकश्च व्याप्तानपि पदार्थान् दृष्ट्वाऽऽर्जवं मनुष्येषु शरीरात्मबलं जनयतु॥१७॥

पदार्थः-हे विद्वन् पुरुष! जैसे **(द्यौः)** आकाशस्थ **(भानुः)** प्रकाशमान **(सूर्य्यः)** सूर्य्य **(देव्याः)** उत्तम सुख को प्राप्त करानेवाली **(उषसः)** प्रभातवेला से **(दुधितम्)** पूर्ण **(तमः)** अन्धकार को **(उत्, नेशत्)** नाश करता और **(रोचत)** प्रकाशित होता **(तिष्ठत्)** और स्थित रहता है, वैसे **(बृहतः)** बड़े **(अज्रान्)** संसार में जिनका प्रक्षेप हुआ उन पदार्थों को **(पश्यन्)** देखते हुए आप **(मर्त्तेषु)** मनुष्यों में **(वृजिना)** बलों को **(च)** और **(ऋजु)** सरलभाव को **(आ)** **(अर्त्त)** प्राप्त कराओ॥१७॥

भावार्थः-जैसे सूर्य्य प्रातर्वेला से रात्रि का निवारण करके प्रकाश को उत्पन्न करता है, वैसे ही अध्यापक और उपदेशक व्याप्त भी पदार्थों को देख के नम्रता से मनुष्यों में शरीर [और] आत्मा के बल को बढ़ावे॥१७॥

अथ वाणीविषयमाह॥

अब वाणी के विषय को इस अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आदित् पुश्चा बुबुधाना व्यख्यन्नादिद्रत्नं धारयन्त द्युभक्तम्।

विश्वे विश्वासु दुर्यासु देवा मित्र धिये वरुण सत्यमस्तु॥ १८॥

आत्। इत्। पश्चा। बुबुधानाः। वि। अख्यन्। आत्। इत्। रत्नम्। धारयन्त। द्युऽभक्तम्। विश्वे। विश्वासु। दुर्यासु। देवाः। मित्र। धिये। वरुण। सत्यम्। अस्तु॥ १८॥

पदार्थः-(**आत्**) आनन्तर्ये (**इत्**) एव (**पश्चा**) पश्चात् (**बुबुधानाः**) विजानन्तः (**वि**) विशेषेण (**अख्यन्**) उपदिशन्तु (**आत्**) (**इत्**) (**रत्नम्**) धनम् (**धारयन्त**) धारयन्ति (**द्युभक्तम्**) विद्युदादिभिस्सेवितम् (**विश्वे**) सर्वे (**विश्वासु**) (**दुर्यासु**) गृहेषु (**देवाः**) (**मित्र**) सखे (**धिये**) प्रज्ञायै कर्मणे वा (**वरुण**) दुष्टानां बन्धक (**सत्यम्**) त्रैकाल्याऽबाध्यम् (**अस्तु**) भवतु॥ १८॥

अन्वयः-हे वरुण मित्र! यथा बुबुधाना विश्वे देवा विश्वासु दुर्य्यासु द्युभक्तं रत्नं धारयन्ताऽऽदित् पश्चैतद् व्यख्यन्नाऽऽदित्तत्सत्यं धियेऽस्तु॥ १८॥

भावार्थः-ये ब्रह्मचर्य्येण विद्यासुशिक्षासत्यधर्माचरणानि धृत्वाऽन्यान् प्रत्युपदिशन्ति ते प्रज्ञां वर्धयित्वा सर्वत्र प्रसिद्धा भूत्वाऽऽनन्देन गृहेषु वसन्ति॥ १८॥

पदार्थः-हे (**वरुण**) दुष्ट पुरुषों के बांधने वाले (**मित्र**) मित्र! जैसे (**बुबुधानाः**) विशेष करके जानते हुए (**विश्वे**) सम्पूर्ण (**देवाः**) विद्वान् जन (**विश्वासु**) सब (**दुर्य्यासु**) स्थानों [घरों] में (**द्युभक्तम्**) बिजुली आदि पदार्थों से सेवित (**रत्नम्**) धन को (**धारयन्त**) धारण करते हैं। और (**आत्**) अनन्तर (**इत्**) ही (**पश्चा**) पीछे से इसका (**वि, अख्यन्**) विशेष करके उपदेश दें (**आत्**) अनन्तर (**इत्**) ही वह (**सत्यम्**) सत्य (**धिये**) बुद्धि वा उत्तम कर्म के लिये (**अस्तु**) हो॥ १८॥

भावार्थः-जो लोग ब्रह्मचर्य्य से विद्या, उत्तम शिक्षा, सत्य और धर्माचरणों को धारण करके अन्य जनों के प्रति उपदेश देते हैं, वे बुद्धि को बढ़ा के सर्वत्र प्रसिद्ध हो के आनन्द से घरों में रहते हैं॥ १८॥

अथ विद्युद्विषयमाह॥

अब बिजुली के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अच्छा वोचेय शुशुचानमग्निं होतारं विश्वभरसं यजिष्ठम्।

शुच्यूधो अतृणन्न गवामन्धो न पूतं परिषिक्तमंशोः॥ १९॥

अच्छ। वोचेय। शुशुचानम्। अग्निम्। होतारम्। विश्वऽभरसम्। यजिष्ठम्। शुचि। ऊधः। अतृणत्। न। गवाम्। अन्धः। न। पूतम्। परिऽसिक्तम्। अंशोः॥ १९॥

पदार्थः-**(अच्छ)** सम्यक्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(वोचेय)** उपदिशेय **(शुशुचानम्)** शुद्धगुणकर्मस्वभावम् **(अग्निम्)** विद्युद्रूपम् **(होतारम्)** दातारम् **(विश्वभरसम्)** संसारस्य धारकम् **(यजिष्ठम्)** अतिशयेन सङ्गन्तारम् **(शुचि)** पवित्रं कर्म **(ऊधः)** प्रभातवेलेव **(अतृणत्)** हिनस्ति **(न)** निषेधे **(गवाम्)** **(अन्धः)** अन्नम् **(न)** इव **(पूतम्)** पवित्रम् **(परिषिक्तम्)** सर्वत आर्द्रीभूतं कृतम् **(अंशोः)** सूर्य्यस्य प्राप्तस्य॥१९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योंऽशोः परिषिक्तं पूतं शुच्यन्धो न गवामूधो नाऽतृणत्तं यजिष्ठं विश्वभरसं होतारं शुशुचानमग्निं युष्मान् प्रत्यहमच्छ वोचेय॥१९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्यथा विद्युत् समानरूपा सती सर्वान् रक्षति विकृता सती हन्ति, सा किरणान्न हिनस्ति। अन्नवत्पालिका भूत्वा सर्वाञ्जवयतीति वेद्यम्॥१९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(अंशोः)** प्राप्त सूर्य्य के **(परिषिक्तम्)** सब ओर से गीले किये हुए **(पूतम्)** पवित्र वस्तु **(शुचि)** और पवित्र कर्म को **(अन्धः)** अन्न के **(न)** तुल्य वा **(गवाम्)** गौओं के **(ऊधः)** प्रभात समय के सदृश **(न)** नहीं **(अतृणत्)** हिंसा करता है, उस **(यजिष्ठम्)** अत्यन्त मिलाने **(विश्वभरसम्)** संसार के धारण करने और **(होतारम्)** देने और **(शुशुचानम्)** शुद्ध गुण, कर्म और स्वभाव कराने वाले **(अग्निम्)** बिजुलीरूप अग्नि का आप लोगों के प्रति मैं **(अच्छ)** उत्तम प्रकार **(वोचेय)** उपदेश दूं॥१९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि जैसे बिजुली समान रूप हुई सब की रक्षा करती है और विरूप होनेपर नाश करती, वह किरणों का नाश नहीं करती। और अन्न के सदृश पालन करनेवाली होकर सब को चलाती है, ऐसा जानें॥१९॥

पुनरुक्तं सूर्य्यसम्बन्धेनाप्याह॥

फिर उक्त विषय को सूर्य के सम्बन्ध से भी कहते हैं॥

विश्वेषामदितिर्यज्ञियानां विश्वेषामतिथिर्मानुषाणाम्।

अग्निर्देवानामव आवृणानः सुमृळीको भवतु जातवेदाः॥२०॥१५॥

विश्वेषाम्। अदितिः। यज्ञियानाम्। विश्वेषाम्। अतिथिः। मानुषाणाम्। अग्निः। देवानाम्। अवः। आऽवृणानः। सुऽमृळीकः। भवतु। जातऽवेदाः॥२०॥

पदार्थः-**(विश्वेषाम्)** सर्वेषाम् **(अदितिः)** अखण्डितमन्तरिक्षम् **(यज्ञियानाम्)** यज्ञानुष्ठानकर्तॄणाम् **(विश्वेषाम्)** **(अतिथिः)** अभ्यागत इव वर्त्तमानः **(मानुषाणाम्)** मानवानाम् **(अग्निः)** **(देवानाम्)** **(अवः)** रक्षणम् **(आवृणानः)** समन्तात् स्वीकुर्वन् **(सुमृळीकः)** सुष्ठु सुखकारकः **(भवतु)** **(जातवेदाः)** जातेषु पदार्थेषु विद्यमानः॥२०॥

अन्वयः-हे विद्वन्! भवान् विश्वेषां यज्ञियानामदितिरिव विश्वेषां मानुषाणामतिथिरिव देवानामग्निरिवाऽव आवृणानो जातवेदाः सुमृळीको भवतु॥२०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सुगन्धधूमेन शोधितमन्तरिक्षं पूर्णविद्य आप्तोपदेष्टा सूर्य्यश्च सुखदा भवन्ति तथैव यूयं सर्वेभ्यः सुखप्रदा भवतेति॥२०॥

अत्र विद्वद्वेद्याऽग्निवाणीसूर्य्यविद्युदादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेनसह सङ्गतिर्वेद्या॥२०॥

इति प्रथमं सूक्तं पञ्चदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वन्! आप **(विश्वेषाम्)** सम्पूर्ण **(यज्ञियानाम्)** यज्ञों के अनुष्ठान करनेवालों के **(अदितिः)** अखण्डित अन्तरिक्ष के तुल्य **(विश्वेषाम्)** सम्पूर्ण **(मानुषाणाम्)** मनुष्यों में **(अतिथिः)** अभ्यागत के सदृश वर्त्तमान **(देवानाम्)** विद्वानों के **(अग्निम्)** अग्नि के सदृश **(अवः)** रक्षण को **(आवृणानः)** सब प्रकार स्वीकार करते हुए **(जातवेदाः)** उत्पन्न पदार्थों में विद्यमान हुए **(सुमृळीकः)** उत्तम प्रकार सुख करनेवाले **(भवतु)** हूजिये॥२०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्या! जैसे यज्ञ के सुगन्धित धूम से शुद्ध हुआ अन्तरिक्ष पूर्णविद्यायुक्त, यथार्थवक्ता उपदेश देनेवाला पुरुष और सूर्य्य सुखदेने वाले होते हैं, वैसे ही आप लोग सबों के लिये सुख देनेवाले हूजिये॥२०॥

इस सूक्त में विद्वानों से जानने योग्य अग्नि, वाणी, सूर्य्य, बिजुली आदिकों के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्वसूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह प्रथम सूक्त और पन्द्रहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ विंशत्यृचस्य द्वितीयस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अग्निर्देवता। १, १९ पङ्क्तिः। १२ निचृत् पङ्क्तिः।१४ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २,४-७, ९, १२, १३, १५, १७, १८, २० निचृत्त्रिष्टुप्। ३, १६ त्रिष्टुप्। ८, १०, ११ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथाप्तजनकृत्यमाह॥

अब बीस ऋचा वाले दूसरे सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में यथार्थ मानने वाले पुरुषों के कृत्य को कहते हैं॥

यो मर्त्येष्वमृत ऋतावा देवो देवेष्वरतिर्निधायि।

होता यजिष्ठो मह्ना शुचध्यै हव्यैरग्निर्मनुष ईरयध्यै॥ १॥

यः। मर्त्येषु। अमृतः। ऋतऽवा। देवः। देवेषु। अरतिः। निऽधायि। होता। यजिष्ठः। मह्ना। शुचध्यै। हव्यैः। अग्निः। मनुषः। ईरयध्यै॥ १॥

पदार्थः-(**यः**) (**मर्त्येषु**) मरणधर्मेषु (**अमृतः**) मृत्युधर्मरहितः (**ऋतावा**) सत्यस्वरूपः (**देवः**) दिव्यगुणकर्मस्वभावः कमनीयः (**देवेषु**) दिव्येषु पदार्थेषु विद्वत्सु वा (**अरतिः**) सर्वत्र प्राप्तः (**निधायि**) निधीयते (**होता**) दाता (**यजिष्ठः**) पूजितुमर्हः (**मह्ना**) महत्त्वेन (**शुचध्यै**) शोचितुं पवित्रीकर्त्तुम् (**हव्यैः**) होतुं दातुमर्हैः (**अग्निः**) पावक इव (**मनुषः**) मानवान् (**ईरयध्यै**) प्रेरितुम्॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽग्निर्विद्युदिव मर्त्येष्वमृतः ऋतावा देवेषु देवोऽरतिर्होता मह्ना यजिष्ठो हव्यैस्सहितो मनुष ईरयध्यै शुचध्यै स हृदि निधायि॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वर उत्पत्तिनाशादिगुणरहितत्वेन दिव्यस्वरूपः शुद्धः पवित्रोऽस्ति तं प्रेरणपवित्रताभ्यां भजत॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**अग्निः**) ईश्वर पावक अग्नि वा, बिजुली के सदृश (**मर्त्येषु**) मरणधर्म वालों में (**अमृतः**) मृत्युधर्म से रहित (**ऋतावा**) सत्यस्वरूप (**देवेषु**) उत्तम पदार्थों वा विद्वानों में (**देवः**) उत्तम गुण, कर्म और स्वभाववाला सुन्दर (**अरतिः**) सर्वस्थान में प्राप्त (**होता**) देनेवाला (**मह्ना**) महत्त्व से (**यजिष्ठः**) पूजा करने योग्य (**हव्यैः**) देने के योग्यों के सहित (**मनुषः**) मनुष्यों को (**ईरयध्यै**) प्रेरणा करने को (**शुचध्यै**) पवित्र करने को विद्यमान वह हृदय में (**निधायि**) धारण किया जाता है॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर उत्पत्ति और नाश आदि गुणरहित होने से दिव्यस्वरूप शुद्ध और पवित्र है, उसका प्रेरणा और पवित्रता से भजन करो॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

इह त्वं सूनो सहसो नो अद्य जातो जाताँ उभयाँ अन्तरग्ने।

दूत ईयसे युयुजान ऋष्व ऋजुमुष्कान् वृषणः शुक्रांश्च॥ २॥

इह। त्वम्। सूनो इति। सहसः। नः। अद्य। जातः। जातान्। उभयान्। अन्तः। अग्ने। दूतः। ईयसे। युयुजानः। ऋष्व। ऋजुऽमुष्कान्। वृषणः। शुक्रान्। च॥ २॥

पदार्थः-(**इह**) अस्मिन् संसारे (**त्वम्**) (**सूनो**) पवित्रपुत्र (**सहसः**) बलात् (**नः**) अस्माकम् (**अद्य**) (**जातः**) विद्याजन्मनि प्रादुर्भूतः (**जातान्**) विदुषः (**उभयान्**) अध्यापकान् अध्येतॄंश्च (**अन्तः**) मध्ये (**अग्ने**) अग्निरिव वर्त्तमान (**दूतः**) दुष्टानां परितापकः (**ईयसे**) प्राप्नोषि (**युयुजानः**) समादधन् (**ऋष्व**) प्राप्तविज्ञान (**ऋजुमुष्कान्**) य ऋजुना मुष्णन्ति तान् (**वृषणः**) बलिष्ठान् (**शुक्रान्**) शुद्धिकरान् (**च**)॥ २॥

अन्वयः-हे अग्ने! ऋष्व नः सूनो त्वमिहाद्य सहसो जात ऋजुमुष्कान् वृषणः शुक्रांश्च युयुजानो दूत इव जातानुभयानन्तरीयसे तस्माच्छ्रेयस्करोषि॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथान्तरग्निः सर्वेषां पालको विनाशकश्चास्ति तथैवेह विद्वान् पुत्रः पालको मूर्खश्च विनाशको भवति तस्माद्दीर्घेण ब्रह्मचर्येण स्वसन्तानानुत्तमान् कृत्वा कृतकृत्यतां विजानीत॥ २॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश वर्त्तमान (**ऋष्व**) विज्ञान को प्राप्त (**नः**) हम लोगों के (**सूनो**) पवित्रपुत्र (**त्वम्**) आप (**इह**) इस संसार में (**अद्य**) आज (**सहसः**) बल से (**जातः**) विद्या के जन्म में प्रकट हुए (**ऋजुमुष्कान्**) सरलता से चुराने वाले (**वृषणः**) बलयुक्त जनों और (**शुक्रान्**) शुद्धि करनेवालों का (**च**) भी (**युयुजानः**) समाधान करते हुए (**दूतः**) दुष्टों के सन्ताप देनेवाले के तुल्य (**जातान्**) विद्वान् और (**उभयान्**) पढ़ाने और पढ़ने वालों को (**अन्तः**) मध्य में (**ईयसे**) प्राप्त होते हो, इससे कल्याण करने वाले हो॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे मध्य में अग्नि सब का पालन और नाश करने वाला है, वैसे ही इस संसार में विद्वान् पुत्र तो पालन करनेवाला और मूर्ख विनाश करनेवाला होता है। तिससे दीर्घ ब्रह्मचर्य से अपनी सन्तानों को उत्तम करके कृतकृत्यता अर्थात् जन्मसाफल्य जानो॥ २॥

अथ प्रजाकृत्यमाह॥

अब इस अगले मन्त्र में प्रजा के कृत्य का वर्णन करते हैं॥

अत्या वृधस्नू रोहिता घृतस्नू ऋतस्य मन्ये मनसा जविष्ठा।

अन्तरीयसे अरुषा युजानो युष्मांश्च देवान् विश आ च मर्तान्॥ ३॥

अत्या। वृधस्नू इति वृधऽस्नू। रोहिता। घृतस्नू इति घृतऽस्नू। ऋतस्य। मन्ये। मनसा। जविष्ठा। अन्तः। ईयसे। अरुषा। युजानः। युष्मान्। च। देवान्। विशः। आ। च। मर्तान्॥ ३॥

पदार्थः-**(अत्या)** यावततोऽध्वानं व्याप्नुतस्तौ **(वृधस्नू)** यौ वृधान् प्रस्रवतस्तौ **(रोहिता)** रोहितेन वह्निगुणेन सहितौ **(घृतस्नू)** यौ घृतमुदकं स्नुतः प्रस्रावयतस्तौ **(ऋतस्य)** जलस्य **(मन्ये)** **(मनसा)** **(जविष्ठा)** अतिशयेन वेगवन्तौ **(अन्तः)** मध्ये **(ईयसे)** गच्छसि **(अरुषा)** रक्तगुणविशिष्टौ **(युजानः)** **(युष्मान्)** **(च)** **(देवान्)** **(विशः)** प्रजाः **(आ)** **(च)** **(मर्त्तान्)** मनुष्यान्॥३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यस्त्वमृतस्य यौ वृधस्नू रोहिता घृतस्नू अरुषा मनसा जविष्ठात्या युजानो देवान् युष्मान् मर्त्तांश्च विशश्चान्तरेयसे तानहं मन्ये॥३॥

भावार्थः-यदि मनुष्या वाय्वग्नी अद्भिः सह यानयन्त्रेषु संयोज्य चालयतस्तर्हि वेगप्रहरणाख्यौ जलवाष्पगुणौ मन इव यानादीनि चालयतः॥३॥

पदार्थः-हे विद्वन्! पुरुष जो आप **(ऋतस्य)** जल की **(वृधस्नू)** समृद्धि का विस्तार करते हुए **(रोहिता)** और अग्नि गुण के सहित **(घृतस्नू)** जल को बहाते हुए **(अरुषा)** रक्तगुण विशिष्ट **(मनसा)** मन से भी **(जविष्ठा)** अत्यन्त वेग वाले **(अत्या)** मार्ग को व्याप्त होते हुए वायु और अग्नि को **(युजानः)** संयुक्त करते हुए **(देवान्)** विद्वान् **(युष्मान्)** आप लोगों **(च)** और **(मर्त्तान्)** साधारण मनुष्यों को **(च)** और **(विशः)** प्रजाओं को **(अन्तः)** मध्य में **(आ)** सब प्रकार **(ईयसे)** प्राप्त होते हो, उनको मैं **(मन्ये)** मानता हूँ॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य लोग वायु और अग्नि को जलों के साथ वाहन के यन्त्रों में संयुक्त करके चलाते हैं तो वेग और प्रहरण नामक जल और भाफ के गुण, मन के सदृश वाहन आदिकों को चलाते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अर्यमणं वरुणं मित्रमेषामिन्द्राविष्णू मरुतो अश्विनोत।

स्वश्वो अग्ने सुरथः सुराधा एदु वह सुहविषे जनाय॥४॥

अर्यमणम्। वरुणम्। मित्रम्। एषाम्। इन्द्राविष्णू इति। मरुतः। अश्विना। उत। सुऽअश्वः। अग्ने। सुऽरथः। सुऽराधाः। आ। इत्। ऊम् इति। वह। सुऽहविषे। जनाय॥४॥

पदार्थः-**(अर्यमणम्)** न्यायाधीशम् **(वरुणम्)** श्रेष्ठगुणम् **(मित्रम्)** सखायम् **(एषाम्)** **(इन्द्राविष्णू)** विद्युत्सूत्रात्मानौ **(मरुतः)** वायून् **(अश्विना)** सूर्य्याचन्द्रमसौ **(उत)** **(स्वश्वः)** सुष्ठु अश्वा यस्य सः **(अग्ने)** विद्वन् **(सुरथः)** प्रशस्तयानः **(सुराधाः)** शोभनं राधो धनं यस्य सः **(आ)** **(इत्)** **(उ)** **(वह)** **(सुहविषे)** सुसामग्रीकाय **(जनाय)** मनुष्याय॥४॥

अन्वयः-हे अग्ने! सुराधाः स्वश्वः सुरथस्संस्त्वं सुहविषे जनायाऽर्यमणं वरुणमेषां मित्रमिन्द्राविष्णू मरुत उताऽश्विना आ वह उ सर्वानिदेव सुखय॥४॥

भावार्थः-हे विद्वन्! भवानग्निजलादिपदार्थान् यथावद्विदित्वा कार्येषु सम्प्रयुज्य प्रत्यक्षीकृत्याऽन्यानुपदिश। येन सर्वे धनधान्यसुखयुक्ताः स्युः॥४॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन् पुरुष **(सुराधाः)** उत्तम धन से **(स्वश्वः)** उत्तम घोड़ों और **(सुरथः)** उत्तम वाहनों से युक्त आप **(सुहविषे)** उत्तम सामग्री वाले **(जनाय)** मनुष्य के लिये **(अर्यमणम्)** न्याय के अधीश **(वरुणम्)** श्रेष्ठ गुण वाले **(एषाम्)** इनके **(मित्रम्)** मित्र **(इन्द्राविष्णू)** तथा बिजुली और सूत्रात्मा **(मरुतः)** पवन **(उत)** और **(अश्विना)** सूर्य्य और चन्द्रमा की **(आ, वह)** प्राप्ति कराइये **(उ, इत्)** और सभी सुख दीजिये॥४॥

भावार्थः-हे विद्वन्! आप अग्नि और जलादि पदार्थों को उत्तम प्रकार जान के और कार्य्यों में संयुक्त कर प्रत्यक्ष करके अन्य जनों के लिये उपदेश दीजिये, जिससे कि सब लोग धन धान्य और सुखों से युक्त होवें॥४॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजा के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गोमाँ अग्नेऽविमाँ अश्वी यज्ञो नृवत्सखा सदमिदप्रमृष्यः।

इळावाँ एषो असुर प्रजावान् दीर्घो रयिः पृथुबुध्नः सभावान्॥५॥१६॥

गोऽमान्। अग्ने। अविऽमान्। अश्वी। यज्ञः। नृवत्ऽसखा। सदम्। इत्। अप्रमृष्यः। इळाऽवान्। एषः। असुर। प्रजाऽवान्। दीर्घः। रयिः। पृथुऽबुध्नः। सभाऽवान्॥५॥

पदार्थः-**(गोमान्)** बह्व्यो गावो विद्यन्ते यस्मिन् सः **(अग्ने)** विद्वन् **(अविमान्)** बह्व्योऽवयो विद्यन्ते यस्मिन् सः **(अश्वी)** बह्वश्वः **(यज्ञः)** सङ्गन्तव्यः **(नृवत्सखा)** नृवत्सु नायकयुक्तेषु सुहृत् **(सदम्)** स्थानम् **(इत्)** एव **(अप्रमृष्यः)** परैर्न प्रमर्षणीयः **(इळावान्)** बह्वन्नयुक्तः **(एषः)** **(असुर)** दुष्टानां प्रक्षेप्तः **(प्रजावान्)** बह्व्यः प्रजा विद्यन्ते यस्मिन् **(दीर्घः)** विस्तीर्णः **(रयिः)** धनम् **(पृथुबुध्नः)** विस्तीर्णः प्रबन्धः **(सभावान्)** प्रशस्ता सभा विद्यते यस्य॥५॥

अन्वयः-हे असुराग्ने! त्वं गोमानविमानश्वी यज्ञो नृवत्सखेळावान् प्रजावान् पृथुबुध्नः सभावानप्रमृष्योऽस्त्येष रयिर्दीर्घोऽस्ति स त्वमित्सदमावह॥५॥

भावार्थः-मनुष्यैस्स एव सभाध्यक्षः कर्त्तव्यो यो गोमानविमानश्ववानप्रधर्षितुं योग्यो दुष्टानां दृढप्रबन्धः प्रजावान् भवेत्॥५॥

पदार्थः-हे **(असुर)** दुष्ट पुरुषों के दूर करने वाले **(अग्ने)** विद्वन् पुरुष! आप **(गोमान्)** बहुत गौओं और **(अविमान्)** बहुत भेड़ों से युक्त **(अश्वी)** बहुत घोड़ों वाला **(यज्ञः)** प्राप्त होने योग्य **(नृवत्सखा)** नायकों से युक्त मनुष्यों में मित्र **(इळावान्)** बहुत अन्नयुक्त **(प्रजावान्)** जिसमें बहुत प्रजा विद्यमान ऐसे **(पृथुबुध्नः)** विस्तारसहित प्रबन्ध वाला **(सभावान्)** उत्तम सभा विद्यमान जिनको ऐसे

(अप्रमृष्य:) दूसरों से नहीं दबाने योग्य हैं तथा **(एष:)** यह **(रयि:)** धन **(दीर्घ:)** बड़ा हुआ है, वह आप **(इत्)** ही **(सदम्)** स्थान को प्राप्त हूजिये॥५॥

भावार्थ:-मनुष्यों को वही सभाध्यक्ष करना चाहिये कि जो गौओं, भेड़ों और घोड़ों का पालक और दूसरों से नहीं भय करने और दुष्ट जनों को दूर करने वाला, अच्छे प्रबन्ध से युक्त तथा प्रजावाला हो॥५॥

अथ राजविषयमाह॥

अब अगले मन्त्र में राजविषय को कहते हैं॥

यस्त॑ इ॒ध्मं ज॒भर॑त्सिष्विदा॒नो मू॒र्धानं॑ वा त॒तप॑ते त्वा॒या।

भु॒व॒स्तस्य॒ स्वत॑वाँ पा॒युर॑ग्ने॒ विश्व॑स्मात्सीमघाय॒त उ॑रुष्य॥६॥

य:। ते॒। इ॒ध्मम्। ज॒भर॑त्। सि॒स्वि॒दा॒नः। मू॒र्धान॑म्। वा॒। त॒तप॑ते। त्वा॒ऽया। भुव॑:। तस्य॑। स्वऽत॑वान्। पा॒यु:। अ॒ग्ने॒। विश्व॑स्मात्। सी॒म्। अ॒घ॒ऽय॒त:। उ॒रु॒ष्य॒॥६॥

पदार्थ:-**(य:)** **(ते)** तव **(इध्मम्)** प्रदीप्तम् **(जभरत्)** बिभर्त्ति **(सिष्विदान:)** स्नेहयुक्त: **(मूर्धानम्)** **(वा)** **(ततपते)** ततानां विस्तृतानां पालक **(त्वाया)** यस्त्वामयते **(भुव:)** पृथिव्या: **(तस्य)** **(स्वतवान्)** स्वेन प्रवृद्ध: **(पायु:)** रक्षक: **(अग्ने)** पावक **(विश्वस्मात्)** सर्वस्मात् **(सीम्)** सर्वत: **(अघायत:)** आत्मनोऽघमिच्छत: **(उरुष्य)** रक्ष॥६॥

अन्वय:-हे ततपतेऽग्ने! य: सिष्विदान: स्वतवान् पायुस्त्वाया ते भुव इध्मं मूर्धानं जभरत्तं त्वमुरुष्य वा तस्य मूर्धानं सीमुरुष्य। अघायतस्तस्य विश्वस्मान्मूर्धानं छिन्धि॥६॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! ये युष्माकं प्रतापं शरीराणि राज्यं रक्षित्वा दुष्टान् सर्वतो घ्नन्ति तान् सततं रक्षत॥६॥

पदार्थ:-हे **(ततपते)** लम्बे चौड़े बिथरे हुए चराचर पदार्थों की पालना करने और **(अग्ने)** अग्नि पवित्र करनेवाले! **(य:)** जो **(सिष्विदान:)** स्नेहयुक्त **(स्वतवान्)** अपने से बढ़ा **(पायु:)** रक्षा करनेवाला **(त्वाया)** आपको प्राप्त होता **(ते)** आपकी **(भुव:)** पृथिवी के **(इध्मम्)** तपे हुए **(मूर्धानम्)** मस्तक को **(जभरत्)** पोषण करता है, उसकी आप **(उरुष्य)** रक्षा करो **(वा)** अथवा **(तस्य)** उसके मस्तक की **(सीम्)** सब प्रकार रक्षा करो **(अघायत:)** अपने को पाप की इच्छा करते हुए का **(विश्वस्मात्)** सब प्रकार से मस्तक काटो॥६॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो लोग आप लोगों के प्रताप शरीर और राज्य की रक्षा करके दुष्टों का सब प्रकार नाश करते हैं, उनकी निरन्तर रक्षा करो॥६॥

आप्तजनकृत्यविषयमाह॥

श्रेष्ठजन के कर्त्तव्य के विषय को कहते हैं॥

यस्ते भरादन्नियते चिदन्नं निशिषन्मन्द्रमतिथिमुदीरत्।

आ देवयुरिनधते दुरोणे तस्मिन् रयिर्ध्रुवो अस्तु दास्वान्॥७॥

यः। ते। भरात्। अन्निऽयते। चित्। अन्नम्। निऽशिषत्। मन्द्रम्। अतिथिम्। उत्ऽईरत्। आ। देवऽयुः। इनधते। दुरोणे। तस्मिन्। रयिः। ध्रुवः। अस्तु। दास्वान्॥७॥

पदार्थः-(**यः**) (**ते**) तुभ्यम् (**भरात्**) धरेत् (**अन्नियते**) अदतां नियते निश्चिते समये (**चित्**) (**अन्नम्**) (**निशिषत्**) नितरां विशेषयन् (**मन्द्रम्**) आनन्दप्रदम् (**अतिथिम्**) सत्योपदेशकम् (**उदीरत्**) सन्नुदन् (**आ**) (**देवयुः**) देवान् कामयमानः (**इनधते**) इनमीश्वरं दधाति यस्मिंस्तस्मिन् (**दुरोणे**) गृहे (**तस्मिन्**) (**रयिः**) धनम् (**ध्रुवः**) निश्चलः (**अस्तु**) (**दास्वान्**) दाता॥७॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यो दास्वांस्तेऽन्नियतेऽन्नं निशिषन्मन्द्रमतिथिमुदीरद् देवयुस्सन्निनधते दुरोणेऽन्नमाभराच्चिदपि तस्मिन् ध्रुवो रयिरस्तु तं त्वं भर॥७॥

भावार्थः-ये मनुष्या येषां यादृशमुपकारं कुर्य्युस्तैस्तेषां तादृश उपकारः कर्त्तव्यः॥७॥

पदार्थः-हे विद्वान् पुरुष! (**यः**) जो (**दास्वान्**) देनेवाला (**ते**) आपके लिये (**अन्नियते**) भोजन करने वालों के निश्चित समय में (**अन्नम्**) भोजन के पदार्थ को (**निशिषत्**) अत्यन्त विशेष करता हुआ (**मन्द्रम्**) आनन्द देनेवाले (**अतिथिम्**) सत्योपदेशक को (**उदीरत्**) अच्छे प्रकार प्रेरणा देता और (**देवयुः**) विद्वानों की कामना करता हुआ (**इनधते**) ईश्वर को धारण करता है, जिसमें उस (**दुरोणे**) गृह में अन्न को (**आ, भरात्**) धारण करे (**चित्**) भी (**तस्मिन्**) उसमें (**ध्रुवः**) निश्चल (**रयिः**) धन (**अस्तु**) हो उसको आप पोषण करो॥७॥

भावार्थः-जो मनुष्य जिन मनुष्यों का जैसा उपकार करें, उन मनुष्यों को चाहिये कि उनका वैसा उपकार करें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यस्त्वा दोषा य उषसि प्रशंसात्प्रियं वा त्वा कृणवते हविष्मान्।

अश्वो न स्वे दम आ हेम्यावान्तमंहसः पीपरो दाश्वांसम्॥८॥

यः। त्वा। दोषा। यः। उषसि। प्रऽशंसात्। प्रियम्। वा। त्वा। कृणवते। हविष्मान्। अश्वः। न। स्वे। दमे। आ। हेम्याऽवान्। तम्। अंहसः। पीपरः। दाश्वांसम्॥८॥

पदार्थः-(**यः**) (**त्वा**) त्वाम् (**दोषा**) रात्रौ (**यः**) (**उषसि**) दिने (**प्रशंसात्**) प्रशंसेत् (**प्रियम्**) (**वा**) (**त्वा**) त्वाम् (**कृणवते**) कुर्वते (**हविष्मान्**) प्रशस्तदानसामग्रीयुक्तः (**अश्वः**) तुरङ्गः (**न**) इव (**स्वे**)

स्वकीये **(दमे)** गृहे **(आ)** **(हेम्यावान्)** हेम्न्युदके भवा रात्रिर्विद्यते यस्य। **हेमेत्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२) **(तम्)** **(अंहसः)** अपराधात् **(पीपरः)** पालय **(दाश्वांसम्)** दातारम्॥८॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यस्त्वा दोषोषसि प्रियं त्वाऽऽप्रशंसाद्वा यो हविष्मान् हेम्यावांस्तं दाश्वांसं त्वां त्वां स्वे दमेऽहंसोऽश्वो न पीपरस्तस्मै प्रियं सुखं कृणवते त्वं सुखं देहि॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! येऽहर्निशं युष्मांस्तूत्साहयेयुस्तान् यूयं घासादिना-ऽश्वानिवाऽऽनन्दयत॥८॥

पदार्थः-हे विद्वन्! पुरुष **(यः)** जो **(त्वा)** आपकी **(दोषा)** रात्रि में और **(उषसि)** दिन में **(त्वा)** आपकी **(आ, प्रशंसात्)** सब प्रकार प्रशंसा करे **(वा)** अथवा **(यः)** जो **(हविष्मान्)** उत्तम दान की सामग्री से युक्त **(हेम्यावान्)** जिसके जल में प्रकट हुई रात्रि विद्यमान **(तम्)** उस **(दाश्वांसम्)** देनेवाले आपको **(स्वे)** अपने **(दमे)** घर में **(अंहसः)** अपराध से **(अश्वः)** घोड़े के **(न)** सदृश **(पीपरः)** पाले उस **(प्रियम्)** प्रिय सुख **(कृणवते)** करते हुए के लिये आप सुख दीजिये॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो लोग दिन और रात्रि आप का उत्साह बढ़ावें, उनको आप लोग घास आदि से घोड़ों को जैसे वैसे आनन्द देओ॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यस्तुभ्यमग्ने अमृताय दाशद्दुवस्त्वे कृणवते यतस्रुक्।

न स राया शशमानो वि योषन्नैनमंहः परि वरदघायोः॥९॥

यः। तुभ्यम्। अग्ने। अमृताय। दाशत्। दुवः। त्वे इति। कृणवते। यतऽस्रुक्। न। सः। राया। शशमानः। वि। योषत्। न। एनम्। अंहः। परि। वरत्। अघऽयोः॥९॥

पदार्थः-**(यः)** **(तुभ्यम्)** **(अग्ने)** विद्वन् **(अमृताय)** मोक्षाय **(दाशत्)** दद्यात् **(दुवः)** परिचरणम् **(त्वे)** त्वयि **(कृणवते)** कुर्वते **(यतस्रुक्)** उद्यतक्रियासाधनः **(न)** **(सः)** **(राया)** धनेन **(शशमानः)** प्लवमानः **(वि, योषत्)** वियुज्येत **(न)** **(एनम्)** **(अंहः)** **(परि)** **(वरत्)** वृणुयात् **(अघायोः)** पापिनः॥९॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्तुभ्यममृताय दाशत् त्वे दुवः कृणवते तस्मै त्वमपि विज्ञानं देहि। यो राया शशमानो यतस्रुक् सन्नेनमंहो न वियोषत् सोऽघायोरंहो न परि वरत्॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! युष्मासु ये यथा प्रीतिं कुर्वन्ति तथैव तेषु भवन्तः स्नेहं कुर्वन्तु॥९॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान् पुरुष! **(यः)** जो **(तुभ्यम्)** आपके लिये **(अमृताय)** मोक्ष के अर्थ **(दाशत्)** देवे **(त्वे)** वा आप में **(दुवः)** सेवा को **(कृणवते)** करता है, उसके लिये आप भी विज्ञान

दीजिये। जो पुरुष **(राया)** धन से **(शशमान:)** उछलता और **(यतस्रुक्)** उद्यत है क्रिया के साधन जिसके ऐसा होता हुआ **(एनम्)** इसको **(अंह:)** दु:ख देनेवाले को **(न)** नहीं **(वि, योषत्)** त्याग करे **(स:)** वह **(अघायो:)** पापी की हिंसा को **(न)** नहीं **(परि, वरत्)** सब ओर से स्वीकार करे॥९॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! आप लोगों में जैसे जो लोग प्रीति करते हैं, वैसे ही उनमें आप लोग स्नेह करें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यस्य॒ त्वम॑ग्ने अध्व॒रं जुजो॑षो दे॒वो मर्त॑स्य॒ सुधि॑तं॒ रराण:।

प्री॒तेद॑स॒द्धोत्रा॒ सा य॑वि॒ष्ठासा॑म॒ यस्य॑ विध॒तो वृ॒धास॑:॥ १०॥ १७॥

यस्य॑। त्वम्। अ॒ग्ने। अ॒ध्व॒रम्। जुजो॑ष:। दे॒व:। मर्त॑स्य। सु॒ऽधि॑तम्। ररा॑ण:। प्री॒ता। इत्। अ॒स॒त्। होत्रा॑। सा। य॒वि॒ष्ठ। असा॑म। यस्य॑। वि॒ध॒त:। वृ॒धास॑:॥ १०॥

पदार्थ:-**(यस्य)** **(त्वम्)** **(अग्ने)** पावकवद्वर्त्तमान विद्वन् **(अध्वरम्)** अहिंसनीयव्यवहारम् **(जुजोष:)** भृशं सेवसे **(देव:)** दिव्यसुखदाता **(मर्त्तस्य)** मनुष्यस्य **(सुधितम्)** सुहितम्। अत्र वर्णव्यत्ययेन हस्य ध:। **(रराण:)** भृशं दाता **(प्रीता)** प्रसन्ना **(इत्)** **(असत्)** भवेत् **(होत्रा)** ग्राह्या **(सा)** **(यविष्ठ)** अतिशयेन युवन् **(असाम)** भवेम **(यस्य)** **(विधत:)** विधानं कुर्वत: **(वृधास:)** वर्धकास्सन्त:॥१०॥

अन्वय:-हे यविष्ठाऽग्ने! यस्याऽध्वरं त्वं जुजोषो देवस्सन् यस्य विधतो मर्त्तस्य सुधितं रराण: सा होत्रा प्रीतेद् मय्यसद् वृधास: सन्तो वयमसाम सोऽस्मांस्तथैव सुखयेत्॥१०॥

भावार्थ:-यो यस्य सुखं साध्नुयात्तेनापि स सुखेनाऽलङ्कर्त्तव्य:॥१०॥

पदार्थ:-हे **(यविष्ठ)** अति जवान **(अग्ने)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान विद्वान् पुरुष! **(यस्य)** जिसके **(अध्वरम्)** हिंसारहित व्यवहार को **(त्वम्)** आप **(जुजोष:)** अत्यन्त सेवन करते हैं **(देव:)** उत्तम सुख के देनेवाले हुए **(यस्य)** जिस **(विधत:)** विधान करने वाले **(मर्त्तस्य)** मनुष्य के **(सुधितम्)** उत्तम हित के **(रराण:)** अत्यन्त देनेवाले हो उसकी **(सा)** वह **(होत्रा)** ग्रहण करने योग्य क्रिया **(प्रीता)** प्रसन्न **(इत्)** ही अर्थात् सफल ही मेरे में **(असत्)** होवे **(वृधास:)** वृद्धि करने वाले होते हुए हम लोग **(असाम)** प्रसिद्ध होवें और वह हम लोगों को वैसे ही सुख देवे॥१०॥

भावार्थ:-जो जिसके सुख को साधे उस पुरुष को चाहिये कि उस उपकार करने वाले पुरुष को भी सुख देवें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

चित्तिमचित्तिं चिनवद्वि विद्वान् पृष्ठेव वीता वृजिना च मर्तान्।
राये च नः स्वपत्याय देव दितिं च रास्वादितिमुरुष्य॥ ११॥

चित्तिम्। अचित्तिम्। चिनवत्। वि। विद्वान्। पृष्ठाऽइव। वीता। वृजिना। च। मर्तान्। राये। च। नः। सुऽअपत्याय। देव। दितिम्। च। रास्व। अदितिम्। उरुष्य॥ ११॥

पदार्थः-(**चित्तिम्**) कृतचयनां क्रियाम् (**अचित्तिम्**) अकृतचयनाम् (**चिनवत्**) चिनुयात् (**वि**) (**विद्वान्**) (**पृष्ठेव**) पृष्ठानीव (**वीता**) वीतानि प्राप्तानि (**वृजिना**) वृजिनानि बलानि (**च**) (**मर्त्तान्**) मनुष्यान् (**राये**) धनाय (**च**) (**नः**) अस्माकम् (**स्वपत्याय**) शोभनान्यपत्यानि यस्मात्तस्मै (**देव**) विद्वन् (**दितिम्**) खण्डितां क्रियाम् (**च**) (**रास्व**) देहि (**अदितिम्**) नाशरहिताम् (**उरुष्य**) सेवस्व॥ ११॥

अन्वयः-हे देव! यो वि विद्वान् पृष्ठेव वीता वृजिना मर्त्तांश्च नः स्वपत्याय राये च चित्तिमचित्तिं चिनवत्तस्मै दितिं रास्व चाऽदितिमुरुष्य॥ ११॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथोष्ट्रादयः पृष्ठैर्भारं वहन्ति तथैव बलिष्ठा जनाः सर्वं व्यवहारभारं वहन्ति व्यवहारे यस्य खण्डनं यस्य च मण्डनं कर्त्तव्यं स्यात्तत्तस्य तथैव कार्य्यम्॥ ११॥

पदार्थः-हे (**देव**) विद्वान् पुरुष! जो (**वि**) विशेष करके (**विद्वान्**) विद्यायुक्त पुरुष (**पृष्ठेव**) पीठों के सदृश (**वीता**) प्राप्त (**वृजिना**) पराक्रमों को (**मर्त्तान्**) मनुष्यों को (**च**) भी (**नः**) हम लोगों के (**स्वपत्याय**) उत्तम सन्तान जिससे उस (**राये**) धन के लिये (**च**) और (**चित्तिम्**) किया संग्रह जिसमें उस क्रिया और (**अचित्तिम्**) जिसमें संग्रह नहीं किया उसका (**चिनवत्**) संग्रह करे, उसके लिये (**दितिम्**) खण्डित क्रिया को (**रास्व**) दीजिये (**च**) और (**अदितिम्**) अखण्डित क्रिया का (**उरुष्य**) सेवन कीजिये॥ ११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे ऊंट आदि पीठों से भार को ले चलते हैं, वैसे ही बलवान् पुरुष सब व्यवहार के भार को धारण करते हैं। और व्यवहार में जिसका खण्डन और जिसका मण्डन करने योग्य होवे, वह उसका वैसा ही करना चाहिये॥ ११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कविं शशासुः कवयोऽदब्धा निधारयन्तो दुर्यास्वायोः।
अतस्त्वं दृश्याँ अग्न एतान् पड्भिः पश्येरद्भुताँ अर्य एवैः॥ १२॥

कविम्। शशासुः। कवयः। अदब्धाः। निऽधारयन्तः। दुर्यासु। आयोः। अतः। त्वम्। दृश्यान्। अग्ने। एतान्। पट्ऽभिः। पश्येः। अद्भुतान्। अर्यः। एवैः॥ १२॥

पदार्थः-(**कविम्**) कान्तप्रज्ञं मेधाविनम् (**शशासुः**) शासति (**कवयः**) प्राज्ञा विपश्चितः (**अदब्धाः**) अहिंसनीयाः (**निधारयन्तः**) (**दुर्यासु**) गृहेषु (**आयोः**) जीवनस्य (**अतः**) (**त्वम्**) (**दृश्यान्**) द्रष्टव्यान् (**अग्ने**) अग्निरिव प्रकाशमानविद्य (**एतान्**) प्रत्यक्षान् (**पड्भिः**) विज्ञानादिभिः (**पश्येः**) (**अद्भुतान्**) आश्चर्यगुणकर्मस्वभावान् (**अर्यः**) (**एवैः**) प्राप्तैः॥१२॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा अदब्धाः कवयः कविं दुर्यास्वदब्धा निधारयन्तः शशासुरायोर्वर्धनं शशासुरतस्त्वमेवैः पड्भिरेतानद्भुतान् दृश्यान् कवीनर्य इव पश्येः॥१२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! येऽध्यापकोपदेशका बुद्धिमतोऽध्यापयन्त्युपदिशन्ति तान्त्सदैव सत्कुरु यतो मनुष्या आश्चर्यगुणकर्मस्वभावाः स्युः॥१२॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश प्रकाशमान विद्वन् पुरुष! जैसे (**अदब्धाः**) अहिंसनीय (**कवयः**) बुद्धिमान् पण्डित लोग (**कविम्**) उत्तम बुद्धिवाले को (**दुर्यासु**) गृहों में [अहिंसनीय] (**निधारयन्तः**) धारण करते हुए (**शशासुः**) शासन करते हैं (**आयोः**) जीवन की वृद्धि का शासन करते हैं (**अतः**) इस कारण से (**त्वम्**) आप (**एवैः**) प्राप्त (**पड्भिः**) विज्ञान आदिकों से (**एतान्**) इन प्रत्यक्ष (**अद्भुतान्**) आश्चर्ययुक्त गुण, कर्म और स्वभाव वाले (**दृश्यान्**) देखने योग्य श्रेष्ठ बुद्धि वाले जनों को (**अर्यः**) स्वामी के समान (**पश्येः**) देखिये॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो अध्यापक और उपदेशक लोग बुद्धिमान् पुरुषों को पढ़ाते और उपदेश देते हैं, उनका सदा ही सत्कार करो, जिससे कि मनुष्य लोग आश्चर्ययुक्त गुण, कर्म और स्वभाव वाले होवें॥१२॥

अथ राजविषयमाह॥

अब अगले मन्त्र में राजा के विषय को कहते हैं॥

त्वमग्ने वाघते सुप्रणीतिः सुतसोमाय विधते यविष्ठ।

रत्नं भर शशमानाय घृष्वे पृथुश्चन्द्रमवसे चर्षणिप्राः॥१३॥

त्वम्। अग्ने। वाघते। सुऽप्रनीतिः। सुतऽसोमाय। विधते। यविष्ठ। रत्नम्। भर। शशमानाय। घृष्वे। पृथु। चन्द्रम्। अवसे। चर्षणिऽप्राः॥१३॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**अग्ने**) अग्निरिव पूर्णविद्यया प्रकाशमान (**वाघते**) मेधाविने (**सुप्रणीतिः**) सुष्ठु प्रगता नीतिर्येन सः (**सुतसोमाय**) सुतः सोम ऐश्वर्यमोषधिरसो वा येन तस्मै (**विधते**) विविधव्यवहारं यथावत्कुर्वते (**यविष्ठ**) अतिशयेन युवन् (**रत्नम्**) रमणीयं धनम् (**भर**) धर (**शशमानाय**) सर्वेषां दुःखानामुल्लङ्घकाय (**घृष्वे**) पदार्थानां सङ्घर्षक (**पृथु**) विस्तीर्णपुरुषार्थः (**चन्द्रम्**) आह्लादकरं सुवर्णम् (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**चर्षणिप्राः**) यश्चर्षणीन् मनुष्यान् प्राति व्याप्नोति सः॥१३॥

अन्वयः-हे घृष्वे यविष्ठाग्ने! सुप्रणीतिः पृथु चर्षणिप्राः संस्त्वं सुतसोमाय शशमानाय विधते वाघतेऽवसे चन्द्रं रत्नं भर॥१३॥

भावार्थः-हे राजन्! ये धार्मिकाः शूरा विद्वांसः शत्रुबलस्योल्लङ्घकाः परस्परं पदार्थघर्षणेन विद्युदादिविद्याप्रकाशका मनुष्यरक्षका अमात्यादयो भृत्याः स्युस्तदर्थमैश्वर्य्यं सततं धर॥१३॥

पदार्थः-हे **(घृष्वे)** पदार्थों के घिसने वाले **(यविष्ठ)** अत्यन्त युवन् **(अग्ने)** अग्नि के सदृश पूर्णविद्या से प्रकाशमान! **(सुप्रणीतिः)** उत्तम प्रकार चली हुई नीति जिनके विद्यमान **(पृथु)** जिनका पुरुषार्थ विस्तृत हो रहा है **(चर्षणिप्राः)** जो मनुष्यों को व्याप्त होने वाले **(त्वम्)** आप **(सुतसोमाय)** उत्पन्न किया गया ऐश्वर्य वा ओषधियों का रस जिससे उस **(शशमानाय)** सब के दुःखों के उल्लङ्घन करनेवाले **(विधते)** अनेक प्रकार के व्यवहार को यथावत् करते हुए **(वाघते)** बुद्धिमान् के लिये **(अवसे)** रक्षण आदि के अर्थ **(चन्द्रम्)** प्रसन्न करने वाले सुवर्ण और **(रत्नम्)** रमणीय मनोहर धन का **(भर)** धारण करो॥१३॥

भावार्थः-हे राजन्! जो धार्मिक शूरवीर विद्वान् लोग शत्रु के बल के उल्लङ्घन करने, परस्पर पदार्थों के घिसने से बिजुली आदि की विद्या के प्रकाश करने और मनुष्यों की रक्षा करने वाले मन्त्री आदि नौकर होवें, उनके लिये ऐश्वर्य निरन्तर धारण करो॥१३॥

अथ प्रजाजनकृत्यमाह॥

अब प्रजाजन के कृत्य को कहते हैं॥

अधा ह यद्वयमग्ने त्वाया पड्भिर्हस्तेभिश्चकृमा तनूभिः।

रथं न क्रन्तो अपसा भुरिजोर्ऋतं येमुः सुध्य आशुषाणाः॥१४॥

अध। ह। यत्। वयम्। अग्ने। त्वाऽया। पड्ऽभिः। हस्तेभिः। चकृम। तनूभिः। रथम्। न। क्रन्तः। अपसा। भुरिजोः। ऋतम्। येमुः। सुऽध्यः। आशुषाणाः॥१४॥

पदार्थः-**(अध)** अथ। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(ह)** किल **(यत्)** यम् **(वयम्)** **(अग्ने)** पावकवद्वर्त्तमान राजन् **(त्वाया)** त्वां प्राप्ता। अत्र विभक्तेराकारादेशः **(पड्भिः)** पादैः। अत्र वर्णव्यत्ययेन दस्य डः। **(हस्तेभिः)** **(चकृम)** कुर्याम। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(तनूभिः)** शरीरैः **(रथम्)** विमानादियानम् **(न)** इव **(क्रन्तः)** क्रमकः **(अपसा)** कर्मणा **(भुरिजोः)** धारकपोषकयोः **(ऋतम्)** सत्यम् **(येमुः)** यच्छेयुः **(सुध्यः)** शोभना धीर्येषान्ते **(आशुषाणाः)** सद्यो विभाजकाः॥१४॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वाया सुध्य आशुषाणा वयं हस्तेभिः पड्भिस्तनूभिर्यद्यं रथं न चकृम। अध ह येऽपसा भुरिजोर्ऋत येमुस्तं रथं न त्वं क्रन्तो भव॥१४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैरालस्यं विहाय शरीरादिभिः पुरुषार्थं सदैवाऽनुष्ठाय प्रजाराज्ययोर्धर्म्येण नियमः कर्त्तव्यो येन सर्व आढ्याः स्युः॥१४॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान राजन्! **(त्वाया)** आपको प्राप्त **(सुध्यः)** उत्तम बुद्धि वाले **(आशुषाणाः)** शीघ्र विभाग करनेवाले **(वयम्)** हम लोग **(हस्तेभिः)** हाथों **(पद्भिः)** पैरों और **(तनूभिः)** शरीरों से **(यत्)** जिस **(रथम्)** विमान आदि वाहन के **(न)** सदृश **(चक्रम)** करें **(अध)** इसके अनन्तर **(ह)** निश्चय जो **(अपसा)** कर्म से **(भुरिजोः)** धारण और पोषण करनेवालों के **(ऋतम्)** सत्य को **(येमुः)** प्राप्त होवें उस विमान आदि वाहन के सदृश **(क्रन्तः)** क्रम से चलने वाले हूजिये॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि आलस्य त्याग के शरीरादिकों से पुरुषार्थ को सदा ही करके प्रजा और राज्य का धर्म से नियम करें, जिससे सब लोग धनयुक्त होवें॥१४॥

अथ राजविषयमाह॥

अब इस अगले मन्त्र में राजा के विषय को कहते हैं॥

अधा मातुरुषसः सप्त विप्रा जायेमहि प्रथमा वेधसो नॄन्।

दिवस्पुत्रा अङ्गिरसो भवेमाद्रिं रुजेम धनिनं शुचन्तः॥१५॥१८॥

अध। मातुः। उषसः। सप्त। विप्राः। जायेमहि। प्रथमाः। वेधसः। नॄन्। दिवः। पुत्राः। अङ्गिरसः। भवेम। अद्रिम्। रुजेम। धनिनम्। शुचन्तः॥१५॥

पदार्थः-**(अध)** आनन्तर्य्ये **(मातुः)** मातृवद्वर्त्तमानाया विद्यायाः **(उषसः)** प्रभातवेलाया दिनमिव **(सप्त)** राजप्रधानाऽमात्यसेनासेनाध्यक्षप्रजाचाराः **(विप्राः)** धीमन्तः **(जायेमहि)** **(प्रथमाः)** प्रख्याता आदिमाः **(वेधसः)** प्राज्ञान् **(नॄन्)** नायकान् **(दिवः)** प्रकाशस्य **(पुत्राः)** तनयाः **(अङ्गिरसः)** प्राणा इव **(भवेम)** **(अद्रिम्)** मेघमिव शत्रुम् **(रुजेम)** प्रभग्नम् कुर्य्याम **(धनिनम्)** बहुधनवन्तं प्रजास्थम् **(शुचन्तः)** विद्याविनयाभ्यां पवित्राः॥१५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथोषसः सप्तविधाः किरणा जायन्ते तथैव मातुर्विद्याया वयं प्रथमा विप्राः सप्त जायेमहि। वेधसो नॄन् प्राप्नुयाम दिवस्पुत्रा अङ्गिरसोऽद्रिमिव शत्रून् रुजेमाऽध धनिनं शुचन्तः प्रशंसिता भवेम॥१५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये राजानो बुद्धिमतोऽमात्यान् सत्कृत्य रक्षन्ति ते सूर्य इव प्रकाशितकीर्त्तयो भवन्ति सर्वदैव व्यवसायिनो रक्षित्वा दुष्टान् सततं ताडयेयुर्येन सर्वे पवित्राचाराः स्युः॥१५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(उषसः)** प्रभातवेला के दिन के समान सात प्रकार के किरणें होते हैं, वैसे ही **(मातुः)** माता के सदृश वर्त्तमान विद्या से हम लोग **(प्रथमाः)** प्रथम प्रसिद्ध **(विप्राः)** बुद्धिमान् **(सप्त)** सात प्रकार के अर्थात् राजा, प्रधान, मन्त्री, सेना, सेना के अध्यक्ष, प्रजा और चारादि **(जायेमहि)** होवें और **(वेधसः)** बुद्धिमान् **(नॄन्)** नायक पुरुषों को प्राप्त हों और **(दिवः)** प्रकाश के **(पुत्राः)**

विस्तारने वाले **(अङ्गिरसः)** जैसे प्राणवायु **(अद्रिम्)** मेघ को वैसे शत्रु को **(रुजेम)** छिन्न-भिन्न करें **(अध)** इसके अनन्तर **(धनिनम्)** बहुत धनयुक्त प्रजा में विद्यमान को **(शुचन्तः)** विद्या और विनय से पवित्र करते हुए **(भवेम)** प्रसिद्ध होवें॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा लोग बुद्धिमान् मन्त्रियों का सत्कार करके रक्षा करते हैं, वे सूर्य्य के सदृश प्रकाशित यशवाले होते हैं और सभी काल में उद्योगियों की रक्षा और दुष्टों का निरन्तर ताड़न करें, जिससे कि सब शुद्ध आचरण वाले होवें॥१५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अधा यथा नः पितरः परासः प्रत्नासो अग्न ऋतमाशुषाणाः।

शुचीदयन्दीधितिमुक्थशासः क्षामा भिन्दन्तो अरुणीरप व्रन्॥१६॥

अध। यथा। नः। पितरः। परासः। प्रत्नासः। अग्ने। ऋतम्। आशुषाणाः। शुचि। इत्। अयन्। दीधितिम्। उक्थऽशसः। क्षाम। भिन्दन्तः। अरुणीः। अप। व्रन्॥१६॥

पदार्थः-**(अध)** आनन्तर्य्ये। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(यथा)** येन प्रकारेण **(नः)** अस्माकम् **(पितरः)** जनकाः **(परासः)** भविष्यन्तः **(प्रत्नासः)** भूताः **(अग्ने)** पावकवद्वर्त्तमान राजन् **(ऋतम्)** सत्यं न्याय्यम् **(आशुषाणाः)** समन्ताद्विभजन्तः **(शुचि)** पवित्रं शुद्धिकरम् **(इत्)** एव **(अयन्)** प्राप्नुवन्ति **(दीधितिम्)** नीतिप्रकाशम् **(उक्थशासः)** प्रशंसितशासनाः **(क्षाम)** पृथिवीम्। **क्षामेति पृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(भिन्दन्तः)** विदृणन्तः **(अरुणीः)** प्राप्ताः प्रजाः **(अप)** **(व्रन्)** वृणुयुः॥१६॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा नः परासः प्रत्नासः पितरः शुच्यृतमाशुषाणा उक्थशासः क्षाम भिन्दन्तो दीधितिमयन्। अधाऽरुणीरपव्रँस्तथैव त्वमस्मासु वर्त्तस्व॥१६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये प्रजा राजपुरुषाश्च प्रजासु पितृवद्वर्त्तित्वा सत्यं न्यायं प्रकाश्याऽविद्यां निवार्य्य प्रजाः शिक्षन्ते ते पवित्रा गण्यन्ते॥१६॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान राजन्! **(यथा)** जिस प्रकार से **(नः)** हम लोगों के **(परासः)** होने वाले **(प्रत्नासः)** हुए **(पितरः)** उत्पन्न करने वाले पितृ लोग **(शुचि)** पवित्र, शुद्धि करने वाले **(ऋतम्)** सत्य न्याययुक्त व्यवहार को **(आशुषाणाः)** सब प्रकार बांटते और **(उक्थशासः)** प्रशंसित शासनों वाले **(क्षाम)** पृथिवी को **(भिन्दन्तः)** विदारते हुए **(दीधितिम्)** नीति के प्रकाश को **(अयन्)** प्राप्त होते हैं **(अध)** इसके अनन्तर **(अरुणीः)** प्राप्त प्रजाओं को **(अप)** **(व्रन्)** स्वीकार करें, वैसे **(इत्)** ही आप हम लोगों में वर्त्ताव करो॥१६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजा और राजपुरुष प्रजाओं में पिता के सदृश वर्त्ताव

करके सत्य, न्याय का प्रकाश कर और अविद्या को दूर करके प्रजाओं को शिक्षा देते हैं, वे पवित्र गिने जाते हैं॥१६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सुकर्माणः सुरुचो देवयन्तोऽयो न देवा जनिमा धमन्तः।

शुचन्तो अग्निं ववृधन्त इन्द्रमूर्वं गव्यं परिषदन्तो अग्मन्॥१७॥

सुऽकर्माणः। सुऽरुचः। देवऽयन्तः। अयः। न। देवाः। जनिम। धमन्तः। शुचन्तः। अग्निम्। ववृधन्तः। इन्द्रम्। ऊर्वम्। गव्यम्। परिऽसदन्तः। अग्मन्॥१७॥

पदार्थः-(**सुकर्माणः**) शोभनानि कर्माणि येषान्ते (**सुरुचः**) सुष्ठु रुचः प्रीतयो येषान्ते (**देवयन्तः**) कामयमानाः (**अयः**) सुवर्णम् (**न**) इव (**देवाः**) विद्वांसः (**जनिम**) जन्म। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**धमन्तः**) कम्पयन्तः (**शुचन्तः**) पवित्राचरणं कुर्वन्तः कारयन्तः (**अग्निम्**) प्रसिद्धपावकम् (**ववृधन्तः**) वर्धयन्ति (**इन्द्रम्**) विद्युतम् (**ऊर्वम्**) हिंसकम् (**गव्यम्**) गोमयं वाङ्मयम् (**परिषदन्तः**) परिषदमाचरन्तः (**अग्मन्**) गच्छन्ति॥१७॥

अन्वयः-हे राजप्रजाजना! भवन्तोऽयो धमन्तो न देवा जनिम देवयन्तः सुकर्माणः सुरुचः शुचन्तोऽग्निं ववृधन्तः परिषदन्त ऊर्वमिन्द्रं गव्यमग्मंस्तथैव यूयमाचरत॥१७॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। सर्वैर्मनुष्यैर्धर्म्याणि कर्माणि कृत्वा विद्यायां सभायां च रुचिं जनयित्वा पवित्रता कामयमाना विद्याजन्मना वर्धमाना विद्युदादिविद्यामुन्नयन्तस्साम्राज्यं कृत्वानन्दः सततं भोक्तव्यः॥१७॥

पदार्थः-हे राजा और प्रजाजन! आप लोगों (**अयः**) सुवर्ण को (**धमन्तः**) कंपाते हुओं के (**न**) सदृश (**देवाः**) विद्वान् लोग (**जनिम**) जन्म की (**देवयन्तः**) कामना करते हुए (**सुकर्माणः**) जिनके उत्तम कर्म (**सुरुचः**) वा श्रेष्ठ प्रीति वह (**शुचन्तः**) पवित्र आचरण को करते और कराते हुए (**अग्निम्**) प्रसिद्ध अग्नि को (**ववृधन्तः**) बढ़ाते हैं (**परिषदन्तः**) और सभा का आचरण करते हुए (**ऊर्वम्**) हिंसा करने वाली (**इन्द्रम्**) बिजुली को (**गव्यम्**) वाणीमय शास्त्र को (**अग्मन्**) प्राप्त होते हैं, वैसा ही आप लोग आचरण करो॥१७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। सब मनुष्यों को चाहिये कि धर्मयुक्त कर्मों को करके विद्या और सभा में प्रीति उत्पन्न करके पवित्रता की कामना करते हुए विद्या और जन्म से बढ़ने वाले बिजुली आदि की विद्या को बढ़ाते हुए चक्रवर्त्ती राज्य करके आनन्द का निरन्तर भोग करें॥१७॥

अथ राज्ञो विषयमाह॥

अब राजा के विषय को कहते हैं॥

आ यूथेव क्षुमति पश्वो अख्यद्देवानां यज्जनिमान्त्युग्र।

मर्तानां चिदुर्वशीरकृप्रन्वृधे चिदर्य उपरस्यायोः॥१८॥

आ। यूथाऽइव। क्षुऽमति। पश्वः। अख्यत्। देवानाम्। यत्। जनिम। अन्ति। उग्र। मर्तानाम्। चित्। उर्वशीः। अकृप्रन्। वृधे। चित्। अर्यः। उपरस्य। आयोः॥१८॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**यूथेव**) सैन्यानीव (**क्षुमति**) बहु क्ष्वन्नं विद्यते यस्मिंस्तस्मिन् (**पश्वः**) पशोः (**अख्यत्**) प्रख्याति (**देवानाम्**) विदुषाम् (**यत्**) यानि (**जनिम**) जन्मानि (**अन्ति**) समीपे (**उग्र**) तेजस्विन् (**मर्त्तानाम्**) मनुष्याणाम् (**चित्**) अपि (**उर्वशीः**) बहुव्यापिकाः। **उर्वशीति पदनामसु पठितम्।** (निघं०४.२) (**अकृप्रन्**) कल्पन्ते (**वृधे**) वर्द्धनाय (**चित्**) इव (**अर्य्यः**) स्वामी (**उपरस्य**) मेघस्य (**आयोः**) जीवनस्य प्रापकस्य॥१८॥

अन्वयः-हे उग्र राजन्! भवान् देवानां मर्त्तानां चान्ति यज्जनिमाऽऽख्यत् क्षुमति यूथेवाऽऽख्यत्। अर्य्यश्चिदिवोपरस्यायोः पश्वश्चिद् वृध उर्वशीर्देवा अकृप्रन्॥१८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यन्मनुष्याणां मध्ये राजजन्म तन्महापुण्यजमिति वेद्यम्। यदि राजा न स्यात्तर्हि कोऽपि स्वास्थ्यं न प्राप्नुयाद् यथा मेघस्य सकाशात् सर्वेषां जीवनवर्धने भवतस्तथैव राज्ञः सर्वस्याः प्रजायाः वृद्धिजीवने भवतः॥१८॥

पदार्थः-हे (**उग्र**) तेजस्वी राजन्! आप (**देवानाम्**) विद्वान् (**मर्त्तानाम्**) मनुष्यों के (**अन्ति**) समीप में (**यत्**) जिन (**जनिम**) जन्मों को (**आ, अख्यत्**) सब ओर से प्रसिद्ध करते वा (**क्षुमति**) बहुत अन्न जिसमें विद्यमान उसमें (**यूथेव**) सेनाजनों के सदृश प्रसिद्ध करते हैं (**अर्य्यः**) और जैसे स्वामी (**चित्**) वैसे (**उपरस्य**) मेघ और (**आयोः**) जीवन प्राप्त कराने वाले (**पश्वः**) पशु की (**चित्**) भी (**वृधे**) वृद्धि के लिये (**उर्वशीः**) बहुत व्याप्त होनेवाली क्रियाओं की विद्वान् लोग (**अकृप्रन्**) कल्पना करते हैं॥१८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्यों के मध्य में राजा का जन्म वह बड़े पुण्य से उत्पन्न हुआ ऐसा जानना चाहिये। जो राजा विद्यमान न हो तो कोई भी स्वस्थता को नहीं प्राप्त हो और जैसे मेघ के समीप से सब का जीवन और वृद्धि होती है, वैसे ही राजा के समीप से सब प्रजा की वृद्धि और जीवन होता है॥१८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अकर्म ते स्वपसो अभूम ऋतमवस्रन्नुषसो विभातीः।

अनूनमग्निं पुरुधा सुश्चन्द्रं देवस्य मर्मृजतश्चारु चक्षुः॥१९॥

अर्कर्म। ते। सुऽअपसः। अभूम। ऋतम्। अवस्रन्। उषसः। विभातीः। अनूनम्। अग्निम्। पुरुधा। सुऽचन्द्रम्। देवस्य। मर्मृजतः। चारु। चक्षुः॥१९॥

पदार्थः-(**अकर्म**) कुर्याम (**ते**) तव (**स्वपसः**) सुष्ठ्वपो धर्म्यं कर्म कुर्वाणाः (**अभूम**) भवेम (**ऋतम्**) सत्यम् (**अवस्रन्**) वसन्ति (**उषसः**) प्रभातवेलाः (**विभातीः**) प्रकाशयन्त्यः (**अनूनम्**) पुष्कलम् (**अग्निम्**) (**पुरुधा**) बहुप्रकारैः (**सुश्चन्द्रम्**) शोभनं चन्द्रं हिरण्यं यस्मात्तम् (**देवस्य**) कामयमानस्य (**मर्मृजतः**) भृशं शोधयतः (**चारु**) सुन्दरम् (**चक्षुः**) नेत्रम्॥१९॥

अन्वयः-हे राजन्! यथा विभातीरुषसोऽनूनं सुश्चन्द्रम्मर्मृजतो देवस्य चारु चक्षुरग्निं पुरुधावस्रन् तथैवर्त्तं सेवमाना स्वपसो वयं ते मर्मृजतो देवस्य हितमकर्म ते सखायोऽभूम॥१९॥

भावार्थः-हे राजन्! यथा सूर्य्यादुत्पन्नोषा सर्वान् सुशोभितान् करोति तथैव ब्रह्मचर्य्येण जाता विद्वांसो वयं तवाऽऽज्ञायां यथा वर्त्तेमहि तथैव भवानस्माकं हितं सततं करोतु सर्वे वयं मिलित्वाऽन्यायं निवर्त्य धर्म्याणि कर्माणि प्रवर्त्तयेम॥१९॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे (**विभातीः**) प्रकाश करती हुई (**उषसः**) प्रभातवेलाओं को (**अनूनम्**) और बहुत (**सुश्चन्द्रम्**) सुन्दर सुवर्ण जिससे होता उसको (**मर्मृजतः**) अत्यन्त शोधते हुए (**देवस्य**) कामना करने वाले के (**चारु**) सुन्दर (**चक्षुः**) नेत्र (**अग्निम्**) और अग्नि को (**पुरुधा**) बहुत प्रकारों से (**अवस्रन्**) वसते हैं, वैसे ही (**ऋतम्**) सत्य की सेवा करते और (**स्वपसः**) उत्तम धर्म-सम्बन्धी कर्म करते हुए हम लोग अत्यन्त शुद्धता तथा कामना करते हुए के हित को (**अकर्म**) करें और (**ते**) आपके मित्र (**अभूम**) होवें॥१९॥

भावार्थः-हे राजन्! जैसे सूर्य्य से उत्पन्न प्रातःकाल सब को शोभित करता है, वैसे ही ब्रह्मचर्य्य से हुए विद्वान् हम लोग आपकी आज्ञानुकूल जैसे वर्त्ते, वैसे ही आप हम लोगों का हित निरन्तर करो और सब हम लोग परस्पर मेल करके और अन्याय दूर करके धर्मसम्बन्धी कर्मों को प्रवृत्त करें॥१९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एता ते अग्न उचथानि वेधोऽवोचाम कवये ता जुषस्व।

उच्छोचस्व कृणुहि वस्यसो नो महो रायः पुरुवार प्र यन्धि॥२०॥१९॥

एता। ते। अग्ने। उचथानि। वेधः। अवोचाम। कवये। ता। जुषस्व। उत्। शोचस्व। कृणुहि। वस्यसः। नः। महः। रायः। पुरुऽवार। प्र। यन्धि॥२०॥

पदार्थः-(**एता**) एतानि (**ते**) तुभ्यम् (**अग्ने**) विद्वन्धार्मिकराजन् (**उचथानि**) उचितानि वचनानि (**वेधः**) मेधाविन् (**अवोचाम**) वदेम (**कवये**) सर्वविद्यायुक्ताय (**ता**) तानि (**जुषस्व**) सेवस्व (**उत्**) (**शोचस्व**) विचारय (**कृणुहि**) अनुतिष्ठ (**वस्यसः**) वसीयसः (**नः**) अस्मभ्यम् (**महः**) महतः (**रायः**) धनानि (**पुरुवार**) यः पुरून् बहूनाप्तान् वृणोति तत्सम्बुद्धौ (**प्र**) (**यन्धि**) प्रयच्छ॥२०॥

अन्वयः-हे वेधोऽग्ने! वयं कवये ते यान्येता उचथान्यवोचाम ता त्वं जुषस्वोच्छोचस्व कृणुहि, हे पुरुवार! नो महो वस्यसो रायः प्र यन्धि॥२०॥

भावार्थः-राज्ञा आप्तानामेव वचांसि श्रुत्वा सुविचार्य्य सेवनीयानि तेभ्य आप्तेभ्यः प्रियाणि वस्तूनि दत्वैते सततं सन्तोषणीया एवं राजाप्तसभे मिलित्वा सर्वाणि कर्माणि समापयेतामिति॥२०॥

अथ राजप्रजाऽप्तजनकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वितीयं सूक्तमेकोनविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**वेधः**) बुद्धिमान् (**अग्ने**) विद्वान् धार्मिक राजन्! हम लोग (**कवये**) सब विद्या से युक्त (**ते**) आपके लिये जिन (**एता**) इन (**उचथानि**) उचित वचनों को (**अवोचाम**) कहें (**ता**) उनको आप (**जुषस्व**) सेवो और (**उत्, शोचस्व**) अत्यन्त विचारो (**कृणुहि**) करो (**पुरुवार**) हे बहुत आप्त अर्थात् सत्यवादी पुरुषों का स्वीकार करने वाले! (**नः**) हम लोगों के लिये (**महः**) बड़े (**वस्यसः**) अतिशयित निवसे धरे हुए (**रायः**) धनों को (**प्र, यन्धि**) उत्तमता से देओ॥२०॥

भावार्थः-राजा को चाहिये कि यथार्थवक्ता ही पुरुषों के वचनों को सुन और उत्तम प्रकार विचार कर सेवन करें, उन यथार्थवक्ता पुरुषों के लिये प्रिय वस्तुओं को देकर वे निरन्तर सन्तुष्ट करने योग्य हैं, इस प्रकार राजा और यथार्थवक्ता पुरुषों की सभा सब मिल कर सब कर्म्मों को सिद्ध करें॥२०॥

इस सूक्त में राजा, प्रजा और यथार्थवक्ता पुरुष के कृत्यवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह द्वितीय सूक्त और उन्नीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षोडशर्चस्य तृतीयस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अग्निर्देवता। १,५,८,१०,१२,१५ निचृत्त्रिष्टुप्। २,१३,१४ विराट् त्रिष्टुप्। ३,७,९ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ स्वराड् बृहतीच्छन्दः। मध्यमः स्वरः। ६,११,१६ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ सूर्य्यरूपाग्निदृष्टान्तेन राजप्रजाजनकृत्यमाह॥

अब सोलह ऋचा वाले तीसरे सूक्त का वर्णन है उसके प्रथम मन्त्र में सूर्य्यरूप अग्नि के दृष्टान्त से राज प्रजाजनों के कृत्य का वर्णन करते हैं॥

आ वो राजानमध्वरस्य रुद्रं होतारं सत्ययजं रोदस्योः।

अग्निं पुरा तनयित्नोरचित्ताद्धिरण्यरूपमवसे कृणुध्वम्॥१॥

आ। वः। राजानम्। अध्वरस्य। रुद्रम्। होतारम्। सत्यऽयजम्। रोदस्योः। अग्निम्। पुरा। तनयित्नोः। अचित्तात्। हिरण्यऽरूपम्। अवसे। कृणुध्वम्॥१॥

पदार्थः-(**आ**) (**वः**) युष्माकम् (**राजानम्**) प्रकाशमानम् (**अध्वरस्य**) अहिंसनीयस्य राज्यस्य (**रुद्रम्**) दुष्टानां रोदयितारम् (**होतारम्**) दातारम् (**सत्ययजम्**) यः सत्यमेव यजति सङ्गच्छते तम् (**रोदस्योः**) द्यावापृथिव्योर्मध्ये (**अग्निम्**) सूर्य्यमिव वर्त्तमानम् (**पुरा**) पुरस्तात् (**तनयित्नोः**) विद्युतः (**अचित्तात्**) अविद्यमानं चित्तं यत्र तस्मात् (**हिरण्यरूपम्**) हिरण्यस्य तेजसो रूपमिव रूपं यस्य तम् (**अवसे**) धर्मात्मनां रक्षणाय दुष्टानां हिंसनाय (**कृणुध्वम्**)॥१॥

अन्वयः-हे आप्ता विद्वांसो! यथा वयं वोऽध्वरस्यावसे होतारं सत्ययजं रुद्रमचित्तात् तनयित्नोर्हिरण्यरूपं रोदस्योरग्निमिव राजानं पुरा कुर्याम तथाभूतमस्माकं नृपं यूयमाकृणुध्वम्॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! राजप्रजाजनैरेकसम्मतिं कृत्वा यथेश्वरेण ब्रह्माण्डस्य मध्ये सूर्य्यं स्थापयित्वा सर्वस्य प्रियं साधितं तथाभूतं राजानमस्माकं मध्ये शुभगुणकर्मस्वभावाऽन्वितं नृपं कृत्वाऽस्माकं हितं यूयं साधयत यतो युष्माकमपि प्रियं सिध्येत्॥१॥

पदार्थः-हे यथार्थवक्ता विद्वानो! जैसे हम लोग (**वः**) आपके (**अध्वरस्य**) न नष्ट करने योग्य राज्य के (**अवसे**) धर्मात्माओं की रक्षा और दुष्टों के नाश करने के लिये (**होतारम्**) देने (**सत्ययजम्**) सत्य ही को प्राप्त होने और (**रुद्रम्**) दुष्टों के रुलाने वाले (**अचित्तात्**) जिसमें चित्त नहीं स्थिर होता, ऐसी (**तनयित्नोः**) बिजुली के (**हिरण्यरूपम्**) तेजरूप के समान रूपवाले वा (**रोदस्योः**) अन्तरिक्ष और पृथिवी के मध्य में (**अग्निम्**) सूर्य्य के सदृश (**राजानम्**) प्रकाशमान न्याय (**पुरा**) प्रथम करें, वैसा हम लोगों के बीच राजा आप लोग (**आ, कृणुध्वम्**) सब प्रकार करें॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वान् लोगो! राजा और प्रजाजनों के साथ एक सम्मति करके जैसे ईश्वर ने ब्रह्माण्ड के मध्य में सूर्य्य को स्थित करके सब का प्रियसुख साधन किया, वैसे ही हम लोगों के मध्य में उत्तम गुण, कर्म और स्वभावयुक्त को राजा करके हम लोगों के

हित को आप लोग सिद्ध करो, जिससे आप लोगों का भी प्रिय सिद्ध होवे॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयं योनिश्चकृमा यं वयं ते जायेव पत्य उशती सुवासाः।
अर्वाचीनः परिवीतो नि षीदेमा उ ते स्वपाक प्रतीचीः॥२॥

अयम्। योनिः। चकृम। यम्। वयम्। ते। जायाऽइव। पत्ये। उशती। सुऽवासाः। अर्वाचीनः। परिऽवीतः। नि। सीद। इमाः। ऊम् इति। ते। सुऽअपाक। प्रतीचीः॥२॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**योनिः**) गृहम् (**चकृम**) कुर्य्याम। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**यम्**) प्रासादम् (**वयम्**) (**ते**) तव (**जायेव**) हृद्या स्त्रीव (**पत्ये**) स्वामिने (**उशती**) कामयमाना (**सुवासाः**) शोभनवस्त्रालङ्कृता (**अर्वाचीनः**) इदानीन्तनः (**परिवीतः**) सर्वतो व्याप्तशुभगुणः (**नि**) (**सीद**) निवस (**इमाः**) वर्त्तमानाः प्रजाः (**उ**) (**ते**) तव (**स्वपाक**) सुष्ठ्वपरिपक्वज्ञान (**प्रतीचीः**) प्रतीतमञ्चन्त्यः॥२॥

अन्वयः-हे राजन्! वयं ते यं चकृम सोऽयं योनिः पत्य उशती सुवासा जायेवार्वाचीन परिवीतोऽस्तु, तत्र त्वं निषीद। हे स्वपाक! प्रतीचीरिमा उ ते भक्ता भवन्तु॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। राज्ञेदृशं गृहं निर्मातव्यं यत्पतिव्रता सुन्दरी हृद्या जायावत्सर्वेष्वृतुषु सुखं दद्यात्। तत्राऽऽसीन ईदृशानि कर्माणि कुर्य्याद् यैस्स्वप्रजा अनुरक्तास्स्युः॥२॥

पदार्थः-हे राजन्! (**वयम्**) हम लोग (**ते**) आपके (**यम्**) जिस गृह को (**चकृम**) बनावें सो (**अयम्**) यह (**योनिः**) गृह (**पत्ये**) स्वामी के लिये (**उशती**) कामना करती हुई (**सुवासाः**) सुन्दर वस्त्रों से शोभित (**जायेव**) मन की प्यारी स्त्री के सदृश (**अर्वाचीनः**) इस वर्त्तमानकाल में हुआ (**परिवीतः**) सब प्रकार व्याप्त उत्तम गुण जिसमें ऐसा हो, उसमें आप (**नि, सीद**) निवास करो और (**स्वपाक**) हे उत्तम प्रकार परिपक्व ज्ञान वाले! (**प्रतीचीः**) प्रतीति को प्राप्त होती हुई (**इमाः**) यह वर्त्तमान प्रजा (**उ**) और (**ते**) आपके भक्त हों॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। राजा को चाहिये कि ऐसा गृह बनावे कि जो पतिव्रता सुन्दरी मन की प्यारी स्त्री के सदृश सब ऋतुओं में सुख देवे। और वहाँ स्थित हुआ ऐसे कर्म करे कि जिन कर्मों से अपनी प्रजा अनुरक्त होवें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आशृण्वते अदृपिताय मन्म नृचक्षसे सुमृळीकाय वेधः।
देवाय शस्तिममृताय शंस ग्रावेव सोता मधुषुद्यमीळे॥३॥

आऽशृण्वते। अदृपिताय। मन्म। नृऽचक्षसे। सुऽमृळीकाय। वेधः। देवाय। शस्तिम्। अमृताय। शंस। ग्रावाऽइव। सोता। मधुऽसुत्। यम्। ईळे॥३॥

पदार्थः-(**आशृण्वते**) समन्ताच्छ्रवणं कुर्वते (**अदृपिताय**) अमोहिताय (**मन्म**) विज्ञानम् (**नृचक्षसे**) सत्याऽसत्यकर्तृणां जनानां साक्षाद्द्रष्ट्रे (**सुमृळीकाय**) सुसुखप्रदाय सुखस्वरूपाय (**वेधः**) मेधाविन् राजन् (**देवाय**) दिव्यगुणसम्पन्नाय (**शस्तिम्**) प्रशंसाम् (**अमृताय**) जलवच्छान्तस्वरूपाय (**शंस**) स्तुहि (**ग्रावेव**) मेघ इव (**सोता**) अभिषवस्य कर्त्ता (**मधुषुत्**) यो मधूनि मधुराणि सुनोति सः (**यम्**) (**ईळे**) स्तौमि॥३॥

अन्वयः-हे वेधो राजन्! यमहमीळ आशृण्वतेऽदृपिताय नृचक्षसे सुमृळीकायाऽमृताय देवाय ते मन्माहमुपदिशेय तथा त्वं ग्रावेव मधुषुत्सोता सञ्छस्तिं शंस॥३॥

भावार्थः-स एव राजोत्तमो भवति यो मोहादिदोषरहितः सर्वेषां वचनानां श्रोता सत्याऽसत्ययोर्द्रष्टा मेघवत्प्रजायां विविधभोगप्रापको न्यायेशः स्यात्॥३॥

पदार्थः-हे (**वेधः**) बुद्धिमान् राजन्! (**यम्**) जिसकी मैं (**ईळे**) स्तुति करता हूँ (**आशृण्वते**) सब प्रकार सुनते हुए (**अदृपिताय**) मोहरहित (**नृचक्षसे**) सत्य और असत्य व्यवहारों को करते हुए जनों के साक्षात् देखने और (**सुमृळीकाय**) उत्तम प्रकार सुख देने वाले, सुख और (**अमृताय**) जल के सदृश शान्तस्वरूप (**देवाय**) उत्तम गुणों से युक्त आपके लिये (**मन्म**) विज्ञान का मैं उपदेश देता हूँ, वैसे आप (**ग्रावेव**) मेघ के सदृश (**मधुषुत्**) मधुरताओं के उत्पन्न करने वाले (**सोता**) अभिषेक करनेवाले हुए (**शस्तिम्**) प्रशंसा की (**शंस**) स्तुति कीजिये अर्थात् प्रबन्ध से कहिये॥३॥

भावार्थः-वह ही राजा उत्तम होता है कि जो मोह आदि दोषों से रहित होकर सब वचनों का सुनने, सत्य और असत्य का देखने और मेघ के सदृश प्रजा में अनेक प्रकार का भोग प्राप्त करानेवाला न्यायाधीश होवे॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं चिन्नः शम्या अग्ने अस्या ऋतस्य बोध्यृतचित्स्वाधीः।

कदा ते उक्था सधमाद्यानि कदा भवन्ति सख्या गृहे ते॥४॥

त्वम्। चित्। नः। शम्यै। अग्ने। अस्याः। ऋतस्य। बोधि। ऋतऽचित्। सुऽआधीः। कदा। ते। उक्था। सधऽमाद्यानि। कदा। भवन्ति। सख्या। गृहे। ते॥४॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**चित्**) अपि (**नः**) अस्माकम् (**शम्यै**) कर्मणे (**अग्ने**) पावकवद्वर्त्तमान (**अस्याः**) प्रजायाः (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**बोधि**) बुध्यस्व (**ऋतचित्**) य ऋतं सत्यं चिनोति सः (**स्वाधीः**)

यः सुष्ठु समन्ताच्चिन्तयति **(कदा)** **(ते)** तव **(उक्था)** उचितानि **(सधमाद्यानि)** सहस्थानेषु साधूनि **(कदा)** **(भवन्ति)** **(सख्या)** सखीनां कर्माणि भावा वा **(गृहे)** **(ते)**॥४॥

अन्वयः-हे अग्ने राजंस्त्वं नोऽअस्या ऋतस्य शम्यै स्वाधीर्ऋतचित्सन्कदा बोधि चिदपि ते गृहे सधमाद्यान्युक्था चिदपि ते सख्या कदा भवन्ति॥४॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वं यदा प्रजायाः सत्यं न्यायं करिष्यसि तदैव तवाऽऽज्ञायां वर्त्तित्वा प्रजा एकमत्या भविष्यन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान राजन् **(त्वम्)** आप **(नः)** हम लोगों की **(अस्याः)** इस प्रजा के **(ऋतस्य)** सत्य के **(शम्यै)** कर्म्म के लिये **(स्वाधीः)** उत्तम प्रकार सब प्रकार विचार करने और **(ऋतचित्)** सत्य का संग्रह करने वाला [होते हुए] **(कदा)** कब **(बोधि)** जानो और **(चित्)** भी **(ते)** आपके **(गृहे)** गृह में **(सधमाद्यानि)** मेल के स्थानों में श्रेष्ठ और **(उक्था)** उचित भी **(ते)** तुम्हारे **(सख्या)** मित्रों के कर्म्म वा अभिप्राय **(कदा)** कब **(भवन्ति)** होते हैं॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! आप जब प्रजा के सत्य न्याय को करेंगे, तब ही आपकी आज्ञा के अनुकूल वर्त्ताव करके प्रजा एकसम्मति से होंगी॥४॥

अथोपदेशकविषयमाह॥

अब उपदेशक विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कथा ह तद्वरुणाय त्वमग्ने कथा दिवे गर्हसे कन्न आगः।

कथा मित्राय मीळ्हुषे पृथिव्यै ब्रवः कदर्यम्णे कद्भगाय॥५॥२०॥

कथा। ह। तत्। वरुणाय। त्वम्। अग्ने। कथा। दिवे। गर्हसे। कत्। नः। आगः। कथा। मित्राय। मीळ्हुषे। पृथिव्यै। ब्रवः। कत्। अर्यम्णे। कत्। भगाय॥५॥

पदार्थः-**(कथा)** केन प्रकारेण **(ह)** किल **(तत्)** **(वरुणाय)** श्रेष्ठाय **(त्वम्)** **(अग्ने)** पावकवद्वर्त्तमान **(कथा)** **(दिवे)** प्रकाशमानाय **(गर्हसे)** निन्दसि **(कत्)** कदा **(नः)** अस्माकम् **(आगः)** अपराधम् **(कथा)** **(मित्राय)** सख्ये **(मीळ्हुषे)** सुखवर्धकाय **(पृथिव्यै)** पृथिवीवद्वर्त्तमानायै स्त्रियै **(ब्रवः)** ब्रूयाः **(कत्)** कदा **(अर्यम्णे)** न्यायाधीशाय **(कत्)** कदा **(भगाय)** ऐश्वर्य्याय॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं ह कथा वरुणाय गर्हसे कथा दिवे गर्हसे न आगः कद् गर्हसे मीळ्हुषे मित्राय कथा गर्हसे पृथिव्यै तद्वचः कद् ब्रवोऽर्य्यम्णे भगाय च कद् ब्रवः॥५॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यदि राजा श्रेष्ठस्य विदुषां वा निन्दां कुर्य्यात् तदैव भवद्भिर्निरोद्धव्यः सर्वेषां राजकर्म्मणां सिद्धये समयव्यवस्था कार्य्या यदा यदा यत् यत्कर्म कर्त्तव्यं भवेत्तदा तदा तत्तत्कर्म्म

कर्त्तव्यमिति राजोपदेष्टव्यो यदा मित्रद्रोहमाचरेत् तदैव शिक्षणीय एवं कृते राजप्रजयो: सततमुन्नतिर्भवेत्॥५॥

पदार्थ:-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान! **(त्वम्)** आप **(ह)** ही **(कथा)** किस प्रकार **(वरुणाय)** श्रेष्ठ की **(गर्हसे)** निन्दा करते हो **(कथा)** किस प्रकार **(दिवे)** प्रकाशमान के लिये निन्दा करते हो **(न:)** हम लोगों के **(आग:)** अपराध की **(कत्)** कब निन्दा करते हो **(मीळ्हुषे)** सुख बढ़ाने वाले **(मित्राय)** मित्र के लिये **(कथा)** किस प्रकार निन्दा करते हो **(पृथिव्यै)** पृथिवी के सदृश वर्त्तमान स्त्री के लिये **(तत्)** उस वचन को **(कत्)** कब **(ब्रव:)** कहो **(अर्य्यम्णे)** न्यायाधीश के लिये और **(भगाय)** ऐश्वर्य्य के लिये **(कत्)** कब कहो॥५॥

भावार्थ:-हे विद्वानो! जो राजा श्रेष्ठ वा विद्वानों की निन्दा करे, वह आप लोगों से रोकने योग्य है और सब राजकर्मों की सिद्धि के लिये समयव्यवस्था करनी चाहिये और जब-जब जो-जो कर्म करना हो तब-तब वह-वह कर्म करना चाहिये। इस प्रकार राजा को उपदेश करना चाहिये जब मित्रद्रोह का आचरण करे तभी उसको शिक्षा देनी चाहिये ऐसा करने पर राजा और प्रजा दोनों की निरन्तर उन्नति होवे॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कद्धिष्ण्यासु वृधसानो अग्ने कद्वाताय प्रतवसे शुभंये।

परिज्मने नासत्याय क्षे ब्रव: कदग्ने रुद्राय नृघ्ने॥६॥

कत्। धिष्ण्यासु। वृधसान:। अग्ने। कत्। वाताय। प्रऽतवसे। शुभम्ऽये। परिऽज्मने। नासत्याय। क्षे। ब्रव:। कत्। अग्ने। रुद्राय। नृऽघ्ने॥६॥

पदार्थ:-**(कत्)** कदा **(धिष्ण्यासु)** धिष्णायां बुद्धौ भवासु क्रियासु **(वृधसान:)** यो वृधान् वर्धकान् विभजति **(अग्ने)** विद्वन् राजन् **(कत्)** कदा **(वाताय)** विज्ञानाय **(प्रतवसे)** प्रकृष्टबलाय **(शुभंये)** य: शुभं याति प्राप्नोति तस्मै **(परिज्मने)** परित: सर्वतो ज्मा भूमिर्यस्य तस्मै **(नासत्याय)** अविद्यमानासत्याचाराय **(क्षे)** भूमौ राज्याय विद्यते यस्मिंस्तस्मिन्। अत्र**आर्शादिभ्योऽच्** **(ब्रव:)** ब्रूया: **(कत्)** **(अग्ने)** पावकवद्दीप्यमान **(रुद्राय)** दुष्टानां रोदयित्रे **(नृघ्ने)** य: शत्रूणां नायकान् हन्ति तस्मै॥६॥

अन्वय:-हे अग्ने! त्वं धिष्ण्यासु वृधसान: सन् प्रतवसे वाताय कद् ब्रव:। हे अग्ने! परिज्मने शुभंये नासत्याय कद् ब्रव: क्षे नृघ्ने रुद्राय कद् ब्रव:॥६॥

भावार्थ:-राजादीनध्यक्षान् प्रत्यध्यापकोपदेशकमन्त्रिण: एवमुपदिशेयुर्भवन्तो प्रज्ञाकर्म्मसु वृद्धा बलिष्ठास्सुभाचरणा: सत्यभाषिणो दुष्टान् घातुका: कदा भविष्यन्ति शुभाचरणे दुष्टाचारत्यागे विलम्बं मा कुर्वन्तु॥६॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश प्रकाशमान आप! **(धिष्ण्यासु)** बुद्धि में उत्पन्न क्रियाओं में **(वृधसानः)** बढ़ने वालों का विभाग करते हुए **(प्रतवसे)** श्रेष्ठ बल और **(वाताय)** विज्ञान के लिये **(कत्)** कब **(ब्रवः)** कहो **(अग्ने)** हे विद्वन् राजन्! **(परिज्मने)** सब ओर भूमि जिसके उस **(शुभंये)** कल्याण को प्राप्त होने वाले **(नासत्याय)** असत्य आचरण से रहित के लिये **(कत्)** कब कहो **(क्षे)** पृथिवी राज्य के लिये विद्यमान जिसमें उसमें **(नृघ्ने)** शत्रुओं के नायकों के नाश करने और **(रुद्राय)** दुष्ट पुरुषों को रुलाने वाले के लिये **(कत्)** कब कहो॥६॥

भावार्थः-राजा आदि अध्यक्षों के प्रति अध्यापक, उपदेशक और मन्त्रीजन ऐसा उपदेश देवें कि आप लोग बुद्धि के कामों में वृद्ध, बलिष्ठ, उत्तम आचरण वाले, सत्यवादी और दुष्ट पुरुषों के नाश करने वाले कब होओगे और उत्तम आचरण करने और दुष्ट आचरण के त्याग में विलम्ब न करो॥६॥

अथ शिष्यपरीक्षाविषयमाह॥

अब विद्यार्थियों की परीक्षा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कथा महे पुष्टिम्भराय पूष्णे कद्रुद्राय सुमखाय हविर्दे।
कद्विष्णव उरुगायाय रेतो ब्रवः कदग्ने शरवे बृहत्यै॥७॥

कथा। महे। पुष्टिम्ऽभराय। पूष्णे। कत्। रुद्राय। सुऽमखाय। हविःऽदे। कत्। विष्णवे। उरुऽगायाय। रेतः। ब्रवः। कत्। अग्ने। शरवे। बृहत्यै॥७॥

पदार्थः-**(कथा)** केन प्रकारेण **(महे)** महते **(पुष्टिम्भराय)** **(पूष्णे)** पोषकाय **(कत्)** कदा **(रुद्राय)** शत्रुघ्नाय **(सुमखाय)** सुष्ठु यज्ञसम्पादकाय **(हविर्दे)** यो हवींषि दातव्यानि ददाति तस्मै **(कत्)** कदा **(विष्णवे)** व्यापकाय परमेश्वराय **(उरुगायाय)** बहुप्रशंसाय **(रेतः)** उदकमिव शान्तो मृदुर्भूत्वा **(ब्रवः)** **(कत्)** **(अग्ने)** विद्वन् **(शरवे)** दुष्टानां हिंसकाय **(बृहत्यै)** महत्यै सेनायै॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं रेत इव सन् महे पुष्टिम्भराय पूष्णे कथा ब्रवः सुमखाय हविर्दे रुद्राय कद् ब्रवः। उरुगायाय विष्णवे कद् ब्रवः शरवे बृहत्यै कद् ब्रवः॥७॥

भावार्थः-अध्यापकैर्विद्यार्थिनोऽध्याप्य प्रत्यष्टाऽहं प्रतिपक्षं प्रतिमासं प्रत्ययनं प्रतिवर्षञ्च तेषां परीक्षा यथार्हा कर्त्तव्या येन राजकुमारादयः सर्वे निर्भ्रमज्ञानाः सन्तः सुशीलाः शरीरात्मबलयुक्ताः धर्मिष्ठाः शतायुषो न्यायेन राज्यपालकाः स्युः॥७॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन् पुरुष! आप **(रेतः)** जल के सदृश शान्त अर्थात् कोमलचित्त होके **(महे)** बड़े **(पुष्टिम्भराय)** पुष्टि धारण कराने **(पूष्णे)** पोषण करने वाले के लिये **(कथा)** किस प्रकार **(ब्रवः)** कहो **(सुमखाय)** उत्तम प्रकार यज्ञसम्पादन करने और **(हविर्दे)** देने योग्य वस्तुओं को देने वाले के लिये तथा **(रुद्राय)** शत्रुओं में प्रबल के लिये **(कत्)** कब कहो **(उरुगायाय)** बहुत प्रशंसा करने योग्य **(विष्णवे)** व्यापक परमेश्वर के लिये **(कत्)** कब कहो **(शरवे)** दुष्टों के नाश करने वाली **(बृहत्यै)** बड़ी

सेना के लिये **(कत्)** कब कहो॥७॥

भावार्थः-अध्यापक लोगों को विद्यार्थियों को पढ़ा के प्रत्येक अठवाड़े, प्रत्येक पक्ष, प्रतिमास, प्रतिछमाही और प्रतिवर्ष परीक्षा यथायोग्य करनी चाहिये, जिससे कि राजकुमारादि सब भ्रमरहित, ज्ञानविशिष्ट, उत्तमस्वभावयुक्त शरीर और आत्मा के बल सहित धर्मिष्ठ सौ वर्ष जीने और न्याय से राज्य के पालन करने वाले होवें॥७॥

अथ राजविषयमाह॥

अब अगले मन्त्र में राजविषय को कहते हैं॥

कथा शर्धाय मरुतामृताय कथा सूरे बृहते पृच्छ्यमानः।
प्रति ब्रवोऽदितये तुराय साधा दिवो जातवेदश्चिकित्वान्॥८॥

कथा। शर्धाय। मरुताम्। ऋताय। कथा। सूरे। बृहते। पृच्छ्यमानः। प्रति। ब्रवः। अदितये। तुराय। साध। दिवः। जातऽवेदः। चिकित्वान्॥८॥

पदार्थः-**(कथा)** **(शर्धाय)** बलाय **(मरुताम्)** वायूनामिव **(ऋताय)** सत्याय **(कथा)** **(सूरे)** सूर्य्य इव वर्त्तमाने सैन्ये **(बृहते)** वर्द्धमानाय **(पृच्छ्यमानः)** **(प्रति)** **(ब्रवः)** ब्रूयाः **(अदितये)** अविनष्टायाऽन्तरिक्षाय **(तुराय)** त्वरमाणाय **(साध)**। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(दिवः)** प्रकाशान् **(जातवेदः)** प्रसिद्धप्रज्ञान **(चिकित्वान्)** ज्ञानवान् भूत्वा॥८॥

अन्वयः-हे जातवेदः! सूरे पृच्छ्यमानस्त्वं मरुतामिवर्ताय बृहते शर्धाय कथा ब्रवः तुरायाऽदितये कथा प्रति ब्रवश्चिकित्वान्सन् दिवः साध॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये राजानो वायुवत्स्वबलं वर्धयन्ति योद्धॄणां शिक्षकान् परीक्षकान् सत्कुर्वन्ति प्रश्नोत्तराभ्यां सर्वान् विज्ञाय तैः कार्य्याणि साध्नुवन्ति ते सूर्य्य इवैश्वर्य्यप्रकाशका भवन्ति॥८॥

पदार्थः-हे **(जातवेदः)** प्रसिद्ध उत्तम ज्ञानयुक्त **(सूरे)** सूर्य्य के सदृश वर्त्तमान सेना में **(पृच्छ्यमानः)** पूंछे गए आप **(मरुताम्)** पवनों का जैसे वैसे **(ऋताय)** सत्य के और **(बृहते)** बढ़ते हुए **(शर्धाय)** बल के लिये **(कथा)** किस प्रकार से **(ब्रवः)** कहो **(तुराय)** शीघ्रता करते हुए **(अदितये)** नहीं नाश होने वाले अन्तरिक्ष के लिये **(कथा)** किस प्रकार से **(प्रति)** निश्चित कहो **(चिकित्वान्)** ज्ञानवान् होकर **(दिवः)** प्रकाशों को **(साध)** सिद्ध करो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा लोग वायु के सदृश अपने बल को बढ़ाते, योद्धा लोगों के शिक्षक और परीक्षकों का सत्कार करते और प्रश्नोत्तर से सब को जान उनके द्वारा कार्य सिद्ध करते हैं, वे सूर्य्य के सदृश ऐश्वर्य के प्रकाशक होते हैं॥८॥

अथ मनुष्यैर्ब्रह्मचर्य्यादिना पुरुषार्थः संसेव्य इत्याह॥

अब मनुष्य को ब्रह्मचर्य्य आदि से पुरुषार्थ सेवना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋतेन॑ ऋ॒तं नि॒यत॑मीळ॒ आ गोरा॒मा सचा॒ मधु॑मत्प॒क्वम॑ग्ने।

कृष्णा॑ स॒ती रुश॑ता धा॒सिनै॒षा जाम॑र्येण॒ पय॑सा पीपाय॥ ९॥

ऋतेन॑। ऋ॒तम्। नि॒ऽय॑तम्। ई॒ळे॒। आ। गोः। आ॒मा। सचा॑। मधु॑ऽमत्। प॒क्वम्। अ॒ग्ने॒। कृ॒ष्णा। स॒ती। रुश॑ता। धा॒सिना॑। ए॒षा। जाम॑र्येण। पय॑सा। पी॒पा॒य॒॥ ९॥

पदार्थः-(**ऋतेन**) सत्येन (**ऋतम्**) सत्यम् (**नियतम्**) निश्चितम् (**ईळे**) स्तौम्यध्यन्विच्छामि (**आ**) (**गोः**) पृथिव्या वाण्या वा (**आमा**) अपरिपक्वम्। अत्र विभक्तेराकारादेशः (**सचा**) प्रसङ्गेन (**मधुमत्**) प्रशस्तमधुरादिगुणयुक्तम् (**पक्वम्**) (**अग्ने**) (**कृष्णा**) श्यामा (**सती**) (**रुशता**) सुस्वरूपेण (**धासिना**) अन्नेन (**एषा**) (**जामर्येण**) जामस्येदं जामं तदृच्छति येन तेन (**पयसा**) दुग्धेन (**पीपाय**) वर्द्धस्व॥ ९॥

अन्वयः-हे अग्ने! विद्वन् यथाऽहं गोर्ऋतेन नियतमृतमीळे तथाऽऽचरँस्त्वं पृथिव्या मध्ये सचा मधुमदामा पक्वं चापीपाय। यथैषा कृष्णा सती विदुषी पतिव्रता रुशता जामर्येण पयसा धासिना वर्धते तथा त्वं वर्धस्व॥ ९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या ब्रह्मचर्य्येण विद्यासुशिक्षे प्राप्य धर्म्येण व्यवहारेण धर्ममन्विष्य जितेन्द्रियत्वेन मिताऽऽहारा भूत्वा पुरुषार्थयन्ति ते हृद्यौ दम्पती इवाऽऽनन्दिता भूत्वा सर्वतो वर्धन्ते॥ ९॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश प्रकाशमान विद्वान् पुरुष! जिस प्रकार से मैं (**गोः**) पृथिवी वा वाणी के (**ऋतेन**) सत्य से (**नियतम्**) नियमयुक्त (**ऋतम्**) सत्य की (**ईळे**) स्तुति वा ढूंढ करता हूं, वैसे आचरण करते हुए आप पृथिवी के मध्य में (**सचा**) प्रसङ्ग से (**मधुमत्**) श्रेष्ठ मधुर आदि गुणों से युक्त (**आमा**) कच्चे और (**पक्वम्**) पक्के पदार्थों की (**आ, पीपाय**) अच्छे प्रकार वृद्धि करो और जैसे (**एषा**) यह (**कृष्णा**) श्याम वर्ण (**सती**) सज्जन पण्डिता पतिव्रता स्त्री (**रुशता**) उत्तम स्वरूप से (**जामर्येण**) जीवन में निमित्त (**पयसा**) दुग्ध और (**धासिना**) अन्न से बढ़ती है, वैसे आप वृद्धि को प्राप्त होओ॥ ९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य ब्रह्मचर्य से विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त होके और धर्मयुक्त व्यवहार से धर्म का अन्वेषण और इन्द्रियजित् होने से नियम से भोजन करने वाले होकर पुरुषार्थ करते हैं, वे स्नेही स्त्री और पुरुष के सदृश आनन्दित होकर सब प्रकार वृद्धि को प्राप्त होते हैं॥ ९॥

पुनः पुरुषार्थकर्त्तव्यतामाह॥

फिर भी पुरुषार्थ कर्त्तव्यता को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋतेन हि ष्मा वृषभश्चिदक्तः पुमाँ अग्निः पयसा पृष्ठ्येन।

अस्पन्दमानो अचरद्वयोधा वृषा शुक्रं दुदुहे पृश्निरूधः॥१०॥२१॥

ऋतेन। हि। स्म। वृषभः। चित्। अक्तः। पुमान्। अग्निः। पयसा। पृष्ठ्येन। अस्पन्दमानः। अचरत्। वयःऽधाः। वृषा। शुक्रम्। दुदुहे। पृश्निः। ऊधः॥१०॥

पदार्थः-(**ऋतेन**) सत्येन व्यवहारेण (**हि**) यतः (**स्म**) एव (**वृषभः**) बलिष्ठः (**चित्**) अपि (**अक्तः**) शुभगुणैर्युक्तः (**पुमान्**) पुरुषार्थी (**अग्निः**) विद्युदिव (**पयसा**) रात्र्या (**पृष्ठ्येन**) पृष्ठे भवेन दिनेन (**अस्पन्दमानः**) किञ्चिच्चलितस्सन् (**अचरत्**) चरति (**वयोधाः**) यः कमनीयानि वयांसि जीवनधनादीनि दधाति सः (**वृषा**) सुखानां वर्षकः (**शुक्रम्**) वीर्य्यम् (**दुदुहे**) पिपर्त्ति (**पृश्निः**) अन्तरिक्षम् (**ऊधः**) रात्रिरिव॥१०॥

अन्वयः-हे राजन्! हि यतो भवान् ऋतेन वृषभोऽक्तः पयसाऽग्निरिव पृष्ठ्येन पुमानस्पन्दमानो वयोधा वृषा सन्नचरत् पृश्निरूधरिव स चिच्छुक्रं स्म दुदुहे॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा पृथिव्या अर्द्धे भागे विद्युत् सूर्य्यरूपेण विराजतेऽपरे भागे रात्रावप्यन्तर्हिता चरति तथैव शयनजागरणे नियमेन विधाय पुरुषार्थे कृत्वा वीर्य्यं वर्धयित्वा शतायुषस्सन्तः सर्वानानन्दयत॥१०॥

पदार्थः-हे राजन्! (**हि**) जिससे कि आप (**ऋतेन**) सत्य व्यवहार से (**वृषभः**) बलिष्ठ (**अक्तः**) उत्तम गुणों से युक्त (**पयसा**) रात्रि के साथ (**अग्निः**) अग्नि के समान (**पृष्ठ्येन**) पृष्ठ भाग में होने वाले दिन में (**पुमान्**) पुरुषार्थी (**अस्पन्दमानः**) किञ्चित् चले हुए (**वयोधाः**) सुन्दर अवस्था जीवन और धनादिकों के धारण करने (**वृषा**) सुखों की वृष्टि करने वाले होते हुए (**अचरत्**) विचरते हैं (**पृश्निः**) अन्तरिक्ष (**ऊधः**) और रात्रि के सदृश (**चित्**) सो भी (**शुक्रम्**) वीर्य्य को (**स्म**) ही (**दुदुहे**) पूरा करते हैं॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे पृथिवी के अर्द्धभाग में बिजुली सूर्य रूप से शोभित होती है और दूसरे भाग में रात्रि के समय छिपी हुई चलती है, वैसे ही शयन और जागरण नियम से कर और पुरुषार्थ करके वीर्य बढ़ाय के सौ वर्ष की अवस्थायुक्त हुए सब को आनन्द दीजिये॥१०॥ ○

अथ राजादिक्षत्रियेभ्य उपदेशमाह॥

अब राजा आदि क्षत्रियों के लिये उपदेश अगले मन्त्र में करते हैं।

ऋतेनाद्रिं व्यसन् भिदन्तःसमङ्गिरसो नवन्त गोभिः।

शुनं नरःपरि षदन्नुषासमाविः स्वरभवज्जाते अग्नौ॥११॥

ऋतेन। अद्रिम्। वि। असन्। भिदन्तः। सम्। अङ्गिरसः। नवन्त। गोभिः। शुनम्। नरः। परि। सदन्। उषसम्। आविः। स्वः। अभवत्। जाते। अग्नौ॥ ११॥

पदार्थः-(**ऋतेन**) जलेन सह वर्त्तमानम् (**अद्रिम्**) मेघम् (**वि**) (**असन्**) प्रक्षिपन्ति (**भिदन्तः**) विदारयन्तः (**सम्**) (**अङ्गिरसः**) वायवः (**नवन्त**) प्रशंसत (**गोभिः**) किरणैरिव वाग्भिः (**शुनम्**) सुखम् (**नरः**) नेतारः सन्तः (**परि**) (**सदन्**) परिषीदन्ति (**उषसम्**) प्रभातम् (**आविः**) प्राकट्ये (**स्वः**) सूर्य्यः (**अभवत्**) भवति (**जाते**) उत्पन्ने (**अग्नौ**)॥ ११॥

अन्वयः-हे नरो विद्वांसो! यथा गोभिरङ्गिरस ऋतेन सहितमद्रिं सम्भिदन्तो व्यसन्नुषसं परिषदञ्जातेऽग्नौ स्वराविरभवत् तथा शुनं नवन्त॥ ११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये राजादयो वीरा क्षत्रिया यथा वायुयुक्ता विद्युतो मेघं व्यस्तं कृत्वा विदीर्य्य भूमौ निपात्य सर्वान् सुखयन्ति विद्युतं विलोड्य सूर्य्यं जनयन्ति तथैव दुष्टान् विनाश्य न्यायं प्रकाश्य प्रज्ञां विलोड्य विद्याञ्जनयित्वा भानुरिव प्रकाशमानाः सन्तोऽतुलं सुखमाप्नुवन्तु॥ ११॥

पदार्थः-हे (**नरः**) नायक होते हुए विद्वान् लोगो! जैसे (**गोभिः**) किरणों के सदृश वाणियों से (**अङ्गिरसः**) पवन (**ऋतेन**) जल के सहित वर्त्तमान (**अद्रिम्**) मेघ के (**सम्, भिदन्तः**) अच्छे प्रकार टुकड़े करते हुए (**वि, असन्**) विविध प्रकार से फेंकते हैं। (**उषसम्**) और प्रातःकाल को (**परि, सदन्**) प्राप्त होते हैं वा (**जाते**) उत्पन्न हुए (**अग्नौ**) अग्नि में (**स्वः**) सूर्य्य (**आविः**) प्रकट (**अभवत्**) होता है, वैसे (**शुनम्**) सुख की (**नवन्त**) प्रशंसा करो॥ ११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा आदि वीर क्षत्रिय जैसे पवन से युक्त बिजुलियाँ मेघ को इधर-उधर चलाय और तोड़ पृथिवी पर गिरा के सब को सुख देती हैं और दूसरी बिजुली का विलोडन करके सूर्य्य को उत्पन्न करती हैं, वैसे ही दुष्ट पुरुषों का नाश और न्याय का प्रकाश, बुद्धि का विलोडन और विद्या को उत्पन्न करके सूर्य्य के सदृश प्रकाशमान हुए अतुल सुख को प्राप्त होओ॥ ११॥

अथ सङ्गदोषादोषौ रक्षणविषयञ्चाह॥

अब सङ्गदोष, अदोष और रक्षा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋतेन देवीरमृता अमृक्ता अर्णोभिरापो मधुमद्भिरग्ने।

वाजी न सर्गेषु प्रस्तुभानः प्र सदमित्स्रवितवे दधन्युः॥ १२॥

ऋतेन। देवीः। अमृताः। अमृक्ताः। अर्णःऽभिः। आपः। मधुमत्ऽभिः। अग्ने। वाजी। न। सर्गेषु। प्रऽस्तुभानः। प्र। सदम्। इत्। स्रवितवे। दधन्युः॥ १२॥

पदार्थः-(**ऋतेन**) सत्येन (**देवीः**) दिव्याः (**अमृताः**) कारणरूपेण नाशरहिताः (**अमृक्ताः**) अशोधिताः (**अर्णोभिः**) जलैः (**आपः**) प्राणाः (**मधुमद्भिः**) बहुभिर्मधुरादिगुणयुक्तैः (**अग्ने**) विद्वन् (**वाजी**) बह्वन्नवान् (**न**) इव (**सर्गेषु**) सृष्टेषु कार्येषु (**प्रस्तुभानः**) प्रकर्षेण धरन् (**प्र**) (**सदम्**) प्राप्तं वस्तु (**इत्**) एव (**स्रवितवे**) स्रोतुं गन्तुम् (**दधन्युः**) धरन्त। अत्र **वाच्छन्दसी**ति नुडागमो यासुडभावः॥१२॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथर्त्तेन मधुमद्भिरर्णोभिस्सहाऽमृक्ता देवीरमृता आपः स्रवितवे सदं प्रदधन्युस्तथेदेव सर्गेषु वाजी न प्रस्तुभानः सँस्त्वं भव॥१२॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे मनुष्या! यथा शुद्धा आपः सुखकारिण्योऽशुद्धा दुःखप्रदा भवन्ति तथैव शुभगुणसङ्ग आनन्दप्रदो दोषसङ्गो दुःखप्रदश्च भवति। यथैश्वर्यवान् धार्मिको जनः कृपया बुभुक्षितादीन् पालयति तथैव सज्जनाः सर्वान् रक्षन्ति॥१२॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वान् पुरुष जैसे (**ऋतेन**) सत्य से (**मधुमद्भिः**) बहुत मधुर आदि गुणों से युक्त (**अर्णोभिः**) जलों के साथ (**अमृक्ताः**) नहीं शुद्ध किये गए (**देवीः**) उत्तम श्रेष्ठ (**अमृताः**) कारणरूप से नाशरहित (**आपः**) प्राणरूप पवन (**स्रवितवे**) जाने को (**सदम्**) प्राप्त वस्तु (**प्र, दधन्युः**) धारण करते हैं, वैसे (**इत्**) ही (**सर्गेषु**) किये हुए कार्यों में (**वाजी**) बहुत अन्न वाले के (**न**) सदृश (**प्रस्तुभानः**) अत्यन्त धारण करते हुए आप प्रकट हूजिये॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा [और] वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे मनुष्यो! जैसे शुद्ध जल सुखकारी और अशुद्ध दुःख देने वाले होते हैं, वैसे ही उत्तम गुणों का सङ्ग आनन्ददायक और दोषों का सङ्ग दुःख देने वाला होता है। और जैसे ऐश्वर्य्ययुक्त धार्मिकजन कृपा से बुभुक्षित आदि का पालन करता है, वैसे ही सज्जन लोग सब की रक्षा करते हैं॥१२॥

बुद्धिमत्ताविषयमाह॥

अब बुद्धिमानों के बुद्धिमत्ता विषय को कहते हैं॥

मा कस्य॑ य॒क्षं सद॒मिद्धु॒रो गा॒ मा वे॒शस्य॑ प्रमिन॒तो मापेः।

मा भ्रातु॑रग्ने॒ अनृ॑जोर्ऋ॒णं वे॑र्मा सख्यु॒र्दक्षं॑ रि॒पोर्भु॑जेम॥१३॥

मा। कस्य॑। य॒क्षम्। सद॑म्। इत्। हु॒रः। गाः॒। मा। वे॒शस्य॑। प्र॒ऽमि॒न॒तः। मा। आ॒पेः। मा। भ्रातुः॑। अ॒ग्ने॒। अनृ॑जोः। ऋ॒णम्। वेरिति॑ वेः। मा। सख्युः॑। दक्ष॑म्। रि॒पोः। भु॒जे॒म॥१३॥

पदार्थः-(**मा**) (**कस्य**) (**यक्षम्**) सङ्गन्तव्यम् (**सदम्**) वस्तु (**इत्**) एव (**हुरः**) कुटिलस्य (**गाः**) प्राप्नुयाः (**मा**) (**वेशस्य**) प्रवेशस्य (**प्रमिनतः**) प्रकर्षेण हिंसतः (**मा**) (**आपेः**) प्राप्तस्य (**मा**) (**भ्रातुः**) बन्धोः (**अग्ने**) अग्निरिव प्रकाशमान (**अनृजोः**) कुटिलस्य (**ऋणम्**) (**वेः**) प्राप्नुयाः (**मा**) (**सख्युः**) मित्रस्य (**दक्षम्**) बलम् (**रिपोः**) शत्रोः (**भुजेम**) अभ्यवहरेम॥१३॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमनृजोः कस्यचित्प्रमिनतो वेशस्य हुरस्सदं मा गाः। अनृजोरापेर्यक्षं सदं मा गा अनृजोर्भ्रातुर्यक्षं सदं मा गाः। अनृजोः सख्युर्दक्षं मा वेरवृजो रिपोर्ऋणं मा वेः। येन वयं सुखमिद्भुजेम॥१३॥

भावार्थः-त एव धीमन्तो विज्ञेया येऽन्यायेन कस्यचिद्वस्तु दुष्टवेशं हिंसकसङ्गं न्यायेन प्राप्तस्य धनस्याऽन्यथा व्ययं दुष्टबन्धोः सङ्गं शत्रुविश्वासमकृत्वाऽऽनन्दं भुञ्जीरन्॥१३॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश प्रकाशमान! आप **(अनृजोः)** कुटिल **(कस्य)** किसी **(प्रमिनतः)** अत्यन्त हिंसा करने वाले **(वेशस्य)** प्रवेश के **(हुरः)** कुटिल कार्यसम्बन्धी **(सदम्)** वस्तु को **(मा)** मत **(गाः)** प्राप्त होओ और कुटिल **(आपेः)** प्राप्त हुए के **(यक्षम्)** प्राप्त होने योग्य वस्तु को **(मा)** मत प्राप्त होओ, कुटिल **(भ्रातुः)** बन्धु के प्राप्त होने योग्य वस्तु को **(मा)** मत प्राप्त होओ, कुटिल **(सख्युः)** मित्र के **(दक्षम्)** बल को **(मा)** मत **(वेः)** प्राप्त होओ, कुटिल **(रिपोः)** शत्रु के **(ऋणम्)** ऋण को **(मा)** मत प्राप्त होओ, जिससे हम लोग सुख का **(इत्)** ही **(भुजेम)** व्यवहार करें॥१३॥

भावार्थः-उन्हीं लोगों को बुद्धिमान् समझना चाहिये कि जो अन्याय से किसी का वस्तु, दुष्टवेश, हिंसा करनेवाले का संग, न्याय से प्राप्त हुए धन का व्यर्थ खर्च, दुष्ट बन्धु का संग और शत्रु का विश्वास नहीं करके आनन्द का भोग करें॥१३॥

अथ राज्यपालनविषयमाह॥

अब राज्यपालन विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

रक्षा॑ णो अग्ने॒ तव॒ रक्ष॑णेभी रार॒क्षाण॑: सुमख प्रीणा॒नः।

प्रति॑ ष्फुर॒ वि रु॑ज वी॒ड्वंहो॑ ज॒हि रक्षो॒ महि॑ चिद्वावृधा॒नम्॥१४॥

रक्ष॑। नः॒। अ॒ग्ने॒। तव॑। रक्ष॑णेभिः। र॒र॒क्षाण॑:। सु॒ऽम॒ख॒। प्री॒णा॒नः। प्रति॑। स्फु॒र॒। वि रु॒ज॒। वी॒ळु। अंह॑:। ज॒हि। रक्ष॑:। महि॑। चि॒त्। व॒वृ॒धा॒नम्॥१४॥

पदार्थः-**(रक्ष)** पालय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङः** इति दीर्घः। **(नः)** अस्मान् **(अग्ने)** राजन् **(तव)** **(रक्षणेभिः)** अनेकविधैरुपायैः **(ररक्षाणः)** भृशं रक्षन्त्सन् **(सुमख)** सुष्ठुन्यायव्यवहारपालकः **(प्रीणानः)** प्रसन्नः प्रसादयन् **(प्रति)** **(स्फुर)** पुरुषार्थय **(वि)** **(रुज)** प्रभग्नं कुरु **(वीळु)** दृढम् **(अंहः)** पापम् **(जहि)** **(रक्षः)** दुष्टं शत्रुम् **(महि)** महान्तम् **(चित्)** अपि **(वावृधानम्)** भृशं वर्धमानम्॥१४॥

अन्वयः-हे सुमखाऽग्ने! त्वं नो रक्ष महि वावृधानं ररक्षाणः प्रीणानः सन् प्रति स्फुर। शत्रुं वीळु विरुज अंहो जहि रक्षो विरुज यतस्तव चिद्रक्षणेभिर्वयं सुखिनः स्याम॥१४॥

भावार्थः-त एव राजानः कीर्त्तिभाजो ये दुष्टानां दुष्टतां निवार्य्य श्रेष्ठानां श्रेष्ठतां वर्धयित्वा राज्यं सततं पितृवत्पालयेयुः॥१४॥

पदार्थः-हे **(सुमख)** उत्तम न्याय व्यवहार के पालन करने वाले **(अग्ने)** राजन्! आप **(नः)** हम लोगों की **(रक्ष)** रक्षा करो और **(महि)** बड़े **(वावृधानम्)** अत्यन्त वृद्धि को प्राप्त हुए की **(ररक्षाणः)** रक्षा करते **(प्रीणानः)** प्रसन्न होते वा प्रसन्न करते हुए, **(प्रति, स्फुर)** पुरुषार्थ करो और शत्रु को **(वीळु)** दृढ़ **(वि, रुज)** विशेषता से अच्छे प्रकार भग्न करो और **(अंहः)** पाप का **(जहि)** नाश करो **(रक्षः)** दुष्ट शत्रु का भंग करो और जिससे **(तव)** आपके **(चित्)** भी **(रक्षणेभिः)** अनेक प्रकार के उपायों से हम लोग सुखी होवें॥१४॥

भावार्थः-वे ही राजा लोग यश के भागी हैं कि जो दुष्ट पुरुषों की दुष्टता को दूर कर और श्रेष्ठ पुरुषों की श्रेष्ठता बढ़ा के राज्य का निरन्तर पिता के समान अर्थात् पिता अपने पुत्र की पालना करता, वैसे पालन करें॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एभिर्भव सुमना अग्ने अर्कैरिमान्स्पृश मन्मभिः शूर वाजान्।

उत ब्रह्माण्यङ्गिरो जुषस्व सं ते शस्तिर्देववाता जरेत॥१५॥

एभिः। भव। सुऽमनाः। अग्ने। अर्कैः। इमान्। स्पृश। मन्मऽभिः। शूर। वाजान्। उत। ब्रह्माणि। अङ्गिरः। जुषस्व। सम्। ते। शस्तिः। देवऽवाता। जरेत॥१५॥

पदार्थः-**(एभिः)** धार्मिकै रक्षकैर्विद्वद्भिः सह **(भव)** **(सुमनाः)** शोभनं मनो यस्य सः **(अग्ने)** विद्वन् **(अर्कैः)** सत्कर्त्तव्यैः **(इमान्)** **(स्पृश)** गृहाण **(मन्मभिः)** विद्वद्भिः **(शूरः)** **(वाजान्)** प्राप्तव्याञ्छुभगुणकर्मस्वभावान् **(उत)** **(ब्रह्माणि)** महान्ति धनानि **(अङ्गिरः)** प्राण इव वर्त्तमान **(जुषस्व)** सेवस्व **(सम्)** **(ते)** तव **(शस्तिः)** प्रशंसा **(देववाता)** देवैर्विद्वद्भिः कृता **(जरेत)** प्रशंसिता भवेत्॥१५॥

अन्वयः-हे अङ्गिरः शूराग्ने राजंस्त्वमेभिरर्कैर्मन्मभिस्सह सुमना भवेमान् वाजान् स्पृश उत ब्रह्माणि सञ्जुषस्व यतस्ते देववाता शस्तिर्जरेत॥१५॥

भावार्थः-हे राजन्! भवानाप्तानां विदुषां सङ्गं सततं कुरु तदुपदेशेन न्यायेन राज्यं पालयित्वा प्रशंसितो भवतु॥१५॥

पदार्थः-हे **(अङ्गिरः)** प्राण के सदृश वर्त्तमान **(शूर)** वीर **(अग्ने)** विद्वन् राजन्! आप **(एभिः)** इन धार्मिक रक्षक और विद्यावान् **(अर्कैः)** सत्कार करने योग्य **(मन्मभिः)** विद्वानों के साथ **(सुमनाः)** उत्तम मन युक्त **(भव)** हूजिये और **(इमान्)** इन **(वाजान्)** प्राप्त होने योग्य उत्तम गुण, कर्म और स्वभाव वालों को **(स्पृश)** ग्रहण करिये **(उत)** और **(ब्रह्माणि)** बड़े-बड़े धनों का **(सम् जुषस्व)** अच्छे प्रकार सेवन करिये जिससे कि **(ते)** आपकी **(देववाता)** विद्वानों से की गई **(शस्तिः)** प्रशंसा **(जरेत)** प्रशंसित हो अर्थात् अधिक विख्यात हो॥१५॥

भावार्थः-हे राजन्! आप यथार्थवक्ता विद्वानों का संग निरन्तर करिये और उनके उपदेश से न्यायपूर्वक राज्य का पालन करके प्रशंसित हूजिये॥१५॥

अथ प्रजाविषयमाह॥

अब प्रजा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एता विश्वा॑ विदुषे॒ तुभ्यं॑ वेधो नी॒थान्य॑ग्ने नि॒ण्या वचां॑सि।
नि॒वच॑ना क॒वये॒ काव्या॒न्यशं॑सिषं म॒तिभि॒र्विप्र॑ उ॒क्थैः॥१६॥२२॥

ए॒ता। विश्वा॑। वि॒दुषे॑। तुभ्य॑म्। वे॒धः॒। नी॒थानि॑। अ॒ग्ने॒। नि॒ण्या। वचां॑सि। नि॒ऽवच॑ना। क॒वये॑। काव्या॑नि। अशं॑सिषम्। म॒तिऽभिः॑। विप्रः॑। उ॒क्थैः॥१६॥

पदार्थः-(**एता**) एतानि (**विश्वा**) सर्वाणि (**विदुषे**) (**तुभ्यम्**) (**वेधः**) मेधाविन् (**नीथानि**) प्रापितानि (**अग्ने**) राजन् (**निण्या**) निर्णीतानि (**वचांसि**) वचनानि (**निवचना**) नितरामुच्यन्तेऽर्था यैस्तानि (**कवये**) विक्रान्तप्रज्ञाय (**काव्यानि**) कविभिर्निर्मितानि (**अशंसिषम्**) प्रशंसेयम् (**मतिभिः**) विद्वद्भिस्सह (**विप्रः**) मेधावी (**उक्थैः**) प्रशंसितुमर्हैः॥१६॥

अन्वयः-हे वेधोऽग्ने! विप्रोऽहमुक्थैर्मतिभिः सह यानि काव्यान्यशंसिषं तानि विश्वैता निण्या निवचना वचांसि विदुषे कवये तुभ्यं नीथानि प्रशंसेयम्॥१६॥

भावार्थः-सैव निश्चिता प्रशंसा वेदितव्या या धार्मिकैर्विद्वद्भिः क्रियेत, अध्यापकोपदेशकैरध्येतार उपदेश्याश्च सदैव सत्यवादिनो विद्वांसो विधातव्या इति॥१६॥

अत्राग्निराजप्रजादिकृत्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति तृतीयं सूक्तं द्वाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**वेधः**) बुद्धिमान् (**अग्ने**) राजन्! (**विप्रः**) मेधावी जन मैं (**उक्थैः**) प्रशंसा करने योग्य (**मतिभिः**) विद्वानों के साथ जो (**काव्यानि**) कवियों ने रचे शास्त्र उनकी (**अशंसिषम्**) प्रशंसा करता हूँ और उन (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**एता**) इन (**निण्या**) निर्णय किये गये (**निवचना**) अत्यन्त अर्थों को कहने वाले (**वचांसि**) वचनों को (**विदुषे**) विद्वान् (**कवये**) उत्तम बुद्धि वाले (**तुभ्यम्**) आपके लिये (**नीथानि**) प्राप्त किये गये प्रशंसूं अर्थात् वह आपको प्राप्त हुए ऐसी प्रशंसा करूं॥१६॥

भावार्थः-वही निश्चित प्रशंसा जानने योग्य है कि जो धार्मिक विद्वानों से की जाय। अध्यापक और उपदेशक जनों को चाहिये कि पढ़ने और उपदेश देनेवालों को सदा ही सत्यवादी और विद्वान् करें॥१६॥

इस सूक्त में अग्नि, राजा और प्रजादिकों के कृत्य और गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

॥यह तीसरा सूक्त और बाईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चदशर्चस्य चतुर्थस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अग्नीरक्षोहा देवता। १,२,४,५,८ भुरिक् पङ्क्तिः। ९ स्वराट् पङ्क्तिः। १२ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३, १०, ११, १५ निचृत्त्रिष्टुप्। ६ विराट् त्रिष्टुप्। ७, १३ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। १४ स्वराड्बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः॥

अथ राजविषये सेनापतिकृत्यमाह॥

अब पन्द्रह ऋचा वाले चौथे सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में राजविषय में सेनापति के काम को कहते हैं॥

कृणुष्व पाजः प्रसितिं न पृथ्वीं याहि राजेवामवाँ इभेन।
तृष्वीमनु प्रसितिं द्रूणानोऽस्तासि विध्य रक्षसस्तपिष्ठैः॥१॥

कृणुष्व। पाजः। प्रऽसितिम्। न। पृथ्वीम्। याहि। राजाऽइव। अमऽवान्। इभेन। तृष्वीम्। अनु। प्रऽसितिम्। द्रूणानः। अस्ता। असि। विध्य। रक्षसः। तपिष्ठैः॥१॥

पदार्थः-(**कृणुष्व**) (**पाजः**) बलम् (**प्रसितिम्**) प्रबद्धाम् (**न**) इव (**पृथ्वीम्**) भूमिम् (**याहि**) (**राजेव**) (**अमवान्**) बलवान् (**इभेन**) हस्तिना (**तृष्वीम्**) पिपासिताम् (**अनु**) (**प्रसितिम्**) बन्धनम् (**द्रूणानः**) शीघ्रकारी (**अस्ता**) प्रक्षेप्ता (**असि**) (**विध्य**) (**रक्षसः**) दुष्टान् (**तपिष्ठैः**) अतिशयेन सन्तापकैः शस्त्रादिभिः॥१॥

अन्वयः-हे सेनेश! त्वं राजेवाऽमवानिभेन याहि प्रसितिं पृथ्वीं न पाजः कृणुष्व यतः प्रसितिं तृष्वीमनु द्रूणानोऽस्तासि तस्मात्तपिष्ठै रक्षसो विध्य॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजजना! यूयं पृथ्वीव दृढं बलं कृत्वा राजवन्न्यायाधीशा भूत्वा तृषिताम्मृगीमनुधावन् वृक इव दुष्टान् दस्यूननुधावन्तस्तान् घ्नत॥१॥

पदार्थः-हे सेना के ईश! [आप] (**राजेव**) राजा के सदृश (**अमवान्**) बलवान् (**इभेन**) हाथी से (**याहि**) जाइये प्राप्त हूजिये (**प्रसितिम्**) दृढ़ बंधी हुई (**पृथ्वीम्**) भूमि के (**न**) सदृश (**पाजः**) बल (**कृणुष्व**) करिये जिससे (**प्रसितिम्**) बन्धन और (**तृष्वीम्**) पियासी के प्रति (**अनु, द्रूणानः**) अनुकूल शीघ्रता करने वाले और (**अस्ता**) फेंकने वाला (**असि**) हो इससे (**तपिष्ठैः**) अतिशय सन्ताप देने वाले शस्त्र आदिकों से (**रक्षसः**) दुष्टों को (**विध्य**) पीड़ा देओ॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजसम्बन्धी जनो! आप लोग पृथिवी के सदृश दृढ़ बल करके, राजा के सदृश न्यायाधीश होकर, पिपासित मृगी के पीछे दौड़ते हुए भेड़िये के सदृश दुष्ट डाकू जो कि अनुधावन करते अर्थात् जो कि पथिकादिकों के पीछे दौड़ते हुए, उनका नाश करो॥१॥

अथ राजविषये सामान्यतो राजजनविषयमाह॥

अब राज विषय में सामान्य से राजजनों के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तव॑ भ्रमास॑ आशुया प॑तन्त्यनु॑ स्पृश धृषता शोशु॑चानः।

तपूं॑ष्यग्ने जुह्वा॑ पतङ्गानस॑न्दितो वि सृ॑ज विष्व॑गुल्काः॥ २॥

तव॑। भ्रमास॑ः। आशुऽया। पतन्ति। अनु॑। स्पृश। धृषता। शोशु॑चानः। तपूं॑षि। अग्ने। जुह्वा॑। पतङ्गान्। अस॑म्ऽदितः। वि। सृज। विष्व॑क्। उल्काः॥ २॥

पदार्थः-(**तव**) (**भ्रमासः**) भ्रमणानि (**आशुया**) क्षिप्राणि (**पतन्ति**) (**अनु**) (**स्पृश**) (**धृषता**) प्रगल्भेन सैन्येन (**शोशुचानः**) भृशं पवित्रः सन् (**तपूंषि**) प्रतप्तानि (**अग्ने**) पावकवद्वर्त्तमान (**जुह्वा**) होमसाधनेन (**पतङ्गान्**) अग्निकणा इव वर्त्तमानानश्वान् (**असन्दितः**) अखण्डितः (**वि**) (**सृज**) (**विष्वक्**) सर्वशः (**उल्काः**) विद्युतः॥ २॥

अन्वयः-हे अग्ने! ये तवाऽऽशुया भ्रमासः पतन्ति तान् धृषता शोशुचानोऽनुस्पृश जुह्वाग्निस्तपूंषीव पतङ्गाननु स्पृश। असन्दितः सन्नुल्का विष्वग्विसृज॥ २॥

भावार्थः-ये राजजना स्फूर्त्तिमन्तः सन्त आशुकारिणः स्युस्तेऽखण्डितवीर्यो भूत्वा विद्युत्प्रयोगान् ब्रह्मास्त्राद्याञ्छत्रूणामुपरि कृत्वा विजयं प्राप्नुवन्तु॥ २॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश वर्त्तमान! जो (**तव**) आपके (**आशुया**) शीघ्र (**भ्रमासः**) भ्रमण (**पतन्ति**) गिरते हैं, उनको (**धृषता**) प्रगल्भ सेना के साथ (**शोशुचानः**) अत्यन्त पवित्र हुए (**अनु, स्पृश**) स्पर्श करो और (**जुह्वा**) होम के साधन से अग्नि (**तपूंषि**) तपाये गये पदार्थों को जैसे वैसे (**पतङ्गान्**) अग्निकणों के सदृश वर्त्तमान घोड़ों को अनुकूलता से स्पर्श करो (**असन्दितः**) खण्डरहित हुए (**उल्काः**) बिजुलियों को (**विष्वक्**) सर्व प्रकार (**वि, सृज**) छोड़िये॥ २॥

भावार्थः-जो राजजन फुरती वाले होते हुए शीघ्र कार्य्यकारी हों, वे अखण्डितवीर्य्य अर्थात् पूर्णबल वाले होकर बिजुली के प्रयोगों और ब्रह्मास्त्र आदि अस्त्रों को शत्रुओं के ऊपर कर विजय को प्राप्त हों॥ २॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राज विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रति स्पशो वि सृ॑ज तूर्णि॑तमो भवा॑ पायुर्वि॒शो अ॒स्या अद॑ब्धः।

यो नो॑ दूरे अ॒घशं॑सो यो अन्त्यग्ने॒ माकि॑ष्टे॒ व्यथि॒रा द॑धर्षीत्॥ ३॥

प्रति॑। स्पशः॑। वि। सृज। तूर्णि॑ऽतमः। भव॑। पायुः। विशः। अस्याः। अद॑ब्धः। यः। नः। दूरे। अघऽशं॑सः। यः। अन्ति॑। अग्ने॑। माकि॑ः। ते। व्यथि॑ः। आ। दुधर्षीत्॥ ३॥

पदार्थः-(**प्रति**) (**स्पशः**) स्पर्शकान् (**वि**) (**सृज**) (**तूर्णितमः**) अतिशीघ्रकारी (**भव**) अत्र द्व्यचोऽतस्तिङ इति दीर्घः। (**पायुः**) पालकः (**विशः**) प्रजायाः (**अस्याः**) (**अदब्धः**) अहिंसकः (**यः**)

(नः) अस्माकम् **(दूरे)** **(अघशंसः)** पापप्रशंसकस्तेनः **(यः)** **(अन्ति)** समीपे **(अग्ने)** विद्वन् राजन् **(माकिः)** **(ते)** तव **(व्यथिः)** पीडा **(आ)** **(दधर्षीत्)** धृष्णुयात्॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं तूर्णितमस्स्न् स्पशो विसृज। अस्या विशोऽदब्धः पायुः प्रति भव योऽघशंसो नो दूरे योऽन्ति वर्त्तेत स ते व्यथिर्माकिरादधर्षीत्॥३॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वं शुभान् गुणान् गृहीत्वा प्रजाः सम्पाल्य ये दूरसमीपस्था दस्यवस्तान् हिन्धि यतस्सर्वेषां सुखं स्यात्॥३॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन् राजन्! आप **(तूर्णितमः)** अत्यन्त शीघ्रकारी होते हुए **(स्पशः)** अत्यन्त स्पर्श करने अर्थात् मुंह लगने वालों का **(वि, सृज)** त्याग करो, और **(अस्याः)** इस **(विशः)** प्रजा के **(अदब्धः)** नहीं मारने और **(पायुः)** पालन करने वाले **(प्रति, भव)** होओ **(यः)** जो **(अघशंसः)** पाप की प्रशंसा करनेवाला चोर **(नः)** हम लोगों के **(दूरे)** दूर देश में वा **(यः)** जो **(अन्ति)** समीप में वर्त्तमान हो वह **(ते)** आपको **(व्यथिः)** पीड़ारूप **(माकिः)** मत **(आ, दधर्षीत्)** ढीठ हो॥३॥

भावार्थः-हे राजन्! आप उत्तम गुणों को ग्रहण करके और प्रजा का पालन करके जो दूर और समीप में वर्त्तमान डाकू आदि दुष्ट पुरुष उनका नाश करो, जिससे सब को सुख हो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उदग्ने तिष्ठ प्रत्या तनुष्व न्यशमित्राँ ओषतात् तिग्महेते।

यो नो अरातिं समिधान चक्रे नीचा तं धक्ष्यतसं न शुष्कम्॥४॥

उत्। अग्ने। तिष्ठ। प्रति। आ। तनुष्व। नि। अमित्रान्। ओषतात्। तिग्मऽहेते। यः। नः। अरातिम्। सम्ऽइधान। चक्रे। नीचा। तम्। धक्षि। अतसम्। न। शुष्कम्॥४॥

पदार्थः-**(उत्)** **(अग्ने)** अग्निरिव वर्त्तमान **(तिष्ठ)** उद्युक्तो भव **(प्रति)** **(आ)** **(तनुष्व)** विस्तृणीहि **(नि)** **(अमित्रान्)** शत्रून् **(ओषतात्)** दह **(तिग्महेते)** तिग्मा तीव्रा हेतिर्वृद्धिर्यस्य तत्सम्बुद्धौ **(यः)** **(नः)** **(अरातिम्)** शत्रुम् **(समिधान)** सम्यक् प्रकाशमान **(चक्रे)** **(नीचा)** नीचान् **(तम्)** **(धक्षि)** दहसि **(अतसम्)** कूपम् **(न)** इव **(शुष्कम्)** जलार्द्रभावरहितम्॥४॥

अन्वयः-हे समिधानाऽग्ने! त्वमुत्तिष्ठाऽऽतनुष्वाऽमित्रान् प्रति न्योषतात्। हे तिग्महेते! यो नोऽरातिममित्रान्नीचा चक्रे तं शुष्कमतसं न यतस्त्वं धक्षि तस्माद्राज्यमर्हसि॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैरालस्यं विहाय पुरुषार्थं विसृत्य शत्रवो दग्धव्या अन्धकूप इव कारागृहे बन्धनीयाः। नीचतां प्रापणीयाः। य एवं विदधति तान् राजा गुरुवत्सेवेत॥४॥

पदार्थः-हे **(समिधान)** उत्तम प्रकार प्रकाशमान और **(अग्ने)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान आप

(उत्, तिष्ठ) उद्युक्त हूजिये **(आ, तनुष्व)** अच्छे प्रकार विस्तृत हूजिये **(अमित्रान्)** शत्रुओं के **(प्रति)** प्रति **(नि, ओषतात्)** निरन्तर दाह देओ **(तिग्महेते)** हे अत्यन्त तीव्र वृद्धि वाले! **(यः)** जो **(नः)** हम लोगों के **(अरातिम्)** एक शत्रु और अनेक शत्रुओं को **(नीचा)** नीच **(चक्रे)** कर चुका अर्थात् सब से बढ़ गया **(तम्)** उसको **(शुष्कम्)** गीलेपन से रहित **(अतसम्)** कूप के **(न)** सदृश जिससे आप **(धक्षि)** जलाते हो, इससे वह आप राज्य के योग्य हो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि आलस्य त्याग के पुरुषार्थ का विस्तार करके शत्रुओं को जलावें और अन्धकूप के सदृश कारागृह में उनका बन्धन करें और नीचता को प्राप्त करे [=करायें]। जो लोग ऐसा करते हैं, उनकी राजा गुरु के सदृश सेवा करे॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऊर्ध्वो भव प्रति विध्याध्यस्मदाविष्कृणुष्व दैव्यान्यग्ने।

अव स्थिरा तनुहि यातुजूनां जामिमजामिं प्र मृणीहि शत्रून्॥५॥२३॥

ऊर्ध्वः। भव। प्रति। विध्य। अधि। अस्मत्। आविः। कृणुष्व। दैव्यानि। अग्ने। अव। स्थिरा। तनुहि। यातुऽजूनाम्। जामिम्। अजामिम्। प्र। मृणीहि। शत्रून्॥५॥

पदार्थः-**(ऊर्ध्वः)** उन्नतः **(भव)** **(प्रति)** **(विध्य)** **(अधि)** उपरिभावे **(अस्मत्)** **(आविः)** प्राकट्ये **(कृणुष्व)** **(दैव्यानि)** देवैर्विद्वद्भिः कृतानि कर्माणि **(अग्ने)** पावक इव तेजस्विन् **(अव)** **(स्थिरा)** स्थिराणि सैन्यानि **(तनुहि)** विस्तृणीहि **(यातुजूनाम्)** प्राप्तवेगानाम् **(जामिम्)** भोगम् **(अजामिम्)** अभोगम् **(प्र)** **(मृणीहि)** हिन्धि **(शत्रून्)** अरीन्॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमस्मदूर्ध्वोऽधि भव स्थिरा दैव्यानि तनुहि यातुजूनां जामिमजामिमाविष्कृणुष्व शत्रून् प्राऽव मृणीहि प्रति विध्य॥५॥

भावार्थः-ये मनुष्याः स्वस्मादुत्कृष्टान् दृष्ट्वा हर्षन्ति, अनुत्कृष्टान् दृष्ट्वा शोचन्ति भोगयुक्तान् दृष्ट्वा प्रमोदन्तेऽभोगान् दृष्ट्वाऽप्रसन्नयन्ति त एव राजकर्म्मसु स्थिरा भवन्तु॥५॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्विन्! आप **(अस्मत्)** हम लोगों से **(ऊर्ध्वः)** उन्नत **(अधि)** उपरिभाव में अर्थात् ऊपर में रहने वाले **(भव)** हूजिये **(स्थिरा)** स्थिर सेना और **(दैव्यानि)** विद्वानों के किये कर्म्मों का **(तनुहि)** विस्तार करिये **(यातुजूनाम्)** वेग को प्राप्त हुए प्राणियों के **(जामिम्)** भोग और **(अजामिम्)** अभोग को **(आविः)** प्रकट **(कृणुष्व)** करिये **(शत्रून्)** शत्रुओं का **(प्र, अव, मृणीहि)** अच्छे प्रकार नाश करिये और **(प्रति, विध्य)** वार-वार पीड़ा दीजिये॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य अपने से उत्कृष्ट अर्थात् श्रेष्ठों को देख के प्रसन्न होते, अनुत्कृष्ट अर्थात् दुःखियों को देख के शोक करते, भोगयुक्तों को देख के आनन्दित होते और भोगरहितों को देख के

अप्रसन्न होते, वे ही राजकर्मों में स्थिर होते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स ते जानाति सुमतिं यविष्ठ य ईवते ब्रह्मणे गातुमैरत्।

विश्वान्यस्मै सुदिनानि रायो द्युम्नान्यर्यो वि दुरो अभि द्यौत्॥६॥

सः। ते। जानाति। सुऽमतिम्। यविष्ठ। यः। ईवते। ब्रह्मणे। गातुम्। ऐरत्। विश्वानि। अस्मै। सुऽदिनानि। रायः। द्युम्नानि। अर्यः। वि। दुरः। अभि। द्यौत्॥६॥

पदार्थः-(**सः**) विद्वान् (**ते**) तव (**जानाति**) (**सुमतिम्**) श्रेष्ठां प्रज्ञाम् (**यविष्ठ**) (**यः**) (**ईवते**) विद्याव्याप्ताय (**ब्रह्मणे**) वेदविदे (**गातुम्**) प्रशंसितां वाणीम् (**ऐरत्**) प्रापयेत् (**विश्वानि**) सर्वाणि (**अस्मै**) (**सुदिनानि**) सुखकराणि (**रायः**) धनानि (**द्युम्नानि**) यशांसि (**अर्यः**) स्वामी (**वि**) (**दुरः**) द्वाराणि (**अभि**) (**द्यौत्**) द्योतयेत्॥६॥

अन्वयः-हे यविष्ठ! योऽर्य ईवते ब्रह्मणे गातुमैरदस्मै विश्वानि सुदिनानि रायो द्युम्नानि दुरोऽभि वि द्यौत् स ते सुमतिं जानाति॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! ये नित्यमङ्गलाचारिणो यशस्विनोऽनुरक्ताश्शूरा राजव्यवहारविदस्त्वां बोधयेयुस्ताँस्त्वं सुहृदो जानीहि॥६॥

पदार्थः-हे (**यविष्ठ**) अत्यन्त युवावस्थायुक्त! (**यः**) जो (**अर्यः**) स्वामी (**ईवते**) विद्या से व्याप्त (**ब्रह्मणे**) वेद जानने वाले के लिये (**गातुम्**) प्रशंसित वाणी को (**ऐरत्**) प्राप्त कराये (**अस्मै**) इसके लिये (**विश्वानि**) सम्पूर्ण (**सुदिनानि**) सुख करने वाले दिनों (**रायः**) धनों (**द्युम्नानि**) प्रकाशित यशों (**दुरः**) और यश के द्वारों को (**अभि, वि, द्यौत्**) प्रकाशित करे (**सः**) वह विद्वान् (**ते**) आपकी (**सुमतिम्**) श्रेष्ठ बुद्धि को (**जानाति**) जानता है॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! जो लोग नित्य मङ्गल आचरण करने वाले यशयुक्त अनुरक्त अर्थात् स्नेही शूरवीर और राज्यव्यवहार के जानने वाले आपको चितावें, उनको आप मित्र जानिये॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सेदग्ने अस्तु सुभगः सुदानुर्यस्त्वा नित्येन हविषा य उक्थैः।

पिप्रीषति स्व आयुषि दुरोणे विश्वेदस्मै सुदिना सासदिष्टिः॥७॥

सः। इत्। अग्ने। अस्तु। सुऽभगः। सुऽदानुः। यः। त्वा। नित्येन। हविषा। यः। उक्थैः। पिप्रीषति। स्वे। आयुषि। दुरोणे। विश्वा। इत्। अस्मै। सुऽदिना। सा। असत्। इष्टिः॥७॥

पदार्थः-(**सः**) राजा (**इत्**) एव (**अग्ने**) विद्याप्रकाशितसभ्यजन (**अस्तु**) (**सुभगः**) प्रशस्तैश्वर्य्यः (**सुदानुः**) उत्तमदानः (**यः**) (**त्वा**) त्वाम् (**नित्येन**) अविनाशिना (**हविषा**) होतव्येन (**यः**) (**उक्थैः**) प्रशंसनैः (**पिप्रीषति**) कमितुमिच्छति (**स्वे**) स्वकीये (**आयुषि**) जीवने (**दुरोणे**) (**विश्वा**) अखिलानि (**इत्**) एव (**अस्मै**) (**सुदिना**) शोभनानि दिनानि (**सा**) (**असत्**) भवेत् (**इष्टिः**) यजनक्रिया॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्सुभगः सुदानुर्भवेत् स इदेव तव सभ्योऽस्तु य उक्थैर्नित्येन हविषा त्वा पिप्रीषति। अस्मै स्व आयुषि दुरोणे विश्वा सुदिना सन्तु सेष्टिरुभयत्र कल्याणकारिणीदसत्॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! येऽविनाशिना प्रेम्णा न्यायविनयाभ्यां राज्योन्नतिं विदधति राजप्रजयोर्निरुपद्रवेण मङ्गलसमयं सदैव प्रापयन्ति ते राजगृहेऽध्यक्षाः स्युः॥७॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्या से प्रकाशित सभ्यजन! (**यः**) जो (**सुभगः**) प्रशंसनीय ऐश्वर्य्ययुक्त (**सुदानुः**) उत्तम दान देने वाला हो (**सः, इत्**) वही आपका सभासद् (**अस्तु**) हो (**यः**) जो (**उक्थैः**) प्रशंसाओं और (**नित्येन**) नहीं नाश होने वाले (**हविषा**) हवन करने योग्य पदार्थ से (**त्वा**) आपको (**पिप्रीषति**) सुशोभित करने की इच्छा करता है (**अस्मै**) इसके लिये (**स्वे**) अपने (**आयुषि**) जीवन और (**दुरोणे**) गृह में (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**सुदिना**) सुन्दर दिन हों (**सा**) वह (**इष्टिः**) यज्ञ करने की क्रिया दोनों लोकों में सुख देने वाली (**इत्**) ही (**असत्**) होवे॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! जो लोग नित्य प्रेम से न्याय और विनय के द्वारा राज्य की उन्नति करते और राजा और प्रजा के उपद्रव के विना मङ्गल समय सदा ही प्राप्त कराते हैं, वे राजगृह में अध्यक्ष हों॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अर्चामि ते सुमतिं घोष्यर्वाक् सं ते वावाता जरतामियं गीः।

स्वश्वास्त्वा सुरथा मर्जयेमास्मे क्षत्राणि धारयेरनु द्यून्॥८॥

अर्चामि। ते। सुऽमतिम्। घोषि। अर्वाक्। सम्। ते। वावाता। जरताम्। इयम्। गीः। सुऽअश्वाः। त्वा। सुऽरथाः। मर्जयेम। अस्मे इति। क्षत्राणि। धारयेः। अनु। द्यून्॥८॥

पदार्थः-(**अर्चामि**) सत्करोमि (**ते**) तव (**सुमतिम्**) शोभना मतिर्यस्य सभ्यस्य तम् (**घोषि**) शब्दयुक्तं वचः (**अर्वाक्**) पश्चात् (**सम्**) (**ते**) तव (**वावाता**) दोषहन्त्री विद्याजनयित्री (**जरताम्**) स्तुयात् (**इयम्**) (**गीः**) सुशिक्षिता वाणी (**स्वश्वाः**) शोभना अश्वाः (**त्वा**) त्वाम् (**सुरथाः**) श्रेष्ठरथाः (**मर्जयेम**) शोधयेम (**अस्मे**) अस्माकम् (**क्षत्राणि**) राज्योद्भवानि धनानि। **क्षत्रमिति धननामसु पठितम्।** (निघं०२.१०) (**धारयेः**) (**अनु**) (**द्यून्**) दिवसान्॥८॥

अन्वयः-हे राजन्नहं ते सुमतिमर्चामि यं त्वा वावातेयं गीर्घोषि सञ्जरतां तं त्वां स्वश्वाः सुरथा वयम्मर्जयेम। यथा ते धनान्यनुद्यून् वयं धारयेम तथार्वाक् त्वमस्मे क्षत्राण्यनुद्यन् धारयेः॥८॥

भावार्थः-यदा राजा सभ्यान् पृच्छेदस्मिन्नधिकारे कः पुरुषो रक्षणीय इति तदा सर्वे धार्मिकस्य योग्यस्य रक्षणे सम्मतिं दद्युः। राज्ञा च योग्या एव पुरुषा राजकर्मणि रक्षणीया यतो नित्यं प्रशंसा वर्धेत॥८॥

पदार्थः-हे राजन्! मैं **(ते)** आपके **(सुमतिम्)** श्रेष्ठ बुद्धिवाले सभासद् का **(अर्चामि)** सत्कार करता हूँ जिन **(त्वा)** आपकी **(वावाता)** दोषों को नाश करने और विद्या को उत्पन्न करने वाली **(इयम्)** यह **(गीः)** उत्तम प्रकार शिक्षित वाणी **(घोषि)** शब्दयुक्त वचन जैसे हों, वैसे **(सम्, जरताम्)** स्तुति करे उन आपको **(स्वश्वाः)** उत्तम घोड़े **(सुरथाः)** श्रेष्ठ रथ और हम लोग **(मर्जयेम)** शुद्ध करावें। जैसे **(ते)** आपके धनों को **(अनु, द्यून्)** अनुदिन प्रतिदिन हम लोग धारण करें, वैसे आप **(अर्वाक्)** पीछे **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(क्षत्राणि)** राज्य में उत्पन्न हुए धनों को **(धारयेः)** धारण करिये॥८॥

भावार्थः-जब राजा सभास्थ जनों को पूंछै कि इस अधिकार में कौन पुरुष रखने योग्य है, तब सम्पूर्ण जन धार्मिक योग्य पुरुष के नियत करने में सम्मति देवें। और राजा को भी चाहिये कि योग्य ही पुरुषों को राजकर्म में नियत करे, जिससे कि नित्य प्रशंसा बढ़े॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इह त्वा भूर्या चरेदुप त्मन् दोषावस्तर्दीदिवांसमनु द्यून्।

क्रीळन्तस्त्वा सुमनसः सपेमाभि द्युम्ना तस्थिवांसो जनानाम्॥९॥

इह। त्वा। भूरि। आ। चरेत्। उप। त्मन्। दोषाऽवस्तः। दीदिऽवांसम्। अनु। द्यून्। क्रीळन्तः। त्वा। सुऽमनसः। सपेम। अभि। द्युम्ना। तस्थिवांसः। जनानाम्॥९॥

पदार्थः-**(इह)** अस्मिन् राजकर्मणि **(त्वा)** त्वाम् **(भूरि)** बहु **(आ)** **(चरेत्)** **(उप)** **(त्मन्)** आत्मनि **(दोषावस्तः)** अहर्निशम् **(दीदिवांसम्)** प्रकाशमानं प्रकाशयन्तं वा **(अनु)** **(द्यून्)** दिवसान् **(क्रीळन्तः)** धनुर्वेदविद्याशिक्षणाय युद्धाय शस्त्राऽभ्यासं कुर्वन्तः **(त्वा)** **(सुमनसः)** शोभनं मनो येषान्ते **(सपेम)** आक्रुश्याम निंद्येम **(अभि)** **(द्युम्ना)** यशसा धनेन वा **(तस्थिवांसः)** स्थिरास्सन्तः **(जनानाम्)** राजप्रजापुरुषाणाम्॥९॥

अन्वयः-हे राजन्निह भवान् त्मन् भूरि शुभमुपाचरेत् सुमनसस्तस्थिवांसोऽनुद्यून् क्रीळन्तो वयं जनानां दीदिवांसं द्युम्ना यशसा सह वर्त्तमानं राजानं त्वा दोषावस्तः प्रशंसेम यद्यशुभाचारं कुर्यात्तर्हि त्वाऽभि सपेम॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि भवान् दुर्व्यसनानि त्यक्त्वा धर्म्याणि कर्म्माणि कुर्यात्तर्हि वयं तव भक्ता निरन्तरं स्याम यद्यन्यायं कुर्यात्तर्हि भवन्तं सद्यस्त्यजेम॥९॥

पदार्थः-हे राजन्! **(इह)** इस राजकर्म में आप **(त्मन्)** आत्मा में **(भूरि)** बहुत शुभकर्म **(उप,**

आ, चरेत्) करें **(सुमनसः)** श्रेष्ठ मनयुक्त जन **(तस्थिवांसः)** स्थिर और **(अनु, द्यून्,)** प्रतिदिन **(क्रीळन्तः)** धनुर्वेदविद्या की शिक्षा के लिये और युद्ध के लिये शस्त्रों का अभ्यास करते हुए हम लोग **(जनानाम्)** राजा और प्रजा के पुरुषों के मध्य में **(दीदिवांसम्)** प्रकाशमान वा प्रकाश करते हुए और **(द्युम्ना)** यश वा धन के सहित वर्त्तमान राजमान **(त्वा)** आपकी **(दोषावस्तः)** दिन-रात्रि प्रशंसा करें, जो अश्रेष्ठ कर्म्म करो तो **(त्वा)** आपकी **(अभि, सपेम)** निन्दा करें॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आप दुर्व्यसनों का त्याग करके धर्म्मसम्बन्धी कर्म्मों को करें तो हम लोग आपके भक्त निरन्तर होवें, जो अन्याय करो तो आप का शीघ्र त्याग करें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यस्त्वा स्वश्वः सुहिरण्यो अग्न उपयाति वसुमता रथेन।

तस्य त्राता भवसि तस्य सखा यस्त आतिथ्यमानुषग्जुजोषत्॥१०॥२४॥

यः। त्वा। सुऽअश्वः। सुऽहिरण्यः। अग्ने। उपऽयाति। वसुऽमता। रथेन। तस्य। त्राता। भवसि। तस्य। सखा। यः। ते। आतिथ्यम्। आनुषक्। जुजोषत्॥१०॥

पदार्थः-**(यः)** **(त्वा)** त्वाम् **(स्वश्वः)** शोभनाश्वः **(सुहिरण्यः)** उत्तमसुवर्णादिधनः **(अग्ने)** राजन् **(उपयाति)** **(वसुमता)** बहुधनयुक्तेन **(रथेन)** रमणीयेन यानेन **(तस्य)** **(त्राता)** **(भवसि)** भवेः **(तस्य)** **(सखा)** सुहृत् **(यः)** **(ते)** तव **(आतिथ्यम्)** अतिथिवत्सत्कारम् **(आनुषक्)** आनुकूल्येन **(जुजोषत्)** भृशं सेवेत॥१०॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्त आनुषगातिथ्यं जुजोषद्यः सुहिरण्यः स्वश्वो वसुमता रथेन त्वोपयाति तस्य त्वं त्राता भवसि तस्य सखा भवसि॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! ये तव राष्ट्रस्य चोपकारकाः स्युः सत्कर्त्तारश्च तेषामेव सखा रक्षकः सञ्चक्रवर्त्ती भवेः॥१०॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** राजन् **(यः)** जो **(ते)** आपकी **(आनुषक्)** अनुकूलता से वर्त्तमान **(आतिथ्यम्)** अतिथि के सदृश सत्कार की **(जुजोषत्)** निरन्तर सेवा करे **(यः)** जो **(सुहिरण्यः)** उत्तम सुवर्ण आदि धनयुक्त और **(स्वश्वः)** सुन्दर घोड़ों से युक्त पुरुष **(वसुमता)** बहुत धन से युक्त **(रथेन)** रमणीय वाहन से **(त्वा)** आपके **(उपयाति)** समीप प्राप्त होता है **(तस्य)** उसके आप **(त्राता)** रक्षा करने वाले **(भवसि)** हूजिये और **(तस्य)** उसके **(सखा)** मित्र हूजिये॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आपके राज्य के उपकार करने और सत्कार करने वालो हों, उनके ही मित्र और रक्षा करने वाले हुए चकवर्त्ती हूजिये॥१०॥

अथ कुमारकुमारीणां शिक्षाविषयमाह॥

अब कुमार और कुमारियों के शिक्षा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

महो रुजामि बन्धुता वचोभिस्तन्मा पितुर्गोतमादन्वियाय।

त्वं नो अस्य वचसश्चिकिद्धि होतर्यविष्ठ सुक्रतो दमूनाः॥ ११॥

महः। रुजामि। बन्धुता। वचःऽभिः। तत्। मा। पितुः। गोतमात्। अनु। इयाय। त्वम्। नः। अस्य। वचसः। चिकिद्धि। होतः। यविष्ठ। सुक्रतो इति सुऽक्रतो। दमूनाः॥ ११॥

पदार्थः-(**महः**) महत् (**रुजामि**) प्रभग्नान् करोमि (**बन्धुता**) बन्धूनां भावः (**वचोभिः**) वचनैः (**तत्**) (**मा**) माम् (**पितुः**) जनकात् (**गोतमात्**) अतिशयेन गौः सकलविद्यास्तोता तस्मात्। **गौरिति स्तोतृनामसु पठितम्।** (निघं०३.१६) (**अनु**) (**इयाय**) प्राप्नोतु (**त्वम्**) (**नः**) अस्मान् (**अस्य**) (**वचसः**) (**चिकिद्धि**) ज्ञापय (**होतः**) दातः (**यविष्ठ**) अतिशयेन युवन् (**सुक्रतो**) सुष्ठुप्राप्तप्रज्ञ (**दमूनाः**) दमनशीलो जितेन्द्रियः॥ ११॥

अन्वयः-हे राजन्! यथाऽहं गोतमात् पितुर्विद्यां प्राप्य दोषाञ्छत्रूंश्च रुजामि तन्महो वचोभिर्बन्धुता मान्वियाय तथेयं त्वामियात् हे होतर्यविष्ठ सुक्रतो दमूनास्त्वमस्य वचसः सकाशान्नोऽस्माञ्चिकिद्धि॥ ११॥

भावार्थः-हे कुमारा कुमार्यश्च! यथा वयं मातुः पित्राचार्याच्च सुशिक्षां विद्यां प्राप्याऽऽनन्दिता भवेम तथैव यूयमपि भवत॥ ११॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे मैं (**गोतमात्**) अत्यन्त सम्पूर्ण विद्याओं के स्तुति करने वाले (**पितुः**) पिता से विद्या को प्राप्त होकर अविद्यादि दोष और शत्रुओं को (**रुजामि**) प्रभग्न करता हूँ (**तत्**) (**महः**) बड़ा कार्य और (**वचोभिः**) वचनों से (**बन्धुता**) बन्धुपन (**मा**) मुझे (**अनु, इयाय**) प्राप्त हो, वैसे यह बन्धुपन आपको प्राप्त हो और हे (**होतः**) देनेवाले (**यविष्ठ**) अत्यन्त युवा (**सुक्रतो**) उत्तम बुद्धियुक्त पुरुष (**दमूनाः**) दमनशील जितेन्द्रिय! (**त्वम्**) आप (**अस्य**) इस (**वचसः**) वचन की उत्तेजना से (**नः**) हम लोगों को (**चिकिद्धि**) जनाइये॥ ११॥

भावार्थः-हे कुमार और कुमारियो! जैसे हम लोग माता-पिता और आचार्य्य से उत्तम शिक्षा और विद्या [को] प्राप्त होकर आनन्दित होवें, वैसे आप लोग भी हूजिये॥ ११॥

अथ प्रजाजनरक्षाविषयमाह॥

अब प्रजाजनों के रक्षा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्वप्नजस्तरणयः सुशेवा अतन्द्रासोऽवृका अश्रमिष्ठाः।

ते पायवः सध्र्यञ्चो निषद्याग्ने तव नः पान्त्वमूर॥ १२॥

अस्वप्नऽजः। तरणयः। सुऽशेवाः। अतन्द्रासः। अवृकाः। अश्रमिष्ठाः। ते। पायवः। सध्र्यञ्चः। निऽसद्य। अग्ने। तव। नः। पान्तु। अमूर॥ १२॥

पदार्थः-(**अस्वप्नजः**) जागरूकाः (**तरणयः**) तरुणावस्थां प्राप्ताः (**सुशेवाः**) सुसुखाः (**अतन्द्रासः**) अनलसाः (**अवृकाः**) अस्तेनाः (**अश्रमिष्ठाः**) अतिशयेनाऽश्रान्ताः श्रमरहिताः (**ते**) (**पायवः**) पालकाः (**सध्र्यञ्चः**) ये सहाञ्चन्ति ते (**निषद्य**) नितरां स्थित्वा (**अग्ने**) (**तव**) (**नः**) अस्मान् (**पान्तु**) रक्षन्तु (**अमूर**) मूढतादिदोषरहित॥१२॥

अन्वयः-हे अमूराऽग्ने राजन्! ये तवाऽस्वप्नजस्तरणयोऽतन्द्रासोऽवृका अश्रमिष्ठाः सुशेवाः सध्र्यञ्चः पायवो भृत्याः सन्ति ते निषद्य नः पान्तु॥१२॥

भावार्थः-प्रजाजनैः सदैव राजोपदेष्टव्यो हे राजन्! भवतः सकाशादस्माकं रक्षणे धार्मिका अनलसा पुरुषार्थिनो बलवन्तो जना नियताः सन्त्विति॥१२॥

पदार्थः-हे (**अमूर**) मूर्खतादि दोषों से रहित (**अग्ने**) अग्नि सदृश तेजस्विन् राजन्! जो जन (**तव**) आपके (**अस्वप्नजः**) जागने वाले (**तरणयः**) युवावस्था को प्राप्त (**अतन्द्रासः**) आलस्य (**अवृकाः**) चोरीपन (**अश्रमिष्ठाः**) और अत्यन्त थकावट से रहित (**सुशेवाः**) उत्तम सुखयुक्त (**सध्र्यञ्चः**) साथ जाने वा सत्कार करने और (**पायवः**) पालन करने वाले नौकर हैं (**ते**) वे (**निषद्य**) निरन्तर स्थित होकर (**नः**) हम लोगों की (**पान्तु**) रक्षा करें॥१२॥

भावार्थः-प्रजाजनों को चाहिये कि सदा ही राजा को उपदेश देवें कि हे राजन्! आपकी ओर से हम लोगों की रक्षा में धार्मिक आलस्यरहित पुरुषार्थी और बलवान् जन नियत हों॥१२॥

पुनः राजविषयमाह

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ये पायवो मामतेयं ते अग्ने पश्यन्तो अन्धं दुरितादरक्षन्॥

ररक्ष तान्त्सुकृतो विश्ववेदा दिप्सन्त इद्रिपवो नाह देभुः॥ १३॥

ये। पायवः। मामतेयम्। ते। अग्ने। पश्यन्तः। अन्धम्। दुःऽइतात्। अरक्षन्। ररक्ष। तान्। सुऽकृतः। विश्वऽवेदाः। दिप्सन्तः। इत्। रिपवः। न। अह। देभुः॥ १३॥

पदार्थः-(**ये**) (**पायवः**) रक्षकाः (**मामतेयम्**) मम भावो ममता तस्या इदम् (**ते**) तव (**अग्ने**) पावकवद्राजन् (**पश्यन्तः**) प्रेक्षमाणाः (**अन्धम्**) नेत्ररहितमिव (**दुरितात्**) दुष्टाचाराद् दुःखाद्वा (**अरक्षन्**) रक्षन्ति (**ररक्ष**) पालय (**तान्**) (**सुकृतः**) उत्तमकर्मकारिणः (**विश्ववेदाः**) समग्रवित् (**दिप्सन्तः**) दम्भमिच्छन्तः (**इत्**) एव (**रिपवः**) शत्रवः (**न**) (**अह**) विनिग्रहे (**देभुः**) दभ्नुयुः॥१३॥

अन्वयः-हे अग्ने! ये पायवस्ते मामतेयं पश्यन्तो दुरितादन्धमिवाऽस्मानरक्षंस्तान् सुकृतो विश्ववेदाः संस्त्वं ररक्ष येनेदेव दिप्सन्तो रिपवोऽस्मान्नाऽह देभुः॥१३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! ये स्वकीयमिवाऽन्येषाम्भवतश्च पदार्थं जानन्ति। आत्मानमिवान्यान् रक्षन्ति त एवाऽऽप्ता तव भृत्याः सन्तु येन शत्रूणां बलं विनश्येत्॥१३॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश राजन्! **(ये)** जो **(पायवः)** रक्षा करने वाले **(ते)** आपके **(मामतेयम्)** ममता सम्बन्धी कार्य को **(पश्यन्तः)** देखते हुए **(दुरितात्)** दुष्ट आचरण वा दुःख से **(अन्धम्)** नेत्ररहित को जैसे वैसे हम लोगों की **(अरक्षन्)** रक्षा करते हैं **(तान्)** उन **(सुकृतः)** उत्तम कर्म करने वालों का **(विश्ववेदाः)** सम्पूर्ण विषय जानने वाले [होते हुए] आप **(ररक्ष)** पालन करो, जिससे **(इत्)** ही **(दिप्सन्तः)** पाखण्ड की इच्छा करते हुए **(रिपवः)** शत्रु लोग हम लोगों के **(न, अह)** निग्रह करने में न **(देभुः)** दम्भ करें॥१३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जो लोग अपने के सदृश अन्य जनों और आपके पदार्थ को जानते हैं और अपने आत्मा के सदृश अन्यों की रक्षा करते हैं, वे ही यथार्थवक्ता आपके सेवक हों, जिससे कि शत्रुओं का बल नष्ट होवे॥१३॥

पुनः प्रकारान्तरेण राजविषयमाह॥

फिर प्रकारान्तर से राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वया॑ व॒यं स॑ध॒न्य॑स्त्वोता॒स्तव॒ प्रणी॑त्यश्याम॒ वाजा॑न्।

उ॒भा शंसा॑ सूदय सत्यताते॒ऽनुष्ठु॒या कृ॑णुह्यह्रयाण॥१४॥

त्वया॑। व॒यम्। स॒ऽध॒न्यः॑। त्वाऽऊ॑ताः। तव॑। प्रऽनी॑ती। अ॒श्या॒म॒। वाजा॑न्। उ॒भा। शंसा॑। सू॒द॒य॒। स॒त्य॒ऽता॒ते॒। अ॒नु॒ष्ठु॒या। कृ॒णु॒हि॒। अ॒ह्र॒या॒ण॒॥१४॥

पदार्थः-**(त्वया)** स्वामिना सह **(वयम्)** **(सधन्यः)** समानं धनं विद्यते येषान्ते। अत्र मत्वर्थीय ईप्। **(त्वोताः)** त्वया पालिताः **(तव)** **(प्रणीती)** प्रकृष्ट नीत्या **(अश्याम)** प्राप्नुयाम **(वाजान्)** विज्ञानधनादिपदार्थान् **(उभा)** उभौ **(शंसा)** प्रशंसे **(सूदय)** क्षरय **(सत्यताते)** सत्याचरक **(अनुष्ठुया)** आनुकूल्येन **(कृणुहि)** **(अह्रयाण)** लज्जारहित॥१४॥

अन्वयः-हे अह्रयाण सत्यताते राजंस्त्वमनुष्ठुया उभा शंसा कृणुहि दोषान्त्सूदय यतस्त्वया सह त्वोताः सधन्यः सन्तो वयं तव प्रणीती वाजानश्याम॥१४॥

भावार्थः-सर्वैर्भृत्यै राज्ञा सह मित्रता राज्ञा च सर्वैस्सह पितृवद्भावो रक्षणीयोऽन्येषां प्रशंसां कृत्वा दोषान् विनाश्य सत्यनीतिं प्रचार्य्य यत्र यत्र कर्मणि लज्जा स्यात्तत्तद्विहाय साम्राज्यं भोक्तव्यम्॥१४॥

पदार्थः-हे **(अह्रयाण)** लज्जारहित **(सत्यताते)** सत्य आचरण करने वाले राजन्! आप **(अनुष्ठुया)** अनुकूलता से **(उभा)** दोनों **(शंसा)** प्रशंसाओं को **(कृणुहि)** करिये और दोषों का **(सूदय)** नाश करिये जिससे **(त्वया)** आपके साथ **(त्वोताः)** आपने पालन किये और **(सधन्यः)** तुल्य धनवाले हुए **(वयम्)** हम लोग **(तव)** आपकी **(प्रणीती)** उत्तम नीति से **(वाजान्)** विज्ञान और धन आदि पदार्थों

को **(अश्याम)** प्राप्त होवें॥१४॥

भावार्थ:-सब नौकरों को चाहिये कि राजा के साथ मित्रता और राजा को चाहिये कि सब लोगों के साथ पिता के सदृश वर्त्ताव रखे और परस्पर एक-दूसरे की प्रशंसा कर दोषों का नाश और सत्यनीति का प्रचार करके जिस-जिस कर्म्म में लज्जा हो, उस उसका त्यागकर चक्रवर्त्ती राज्य का भोग करें॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अया ते अग्ने समिधा विधेम प्रति स्तोमं शस्यमानं गृभाय।
दहाशसो रक्षसः पाह्य१स्मान् द्रुहो निदो मित्रमहो अवद्यात्॥१५॥२५॥४॥

अया। ते। अग्ने। सम्ऽइधा। विधेम। प्रति। स्तोमम्। शस्यमानम्। गृभाय। दह। अशसः। रक्षसः। पाहि। अस्मान्। द्रुहः। निदः। मित्रऽमहः। अवद्यात्॥१५॥

पदार्थ:-**(अया)** अनया प्राप्तया **(ते)** तव **(अग्ने)** राजन् **(समिधा)** सम्यक् प्रदीप्तया नीत्या सह **(विधेम)** कुर्य्याम **(प्रति)** **(स्तोमम्)** प्रशंसनीयम् **(शस्यमानम्)** प्रशंसितव्यम् **(गृभाय)** गृहाण **(दह)** **(अशसः)** अस्तवकान् **(रक्षसः)** दुष्टाचारान् **(पाहि)** **(अस्मान्)** **(द्रुहः)** द्रोहयुक्ताः **(निदः)** निन्दकात् **(मित्रमहः)** ये मित्राणि महन्ति सत्कुर्वन्ति **(अवद्यात्)** अधर्माचरणात्॥१५॥

अन्वय:-हे अग्ने! वयं तेऽया समिधा यं शस्यमानं स्तोमं विधेम तं त्वं प्रति गृभाय। अशसो रक्षसो दह द्रुहो निदोऽवद्याच्च मित्रमहोऽस्मांश्च पाहि॥१५॥

भावार्थ:-यदि राजाऽमात्याः सम्मताः सन्तो विनयेन राज्यं शासति तर्हि द्रोहनिन्दाऽधर्माचरणात् पृथग्भूत्वा शिष्टाचाराः सन्तो दशसु दिक्षु कीर्तिं प्रसारयन्तीति॥१५॥

अत्र राजप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुर्थे मण्डले चतुर्थं सूक्तं तृतीयाष्टके पञ्चविंशो वर्गश्चतुर्थोऽध्यायश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे **(अग्ने)** राजन्! हम लोग **(ते)** आपकी **(अया)** इस प्राप्त हुई **(समिधा)** उत्तम प्रकार प्रदीप्त नीति के साथ जिस **(शस्यमानम्)** प्रशंसा करने योग्य प्रशंसित होते हुए को **(स्तोमम्)** प्रशंसनीय **(विधेम)** करें उसको आप **(प्रति, गृभाय)** ग्रहण कीजिये **(अशसः)** निन्दक **(रक्षसः)** दुष्टाचरणों को **(दह)** भस्म कीजिये और **(द्रुहः)** द्रोह से युक्त **(निदः)** निन्दा करने वाले का **(अवद्यात्)** अधर्माचरण से

(मित्रमहः) मित्रों का सत्कार करने वाले **(अस्मान्)** हम लोगों का **(पाहि)** पालन कीजिये॥१५॥

भावार्थः-जो राजा और मन्त्री जन परस्पर सम्मत हुए नम्रता से राज्य की शिक्षा करते हैं तो द्वेष निन्दा और अधर्माचरण से अलग होकर उत्तम शिष्टाचार करते हुए दशों दिशाओं में यश को फैलाते हैं॥१५॥

इस सूक्त में राजा और प्रजा के कृत्य वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चतुर्थ मण्डल में चतुर्थ सूक्त और तीसरे अष्टक में पच्चीसवां वर्ग और चौथा अध्याय समाप्त हुआ॥

ओ३म्॥

अथ तृतीयाष्टके पञ्चमोऽध्यायः॥

विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथ पञ्चदशर्चस्य पञ्चमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। वैश्वानरो देवता। १ विराट् त्रिष्टुप्। २,५-८, ११ निचृत् त्रिष्टुप्। ३, ४, ९, १२, १३, १५ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। १०, १४ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथाग्निदृष्टान्तेन राजविषयमाह॥

अब तृतीयाष्टक में पांचवें अध्याय और चतुर्थ मण्डल में [पन्द्रह ऋचा वाले] पञ्चम सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अग्नि के दृष्टान्त से राजविषय को कहते हैं॥

वै॒श्वा॒न॒राय॑ मी॒ळ्हुषे॑ स॒जोषा॑: क॒था दा॑शेमा॒ग्नये॑ बृ॒हद्भाः।

अनू॑नेन बृह॒ता व॒क्षथे॒नोप॑ स्तभायदुप॒मिन्न रोध॑:॥ १॥

वै॒श्वा॒न॒राय॑। मी॒ळ्हुषे॑। स॒ऽजोषा॑:। क॒था। दा॒शे॒म॒। अ॒ग्नये॑। बृ॒हत्। भाः। अनू॑नेन। बृ॒ह॒ता। व॒क्षथे॑न। उप॑। स्त॒भा॒य॒त्। उ॒प॒ऽमित्। न। रोध॑:॥ १॥

पदार्थः-(**वैश्वानराय**) विश्वेषु नायकाय (**मीळ्हुषे**) सेचकाय (**सजोषाः**) समानप्रीतिसेवनाः। अत्र वचनव्यत्ययेनैकवचनम्। (**कथा**) केन प्रकारेण (**दाशेम**) दद्याम (**अग्नये**) वह्निवद्वर्त्तमानाय विदुषे राज्ञे (**बृहत्**) महत् (**भाः**) यो भाति सः (**अनूनेन**) न्यूनतारहितेन (**बृहता**) महता (**वक्षथेन**) रोषेण (**उप**) (**स्तभायत्**) स्तभ्नीयात् (**उपमित्**) य उपमिनोति सः (**न**) इव (**रोधः**) रोधनम्॥१॥

अन्वयः-हे राजन्! यस्त्वं बृहद्भा उपमिद्रोधो नानूनेन बृहता वक्षथेन राज्यमुप स्तभायत्तस्मै वैश्वानराय मीळ्हुषेऽग्नये सजोषा वयं सुखं कथा दाशेम॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्यविद्युद्वत्सद्गुणप्रकाशका जलावरणमिव दुष्टानां निरोधकाः स्वात्मवत्सुखदुःखहानिलाभाञ्जानन्तो राज्यं कुर्वन्ति ते दण्डन्यायं प्रचालयितुं शक्नुवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे राजन्! जो आप (**बृहत्**) बड़े (**भाः**) शोभित नापने वाले और (**रोधः**) रोकने को (**उपमित्**) अलग करता है उसके (**न**) समान (**अनूनेन**) न्यूनता से रहित (**बृहता**) बड़े (**वक्षथेन**) क्रोध से राज्य को (**उप, स्तभायत्**) रोके उस (**वैश्वानराय**) सब में नायक (**मीळ्हुषे**) सेचन करने वाले (**अग्नये**) अग्नि के सदृश वर्त्तमान विद्वान् राजा के लिये (**सजोषाः**) तुल्य प्रीति के सेवन करने वाले हम लोग सुख को (**कथा**) किस प्रकार से (**दाशेम**) देवें॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग सूर्य और बिजुली के सदृश उत्तम

गुणों के प्रकाश करने और जल के रोकने वाले पदार्थ के सदृश दुष्टों के रोकने वाले और अपने सदृश सुख, दुःख, हानि और लाभ को जानते हुए राज्य करते हैं, वे दण्ड और न्याय को चला सकते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा निन्दत य इमां मह्यं रातिं देवो ददौ मर्त्याय स्वधावान्।

पाकाय गृत्सो अमृतो विचेता वैश्वानरो नृतमो यह्वो अग्निः॥२॥

मा। निन्दत। यः। इमाम्। मह्यम्। रातिम्। देवः। ददौ। मर्त्याय। स्वधाऽवान्। पाकाय। गृत्सः। अमृतः। विऽचेताः। वैश्वानरः। नृऽतमः। यह्वः। अग्निः॥२॥

पदार्थः-(**मा**) (**निन्दत**) (**यः**) (**इमाम्**) (**मह्यम्**) (**रातिम्**) दानम् (**देवः**) दाता (**ददौ**) ददाति (**मर्त्याय**) मनुष्याय (**स्वधावान्**) बह्वन्नाद्यैश्वर्य्यः (**पाकाय**) परिपक्वव्यवहाराय (**गृत्सः**) यो गृणाति स मेधावी (**अमृतः**) मृत्युरहितः (**विचेताः**) विविधानि चेतांसि संज्ञानानि ज्ञापनानि वा यस्य सः (**वैश्वानरः**) विश्वेषु नरेषु प्रकाशमानः (**नृतमः**) अतिशयेन नायको नरोत्तमः (**यह्वः**) महान् (**अग्निः**) सूर्य इव॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः स्वधावानमृतो विचेता वैश्वानरो नृतमो यह्वो गृत्सोऽग्निर्देवः पाकाय मर्त्याय मह्यमिमां रातिं ददौ तं मा निन्दत॥२॥

भावार्थः-हे राजप्रजाजना! योऽग्न्यादिगुणयुक्तः सर्वेभ्यः सुखदाता राजा शुभगुणः स्यात्तस्य निन्दां दुष्टस्य प्रशंसां कदाचिन्मा कुरुत॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**स्वधावान्**) बहुत अन्न आदि ऐश्वर्य्य से युक्त (**अमृतः**) मृत्यु से रहित (**विचेताः**) अनेक प्रकार के अच्छे प्रकार ज्ञान होना वा ज्ञान कराने के प्रकार जिसके ऐसे (**वैश्वानरः**) सम्पूर्ण मनुष्यों में प्रकाशमान (**नृतमः**) अत्यन्त नायक वा मनुष्यों में श्रेष्ठ (**यह्वः**) बड़ा (**गृत्सः**) उपदेशदाता बुद्धिमान् (**अग्निः**) सूर्य के समान (**देवः**) देनेवाला पुरुष (**पाकाय**) परिपक्व व्यवहार वाले (**मह्यम्**) मुझ (**मर्त्याय**) मनुष्य के लिये (**इमाम्**) इस (**रातिम्**) दान को (**ददौ**) देता है, उसकी (**मा**) मत (**निन्दत**) निन्दा करो॥२॥

भावार्थः-हे राजा और प्रजाजनो! जो अग्नि आदि के गुणों से युक्त और सब के लिये सुख देनेवाला राजा उत्तम गुणवाला होवे, उसकी निन्दा और दुष्ट की प्रशंसा कभी मत करो॥२॥

अथ मेधाविना किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब मेधावि पुरुष को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

साम द्विबर्हा महि तिग्मभृष्टिः सहस्ररेता वृषभस्तुविष्मान्।

पदं न गोरपगूळहं विविद्वानग्निर्मह्यं प्रेदु वोचन्मनीषाम्॥३॥

साम॑। द्विऽबर्हाः॑। महि॑। ति॒ग्मऽभृ॑ष्टिः। स॒हस्र॑ऽरेताः। वृ॒ष॒भः। तुवि॑ष्मान्। प॒दम्। न। गोः। अप॑गूळ्हम्। वि॒वि॒द्वान्। अ॒ग्निः। मह्य॑म्। प्र। इत्। ऊ॒म् इति॑। वो॒च॒त्। म॒नी॒षाम्॥ ३॥

पदार्थः-(**साम**) सिद्धान्तितं कर्म (**द्विबर्हाः**) द्वाभ्यां विद्याविनयाभ्यां वृद्धः (**महि**) महत् (**तिग्मभृष्टिः**) तिग्मा तीव्रा भृष्टिः परिपाको यस्य सः (**सहस्ररेताः**) अतुलवीर्यः (**वृषभः**) वृषभ इव श्रेष्ठः (**तुविष्मान्**) बहुबलः (**पदम्**) पादचिह्नम् (**न**) (**इव**) (**गोः**) धेनोः (**अपगूळहम्**) गुप्तम् (**विविद्वान्**) विशेषेण विपश्चित् (**अग्निः**) पावक इव तेजस्वी (**मह्यम्**) जिज्ञासवे (**प्र**) (**इत्**) एव (**उ**) (**वोचत्**) प्रोच्यात् (**मनीषाम्**) प्रज्ञाम्॥ ३॥

अन्वयः-यो द्विबर्हाः तिग्मभृष्टिः सहस्ररेता वृषभ इव तुविष्मानग्निरिव विविद्वान् गोरपगूळ्हं पदं न मह्यं मनीषां महि साम च प्र वोचत् स इदु अस्माभिः सत्कर्त्तव्यः॥ ३॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। स एव श्रेष्ठो विद्वान् यः सर्वान् प्रमां प्रापयेत्। यथा गोः पदमन्विष्य गां प्राप्नोति तथैव पदार्थविद्या प्राप्तव्या॥ ३॥

पदार्थः-जो (**द्विबर्हाः**) दो अर्थात् विद्या और विनय से वृद्ध (**तिग्मभृष्टिः**) तीव्र परिपाक जिसका ऐसा (**सहस्ररेताः**) परिमाण रहित पराक्रमयुक्त (**वृषभः**) बैल के सदृश श्रेष्ठ (**तुविष्मान्**) बहुत बलयुक्त (**अग्निः**) अग्नि के सदृश तेजस्वी और (**विविद्वान्**) विशेष करके पण्डित (**गोः**) गौ के (**अपगूळहम्**) गुप्त (**पदम्**) पैरों के चिह्न के (**न**) सदृश (**मह्यम्**) मुझ जानने की इच्छा करने वाले के लिये (**मनीषाम्**) बुद्धि और (**महि**) बड़े (**साम**) सिद्धान्तित कर्म को (**प्र, वोचत्**) कहे (**इत्, उ**) फिर वही हम लोगों से सत्कार करने योग्य है॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा [और] वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। वही श्रेष्ठ विद्वान् है कि जो सब के लिये यथार्थज्ञान करावे। जैसे गौ के पैरों के चिह्न को खोज के गौ को प्राप्त होता है, वैसे ही पदार्थविद्या प्राप्त करने योग्य है॥ ३॥

अथ सर्वसुखकरराजविषयमाह॥

अब सुख को सुख करनेवाले राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र ताँ अ॒ग्निर्ब॑भसत् ति॒ग्मज॑म्भ॒स्तपि॑ष्ठेन शो॒चिषा॒ यः सु॒राधाः॑।

प्र ये मि॒नन्ति॒ वरु॑णस्य॒ धाम॑ प्रि॒या मि॒त्रस्य॒ चेत॑तो ध्रु॒वाणि॑॥ ४॥

प्र। तान्। अ॒ग्निः। ब॒भ॒स॒त्। ति॒ग्मऽज॑म्भः। तपि॑ष्ठेन। शो॒चिषा॑। यः। सु॒ऽराधाः॑। प्र। ये। मि॒नन्ति॑। वरु॑णस्य। धाम॑। प्रि॒या। मि॒त्रस्य॑। चेत॑तः। ध्रु॒वाणि॑॥ ४॥

पदार्थः-(**प्र**) (**तान्**) (**अग्निः**) पावक इव (**बभसत्**) दीप्येद्भर्त्सेत् (**तिग्मजम्भः**) तिग्मानि गात्रविनमनानि यस्य सः (**तपिष्ठेन**) अतिशयेन तापयुक्तेन (**शोचिषा**) तेजसा (**यः**) (**सुराधाः**)

शोभनधनः **(प्र)** **(ये)** **(मिनन्ति)** हिंसन्ति **(वरुणस्य)** श्रेष्ठस्य **(धाम)** जन्मस्थाननामानि **(प्रिया)** कमनीयानि **(मित्रस्य)** सख्युः **(चेततः)** संज्ञापकस्य **(ध्रुवाणि)** निश्चलानि दृढानि॥४॥

अन्वयः-योऽग्निरिव तिग्मजम्भस्तपिष्ठेन शोचिषा सुराधाः सन् ये चेततो वरुणस्य मित्रस्य प्रिया ध्रुवाणि धाम प्रमिणन्ति तान् प्र बभसत् स एव सर्वस्य सुखकरो जायते॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा प्रदीप्तोऽग्निः प्राप्तशुष्कमार्द्रं च दहति तथैव यः स्वार्थिनः परस्य सुखविनाशकान् हन्ति स प्रशंसितो भवति॥४॥

पदार्थः-**(यः)** जो **(अग्निः)** अग्नि के सदृश **(तिग्मजम्भः)** तीक्ष्ण शरीर शिथिल करने वाली जम्भवाई वाला **(तपिष्ठेन)** अत्यन्त ताप अर्थात् दीप्तियुक्त **(शोचिषा)** तेज से **(सुराधाः)** उत्तम धन वाले होते हुए **(ये)** जो लोग **(चेततः)** चैतन्य कराने वाले **(वरुणस्य)** श्रेष्ठ **(मित्रस्य)** मित्र के **(प्रिया)** सुन्दर और **(ध्रुवाणि)** निश्चल अर्थात् दृढ़ **(धाम)** जन्म, स्थान नामों का **(प्र, मिनन्ति)** नाश करते हैं, **(तान्)** उनको **(प्र, बभसत्)** तिरस्कार करे, वही सब को सुख करने वाला होता है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे प्रदीप्त अग्नि प्राप्त हुए शुष्क और गीले पदार्थ को जलाता है, वैसे ही जो पुरुष अपने प्रयोजनसाधक स्वार्थी और अन्य पुरुष के सुखनाश करने वालों को नाश करता है, वह प्रशंसित होता है॥४॥

अथ राजविषये दण्डविचारमाह॥

अब राजविषय में दण्ड विचार को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒भ्रा॒तरो॒ न योष॑णो॒ व्यन्तः॑ पति॒रिपो॒ न जन॑यो दु॒रेवाः॑।

पा॒पास॒: सन्तो॑ अनृ॒ता अ॑स॒त्या इ॒दं प॒दम॑जनता गभी॒रम्॥५॥१॥

अ॒भ्रा॒तरः॑। न। योष॑णः। व्यन्तः॑। प॒ति॒ऽरिपः॑। न। जन॑यः। दुः॒ऽएवाः॑। पा॒पासः॑। सन्तः॑। अ॒नृ॒ताः। अ॒स॒त्याः। इ॒दम्। प॒दम्। अ॒ज॒न॒त॒। ग॒भी॒रम्॥५॥

पदार्थः-**(अभ्रातरः)** अबन्धुरिव वर्त्तमानाः **(न)** इव **(योषणः)** भार्य्याः **(व्यन्तः)** प्राप्नुवन्त्यः **(पतिरिपः)** पत्युर्भूमीः। **रिप इति पृथ्वीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१) **(न)** इव **(जनयः)** जायाः **(दुरेवाः)** दुर्व्यसनाः **(पापासः)** अधर्माचाराः **(सन्तः)** **(अनृताः)** असत्यवादिनः **(असत्याः)** असत्याचरणाः **(इदम्)** **(पदम्)** **(अजनत)** जनयन्ति। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(गभीरम्)** गहनम्॥५॥

अन्वयः-येऽनृता असत्या दुरेवाः पापासस्सन्तो दुष्टा अभ्रातरो न योषणः पतिरिपो न व्यन्तो जनय इदं गभीरं पदं दुःखमजनत ते सदैव ताडनीयाः॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। [हे] मनुष्या! या स्त्री भ्रातृवदनुकूला नानुकूला शत्रुवद्विरोधिनी ये घोरपापिनः सर्वेषां पीडकाः स्युस्तान् दूरतस्त्यजत॥५॥

पदार्थ:-जो **(अनृता:)** मिथ्या बोलने और **(असत्या:)** मिथ्या आचरण करने वाले **(दुरेवा:)** दुष्ट व्यसनों से युक्त **(पापास:)** अधर्माचरण करते **(सन्त:)** हुए दुष्ट **(अभ्रातर:)** जैसे बन्धुभिन्न जन **(न:)** वैसे और जैसे **(योषण:)** स्त्रियाँ **(पतिरिप:)** पति की भूमि को **(न)** वैसे **(व्यन्त:)** प्राप्त हुईं **(जनय:)** स्त्रियाँ **(इदम्)** इस **(गभीरम्)** गम्भीर **(पदम्)** स्थान [दु:ख] को **(अजनत)** उत्पन्न करती हैं, वे सदा ही ताड़न करने योग्य हैं॥५॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो स्त्री भाई के सदृश अनुकूल नहीं और जो अनुकूल हो तो शत्रु के सदृश विरोध करने वाली हो और जो घोर पापीजन सब के पीड़ा देने वाले हों, उनका दूर से त्याग करो॥५॥

अथाध्यापकविषयमाह॥

अब अध्यापक विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इदं मे अग्ने कियते पावकामिनते गुरुं भारं न मन्म।

बृहद्दधाथ धृषता गभीरं यह्वं पृष्ठं प्रयसा सप्तधातु॥६॥

इदम्। मे। अग्ने। कियते। पावक। अमिनते। गुरुम्। भारम्। न। मन्म। बृहत्। दधाथ। धृषता। गभीरम्। यह्वम्। पृष्ठम्। प्रयसा। सप्तऽधातु॥६॥

पदार्थ:-**(इदम्)** **(मे)** मह्यम् **(अग्ने)** पावकवद्वर्तमान **(कियते)** अल्पसामर्थ्याय **(पावक)** पवित्रकर **(अमिनते)** अहिंसकाय **(गुरुम्)** महान्तम् **(भारम्)** **(न)** इव **(मन्म)** विज्ञानम् **(बृहत्)** वर्धकम् **(दधाथ)** धेहि। अत्र वचनव्यत्ययेन बहुवचनम् **(धृषता)** प्रगल्भेन सह **(गभीरम्)** **(यह्वम्)** महत् **(पृष्ठम्)** प्रच्छनीयम् **(प्रयसा)** प्रीतेन **(सप्तधातु)** सुवर्णादयस्सप्तधातवो यस्मिन्॥६॥

अन्वय:-हे पावकाग्ने! त्वं कियतेऽमिनते मे गुरुं भारं न मन्म धृषता प्रयसेदं बृहद्गभीरं पृष्ठं यह्वं सप्तधातु धनं दधाथ॥६॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। येऽल्पज्ञा विद्यार्थिनश्च ज्ञानिनो विदुष: सकाशाद्विज्ञानं धनसाधनं च याचन्ते ते विद्वांसो जायन्ते॥६॥

पदार्थ:-हे **(पावक)** पवित्र करने वाले **(अग्ने)** अग्ने के सदृश वर्त्तमान! आप **(कियते)** थोड़े सामर्थ्य से युक्त **(अमिनते)** नहीं हिंसा करने वाले **(मे)** मेरे लिये **(गुरुम्)** बड़े **(भारम्)** भार के **(न)** सदृश **(मन्म)** विज्ञान को तथा **(धृषता)** ढीठ और **(प्रयसा)** प्रसन्न[ता] के साथ **(इदम्)** इस **(बृहत्)** बढ़ाने वाले **(गम्भीरम्)** गम्भीर **(पृष्ठम्)** पूछने योग्य **(यह्वम्)** बड़े **(सप्तधातु)** सुवर्ण आदि सातों धातु जिसमें ऐसे धन को **(दधाथ)** धारण कीजिये॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो अल्पज्ञ और विद्यार्थीजन ज्ञानी विद्वान् के समीप से विज्ञान और धन के साधन की याचना करते हैं, वे विद्वान् होते हैं॥६॥

अथ विवाहपरत्वेनोपदेशविषयमाह॥

अब विवाहपरता से उपदेशविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तमिन्न्वे३व समना समानमभि क्रत्वा पुनती धीतिरश्याः।

ससस्य चर्मन्नधि चारु पृश्नेरग्रे रुप आरुपितं जबारु॥७॥

तम्। इत्। नु। एव। समना। समानम्। अभि। क्रत्वा। पुनती। धीतिः। अश्याः। ससस्य। चर्मन्। अधि। चारु। पृश्नेः। अग्रे। रुपः। आरुपितम्। जबारु॥७॥

पदार्थः-(**तम्**) (**इत्**) अपि (**नु**) (**एव**) (**समना**) सदृशी (**समानम्**) तुल्यं पतिम् (**अभि**) (**क्रत्वा**) प्रज्ञया (**पुनती**) पित्रा पवित्रयन्ती (**धीतिः**) शुभगुणधारिका (**अश्याः**) प्राप्नुयाः (**ससस्य**) स्वपतः (**चर्मन्**) चर्मणि (**अधि**) उपरि (**चारु**) सुन्दरम् (**पृश्नेः**) अन्तरिक्षस्य (**अग्रे**) पुरस्तात् (**रुपः**) आरोपणकर्तुः। अत्र कर्त्तरि क्विप्। (**आरुपितम्**) (**जबारु**) जवमानमारूढम्॥७॥

अन्वयः-हे कन्ये! यस्य ससस्य चर्मन् चारु जबार्वारुपितं पृश्नेरभ्यस्ति तदग्रेऽधिरुपः क्रत्वा पुनती धीतिः समना सती तमिदेव समानं पतिं न्वेवाश्याः॥७॥

भावार्थः-यदि कन्या स्वसदृशं वरं ब्रह्मचारी स्वतुल्यां कन्याञ्चोपयच्छेत् तर्ह्यन्तरिक्षस्य मध्य ईश्वरेण स्थापितः सविता चन्द्रो नक्षत्राणीव सुशोभेते॥७॥

पदार्थः-हे कन्ये! जिस (**ससस्य**) शयन करते हुए के (**चर्मन्**) चमड़े में (**चारु**) सुन्दर (**जबारु**) वेग करता हुआ वा आरूढ़ (**आरुपितम्**) आरोपण किया गया वा जो (**पृश्नेः**) अन्तरिक्ष के (**अभि**) सब ओर है उसके (**अग्रे**) आगे (**अधि, रुपः**) अधिरोपण करनेवाले की (**क्रत्वा**) उत्तम बुद्धि से (**पुनती**) पिता के सम्बन्ध से पवित्र करती हुई (**धीतिः**) उत्तम गुणों के धारण करने वाली (**समना**) तुल्य हुई (**तम्**) (**इत्**) उसी (**समानम्**) समान पति को (**नु, एव**) शीघ्र ही (**अश्याः**) प्राप्त हो॥७॥

भावार्थः-जो कन्या अपने समान वर और ब्रह्मचारी अपने तुल्य कन्या के साथ विवाह करे तो अन्तरिक्ष के मध्य में ईश्वर से स्थापित सूर्य्य चन्द्रमा और नक्षत्रों के तुल्य शोभित होते हैं॥७॥

अथ प्रच्छकविषयमाह॥

अब प्रच्छक विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रवाच्यं वचसः किं मे अस्य गुहा हितमुप निणिग्वदन्ति।

यदुस्रियाणामप वारिव व्रन् पाति प्रियं रुपो अग्रं पदं वेः॥८॥

प्रऽवाच्यम्। वचसः। किम्। मे। अस्य। गुहा। हितम्। उप। निणिक्। वदन्ति। यत्। उस्रियाणाम्। अप। वाःऽइव। व्रन्। पाति। प्रियम्। रुपः। अग्रम्। पदम्। वेरिति वेः॥८॥

पदार्थः-**(प्रवाच्यम्)** प्रकर्षेण वक्तुं योग्यम् **(वचसः)** वचनस्य **(किम्)** **(मे)** मम **(अस्य)** जनस्य **(गुहा)** बुद्धौ **(हितम्)** स्थितम् **(उप)** **(निणिक्)** नितरां शुन्धति **(वदन्ति)** **(यत्)** **(उस्रियाणाम्)** गवाम् **(अप)** **(वारिव)** जलमिव **(व्रन्)** अपवृणोति **(पाति)** **(प्रियम्)** कमनीयम् **(रुपः)** पृथिव्याः। **रुप इति पृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१) **(अग्रम्)** **(पदम्)** **(वेः)** पक्षिणः॥८॥

अन्वयः-ये मेऽस्य च वचसो गुहा हितं प्रवाच्यं निणिक् किमुपवदन्ति यदुस्रियाणां वारिव वेरग्रं पदमिव रुपः प्रियमप व्रन् कश्चैतत् पाति॥८॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! ममास्य च जनस्य बुद्धौ स्थितं चेतनं किमस्ति कीदृगस्ति यत्पशूनां पालकं जलमिव रक्षति सर्वेभ्यः प्रियं दृश्यते। यदाऽऽकाशे पक्षिणः पदमिव गुप्तमस्ति तद्विज्ञानायाऽस्मान् प्रति भवन्तः किं ब्रुवन्तु॥८॥

पदार्थः-जो **(मे)** मेरे और **(अस्य)** इस जन के **(वचसः)** वचन के सम्बन्ध में **(गुहा)** बुद्धि में **(हितम्)** स्थित **(प्रवाच्यम्)** प्रकर्षता से कहने योग्य **(निणिक्)** अत्यन्त शुद्ध करने वाले को **(किम्)** क्या **(उप, वदन्ति)** समीप में कहते हैं **(यत्)** जो **(उस्रियाणाम्)** गौओं के **(वारिव)** जल के सदृश वा **(वेः)** पक्षी के **(अग्रम्)** ऊँचे **(पदम्)** स्थान के सदृश **(रुपः)** पृथिवी के **(प्रियम्)** सुन्दर भाग को **(अप, व्रन्)** घेरता है, कौन इन दोनों का **(पाति)** पालन करता है॥८॥

भावार्थः-हे विद्वानो! मेरी और इस जन की बुद्धि में वर्त्तमान चेतन क्या और कैसा है? जो पशुओं के पालन करने वाला जल के सदृश रक्षा करता और सब से प्रिय देख पड़ता है। और जो आकाश में पक्षी के पैर के सदृश गुप्त है, उसके विज्ञान के लिये हम लोगों के प्रति आप लोग क्या कहते हो॥८॥

अथ समाधातृविषयमाह॥

अब समाधाता के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इ॒दमु॒ त्यन्महि॑ म॒हामनी॑कं॒ यदु॒स्रिया॒ सच॑त पू॒र्व्यं गौः।

ऋ॒तस्य॑ प॒दे अधि॒ दीद्या॑नं॒ गुहा॑ रघुष्यद् र॑घु॒यद् वि॑वेद॥९॥

इ॒दम्। ऊ॒म् इति॑। त्यत्। महि॑। म॒हाम्। अनी॑कम्। यत्। उ॒स्रिया॑। सच॑त। पू॒र्व्यम्। गौः। ऋ॒तस्य॑। प॒दे। अधि॑। दीद्या॑नम्। गुहा॑। र॒घु॒ऽस्यत्। र॒घु॒ऽयत्। वि॒वे॒द॒॥९॥

पदार्थः-**(इदम्)** **(उ)** **(त्यत्)** तत् **(महि)** महत् **(महाम्)** महताम्। अत्र **छान्दसो वर्णलोपो वेति** तलोपः। **(अनीकम्)** सैन्यमिव **(यत्)** **(उस्रिया)** क्षीरादिप्रदा **(सचत)** प्राप्नुत **(पूर्व्यम्)** पूर्वैर्निष्पादितम् **(गौः)** **(ऋतस्य)** सत्यस्य **(पदे)** स्थाने **(अधि)** **(दीद्यानम्)** **(गुहा)** बुद्धौ **(रघुष्यत्)** सद्यः स्यन्दमानम् **(रघुयत्)** सद्यो गन्त्री **(विवेद)** वेत्ति॥९॥

अन्वयः-हे जिज्ञासवो! यन्महामनीकं महि ऋतस्य पदे यद्दीद्यानं गुहा रघुष्यत् पूर्व्यं रघुयद् विवेद त्यदिदमु उस्रिया गौरिवाधि यूयं सचत॥९॥

भावार्थः-हे श्रोतारो जना! यद्बुद्धिप्रेरकं मन्दशीघ्रगामि सत्यस्य परमेश्वरस्य मध्ये प्रकाशमानं बलिष्ठं सैन्यमिव वीर्यवद्वत्सं सुखयन्ती गौरिव सुखप्रदं वस्त्वस्ति तदेव युष्माकं स्वरूपमस्ति॥९॥

पदार्थः-हे जिज्ञासुजनो! **(यत्)** जो **(महाम्)** बड़ों की **(अनीकम्)** सेना के सदृश **(महि)** बड़ा वा **(ऋतस्य)** सत्य के **(पदे)** स्थान में जो **(दीद्यानम्)** प्रकाशित होता हुआ विद्यमान है, उसको **(गुहा)** बुद्धि में **(रघुष्यत्)** शीघ्र हिलते हुए के समान **(पूर्व्यम्)** पूर्वजनों से उत्पन्न किये गए के समान **(रघुयत्)** शीघ्र जाने वाली **(विवेद)** जानती है **(त्यत्, इदम्, उ)** उस ही **(उस्रिया)** दुग्ध आदि की देने वाली **(गौः)** गौ के सदृश **(अधि)** अधिक आप लोग **(सचत)** प्राप्त हूजिये॥९॥

भावार्थः-हे श्रोताजनो! जो बुद्धि की प्रेरणा करने, मन्द और शीघ्र चलने वाला सत्य परमेश्वर के मध्य में प्रकाशमान बलिष्ठ वाज पक्षी [सेना] के सदृश पराक्रम वाले बछड़े को सुख देती हुई, गौ के सदृश सुख देने वाला वस्तु है, वही आप लोगों का स्वरूप है॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अध द्युतानः पित्रोः सचासामनुत गुह्यं चारु पृश्नेः।

मातुष्पदे परमे अन्ति षद्गोर्वृष्णः शोचिषः प्रयतस्य जिह्वा॥१०॥२॥

अध। द्युतानः। पित्रोः। सचा। आसा। अमनुत। गुह्यम्। चारु। पृश्नेः। मातुः। पदे। परमे। अन्ति। सत्। गोः। वृष्णः। शोचिषः। प्रऽयतस्य। जिह्वा॥१०॥

पदार्थः-**(अध)** अथ **(द्युतानः)** प्रकाशमानः **(पित्रोः)** जनकयोः **(सचा)** सत्येन **(आसा)** आस्येन **(अमनुत)** विजानीत **(गुह्यम्)** गुप्तम् **(चारु)** सुन्दरम् **(पृश्नेः)** अन्तरिक्षस्य मध्ये **(मातुः)** मातृवद्वर्त्तमानस्य **(पदे)** प्रापणीये **(परमे)** उत्कृष्टे **(अन्ति)** समीपे **(सत्)** वर्त्तमानम् **(गोः)** **(वृष्णः)** वर्षकस्य **(शोचिषः)** प्रकाशमानस्य **(प्रयतस्य)** प्रयत्नं कुर्वतः **(जिह्वा)** वाणी॥१०॥

अन्वयः-हे जिज्ञासवोऽध यः पित्रोर्द्युतानः सचासा परमे मातुष्पदेऽन्ति सद्गोर्वृष्ण इव शोचिषः प्रयतस्य जिह्वेव यत्पृश्नेश्चारु गुह्यमस्ति तज्जीवस्वरूपममनुत॥१०॥

भावार्थः-यथा द्यावापृथिव्योर्मध्ये वर्त्तमानस्सूर्य्यः सुशोभितोऽस्ति यथा विदुषो वाणी विद्याप्रकाशिका वर्त्तते यथाऽन्तरिक्षं कस्मादपि दूरे न भवति तथैव स्वात्मवस्तु परमात्मा च सन्निकटे वर्त्तत इति वेदनीयम्॥१०॥

पदार्थः-हे जिज्ञासुजनो! **(अध)** इसके अनन्तर जो **(पित्रोः)** माता और पिता की उत्तेजना से

(द्युतानः) प्रकाशमान **(सचा)** सत्य **(आसा)** मुख से **(परमे)** उत्तम **(मातुः)** माता के सदृश वर्त्तमान के **(पदे)** प्राप्त होने योग्य स्थान में **(अन्ति)** समीप **(सत्)** वर्त्तमान **(गोः)** गौ और **(वृष्णः)** वृष्टि करने वाले के सदृश **(शोचिषः)** प्रकाशमान **(प्रयतस्य)** प्रयत्न करते हुए की **(जिह्वा)** वाणी के सदृश जो **(पृश्नेः)** अन्तरिक्ष के मध्य में **(चारु)** सुन्दर **(गुह्यम्)** गुप्त है, उस जीवस्वरूप को **(अमृत)** जानिये॥१०॥

भावार्थः-जैसे अन्तरिक्ष और पृथिवी के मध्य में वर्त्तमान सूर्य्य उत्तम प्रकार शोभित है और जैसे विद्वान् की वाणी विद्या का प्रकाश करने वाली है और जैसे अन्तरिक्ष किसी से भी दूर नहीं है, वैसे ही उत्तम अपना आत्मारूप वस्तु और परमात्मा समीप में वर्त्तमान है, ऐसा जानना चाहिये॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋतं वोचे नमसा पृच्छ्यमानस्तवाशसा जातवेदो यदीदम्।
त्वमस्य क्षयसि यद्ध विश्वं दिवि यदु द्रविणं यत्पृथिव्याम्॥११॥

ऋतम्। वोचे। नमसा। पृच्छ्यमानः। तव। आऽशसा। जातऽवेदः। यदि। इदम्। त्वम्। अस्य। क्षयसि। यत्। ह। विश्वम्। दिवि। यत्। ऊम् इति। द्रविणम्। यत्। पृथिव्याम्॥११॥

पदार्थः-**(ऋतम्)** सत्यम् **(वोचे)** वदेयमुपदिशेयं वा **(नमसा)** सत्कारेण **(पृच्छ्यमानः)** **(तव)** **(आशसा)** समन्तात् प्रशंसितेन **(जातवेदः)** जातप्रज्ञान **(यदि)** चेत् **(इदम्)** **(त्वम्)** **(अस्य)** **(क्षयसि)** निवससि **(यत्)** **(ह)** किल **(विश्वम्)** सर्वम् **(दिवि)** प्रकाशमाने परमात्मनि सूर्य्ये वा **(यत्)** **(उ)** **(द्रविणम्)** द्रव्यम् **(यत्)** **(पृथिव्याम्)**॥११॥

अन्वयः-हे जातवेदो! यदि त्वं यद्ध दिवि विश्वं द्रविणं यत्पृथिव्यां यदु वाय्वादिषु वर्त्तते यत्र त्वं क्षयसि तस्यास्य तवाऽऽशसा नमसा पृच्छ्यमानोऽहं तर्हीदमृतं त्वां प्रतिवोचे॥११॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यद् ब्रह्म सर्वत्र व्याप्तमस्ति यत्र सर्वं वसति तत्सत्यस्वरूपं युष्मान् प्रत्यहमुपदिशामि तदेवोपाध्वम्॥११॥

पदार्थः-हे **(जातवेदः)** ज्ञान से विशिष्ट **(यदि)** यदि आप **(यत्)** जो **(ह)** निश्चयकर **(दिवि)** प्रकाशमान परमात्मा वा सूर्य्य में **(विश्वम्)** सम्पूर्ण **(द्रविणम्)** द्रव्य और **(यत्)** जो **(पृथिव्याम्)** पृथिवी में **(यत्)** जो **(उ)** और वायु आदि में वर्त्तमान है और जिसमें **(त्वम्)** आप **(क्षयसि)** रहते हो उस **(अस्य)** इन **(तव)** आपके **(आशसा)** सब प्रकार प्रशंसित **(नमसा)** सत्कार से **(पृच्छ्यमानः)** पूंछा गया मैं तो **(इदम्)** इस **(ऋतम्)** सत्य को आपके प्रति **(वोचे)** कहूं वा उपदेश करूं॥११॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो ब्रह्म सब स्थान में व्याप्त है और जिसमें सम्पूर्ण पदार्थ वसते हैं, उस सत्यस्वरूप का आप लोगों के प्रति मैं उपदेश करता हूँ, उसी की उपासना करो॥११॥

पुनः प्रच्छकविषयमाह॥

फिर प्रच्छक विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

किं नो॑ अ॒स्य द्रवि॑णं॒ कद्ध रत्नं॒ वि नो॑ वोचो जातवेदश्चिकि॒त्वान्।
गुहाध्व॑नः प॒र॒मं यन्नो॑ अ॒स्य रेकु॑ प॒दं न नि॑दा॒ना अग॑न्म॥ १२॥

किम्। नः॒। अ॒स्य। द्रवि॑णम्। कत्। ह॒। रत्न॑म्। वि। नः॒। वो॒चः॒। जा॒त॒ऽवे॒दः॒। चि॒कि॒त्वान्। गुहा॑। अध्व॑नः। प॒र॒मम्। यत्। नः॒। अ॒स्य। रेकु॑। प॒दम्। न। नि॒दा॒नाः। अग॑न्म॥ १२॥

पदार्थः-(**किम्**) प्रश्ने (**नः**) अस्माकम् (**अस्य**) संसारस्य मध्ये (**द्रविणम्**) यशः (**कत्**) कदा (**ह**) किल (**रत्नम्**) धनम् (**वि**) (**नः**) अस्मान् (**वोचः**) उपदिशेः (**जातवेदः**) जातविद्य (**चिकित्वान्**) विवेकी (**गुहा**) बुद्धेः (**अध्वनः**) मार्गस्य (**परमम्**) प्रकृष्टं प्रापणीयम् (**यत्**) (**नः**) अस्माकम् (**अस्य**) (**रेकु**) शङ्कितम् (**पदम्**) प्रापणीयम् (**न**) इव (**निदानाः**) निन्दां कुर्वाणाः (**अगन्म**)॥ १२॥

अन्वयः-हे जातवेदश्चिकित्वाँस्त्वमस्य नः किं द्रविणं किं रत्नमस्तीति न कद्ध विवोचः यद् गुहाऽध्वनः परमं प्राप्तान्नोऽस्मान् रेकु पदं न नोऽस्मान्निदाना अस्य संसारस्य मध्ये स्युस्तान् विहायाऽगन्म तत्किमिति॥ १२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे विद्वांसोऽस्मासु किं यशः किं रमणीयं वस्तु के चाऽस्माकं निन्दकाः किं च शङ्कनीयं वस्तु किं च प्रापणीयं पदमस्तीत्युत्तराणि ब्रूत॥ १२॥

पदार्थः-हे (**जातवेदः**) विद्यायुक्त (**चिकित्वान्**) विचारशील! आप (**अस्य**) इस संसार में (**नः**) हम लोगों का (**किम्**) क्या (**द्रविणम्**) यश और (**किम्**) क्या (**रत्नम्**) धन है ऐसा (**नः**) हम लोगों को (**कत्, ह**) कभी (**वि, वोचः**) उपदेश कीजिये (**यत्**) जो (**गुहा**) बुद्धि के (**अध्वनः**) मार्ग के (**परमम्**) उत्तम प्राप्त होने योग्य को प्राप्त हुए (**नः**) हम लोगों को (**रेकु**) शङ्कायुक्त (**पदम्**) प्राप्त होने योग्य स्थान के (**न**) तुल्य (**नः**) हम लोगों के (**निदानाः**) निन्दा करते हुए (**अस्य**) इस संसार के मध्य में हों, उनको त्याग के (**अगन्म**) प्राप्त हुए वह क्या है॥ १२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे विद्वानो! हम लोगों में क्या यश? क्या सुन्दर वस्तु? और कौन लोग हम लोगों की निन्दा करने वाले? और क्या शङ्का करने योग्य वस्तु? और क्या प्राप्त होने योग्य स्थान है? इनके उत्तर कहो॥ १२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

का म॒र्यादा॑ व॒युना॒ कद्ध॑ वा॒मम॒च्छा॑ गमेम र॒घवो॒ न वाज॑म्।
क॒दा नो॑ दे॒वीर॒मृत॑स्य॒ पत्नीः॒ सूरो॒ वर्णे॑न ततनन्नु॒षासः॑॥ १३॥

का। मुर्यादा। वयुना। कत्। ह। वामम्। अच्छ। गुमेम। रघवः। न। वाजम्। कुदा। नः। देवीः। अमृतस्य। पत्नीः। सूरः। वर्णेन। ततनन्। उषसः॥ १३॥

पदार्थः-(**का**) (**मर्य्यादा**) (**वयुना**) कर्माणि (**कत्**) कदा (**ह**) खलु (**वामम्**) प्रशस्तवस्तु (**अच्छ**) सम्यक्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**गमेम**) प्राप्नुयाम (**रघवः**) सद्यः कारिणः (**न**) इव (**वाजम्**) विज्ञानम् (**कदा**) (**नः**) अस्मान् (**देवीः**) देदीप्यमानाः (**अमृतस्य**) नाशरहितस्य (**पत्नीः**) स्त्रीवद्वर्त्तमानाः (**सूरः**) सूर्य्यः (**वर्णेन**) (**ततनन्**) तनिष्यन्ति (**उषासः**) प्रभातान्॥ १३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! नोऽस्माकं का मर्य्यादा कानि वयुना रघवो वाजं वामं कद्धाच्छ गमेम कदा सूरोऽमृतस्य देवीः पत्नीरुषासो न इव वर्णेन ततनन्॥ १३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्या आप्तविद्वांसं मनुष्येण कर्त्तव्यानि कर्माणि प्रापणीयं पदं पृच्छेयुर्भवान् सूर्य्ये प्रातर्वेलामिवाऽस्मान् कदा विदुषः सम्पादयिष्यतीति पृच्छेयुः॥ १३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**नः**) हम लोगों की (**का**) कौन (**मर्य्यादा**) प्रतिष्ठा और कौन (**वयुना**) कर्म्म हम लोग (**रघवः**) शीघ्र करने वालों के (**वाजम्**) विज्ञान और (**वामम्**) उत्तम वस्तु को (**कत् ह**) कभी (**अच्छ**) उत्तम प्रकार (**गमेम**) प्राप्त होवें और (**कदा**) कब (**सूरः**) सूर्य्य (**अमृतस्य**) नाशरहित काल की (**देवीः**) प्रकाशमान (**पत्नीः**) स्त्रियों के सदृश वर्त्तमान (**उषासः**) प्रातर्वेलाओं के (**न**) सदृश आप (**वर्णेन**) तेज से (**ततनन्**) विस्तृत करेंगे॥ १३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्य लोग यथार्थवादी विद्वान् से मनुष्य के करने योग्य कर्म्मों और प्राप्त होने योग्य स्थान को पूछें कि आप सूर्य्य में प्रात:काल के सदृश हम लोगों को कब विद्वान् करोगे? ऐसा पूछें॥ १३॥

अथ समाधातृविषयमाह॥

अब समाधाता के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अनिरेण वचसा फल्ग्वेन प्रतीत्येन कृधुनातृपासः।

अधा ते अग्ने किमिहा वदन्त्यनायुधास आसता सचन्ताम्॥ १४॥

अनिरेण। वचसा। फल्ग्वेन। प्रतीत्येन। कृधुना। अतृपासः। अध। ते। अग्ने। किम्। इह। वदन्ति। अनायुधासः। असता। सचन्ताम्॥ १४॥

पदार्थः-(**अनिरेण**) अरमणीयेन (**वचसा**) वचनेन (**फल्वेन**) महता (**प्रतीत्येन**) प्रतीतौ भवेन (**कृधुना**) ह्रस्वेनाऽल्पेन। (**अतृपासः**) अतृप्ताः सन्तः (**अध**) अथ। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**ते**) (**अग्ने**) विद्वन् (**किम्**) (**इह**) अस्मिन् संसारे जन्मनि वा। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**वदन्ति**)

(अनायुधासः) अविद्यमानायुधाः **(आसता)** अवर्त्तमानेन। अत्रा**न्येषामपी**त्याद्यचो दीर्घः। **(सचन्ताम्)** प्राप्नुवन्तु॥१४॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्! येऽनिरेण प्रतीत्येन फल्वेन कृधुना वचसाऽतृपास आसताऽनायुधास इवेह किं वदन्त्यध ते किं सचन्तामित्यस्योत्तरं ब्रूत॥१४॥

भावार्थः-यदि श्रोतार उपदेशेन प्राप्तोत्तराः सन्तुष्टा न स्युस्ते तावत्पृच्छन्तु यदा प्राप्तसमाधानाः स्युस्तदा तत्कर्म्मारभन्ताम्॥१४॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान् पुरुष! जो **(अनिरेण)** नहीं रमने योग्य **(प्रतीत्येन)** प्रतीति में प्रसिद्ध हुए **(फल्वेन)** बड़े **(कृधुना)** छोटे **(वचसा)** वचन से **(अतृपासः)** अतृप्त होते हुए **(आसता)** नहीं वर्त्तमान बल आदि से **(अनायुधासः)** विना शस्त्र-अस्त्र वालों के सदृश **(इह)** इस संसार वा इस जन्म में **(किम्)** क्या **(वदन्ति)** कहते हैं **(अध)** इसके अनन्तर **(ते)** आपके लिये किसे **(सचन्ताम्)** प्राप्त होवें, इसका उत्तर कहिये॥१४॥

भावार्थः-जो श्रोता लोग उपदेश से उत्तर को प्राप्त हुए सन्तुष्ट न होवें, वे तब तक पूछें, जब कि समाधान को प्राप्त होवें, तब उस कर्म का आरम्भ करें॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्य श्रिये समिधानस्य वृष्णो वसोरनीकं दम आ रुरोच।

रुशद्वसानः सुदृशीकरूपः क्षितिर्न राया पुरुवारो अद्यौत्॥१५॥३॥

अस्य। श्रिये। सम्ऽइधानस्य। वृष्णः। वसोः। अनीकम्। दमे। आ। रुरोच। रुशत्। वसानः। सुदृशीकऽरूपः। क्षितिः। न। राया। पुरुऽवारः। अद्यौत्॥१५॥

पदार्थः-**(अस्य)** वर्त्तमानस्य **(श्रिये)** शोभनायै लक्ष्म्यै वा **(समिधानस्य)** देदीप्यमानस्य **(वृष्णः)** बलिष्ठस्य **(वसोः)** वासयितुः **(अनीकम्)** सैन्यम् **(दमे)** गृहे **(आ)** समन्तात् **(रुरोच)** रोचते **(रुशत्)** सुन्दरं रूपम् **(वसानः)** प्राप्तः **(सुदृशीकरूपः)** सुष्ठु दर्शनीयस्वरूपः **(क्षितिः)** पृथिवी **(न)** इव **(राया)** धनेन **(पुरुवारः)** बहुभिर्वरणीयस्वरूपः **(अद्यौत्)** प्रकाशते॥१५॥

अन्वयः-यो रुशद्वसानः सुदृशीकरूपः पुरुवारो राया क्षितिर्नाद्यौत् यस्य समिधानस्य वृष्णो वसो राज्ञो दमे श्रियेऽनीकमारुरोच। तस्या अस्य सर्वाणि समाधानानि सुखानि च भवन्ति॥१५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये सुरूपवन्तः पृथिवीवत् क्षमादिगुणा बहु प्रतिष्ठिताश्चक्रवर्त्ति-राज्यश्रिया सुशोभिताः सन्तः सुशिक्षितां महाबलवतीं महतीं सेनामुन्नयन्ति तेषामेव चक्रवर्त्तिराज्यं संभाव्यते नेतरेषामिति॥१५॥

अत्राऽग्निमेधाविराजाऽध्यापकोपदेशकप्रच्छकसमाधातृगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चमं सूक्तं तृतीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो **(रुशत्)** सुन्दर रूप को **(वसानः)** प्राप्त **(सुदृशीकरूपः)** उत्तम प्रकार देखने योग्य स्वरूप से युक्त **(पुरुवारः)** सब से स्वीकार करने योग्य स्वरूप से शोभित तथा **(राया)** धन से **(क्षितिः)** पृथिवी के **(न)** समान **(अद्यौत्)** प्रकाशित होता है, जिस **(समिधानस्य)** प्रकाशमान **(वृष्णः)** बलिष्ठ **(वसोः)** वसाने वाले राजा के **(दमे)** गृह में **(श्रिये)** शोभा वा लक्ष्मी के लिये **(अनीकम्)** सेना **(आ)** सब प्रकार **(रुरोच)** सुन्दर है, उस सेना के और **(अस्य)** इस वर्त्तमान राजा के सम्पूर्ण समाधान और सुख होते हैं॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो अच्छे रूपवान् पृथिवी के सदृश क्षमा आदि गुण वाले और प्रतिष्ठित चक्रवर्त्ती राजाओं की लक्ष्मी से शोभित हुए उत्तम प्रकार शिक्षित बड़ी बलवती बड़ी सेना को बढ़ाते हैं, उनका ही चक्रवर्त्ती राज्य संभावित होता है औरों का नहीं॥१५॥

इस सूक्त में बुद्धिमान् राजा, अध्यापक, उपदेशक, प्रश्नकर्त्ता और समाधानकर्त्ता के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पांचवां सूक्त और तीसरा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्य षष्ठस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३, ५, ८, ११ विराट् त्रिष्टुप्। ७ निचृत्त्रिष्टुप्। १० त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ४, ९ भुरिक् पङ्क्तिः। ६ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब ग्यारह ऋचा वाले छठे सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों के विषय को कहते हैं॥

ऊर्ध्व ऊ षु णो अध्वरस्य होतरग्ने तिष्ठ देवताता यजीयान्।

त्वं हि विश्वमभ्यसि मन्म प्र वेधसश्चित्तिरसि मनीषाम्॥ १॥

ऊर्ध्वः। ऊम् इति। सु। नः। अध्वरस्य। होतः। अग्ने। तिष्ठ। देवऽताता। यजीयान्। त्वम्। हि। विश्वम्। अभि। असि। मन्म। प्र। वेधसः। चित्। तिरसि। मनीषाम्॥ १॥

पदार्थः-(**ऊद्ध्वः**) उपर्य्यधिष्ठाता (**उ**) वितर्के (**सु**) शोभने (**नः**) अस्माकम् (**अध्वरस्य**) अहिंसनीयस्य धर्म्यस्य व्यवहारस्य (**होतः**) दातः (**अग्ने**) पावक इव विद्वन् (**तिष्ठ**) (**देवताता**) देवतातौ (**यजीयान्**) अतिशयेन यष्टा (**त्वम्**) (**हि**) यतः (**विश्वम्**) सर्वं जगत् (**अभि**) आभिमुख्ये (**असि**) भवसि (**मन्म**) विज्ञानम् (**प्र**) (**वेधसः**) मेधाविनो विपश्चितः (**चित्**) एव (**तिरसि**) तरसि (**मनीषाम्**) प्रज्ञाम्॥ १॥

अन्वयः-हे होतरग्ने! त्वं हि देवताता यजीयान्नोऽध्वरस्योद्ध्वो वेधसो विश्वं मन्माऽभ्यसि मनीषां चित् तिरसि स उ सु प्र तिष्ठ॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये विदुषां सकाशाद्विद्याः प्राप्य सर्वस्य रक्षकाः प्रज्ञाप्रदातारः स्युस्तेषामेव प्रतिष्ठां कुरुत॥ १॥

पदार्थः-हे (**होतः**) दानकर्त्ता (**अग्ने**) अग्नि के सदृश विद्वान्! (**हि**) जिससे (**त्वम्**) आप (**देवताता**) विद्वानों की पङ्क्ति में (**यजीयान्**) अत्यन्त यजन करने वाले (**नः**) हम लोगों के (**अध्वरस्य**) नहीं हिंसा करने योग्य धर्मयुक्त व्यवहार के (**ऊद्ध्वः**) ऊपर अधिष्ठाताजन (**वेधसः**) बुद्धिमान् विद्वान् के सम्बन्ध में (**विश्वम्**) सम्पूर्ण जगत् और (**मन्म**) विज्ञान के (**अभि**) सम्मुख (**असि**) होते और (**मनीषाम्, चित्**) उत्तम बुद्धि ही के (**तिरसि**) पार होते हो (**उ, सु, प्र, तिष्ठ**) सो ही स्थित हूजिये॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो लोग विद्वानों के समीप से विद्याओं को प्राप्त होकर सब के रक्षा करने और बुद्धि देने वाले होवें, उन्हीं लोगों की प्रतिष्ठा करो॥ १॥

अथ विदुषां कर्त्तव्यमाह॥

अब विद्वानों के कर्त्तव्य को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अमूरो होता न्यसादि विक्ष्वग्निर्मन्द्रो विदथेषु प्रचेताः।

ऊर्ध्वं भानुं सवितेवाश्रेन्मेतेव धूमं स्तभायदुप द्याम्॥२॥

अमूरः। होता। नि। असादि। विक्षु। अग्निः। मन्द्रः। विदथेषु। प्रऽचेताः। ऊर्ध्वम्। भानुम्। सविताऽइव। अश्रेत्। मेताऽइव। धूमम्। स्तभायत्। उप। द्याम्॥२॥

पदार्थः-(**अमूरः**) अमूढो विद्वान् सन्। अत्र वर्णव्यत्ययेन ढस्य रः। (**होता**) आदाता (**नि**) (**असादि**) (**विक्षु**) प्रजासु (**अग्निः**) पावक इव (**मन्द्रः**) आनन्दप्रदः (**विदथेषु**) सङ्ग्रामेषु (**प्रचेताः**) प्राज्ञः प्रज्ञापकः (**ऊर्ध्वम्**) उपरिस्थम् (**भानुम्**) किरणम् (**सवितेव**) सूर्य्य इव (**अश्रेत्**) आश्रयेत् (**मेतेव**) प्रमातेव (**धूमम्**) (**स्तभायत्**) स्तभ्नाति (**उप**) (**द्याम्**) प्रकाशम्॥२॥

अन्वयः-मनुष्यैर्योऽमूरो होता विक्षु विदथेष्वग्निरिव मन्द्रः प्रचेता द्यामूर्ध्वं भानुं सवितेव धूमं मेतेव स्तभायन् न्यायमश्रेत् स एव राज्यकर्म्मण्युप न्यसादि निषाद्येत तर्हि पुष्कलं सुखं प्राप्येत॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यदि मनुष्याः सूर्य्यवत्प्रतापिनमग्निवद् दुष्टप्रदाहकं न्यायविनयाभ्यां प्रजासु चन्द्र इव संग्रामे विजेतारं राजानं संस्थापयेयुस्तर्हि कदाचिद्दुःखं न प्राप्नुयुः॥२॥

पदार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि जो (**अमूरः**) मूर्खपन से रहित विद्वान् जन होता हुआ (**होता**) ग्रहण करने वाला (**विक्षु**) प्रजाओं और (**विदथेषु**) संग्रामों में (**अग्निः**) अग्नि के सदृश (**मन्द्रः**) आनन्द देने वाला (**प्रचेताः**) बुद्धिमान् वा बुद्धिदाता (**द्याम्**) प्रकाश और (**उद्ध्र्वम्**) ऊपर वर्त्तमान (**भानुम्**) किरण को (**सवितेव**) सूर्य्य के सदृश (**धूमम्**) धुएं को (**मेतेव**) यथार्थ ज्ञान वाले के सदृश (**स्तभायत्**) रोकता है, न्याय का (**अश्रेत्**) आश्रय करे, वही राज्य कर्म्म में (**उप, नि, असादि**) स्थित होवे तो बहुत सुख को प्राप्त होवे॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य सूर्य्य के सदृश प्रतापी अग्नि के सदृश दुष्टों के दाहक और न्याय और नम्रता से प्रजाओं में चन्द्रमा के सदृश संग्राम में जीतने वाले राजा को संस्थापित करें तो कभी दुःख को न प्राप्त होवें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यता सुजूर्णी रातिनी घृताची प्रदक्षिणिद्देवतातिमुराणः।

उदु स्वरुर्नवजा नाक्रः पश्वो अनक्ति सुधितः सुमेकः॥३॥

यता। सुऽजूर्णिः। रातिनी। घृताची। प्रऽदक्षिणित्। देवऽतातिम्। उराणः। उत्। ऊम् इति। स्वरुः। नवऽजाः। न। अक्रः। पश्वः। अनक्ति। सुऽधितः। सुऽमेकः॥३॥

पदार्थः-(**यता**) प्राप्ता (**सुजूर्णिः**) सुष्ठु शीघ्रकारिणी (**रातिनी**) बहवो राता दातारो विद्यन्ते यस्याः सा (**घृताची**) रात्रिः। **घृताचीति रात्रिनामसु पठितम्।** (निघं०१.७) (**प्रदक्षिणित्**) या प्रदक्षिणमेति सा। अत्र **वाच्छन्दसी**त्यलोपः। (**देवतातिम्**) दिव्यगुणान्विताम् (**उराणः**) य उरून् बहूननिति प्राणयति सः (**उत्**) (उ) (**स्वरुः**) उपदेष्टा (**नवजाः**) नवेषु सुनवीनेषु जातः (**न**) इव (**अक्रः**) अक्रमिता (**पश्वः**) पशून् (**अनक्ति**) कामयते (**सुधितः**) सुहितः (**सुमेकः**) सुष्ठु प्रकाशमानः॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सुजूर्णिर्यता रातिनी प्रदक्षिणिद् घृताची देवतातिमुदनक्ति यथा तामुराणस्सुधितस्सुमेकोऽक्रो नवजाः सूर्यः स्वरुर्न उदनक्ति तथा विद्वान् वर्त्तेत स उ पश्वो न हिंस्यात्॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। उपदेशका रात्रौ दिने सर्वैः कर्त्तव्यां परिचर्य्यामुपदिशेयुर्येन शयनजागरणादियुक्ताहारविहारान् कृत्वा सिद्धहिता भवेयुः॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**सुजूर्णिः**) उत्तम प्रकार शीघ्रता करने वाली (**यता**) प्राप्त (**रातिनी**) बहुत देने वाले जिसके ऐसी (**प्रदक्षिणित्**) दहिनी ओर प्राप्त होने वाली (**घृताची**) रात्रि (**देवतातिम्**) श्रेष्ठ गुणों से युक्त वेला को (**उत्, अनक्ति**) शोभा करती है और जैसे उसको (**उराणः**) बहुतों को जिलाने वाला (**सुधितः**) उत्तम प्रकार धारण किये हुए (**सुमेकः**) सुन्दर प्रकाशमान (**अक्रः**) नहीं किञ्चित् चलने वाला, किन्तु वेग से जाने वाला (**नवजाः**) नवीनों में उत्पन्न सूर्य्य (**स्वरुः**) उपदेश देनेवाले के (**न**) समान शोभा करता है, वैसे विद्वान् वर्त्ताव करें (**उ**) और वह (**पश्वः**) पशुओं की न हिंसा करे॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। उपदेशक लोग रात्रि और दिन में सभों के करने योग्य सेवा का उपदेश देवें, जिससे कि शयन जागरण आदि से युक्त आहार और विहारों को करके अपने हितों को सिद्ध करने वाले होवें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्तीर्णे बर्हिषि समिधाने अग्ना ऊर्ध्वो अध्वर्युर्जुजुषाणो अस्थात्।

पर्य्यग्निः पशुपा न होता त्रिविष्ट्येति प्रदिव उराणः॥४॥

स्तीर्णे। बर्हिषि। सम्ऽइधाने। अग्नौ। ऊर्ध्वः। अध्वर्युः। जुजुषाणः। अस्थात्। परि। अग्निः। पशुऽपाः। न। होता। त्रिऽविष्टि। एति। प्रऽदिवः। उराणः॥४॥

पदार्थः-(**स्तीर्णे**) आच्छादिते (**बर्हिषि**) अन्तरिक्षे (**समिधाने**) प्रदीप्ते (**अग्नौ**) सूर्य्यरूपे (**ऊर्ध्वः**) उत्कृष्टः (**अध्वर्युः**) य आत्मनोऽध्वरमहिंसनीयं व्यवहारं कर्त्तुमिच्छुः (**जुजुषाणः**) सेवमानः (**अस्थात्**) तिष्ठेत् (**परि**) (**अग्निः**) (**पशुपाः**) यः पशून् पाति (**न**) इव (**होता**) यज्ञानुष्ठाता (**त्रिविष्टि**) आकाशे (**एति**) गच्छति (**प्रदिवः**) सुप्रकाशान् (**उराणः**) बहु कुर्वन्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा समिधाने बर्हिषि स्तीर्णे अग्नावुराण ऊर्ध्वोऽग्निः सूर्य्यः पर्य्यस्थात् त्रिविष्टि प्र दिव एति पशुपा न होताऽस्ति तथैव जुजुषाणोऽध्वर्युर्वर्त्तेत॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये अहिंसादिकर्माणि कृत्वा विद्वांसो भूत्वा परोपकारिणः स्युस्तेऽन्तरिक्षे सूर्य्य इव सुप्रकाशिता भवेयुः॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(समिधाने)** प्रदीप्त **(बर्हिषि)** अन्तरिक्ष में वा **(स्तीर्णे)** आच्छादित **(अग्नौ)** सूर्य्यरूप अग्नि में **(उराणः)** बहुत कार्य्य करता हुआ **(ऊर्ध्वः)** उत्तम **(अग्निः)** सूर्य्याग्नि **(परि, अस्थात्)** सब ओर से स्थित हो वा **(त्रिविष्टि)** आकाश में **(प्रदिवः)** उत्तम प्रकाशों को **(एति)** प्राप्त होता है **(पशुपाः)** पशुओं की रक्षा करने वाले के **(न)** सदृश **(होता)** यज्ञ कराने वाला है, वैसे ही **(जुजुषाणः)** सेवा करते हुए **(अध्वर्युः)** अपने को अहिंसनीय व्यवहार की इच्छा करने वाले वर्त्ताव करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो लोग अहिंसा आदि कर्म्मों को कर और विद्वान् होकर परोपकारी हों, वे अन्तरिक्ष में सूर्य्य के सदृश उत्तम प्रकार प्रकाशित होवें॥४॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वरविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

परि॒ त्मना॑ मि॒तद्रु॑रेति॒ होता॒ग्निर्म॒न्द्रो मधु॑वचा ऋ॒तावा॑।

द्रव॑न्त्यस्य वा॒जिनो॒ न शोका॒ भय॑न्ते॒ विश्वा॒ भुव॑ना॒ यदभ्रा॑ट्॥५॥४॥

परि॑। त्मना॑। मि॒तऽद्रुः॑। ए॒ति॒। होता॑। अ॒ग्निः। म॒न्द्रः। मधु॑ऽवचाः। ऋ॒तऽवा॑। द्रव॑न्ति। अ॒स्य॒। वा॒जिनः॑। न। शोकाः॑। भय॑न्ते। विश्वा॑। भुव॑ना। यत्। अभ्रा॑ट्॥५॥

पदार्थः-**(परि)** **(त्मना)** आत्मना **(मितद्रुः)** यो मितं द्रवति गच्छति सः **(एति)** प्राप्नोति **(होता)** यज्ञकर्त्ता **(अग्निः)** पावक इव **(मन्द्रः)** आनन्दप्रद आनन्दितः **(मधुवचाः)** मधुरवाक् **(ऋतावा)** सत्यस्य विभाजकः **(द्रवन्ति)** धावन्ति **(अस्य)** **(वाजिनः)** अश्वाः **(न)** इव **(शोकाः)** प्रकाशाः **(भयन्ते)** बिभ्यति। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदं शपो लुक् न। **(विश्वा)** सर्वाणि **(भुवना)** भूताधिकरणानि **(यत्)** यस्मात् **(अभ्राट्)** भ्राजते॥५॥

अन्वयः-यथास्य सूर्य्यस्य वाजिनो न शोका द्रवन्ति योऽभ्राड् यद्विश्वा भुवना भयन्ते तद्वद्वर्त्तमान ऋतावा मधुवचा अग्निरिव होता मन्द्रो मितद्रुस्त्मना पर्य्येति सः सर्वं सुखं प्राप्नोति॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! यस्य परमात्मनः सर्वत्र प्रकाशो यस्मात्सर्वे बिभ्यति तस्य विज्ञानाय सत्याचारो योगाभ्यासश्च सर्वैः कर्त्तव्यः॥५॥

पदार्थः-जैसे **(अस्य)** इस सूर्य के **(वाजिनः)** घोड़े के **(न)** तुल्य **(शोकाः)** प्रकाश **(द्रवन्ति)**

दौड़ते हैं जो **(अभ्राट्)** दीप्त होता है **(यत्)** जिससे **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(भुवना)** जीवों के ठहरने के अधिकरण लोकलोकान्तर **(भयन्ते)** कंपते हैं, उस प्रकार वर्त्तमान जो पुरुष **(ऋतावा)** सत्य का विभाग करने वाला **(मधुवचाः)** मधुरवाणी युक्त **(अग्निः)** अग्नि के सदृश **(होता)** यज्ञ करने वाला **(मन्द्रः)** आनन्ददाता वा आनन्दित **(मितद्रुः)** परिमाणपूर्वक चलने वाला **(त्मना)** अपने से **(परि, एति)** प्राप्त होता है, वह सुख को प्राप्त होता है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिस परमात्मा का सब जगह प्रकाश और जिससे सब डरते हैं, उसके विज्ञान के लिये सत्य का आचरण और योगाभ्यास सब को करना चाहिये॥५॥

अथेश्वरतया राजगुणानाह॥

अब ईश्वरता लेकर राजगुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भ॒द्रा ते॑ अग्ने स्वनीक सं॒दृग्घो॒रस्य॑ स॒तो वि॒षु॑णस्य॒ चारुः॑।

न यत्ते॑ शो॒चिस्तम॑सा॒ वर॑न्त॒ न ध्व॒स्मान॑स्त॒न्वी॒३॒॑ रेप॒ आ धुः॑॥६॥

भ॒द्रा। ते॒। अ॒ग्ने॒। सु॒ऽअ॒नी॒क॒। स॒म्ऽदृक्। घो॒रस्य॑। स॒तः। वि॒षु॑णस्य। चारुः॑। न। यत्। ते॒। शो॒चिः। तम॑सा। वर॑न्त। न। ध्व॒स्मान॑ः। त॒न्वि॑। रेपः॑। आ। धु॒रिति॑ धुः॥६॥

पदार्थः-**(भद्रा)** कल्याणकारिणी **(ते)** तव **(अग्ने)** विद्युदिव वर्त्तमान **(स्वनीक)** उत्तमसैन्य **(संदृक्)** समानदृष्टिः **(घोरस्य)** दुष्टस्य **(सतः)** सत्पुरुषस्य **(विषुणस्य)** विषमस्य **(चारुः)** **(न)** **(यत्)** **(ते)** **(शोचिः)** दीप्तिः **(तमसा)** रात्र्या **(वरन्त)** निवारयन्ति **(न)** **(ध्वस्मानः)** ध्वंसकाः शत्रवः **(तन्वि)** विस्तीर्णा **(रेपः)** अपराधम् **(आ)** **(धुः)** समन्ताद् दध्युः॥६॥

अन्वयः-हे स्वनीकाग्ने! या ते घोरस्य सतो विषुणस्य चारुर्भद्रा संदृगस्ति यत्ते शोचिस्तमसा ध्वस्मानो न वरन्त या ते तन्वि नीतिस्तया रेपो न आ धुः स त्वमस्माकं राजा भव॥६॥

भावार्थः-यस्य राज्ञः पक्षपातरहिता प्रवृत्तिर्यस्य विस्तीर्णा नीतिरविहता वर्त्तते तस्य राज्ये कोऽप्यपराधं कर्त्तुं नेच्छेत्॥६॥

पदार्थः-हे **(स्वनीक)** उत्तम सेनायुक्त **(अग्ने)** बिजुली के समान वर्त्तमान! जो **(ते)** आपकी **(घोरस्य)** दुष्ट **(सतः)** श्रेष्ठ पुरुष की तथा **(विषुणस्य)** विषम की **(चारुः)** सुन्दर **(भद्रा)** कल्याण करने वाली **(संदृक्)** समान दृष्टि है **(यत्)** जो **(ते)** आपका **(शोचिः)** प्रकाश **(तमसा)** रात्रि से **(ध्वस्मानः)** नाश करने वाले शत्रु **(न)** नहीं **(वरन्त)** निवारण करते हैं, जो आपकी **(तन्वि)** विस्तीर्ण नीति उससे **(रेपः)** अपराध **(न)** नहीं **(आ, धुः)** सब प्रकार धारण करे, वह आप हम लोगों के राजा हूजिये॥६॥

भावार्थः-जिस राजा की पक्षपातरहित प्रवृत्ति और जिसकी विस्तीर्ण नीति अविच्छिन्न वर्त्तमान है, उसके राज्य में कोई भी अपराध करने की इच्छा न करे॥६॥

अथेश्वरभावे मातापित्रोः सेवाधर्ममाह॥

अब ईश्वरभाव में माता पिता के सेवाधर्म को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न यस्य सातुर्जनितोरवारि न मातरापितरा नू चिदिष्टौ।

अधा मित्रो न सुधितः पावकोऽ३ग्निर्दीदाय मानुषीषु विक्षु॥७॥

न। यस्य। सातुः। जनितोः। अवारि। न। मातरापितरा। नु। चित्। इष्टौ। अध। मित्रः। न। सुऽधितः। पावकः। अग्निः। दीदाय। मानुषीषु। विक्षु॥७॥

पदार्थः-(**न**) (**यस्य**) (**सातुः**) सत्याऽसत्ययोर्विभाजकस्य (**जनितोः**) जनकयोः (**अवारि**) व्रियेत (**न**) (**मातरापितरा**) जनकजनन्यौ (**नु**) सद्यः (**चित्**) अपि (**इष्टौ**) पूजनीयौ (**अधा**) अथ। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**मित्रः**) सखा (**न**) इव (**सुधितः**) सुष्ठु हितो हितकारी (**पावकः**) पवित्रः (**अग्निः**) वह्निरिव (**दीदाय**) दीप्यते (**मानुषीषु**) मनुष्यसम्बन्धिनीषु (**विक्षु**) प्रजासु॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य सातुर्जनितोः प्रियं नावारि यस्य चिन्मातरापितरेष्टौ नावारि। स दुःख्यधा यस्य सत्कृतौ भवेतां सुधितो मित्रो नाग्निरिव पावको मानुषीषु विक्षु नु दीदाय॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यस्मिन्विद्यमाने पुत्रे मातापित्रोर्दुःखं जायते सत्कारो न भवति स भाग्यहीनः सततं पीडितो भवति यस्य च सुसेवया प्रीतौ भवतस्तस्य प्रजासु प्रशंसा सततं सुखञ्च जायते॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यस्य**) जिस (**सातुः**) सत्य और असत्य के विभाग करने वाले के (**जनितोः**) माता और पिता का प्रिय (**न**) नहीं (**अवारि**) स्वीकार किया जाता है और (**चित्**) जिसके (**मातरापितरा**) माता और पिता (**इष्टौ**) पूजा करने योग्य (**न**) नहीं स्वीकार किये जाते हैं, वह दुःखी होता (**अधा**) इसके अनन्तर जिसके माता और पिता सत्कृत होवें (**सुधितः**) वह उत्तम प्रकार हितकारी (**मित्रः**) मित्र के (**न**) और (**अग्निः**) अग्नि के सदृश (**पावकः**) पवित्र (**मानुषीषु**) मनुष्य संबन्धिनी (**विक्षु**) प्रजाओं में (**नु**) शीघ्र (**दीदाय**) प्रकाशित होता है॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिस पुत्र के विद्यमान रहने पर माता और पिता को दुःख होता और सत्कार नहीं होता है, वह भाग्यहीन निरन्तर पीड़ित होता है और जिस पुत्र की उत्तम सेवा से माता पिता प्रसन्न होते हैं, उसकी प्रजाओं में प्रशंसा और उसको सुख होता है॥७॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

द्विर्यं पञ्च जीजनन्त्संवसानाः स्वसारो अग्निं मानुषीषु विक्षु।

उषर्बुधमथर्योऽ३न दन्तं शुक्रं स्वासं परशुं न तिग्मम्॥८॥

द्विः। यम्। पञ्च। जीजनन्। सम्ऽवसानाः। स्वसारः। अग्निम्। मानुषीषु। विक्षु। उषःऽबुधम्। अथर्यः। न। दन्तम्। शुक्रम्। सुऽआसम्। परशुम्। न। तिग्मम्॥८॥

पदार्थः-(**द्विः**) द्विवारम् (**यम्**) (**पञ्च**) (**जीजनन्**) जनयन्ति (**संवसानाः**) सम्यगाच्छादकाः (**स्वसारः**) अङ्गुलयः (**अग्निम्**) (**मानुषीषु**) मनुष्याणामिमासु (**विक्षु**) (**उषर्बुधम्**) य उषसि बुध्यते तम् (**अथर्यः**) अहिंसिताः स्त्रियः (**न**) इव (**दन्तम्**) (**शुक्रम्**) शुद्धम् (**स्वासम्**) शोभनं मुखम् (**परशुम्**) कुठारम् (**न**) इव (**तिग्मम्**) तीव्रम्॥८॥

अन्वयः-ये विद्वांसो मानुषीषु विक्ष्वग्निं संवसानाः पञ्च स्वसारोऽथर्यः शुक्रं दन्तं स्वासं न तिग्मं परशुं न यमुषर्बुधं द्विर्जीजनंस्ते सर्वाणि कार्य्याणि साद्धुं शक्नुयुः॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाऽङ्गुलिभिस्सर्वाणि कर्म्माणि सिध्यन्ति तथैव रात्रेः पश्चिमे याम उत्थाय प्रजानां हितानि साध्नुवन्तु। तीक्ष्णः कुठार इव दुःखानि छित्वा युवतयः शुद्धं मुखं दन्तं कुर्वन्तीव प्रजाः शोधयित्वा सुखं दत्वा द्विजान् विद्याजन्मयुक्तान् सम्पादयन्तु॥८॥

पदार्थः-जो विद्वान् लोग (**मानुषीषु**) मनुष्यसम्बन्धिनी (**विक्षु**) प्रजाओं में (**अग्निम्**) अग्नि को (**संवसानाः**) उत्तम प्रकार आच्छादन करने वाले जैसे (**पञ्च**) पांच (**स्वसारः**) अंगुलियाँ वा (**अथर्यः**) नहीं हिंसित स्त्रियाँ (**शुक्रम्**) शुद्ध (**दन्तम्**) दांत और (**स्वासम्**) सुन्दर मुख को (**न**) वैसे और जैसे (**तिग्मम्**) तीव्र (**परशुम्**) कुठार को (**न**) वैसे (**यम्**) जिस (**उषर्बुधम्**) प्रातःकाल में जानने वाले को (**द्विः**) दो बार (**जीजनन्**) उत्पन्न करते हैं, वे सम्पूर्ण कार्य्य को सिद्ध कर सकें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे अंगुलियों से सम्पूर्ण कार्य्य सिद्ध होते हैं, वैसे ही रात्रि के पिछले प्रहर में उठ के प्रजाओं के हित को सिद्ध करो। तीक्ष्ण कुठार के सदृश दुःखों को काट के युवावस्था विशिष्ट स्त्रियाँ शुद्ध मुख और दांत को करतीं, उनके सदृश प्रजाओं को शुद्ध कर और सुख देकर द्विजों को विद्या के जन्म से युक्त करो॥८॥

अथ प्रजाया ईश्वरत्वमाह॥

अब प्रजा के ईश्वर विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तव त्ये अग्ने हरितो घृतस्ना रोहितास ऋज्वञ्चः स्वञ्चः।

अरुषासो वृषण ऋजुमुष्का आ देवतातिमह्वन्त दस्माः॥९॥

तव। त्ये। अग्ने। हरितः। घृतऽस्नाः। रोहितासः। ऋजुऽअञ्चः। सुऽअञ्चः। अरुषासः। वृषणः। ऋजुऽमुष्काः। आ। देवऽतातिम्। अह्वन्त। दस्माः॥९॥

पदार्थः-(**तव**) (**त्ये**) ते (**अग्ने**) राजन् (**हरितः**) अङ्गुलयः। **हरित इत्यङ्गुलिनामसु पठितम्।** (निघं०२.५) (**घृतस्नाः**) याभिर्घृतमाज्यमुदकं वा स्नान्ति ताः (**रोहितासः**) वर्द्धिकाः (**ऋज्वञ्चः**)

याभिर्ऋजुमञ्चन्ति **(स्वञ्चः)** याभिस्सुष्ठ्वञ्चन्ति गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति वा **(अरुषासः)** सुशिक्षितास्तुरङ्गाः **(वृषणः)** बलिष्ठाः **(ऋजुमुष्काः)** य ऋजुं मार्गमुष्णन्ति ते **(आ)** **(देवतातिम्)** देवान् **(अह्वन्त)** आह्वयन्ते **(दस्माः)** दुःखोपक्षयितारः॥९॥

अन्वयः-हे अग्ने! यास्तव रोहितासो घृतस्ना ऋज्वञ्चः स्वञ्चो हरितो वृषण ऋजुमुष्का दस्मा अरुषास इव देवतातिमाह्वन्त। य एताभिः कर्म्माणि कर्तुं जानन्ति तास्त्ये च त्वया सम्प्रयोजनीयाः॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। येऽश्वैरिव स्वाङ्गुलिभिः कर्म्माणि कृत्वैश्वर्यमुन्नयन्ति ते क्षीणदुःखा जायन्ते॥९॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** राजन्! जो **(तव)** आपकी **(रोहितासः)** बढ़ाने वाली **(घृतस्नाः)** जिनसे घृत वा जल शुद्ध और **(ऋज्वञ्चः)** सीधा सत्कार करते तथा **(स्वञ्चः)** उत्तम प्रकार चलते वा प्राप्त होते हैं वह **(हरितः)** अंगुली **(वृषणः)** बलिष्ठ **(ऋजुमुष्काः)** सरल मार्ग को चलने वाले **(दस्माः)** दुःख के नाशकर्त्ता **(अरुषासः)** उत्तम प्रकार शिक्षित घोड़ों के सदृश **(देवतातिम्)** विद्वानों को **(आ, अह्वन्त)** बुलाते और जो इन से कर्म्मों को करना जानते हैं, वह अङ्गुली और **(त्ये)** वे मनुष्य आपको संप्रयुक्त करने योग्य हैं॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग घोड़ों के सदृश अपनी अङ्गुलियों से कर्म्मों को करके ऐश्वर्य्य की वृद्धि करते हैं, वे दुःखों से रहित होते हैं॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ये ह त्ये ते सहमाना अयासस्त्वेषासो अग्ने अर्चयश्चरन्ति।

श्येनासो न दुवसनासो अर्थं तुविष्वणसो मारुतं न शर्धः॥१०॥

ये। ह। त्ये। ते। सहमानाः। अयासः। त्वेषासः। अग्ने। अर्चयः। चरन्ति। श्येनासः। न। दुवसनासः। अर्थम्। तुविऽस्वनसः। मारुतम्। न। शर्धः॥१०॥

पदार्थः-**(ये)** **(ह)** खलु **(त्ये)** अन्ये **(ते)** तव **(सहमानाः)** सुखदुःखादीनां सोढारः **(अयासः)** प्राप्तविज्ञानासः **(त्वेषासः)** प्रकाशमानाः **(अग्ने)** पावकवद्वर्त्तमान **(अर्चयः)** सत्क्रियाः **(चरन्ति)** प्राप्नुवन्ति गच्छन्ति वा **(श्येनासः)** श्येनः पक्षीव सद्यो गन्तारोऽश्वाः **(न)** इव **(दुवसनासः)** परिचारकाः **(अर्थम्)** द्रव्यम् **(तुविष्वणसः)** ये तुवींषि बलानि वन्वते याचन्ते ते **(मारुतम्)** मरुतामिदम् **(न)** इव **(शर्धः)** बलम्॥१०॥

अन्वयः-हे अग्ने! ये ते सहमाना अयासस्त्वेषासः श्येनासो न दुवसनासस्तुविष्वणसो मारुतं शर्धो नाऽर्चयोऽर्थञ्चरन्ति त्ये ह त्वया सत्कर्त्तव्या भवन्ति॥१०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये क्षमान्विता धर्म्यकर्माचरणेन प्रकाशमानाः सत्कीर्त्तयोऽश्ववत्कार्य्यकरा बलवन्तः स्युस्ते सत्कर्त्तव्या भवेयुः॥१०॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान! **(ये)** जो लोग **(ते)** आपके **(सहमानाः)** सुख दुःख आदि व्यवहारों के सहनेवाले **(अयासः)** विज्ञान को प्राप्त **(त्वेषासः)** प्रकाशमान **(श्येनासः)** और बाजपक्षी के सदृश शीघ्र चलनेवाले घोड़ों के **(न)** सदृश **(दुवसनासः)** लेचलने और **(तुविष्वणसः)** बलों के मांगने वाले **(मारुतम्)** पवनसम्बन्धी **(शर्धः)** बल को **(न)** जैसे **(अर्चयः)** उत्तम क्रिया वैसे **(अर्थम्)** द्रव्य को **(चरन्ति)** प्राप्त होते हैं **(त्ये)** वे **(ह)** ही अन्य जन आपको सत्कार करने योग्य होते हैं॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो लोग क्षमा से युक्त, धर्म्म सम्बन्धी कर्म्म के आचरण से प्रकाशमान, उत्तम यशवाले, घोड़े के सदृश कार्य्यकर्त्ता और बलवान् हों, वे सत्कार करने योग्य होवें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अकारि ब्रह्म समिधान तुभ्यं शंसात्युक्थं यजते व्यू धाः।

होतारमग्निं मनुषो नि षेदुर्नमस्यन्त उशिजः शंसमायोः॥११॥५॥

अकारि। ब्रह्म। सम्ऽइधान। तुभ्यम्। शंसाति। उक्थम्। यजते। वि। ऊम् इति। धाः। होतारम्। अग्निम्। मनुषः। नि। सेदुः। नमस्यन्तः। उशिजः। शंसम्। आयोः॥११॥

पदार्थः-**(अकारि)** क्रियते **(ब्रह्म)** महद्धनम् **(समिधान)** देदीप्यमान **(तुभ्यम्)** **(शंसाति)** प्रशंसेत् **(उक्थम्)** स्तोतुमर्हम् **(यजते)** सङ्गच्छते **(वि)** **(उ)** वितर्के **(धाः)** धेहि **(होतारम्)** दातारम् **(अग्निम्)** पावकमिव **(मनुषः)** मनुष्याः **(नि)** **(सेदुः)** निषीदन्ति **(नमस्यन्तः)** नम्रतां कुर्वन्तः **(उशिजः)** कामयमानाः **(शंसम्)** प्रशंसाम् **(आयोः)** जीवनस्य॥११॥

अन्वयः-हे समिधान विद्वन्! ये नमस्यन्त उशिजो मनुष आयोः शंसं होतारमग्निं निषेदुर्य्यस्तुभ्यमुक्थं ब्रह्म शंसाति यजते यैस्त्वमैश्वर्य्यमकारि तान् व्युधाः॥११॥

भावार्थः-हे विद्वन् राजन् वा! ये त्वदर्थमैश्वर्य्यं कामयमानाः परमेश्वरं विदुषश्च नमस्यन्ति ते सततं प्रशंसिता जायन्ते इति॥११॥

अत्र विद्वदीश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षष्ठं सूक्तं पञ्चमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(समिधान)** प्रकाशमान विद्वन्! जो **(नमस्यन्तः)** नम्रता और **(उशिजः)** कामना करते हुए **(मनुषः)** मनुष्य **(आयोः)** जीवन की **(शंसम्)** प्रशंसा को और **(होतारम्)** देने वाले को **(अग्निम्)**

अग्नि के सदृश **(नि, सेदुः)** प्राप्त होते हैं और [जो] **(तुभ्यम्)** आपके लिये **(उक्थम्)** स्तुति करने योग्य **(ब्रह्म)** बड़े धन की **(शंसाति)** प्रशंसा करे **(यजते)** तथा विशेषता ही से मिलते हुए के लिये जिनसे आप ने ऐश्वर्य्य **(अकारि)** किया उनको **(वि, उ, धाः)** धारण कीजिये॥११॥

भावार्थः-हे विद्वन्! वा राजन्! जो आपके लिये ऐश्वर्य की कामना करते हुए परमेश्वर और विद्वानों को नमस्कार करते हैं, वे निरन्तर प्रशंसित होते हैं॥११॥

इस सूक्त में विद्वान् और ईश्वर के गुणवर्णन करने से इसके अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह छठवां सूक्त और पांचवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्य सप्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अग्निर्देवता। १ भुरिक् त्रिष्टुप्। ७, १०, ११ त्रिष्टुप्। ८, ९ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ स्वराडुष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। ३ निचृदनुष्टुप्। ४ अनुष्टुप् छन्दः। ५ विराडनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ सर्वगतस्याग्निशब्दार्थवाच्यव्यापकस्येश्वरस्य विषयमाह॥

अब एकादश ऋचा वाले सप्तम सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में सर्वगत अग्निशब्दार्थवाच्य व्यापक परमेश्वर के विषय को कहते हैं॥

अ॒यमि॒ह प्र॑थ॒मो धा॑यि धा॒तृभि॒र्होता॒ यजि॑ष्ठो अध्व॒रेष्वीड्यः॑।

यमप्न॑वानो॒ भृग॑वो विरुरु॒चुर्वने॑षु चि॒त्रं वि॒भ्वं॑ वि॒शेवि॑शे॥ १॥

अ॒यम्। इ॒ह। प्र॒थ॒मः। धा॒यि॒। धा॒तृऽभिः॑। होता॑। यजि॑ष्ठः। अ॒ध्व॒रेषु॑। ईड्यः॑। यम्। अप्न॑वानः। भृग॑वः। वि॒ऽरु॒रु॒चुः। वने॑षु। चि॒त्रम्। वि॒ऽभ्व॑म्। वि॒शेऽवि॑शे॥ १॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**इह**) अस्मिन्संसारे (**प्रथमः**) आदिमः (**धायि**) धीयते (**धातृभिः**) धारकैः (**होता**) दाता (**यजिष्ठः**) अतिशयेन यष्टा सङ्गन्ता (**अध्वरेषु**) अहिंसनीयेषु यज्ञेषु (**ईड्यः**) स्तोतुमर्हः (**यम्**) (**अप्नवानः**) पुत्रपौत्रादियुक्ताः (**भृगवः**) परिपक्वविज्ञानाः (**विरुरुचुः**) विशेषेण प्रकाशन्ते (**वनेषु**) वननीयेषु जङ्गलेषु (**चित्रम्**) अद्भुतम् (**विभ्वम्**) परमात्मानम् (**विशेविशे**) प्रजायै प्रजायै॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! इह धातृभिर्योऽयं प्रथमो होता यजिष्ठोऽध्वरेष्वीड्यो धायि विशेविशे यं चित्रं विभ्वमप्नवानो भृगवो वनेषु विरुरुचुस्तं परमात्मानं यूयं ध्यायत॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! अस्मिन् संसारे परमेश्वर एव युष्माभिर्ध्येयो ज्ञेयोऽस्ति यमुपास्य सांसारिकं पारमार्थिकं सुखं प्राप्स्यन्ति स एवेश्वरोऽत्र पूजनीयो मन्तव्यः॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**इह**) इस संसार में (**धातृभिः**) धारण करने वालों से जो (**अयम्**) यह (**प्रथमः**) पहिला (**होता**) देने और (**यजिष्ठः**) अत्यन्त मेल करने वाला (**अध्वरेषु**) नहीं हिंसा करने योग्य यज्ञों में (**ईड्यः**) स्तुति करने योग्य (**धायि**) धारण किया गया जिसको (**विशेविशे**) प्रजा-प्रजा के लिये (**यम्**) जिस (**चित्रम्**) अद्भुत (**विभ्वम्**) व्यापक परमात्मा को (**अप्नवानः**) पुत्र और पौत्रादिकों से युक्त (**भृगवः**) परिपक्व विज्ञान वाले लोग (**वनेषु**) याचना करने योग्य जङ्गलों में (**विरुरुचुः**) विशेष करके प्रकाशित करते अर्थात् अपने चित्त में रमाते हैं, उस परमात्मा का आप लोग ध्यान करो॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! इस संसार में परमेश्वर ही का आप लोगों को ध्यान करना योग्य है और जिसकी उपासना करके सांसारिक और पारमार्थिक सुख को प्राप्त होओगे, वही ईश्वर इस संसार में पूजा करने योग्य जानना चाहिये॥ १॥

पुनरग्निपदवाच्येश्वरविषयमाह॥

फिर अग्निपदवाच्य ईश्वर विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अग्ने कदा त आनुषग्भुवद्देवस्य चेतनम्।

अधा हि त्वा जगृभ्रिरे मर्तासो विक्ष्वीड्यम्॥ २॥

अग्ने। कदा। ते। आनुषक्। भुवत्। देवस्य। चेतनम्। अध। हि। त्वा। जगृभ्रिरे। मर्तासः। विक्षु। ईड्यम्॥ २॥

पदार्थः-(**अग्ने**) परमात्मन्! (**कदा**) कस्मिन् काले (**ते**) तव (**आनुषक्**) अनुकूलः (**भुवत्**) भवेत् (**देवस्य**) सुखदातुः सर्वत्र प्रकाशमानस्य (**चेतनम्**) अनन्तविज्ञानादियुक्तम् (**अधा**) अथ। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**हि**) खलु (**त्वा**) त्वाम् (**जगृभ्रिरे**) गृह्णीयुः (**मर्त्तासः**) मनुष्याः (**विक्षु**) मनुष्यप्रजासु (**ईड्यम्**) प्रशंसितुं योग्यम्॥ २॥

अन्वयः-हे अग्ने! देवस्य ते मनुष्यः कदाऽऽनुषग्भुवदधा मर्त्तासो हि विक्ष्वीड्यं चेतनं त्वा कदा जगृभ्रिर इति वयमिच्छेम॥ २॥

भावार्थः-हे परमेश्वर! वयं त्वां सततं प्रार्थयेम भवतः कृपया इमे सर्वे मनुष्या भवद्भक्ता भवदाज्ञानुकूला भवदुपासकाः कदा भविष्यन्ति। हे कृपालोऽन्तर्यामिन् करुणां विधाय सर्वान्त्स्वस्मिन् प्रीतिमतः सद्यः कुर्विति॥ २॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) परमात्मन्! (**देवस्य**) सुख देनेवाले और सर्वत्र प्रकाशमान (**ते**) आपके मनुष्य (**कदा**) किस काल में (**आनुषक्**) अनुकूल (**भुवत्**) हो (**अधा**) इसके अनन्तर (**मर्त्तासः**) मनुष्य लोग (**हि**) निश्चय से (**विक्षु**) मनुष्यरूप प्रजाओं में (**ईड्यम्**) स्तुति करने योग्य (**चेतनम्**) अनन्त विज्ञान आदि से युक्त (**त्वा**) आपको कब (**जगृभ्रिरे**) ग्रहण करें, ऐसी हम लोग इच्छा करें॥ २॥

भावार्थः-हे परमेश्वर! हम लोग आपकी निरन्तर प्रार्थना करें और आपकी कृपा से ये सब मनुष्य आपके भक्त, आपकी आज्ञा के अनुकूल और आपके उपासक कब होंगे। हे कृपालो अन्तर्यामिन्! दया करके सब को अपने में प्रीतिमान् शीघ्र करो॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋतावानं विचेतसं पश्यन्तो द्यामिव स्तृभिः।

विश्वेषामध्वराणां हस्कर्तारं दमेदमे॥ ३॥

ऋतऽवानम्। विऽचेतसम्। पश्यन्तः। द्यामऽइव। स्तृऽभिः। विश्वेषाम्। अध्वराणाम्। हस्कर्तारम्। दमेऽदमे॥ ३॥

पदार्थः-(**ऋतावानम्**) ऋतं सत्यं विद्यते यस्मिँस्तम् (**विचेतसम्**) विगतं चेतो यस्मात्तम् (**पश्यन्तः**) (**द्यामिव**) सूर्यमिव (**स्तृभिः**) नक्षत्रैः (**विश्वेषाम्**) सर्वेषाम् (**अध्वराणाम्**) अहिंसनीयानां यज्ञानाम् (**हस्कर्त्तारम्**) प्रकाशकर्त्तारम् (**दमेदमे**) गृहे गृहे॥३॥

अन्वयः-ये मनुष्या विश्वेषामध्वराणां स्तृभिर्द्यामिव दमेदमे हस्कर्त्तारं विचेतसमृतावानं पश्यन्तो जगृभिरे ते सुशोभन्ते॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये चेतनारहितं कारणयुक्तं प्रतिगृहं प्रकाशयन्तं जानन्ति ते सूर्य्यप्रकाशे चन्द्रादीनीव जगति प्रकाशन्ते॥३॥

पदार्थः-जो मनुष्य लोग (**विश्वेषाम्**) सम्पूर्ण (**अध्वराणाम्**) नहीं हिंसा करने योग्य यज्ञों के (**स्तृभिः**) नक्षत्रों से (**द्यामिव**) सूर्य्य के सदृश (**दमेदमे**) घर-घर में (**हस्कर्त्तारम्**) प्रकाश करने वाले (**विचेतसम्**) जिससे विगतचित्त होता (**ऋतावानम्**) जिसमें सत्य विद्यमान उसको (**पश्यन्तः**) देखते हुए ग्रहण करे हुए हैं, वे उत्तम प्रकार शोभित होते हैं॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो लोग चेतनारहित कारण से युक्त प्रत्येक गृह के प्रवेश करने वाले को जानते हैं, वे सूर्य के प्रकाश में चन्द्र आदिकों के सदृश संसार में प्रकाशित होते हैं॥३॥

अथाग्निविषयमाह॥

अब अग्निविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आशुं दूतं विवस्वतो विश्वा यश्चर्षणीरभि।

आ जभ्रुः केतुमायवो भृगवाणं विशेविशे॥४॥

आशुम्। दूतम्। विवस्वतः। विश्वाः। यः। चर्षणीः। अभि। आ। जभ्रुः। केतुम्। आयवः। भृगवाणम्। विशेऽविशे॥४॥

पदार्थः-(**आशुम्**) सद्योगामिनम् (**दूतम्**) दूतमिव (**विवस्वतः**) सूर्य्यात् (**विश्वाः**) समग्राः (**यः**) (**चर्षणीः**) प्रकाशान् (**अभि**) (**आ**) (**जभ्रुः**) धरन्ति (**केतुम्**) प्रज्ञानम् (**आयवः**) ज्ञानवन्तो मनुष्याः (**भृगवाणम्**) परिपाककर्त्तारम् (**विशेविशे**) प्रजायै॥४॥

अन्वयः-यो विद्वान् विवस्वतो दूतमिवाशुं विशेविशे भृगवाणमायवो विश्वा यश्चर्षणीः केतुं चाऽभ्याजभ्रुरिव धरति स सर्वानन्दी जायते॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सूर्य्यादिर्विद्युतादीन् गृह्णन्ति ते प्रजायै सुखप्रदा भवन्ति॥४॥

पदार्थः-(**यः**) जो विद्वान् (**विवस्वतः**) सूर्य से (**दूतम्**) दूत के सदृश (**आशुम्**) शीघ्र चलने

और **(विशेविशे)** प्रजा के निमित्त **(भृगवाणम्)** परिपाक के करने वाले को जैसे **(आयवः)** ज्ञानवान् मनुष्य **(विश्वाः)** सम्पूर्ण **(चर्षणीः)** प्रकाशों और **(केतुम्)** प्रज्ञान को **(अभि, आ, जभ्रुः)** धारण करते हैं, वैसे धारण करता है, वह सम्पूर्ण आनन्दों से युक्त होता है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य सूर्य आदि से बिजुली आदि पदार्थ को ग्रहण करते हैं, वे प्रजा के लिये सुख देने वाले होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तमीं होतारमानुषक् चिकित्वांसं नि षेदिरे।

रण्वं पावकशोचिषं यजिष्ठं सप्त धामभिः॥५॥६॥

तम्। ईम्। होतारम्। आनुषक्। चिकित्वांसम्। नि। सेदिरे। रण्वम्। पावकऽशोचिषम्। यजिष्ठम्। सप्त। धामऽभिः॥५॥

पदार्थः-**(तम्)** **(ईम्)** सर्वतः **(होतारम्)** ग्रहीतारम् **(आनुषक्)** आनुकूल्येन **(चिकित्वांसम्)** विद्वांसम् **(नि)** **(सेदिरे)** सीदन्ति **(रण्वम्)** रमणीयम् **(पावकशोचिषम्)** पावकस्य शोचिरिव शोचिर्दीप्तिर्यस्य तम् **(यजिष्ठम्)** अतिशयेन सङ्गन्तारम् **(सप्त)** सप्तभिः प्राणादिभिः **(धामभिः)** स्थानैः॥५॥

अन्वयः-ये तमग्निमिवानुषग्घोतारं चिकित्वांसं रण्वं सप्त धामभिः पावकशोचिषं यजिष्ठमीं निषेदिरे ते राज्यैश्वर्य्या भवन्ति॥५॥

भावार्थः-ये विपुलं वह्निं सर्वेभ्यः पदार्थेभ्यो निःसारितुं जानन्ति तेऽतिसुखा भवन्ति॥५॥

पदार्थः-जो लोग **(तम्)** उसको अग्नि के सदृश **(आनुषक्)** अनुकूलता से **(होतारम्)** ग्रहण करनेवाले **(चिकित्वांसम्)** विद्वान् **(रण्वम्)** सुन्दर **(सप्त)** सात प्राण आदि **(धामभिः)** स्थानों से **(पावकशोचिषम्)** अग्नि के तेज के सदृश तेज से युक्त **(यजिष्ठम्)** अत्यन्त मेल करनेवाले को **(ईम्)** सब प्रकार से **(नि, सेदिरे)** प्राप्त होते हैं, वे राज्य और ऐश्वर्य से युक्त होते हैं॥५॥

भावार्थः-जो लोग बिजुलीरूप अग्नि को सब पदार्थों से निकालना जानते हैं, वे अत्यन्त सुखी होते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तं शश्वतीषु मातृषु वन आ वीतमश्रितम्।

चित्रं सन्तं गुहा हितं सुवेदं कूचिदर्थिनम्॥६॥

तम्। शश्वतीषु। मातृषु। वने। आ। वीतम्। अश्रितम्। चित्रम्। सन्तम्। गुहा। हितम्। सुऽवेदम्। कूचित्ऽअर्थिनम्॥६॥

पदार्थः-(**तम्**) पावकम् (**शश्वतीषु**) अनादिभूतासु (**मातृषु**) आकाशादिषु (**वने**) किरणे (**आ**) (**वीतम्**) व्याप्तम् (**अश्रितम्**) असेवितम् (**चित्रम्**) अद्भुतगुणकर्मस्वभावम् (**सन्तम्**) विद्यमानम् (**गुहा**) बुद्धौ (**हितम्**) स्थितम् (**सुवेदम्**) शोभनो वेदो विज्ञानं यस्य तम् (**कूचिदर्थिनम्**) क्वचिद् बहवोऽर्था विद्यन्ते यस्मिंस्तम्॥६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यूयं शश्वतीषु मातृषु वने सन्तं गुहा हितं सुवेदं कूचिदर्थिनमश्रितमावीतं तं चित्रं विद्युदाख्यमग्निं विदित्वा कार्याणि साध्नुत॥६॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सर्वपदार्थेषु पृथक् पृथगेव वर्त्तमानमग्निं तत्त्वतो विजानन्ति ते सर्वाणि कार्याणि साद्धुं शक्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे विद्वानो! आप लोग (**शश्वतीषु**) अनादिकाल से वर्त्तमान (**मातृषु**) आकाश आदि पदार्थों में और (**वने**) किरण में (**सन्तम्**) विद्यमान (**गुहा**) बुद्धि में (**हितम्**) स्थित (**सुवेदम्**) उत्तम विज्ञान जिसका (**कूचिदर्थिनम्**) जो कहीं बहुत अर्थों से युक्त (**अश्रितम्**) और नहीं सेवन किया गया (**आ, वीतम्**) व्याप्त (**तम्**) उस (**चित्रम्**) अद्भुत गुण, कर्म, स्वभाव वाले बिजुली नामक अग्नि को जान के कार्यों को सिद्ध करो॥६॥

भावार्थः-जो मनुष्य सर्व पदार्थों में अलग ही अलग वर्त्तमान अग्नि को तत्त्व से जानते हैं, वे सब काम साध सकते हैं॥६॥

पुनरग्निविषयमाह॥

फिर अग्निविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स॒सस्य॒ यद्वियु॑ता॒ सस्मि॒न्नूध॑न्नृ॒तस्य॒ धाम॑न् र॒णय॑न्त दे॒वाः।

म॒हाँ अ॒ग्निर्नम॑सा रा॒तह॑व्यो॒ वेर॑ध्व॒राय॒ सद॒मिदृ॒तावा॑॥७॥

स॒सस्य॑। यत्। विऽयु॑ता। सस्मि॑न्। ऊध॑न्। ऋ॒तस्य॑। धाम॑न्। र॒णय॑न्त। दे॒वाः। म॒हान्। अ॒ग्निः। नम॑सा। रा॒तऽह॑व्यः। वेः। अ॒ध्व॒राय॑। सद॑म्। इत्। ऋ॒तऽवा॑॥७॥

पदार्थः-(**ससस्य**) स्वप्नस्य (**यत्**) यस्मिन् (**वियुता**) वियुक्तानि (**सस्मिन्**) सर्वस्मिन्। अत्र **छान्दसो वर्णलोपो वेति** लोपः। (**ऊधन्**) ऊधन्यवयवे (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**धामन्**) धामनि (**रणयन्त**) शब्दयन्ति (**देवाः**) विद्वांसः (**महान्**) अतिविस्तीर्णः (**अग्निः**) विद्युत् (**नमसा**) अन्नाख्येन पृथिव्यादिना सह (**रातहव्यः**) रातं ग्रहीतुं योग्यं हव्यं दत्तं येन सः (**वेः**) पक्षिणः (**अध्वराय**) अहिंसनीयाय व्यवहाराय (**सदम्**) प्राप्तव्यम् (**इत्**) एव (**ऋतावा**) ऋतस्य जलस्य विभाजकः॥७॥

अन्वयः-ये देवा विद्वांसो नमसा सह वर्त्तमानो रातहव्य ऋतावा महानग्निर्वेरिव सदं प्रापयति यद्यो सस्मिन्नूधन्नृतस्य धामन्त्ससस्य वियुता रणयन्त तमध्वराय विदन्तीत्ते सत्यविदो जायन्ते॥७॥

भावार्थः-हे विपश्चितो! योऽग्निः शरीरादौ निद्रायां च प्रसिद्धो भवति स महत्त्वात् सर्वत्र व्याप्तोऽस्ति॥७॥

पदार्थः-जो **(देवाः)** विद्वान् लोग **(नमसा)** पृथिवी आदि अन्न के साथ वर्त्तमान **(रातहव्यः)** जिसने ग्रहण करने योग्य पदार्थ दिया **(ऋतावा)** जो जल का विभाग करने वाला **(महान्)** महान् **(अग्निः)** बिजुली रूप अग्नि **(वेः)** पक्षी के सदृश **(सदम्)** प्राप्त होने योग्य स्थान को प्राप्त कराता है **(यत्)** जिस अग्नि में **(सस्मिन्)** सब **(ऊधन्)** अवयव में और **(ऋतस्य)** सत्य के **(धामन्)** स्थान में **(ससस्य)** स्वप्नसम्बन्ध से **(वियुता)** वियुक्त अर्थात् विना स्वप्न वस्तुएं **(रणयन्त)** शब्द करती हैं, उसको **(अध्वराय)** अहिंसनीय व्यवहार के लिये **(इत्)** जानते ही हैं, वे सत्य के जानने वाले होते हैं॥७॥

भावार्थः-हे बुद्धिमान् पुरुषो! जो अग्नि शरीर आदि में और निद्रा में प्रसिद्ध होता है, वह बड़ा होने से सर्वत्र व्यापक है॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वेरध्वरस्य दूत्यानि विद्वानुभे अन्ता रोदसी संचिकित्वान्।

दूत ईयसे प्रदिव उराणो विदुष्टरो दिव आरोधनानि॥८॥

वेः। अध्वरस्य। दूत्यानि। विद्वान्। उभे इति। अन्तरिति। रोदसी इति। सम्ऽचिकित्वान्। दूतः। ईयसे। प्रऽदिवः। उराणः। विदुःऽतरः। दिवः। आऽरोधनानि॥८॥

पदार्थः-**(वेः)** व्याप्तस्य **(अध्वरस्य)** अहिंसनीयस्य **(दूत्यानि)** दूतवत् कर्माणि **(विद्वान्)** **(उभे)** **(अन्तः)** मध्ये **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(सचिकित्वान्)** सम्यक् चिकीर्षकः **(दूतः)** **(ईयसे)** प्राप्नोषि **(प्रदिवः)** प्राचीनः **(उराणः)** बहुकुर्वाणः **(विदुष्टरः)** अतिशयेन वेत्ता **(दिवः)** प्रकाशस्य **(आरोधनानि)** समन्तान्निग्रहणानि॥८॥

अन्वयः-हे विद्वन्! संचिकित्वान् विद्वान् विदुष्टरस्संस्त्वं यो वेरध्वरस्य दूत्यान्यन्तरुभे रोदसी दूतः प्रदिव उराणो गच्छति तं विज्ञाय दिव आरोधनानीयसे तस्मात् सुखं प्राप्नोषि॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! या विद्युत्सर्वस्य शिल्पजनस्य दूतवत्प्रेरिका सनातना सर्वेषु पदार्थेषु व्याप्तास्ति तस्या उत्पत्तिनिरोधाभ्यां बहूनि कार्य्याणि साद्ध्वैश्वर्य्यं प्राप्नुत॥८॥

पदार्थः-हे विद्वन् **(सञ्चिकित्वान्)** उत्तम प्रकार कार्य करने की इच्छा करनेवाले **(विद्वान्)**

विद्यावान् पुरुष! **(विदुष्टर:)** अत्यन्त ज्ञाता हुए आप जो **(वे:)** व्याप्त **(अध्वरस्य)** न नष्ट करने योग्य व्यवहार के **(दूत्यानि)** संदेश पहुंचाने वाले के सदृश कर्म्मों को और **(अन्त:)** मध्य में **(उभे)** दोनों **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी को **(दूत:)** संदेश पहुंचाने वाला **(प्रदिव:)** प्राचीन **(उराण:)** बहुत कार्य करता हुआ जाता है, उसको जानके **(दिव:)** प्रकाश के **(आरोधनानि)** सब प्रकार के ग्रहण करने को **(ईयसे)** प्राप्त होते हो, इससे सुख को प्राप्त होते हो॥८॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो बिजुली रूप अग्नि सम्पूर्ण शिल्पिजन का दूत के सदृश प्रेरणा करनेवाला, अनादि काल से सिद्ध और सम्पूर्ण पदार्थों में व्याप्त है, उसकी उत्पत्ति और निरोध से बहुत कार्य्यों को सिद्ध करके ऐश्वर्य्य को प्राप्त होओ॥८॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वद्विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कृष्णं त एम रुशतः पुरो भाश्चरिष्ण्वर्चिर्वपुषामिदेकम्।

यदप्रवीता दधते ह गर्भं सद्यश्चिज्जातो भवसीदु दूतः॥९॥

कृष्णम्। ते। एम। रुशतः। पुरः। भाः। चरिष्णु। अर्चिः। वपुषाम्। इत्। एकम्। यत्। अप्रऽवीता। दधते। ह। गर्भम्। सद्यः। चित्। जातः। भवसि। इत्। ऊम् इति। दूतः॥९॥

पदार्थ:-**(कृष्णम्)** कर्षकम् **(ते)** तव **(एम)** प्राप्नुयाम **(रुशत:)** सुरूपस्य रुचिकरस्य **(पुर:)** पूर्वम् **(भा:)** प्रकाशमान: **(चरिष्णु)** यच्चरति गच्छति **(अर्चि:)** तेज: **(वपुषाम्)** रूपवतां शरीराणाम् **(इत्)** एव **(एकम्)** असहायम् **(यत्)** **(अप्रवीता)** अगच्छन्ती **(दधते)** धरति **(ह)** खलु **(गर्भम्)** अन्त:स्वरूपम् **(सद्य:)** शीघ्रम् **(चित्)** अपि **(जात:)** प्रकट: **(भवसि)** **(इत्)** **(उ)** **(दूत:)** दूत इव वर्त्तमान:॥९॥

अन्वय:-हे विद्वन्! यस्य रुशतस्ते यत्कृष्णं पुरो भाश्चरिष्णु वपुषामेकमर्चिरिदस्ति तद्वयमेम। हे विद्वन्! यथाऽप्रवीता गर्भं दधते तथा ह सद्यश्चिज्जातो दूत इवेदु भवसि तस्मात्सत्कर्त्तव्योऽसि॥९॥

भावार्थ:-हे अध्यापक कृपालो! त्वं विद्युत्तेजसो विद्यामस्मान् बोधय येन तेजसा दूतवत्कर्म्माणि वयं कारयेम॥९॥

पदार्थ:-हे विद्वन्! जिस **(रुशत:)** उत्तम रूपयुक्त प्रीतिकारक **(ते)** आपका **(यत्)** जो **(कृष्णम्)** खींचने वाला **(पुर:)** प्रथम **(भा:)** प्रकाशमान **(चरिष्णु)** चलनेवाला **(वपुषाम्)** रूपवाले शरीरों के **(एकम्)** सहायरहित **(अर्चि:)** तेज **(इत्)** ही है, उसको हम लोग **(एम)** प्राप्त होवें और हे विद्वन्! जैसे **(अप्रवीता)** नहीं जाती हुई स्त्री **(गर्भम्)** अन्त: स्वरूप को **(दधते)** धारण करती है, वैसे **(ह)** निश्चय से **(सद्य:)** शीघ्र **(चित्)** भी **(जात:)** प्रकट **(दूत:)** दूत के **(इत्)** सदृश वर्त्तमान **(उ)** ही **(भवसि)** होते हो, उससे सत्कार करने योग्य हो॥९॥

भावार्थ:-हे अध्यापक कृपालो! आप बिजुली के तेज की विद्या का हम लोगों के लिये बोध कराइये कि जिस तेज से दूत के सदृश कार्य्यों को हम लोग करावें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सद्यो जातस्य ददृशानमोजो यदस्य वातो अनुवाति शोचिः।
वृणक्ति तिग्मामतसेषु जिह्वां स्थिरा चिदन्ना दयते वि जम्भैः॥१०॥

सद्यः। जातस्य। ददृशानम्। ओजः। यत्। अस्य। वातः। अनुऽवाति। शोचिः। वृणक्ति। तिग्माम्। अतसेषु। जिह्वाम्। स्थिरा। चित्। अन्ना। दयते। वि। जम्भैः॥१०॥

पदार्थ:-(**सद्यः**) क्षिप्रम् (**जातस्य**) उत्पन्नस्य (**ददृशानम्**) द्रष्टव्यम् (**ओजः**) वेगवद्बलम् (**यत्**) (**अस्य**) (**वातः**) वायुः (**अनुवाति**) (**शोचिः**) प्रदीप्तम् (**वृणक्ति**) सम्भजति (**तिग्माम्**) तीव्रां गतिम् (**अतसेषु**) वृक्षादिषु (**जिह्वाम्**) वाचम् (**स्थिरा**) स्थिराणि (**चित्**) अपि (**अन्ना**) अत्तव्यानि (**दयते**) ददाति (**वि**) (**जम्भैः**) गत्याक्षेपैः॥१०॥

अन्वय:-हे विद्वांसो! अस्य सद्यो जातस्य यद्ददृशानमोजो वातोऽनुवाति यदस्य शोचिरतसेषु तिग्मां जिह्वां वृणक्ति यो विजम्भैश्चित्स्थिरा अन्ना दयते तं विद्युतमग्निं विज्ञाय संप्रयुङ्ध्वम्॥१०॥

भावार्थ:-यदि शिल्पिनः पदार्थेभ्यो विद्युतं जनयेयुस्तर्हि सा दर्शनीयं पराक्रमं वेगं च दर्शयित्वा विविधान्यैश्वर्य्याणि ददाति॥१०॥

पदार्थ:-हे विद्वान् जनो! (**अस्य**) इस (**सद्यः**) शीघ्र (**जातस्य**) उत्पन्न हुए विद्युत् रूप अग्निप्रताप के (**यत्**) जिस (**ददृशानम्**) देखने योग्य (**ओजः**) वेगयुक्त बल के (**वातः**) वायु (**अनुवाति**) पीछे चलता है, जो इस साधारण अग्नि को (**शोचिः**) प्रज्वलित लपट को (**अतसेषु**) वृक्ष आदिकों में (**तिग्माम्**) तीव्र गति को और (**जिह्वाम्**) वाणी को (**वृणक्ति**) सेवन करता है और जो (**वि, जम्भैः**) गमनों के आक्षेपों से (**चित्**) भी (**स्थिरा**) दृढ़ (**अन्ना**) भोजन करने योग्य पदार्थों को (**दयते**) देता है, उस बिजुली रूप अग्नि को जान के कार्यों में प्रयुक्त करो॥१०॥

भावार्थ:-जो शिल्पीजन पदार्थों से बिजुली को उत्पन्न करें तो वह बिजुली देखने योग्य पराक्रम और वेग को दिखा के अनेक प्रकार के ऐश्वर्य्यों को देती है॥१०॥

पुन शिल्पिविद्वद्विषयमाह॥

फिर शिल्पि विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तृषु यदन्ना तृषुणा ववक्ष तृषुं दूतं कृणुते यह्वो अग्निः।
वातस्य मेळिं सचते निजूर्वन्नाशुं न वाजयते हिन्वे अर्वा॥११॥७॥

तृषु। यत्। अन्ना। तृषुणा। ववक्ष। तृषुम्। दूतम्। कृणुते। यह्वः। अग्निः। वातस्य। मेळिम्। सचते। निऽजूर्वन्। आशुम्। न। वाजयते। हिन्वे। अर्वा॥ ११॥

पदार्थः-(**तृषु**) क्षिप्रम्। **तृष्विति क्षिप्रनामसु पठितम्।** (निघं० २.१५) (**यत्**) यः (**अन्ना**) अन्नादीनि (**तृषुणा**) क्षिप्रेण (**ववक्ष**) वहति (**तृषुम्**) क्षिप्रकारिणम् (**दूतम्**) दूतमिव (**कृणुते**) करोति (**यह्वः**) महान् (**अग्निः**) विद्युत् (**वातस्य**) (**मेळिम्**) सङ्गमम् (**सचते**) समवैति (**निजूर्वन्**) नितरां सद्यो गच्छन् (**आशुम्**) शीघ्रगामिनमश्वम् (**न**) इव (**वाजयते**) गमयति (**हिन्वे**) गमयेय (**अर्वा**) वाजीव॥ ११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्यो यह्वोऽर्वेव निजूर्वन्नग्निस्तृषुणाऽन्ना तृषु ववक्ष तृषु दूतमिव कृणुते वातस्य मेळिं सचते यं विद्वानाशुं न वाजयतेऽहं हिन्वे तं यूयं विजानीत॥ ११॥

भावार्थः-यदि मनुष्याः विद्युद्वाय्वादियोगविद्यां जानीयुस्तर्हि ते दूतवदश्ववद्दूरं यानं समाचारं च गमयितुं शक्नुयुः॥ ११॥

अत्राग्निविद्युद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तमं सूक्तं सप्तमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यत्**) जो (**यह्वः**) बड़े (**अर्वा**) घोड़े के सदृश (**निजूर्वन्**) निरन्तर शीघ्र चलती हुई (**अग्निः**) बिजुली (**तृषुणा**) शीघ्रता से युक्त (**अन्ना**) अन्न आदिक पदार्थों को (**तृषु**) शीघ्र (**ववक्ष**) प्राप्त कराती है (**तृषुम्**) शीघ्र कार्य्यकारी (**दूतम्**) समाचार पहुंचाने वाले जन के सदृश अपने प्रताप को (**कृणुते**) करती है और (**वातस्य**) पवन के (**मेळिम्**) सङ्गम का (**सचते**) सम्बन्ध करती है जिसको विद्वान् जन (**आशुम्**) शीघ्र चलने वाले घोड़े के (**न**) सदृश (**वाजयते**) चलाता है, मैं (**हिन्वे**) चलाऊं, उसको आप लोग जानिये॥ ११॥

भावार्थः-जो मनुष्य बिजुली और वायु आदि के योग की विद्या को जानें तो वे दूत और घोड़े के सदृश दूर वाहन और समाचार को पहुंचा सकें॥ ११॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वान् के गुण वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सातवां सूक्त और सातवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथाष्टर्चस्याष्टमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ४, ५, ६ निचृद्गायत्री। २, ३, ७ गायत्री। ८ भुरिग्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथाग्निविषयमाह॥

अब आठ ऋचा वाले आठवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अग्निविषय को कहते हैं॥

दूतं वो विश्ववेदसं हव्यवाहममर्त्यम्। यजिष्ठमृञ्जसे गिरा॥१॥

दूतम्। वः। विश्वऽवेदसम्। हव्यऽवाहम्। अमर्त्यम्। यजिष्ठम्। ऋञ्जसे। गिरा॥१॥

पदार्थः-(**दूतम्**) उत्तमं दूतमिवं वर्त्तमानं वह्निम् (**वः**) युष्माकम् (**विश्ववेदसम्**) विश्वस्मिन् विद्यमानम् (**हव्यवाहम्**) यो हव्यान्यादातुमर्हाणि वहति गमयति प्रापयति वा तम् (**अमर्त्यम्**) नाशरहितम् (**यजिष्ठम्**) अतिशयेन सङ्गमयितारम् (**ऋञ्जसे**) प्रसाध्नोसि (**गिरा**) वाण्या॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! वो यं दूतमिव वर्तमानममर्त्यं विश्ववेदसं यजिष्ठं हव्यवाहं गिरा वयं विजानीमः। हे विद्वन्! येन त्वं कार्य्याण्यृञ्जसे तं यूयं विज्ञाय सम्प्रयुङ्ध्वम्॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! अयमेव विद्युदग्निर्दूतवत्कार्यसाधकोऽस्तीति यूयं वित्त॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**वः**) तुम्हारे बीच जिस (**दूतम्**) उत्तम दूत के सदृश वर्त्तमान (**अमर्त्यम्**) नाश से रहित (**विश्ववेदसम्**) सब में विद्यमान (**यजिष्ठम्**) अत्यन्त मिलाने वाले (**हव्यवाहम्**) ग्रहण करने योग्य पदार्थों को पहुंचाने वा प्राप्त कराने वाले को (**गिरा**) वाणी से हम लोग जानते हैं। हे विद्वन्! जिससे आप कार्य्यों को (**ऋञ्जसे**) सिद्ध करते हो, उसको आप लोग जान के कार्य्य में लगाइये॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! यही बिजुलीरूप अग्नि दूत के सदृश कार्यों को सिद्ध करने वाला है, ऐसा आप लोग जानो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स हि वेदा वसुधितिं महाँ आरोधनं दिवः। स देवाँ एह वक्षति॥२॥

सः। हि। वेद। वसुऽधितिम्। महान्। आऽरोधनम्। दिवः। सः। देवान्। आ। इह। वक्षति॥२॥

पदार्थः-(**सः**) (**हि**) यतः (**वेद**) वेत्ति। **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**वसुधितिम्**) वसूनां द्रव्याणां धारकम् (**महान्**) (**आरोधनम्**) रोधनम् (**दिवः**) प्रकाशस्य (**सः**) (**देवान्**) दिव्यान् गुणान् भोगान् (**आ**) (**इह**) (**वक्षति**) वहति प्रापयति॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यं दिव आरोधनं वसुधितिं विद्वान् वेद स हि महान् वर्त्तत स इह देवानावक्षतीति विजानीत॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! यो विद्युदग्निर्दिव्यभोगगुणप्रदः सूर्यस्याऽपि सूर्यः सर्वधर्त्ता व्याप्तोऽस्ति तं विदित्वा कार्य्याणि साध्नुत॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिसको **(दिवः)** प्रकाश के **(आरोधनम्)** रोकने और **(वसुधितिम्)** द्रव्यों के धारण करने वाले को विद्वान् **(वेद)** जानता है **(सः)** वह **(हि)** जिससे **(महान्)** बड़ा है और **(सः)** वह **(इह)** इस संसार में **(देवान्)** श्रेष्ठ गुण और भोगों को **(आ, वक्षति)** प्राप्त कराता है, ऐसा जानो॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो बिजुलीरूप अग्नि श्रेष्ठ भोग और गुणों का दाता सूर्य्य का भी सूर्य्य और सब का धारण करने वाला व्याप्त है, उसको जानके कार्य्यों को सिद्ध करो॥२॥

पुनरग्निविषयमाह॥

फिर अग्नि के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स वेद देव आनमं देवाँ ऋतायते दमे। दाति प्रियाणि चिद्वसु॥३॥

सः। वेद। देवः। आऽनमम्। देवान्। ऋतऽयते। दमे। दाति। प्रियाणि। चित्। वसु॥३॥

पदार्थः-**(सः)** विद्युदग्निः **(वेद)** जानाति **(देवः)** कामयमानः **(आनमम्)** समन्तात् सत्कृतिं कर्त्तुम् **(देवान्)** पृथिव्यादीन् विदुषो वा **(ऋतायते)** ऋतमिव करोति **(दमे)** गृहे **(दाति)** ददाति। अत्राऽभ्यासलोपः। **(प्रियाणि)** कमनीयानि **(चित्)** अपि **(वसु)** वसूनि द्रव्याणि॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यमाप्तो देवो वेद स देवानानममृतायते दमे चित्प्रियाणि वसु दातीति यूयं विजानीत॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! सर्वेषां पृथिव्यादीनां दिव्यानां पदार्थानां योऽग्निर्देवोऽस्ति तस्मादिमं सर्वैश्वर्यप्रदं महादेवं बुध्यध्वम्॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिसको यथार्थवक्ता **(देवः)** कामना करता हुआ विद्वान् जन **(वेद)** जानता है **(सः)** वह **(देवान्)** पृथिवी आदि पदार्थ वा विद्वानों के **(आनमम्)** सब प्रकार सत्कार करने को **(ऋतायते)** सत्य के सदृश आचरण और **(दमे)** गृह में **(चित्)** भी **(प्रियाणि)** सुन्दर **(वसु)** द्रव्यों को **(दाति)** देता है ऐसा जानो॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! सम्पूर्ण पृथिवी आदि श्रेष्ठ पदार्थों के बीच जो अग्निदेव है, उससे इस सब ऐश्वर्य का देनेवाला बड़ा देव जानो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स होता सेदु दूत्यं चिकित्वाँ अन्तरीयते। विद्वाँ आरोधनं दिवः॥४॥

सः। होता। सः। इत्। ऊम् इति। दूत्यम्। चिकित्वान्। अन्तः। ईयते। विद्वान्। आऽरोधनम्। दिवः॥४॥

पदार्थः-(**सः**) (**होता**) अत्ता (**सः**) (**इत्**) (**उ**) (**दूत्यम्**) दूतस्य भावं कर्म वा (**चिकित्वान्**) विज्ञानवान् (**अन्तः**) मध्ये (**ईयते**) गच्छति (**विद्वान्**) (**आरोधनम्**) समन्तान्निरोधकम् (**दिवः**) प्रकाशस्य॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या विद्वांसः! सोऽग्निर्होता स उ अन्तर्दूत्यमीयते स एव दिव आरोधनमस्तीति जानन्ति यं चिकित्वान् विद्वान् सम्प्रयुङ्क्ते तमिद्यूयमपि विज्ञाय प्रयुङ्ध्वम्॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः सर्वेषां पदार्थानां मध्ये वर्तमानो दूतवत्कार्य्याणि साध्नोति सूर्यादिकं प्रद्योतयति सोऽवश्यं युष्माभिर्वेदितव्यः॥४॥

पदार्थः-हे विद्वान् मनुष्यो! (**सः**) वह अग्नि (**होता**) पदार्थों का भक्षण करने वाला (**सः, उ**) वही (**अन्तः**) मध्य में वर्त्तमान (**दूत्यम्**) दूतपने वा दूत के कर्म को (**ईयते**) प्राप्त होता है, वही (**दिवः**) प्रकाश का (**आरोधनम्**) सब प्रकार रोकने वाला है ऐसा मानते हैं, जिसको (**चिकित्वान्**) विशेष ज्ञानवान् (**विद्वान्**) विद्वान् उत्तम प्रकार प्रयोग करता है (**इत्**) उसी को जान के तुम भी प्रयोग करो॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सम्पूर्ण पदार्थों के मध्य में वर्त्तमान और दूत के सदृश कार्य्यों को सिद्ध करता है और सूर्य आदि को प्रकाशित करता है, वह अवश्य आप लोगों को जानने योग्य है॥४॥

अथाग्निविद्याविद्विषयमाह॥

अब अग्नि विद्या के जानने वाले विद्वान् के विषय की अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ते स्या॑म॒ ये अ॒ग्नये॑ ददा॒शुर्ह॒व्यदा॑तिभिः। य ईं॒ पुष्य॑न्त इन्ध॒ते॥५॥

ते। स्या॒म॒। ये। अ॒ग्नये॑। द॒दा॒शुः। ह॒व्यदा॑तिऽभिः। ये। ईम्। पुष्य॑न्तः। इ॒न्ध॒ते॥५॥

पदार्थः-(**ते**) (**स्याम**) भवेम (**ये**) (**अग्नये**) अग्निविद्याप्राप्तये (**ददाशुः**) द्रव्यादिकं ददति (**हव्यदातिभिः**) दातव्यदानैः (**ये**) (**ईम्**) उदकम् (**पुष्यन्तः**) (**इन्धते**) प्रदीप्यन्ते॥५॥

अन्वयः-ये हव्यदातिभिरग्नये ददाशुर्य ईं पुष्यन्त इन्धते ते सुखिनः सन्ति तैस्सह वयं सुखिनस्स्याम॥५॥

भावार्थः-ये मनुष्या अग्न्यादिपदार्थविद्याप्राप्तये पुष्कलं धनं वियन्ति ते सर्वतः सर्वथा सर्वैः सुखैः पुष्टाः सन्त आनन्दन्ति॥५॥

पदार्थः-(**ये**) जो (**हव्यदातिभिः**) देने योग्य वस्तुओं के दानों से (**अग्नये**) अग्निविद्या की प्राप्ति के लिये (**ददाशुः**) द्रव्य आदि पदार्थ देते हैं और (**ये**) जो लोग (**ईम्**) जल को (**पुष्यन्तः**) पुष्ट करते हुए (**इन्धते**) प्रकाशित होते हैं (**ते**) वे सुखी हैं, उनके साथ हम लोग सुखी (**स्याम**) होवें॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य अग्नि आदि पदार्थों की विद्या की प्राप्ति के लिये बहुत खर्चते हैं, वे सब से सब प्रकार सब सुखों से पुष्ट हुए आनन्दित होते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ते रा॒या ते सु॒वीर्यैः॑ सस॒वांसो॒ वि शृ॑ण्विरे। ये अ॒ग्ना द॑धि॒रे दुवः॑॥६॥

ते। रा॒या। ते। सु॒ऽवीर्यैः॑। स॒स॒ऽवांसः॑। वि। शृ॒ण्वि॒रे॒। ये। अ॒ग्ना। द॒धि॒रे। दुवः॑॥६॥

पदार्थः-(ते) (**राया**) धनेन (ते) (**सुवीर्यैः**) सुष्ठुपराक्रमबलैः (**ससवांसः**) शेरते (**वि**) (**शृण्विरे**) शृण्वन्ति (**ये**) (**अग्ना**) अग्नौ विद्युति (**दधिरे**) धरन्ति (**दुवः**) परिचरणम्॥६॥

अन्वयः-ये विद्वांसोऽग्ना दुवो दधिरे गुणान् वि शृण्विरे ते राया सह ते सुवीर्यैस्सह ससवांस इवानन्दन्ति॥६॥

भावार्थः-मनुष्या यावदग्न्यादिविद्याश्रवणसेवने न कुर्वन्ति तावद्धनाढ्याः पूर्णबला भवितुं न शक्नुवन्ति यथा सुखेन शयाना आनन्दं भुञ्जते तथैवाग्न्यादिविद्यां प्राप्य दारिद्र्यं विनाश्य धनबलाभ्यां सदैव सुखिनो भवन्ति॥६॥

पदार्थः-(**ये**) जो विद्वान् लोग (**अग्ना**) बिजुलीरूप अग्नि में (**दुवः**) अभ्यास सेवन को (**दधिरे**) धारण करते और गुणों को (**वि, शृण्विरे**) सुनते हैं (**ते**) वे (**राया**) धन के साथ (**ते**) वे (**सुवीर्यैः**) उत्तम पराक्रम और बल वालों के साथ (**ससवांसः**) शयन करते हुए से आनन्दित होते हैं॥६॥

भावार्थः-मनुष्य जब तक अग्नि आदि पदार्थों की विद्या का श्रवण और सेवन नहीं करते हैं, तब तक धनाढ्य और पूर्ण बलवाले हो नहीं सकते हैं और जैसे सुख से सोते हुए आनन्द को प्राप्त होते हैं, उसी प्रकार अग्नि आदि विद्या को प्राप्त हुए दारिद्र्य का नाश करके धन और बल से सदा ही सुखी होते हैं॥६॥

अथ विद्वत्पुरुषार्थफलमाह॥

अब विद्वानों के पुरुषार्थ का फल कहते हैं॥

अ॒स्मे रायो॑ दि॒वेदि॑वे॒ सं च॑रन्तु पुरु॒स्पृहः॑। अ॒स्मे वाजा॑स ईरताम्॥७॥

अ॒स्मे इति॑। रायः॑। दि॒वेऽदि॑वे। सम्। च॒र॒न्तु॒। पु॒रु॒ऽस्पृहः॑। अ॒स्मे इति॑। वाजा॑सः। ई॒र॒ता॒म्॥७॥

पदार्थः-(**अस्मे**) अस्मासु (**रायः**) शुभाः श्रियः (**दिवेदिवे**) प्रतिदिनम् (**सम्**) (**चरन्तु**) विलसन्तु (**पुरुस्पृहः**) बहुभिः स्पृहणीयाः (**अस्मे**) अस्मान् (**वाजासः**) अन्नाद्यैश्वर्य्ययोगाः (**ईरताम्**) प्राप्नुवन्तु॥७॥

अन्वयः-मनुष्या दिवेदिवेऽस्मे पुरुस्पृहो रायः सञ्चरन्तु वाजासोऽस्मे ईरतामित्यभिलषन्तु॥७॥

भावार्थः-मनुष्यैः सदैव पुरुषार्थेन धनान्नराज्यप्रतिष्ठाविद्यादयः शुभगुणा उन्नता भवन्त्विति सततमेष्टव्याः॥७॥

पदार्थः-मनुष्य लोग (**दिवेदिवे**) प्रतिदिन (**अस्मे**) हम लोगों में (**पुरुस्पृहः**) बहुतों से चाहने

योग्य **(रायः)** श्रेष्ठ लक्ष्मियाँ **(सम्, चरन्तु)** विलसें और **(वाजासः)** अन्न आदि ऐश्वर्य्यों के योग **(अस्मे)** हम लोगों को **(ईरताम्)** प्राप्त हों, ऐसी अभिलाषा करो॥७॥

भावार्थः-मनुष्यो को चाहिये कि सदा ही पुरुषार्थ से धन, अन्न, राज्य, प्रतिष्ठा और विद्या आदि उत्तम गुणों की उन्नति होती है, इस प्रकार निरन्तर इच्छा करनी चाहिये॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स विप्रश्चर्षणीनां शवसा मानुषाणाम्। अति क्षिप्रेव विध्यति॥८॥८॥

सः। विप्रः। चर्षणीनाम्। शवसा। मानुषाणाम्। अति। क्षिप्राऽइव। विध्यति॥८॥

पदार्थः-**(सः)** **(विप्रः)** मेधावी **(चर्षणीनाम्)** ऐश्वर्य्येण प्रकाशमानानाम् **(शवसा)** बलेन **(मानुषाणाम्)** मानवानां मध्ये **(अति)** अतिशये **(क्षिप्रेव)** क्षिप्राणि प्रेरितानीव **(विध्यति)** ताडयति॥८॥

अन्वयः-यो विप्रः शवसा चर्षणीनां मानुषाणां क्षिप्रेव दुःखान्यतिविध्यति स एव प्रशंसितो भवति॥८॥

भावार्थः-ये विपश्चितोऽग्न्यादिविद्याप्रयोगैर्मनुष्याणां दारिद्र्यं विनाश्यैश्वर्य्ययोगं जनयन्ति त एव सर्वैः सत्कर्त्तव्याः सर्वेषु भाग्यशालिनः सन्तीति॥८॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो **(विप्रः)** बुद्धिमान् पुरुष **(शवसा)** बल से **(चर्षणीनाम्)** ऐश्वर्य्य से प्रकाशमान **(मानुषाणाम्)** मनुष्यों के मध्य में **(क्षिप्रेव)** प्रेरणा किये गयों के सदृश दुःखों को **(अति)** अत्यन्त **(विध्यति)** ताड़ता है **(सः)** वही प्रशंसित होता है॥८॥

भावार्थः-जो विद्वान् लोग अग्नि आदि विद्या के प्रयोगों से मनुष्यों के दारिद्र्य का नाश करके ऐश्वर्य्य के योग को उत्पन्न करते हैं, वे ही सब लोगों को सत्कार करने योग्य और सभों में भाग्यशाली होते हैं॥८॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वान् के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह अष्टम सूक्त और अष्टम वर्ग समाप्त हुआ॥

अथाष्टर्चस्य नवमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३, ४ गायत्री। २, ६ विराड्गायत्री। ५ त्रिपादगायत्री। ७, ८ निचृद्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः।

अथाग्निसादृश्येन विद्वत्सत्कारमाह॥

अब आठ ऋचावाले नवमें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अग्नि के सदृश होने से विद्वान् का सत्कार कहते हैं॥

अग्ने॑ मृ॒ळ म॒हाँ अ॑सि॒ य ई॑मा दे॒व॒युं जन॑म्। इ॒येथ॑ ब॒र्हिरा॒सद॑म्॥ १॥

अग्ने॑। मृ॒ळ। म॒हान्। अ॒सि॒। यः। ई॒म्। आ। दे॒व॒ऽयुम्। जन॑म्। इ॒येथ॑। ब॒र्हिः। आ॒ऽसद॑म्॥ १॥

पदार्थः-(**अग्ने**) अग्निरिव प्रकाशमान (**मृळ**) सुखय (**महान्**) महत्त्वयुक्तः (**असि**) (**यः**) (**ईम्**) सर्वतः (**आ**) (**देवयुम्**) य आत्मनो देवान् कामयते तम् (**जनम्**) प्रसिद्धं विद्वांसम् (**इयेथ**) एषि (**बर्हिः**) उत्तममासनम् (**आसदम्**) य आसीदति तम्॥१॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्त्वं बर्हिरासदं देवयुं जनमीमा इयेथ तस्मान्महानस्यस्मान् मृळ॥१॥

भावार्थः-यः पुरुषो विदुषां सङ्गेन विद्यां कामयते विद्यां प्राप्य मनुष्यादीन् सुखयति स एवाऽऽसनादिना प्रतिष्ठापनीयो भवति॥१॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश प्रकाशमान! (**यः**) जो आप (**बर्हिः**) उत्तम आसन को (**आसदम्**) बैठनेवाला (**देवयुम्**) अपने को विद्वानों की कामना कर (**जनम्**) प्रसिद्ध विद्वान् को (**ईम्**) सब प्रकार (**आ, इयेथ**) प्राप्त होते हो, इससे (**महान्**) महत्त्व से युक्त (**असि**) हो इससे [हमें] (**मृळ**) सुखी कीजिये॥१॥

भावार्थः-जो पुरुष विद्वानों के संग से विद्या की कामना करता और विद्या को प्राप्त होकर मनुष्य आदिकों को सुख देता है, वही आसन आदि से प्रतिष्ठा देने योग्य होता है॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स मानु॑षीषु दू॒ळभो॑ वि॒क्षु प्रा॒वीरम॑र्त्यः। दू॒तो विश्वे॑षां भुव॒त्॥ २॥

सः। मानु॑षीषु। दुः॒ऽदभः॑। वि॒क्षु। प्र॒ऽअ॒वीः। अम॑र्त्यः। दू॒तः। विश्वे॑षाम्। भु॒व॒त्॥ २॥

पदार्थः-(**सः**) विद्वान् (**मानुषीषु**) मनुष्याणामिमासु (**दूळभः**) दुःखेन लब्धुं योग्यः (**विक्षु**) प्रजासु (**प्रावीः**) प्रकृष्टविद्याव्यापी (**अमर्त्यः**) मर्त्यस्वभावरहितः (**दूतः**) उपक्षेता सर्वविद्याप्रापकः (**विश्वेषाम्**) सर्वेषाम् (**भुवत्**)॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो मानुषीषु विक्षु विश्वेषां प्रावीरमर्त्यो दूतो भुवत्स इह दूळभोऽस्तीति वेद्यम्॥२॥

भावार्थः-ये विद्वांसस्सर्वेषां सुखसाधका विद्याप्रदा मनुष्याणां धर्म्माऽऽचरणे प्रवेशकाः स्वयं धार्मिकाः स्युस्ते जगति दुर्ल्लभाः सन्ति॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(मानुषीषु)** मनुष्यसंबन्धी **(विक्षु)** प्रजाओं में **(विश्वेषाम्)** सब की **(प्रावीः)** उत्तम विद्या में व्याप्त **(अमर्त्यः)** मर्त्य के स्वभाव से रहित **(दूतः)** सम्पूर्ण विद्याओं का प्राप्त कराने वाला **(भुवत्)** होता है **(सः)** वह इस संसार में **(दूळभः)** दुर्लभ है, ऐसा जानना चाहिये॥२॥

भावार्थः-जो विद्वान् लोग सब लोगों के सुखसाधक विद्या के देने वाले और मनुष्यों को धर्म के आचरण में प्रवेश करानेवाले स्वयं धार्मिक होवें, वे संसार में दुर्लभ हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स सद्म परि णीयते होता मन्द्रो दिविष्टिषु। उत पोता नि षीदति॥३॥

सः। सद्म। परि। नीयते। होता। मन्द्रः। दिविष्टिषु। उत। पोता। नि। सीदति॥३॥

पदार्थः-**(सः)** विद्वान् **(सद्म)** सीदन्ति यस्मिँस्तत् **(परि)** सर्वतः **(नीयते)** **(होता)** दाता **(मन्द्रः)** आनन्दप्रदः **(दिविष्टिषु)** पक्षेष्ट्यादिसद्व्यवहारेषु **(उत)** अपि **(पोता)** पवित्रकर्त्ता **(नि)** **(सीदति)**॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! यो मन्द्रो होता उतापि पोता दिविष्टिषु सद्म निषीदति स विद्वद्भिः परिणीयते॥३॥

भावार्थः-यत्र पवित्रा आनन्दिता विद्यादिदातारो जनास्सन्ति तत्रैव समग्रो विनयो भवति॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(मन्द्रः)** आनन्द का दाता **(होता)** दानकर्त्ता और **(उत)** भी **(पोता)** पवित्र करने वाला **(दिविष्टिषु)** पक्षेष्टि आदि उत्तम व्यवहारों के निमित्त **(सद्म)** बैठते हैं जिसमें उस गृह में **(नि, सीदति)** बैठता है **(सः)** वह विद्वान् विद्वानों को **(परि)** सब प्रकार **(नीयते)** प्राप्त होता है॥३॥

भावार्थः-जहाँ पवित्र आनन्दयुक्त और विद्या आदि के देनेवाले लोग हैं, वहीं सम्पूर्ण विनय होता है॥३॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब विद्वानों के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत ग्ना अग्निरध्वर उतो गृहपतिर्दमे। उत ब्रह्मा नि षीदति॥४॥

उत। ग्नाः। अग्निः। अध्वरे। उतो इति। गृहऽपतिः। दमे। उत। ब्रह्मा। नि। सीदति॥४॥

पदार्थः-**(उत)** अपि **(ग्नाः)** सुशिक्षिता वाचः **(अग्निः)** पावक इव **(अध्वरे)** अहिंसनीये **(उतो)** अपि **(गृहपतिः)** **(दमे)** दान्ते गृहे **(उत)** **(ब्रह्मा)** **(नि)** **(सीदति)**॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! यो गृहपतिरग्निरिव ग्ना निषीदति उत ब्रह्मा सन्नध्वरे दमे निषीदति उतो कर्म्म करोति उतापि सर्वान् बोधयति स एव सत्कर्त्तव्यो भवतीति विजानीत॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्या पावकवत्पवित्रविद्या उतापि चतुर्वेदविदः प्रशस्तकर्मकर्त्तारो गृहस्वामिनस्स्युस्त एवोत्तमाऽधिकारेषु निषीदन्तु॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(गृहपतिः)** गृह का स्वामी **(अग्निः)** अग्नि के सदृश **(ग्नाः)** उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियों को **(नि, सीदति)** प्राप्त होता **(उत)** और **(ब्रह्मा)** चार वेद का पढ़ने वाला होता हुआ **(अध्वरे)** नहीं हिंसा करने योग्य दमनयुक्त **(दमे)** गृह में स्थित होता है **(उतो)** और कर्म्म करता और **(उत)** भी सब को बोध कराता है, वही सत्कार करने योग्य होता है, ऐसा जानो॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य अग्नि के सदृश पवित्र विद्या वाले और चारों वेदों के ज्ञाता और भी उत्तम कर्म्मों के करने वाले गृह के स्वामी होवें, वे ही श्रेष्ठ अधिकारों में वर्त्तमान होवें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वेषि ह्यध्वरीयतामुपवक्ता जनानाम्। हव्या च मानुषाणाम्॥५॥

वेषि। हि। अध्वरिऽयताम्। उपऽवक्ता। जनानाम्। हव्या। च। मानुषाणाम्॥५॥

पदार्थः-**(वेषि)** व्याप्नोषि **(हि)** **(अध्वरीयताम्)** य आत्मनोऽध्वरमहिंसायज्ञं कर्त्तुमिच्छन्ति तेषाम् **(उपवक्ता)** उपदेशकानामुपदेशकः **(जनानाम्)** प्रसिद्धानाम् **(हव्या)** दातुमर्हाणि **(च)** **(मानुषाणाम्)** मानुषेषु भवानाम्॥५॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यतस्त्वमध्वरीयतां मानुषाणां जनानामुपवक्ता सन् हि हव्या च वेषि तस्मादुपदेशं कर्त्तुमर्हसि॥५॥

भावार्थः-य उपदेष्टारो धर्म्मोपदेशकाञ्जनयन्ति सुशिक्षितान् कृत्वोपदेशाय प्रेष्य मनुष्यान् बोधयन्ति ते हि जगत्कल्याणकारका भवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जिससे आप **(अध्वरीयताम्)** अपने को अहिंसारूप यज्ञ करने वाले **(मानुषाणाम्)** मनुष्यों में उत्पन्न **(जनानाम्)** प्रसिद्ध पुरुषों को **(उपवक्ता)** उपदेश देनेवालों के भी उपदेशक हुए **(हि)** ही **(हव्या)** देने योग्य वस्तुओं को **(च)** भी **(वेषि)** प्राप्त होते हो, इससे उपदेश करने के योग्य हो॥५॥

भावार्थः-जो उपदेश देनेवाले लोग धर्म्म के उपदेश देने वालों को उत्पन्न करते और उत्तम प्रकार शिक्षित और उपदेश देने के लिये प्रवृत्त करके मनुष्यों को बोध कराते हैं, वे ही संसार के कल्याण करनेवाले होते हैं॥५॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वेषीद्वस्य दूत्यं१ यस्य जुजोषो अध्वरम्। हव्यं मर्तस्य वोळ्हवे॥६॥

वेषि। इत्। ऊम् इति। अस्य। दूत्यम्। यस्य। जुजोषः। अध्वरम्। हव्यम्। मर्तस्य। वोळ्हवे॥६॥

पदार्थः-(**वेषि**) व्याप्नोषि (**इत्**) (**उ**) (**अस्य**) (**दूत्यम्**) दूतस्य कर्म (**यस्य**) (**जुजोषः**) सेवस्व (**अध्वरम्**) अहिंसनीयं व्यवहारम् (**हव्यम्**) आदातुमर्हम् (**मर्त्तस्य**) मनुष्यस्य (**वोळ्हवे**) वोढुम्॥६॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यस्त्वं यस्य मर्त्तस्य दूत्यं वेषि यस्य वोळ्हवे हव्यमध्वरमु जुजोषः स इद्धवानस्य दूतो भवितुमर्हति॥६॥

भावार्थः-हे राजानो! ये पूर्णविद्याः प्रगल्भा अनुरक्ता धार्मिका जनाः सन्ति ये राज्यस्य व्यवहारं वोढुं शक्नुवन्ति ताञ्छूरवीरान् सुहृदो दूतान् सम्पाद्य राज्यसमाचारान् विज्ञाय व्यवस्थां कुरुत॥६॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जो आप (**यस्य**) जिस (**मर्तस्य**) मनुष्य के (**दूत्यम्**) दूतसम्बन्धी कर्म्म को (**वेषि**) प्राप्त होते हो और जिसके (**वोळ्हवे**) प्राप्त होने के लिये (**हव्यम्**) ग्रहण करने योग्य (**अध्वरम्**) हिंसारहित व्यवहार का (**उ**) ही (**जुजोषः**) सेवन करो (**इत्**) वही आप (**अस्य**) इसके दूत होने के योग्य हैं॥६॥

भावार्थः-हे राजा लोगो! जो पूर्ण विद्यायुक्त बहुत बोलने वाले स्नेही और धार्मिक जन हैं और जो लोग राज्य के व्यवहार को धारण कर सकते हैं, उन शूरवीर मित्रों को समाचारप्रापक बना और राज्य के समाचारों को जान के विशेष प्रबन्ध करो॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्माकं जोष्यध्वरमस्माकं यज्ञमङ्गिरः। अस्माकं शृणुधी हवम्॥७॥

अस्माकम्। जोषि। अध्वरम्। अस्माकम्। यज्ञम्। अङ्गिरः। अस्माकम्। शृणुधि। हवम्॥७॥

पदार्थः-(**अस्माकम्**) (**जोषि**) सेवसे (**अध्वरम्**) न्यायव्यवहारम् (**अस्माकम्**) (**यज्ञम्**) विद्वत्सत्कारादिक्रियामयम् (**अङ्गिरः**) प्राण इव प्रिय (**अस्माकम्**) (**शृणुधि**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**हवम्**) शब्दार्थसम्बन्धविषयम्॥७॥

अन्वयः-हे अङ्गिरो राजन्! यतस्त्वमस्माकमध्वरमस्माकं यज्ञं जोषि तस्मादस्माकं हवं शृणुधि॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! यतो भवानस्माकं रक्षकः प्रियोऽसि तस्मादर्थिप्रत्यर्थिनां वचांसि श्रुत्वा सततं न्यायं विधेहि॥७॥

पदार्थः-हे (**अङ्गिरः**) प्राण के सदृश प्रिय राजन्! जिससे आप (**अस्माकम्**) हम लोगों के

(अध्वरम्) न्यायव्यवहार और **(अस्माकम्)** हम लोगों के **(यज्ञम्)** विद्वानों के सत्कार आदि क्रियामय व्यवहार को **(जोषि)** सेवन करते हो इससे **(अस्माकम्)** हम लोगों के **(हवम्)** शब्द अर्थ सम्बन्धरूप विषय को **(शृणुधि)** सुनिये॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! जिससे कि आप हम लोगों की रक्षा करनेवाले प्रिय हैं, इससे अर्थी अर्थात् मुद्दई और प्रत्यर्थी अर्थात् मुद्दायले के वचनों को सुन के निरन्तर न्याय विधान करो॥७॥

अथ प्रजाविषयमाह॥

अब प्रजा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

परि ते दूळभो रथोऽस्माँ अश्नोतु विश्वतः। येन रक्षसि दाशुषः॥८॥९॥

परि। ते। दुःऽदभः। रथः। अस्मान्। अश्नोतु। विश्वतः। येन। रक्षसि। दाशुषः॥८॥

पदार्थः-**(परि)** सर्वतः **(ते)** तव **(दूळभः)** दुःखेन हिंसितुं योग्यः **(रथः)** रमणीयं यानम् **(अस्मान्)** **(अश्नोतु)** प्राप्नोतु **(विश्वतः)** सर्वतः **(येन)** **(रक्षसि)** **(दाशुषः)** विद्यादिदानकर्तॄन्॥८॥

अन्वयः-हे राजंस्त्वं येन दाशुषः परिरक्षसि स ते दूळभो रथोऽस्मान् विश्वतोऽश्नोतु॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! यैस्साधनै राजसेनाङ्गैर्दृढैः प्रजायाः सर्वतो रक्षणं भवेत् तान्येवास्माभिरपि प्रापणीयानीति॥८॥

अथाग्निराजप्रजाविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति नवमं सूक्तं नवमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे राजन्! आप **(येन)** जिससे **(दाशुषः)** विद्या आदि के दान करने वालो की **(परि)** सब प्रकार **(रक्षसि)** रक्षा करते हो वह **(ते)** आप का **(दूळभः)** दुःख से नाश करने योग्य **(रथः)** सुन्दर वाहन **(अस्मान्)** हम लोगों को **(विश्वतः)** सब प्रकार **(अश्नोतु)** प्राप्त हो॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! जिन साधनों और दृढ़ राजसेना के अङ्गों से प्रजा का सब प्रकार रक्षण होवे, वे ही हम लोगों से भी प्राप्त करने योग्य हैं॥८॥

इस सूक्त में अग्नि, राजा, प्रजा और विद्वानों के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह नवम सूक्त और नवमा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथाष्टर्चस्य दशमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अग्निर्देवता। १ गायत्री। २, ३, ४, ७ भुरिग्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। ५, ८ स्वराडुष्णिक् छन्दः। ६ विराडुष्णिक्छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथाग्निशब्दार्थविषयकं विद्वद्विषयमाह॥

अब आठ ऋचावाले दशवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अग्निशब्दार्थविषयक विद्वद्विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अग्ने तमद्याश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रं हृदिस्पृशम्। ऋध्यामा त ओहैः॥ १॥

अग्ने। तम्। अद्य। अश्वम्। न। स्तोमैः। क्रतुम्। न। भद्रम्। हृदिऽस्पृशम्। ऋध्याम। ते। ओहैः॥ १॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! **(तम्)** **(अद्य)** **(अश्वम्)** **(न)** इव **(स्तोमैः)** प्रशंसनैः **(क्रतुम्)** प्रज्ञाम् **(न)** इव **(भद्रम्)** कल्याणकरम् **(हृदिस्पृशम्)** हृदयस्य प्रियम् **(ऋध्याम)** समृध्याम **(ते)** तव **(ओहैः)** अर्दकैः कर्मभिः॥ १॥

अन्वयः-हे अग्ने! वयमोहैः स्तोमैस्तेऽद्याश्वं न क्रतुं न यं हृदिस्पृशं भद्रमृध्याम तं त्वमस्मदर्थ-मृध्नुहि॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्या यथाऽश्वेन मार्गं गन्तुं सद्यः शक्नुवन्ति तथा भद्रां धियं प्राप्य मोक्षमार्गं शीघ्रं प्राप्तुमर्हन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! हम लोग **(ओहैः)** नम्रतायुक्त कर्मों और **(स्तोमैः)** प्रशंसाओं से **(ते)** आपके **(अद्य)** आज **(अश्वम्)** घोड़े के **(न)** सदृश और **(क्रतुम्)** बुद्धि के **(न)** सदृश जिस **(हृदिस्पृशम्)** हृदय को प्रिय और **(भद्रम्)** कल्याण करने वालों की **(ऋध्याम)** समृद्धि करें **(तम्)** उसकी आप हम लोगों के लिये समृद्धि करो॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्य जैसे घोड़े से मार्ग को शीघ्र जा सकते हैं, वैसे श्रेष्ठ बुद्धि को प्राप्त होकर मोक्षमार्ग को शीघ्र पाने के योग्य हैं॥ १॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अधा ह्यग्ने क्रतोर्भद्रस्य दक्षस्य साधोः। रथीर्ऋतस्य बृहतो बभूथ॥ २॥

अध। हि। अग्ने। क्रतोः। भद्रस्य। दक्षस्य। साधोः। रथीः। ऋतस्य। बृहतः। बभूथ॥ २॥

पदार्थः-**(अध)** आनन्तर्ये। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(हि)** यतः **(अग्ने)** पावकवत्प्रकाशमान राजन् **(क्रतोः)** प्रज्ञायाः **(भद्रस्य)** कल्याणकरस्य **(दक्षस्य)** बलस्य **(साधोः)** सन्मार्गस्थस्य **(रथीः)** बहवो रथा विद्यन्ते यस्य सः **(ऋतस्य)** सत्यस्य न्यायस्य **(बृहतः)** महतः **(बभूथ)** भव॥ २॥

अन्वयः-हे अग्ने! हि त्वं रथीः सन् भद्रस्य दक्षस्य क्रतोः साधोर्ऋतस्य बृहतो रक्षको बभूथाऽधाऽस्माकं राजा भव॥२॥

भावार्थः-राज्ञा सर्वेण बलेन विज्ञानेन साधूनां रक्षणं दुष्टानां ताडनं कृत्वा सत्यस्य न्यायस्योन्नतिः सततं विधेया॥२॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** राजन्! **(हि)** जिस कारण अग्नि के सदृश प्रकाशमान आप हैं, इससे **(रथीः)** बहुत वाहनों से युक्त होते हुए **(भद्रस्य)** कल्याणकर्त्ता तथा **(दक्षस्य)** बल **(क्रतोः)** बुद्धि और **(साधोः)** उत्तम मार्ग में वर्त्तमान **(ऋतस्य)** सत्य, न्याय और **(बृहतः)** बड़े व्यवहार के रक्षक **(बभूथ)** हूजिये **(अध)** इसके अनन्तर हम लोगों के राजा हूजिये॥२॥

भावार्थः-राजा को चाहिये कि सम्पूर्ण बल और विज्ञान से सज्जनों का रक्षण और दुष्ट पुरुषों का ताड़न करके सत्यन्याय की उन्नति निरन्तर करे॥२॥

अथ प्रजाविषयमाह॥

अब प्रजाविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एभिर्नो अर्कैर्भवा नो अर्वाङ् स्व१र्ण ज्योतिः।

अग्ने विश्वेभिः सुमना अनीकैः॥३॥

एभिः। नः। अर्कैः। भव। नः। अर्वाङ्। स्वः। न। ज्योतिः। अग्ने। विश्वेभिः। सुऽमनाः। अनीकैः॥३॥

पदार्थः-**(एभिः)** प्रज्ञाबलसाधुभिस्सहितैः **(नः)** अस्माकमुपरि **(अर्कैः)** सत्कर्त्तव्यैः **(भव)** अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(नः)** अस्मभ्यम् **(अर्वाङ्)** इतरस्मिन् व्यवहारे वर्त्तमानः **(स्वः)** सूर्य इव सुखकारी **(न)** इव **(ज्योतिः)** प्रकाशकः **(अग्ने)** **(विश्वेभिः)** समग्रैः **(सुमनाः)** कल्याणमनाः **(अनीकैः)** शत्रुभिर्दुष्टैर्दस्युभिर्नेतुमशक्यैः सैन्यैः॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमर्कैरेभिर्नो रक्षको भवाऽर्वाङ् स्वर्ण नो ज्योतिर्भव सुमनाः सन् विश्वेभिरनीकैः पालको भव॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये राजानो बलबुद्धिसज्जनान् सङ्गत्य संरक्ष्य वर्द्धयित्वा प्रजापालनं विदधति ते सूर्य्य इव प्रकाशितयशसः सदानन्दिता भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्विन्! आप **(अर्कैः)** सत्कार और **(एभिः)** बुद्धि, बल और साधुओं के सहित **(नः)** हम लोगों के लिये रक्षक **(भव)** हूजिये और **(अर्वाङ्)** अन्य व्यवहार में वर्त्तमान **(स्वः)** जैसे सूर्य्य के सदृश सुखकारी **(न)** वैसे **(नः)** हम लोगों के ऊपर **(ज्योतिः)** प्रकाशक हूजिये और **(सुमनाः)** कल्याणकारक मनयुक्त होते हुए **(विश्वेभिः)** सम्पूर्ण **(अनीकैः)** शत्रु और दुष्ट डाकुओं से ग्रहण करने को अशक्य सेनाओं से पालनकर्त्ता हूजिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजा लोग बल, बुद्धि और सज्जनों से संग उत्तम रक्षा कर और वृद्धि कराके प्रजा का पालन करते हैं, वे सूर्य्य के सदृश प्रकाशित यशयुक्त सदा आनन्दित होते हैं॥३॥

अथामात्यविषयमाह॥

अब अमात्यविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आभिष्टे॑ अ॒द्य गी॒र्भिर्गृ॒णन्तोऽग्ने॒ दाशे॑म। प्र ते॑ दि॒वो न स्त॑नयन्ति॒ शुष्मा॑:॥४॥

आ॒भिः। ते॒। अ॒द्य। गी॒ःऽभिः। गृ॒णन्त॑ः। अग्ने॑। दाशे॑म। प्र। ते॒। दि॒वः। न। स्त॒न॒य॒न्ति॒। शुष्मा॑ः॥४॥

पदार्थः-(**आभिः**) (**ते**) तुभ्यम् (**अद्य**) (**गीर्भिः**) प्रज्ञादिवर्धिकाभिर्वाग्भिः (**गृणन्तः**) स्तुवन्तः (**अग्ने**) विद्युदिव वर्त्तमान (**दाशेम**) दद्याम (**प्र**) (**ते**) तुभ्यम् (**दिवः**) विद्युतः (**न**) इव (**स्तनयन्ति**) ध्वनयन्ति (**शुष्माः**) बलपराक्रमयुक्ताः॥४॥

अन्वयः-हे अग्ने राजन्! वयमद्याभिर्गीर्भिस्ते गृणन्तः करं दाशेम यस्य ते दिवो न शुष्माः प्र स्तनयन्ति तस्मै तुभ्यं राज्यं दाशेम॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि भवान् विद्युत्तुल्यानमात्यान् रक्षित्वाऽस्मान् पालयेत् तर्हि वयं तव प्रजाः सन्तस्त्वामद्यारभ्य सततं प्रशंसेम पुष्कलमैश्वर्यं दद्याम॥४॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) बिजुली के सदृश वर्त्तमान राजन्! हम लोग (**अद्य**) आज शीघ्र (**आभिः**) इन (**गीर्भिः**) बुद्धि आदि की बढ़ाने वाली वाणियों से (**ते**) आपके लिये (**गृणन्तः**) स्तुति करते हुए कर धन (**दाशेम**) देवें जिन (**ते**) आपके लिये (**दिवः**) बिजुली के (**न**) सदृश (**शुष्माः**) बलपराक्रमयुक्त जन (**प्र, स्तनयन्ति**) शब्द करते हैं, उन आपके लिये राज्य देवें॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आप बिजुली के तुल्य मन्त्रियों की रक्षा करके हम लोगों की पालना करें तो हम लोग आपकी प्रजा हुए आज से लेकर आपकी निरन्तर प्रशंसा करें और बहुत धनादि सम्पत्ति देवें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तव॒ स्वादि॑ष्ठाग्ने॒ संदृ॑ष्टिरि॒दा चि॒दह्न॑ इ॒दा चि॑द॒क्तोः।

श्रि॒ये रु॒क्मो न रो॑चत उपा॒के॥५॥

तव॑। स्वादि॑ष्ठा। अग्ने॑। सम्ऽदृ॑ष्टिः। इ॒दा। चि॒त्। अह्न॑ः। इ॒दा। चि॒त्। अ॒क्तोः। श्रि॒ये। रु॒क्मः। न। रो॒च॒ते॒। उ॒पा॒के॥५॥

पदार्थः-(**तव**) (**स्वादिष्ठा**) अतिशयेन स्वादिता (**अग्ने**) सूर्य्य इव प्रकाशमान (**संदृष्टिः**) सम्यग्दृष्टिः प्रेक्षणं (**इदा**) एव (**चित्**) (**अह्नः**) दिवसस्य (**इदा**) एव (**चित्**) (**अक्तोः**) रात्रेर्मध्ये (**श्रिये**) लक्ष्मीप्राप्तये (**रुक्मः**) रोचमानः सूर्य्यः (**न**) इव (**रोचते**) प्रकाशते (**उपाके**) समीपे॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने राजन्! या स्वादिष्ठा संदृष्टिस्तवोपाक अह्नश्चिदक्तो रुक्मो न श्रिये रोचते सदा भवता रक्षणीया यश्चित्सर्वगुणसम्पन्नो राज्यं रक्षितुं शत्रुं निरोद्धुं शक्नुयात् स इदा भवता गुरुवदासेवनीयः॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! योऽहर्निशं सम्प्रेक्षकोऽन्यायविरोधको न्यायप्रवर्त्तको दूतोऽमात्यो वा भवेत् स एव तावत् सत्कृत्य रक्षणीयः॥५॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) सूर्य के सदृश प्रकाशमान राजन्! जो (**स्वादिष्ठा**) अत्यन्त स्वादुयुक्त मधुर (**संदृष्टिः**) अच्छी दृष्टि (**तव**) आपके (**उपाके**) समीप में (**अह्नः**) दिन (**चित्**) और (**अक्तोः**) रात्रि के मध्य में (**रुक्मः**) प्रकाशमान सूर्य्य के (**न**) सदृश (**श्रिये**) लक्ष्मी की प्राप्ति के लिये (**रोचते**) प्रकाशित होती है (**इदा**) वही आपको रक्षा करने योग्य है (**चित्**) और जो सम्पूर्ण गुणों से युक्त पुरुष राज्य की रक्षा कर सके और शत्रु को रोक सके (**इदा**) वही आपको गुरु के सदृश सेवा करने योग्य है॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! जो दिन रात्रि के प्रबन्ध देखने अन्याय का विरोध करने और न्याय की प्रवृत्ति करने वाला दूत वा मन्त्री होवे वही पहिले सत्कार करके रक्षा करने योग्य है॥५॥

पुनः प्रजाविषयमाह॥

फिर प्रजाविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

घृतं न पूतं तनूररेपाः शुचि हिरण्यम्। तत्ते रुक्मो न रोचत स्वधावः॥६॥

घृतम्। न। पूतम्। तनूः। अरेपाः। शुचि। हिरण्यम्। तत्। ते। रुक्मः। न। रोचत। स्वधाऽवः॥६॥

पदार्थः-(**घृतम्**) घृतमाज्यमुदकं वा (**न**) इव (**पूतम्**) पवित्रम् (**तनूः**) शरीरम् (**अरेपाः**) पापाचरणरहिताः (**शुचि**) पवित्रम् (**हिरण्यम्**) ज्योतिरिव सुवर्णम् (**तत्**) (**ते**) तव (**रुक्मः**) देदीप्यमानः (**न**) इव (**रोचत**) रोचन्ते (**स्वधावः**) स्वधा बह्वन्नं विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ॥६॥

अन्वयः-हे स्वधावो राजन्! येऽरेपास्ते राज्ये रुक्मो न रोचत यच्छुचि हिरण्यं प्रापयन्ति तत्प्राप्यैतैः सह तव तनूः पूतं घृतं न चिरजीविनी भवतु॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! ये सूर्य्य इव तेजस्विनो धनाढ्याः कुलीनाः पवित्राः प्रशंसिता निरपराधिनो वपुष्मन्तो विद्यावयोवृद्धाः स्युस्ते तव भवतो राज्यस्य च रक्षकाः सन्तु भवानेतेषां सम्मत्या वर्त्तित्वा दीर्घायुर्भवतु॥६॥

पदार्थः-हे (**स्वधावः**) बहुत अन्न से युक्त राजन्! जो (**अरेपाः**) पाप के आचरण से रहित (**ते**) आपके राज्य में (**रुक्मः**) अत्यन्त दिपते हुए के (**न**) सदृश (**रोचत**) शोभित होते हैं और जो (**शुचि**)

पवित्र **(हिरण्यम्)** ज्योति के सदृश सुवर्ण को प्राप्त कराते हैं **(तत्)** उसको प्राप्त होकर उनके साथ आपका **(तनूः)** देह **(पूतम्)** पवित्र **(घृतम्)** घृत वा जल के **(न)** सदृश और चिरञ्जीव हो॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! जो सूर्य्य के सदृश तेजस्वी, धनयुक्त, कुलीन, पवित्र, प्रशंसित, अपराधरहित, श्रेष्ठ शरीरयुक्त, विद्या और अवस्था में वृद्ध होवें, वे आपके और आपके राज्य के रक्षक हों और आप इन लोगों की सम्मति से वर्त्तमान होकर अधिक अवस्था युक्त हूजिये॥६॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कृतं चिद्धि ष्मा सनेमि द्वेषोऽग्ने इनोषि मर्तात्। इत्था यजमानादृतावः॥७॥

कृतम्। चित्। हि। स्म। सनेमि। द्वेषः। अग्ने। इनोषि। मर्तात्। इत्था। यजमानात्। ऋतऽवः॥७॥

पदार्थः-**(कृतम्)** निष्पादितम् **(चित्)** अपि **(हि)** **(स्म)** एव **(सनेमि)** सनातनम् **(द्वेषः)** द्वेष्टुः **(अग्ने)** **(इनोषि)** व्याप्नोषि **(मर्तात्)** मनुष्यात् **(इत्था)** अनेन प्रकारेण **(यजमानात्)** धर्म्येण सङ्गतात् **(ऋतावः)** ऋतं सत्यं विद्यते यस्मिंस्तत्सम्बुद्धौ॥७॥

अन्वयः-हे ऋतावोऽग्ने! यस्त्वं हि चिद् द्वेषो मर्तादित्था यजमानाद्वा सनेमि कृतमिनोषि स स्म एव राज्यं कर्त्तुमर्हसि॥७॥

भावार्थः-हे राजादयो मनुष्या भवन्तः शत्रुभ्यो मित्रेभ्यश्च शुभान् गुणान् गृहीत्वा सुखानि प्राप्नुवन्तु॥७॥

पदार्थः-हे **(ऋतावः)** सत्य से युक्त **(अग्ने)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान! जो आप **(हि)** ही **(चित्)**[२] निश्चित **(द्वेषः)** द्वेष करनेवाले **(मर्त्तात्)** मनुष्य से वा **(इत्था)** इस प्रकार **(यजमानात्)** धर्म से सङ्ग किये हुए जन से **(सनेमि)** अनादि सिद्ध और **(कृतम्)** उत्पन्न किये गये को **(इनोषि)** विशेषता से प्राप्त होते हैं **(स्म)** वही राज्य करने योग्य हैं॥७॥

भावार्थः-हे राजा आदि मनुष्यो! आप लोग शत्रु और मित्रों से उत्तम गुणों को ग्रहण करके सुखों को प्राप्त होइये॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शिवा नः सख्या सन्तु भ्रात्राग्ने देवेषु युष्मे।
सा नो नाभिः सदने सस्मिन्नूधन्॥८॥१०॥अनु० १॥

---

२. संस्कृत में 'चित्' का अर्थ 'अपि' दिया है, जबकि हिन्दी में 'निश्चित' किया है।

शिवा। नः। सख्या। सन्तु। भ्रात्रा। अग्ने। देवेषु। युष्मे इति। सा। नः। नाभिः। सदने। सस्मिन्। ऊधन्॥८॥

पदार्थः-(**शिवा**) मङ्गलकारिणी (**नः**) अस्माकम् (**सख्या**) मित्रेण (**सन्तु**) (**भ्रात्रा**) बन्धुनेव वर्त्तमानेन (**अग्ने**) पावकवत्पवित्राचरण (**देवेषु**) विद्वत्सु दिव्यगुणेषु वा (**युष्मे**) युष्मान् (**सा**) (**नः**) अस्माकम् (**नाभिः**) मध्याङ्गम् (**सदने**) सीदन्ति यस्मिँस्तस्मिन् राज्ये (**सस्मिन्**) सर्वस्मिन्। अत्र **छान्दसो वर्णलोपो वे**तिर्वलोपः (**ऊधन्**) आढ्ये धनाढ्ये॥८॥

अन्वयः-हे अग्ने! या ते नाभिरिव शिवा नीतिः सस्मिन्नूधन् सदने वर्त्तते सा नः देवेषु युष्मे प्रवर्त्तयतु। ये सख्या भ्रात्रा सह वर्त्तमाना इव नो रक्षकाः सन्तु तेषु त्वं विश्वसिहि॥८॥

भावार्थः-ये राजपुरुषा परस्मिन् मैत्रीं कृत्वा प्रजासु पितृवद्वर्त्तन्ते तैः सह यो राजनीतिं प्रचारयति स एव सर्वदा राज्यं भोक्तुमर्हतीति॥८॥

अत्राऽग्निराजाऽमात्यप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुर्थमण्डले दशमं सूक्तं प्रथमोऽनुवाकऽस्तृतीयेऽष्टके पञ्चमेऽध्याये दशमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश पवित्र आचरण युक्त जो आपके (**नाभिः**) मध्य अङ्ग के सदृश (**शिवा**) मङ्गलकारिणी नीति (**सस्मिन्**) समस्त (**ऊधन्**) श्रेष्ठ धनाढ्य में और (**सदने**) विराजें जिसमें उस राज्य में वर्त्तमान है (**सा**) वह (**नः**) हम लोगों के (**देवेषु**) विद्वानों वा उत्तम गुणों में (**युष्मे**) आप लोगों को प्रवृत्त करे। जो लोग (**सख्या**) मित्र और (**भ्रात्रा**) बन्धु के सदृश वर्त्तमान पुरुष के साथ वर्त्तमानों के तुल्य (**नः**) हम लोगों की रक्षा करनेवाले (**सन्तु**) हों, उनमें आप विश्वास करो॥८॥

भावार्थः-जो राजपुरुष परस्पर मित्रता करके प्रजाओं में पिता के सदृश वर्त्तमान हैं, उन लोगों के साथ जो राजनीति का प्रचार करता है, वही सर्वदा राज्य भोगने के योग्य है॥८॥

इस सूक्त में अग्नि, राजा, मन्त्री और प्रजा के कृत्यवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह चतुर्थ मण्डल में दशवां सूक्त प्रथम अनुवाक तृतीय अष्टक के पांचवें अध्याय में दशवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षड्चस्यैकादशस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अग्निर्देवता। १, २, ५, ६ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३ स्वराड्बृहती छन्दः। ऋषभः स्वरः। ४ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथाग्निसादृश्येन राजगुणानाह॥

अब अग्नि की सदृशता से राजगुणों को कहते हैं॥

भुद्रं ते॑ अग्ने सहसि॒न्ननी॑कमुपा॒क आ रो॑चते॒ सूर्य॑स्य।

रुश॑द् दृ॒शे द॑दृशे नक्त॒या चि॒दरू॑क्षितं दृ॒श आ रू॒पे अन्न॑म्॥ १॥

भ॒द्रम्। ते॒। अ॒ग्ने॒। स॒ह॒सि॒न्। अनी॑कम्। उ॒पा॒के। आ। रो॒च॒ते॒। सूर्य॑स्य। रुश॑त्। दृ॒शे। द॒दृ॒शे॒। न॒क्त॒ऽया। चि॒त्। अरू॑क्षितम्। दृ॒शे। आ। रू॒पे। अन्न॑म्॥ १॥

पदार्थः-(**भद्रम्**) कल्याणकरम् (**ते**) तव (**अग्ने**) पावकवद्वर्त्तमान (**सहसिन्**) बहुबलयुक्त (**अनीकम्**) सैन्यम् (**उपाके**) समीपे (**आ**) (**रोचते**) प्रकाशते (**सूर्य्यस्य**) (**रुशत्**) सुरूपम् (**दृशे**) द्रष्टुम् (**ददृशे**) दृश्यते (**नक्तया**) रात्र्या (**चित्**) अपि (**अरूक्षितम्**) रूक्षतारहितम् (**दृशे**) द्रष्टव्ये (**आ**) (**रूपे**) (**अन्नम्**) अत्तव्यम्॥१॥

अन्वयः-हे सहसिन्नग्ने! यस्य त उपाके भद्रं रुशदनीकं सूर्य्यस्य किरणा इवारोचते नक्तया रात्र्या सहितश्चन्द्र इव ददृशे चिदपि सुखं दृशेऽरूक्षितमन्नं दृशे रूप आ रोचते तस्य तव सर्वत्र विजय इति निश्चयः॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा सुशिक्षितया सेनया शुभैर्गुणैरैश्वर्य्येण च सहितः प्रजाः पालयति दुष्टान् दण्डयति स चन्द्रवत्सूर्य्य इव सर्वत्र प्रकाशितो भवति॥१॥

पदार्थः-हे (**सहसिन्**) बहुत बल से युक्त (**अग्ने**) अग्नि के सदृश वर्त्तमान! जिन (**ते**) आपके (**उपाके**) समीप में (**भद्रम्**) कल्याणकारक (**रुशत्**) उत्तम स्वरूपयुक्त (**अनीकम्**) सेना (**सूर्यस्य**) सूर्य के किरणों के सदृश (**आ, रोचते**) प्रकाशित होती है और (**नक्तया**) रात्रि के सहित चन्द्रमा के सदृश (**ददृशे**) दीखती (**चित्**) और सुख (**दृशे**) देखने के (**अरूक्षितम्**) रुखेपन से रहित (**अन्नम्**) भोजन करने योग्य पदार्थ (**दृशे**) देखने के योग्य (**रूपे**) रूप में (**आ**) प्रकाशित होता है, उन आप का सर्वत्र विजय हो यह निश्चय है॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा उत्तम प्रकार शिक्षित सेना [तथा] उत्तम गुणों और ऐश्वर्य के सहित प्रजाओं का पालन करता और दुष्टों को पीड़ा देता है, वह चन्द्र और सूर्य के सदृश सर्वत्र प्रकाशित होता है॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वि षाह्यग्ने गृणते मनीषां खं वेपसा तुविजात स्तवानः।

विश्वेभिर्यद्वावनः शुक्र देवैस्तन्नो रास्व सुमहो भूरि मन्म॥ २॥

वि। साहि। अग्ने। गृणते। मनीषाम्। खम्। वेपसा। तुविऽजात। स्तवानः। विश्वेभिः। यत्। वावनः। शुक्र। देवैः। तत्। नः। रास्व। सुऽमहः। भूरि। मन्म॥ २॥

पदार्थः-(**वि**) विशेषेण (**साहि**) कर्मसमाप्तिं कुरु (**अग्ने**) पावकवद्विद्यया प्रकाशित (**गृणते**) स्तुवते (**मनीषाम्**) मनस ईषिणीं प्रज्ञाम् (**खम्**) आकाशम् (**वेपसा**) राज्यपालनादिकर्मणा। **वेपस इति कर्मनामसु पठितम्।** (निघं०२.१) (**तुविजात**) बहुषु प्रसिद्ध (**स्तवानः**) स्तावकः सन् (**विश्वेभिः**) सर्वैः (**यत्**) (**वावनः**) सम्भज (**शुक्र**) आशुकर (**देवैः**) विद्वद्भिः (**तत्**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**रास्व**) देहि (**सुमहः**) अतिमहत् (**भूरि**) बहु (**मन्म**) विज्ञानम्॥ २॥

अन्वयः-हे तुविजाताग्ने! स्तवानस्त्वं वेपसा मनीषां खं गृणते वि साहि। हे शुक्र! विश्वेभिर्देवैस्सह त्वं यद्वावनस्तत्सुमहो भूरि मन्म नो रास्व॥ २॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वं जितेन्द्रियो भूत्वा प्रज्ञां प्राप्य कर्मणारब्धकार्य्यं समाप्तं कुरु। सर्वैर्विद्वद्भिस्सहितः पूर्णविज्ञानं प्रजाभ्यः सुखं प्रयच्छ॥ २॥

पदार्थः-हे (**तुविजात**) बहुतों में प्रसिद्ध (**अग्ने**) अग्नि के सदृश विद्या से प्रकाशित! (**स्तवानः**) स्तुति करनेवाले हुए आप (**वेपसा**) राज्य के पालन आदि कर्म से (**मनीषाम्**) मन की नियामक बुद्धि और (**खम्**) आकाश की (**गृणते**) स्तुति करने वाले के लिये (**वि**) विशेष करके (**साहि**) कर्मों की समाप्ति करो। हे (**शुक्र**) शीघ्रता करनेवाले! (**विश्वेभिः**) सम्पूर्ण (**देवैः**) विद्वानों के साथ आप (**यत्**) जिसे (**वावनः**) उत्तम प्रकार भजो सेवो (**तत्**) उस (**सुमहः**) बहुत बड़े और (**भूरि**) बहुत (**मन्म**) विज्ञान को (**नः**) हम लोगों के लिये (**रास्व**) दीजिये॥ २॥

भावार्थः-हे राजन्! आप जितेन्द्रिय हो और बुद्धि को प्राप्त होकर कर्म से प्रारम्भ किये हुए कार्य्य को समाप्त करो और सम्पूर्ण विद्वानों के सहित पूर्ण विज्ञान और प्रजाओं के लिये सुख दीजिये॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वदग्ने काव्या त्वन्मनीषास्त्वदुक्था जायन्ते राध्यानि।

त्वदेति द्रविणं वीरपेशा इत्थाधिये दाशुषे मर्त्याय॥ ३॥

त्वत्। अग्ने। काव्या। त्वत्। मनीषाः। त्वत्। उक्था। जायन्ते। राध्यानि। त्वत्। एति। द्रविणम्। वीरऽपेशाः। इत्थाऽधिये। दाशुषे। मर्त्याय॥ ३॥

पदार्थः-(**त्वत्**) तव सकाशात् (**अग्ने**) विद्वन् (**काव्या**) कविभिर्विद्वद्भिर्निर्मितानि (**त्वत्**) (**मनीषाः**) प्रमाः (**त्वत्**) (**उक्था**) प्रशंसनीयानि (**जायन्ते**) (**राध्यानि**) संसाधनीयानि (**त्वत्**) (**एति**) प्राप्नोति (**द्रविणम्**) (**वीरपेशाः**) वीराणां पेशो रूपमिव रूपं येषान्ते (**इत्थाधिये**) अनेकप्रकारेण धीर्यस्य तस्मै (**दाशुषे**) दात्रे (**मर्त्याय**) मनुष्याय॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! वीरपेशा वयमित्थाधिये दाशुषे मर्त्याय त्वत् काव्या त्वन्मनीषास्त्वदुक्था राध्यानि जायन्ते त्वद् द्रविणमेति तस्मात् त्वां वयं भजेम॥३॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि त्वं विद्वाञ्जितेन्द्रियो न्यायकारी भवेस्तर्हि त्वदनुकरणेन सर्वे मनुष्याः सत्याचारे प्रवर्त्यैश्वर्य्यं प्राप्य सर्वस्याः प्रजाया हितं साद्धुं शक्नुयुः॥३॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वन्! आप (**वीरपेशाः**) वीर पुरुषों के रूप के सदृश रूपवाले हम लोग (**इत्थाधिये**) इस प्रकार (**त्वत्**) आपके समीप से बुद्धि युक्त (**दाशुषे**) देनेवाले (**मर्त्याय**) मनुष्य के लिये (**काव्या**) कवि विद्वानों के निर्मित किये काव्य (**त्वत्**) आपके समीप से (**मनीषाः**) यथार्थज्ञान (**त्वत्**) आपके समीप से (**उक्था**) प्रशंसा करने (**राध्यानि**) और सिद्ध करने योग्य द्रव्य (**जायन्ते**) प्रसिद्ध होते हैं (**त्वत्**) आपके समीप से (**द्रविणम्**) धन (**एति**) प्राप्त होता है, इससे हम लोग आपकी सेवा करें॥३॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आप विद्वान्, जितेन्द्रिय और न्यायकारी होवें तो आपके अनुकरण से सम्पूर्ण मनुष्य सत्य आचरण में प्रवृत्त हो और ऐश्वर्य्य को प्राप्त होकर सम्पूर्ण प्रजा का हित साध सकें॥३॥

अथाग्निसम्बन्धेन विद्वद्गुणानाह॥

अब अग्निसम्बन्ध से विद्वानों के गुणों को कहते हैं॥

त्वद्वाजी वाजंभरो विहाया अभिष्टिकृज्जायते सत्यशुष्मः।

त्वद्रयिर्देवजूतो मयोभुस्त्वदाशुर्जूजुवाँ अग्ने अर्वा॥४॥

त्वत्। वाजी। वाजम्ऽभरः। विऽहायाः। अभिष्टिऽकृत्। जायते। सत्यऽशुष्मः। त्वत्। रयिः। देवऽजूतः। मयःऽभुः। त्वत्। आशुः। जूजुऽवान्। अग्ने। अर्वा॥४॥

पदार्थः-(**त्वत्**) तव सकाशात् (**वाजी**) वेगवान् (**वाजंभरः**) प्राप्तं बहुभारं धरति सः (**विहायाः**) विजिहीते सद्यो गच्छति येन सः (**अभिष्टिकृत्**) योऽभिष्टिं करोति सः (**जायते**) (**सत्यशुष्मः**) सत्यं शुष्मं बलं यस्मिन्त्सः (**त्वत्**) (**रयिः**) धनम् (**देवजूतः**) देवैर्विदितश्चलितः (**मयोभुः**) सुखम्भावुकः (**त्वत्**) (**आशुः**) शीघ्रं गन्ता (**जूजुवान्**) भृशं गमयिता (**अग्ने**) विद्वन् (**अर्वा**) यः सद्य ऋच्छति गच्छति सः॥४॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्त्वत्प्रेरितो विहाया वाजंभरः सत्यशुष्मोऽभिष्टिकृद् वाजी जायते यस्त्वद्रयिर्देवजूतो मयोभुर्यस्त्वज्जूजुवानर्वाऽऽशुर्जायते सोऽस्माभिरप्युत्पादनीयः॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यदि युष्माकं पुरुषार्थाद्विद्युदादिस्वरूपोऽग्निर्विद्यया प्रसिद्धो भवेत्तर्हि बहुभारयानहर्त्ता सुखहेतुर्धनजनकः सद्यो गमयिता जायेत॥४॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! जो **(त्वत्)** आपके समीप से प्रेरणा किया गया **(विहायाः)** जिससे वह बड़ा और शीघ्र जाता है इससे **(वाजंभरः)** प्राप्त हुए बहुत भार को धारण करने वाला **(सत्यशुष्मः)** सत्यबलयुक्त **(अभिष्टिकृत्)** अपेक्षितकर्म का कर्त्ता **(वाजी)** वेगवान् और **(जायते)** होता है वा जो **(त्वत्)** आपके समीप से **(रयिः)** धन **(देवजूतः)** विद्वानों ने जाना और चलाया हुआ **(मयोभुः)** सुख की भावना कराने वाला वा जो **(त्वत्)** आपके समीप से **(जूजुवान्)** शीघ्र प्राप्त कराने और **(अर्वा)** शीघ्र जानेवाला **(आशुः)** शीघ्रगामी **(जायते)** होता है, वह हम लोगों को भी उत्पन्न करने योग्य है॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो आप लोगों के पुरुषार्थ से बिजुली आदि स्वरूप अग्निविद्या से प्रसिद्ध होवे तो बहुत भारवाले वाहन का पहुंचानेवाला सुख का हेतु और धन उत्पन्न कराने वा शीघ्र ले चलने वाला होवे॥४॥

पुनरग्निविषयमाह॥

फिर अग्नि के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वाम॑ग्ने प्रथ॒मं दे॑व॒यन्तो॑ दे॒वं मर्ता॑ अमृत म॒न्द्रजि॑ह्वम्।

द्वे॒षो॒यु॒त॒मा वि॑वासन्ति धी॒भिर्दमू॑नसं गृ॒हप॑तिम॒मूर॑म्॥५॥

त्वाम्। अ॒ग्ने॒। प्र॒थ॒मम्। दे॒व॒ऽयन्तः॑। दे॒वम्। मर्ताः॑। अ॒मृ॒त॒। म॒न्द्रऽजि॑ह्वम्। द्वे॒षः॒ऽयु॒त॑म्। आ। वि॒वा॒स॒न्ति॒। धी॒भिः॑। दमू॑ऽनसम्। गृ॒हऽप॑तिम्। अ॒मूर॑म्॥५॥

पदार्थः-**(त्वाम्)** **(अग्ने)** परमविद्वन् **(प्रथमम्)** आदिमम् **(देवयन्तः)** कामयमानाः **(देवम्)** कमनीयम् **(मर्त्ताः)** मनुष्याः **(अमृत)** स्वात्मस्वरूपेण नाशरहित **(मन्द्रजिह्वम्)** मन्द्रा आनन्दजनिका जिह्वा वाणी यस्य **(द्वेषोयुतम्)** द्वेषादिभी रहितम् **(आ)** **(विवासन्ति)** परिचरन्ति **(धीभिः)** कर्मभिः प्रज्ञाभिर्वा **(दमूनसम्)** दमनशीलम् **(गृहपतिम्)** गृहस्वामिनम् **(अमूरम्)** मूढतादिदोषरहितं विद्वांसम्॥५॥

अन्वयः-हे अमृताग्ने! ये धीभिर्मन्द्रजिह्वं द्वेषोयुतं दमूनसममूरं प्रथमं देवं गृहपतिं त्वां देवयन्तो मर्त्ता आविवासन्ति तांस्त्वमपि सेवस्व॥५॥

भावार्थः-ये विद्वांसो भूत्वा गृहस्थान् बोधयित्वा सर्वेषां सन्तानान् ब्रह्मचर्येण सुशिक्षां विद्यां ग्राहयित्वाऽविद्यादिदोषान् निवार्य्य शमादिशुभगुणान्वितान् कुर्वन्ति त एवात्र कमनीया भवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे **(अमृत)** अपने आत्मस्वरूप से नाशरहित **(अग्ने)** अत्यन्त विद्वान्! जो लोग **(धीभिः)** कर्मों वा बुद्धियों से **(मन्द्रजिह्वम्)** आनन्द उत्पन्न करने वाली वाणीयुक्त **(द्वेषोयुतम्)** द्वेष आदि कर्मवियुक्त **(दमूनसम्)** इन्द्रियों को रोकने वाले **(अमूरम्)** मूर्खता आदि दोषरहित विद्वान् **(प्रथमम्)** आदिम **(देवम्)** सुन्दर **(गृहपतिम्)** गृह के स्वामी **(त्वाम्)** आपकी **(देवयन्तः)** कामना करते हुए

(मर्त्ताः) मनुष्य **(आ, विवासन्ति)** सेवा करते हैं, उनकी आप भी सेवा करो॥५॥

भावार्थः-जो लोग विद्वान् होकर गृहस्थों को बोध [करा के], सब के सन्तानों को ब्रह्मचर्य्य से उत्तम शिक्षा और विद्या ग्रहण करा के तथा अविद्या आदि दोषों को दूर करके शम, दम आदि उत्तम गुणों से युक्त करते हैं, वे ही इस संसार में सुन्दर होते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आरे अस्मदमतिमारे अंह आरे विश्वां दुर्मतिं यन्निपासि।
दोषा शिवः सहसः सूनो अग्ने यं देव आ चित्सचसे स्वस्ति॥६॥११॥

आरे। अस्मत्। अमतिम्। आरे। अंहः। आरे। विश्वाम्। दुःऽमतिम्। यत्। निऽपासि। दोषा। शिवः। सहसः। सूनो इति। अग्ने। यम्। देवः। आ। चित्। सचसे। स्वस्ति॥६॥

पदार्थः-**(आरे)** दूरे **(अस्मत्)** **(अमतिम्)** **(आरे)** **(अंहः)** पापात्मकं कर्म **(आरे)** **(विश्वाम्)** समग्राम् **(दुर्म्मतिम्)** दुष्टां प्रज्ञाम् **(यत्)** यतः **(निपासि)** नितरां रक्षसि **(दोषा)** रात्रौ **(शिवः)** मङ्गलकारी **(सहसः)** बलवतः **(सूनो)** अपत्य **(अग्ने)** परमविद्वन् **(यम्)** **(देवः)** जगदीश्वर इव **(आ)** **(चित्)** अपि **(सचसे)** सम्बध्नासि **(स्वस्ति)** सुखम्॥६॥

अन्वयः-हे सहसः सूनोऽग्ने! यत्त्वं देव इवाऽस्मदारे अमतिमारे अंह आरे विश्वां दुर्मतिं निक्षिप्य यं निपासि तं शिवः सन् दोषा दिवसे चित्स्वस्ति आ सचसे तस्मादस्माभिः पूज्योऽसि॥६॥

भावार्थः-इदं वयं निश्चिनुमो येऽस्मान् दुष्टाचारादधर्मसङ्गाद् दुर्बुद्धेर्दूरेकुर्वन्ति त एवाऽहर्निशमस्माभिः सत्कर्त्तव्याः सन्तीति॥६॥

अत्राग्निराजविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या।

इत्येकादशं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(सहसः)** बलवान् के **(सूनो)** सन्तान और **(अग्ने)** अत्यन्त विद्वान् **(यत्)** जिससे आप **(देवः)** ईश्वर के सदृश **(अस्मत्)** हम लोगों से **(आरे)** दूर **(अमतिम्)** मूर्खपन को **(आरे)** दूर **(अंहः)** पापकर्म को और **(आरे)** दूर **(विश्वाम्)** समग्र **(दुर्मतिम्)** दुष्ट बुद्धि को निरन्तर अलग करा **(यम्)** जिसकी **(निपासि)** अत्यन्त रक्षा करते हो उसको **(शिवः)** मङ्गलकारी हुए **(दोषा)** रात्रि और दिन में **(चित्)** भी **(स्वस्ति)** सुख को **(आ, सचसे)** सम्बन्ध कराते हो, इससे हम लोगों से पूजा करने योग्य

हो॥६॥

भावार्थः-यह हम लोग निश्चय करते हैं कि जो लोग हम लोगों को अधर्मी और दुष्ट बुद्धिवाले पुरुष से दूर करते हैं, वे ही दिन-रात्रि हम लोगों से सत्कार करने योग्य हैं॥६॥

इस सूक्त में अग्नि, राजा, विद्वान् पुरुष के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह ग्यारहवां सूक्त और ग्यारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षड्चस्य द्वादशस्य [सूक्तस्य] वामदेव ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ५ निचृत्त्रिष्टुप्। २ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३, ४ भुरिक् पङ्क्तिः। ६ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

पुनरग्निसादृश्येन विद्वद्गुणानाह॥

अब छः ऋचावाले बारहवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर अग्निसादृश्य होने से विद्वानों के विषय को कहते हैं॥

यस्त्वामग्न इनधते यतस्रुक् त्रिस्ते अन्नं कृणवत्सस्मिन्नहन्।

स सु द्युम्नैरभ्यस्तु प्रसक्षत्तव क्रत्वा जातवेदश्चिकित्वान्॥१॥

यः। त्वाम्। अग्ने। इनधते। यतऽस्रुक्। त्रिः। ते। अन्नम्। कृणवत्। सस्मिन्। अहन्। सः। सु। द्युम्नैः। अभि। अस्तु। प्रऽसक्षत्। तव। क्रत्वा। जातऽवेदः। चिकित्वान्॥१॥

पदार्थः-(**यः**) (**त्वाम्**) (**अग्ने**) विद्वन्! (**इनधते**) ईश्वरेण सङ्गमयेत् (**यतस्रुक्**) यता उद्यता स्रुचो येन सः (**त्रिः**) त्रिवारम् (**ते**) तुभ्यम् (**अन्नम्**) (**कृणवत्**) कुर्य्यात् (**सस्मिन्**) सर्वस्मिन् (**अहन्**) अहनि दिवसे (**सः**) (**सु**) (**द्युम्नैः**) यशोभिर्धनैर्वा (**अभि**) (**अस्तु**) (**प्रसक्षत्**) प्रसङ्गं कुर्य्यात् (**तव**) (**क्रत्वा**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**जातवेदः**) जातप्रज्ञान (**चिकित्वान्**) सत्यार्थविज्ञापकः॥१॥

अन्वयः-हे अग्ने! यतःस्रुक् सस्मिन्नहँस्त्वामिनधते तेऽन्नं कृणवत्। हे जातवेदो! यस्तव क्रत्वा चिकित्वान्त्सन्नभि प्रसक्षत् स सुद्युम्नैस्त्रिर्युक्तोऽस्तु॥१॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! ये तुभ्यमीश्वरज्ञानमहाविहारविद्यां शोभनां मतिं सर्वदा प्रयच्छन्ति ते कीर्त्तिधनयुक्ताः कर्त्तव्याः॥१॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वन्! (**यतःस्रुक्**) उद्यत किये हैं हवन करने के पात्र विशेषरूप स्रुवा जिसने ऐसा पुरुष (**सस्मिन्**) सब में (**अहन्**) दिन में (**त्वाम्**) आपको (**इनधते**) ईश्वर से मिलावे और (**ते**) आपके लिये (**अन्नम्**) भोजन के पदार्थ को (**कृणवत्**) सिद्ध करे और हे (**जातवेदः**) श्रेष्ठ ज्ञानयुक्त (**यः**) जो (**तव**) आपकी (**क्रत्वा**) बुद्धि वा कर्म से (**चिकित्वान्**) सत्य अर्थ का जानने वाला होता हुआ (**अभि, प्रसक्षत्**) प्रसङ्ग को करे (**सः**) वह (**सु, द्युम्नैः**) उत्तम यशों वा धनों से (**त्रिः**) तीन वार युक्त (**अस्तु**) हो॥१॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जो लोग आपके लिये ईश्वरज्ञान, बड़े विहार की विद्या और उत्तमबुद्धि को सब काल में देते हैं, वे यश और धन से युक्त करने चाहिये॥१॥

पुनरग्निसादृश्येन राजगुणानाह॥

फिर अग्नि के सादृश्य से राजगुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इध्मं यस्ते जभरच्छश्रमाणो महो अग्ने अनीकमा सपर्यन्।

स इंधानः प्रति दोषामुषासं पुष्यन् रयिं सचते घ्नन्नमित्रान्॥२॥

इध्मम्। यः। ते। जभरत्। शश्रमाणः। महः। अग्ने। अनीकम्। आ। सपर्यन्। सः। इधानः। प्रति। दोषाम्। उषसम्। पुष्यन्। रयिम्। सचते। घ्नन्। अमित्रान्॥२॥

पदार्थः-(**इध्मम्**) देदीप्यमानम् (**यः**) (**ते**) तव (**जभरत्**) यथावद्धरेत् पोषयेत्पुष्येत् (**शश्रमाणः**) भृशं श्रमं कुर्वन् (**महः**) महत् (**अग्ने**) राजन् (**अनीकम्**) विजयमानं सैन्यम् (**आ**) समन्तात् (**सपर्य्यन्**) सेवमानः (**सः**) (**इधानः**) प्रकाशमानः (**प्रति**) (**दोषाम्**) रात्रिम् (**उषासम्**) दिनम् (**पुष्यन्**) (**रयिम्**) राज्यश्रियम् (**सचते**) प्राप्नोति (**घ्नन्**) विनाशयन् (**अमित्रान्**) धर्मद्वेषिणः शत्रून्॥२॥

अन्वयः-हे अग्ने! यः शश्रमाणो बलाध्यक्षस्ते मह इध्ममनीकमासपर्य्यञ्जभरत् स इधानः प्रतिदोषामुषासं प्रति पुष्यन्नमित्रान् घ्नन् रयिं सचते॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! ये तव बलाध्यक्षा न्यायाधीशा विद्याविनयधर्मादिभिः प्रकाशमानाः स्वप्रजाः पालयन्तो दुष्टाञ्छत्रून् घ्नन्तो विजयन्ते तेभ्यो भवता पुष्कलां प्रतिष्ठां बहुधनं च दत्वाहर्निशं धर्मार्थकाममोक्षोन्नतिर्विधेया॥२॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) राजन्! (**यः**) जो (**शश्रमाणः**) अत्यन्त परिश्रम करता हुआ सेना का स्वामी (**ते**) आपकी (**महः**) बड़ी (**इध्मम्**) प्रकाशयुक्त (**अनीकम्**) विजय को प्राप्त होती हुई सेना की (**आ**) सब प्रकार (**सपर्य्यन्**) सेवा करता हुआ (**जभरत्**) यथावत् हरे पोषे पुष्ट हो अर्थात् शत्रु बल हरे और आप पुष्ट हो (**सः**) वह (**इधानः**) प्रकाशमान होता (**प्रति, दोषाम्**) प्रत्येक रात्रि और (**उषासम्**) प्रत्येक दिन (**पुष्यन्**) पुष्टि पाता (**अमित्रान्**) और धर्म से द्वेष करने वाले शत्रुओं का (**घ्नन्**) नाश करता हुआ (**रयिम्**) राज्यलक्ष्मी को (**सचते**) प्राप्त होता है॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आपके सेनाध्यक्ष और न्यायाधीश विद्या विनय और धर्म आदि से प्रकाशमान हुए अपनी प्रजाओं का पालन करते और दुष्ट शत्रुओं का नाश करते हुए विजय को प्राप्त होते हैं, उनके लिये आपको चाहिये कि बहुत प्रतिष्ठा और बहुत धन देकर दिन-रात्रि धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की उन्नति करें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अग्निरीशे बृहतः क्षत्रियस्याग्निर्वाजस्य परमस्य रायः।
दधाति रत्नं विधते यविष्ठो व्यानुषङ् मर्त्याय स्वधावान्॥३॥

अग्निः। ईशे। बृहतः। क्षत्रियस्य। अग्निः। वाजस्य। परमस्य। रायः। दधाति। रत्नम्। विधते। यविष्ठः। वि। आनुषक्। मर्त्याय। स्वधाऽवान्॥३॥

पदार्थः-(**अग्निः**) पावक इव (**ईशे**) ईष्टे ऐश्वर्य्यं करोति (**बृहतः**) महतः (**क्षत्रियस्य**) क्षात्रधर्मयुक्तस्य (**अग्निः**) विद्युदिव वर्त्तमानः (**वाजस्य**) वेगस्य विज्ञानस्य वा (**परमस्य**) अत्युत्तमस्य (**रायः**) धनादेर्मध्ये (**दधाति**) (**रत्नम्**) रमणीयं धनम् (**विधते**) विधानं कुर्वते (**यविष्ठः**) अतिशयेन युवा शरीरात्मबलयुक्तः (**वि**) (**आनुषक्**) अनुकूलः (**मर्त्याय**) मरणधर्माय (**स्वधावान्**) बह्वन्नादियुक्तः॥३॥

अन्वयः-हे राजप्रजाजना! योऽग्निरिव क्षत्रियस्य बृहतो वाजस्य परमस्य राय ईशे यविष्ठः स्वधावानानुषग् विधते मर्त्यायाग्निरिव रत्नं विदधाति स सर्वैः सत्कर्त्तव्यः॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सूर्य्यवद्विद्युदिव राज्यैश्वर्य्यस्योन्नतिं कुर्वाणाः कीर्तिं प्रसारयन्ति ते सर्वतः सर्वथा सत्कारमाप्नुवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे राजा और प्रजाजनो! जो (**अग्निः**) अग्नि के सदृश जन (**क्षत्रियस्य**) क्षात्रधर्मयुक्त (**बृहतः**) बड़े (**वाजस्य**) वेग विज्ञान और (**परमस्य**) अत्यन्त श्रेष्ठ (**रायः**) धन आदि के मध्य में (**ईशे**) ऐश्वर्य्य करता है तथा (**यविष्ठः**) अत्यन्त युवा अर्थात् शरीर और आत्मा के बल से और (**स्वधावान्**) बहुत अन्न आदि से युक्त (**आनुषक्**) अनुकूल हुआ (**विधते**) विधान करते हुए (**मर्त्याय**) मरण धर्मवाले मनुष्य के लिये (**अग्निः**) बिजुली के समान वर्त्तमान (**रत्नम्**) रमण करने योग्य धन को (**वि, दधाति**) विधान करता है, वह सब लोगों से सत्कार करने योग्य है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य सूर्य्य और बिजुली के सदृश राज्य और ऐश्वर्य्य की उन्नति करते हुए यश को विस्तारते हैं, वे सब से सब प्रकार सत्कार को प्राप्त होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यच्चिद्धि ते॑ पुरुष॒त्रा य॑विष्ठाचि॑त्तिभिश्चकृ॒मा कच्चि॒दाग॑ः।

कृ॒धी ष्व१॒॑स्माँ अदि॑ते॒रना॑गा॒न् व्येनां॑सि शिश्रथो॒ विष्व॑गग्ने॥४॥

यत्। चि॒त्। हि। ते॒। पु॒रु॒ष॒ऽत्रा। य॒वि॒ष्ठ॒। अचि॑त्तिऽभिः। च॒कृ॒म। कत्। चि॒त्। आगः॑। कृ॒धि। सु। अ॒स्मान्। अदि॑तेः। अना॑गान्। वि। एनां॑सि। शि॒श्र॒थः॒। विष्व॑क्। अ॒ग्ने॒॥४॥

पदार्थः-(**यत्**) (**चित्**) अपि (**हि**) खलु (**ते**) तव (**पुरुषत्रा**) पुरुषेषु (**यविष्ठ**) अतिशयेन प्राप्तयौवन (**अचित्तिभिः**) अचेतनाभिः (**चकृम**) कुर्य्याम। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**कत्**) कदा (**चित्**) (**आगः**) अपराधम् (**कृधि**) कुरु (**सु**) (**अस्मान्**) (**अदितेः**) पृथिव्याः (**अनागान्**) अनपराधान् (**वि**) (**एनांसि**) पापानि (**शिश्रथः**) शिथिलीकुरु वियोजय (**विष्वक्**) सर्वतः (**अग्ने**) विद्याविनयप्रकाशित राजन्॥४॥

अन्वयः-हे यविष्ठाग्ने! यद् ये वयमचित्तिभिस्ते पुरुषत्रा चिदागश्चकृम तानस्मान् कच्चिदनागान् कृधि। यानि यान्यस्मदेनांसि जायेरँस्तानि तानि चिद्धि विष्वग्विशिश्रथोऽदितेः सु राष्ट्रं कृधि॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि कदाचिदज्ञानेन प्रमादेन वा वयमपराधं कुर्य्याम तानपि दण्डेन विना मा क्षमस्व। अस्मान् सुशिक्षया धार्मिकान् कृत्वा पृथिव्या राज्याधिकारिणः कुर्य्याः॥४॥

पदार्थः-हे **(यविष्ठ)** अत्यन्त यौवनावस्था को प्राप्त **(अग्ने)** विद्या और विनय से प्रकाशित राजन्! **(यत्)** जो हम लोग **(अचित्तिभिः)** चेतनाभिन्नों से **(ते)** आपके **(पुरुषत्रा)** पुरुषों में **(चित्)** कुछ **(आगः)** अपराध को **(चकृम)** करें उन **(अस्मान्)** हम लोगों को **(कत्, चित्)** कभी **(अनागान्)** अपराध से रहित **(कृधि)** कीजिये जो-जो हम लोगों से **(एनांसि)** पाप होवें, उन-उन को भी **(हि)** निश्चय से **(विष्वक्)** सब प्रकार **(वि, शिश्रथः)** शिथिल वा उनका वियोग करो और **(अदितेः)** पृथिवी के **(सु)** उत्तम राज्य को करो॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! जो कदाचित् अज्ञान वा प्रमाद से हम लोग अपराध करें, उनको भी दण्ड के विना क्षमा न कीजिये और हम लोगों को उत्तम शिक्षा से धार्मिक करके पृथिवी के राज्य के अधिकारी करिये॥४॥

पुनर्विद्वद्गुणानाह॥

फिर विद्वानों के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

म॒हश्चि॒दग्न॒ एन॑सो अ॒भीक॑ ऊ॒र्वाद्दे॒वाना॑मु॒त मर्त्या॑नाम्।

मा ते॒ सखा॑यः॒ सद॒मिद्रि॑षाम॒ यच्छा॑ तो॒काय॒ तन॑याय॒ शं योः॥५॥

म॒हः। चि॒त्। अ॒ग्ने॒। एन॑सः। अ॒भीके॑। ऊ॒र्वात्। दे॒वाना॑म्। उ॒त। मर्त्या॑नाम्। मा। ते॒। सखा॑यः। सद॑म्। इत्। रि॒षा॒म॒। यच्छ॑। तो॒काय॑। तन॑याय। शम्। योः॥५॥

पदार्थः-**(महः)** महतः **(चित्)** **(अग्ने)** विद्वन् **(एनसः)** अपराधस्य **(अभीके)** समीपे **(ऊर्वात्)** विस्तीर्णात् **(देवानाम्)** विदुषाम् **(उत)** अपि **(मर्त्यानाम्)** अविदुषाम् **(मा)** **(ते)** तव **(सखायः)** सुहृदः **(सदम्)** स्थानम् **(इत्)** **(रिषाम)** हिंस्याम **(यच्छ)** देहि। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(तोकाय)** सद्यो जाताय पञ्चवार्षिकाय **(तनयाय)** दशवार्षिकाय षोडशवार्षिकाय वा **(शम्)** सुखम् **(योः)** सुकृताज्जनितम्॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! देवानामुत मर्त्यानामभीके महश्चिदेनस ऊर्वाद्वयं विनाशयेम। ते सखायः सन्तस्तव सद मा रिषाम। त्वं तोकाय तनयाय शं योरिद्यच्छ॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा वयं देवानां समीपे स्थित्वा शिक्षाः प्राप्य पापात्मकं कर्म्म त्यक्त्वाऽन्यान् त्याजयेम सर्वेषां सुहृदो भूत्वा कुमारान् कुमारींश्च सुशिक्ष्य सकला विद्याः प्रापय्य सुखयुक्ताः सम्पादयेम तथा यूयमप्याचरत॥५॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! **(देवानाम्)** विद्वानों के **(उत)** और **(मर्त्यानाम्)** अविद्वानों के **(अभीके)** समीप में **(महः)** बड़े **(चित्)** भी **(एनसः)** अपराध के **(ऊर्वात्)** विस्तीर्णभाव से हम लोग विनाश करें अर्थात् उन कर्मों का नाश करें जो अपराध के मूल हैं और **(ते)** आपके **(सखायः)** मित्र हुए आपके **(सदम्)** स्थान को **(मा)** मत **(रिषाम)** नष्ट करें और आप **(तोकाय)** शीघ्र उत्पन्न हुए पांच वर्ष की अवस्थावाले **(तनयाय)** पुत्र के लिये **(शम्)** सुख **(योः)** उत्तम कर्म से उत्पन्न हुआ **(इत्)** ही **(यच्छ)** दीजिये॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग विद्वानों के समीप स्थित हों और शिक्षा को प्राप्त होकर पापस्वरूप कर्म्म का त्याग कर अन्यों का भी त्याग करें **[=करावें,]** सब के मित्र होकर कुमार और कुमारियों को उत्तम शिक्षा देकर और सम्पूर्ण विद्या प्राप्त करा के सुखयुक्त करें, वैसा आप लोग भी आचरण करो॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यथा॑ ह॒ त्यद्व॑सवो गौ॒र्यं॑ चित्प॒दि षि॒ताममु॑ञ्चता यजत्राः।

ए॒वो ष्व१॒॑स्मन्मु॑ञ्चता॒ व्यंहः॒ प्र ता॑र्यग्ने प्रत॒रं न॒ आयुः॑॥६॥१२॥

यथा॑। ह॒। त्यत्। व॒स॒वः॒। गौ॒र्य॑म्। चि॒त्। प॒दि। सि॒ताम्। अमु॑ञ्चत। य॒ज॒त्राः॒। ए॒वो इति॑। सु। अ॒स्मत्। मु॒ञ्च॒त॒। वि। अंहः॑। प्र। ता॒रि॒। अ॒ग्ने॒। प्र॒ऽत॒रम्। नः॒। आयुः॑॥६॥

पदार्थः-**(यथा)** **(ह)** खलु **(त्यत्)** तत् **(वसवः)** निवसन्तः **(गौर्यम्)** गौरीं वाचम्। **गौरीति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११) **(चित्)** **(पदि)** प्राप्तव्ये विज्ञाने **(सिताम्)** शब्दार्थविज्ञानसम्बन्धिनीम् **(अमुञ्चता)** त्यजत। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(यजत्राः)** विदुषां सत्कर्तारः **(एवो)** एव **(सु)** **(अस्मत्)** **(मुञ्चता)** त्यजत। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(वि)** **(अंहः)** **(प्र)** **(तारि)** प्लूयते **(अग्ने)** विद्वन् **(प्रतरम्)** प्रतरन्ति येन तत् **(नः)** अस्माकम् **(आयुः)** जीवनम्॥६॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा त्वया नः प्रतरमायुः प्रतार्यंहः प्रतारि तथा वयं तव प्रतरमायुरपराधं च प्रतारयेम। हे यजत्रा वसवो! यथा यूयं त्यदंहो हामुञ्चत पदि चित्सितां गौर्यं प्राप्नुत तथाऽस्मदंहः सुविमुञ्चत तथैवो वयमति पापं त्यक्त्वा सुशिक्षितां वाचं प्राप्नुयाम॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा धार्मिका आप्ता विद्वांसः पापाचरणं विहाय सत्यमाचरन्त्यन्यान् स्वसदृशान् कर्त्तुमिच्छन्ति तथैव भवन्तोऽप्याचरन्तु॥६॥

अत्राग्निराजविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वादशं सूक्त द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! **(यथा)** जैसे आप से **(नः)** हम लोगों के **(प्रतरम्)** जिससे संसार में

पार होते वह **(आयु:)** जीवन **(प्र, तारि)** पार किया जाता है **(अंह:)** पाप पार किया जाता, वैसा हम लोग आपके पार कराने वाले जीवन और अपराध को पार करें। हे **(यजत्रा:)** विद्वानों के सत्कार करने वाले **(वसव:)** निवास करते हुए जनो! जैसे आप लोग **(त्यत्)** उस पाप का **(ह)** निश्चय करि **(अमुञ्चत)** त्याग करें **(पदि)** प्राप्त होने योग्य विज्ञान में **(चित्)** भी **(सिताम्)** शब्दार्थविज्ञानसम्बन्धिनी **(गौर्यम्)** स्वच्छ वाणी को प्राप्त हूजिये, वैसे **(एवो)** ही **(अस्मत्)** हम से आपको **(सु, वि, मुञ्चत)** अच्छे प्रकार विशेषता से दूर कीजिये, उसी प्रकार हम लोग भी पाप का त्याग करके उत्तम प्रकार शिक्षित वाणी को प्राप्त होवें॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे धार्मिक यथार्थवक्ता विद्वान् लोग पाप के आचरण का त्याग करके सत्य आचरण में अन्यों को अपने सदृश करने की इच्छा करते हैं, वैसा ही आप लोग भी आचरण करो॥६॥

इस सूक्त में अग्नि, राजा और विद्वान् के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह बारहवां सूक्त बारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य त्रयोदशस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अग्निर्देवता। १, २, ४, ५ विराट्त्रिष्टुप्। ३ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ सूर्य्यसादृश्येन राजगुणानाह॥

अब पांच ऋचा वाले तेरहवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में सूर्य के सादृश्य से राजगुणों को कहते हैं॥

प्रत्यग्निरुषसामग्रमख्यद्विभातीनां सुमना रत्नधेयम्।

यातमश्विना सुकृतो दुरोणमुत्सूर्यो ज्योतिषा देव एति॥१॥

प्रति। अग्निः। उषसाम्। अग्रम्। अख्यत्। विऽभातीनाम्। सुऽमनाः। रत्नऽधेयम्। यातम्। अश्विना। सुऽकृतः। दुरोणम्। उत्। सूर्यः। ज्योतिषा। देवः। एति॥१॥

पदार्थः-(**प्रति**) (**अग्निः**) अग्निरिव (**उषसाम्**) प्रभातानाम् (**अग्रम्**) उपरिभावम् (**अख्यत्**) प्रकाशयति (**विभातीनाम्**) प्रकाशयन्तीनाम् (**सुमनाः**) प्रसन्नचित्तः (**रत्नधेयम्**) रत्नानि धेयानि यस्मिंस्तत् (**यातम्**) प्राप्नुतम् (**अश्विना**) वायुविद्युताविव (**सुकृतः**) सुकृतस्य धर्मात्मनः (**दुरोणम्**) गृहम् (**उत्**) (**सूर्यः**) सविता (**ज्योतिषा**) प्रकाशेन (**देवः**) सुखप्रदाता (**एति**) प्राप्नोति॥१॥

अन्वयः-यो विभातीनामुषसामग्रमग्निरिव यशः प्रत्यख्यत्सुमनाः सन्नश्विना यातमिव ज्योतिषा देवः सूर्य उदेतीव सुकृतो रत्नधेयं दुरोणमेति स सुखं लभते॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये वायुविद्युत्सूर्यगुणाः प्रजाः प्रालयन्ति ते तेन सत्येन न्यायेन बहुरत्नकोषं लभन्ते॥१॥

पदार्थः-जो (**विभातीनाम्**) प्रकाश करते हुए (**उषसाम्**) प्रातःकालों के (**अग्रम्**) ऊपर होना जैसे हो वैसे (**अग्निः**) अग्नि के सदृश यश को (**प्रति, अख्यत्**) प्रकट करता और (**सुमनाः**) प्रसन्नचित्त होता हुआ (**अश्विना**) वायु और बिजुली के जैसे (**यातम्**) प्राप्त हों, वैसे (**ज्योतिषा**) प्रकाश के साथ (**देवः**) सुख का देनेवाला (**सूर्यः**) सूर्य जैसे (**उत्**) (**एति**) उदय होता, वैसे (**सुकृतः**) उत्तम कृत्य करने वाले धर्मात्मा के (**रत्नधेयम्**) रत्न जिसमें धरे जायें, उस (**दुरोणम्**) गृह को प्राप्त होता, वह सुख को प्राप्त होता है॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो वायु, बिजुली और सूर्य के गुणयुक्त पुरुष प्रजाओं का पालन करते हैं, वे उस सत्य न्याय से बहुत रत्नों के कोष को प्राप्त हैं॥१॥

अथ सूर्यलोकादीनां निमित्तकारणमाह॥

अब सूर्यलोकादिकों के निमित्तकारण को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऊर्ध्वं भानुं सविता देवो अश्रेद् द्रप्सं दविध्वद्गविषो न सत्वा।

अनु॑ व्र॒तं वरु॑णो यन्ति मि॒त्रो यत्सूर्यं॑ दि॒व्या॑रो॒हय॑न्ति॥२॥

ऊ॒र्ध्वम्। भा॒नुम्। स॒वि॒ता। दे॒वः। अ॒श्रे॒त्। द्र॒प्सम्। दवि॑ध्वत्। गो॒ऽइ॒षः। न। सत्वा॑। अनु॑। व्र॒तम्। वरु॑णः। य॒न्ति॒। मि॒त्रः। यत्। सूर्य॑म्। दि॒वि। आ॒ऽरो॒हय॑न्ति॥२॥

पदार्थः-(**ऊर्ध्वम्**) उपरिस्थम् (**भानुम्**) किरणम् (**सविता**) सूर्य्यमण्डलम् (**देवः**) प्रकाशमानः (**अश्रेत्**) आश्रयति (**द्रप्सम्**) पार्थिवं भूगोलम् (**दविध्वत्**) भृशं धुन्वन् (**गविषः**) गाः प्राप्तुमिच्छन् (**न**) इव (**सत्वा**) गन्ता (**अनु**) (**व्रतम्**) कर्म (**वरुणः**) जलम् (**यन्ति**) (**मित्रः**) वायुः (**यत्**) यम् (**सूर्य्यम्**) सवितृलोकम् (**दिवि**) (**आरोहयन्ति**)॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः सविता देवः सत्वा गविषो नाऽनुव्रतं वरुणो मित्रोऽनुव्रतं यन्ति यत्सूर्यं दिव्यारोहयन्ति सविता देवो द्रप्सं दविध्वत् सन्नूर्ध्वं भानुमश्रेदिति विजानीत॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। इह सृष्टौ परमात्मना यथा सूर्य्योत्पत्तेर्जलाग्निवायवो निर्मितास्तथैव पृथिव्यादीनामपि निमित्तानि विहितानीति वेदितव्यम्॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**सविता**) सूर्य्यमण्डल (**देवः**) प्रकाशमान (**सत्वा**) चलने वाला (**गविषः**) गौओं को प्राप्त होने कि इच्छा करते हुए के (**न**) सदृश (**अनु, व्रतम्**) अनुकूल कर्म को और (**वरुणः**) जल और (**मित्रः**) वायु अनुकूल कर्म को (**यन्ति**) प्राप्त होते वा (**यत्**) जिस (**सूर्य्यम्**) सूर्य्यलोक को (**दिवि**) अन्तरिक्ष में (**आरोहयन्ति**) चढ़ाते हैं वा सूर्य्यमण्डल (**द्रप्सम्**) पृथिवीसंबन्धी भूलोक को (**दविध्वत्**) अत्यन्त कंपाता हुआ (**ऊर्ध्वम्**) ऊपर वर्त्तमान (**भानुम्**) किरण का (**अश्रेत्**) आश्रय करता है, यह सब जानो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। इस सृष्टि में परमात्मा ने जैसे सूर्य्य की उत्पत्ति से जल, अग्नि और पवन रचे, वैसे ही पृथिवी आदिकों के भी निमित्तकारण रचे, यह जानना चाहिये॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यं सी॒मकृ॑ण्वन्त॒मसे॑ वि॒पृचे॑ ध्रु॒वक्षे॑मा॒ अन॑वस्यन्तो॒ अर्थ॑म्।

तं सूर्यं॑ ह॒रितः॑ स॒प्त य॒ह्वीः स्पशं॒ विश्व॑स्य॒ जग॑तो वहन्ति॥३॥

यम्। सी॒म्। अकृ॑ण्वन्। तम॑से। वि॒ऽपृचे॑। ध्रु॒वऽक्षे॑माः। अन॑वऽस्यन्तः। अर्थ॑म्। तम्। सूर्य॑म्। ह॒रितः॑। स॒प्त। य॒ह्वीः। स्पश॑म्। विश्व॑स्य। जग॑तः। व॒ह॒न्ति॒॥३॥

पदार्थः-(**यम्**) (**सीम्**) सर्वतः (**अकृण्वन्**) कुर्वन्ति (**तमसे**) अन्धकाराय (**विपृचे**) वियोजनाय (**ध्रुवक्षेमाः**) ध्रुवं क्षेमं रक्षणं येषान्ते (**अनवस्यन्तः**) अपरिचरन्तः कुर्वन्तः (**अर्थम्**) द्रव्यम् (**तम्**)

(सूर्य्यम्) **(हरितः)** दिश इव व्याप्ताः किरणाः। **हरित इति दिङ्नाममसु पठितम्।** (निघं०१.६) **(सप्त)** **(यह्वीः)** महत्यः **(स्पशम्)** बन्धकम् **(विश्वस्य)** सर्वस्य **(जगतः)** **(वहन्ति)** प्रापयन्ति॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यमर्थमनवस्यन्तो ध्रुवक्षेमास्तमसे विपृचे सीमकृण्वँस्तं विश्वस्य जगतः स्पशं सूर्य्यं सप्त यह्वीर्हरितो वहन्तीव शुभगुणान् वहन्तु प्रापयन्तु॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा किरणाः सूर्यं तमोनिवारणाय वहन्ति तथैव सर्वस्य जगतोऽविद्यानिवारणाय विद्यारक्षणाय च सर्वथा सत्योपदेशान् कुर्वन्तु॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यम्)** जिस **(अर्थम्)** पदार्थरूप सूर्य को **(अनवस्यन्तः)** न सेवते और क्रिया करते हुए **(ध्रुवक्षेमाः)** निश्चित रक्षण करने वाले जन **(तमसे)** अन्धकार के अर्थ **(विपृचे)** वियोग करने के लिये **(सीम्)** सब ओर से **(अकृण्वन्)** निश्चित करते हैं **(तम्)** उस **(विश्वस्य)** सम्पूर्ण **(जगतः)** संसार के **(स्पशम्)** बांधनेवाले **(सूर्य्यम्)** सूर्य्य को **(सप्त)** सात **(यह्वीः)** बड़ी **(हरितः)** दिशाओं को **(वहन्ति)** प्राप्त कराते हैं, वैसे ही उत्तम गुणों को प्राप्त कराओ॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे किरणें सूर्य्य को अन्धकार के दूर करने के लिये धारण करती हैं, वैसे ही सम्पूर्ण जगत् की अविद्या दूर करने के लिये और विद्या की रक्षा के लिये सब प्रकार सत्य के उपदेश करो॥३॥

अथ सूर्य्यदृष्टान्तेन विद्वद्गुणानाह॥

अब सूर्य्यदृष्टान्त से विद्वानों के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वहिष्ठेभिर्विहरन् यासि तन्तुमवव्ययन्नसितं देव वस्म।

दविध्वतो रश्मयः सूर्यस्य चर्मेवावाधुस्तमो अप्स्वन्तः॥४॥

वहिष्ठेभिः। विऽहरन्। यासि। तन्तुम्। अवऽव्ययन्। असितम्। देव। वस्म। दविध्वतः। रश्मयः। सूर्यस्य। चर्मऽइव। अव। अधुः। तमः। अप्ऽसु। अन्तरिति॥४॥

पदार्थः-**(वहिष्ठेभिः)** अतिशयेन वोढृभिः **(विहरन्)** विचरन् **(यासि)** याति। अत्र पुरुषव्यत्ययः। **(तन्तुम्)** कारणम् **(अवव्ययन्)** दूरीकुर्वन् **(असितम्)** कृष्णं तमः **(देवः)** प्रकाशमान **(वस्म)** निवासस्थानम् **(दविध्वतः)** कम्पयतः **(रश्मयः)** **(सूर्यस्य)** **(चर्मेव)** यथा चर्म देहमावृणोति तथा **(अव)** **(अधुः)** आच्छादयन्ति **(तमः)** अन्धकारम् **(अप्सु)** अन्तरिक्षे **(अन्तः)** मध्ये॥४॥

अन्वयः-हे देव विद्वन्! यतस्त्वं वहिष्ठेभिः सविता तन्तुं विहरन्नसितमवव्ययन् याति तथा वस्माव यासि यथा दविध्वतस्सूर्यस्य रश्मयोऽप्स्वन्तस्तमश्चर्मेवाधुस्तद्वत्त्वं भव॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे उपदेशक! यथा सूर्यो वोढृभिः किरणाकर्षणादिभिः स्वप्रकाशं विस्तारयन् चर्मणा देहमिव तम आच्छादयन्नन्तरिक्षस्य मध्ये विहरति तथैवाऽविद्यां विच्छिद्य विद्यां विस्तार्याऽस्मिञ्जगति विचर॥४॥

पदार्थः-हे **(देव)** प्रकाशमान विद्वन्! जिससे आप **(वहिष्ठेभिः)** अत्यन्त प्राप्त कराने वालों से सूर्य **(तन्तुम्)** कारण को **(विहरन्)** प्राप्त होता हुआ और **(असितम्)** कृष्णवर्ण अन्धकार को **(अवव्ययन्)** दूर करता हुआ चलता है, वैसे **(वस्म)** निवासस्थान को **(अव, यासि)** प्राप्त होते हो और जैसे **(दविध्वतः)** कंपाते हुए **(सूर्यस्य)** सूर्य की **(रश्मयः)** किरणें **(अप्सु)** अन्तरिक्ष के **(अन्तः)** मध्य में **(तमः)** अन्धकार को **(चर्मेव)** जैसे चर्म शरीर को ढांपता है, वैसे **(अधुः)** ढांपते हैं, वैसे आप हूजिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे उपदेशक! जैसे सूर्य प्राप्त कराने वाले किरणों के आकर्षणादिकों से अपने प्रकाश का विस्तार करता हुआ, चर्म से देह के सदृश [अन्धकार को] ढांपता हुआ, अन्तरिक्ष के मध्य में विहार करता है, वैसे ही अविद्या का नाश और विद्या का प्रकाश [=विस्तार] करके इस संसार में विचरिये॥४॥

अथ सूर्यमण्डलप्रश्नोत्तरपूर्वकविद्वद्गुणानाह॥

अब सूर्य्यमण्डल प्रश्नोत्तर पूर्वक विद्वानों के गुणों को कहते हैं॥

अनायतो अनिबद्धः कथायं न्यङ्ङुत्तानोऽव पद्यते न।

कया याति स्वधया को ददर्श दिवः स्कम्भः समृतः पाति नाकम्॥५॥१३॥

अनायतः। अनिऽबद्धः। कथा। अयम्। न्यङ्। उत्तानः। अव। पद्यते। न। कया। याति। स्वधया। कः। ददर्श। दिवः। स्कम्भः। सम्ऽऋतः। पाति। नाकम्॥५॥१३॥

पदार्थः-**(अनायतः)** इतस्ततोऽगच्छन्त्सन्निहितः **(अनिबद्धः)** न कस्याप्याकर्षेण निबद्धः **(कथा)** केन प्रकारेण **(अयम्)** **(न्यङ्)** यो न्यग्भूतस्सन् **(उत्तानः)** ऊर्ध्वं स्थितः **(अव)** **(पद्यते)** अवगच्छति **(न)** निषेधे **(कया)** **(याति)** गच्छति **(स्वधया)** अन्नादिपदार्थयुक्त्या पृथिव्या सह **(कः)** **(ददर्श)** पश्यति **(दिवः)** प्रकाशस्य **(स्कम्भः)** स्तम्भ इव धारकः [**(समृतः)**] सम्यक्सत्यस्वरूपः **(पाति)** **(नाकम्)** अविद्यमानदुःखं व्यवहारम्॥५॥

अन्वयः-हे विद्वन्नयमनायतोऽनिबद्धो न्यङ्ङुत्तानः कथा नाऽवपद्यते कया स्वधया याति। यो दिवस्स्कम्भः समृतो नाकं पाति तं को ददर्श॥५॥

भावार्थः-हे विद्वन्नयं सूर्योऽन्तरिक्षमध्ये स्थितः कथमधो न पतति। केन गच्छति कथं प्रकाशस्य धर्त्ता सुखकारको भवतीति प्रश्नस्योत्तरं, परमेश्वरेण स्थापितो धृतो नाऽधः पतति स्वसन्निहितैर्भूगोलैः सह

स्वकक्षायां गच्छन् वर्त्तते सर्वेषां सन्निहितानामाकर्षणेन धर्त्ता परमेश्वरस्य व्यवस्थया सुखकरो वर्त्तत इति वेदितव्यम्॥५॥

अथ सूर्य्यविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति त्रयोदशं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वन्! **(अयम्)** यह **(अनायतः)** इधर-उधर [न] जाता और समीप वर्त्तमान **(अनिबद्धः)** किसी के आकर्षण से नहीं बंधा **(न्यङ्)** जो नीचे को होता हुआ **(उत्तानः)** ऊपर स्थित **(कथा)** किस प्रकार से **(न)** नहीं **(अव, पद्यते)** नीचे आता और **(कया)** किस **(स्वधया)** अन्न आदि पदार्थों से युक्त पृथिवी के साथ **(याति)** चलता है, जो **(दिवः)** प्रकाश का **(स्कम्भः)** खम्भे के सदृश धारण करने वाला **(समृतः)** उत्तम प्रकार सत्यस्वरूप **(नाकम्)** दुःखरहित व्यवहार की **(पाति)** रक्षा करता है, उसको **(कः)** कौन **(ददर्श)** देखता है॥५॥

भावार्थः-हे विद्वन्! यह सूर्य्य अन्तरिक्ष के मध्य में स्थित हुआ क्यों नीचे नहीं गिरता है? किससे चलता है? और कैसे प्रकाश का धारण करने वाला और सुखकारक होता है? इस प्रश्न का उत्तर- परमेश्वर ने स्थापित और धारण किया इससे नीचे नहीं गिरता है और अपने समीप वर्त्तमान भूगोलों के साथ अपनी कक्षा में चलता हुआ वर्त्तमान है और सम्पूर्ण समीप में वर्त्तमान पदार्थों के आकर्षण से धारणकर्त्ता और परमेश्वर की व्यवस्था से सुखकारक वर्त्तमान है, यह जानना चाहिये॥५॥

इस सूक्त में सूर्य्य और विद्वानों के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तेरहवां सूक्त और तेरहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य चतुर्दशस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अग्निर्लिङ्गोक्ता देवता वा। १ भुरिक्पङ्क्तिः। ३ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ४ निचृत्त्रिष्टुप्। ५ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथाग्निसादृश्येन विद्वद्गुणानाह॥

अब पांच ऋचावाले चौदहवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अग्निसादृश्य से विद्वानों के गुणों का उपदेश करते हैं॥

प्रत्य॒ग्निरु॒षसो॑ जा॒तवे॑दा॒ अख्य॑द्दे॒वो रोच॑माना॒ महो॑भिः।

आ ना॑सत्योरु॒गाया रथे॑ने॒मं य॒ज्ञमुप॑ नो या॒तमच्छ॑॥ १॥

प्रति॑। अ॒ग्निः। उ॒षसः॑। जा॒तऽवे॑दाः। अख्य॑त्। दे॒वः। रोच॑मानाः। महः॑ऽभिः। आ। ना॒स॒त्या॒। उ॒रु॒ऽगा॒या। रथे॑न। इ॒मम्। य॒ज्ञम्। उप॑। नः॒। या॒त॒म्। अच्छ॑॥ १॥

पदार्थः-(**प्रति**) (**अग्निः**) विद्युदिव (**उषसः**) दिवसमुखस्य (**जातवेदाः**) उत्पन्नेषु विद्यमानः (**अख्यत्**) प्रकाशते (**देवः**) देदीप्यमानः (**रोचमानाः**) प्रकाशमानाः (**महोभिः**) महद्भिः (**आ**) (**नासत्या**) अविद्यमानसत्याचरणौ (**उरुगाया**) बहुप्रशंसौ (**रथेन**) यानेन (**इमम्**) वर्त्तमानं (**यज्ञम्**) (**उप**) (**नः**) अस्माकम् [(**यज्ञम्**)] प्रकाश्यप्रकाशकमयं व्यवहारम् (**यातम्**) प्राप्नुतम् (**अच्छ**)॥ १॥

अन्वयः-हे नासत्योरुगायाध्यापकोपदेशकौ! युवां महोभी रथेन न इमं यज्ञं जातवेदा देवोऽग्नी रोचमाना उषसः प्रत्यख्यद् दिवाऽच्छोपायातम्॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये यथा सूर्य्य उषसो विभाति तथैव सत्येनोपदेशेन रथेन मार्गमिव विद्यां सुखं प्रापयन्ति तेऽत्र जगति कल्याणकरा भवन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे (**नासत्या**) असत्य आचरण से रहित (**उरुगाया**) बहुत प्रशंसावाले अध्यापक और उपदेशक जनो! आप दोनों (**महोभिः**) बड़ों के साथ (**रथेन**) वाहन से (**नः**) हम लोगों के प्रकाश्य और प्रकाशस्वरूप व्यवहार और (**इमम्**) इस वर्त्तमान (**यज्ञम्**) यज्ञ को (**जातवेदाः**) उत्पन्न हुए पदार्थों में विद्यमान (**देवः**) प्रकाशमान (**अग्निः**) बिजुली के सदृश अग्नि (**रोचमानाः**) प्रकाशमान (**उषसः**) दिन के मुख अर्थात् प्रारम्भ के (**प्रति**) प्रति (**अख्यत्**) प्रकाशित होता है, वैसे (**अच्छ**) उत्तम प्रकार (**उप**) समीप (**आ, यातम्**) आओ प्राप्त होओ॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो जैसे सूर्य्य प्रातःकाल से शोभित होता है, वैसे ही सत्य के उपदेश से रथ से मार्ग के सदृश विद्या के सुख को प्राप्त कराते हैं, वे इस संसार में कल्याणकारक होते हैं॥ १॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब विद्वान् के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऊर्ध्वं केतुं सविता देवो अश्रेज्ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वन्।
आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं वि सूर्यो रश्मिभिश्चेकितानः॥ २॥

ऊर्ध्वम्। केतुम्। सविता। देवः। अश्रेत्। ज्योतिः। विश्वस्मै। भुवनाय। कृण्वन्। आ। अप्राः। द्यावापृथिवी इति। अन्तरिक्षम्। वि। सूर्यः। रश्मिऽभिः। चेकितानः॥ २॥

पदार्थः-(**ऊर्ध्वम्**) उत्कृष्टम् (**केतुम्**) प्रज्ञाम् (**सविता**) सूर्य्य इव (**देवः**) विद्वान् (**अश्रेत्**) (**ज्योतिः**) प्रकाशम् (**विश्वस्मै**) सर्वस्मै (**भुवनाय**) संसाराय (**कृण्वन्**) कुर्वन् (**आ**) (**अप्राः**) व्याप्नोति (**द्यावापृथिवी**) प्रकाशभूमी (**अन्तरिक्षम्**) आकाशम् (**वि**) (**सूर्य्यः**) प्रकाशमयः (**रश्मिभिः**) (**चेकितानः**) प्रज्ञापयन्॥ २॥

अन्वयः-यो देवो विद्वान् यथा सविता रश्मिभिश्चेकितानः सूर्यो विश्वस्मै भुवनाय ज्योतिः कृण्वन् द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं व्याप्रास्तथोर्ध्वं केतुमश्रेत् स एवालं सुखी जायते॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्वांसोऽखिला विद्या अधीत्य ब्रह्मचर्य्य-योगाभ्यासाभ्यां प्रमां प्राप्य रश्मिभिस्सूर्य्य इव जनान्तःकरणाष्युपदेशैरुज्ज्वलयन्ति त एव सर्वेषां पूज्या भवन्ति॥ २॥

पदार्थः-जो (**देवः**) विद्वान् जैसे (**सविता**) सूर्य्य (**रश्मिभिः**) किरणों से (**चेकितानः**) जनाता हुआ (**सूर्य्यः**) प्रकाशमान (**विश्वस्मै**) सब (**भुवनाय**) संसार के लिये (**ज्योतिः**) प्रकाश को (**कृण्वन्**) करता हुआ (**द्यावापृथिवी**) प्रकाश-भूमि (**अन्तरिक्षम्**) आकाश को (**वि, आ, अप्राः**) व्याप्त होता है, वैसे (**ऊर्ध्वम्**) उत्तम (**केतुम्**)) बुद्धि का (**अश्रेत्**) आश्रय करे, वही पूर्ण सुखवाला होवे॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्वान् लोग सम्पूर्ण विद्याओं को पढ़कर, ब्रह्मचर्य और योगाभ्यास से ज्ञान को प्राप्त होकर, किरणों से सूर्य्य के सदृश जनों के अन्तःकरणों को उपदेश से उज्ज्वल करते हैं, वे ही सब को सत्कार करने योग्य होते हैं॥ २॥

अथ विदुषीगुणानाह॥

अब विदुषी के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आवहन्त्यरुणीर्ज्योतिषागान्मही चित्रा रश्मिभिश्चेकिताना।
प्रबोधयन्ती सुविताय देव्युषा ईयते सुयुजा रथेन॥ ३॥

आऽवहन्ती। अरुणीः। ज्योतिषा। आ। अगात्। मही। चित्रा। रश्मिऽभिः। चेकिताना। प्रऽबोधयन्ती। सुविताय। देवी। उषाः। ईयते। सुऽयुजा। रथेन॥ ३॥

पदार्थः-(**आवहन्ती**) समन्तात् प्रापयन्ती (**अरुणीः**) किञ्चिदारक्ताभाः (**ज्योतिषा**) प्रकाशेन (**आ**) (**अगात्**) आगच्छति (**मही**) महती (**चित्रा**) अद्भुतस्वरूपा (**रश्मिभिः**) स्वकिरणैः (**चेकिताना**)

प्राणिनः प्रज्ञापयन्ती **(प्रबोधयन्ती)** जागरयन्ती **(सुविताय)** ऐश्वर्याय **(देवी)** देदीप्यमाना **(उषाः)** प्रभातवेला **(ईयते)** गच्छति **(सुयुजा)** सष्ठु युञ्जन्त्यश्वान् यस्मिंस्तेन **(रथेन)** यानेनेव॥३॥

अन्वयः-हे विदुषि शुभगुणे पत्नि! त्वं यथा सुयुजा रथेनेव रश्मिभिश्चेकिताना सुविताय प्रबोधयन्ती ज्योतिषा चित्राऽरुणीरावहन्ती मही देव्युषा ईयत आगात्तथा त्वं भव॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि हृद्या प्रिया सुलक्षणाऽद्भुतरूपा पतिव्रता स्त्री पुरुषं प्राप्नुयात् सा उषा इव कुलं प्रकाशयन्त्वपत्यानि सुशिक्षमाणा सर्वानानन्दयति॥३॥

पदार्थः-हे विद्यायुक्त और उत्तम गुण वाली स्त्रि! तू जैसे **(सुयुजा)** उत्तम प्रकार जोड़ते हैं घोड़ों को जिसमें उस **(रथेन)** वाहन के सदृश **(रश्मिभिः)** अपने किरणों से **(चेकिताना)** प्राणियों को जनाती हुई और **(सुविताय)** ऐश्वर्य के लिये **(प्रबोधयन्ती)** जगाती हुई **(ज्योतिषा)** प्रकाश से **(चित्रा)** अद्भुतस्वरूप वाली **(अरुणीः)** किञ्चित् लाल आभायुक्त कान्तियों को **(आवहन्ती)** सब प्रकार प्राप्त कराती हुई **(मही)** बड़ी **(देवी)** अत्यन्त प्रकाशमान **(उषाः)** प्रातःकाल की वेला **(ईयते)** जाती और **(आ, आगात्)** आती है, वैसे आप हूजिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सुन्दर प्रिया उत्तम लक्षणों से युक्त, अद्भुत रूपवाली, पतिव्रता स्त्री पुरुष को प्राप्त होवे, वह प्रातःकाल के सदृश कुल का प्रकाश करती हुई और सन्तानों को उत्तम शिक्षा देती हुई सब को आनन्द देती है॥३॥

अथ स्त्रीपुरुषगुणानाह॥

अब स्त्री-पुरुष के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ वां वहिष्ठा इह ते वहन्तु रथा अश्वास उषसो व्युष्टौ।

इमे हि वां मधुपेयाय सोमा अस्मिन्यज्ञे वृषणा मादयेथाम्॥४॥

आ। वाम्। वहिष्ठाः। इह। ते। वहन्तु। रथाः। अश्वासः। उषसः। विऽउष्टौ। इमे। हि। वाम्। मधुऽपेयाय। सोमाः। अस्मिन्। यज्ञे। वृषणा। मादयेथाम्॥४॥

पदार्थः-**(आ)** **(वाम्)** युवयोः **(वहिष्ठाः)** अतिशयेन वोढारः **(इह)** अस्मिन् संसारे **(ते)** **(वहन्तु)** **(रथाः)** यानानि **(अश्वासः)** सद्यो गामिनः **(उषसः)** प्रातर्वेलायाः **(व्युष्टौ)** विशिष्टप्रतापे **(इमे)** **(हि)** यतः **(वाम्)** युवयोः **(मधुपेयाय)** मधुरैर्गुणैः पातुं योग्याय **(सोमाः)** सैश्वर्याः पदार्थाः **(अस्मिन्)** **(यज्ञे)** सङ्गन्तव्ये गृहाश्रमे **(वृषणा)** वीर्यवन्तौ **(मादयेथाम्)** आनन्दयतम्॥४॥

अन्वयः-हे स्त्रीपुरुषौ! वां ये वहिष्ठा रथा अश्वास उषसो व्युष्टौ सन्ति ते युवामिहाऽऽवहन्तु। य इमे हि वां सोमा अस्मिन् यज्ञे मधुपेयाय भवन्ति तानिह सेवित्वा वृषणा सन्तौ युवां मादयेथाम्॥४॥

भावार्थः-हे स्त्रीपुरुषा! यूयं यदि रजन्याश्चतुर्थे प्रहर उत्थाय कृताऽवश्यका यानैः पद्भ्यां च सूर्योदयात् प्राक्छुद्धवायुदेशे भ्रमणं कुर्युस्तर्हि युष्मान् रोगा कदाचिन्नागच्छेयुर्येन बलिष्ठा भूत्वा दीर्घायुषस्सन्तोऽस्मिन् गृहाश्रमे पुष्कलमानन्दं भुङ्ध्वम्॥४॥

पदार्थः-हे स्त्री-पुरुषो! **(वाम्)** आप दोनों जो लोग **(वहिष्ठाः)** अत्यन्त धारण करने वाले **(रथाः)** वाहन **(अश्वासः)** शीघ्र चलने वाले **(उषसः)** प्रातःकाल के **(व्युष्टौ)** विशिष्ट प्रताप में हैं **(ते)** वे आप दोनों को **(इह)** इस संसार में **(आ, वहन्तु)** अभीष्ट स्थान को पहुंचावें और जो **(इमे)** ये **(हि)** जिस कारण **(वाम्)** आप दोनों के **(सोमाः)** ऐश्वर्य के सहित पदार्थ **(अस्मिन्)** इस **(यज्ञे)** मेल करने योग्य गृहाश्रम में **(मधुपेयाय)** मधुर गुणों से पीने योग्य के लिये होते हैं, इस कारण उनका इस संसार में सेवन करके **(वृषणा)** पराक्रम वाले होते हुए आप दोनों **(मादयेथाम्)** आनन्दित होवें॥४॥

भावार्थः-हे स्त्री पुरुषो! आप लोग यदि रात्रि के चौथे प्रहर में उठ और आवश्यक कृत्य करके वाहन वा पैरों से सूर्योदय से पहिले शुद्ध वायु देश में भ्रमण करें तो आप लोगों को रोग कभी न प्राप्त होवें, जिससे कि बलिष्ठ और अधिक अवस्था वाले हुए इस गृहाश्रम में बड़े आनन्द को भोगो॥४॥

पुनर्विद्वद्गुणानाह॥

फिर विद्वानों के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अनायतो अनिबद्धः कथायं न्यङ्ङुत्तानोऽव पद्यते न।

कया याति स्वधया को ददर्श दिवः स्कम्भः समृतः पाति नाकम्॥५॥१४॥

अनायतः। अनिऽबद्धः। कथा। अयम्। न्यङ्। उत्तानः। अव। पद्यते। न। कया। याति। स्वधया। कः। ददर्श। दिवः। स्कम्भः। सम्ऽऋतः। पाति। नाकम्॥५॥

पदार्थः-**(अनायतः)** अदूरभवः **(अनिबद्धः)** परवदेकत्र न स्थितः **(कथा)** कथम् **(अयम्)** **(न्यङ्)** यो नित्यमञ्चति **(उत्तानः)** ऊर्ध्वं तनित इव स्थितः **(अव)** **(पद्यते)** **(न)** **(कया)** **(याति)** गच्छति **(स्वधया)** स्वकीयया गत्या **(कः)** **(ददर्श)** पश्यति **(दिवः)** कमनीयस्य सुखस्य **(स्कम्भः)** गृहाधारको मध्ये स्थितस्तम्भ इव **(समृतः)** सम्यक्सत्यस्वरूपः **(पाति)** **(नाकम्)** सुखम्॥५॥

अन्वयः-यो विद्वाननायतोऽनिबद्धोऽयं न्यङ्ङुत्तानः कथा नावपद्यते कया स्वधया याति समृतो दिवः स्कम्भ इव नाकं पातीमं को ददर्श॥५॥

भावार्थः-हे विद्वन्! जीवोऽयमधोगतिं कथं नाप्नुयाद् यद्यविद्यादिबन्धनं त्यजेत् केन कर्मणा सुखं याति यदि धर्ममनुतिष्ठेत् कः पूर्णकामो भवति यः परमात्मानं पश्येदिति॥५॥

अत्राग्निविद्वत्स्त्रीपुरुषकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुर्दशं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो विद्वान् **(अनायतः)** दूर नहीं अर्थात् समीप वर्त्तमान **(अनिबद्धः)** शत्रुवान् पुरुष के

समान एकत्र न ठहरने वाला **(अयम्)** यह **(न्यङ्)** नित्य आदर करता वा प्राप्त होता **(उत्तान:)** ऊपर को विस्तरित-सा स्थित **(कथा)** किस प्रकार **(न)** नहीं **(अव, पद्यते)** नीची दशा को प्राप्त होता है और **(कया)** किस **(स्वधया)** अपनी गति से **(याति)** चलता है **(समृत:)** उत्तम प्रकार सत्यस्वरूप **(दिव:)** मनोहर सुख के **(स्कम्भ:)** घर का आधार खम्भा जैसे बीच में ठहरे वैसे **(नाकम्)** सुख की **(पाति)** रक्षा करता है, इसको **(क:)** कौन **(ददर्श)** देखता है॥५॥

भावार्थ:-हे विद्वन्! जीव यह नीचे की दशा को किस रीति से न प्राप्त होवें जो अविद्या आदि बन्धन का त्याग करे तो, किस कर्म से सुख को प्राप्त होता है जो धर्म का अनुष्ठान करे, कौन कामनाओं से पूर्ण होता है, जो परमात्मा को देखे॥५॥

इस सूक्त में अग्नि, विद्वान्, स्त्री और पुरुष के कृत्य वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह चौदहवां सूक्त और चौदहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ दशर्चस्य पञ्चदशस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। १-६ अग्निः। ७, ८ सोमकः साहदेव्यः। ९, १० अश्विनौ देवते। १, ४ गायत्री। २, ५, ६ विराड् गायत्री। ३, ७-१० निचृद् गायत्रीच्छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथाग्निविषयमाह॥

अब दश ऋचावाले पन्द्रहवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अग्निविषय को कहते हैं॥

अ॒ग्निर्होता॑ नो अध्व॒रे वा॒जी सन् परि॑ णीयते। दे॒वो दे॒वेषु॑ य॒ज्ञियः॑॥ १॥

अ॒ग्निः। होता॑। नः॒। अ॒ध्व॒रे। वा॒जी। सन्। परि॑। नी॒यते॒। दे॒वः। दे॒वेषु॑। य॒ज्ञियः॑॥ १॥

पदार्थः-(**अग्निः**) अग्निरिव शुभगुणप्रकाशितः (**होता**) धर्त्ता (**नः**) अस्माकम् (**अध्वरे**) व्यवहारे (**वाजी**) बलवानश्व इव (**सन्**) (**परि**) (**नीयते**) प्राप्यते (**देवः**) द्योतमानः (**देवेषु**) द्योतमानेषु (**यज्ञियः**) यो यज्ञमर्हति सः॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो नोऽध्वरेऽग्निरिव होता देवेषु देवो यज्ञियो वाजी सन् परिणीयते स युष्माभिरपि प्रापणीयः॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽग्निस्सूर्यरूपेण सर्वान् व्यवहारान् प्रापयति तथैव विद्वान्त्सर्वान् कामान् प्रापयति॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**नः**) हम लोगों के (**अध्वरे**) व्यवहार में (**अग्निः**) अग्नि के सदृश उत्तम गुणों से प्रकाशित (**होता**) धारण करनेवाला (**देवेषु**) प्रकाशमानों में (**देवः**) प्रकाशमान (**यज्ञियः**) यज्ञ के योग्य (**वाजी**) बलवान् अश्व के समान (**सन्**) होता हुआ अग्नि (**परि, नीयते**) प्राप्त किया जाता है, वह आप लोगों से भी प्राप्त होने योग्य है॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि सूर्य्यरूप से सब व्यवहारों को प्राप्त कराता है, वैसे ही विद्वान् सम्पूर्ण मनोरथों को प्राप्त कराता है॥१॥

पुनरग्निविद्याविषयमाह॥

फिर अग्निविद्याविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

परि॑ त्रिवि॒ष्ट्य॑ध्व॒रं यात्य॒ग्नी र॒थीरि॑व। आ दे॒वेषु॒ प्रयो॒ दध॑त्॥ २॥

परि॑। त्रि॒ऽवि॒ष्टि। अ॒ध्व॒रम्। याति॑। अ॒ग्निः। र॒थीःऽइ॑व। आ। दे॒वेषु॑। प्रयः॑। दध॑त्॥ २॥

पदार्थः-(**परि**) (**त्रिविष्टि**) विविधे सुखप्रवेशे (**अध्वरम्**) सत्कर्त्तव्यं व्यवहारम् (**याति**) (**अग्निः**) पावकः (**रथीरिव**) प्रशस्तरथादियुक्तः सेनेश इव (**आ**) (**देवेषु**) (**प्रयः**) कमनीयं धनम् (**दधत्**) धरन्त्सन्॥२॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! योऽग्नी रथीरिव देवेषु प्रयो दधत् त्रिविष्ट्यध्वरं पर्य्यायाति स युष्माभिः कार्य्येषु योजनीयः॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथोत्तमसेनः सेनाध्यक्षस्त्रिविधं सुखमाप्नोति तथैवऽग्निविद्याविच्छरीरात्मेन्द्रियाऽऽनन्दं लभते॥२॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो **(अग्निः)** अग्नि **(रथीरिव)** श्रेष्ठ रथ आदि से युक्त सेना के स्वामी के सदृश **(देवेषु)** प्रकाशमान विद्वानों में **(प्रयः)** कामना करने योग्य धन को **(दधत्)** धारण करता हुआ **(त्रिविष्टि)** तीन प्रकार के सुख के प्रवेश में **(अध्वरम्)** सत्कार करने योग्य व्यवहार को **(परि, आ, याति)** सब ओर से प्राप्त होता है, वह आप लोगों से कार्य्यों में युक्त करने योग्य है॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे उत्तम सेना से युक्त सेनाध्यक्ष पुरुष तीन प्रकार के सुख को प्राप्त होता है, वैसे ही अग्निविद्या का जानने वाला शरीर, आत्मा और इन्द्रियों के आनन्द को प्राप्त होता है॥२॥

पुनरग्निविषयमाह॥

फिर अग्निविषय का वर्णन अगले मन्त्र में करते हैं॥

परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत्। दधद्रत्नानि दाशुषे॥३॥

परि। वाजऽपतिः। कविः। अग्निः। हव्यानि। अक्रमीत्। दधत्। रत्नानि। दाशुषे॥३॥

पदार्थः-**(परि)** **(वाजपतिः)** अन्नादीनां स्वामी **(कविः)** सकलविद्यावित् **(अग्निः)** विद्युद्वद्वर्त्तमानः **(हव्यानि)** दातुं योग्यानि **(अक्रमीत्)** क्राम्यति **(दधत्)** धरन् **(रत्नानि)** रमणीयानि धनानि **(दाशुषे)** दात्रे॥३॥

अन्वयः-यो वाजपतिः कविरग्निरिव दाशुषे रत्नानि दधत् सन् हव्यानि पर्य्यक्रमीत् स एव सततं सुखी जायते॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा दातारोऽन्यार्थान्युत्तमानि वस्तूनि ददति तथैवाऽग्निः यतः परसुखायाग्नेर्गुणा भवन्तीति॥३॥

पदार्थः-जो **(वाजपतिः)** अन्न आदिकों का स्वामी **(कविः)** सम्पूर्ण विद्याओं का जानने वाला **(अग्निः)** बिजुली के सदृश वर्त्तमान **(दाशुषे)** देनेवाले के लिये **(रत्नानि)** रमण करने योग्य धनों को **(दधत्)** धारण करता हुआ **(हव्यानि)** देने योग्य पदार्थों का **(परि, अक्रमीत्)** परिक्रमण करता अर्थात् समीप होता, वही निरन्तर सुखी होता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे देनेवाले अन्यों के लिये उत्तम वस्तुओं को देते हैं, वैसे ही अग्नि; क्योंकि दूसरे को सुख देने के लिये अग्नि के गुण होते हैं॥३॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयं यः सृञ्जये पुरो दैववाते समिध्यते। द्युमाँ अमित्रदम्भनः॥४॥

अयम्। यः। सृञ्जये। पुरः। दैवऽवाते। सम्ऽइध्यते। द्युऽमान्। अमित्रऽदम्भनः॥४॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**यः**) (**सृञ्जये**) यः प्राप्ताञ्छत्रून् जयति तस्मिन् (**पुरः**) पुरस्तात् (**दैववाते**) देवानां प्राप्ते भवे (**समिध्यते**) प्रदीप्यते (**द्युमान्**) बहुविद्याप्रकाशयुक्तः (**अमित्रदम्भनः**) शत्रूणां हिंसकः॥४॥

अन्वयः-हे राजन्! योऽयं द्युमानमित्रदम्भनः पुरो दैववाते सृञ्जये समिध्यते स एव त्वया सत्कर्त्तव्यः॥४॥

भावार्थः-हे नृप! ये महति सङ्ग्रामे तेजस्विनो निर्भयाः पुरोगामिनः शत्रुविदारका भृत्याः स्युस्तानेव भवान् पुत्रवत् पालयतु॥४॥

पदार्थः-हे राजन्! (**यः**) जो (**अयम्**) यह (**द्युमान्**) बहुत विद्या के प्रकाश से युक्त (**अमित्रदम्भनः**) शत्रुओं का नाशकर्त्ता (**पुरः**) प्रथम (**दैववाते**) विद्वान् जनों के प्राप्तसुख में (**सृञ्जये**) पाये हुए शत्रुओं को जिसमें जीतता है, उस संग्राम में (**समिध्यते**) प्रकाशित होता है, वही आपके सत्कार करने योग्य है॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! जो लोग बड़े संग्राम में तेजस्वी, भयरहित, आगे चलने वाले और शत्रुओं के नाशकर्त्ता नौकर हों, उनका ही आप पुत्र के सदृश पालन करो॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्य घा वीर ईवतोऽग्नेरीशीत मर्त्यः। तिग्मजम्भस्य मीळ्हुषः॥५॥१५॥

अस्य। घ। वीरः। ईवतः। अग्नेः। ईशीत। मर्त्यः। तिग्मऽजम्भस्य। मीळ्हुषः॥५॥

पदार्थः-(**अस्य**) (**घ**) एव। अत्र **ऋचि तु नु घे**ति दीर्घः। (**वीरः**) (**ईवतः**) प्रशस्तगमनकर्त्तुः (**अग्नेः**) पावकस्येव (**ईशीत**) समर्थो भवेत् (**मर्त्यः**) मनुष्यः (**तिग्मजम्भस्य**) तिग्मं तीव्रं तेजस्वि जम्भो मुखं यस्य तस्य (**मीळ्हुषः**) वीर्य्यवतः॥५॥

अन्वयः-हे राजन्! यो वीरो मर्त्योऽग्नेरिवाऽस्येवतस्तिग्मजम्भस्य मीळ्हुषः सेनापतेः शत्रूणां मध्य ईशीत स घैव विजयं कर्त्तुमर्हेत॥५॥

भावार्थः-सेनापतिना त एव पुरुषाः सेनायां भर्त्तव्या ये शत्रून् विजेतुं शक्नुयुः॥५॥

पदार्थः-हे राजन्! जो (**वीरः**) वीर (**मर्त्यः**) मनुष्य (**अग्नेः**) अग्नि के सदृश (**अस्य**) इस (**ईवतः**) श्रेष्ठ गमन करनेवाले (**तिग्मजम्भस्य**) तीक्ष्ण तेजस्वि मुख जिसका उस (**मीळ्हुषः**) पराक्रमी

सेनापति के शत्रुओं के मध्य में **(ईशीत)** समर्थ हो **(घ)** वही विजय करने योग्य होवे॥५॥

भावार्थः-सेनापति को चाहिये कि उन्हीं पुरुषों को सेना में भर्ती करें कि जो लोग शत्रुओं को जीत सकें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तमर्वन्तं न सानसिमरुषं न दिवः शिशुम्। मर्मृज्यन्ते दिवेदिवे॥६॥

तम्। अर्वन्तम्। न। सानसिम्। अरुषम्। न। दिवः। शिशुम्। मर्मृज्यन्ते। दिवेऽदिवे॥६॥

पदार्थः-**(तम्)** वीरम् **(अर्वन्तम्)** शीघ्रगामिनमश्वम् **(न)** इव **(सानसिम्)** विभक्तव्यम् **(अरुषम्)** रक्तगुणविशिष्टम् **(न)** **(दिवः)** प्रकाशात् **(शिशुम्)** पुत्रम् **(मर्मृज्यन्ते)** शोधयन्ति **(दिवेदिवे)** प्रतिदिनम्॥६॥

अन्वयः-हे अग्ने! दिवः शिशुमर्वन्तं नारुषं न सानसिं दिवेदिवे विद्वांसो मर्मृज्यन्ते तं त्वं पवित्रय॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्या अश्ववत्सन्तानाञ्छिक्षन्ते ते नित्यं सुखं वर्द्धयन्ते॥६॥

पदार्थः-हे अग्ने राजन्! जिस **(दिवः)** प्रकाश से **(शिशुम्)** पुत्र को **(अर्वन्तम्)** शीघ्र चलने वाले घोड़े के **(न)** सदृश वा **(अरुषम्)** रक्तगुणों से विशिष्ट के **(न)** सदृश **(सानसिम्)** और विभाग करने योग्य पदार्थ को **(दिवेदिवे)** प्रतिदिन विद्वान् लोग **(मर्मृज्यन्ते)** शुद्ध करते हैं **(तम्)** उसको आप पवित्र करो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य घोड़े के सदृश सन्तानों को शिक्षा देते हैं, वे नित्य सुख को बढ़ाते हैं॥६॥

अथाध्यापकविषयमाह॥

अब अध्यापक विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

बोधद्यन्मा हरिभ्यां कुमारः साहदेव्यः। अच्छा न हूत उदरम्॥७॥

बोधत्। यत्। मा। हरिऽभ्याम्। कुमारः। साहऽदेव्यः। अच्छ। न। हूतः। उत्। अरम्॥७॥

पदार्थः-**(बोधत्)** बोधय **(यत्)** यः **(मा)** माम् **(हरिभ्याम्)** अश्वाभ्यामिव पठनाभ्यासाभ्याम् **(कुमारः)** ब्रह्मचारी **(साहदेव्यः)** ये देवैः सह वर्त्तन्ते तत्र भवेषु साधुः **(अच्छ)** अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(न)** **(हूतः)** प्रशंसितः **(उत्)** **(अरम्)** अलम्॥७॥

अन्वयः-हे अध्यापक! यत्साहदेव्यः कुमारोऽहं हूतस्सन्नरं न विजानीयां तं मा हरिभ्यामिवाच्छोद्बोधत्॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदा कुमाराः कुमार्य्यश्च मातापितृभ्यां शिक्षां प्राप्ता आचार्य्यकुलं गच्छेयुस्तदाऽऽचार्य्यस्य प्रियाचरणेन विनयेन तं प्रार्थ्य विद्या याचनीया य एवं कुर्यात् स उत्तमाभ्यां हरिभ्यां युक्तेन रथेनेव विद्यापारं गच्छेत्॥७॥

पदार्थः-हे अध्यापक! **(यत्)** जो **(साहदेव्यः)** जो विद्वानों के साथ वर्त्तमान उनमें श्रेष्ठ **(कुमारः)** ब्रह्मचारी मैं **(हूतः)** प्रशंसित होता हुआ **(अरम्)** पूर्ण **(न)** न जानूं, उस **(मा)** मुझको **(हरिभ्याम्)** घोड़ों के सदृश **(अच्छ)** अच्छे प्रकार **(उत्, बोधत्)** उत्तम बोध दीजिये॥७॥

भावार्थः-जब कुमार और कुमारियाँ माता और पिता से शिक्षा को प्राप्त हुए आचार्य के कुल को जावें, तब आचार्य के प्रिय आचरण और विनय से उसकी प्रार्थना करके विद्या की याचना करें, जो ऐसा करे, वह श्रेष्ठ घोड़ों से युक्त रथ से जैसे वैसे विद्या के पार को जावे॥७॥

अथाध्येतृविषयमाह॥

अब अध्येतृविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत त्या यजता हरी कुमारात् साहदेव्यात्। प्रयता सद्य आ ददे॥८॥

उत। त्या। यजता। हरी इति। कुमारात्। साहऽदेव्यात्। प्रऽयता। सद्यः। आ। ददे॥८॥

पदार्थः-**(उत)** **(त्या)** तौ **(यजता)** दातारावध्यापकोपदेशकौ **(हरी)** अविद्याया हर्त्तारौ **(कुमारात्)** ब्रह्मचारिणः **(साहदेव्यात्)** **(प्रयता)** प्रयतमानौ **(सद्यः)** **(आ)** **(ददे)** गृह्णीयात्॥८॥

अन्वयः-त्या यजता हरी प्रयताध्यापकोपदेशकौ साहदेव्यात्कुमारात् प्रतिज्ञां गृह्णीयातामुतापि ताभ्यां कुमारो विद्याः सद्य आददे॥८॥

भावार्थः-यदा विद्यार्थिनो विद्यार्थिन्यश्चाऽध्ययनाय गच्छेयुस्तदा तैः प्रतिज्ञा कार्य्या वयं धर्म्येण ब्रह्मचर्य्येण भवदानुकूल्येन वर्त्तित्वा विद्याभ्यासं करिष्यामो मध्ये ब्रह्मचर्य्यव्रतं न लोप्स्याम इति अध्यापकाश्च वयं प्रीत्या निष्कपटतया विद्यां दास्याम इति, च॥८॥

पदार्थः-**(त्या)** वे दोनों **(यजता)** देने और **(हरी)** अविद्या के हरनेवाले **(प्रयता)** प्रयत्न करते हुए अध्यापकोपदेशक **(साहदेव्यात्)** विद्वानों के साथ रहने वालों में उत्तम **(कुमारात्)** ब्रह्मचारी से प्रतिज्ञा को ग्रहण करें **(उत)** और उन दोनों से ब्रह्मचारी विद्या **(सद्यः)** शीघ्र **(आ, ददे)** ग्रहण करे॥८॥

भावार्थः-जब विद्यार्थी [और विद्यार्थिनी] पढ़ने के लिये जावें, तब उनको चाहिये कि प्रतिज्ञा करें कि हम लोग धर्मयुक्त ब्रह्मचर्य्य से आपके अनुकूल वर्त्ताव करके विद्या का अभ्यास करेंगे और मध्य में ब्रह्मचर्य्य व्रत का न लोप करेंगे और अध्यापक लोग यह प्रतिज्ञा करें कि हम निष्कपटता से विद्यादान करेंगे॥८॥

अथाऽध्यापकोपदेशकविषयमाह॥

अब अध्यापक और उपदेशक विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एष वां देवावश्विना कुमारः साहदेव्यः। दीर्घायुरस्तु सोमकः॥९॥

एषः। वाम्। देवौ। अश्विना। कुमारः। साहऽदेव्यः। दीर्घऽआयुः। अस्तु। सोमकः॥९॥

पदार्थः-(**एषः**) ब्रह्मचारी (**वाम्**) युवयोरध्यापकोपदेशकयोः (**देवौ**) विद्वांसौ (**अश्विना**) सर्वविद्याव्यापिनौ (**कुमारः**) (**साहदेव्यः**) (**दीर्घायुः**) चिरञ्जीवी (**अस्तु**) भवतु (**सोमकः**) सोम इव शीतलस्वभावः॥९॥

अन्वयः-हे देवावश्विना! युवां यथैव वां साहदेव्यः सोमकः कुमारो दीर्घायुरस्तु तथा प्रयतेथाम्॥९॥

भावार्थः-अध्यापकोपदेशकौ तादृशं प्रयत्नं कुर्य्यातां येन धार्मिका दीर्घायुषो विद्वांसोऽध्येतारः स्युः॥९॥

पदार्थः-हे (**देवौ**) विद्वानो (**अश्विना**) सम्पूर्ण विद्याओं में व्याप्त आप दोनों! जैसे (**एषः**) यह ब्रह्मचारी (**वाम्**) आप दोनों अध्यापक और उपदेशक के (**साहदेव्यः**) विद्वानों के साथ रहनेवालों में श्रेष्ठ (**सोमकः**) चन्द्रमा के सदृश शीतलस्वभाववाला (**कुमारः**) ब्रह्मचारी (**दीर्घायुः**) बहुत काल पर्य्यन्त जीवने वाला (**अस्तु**) हो वैसा प्रयत्न करो॥९॥

भावार्थः-अध्यापक और उपदेशक ऐसा प्रयत्न करें कि जिससे धार्मिक अधिक अवस्था वाले और विद्वान् पढ़नेवाले होवें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तं युवं देवावश्विना कुमारं साहदेव्यम्। दीर्घायुषं कृणोतन॥१०॥१६॥

तम्। युवम्। देवौ। अश्विना। कुमारम्। साहऽदेव्यम्। दीर्घऽआयुषम्। कृणोतन॥१०॥

पदार्थः-(**तम्**) अध्येतारम् (**युवम्**) (**देवौ**) विद्यादातारौ (**अश्विना**) शुभगुणव्यापिनौ (**कुमारम्**) ब्रह्मचारिणम् (**साहदेव्यम्**) विद्वत्सहचरम् (**दीर्घायुषम्**) (**कृणोतन**) कुर्यातम्॥१०॥

अन्वयः-हे देवावश्विना युवं तं साहदेव्यं कुमारं दीर्घायुषं कृणोतन॥१०॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! विदुष्यो यूयमध्यापनाय प्रवर्त्तित्वा सुशिक्षां कृत्वा विद्यायोगं सम्पाद्य सर्वान्त्सतश्चिरञ्जीविनः कुरुतेति॥१०॥

अत्राग्निसञ्ज्ञाध्यापकाऽध्येतृकर्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चदशं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**देवौ**) विद्या के देनेवाले (**अश्विना**) श्रेष्ठ गुणों में व्यापक (**युवम्**) आप दोनों (**तम्**) उस पढ़नेवाले (**साहदेव्यम्**) विद्वानों के उत्तम साथी (**कुमारम्**) ब्रह्मचारी को (**दीर्घायुषम्**) अधिक

अवस्था वाला **(कृणोतन)** करो॥१०॥

भावार्थः-हे विद्वानो और विदुषियो! आप लोग पढ़ाने के लिये प्रवृत्त हो और उत्तम शिक्षा करके और विद्या के योग को सम्पादन करके सब श्रेष्ठ पुरुषों को बहुत कालपर्य्यन्त जीवनेवाले करो॥१०॥

इस सूक्त में अग्नि, राजा, अध्यापक और पढ़नेवाले के कर्म्मों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पन्द्रहवां सूक्त और सोलहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकाधिकविंशत्यृचस्य षोडशस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ४, ६, ८, ९, १२, १९ निचृत्त्रिष्टुप्। ३ त्रिष्टुप्। ७, १६, १७ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, २१ निचृत्पङ्क्तिः। ५, १३-१५ स्वराट्पङ्क्तिः। १०, ११, १८, २० भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथेन्द्रपदवाच्यराजविषयमाह॥

अब इक्कीस ऋचावाले सोलहवें सूक्त का प्रारम्भ है उसके प्रथम मन्त्र में इन्द्रपदवाच्य राजविषय को कहते हैं॥

आ सत्यो यातु मघवाँ ऋजीषी द्रवन्त्वस्य हरय उप नः।
तस्मा इदन्धः सुषुमा सुदक्षमिहाभिपित्वं करते गृणानः॥१॥

आ। सत्यः। यातु। मघऽवान्। ऋजीषी। द्रवन्तु। अस्य। हरयः। उप। नः। तस्मै। इत्। अन्धः। सुसुम। सुऽदक्षम्। इह। अभिऽपित्वम्। करते। गृणानः॥१॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**सत्यः**) सत्सु साधुः (**यातु**) आगच्छतु (**मघवान्**) बहुपूजितधनयुक्तः (**ऋजीषी**) ऋजुनीतिः (**द्रवन्तु**) गच्छन्तु (**अस्य**) राज्ञः (**हरयः**) मनुष्याः। **हरय इति मनुष्यनामसु पठितम्।** (निघं०२.३) (**उप**) (**नः**) अस्मान् (**तस्मै**) (**इत्**) (**अन्धः**) अन्नादिकम् (**सुषुम**) निष्पादयेम। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**सुदक्षम्**) सुष्ठुबलम्। (**इह**) अस्मिन् राज्ये (**अभिपित्वम्**) प्राप्तम् (**करते**) कुर्य्यात् (**गृणानः**) प्रशंसन्॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इह गृणानोऽभिपित्वं सुदक्षं करते तस्मा इदेव वयमन्धः सुषुम। यस्यास्य हरयो न द्रवन्तु स ऋजीषी सत्यो मघवान्नोऽस्मानुपायातु॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो राजाऽस्माकं बलं वर्धयेन्नीत्या प्रजाः पालयेद्यस्य पुरुषा अपि धार्मिकाः प्रजापालनप्रियाः स्युरस्मान् प्रेम्णा संयुञ्जीरँस्तदर्थं वयमैश्वर्य्यमुन्नयेम॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**इह**) इस राज्य में (**गृणानः**) प्रशंसा करता हुआ (**अभिपित्वम्**) प्राप्त (**सुदक्षम्**) श्रेष्ठ बल को (**करते**) करे (**तस्मै**) उसके लिये (**इत्**) ही हम लोग (**अन्धः**) अन्न आदि को (**सुषुम**) उत्पन्न करें, जिस (**अस्य**) इस राजा के (**हरयः**) मनुष्य नहीं (**द्रवन्तु**) जावें, वह (**ऋजीषी**) सरलनीति वाला (**सत्यः**) श्रेष्ठों में साधु और (**मघवान्**) बहुत श्रेष्ठ धन से युक्त जन (**नः**) हम लोगों के (**उप**) समीप (**आ**) सब प्रकार (**यातु**) प्राप्त होवे॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो राजा हम लोगों के बल को बढ़ावे और नीति से प्रजाओं का पालन करे और जिस राजा के पुरुष भी धार्मिक और प्रजा के पालन में प्रिय हों और हम लोगों को प्रेम से संयुक्त करें, उसके लिये हम लोग ऐश्वर्य्य की वृद्धि करें॥१॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अव॑ स्य शू॒राध्व॑नो॒ नान्ते॑ऽस्मिन्नो॑ अ॒द्य सव॑ने म॒न्दध्यै॑।

शंसा॑त्यु॒क्थमु॒शने॑व वे॒धाश्चि॑कि॒तुषे॑ असु॒र्या॑य॒ मन्म॑॥ २॥

अव॑। स्य॒। शू॒र॒। अध्व॑नः। न। अन्ते॑। अ॒स्मिन्। नः॒। अ॒द्य। सव॑ने। म॒न्दध्यै॑। शंसा॑ति। उ॒क्थम्। उ॒शना॑ऽइव। वे॒धाः। चि॒कि॒तुषे॑। अ॒सु॒र्या॑य। मन्म॑॥ २॥

पदार्थः-(**अव**) विरोधे (**स्य**) अन्तं प्रापय (**शूर**) शत्रूणां हिंसक (**अध्वनः**) मार्गस्य (**न**) निषेधे (**अन्ते**) समीपे (**अस्मिन्**) (**नः**) अस्माकम् (**अद्य**) (**सवने**) क्रियाविशेषयज्ञे (**मन्दध्यै**) मन्दितुमानन्दितुम् (**शंसाति**) शंसेत (**उक्थम्**) वक्तुं योग्यं शास्त्रम् (**उशनेव**) यथाकामाः (**वेधाः**) मेधावी (**चिकितुषे**) विज्ञापनाय (**असुर्याय**) असुरेष्वविद्वत्सु भवायाविदुषे (**मन्म**) विज्ञानम्॥ २॥

अन्वयः-हे शूर! योऽस्मिन् सवनेऽद्य मन्दध्यै नोऽस्मानुशनेव वेधा उक्थं मन्म शंसात्यसुर्य्याय चिकितुषे नः सवनेऽन्ते शंसाति तमध्वनो गन्तारं त्वं नाव स्य॥ २॥

भावार्थः-हे राजन्! ये धीमन्तः सर्वेभ्यो विद्याः कामयमाना उपदेशका भवेयुस्तान् सततं रक्ष॥ २॥

पदार्थः-हे (**शूर**) शत्रुओं के नाशक! जो (**अस्मिन्**) इस (**सवने**) क्रियाविशेषरूप यज्ञ में (**अद्य**) आज (**मन्दध्यै**) आनन्द करने को (**नः**) हम लोगों के (**उशनेव**) सदृश कामना करता हुआ (**वेधाः**) बुद्धिमान् जन (**उक्थम्**) कहने योग्य शास्त्र और (**मन्म**) विज्ञान को (**शंसाति**) प्रशंसित करे (**असुर्याय**) अविद्वानों में उत्पन्न अविद्वान् पुरुष के लिये (**चिकितुषे**) जनाने को हम लोगों के क्रियाविशेष यज्ञ में (**अन्ते**) समीप में प्रशंसित करे, उस (**अध्वनः**) मार्ग के जानेवाले को आप (**न**) न (**अव**) विरोध में (**स्य**) अन्त को प्राप्त कराओ॥ २॥

भावार्थः-हे राजन्! जो बुद्धिमान् सब से विद्याओं की कामना करते हुए उपदेशक हों, उनकी निरन्तर रक्षा करो॥ २॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

क॒विर्न नि॒ण्यं वि॒दथा॑नि॒ साध॒न् वृषा॒ यत्सेकं॑ विपिपा॒नो अर्चा॑त्।

दि॒व इ॒त्था जी॑जनत्स॒प्त का॒रूनह्ना॑ चिच्चक्रुर्व॒युना॑ गृ॒णन्तः॑॥ ३॥

क॒विः। न। नि॒ण्यम्। वि॒दथा॑नि। साध॑न्। वृषा॑। यत्। सेक॑म्। वि॒ऽपि॒पा॒नः। अर्चा॑त्। दि॒वः। इ॒त्था। जीज॑नत्। स॒प्त। का॒रून्। अह्ना॑। चि॒त्। च॒क्रुः। व॒युना॑। गृ॒णन्तः॑॥ ३॥

पदार्थः-(**कविः**) विद्वान् (**न**) इव (**निण्यम्**) निश्चितम् (**विदथानि**) विज्ञातव्यानि (**साधन्**) साध्नुवन् (**वृषा**) बलिष्ठः (**यत्**) यः (**सेकम्**) सिञ्चनम् (**विपिपानः**) विशेषेण रक्षन् (**अर्चात्**) सत्कुर्य्यात् (**दिवः**) प्रकाशान् (**इत्था**) अनेन प्रकारेण (**जीजनत्**) जनयति (**सप्त**) (**कारून्**) शिल्पिनः (**अह्ना**) दिवसेन (**चित्**) (**चक्रुः**) कुर्वन्ति (**वयुना**) प्रज्ञानानि (**गृणन्तः**) स्तुवन्त उपदिशन्तः॥३॥

अन्वयः-गृणन्तो विद्वांसोऽह्ना वयुना चक्रुः सप्त कारूञ्चिच्चक्रुरित्था यद्यो वृषा सेकं विपिपानो विदथानि साधन् दिवोऽर्चात् स निण्यं दिवः कविर्न जीजनत्॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये जना विद्यापुरुषार्थौ वर्धयन्ति ते सप्तविधाञ्छिल्पविदुषः कृत्वा सर्वाणि कार्य्याणि साधयित्वा कामसिद्धिं कर्त्तुं शक्नुयुः॥३॥

पदार्थः-(**गृणन्तः**) स्तुति और उपदेश करते हुए विद्वान् जन (**अह्ना**) दिन से (**वयुना**) प्रज्ञानों को (**चक्रुः**) करते हैं और (**सप्त**) सात (**कारून्**) कारीगर जनों को (**चित्**) भी करते हैं (**इत्था**) इस प्रकार से (**यत्**) जो (**वृषा**) बलिष्ठ (**सेकम्**) सिंचन की (**विपिपानः**) विशेष करके रक्षा और (**विदथानि**) जानने के योग्यों को (**साधन्**) सिद्ध करता हुआ (**दिवः**) प्रकाशों का (**अर्चात्**) सत्कार करे, वह (**निण्यम्**) निश्चित प्रकाशों को (**कविः**) विद्वान् के (**न**) सदृश (**जीजनत्**) उत्पन्न करता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो जन विद्या और पुरुषार्थ को बढ़ाते हैं, वे सात प्रकार के कारीगरों को करके सब कार्य्यों को सिद्ध करा कामसिद्धि कर सकें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्वर्यद्वेदि सुदृशीकमर्कैर्महि ज्योती रुरुचुर्यद्ध वस्तोः।

अन्धा तमांसि दुधिता विचक्षे नृभ्यश्चकार नृतमो अभिष्टौ॥४॥

स्वः। यत्। वेदि। सुऽदृशीकम्। अर्कैः। महि। ज्योतिः। रुरुचुः। यत्। ह। वस्तोः। अन्धा। तमांसि। दुधिता। विऽचक्षे। नृऽभ्यः। चकार। नृऽतमः। अभिष्टौ॥४॥

पदार्थः-(**स्वः**) सुखम् (**यत्**) (**वेदि**) विज्ञायते (**सुदृशीकम्**) सुष्ठु द्रष्टुं योग्यम् (**अर्कैः**) मन्त्रैर्विचारैः (**महि**) महत् (**ज्योतिः**) प्रकाशमयम् (**रुरुचुः**) रोचन्ते (**यत्**) (**ह**) (**वस्तोः**) दिनम् (**अन्धा**) अन्धकाररूपाणि (**तमांसि**) रात्रीः (**दुधिता**) दुधितानि दुर्हितानि (**विचक्षे**) प्रकाशयति (**नृभ्यः**) नायकेभ्यो मनुष्येभ्यः (**चकार**) करोति (**नृतमः**) अतिशयेन नायकः (**अभिष्टौ**) अभितः सङ्गते कर्मणि॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यत्सुदृशीकं महि ज्योतिस्स्वर्वेदि यद्ध वस्तोः किरणा रुरुचुयस्सूर्य्योऽन्धा तमांसि दुधिता विचक्षे तेन यो नृतमोऽभिष्टावर्कैर्नृभ्यः स्वश्चकार स एव सर्वैः सत्कर्त्तव्यो भवति॥४॥

भावार्थः-नित्यं नीतिवीरताभ्यां सम्वर्द्धितराज्यकर्म्मणि राजप्रजाजनेषु सर्वतः सुखं प्रतिदिनं सूर्य्यप्रकाश इव वर्द्धते॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्)** जो **(सुदृशीकम्)** उत्तम प्रकार देखने योग्य **(महि)** बड़ा **(ज्योतिः)** प्रकाशमय **(स्वः)** सुख **(वेदि)** जाना जाता है **(यत्)** जो **(ह)** निश्चय **(वस्तोः)** दिन को किरणें **(रुरुचुः)** प्रकाशित करते हैं और जिनसे सूर्य्य **(अन्धा)** अन्धकाररूप **(तमांसि)** रात्रियों को **(दुधिता)** दूर की हुई **(विचक्षे)** प्रकाशित करता है, तिससे जो **(नृतमः)** अत्यन्त नायक **(अभिष्टौ)** चारों ओर से सङ्गत कर्म्म में **(अर्कैः)** विचारों से **(नृभ्यः)** नायक मनुष्यों के लिये सुख को **(चकार)** करता है, वही सब लोगों के सत्कार करने योग्य होता है॥४॥

भावार्थः-नित्य नीति और वीरता से अच्छे प्रकार बढ़े हुए राज्यकर्म में राजा और प्रजाओं में सब ओर से सुख प्रतिदिन सूर्यप्रकाश के समान बढ़ता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

व॒व॒क्ष इन्द्रो॒ अमि॑तमृजी॒ष्यु१॒॑भे आ प॑प्रौ रोद॑सी महि॒त्वा।

अत॑श्चिदस्य महि॒मा वि रे॑च्य॒भि यो विश्वा॒ भुव॑ना ब॒भूव॑॥५॥१७॥

व॒व॒क्षे। इन्द्रः॑। अमि॑तम्। ऋ॒जी॒षी। उ॒भे इति॑। आ। प॒प्रौ। रोद॑सी॒ इति॑। म॒हि॒ऽत्वा। अत॑ः। चि॒त्। अ॒स्य। म॒हि॒मा। वि। रे॒चि॒। अ॒भि। यः। विश्वा॑। भुव॑ना। ब॒भूव॑॥५॥

पदार्थः-**(ववक्षे)** वहति **(इन्द्रः)** सूर्य्य इव राजा **(अमितम्)** अपरिमितम् **(ऋजीषी)** ऋजुः **(उभे)** द्वे **(आ)** **(पप्रौ)** व्याप्नोति **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(महित्वा)** महत्त्वेन **(अतः)** **(चित्)** अपि **(अस्य)** **(महिमा)** **(वि)** **(रेचि)** विरिच्यते **(अभि)** **(यः)** **(विश्वा)** सर्वाणि **(भुवना)** भुवनानि **(बभूव)**॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वर इन्द्र इवाभि बभूव यतश्चिदस्य महिमा वि रेचि यो विश्वा भुवना दधात्यत उभे रोदसी महित्वा आ पप्रावृजीषी सन्नमितं ववक्षे स एव सर्वेभ्यो महान् वेद्यः॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सर्वेभ्यो जगदीश्वरस्य महिमानमधिकं जानन्ति तेऽत्र महीयन्ते॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो जगदीश्वर **(इन्द्रः)** सूर्य्य के सदृश राजा **(अभि, बभूव)** हुआ जिससे **(चित्)** भी **(अस्य)** इसका **(महिमा)** बड़प्पन **(वि, रेचि)** विशेष करके शोभित होता है और जो **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(भुवना)** भुवनों को धारण करता है **(अतः)** इससे **(उभे)** दोनों **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी को **(महित्वा)** महत्त्व से **(आ, पप्रौ)** व्याप्त करता है और **(ऋजीषी)** सरल हुआ **(अमितम्)** परिमाणरहित पदार्थ **(ववक्षे)** प्राप्त करता है, वही सब से बड़ा समझना चाहिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य सब से जगदीश्वर का बड़प्पन अधिक जानते हैं, वे इस जगत् में प्रतिष्ठा को प्राप्त होते हैं॥५॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विश्वा॑नि श॒क्रो नर्या॑णि वि॒द्वान॒पो रि॑रेच॒ सखि॑भि॒र्निका॑मैः।

अश्मा॑नं चि॒द्ये बि॑भि॒दुर्वचो॑भिर्व्र॒जं गोम॑न्तमु॒शिजो॒ वि व॑व्रुः॥६॥

विश्वा॑नि। श॒क्रः। नर्या॑णि। वि॒द्वान्। अ॒पः। रि॒रे॒च॒। सखि॑ऽभिः। निऽका॑मैः। अश्मा॑नम्। चि॒त्। ये। बि॒भि॒दुः। वच॑ःऽभिः। व्र॒जम्। गोऽम॑न्तम्। उ॒शिज॑ः। वि। व॒व्रु॒रिति॑ वव्रुः॥६॥

पदार्थः-(**विश्वानि**) सर्वाणि (**शक्रः**) शक्तिमान् (**नर्याणि**) नृषु साधूनि (**विद्वान्**) (**अपः**) कर्म्माणि (**रिरेच**) रिणक्ति (**सखिभिः**) मित्रैः (**निकामैः**) नित्यः कामो येषान्तैः (**अश्मानम्**) मेघम् (**चित्**) इव (**ये**) (**बिभिदुः**) भिन्दन्ति (**वचोभिः**) वचनैः (**व्रजम्**) (**गोमन्तम्**) बह्व्यो गावो विद्यन्ते यस्मिंस्तम् (**उशिजः**) कामयमानाः (**वि**) (**वव्रुः**)॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये वायवोऽश्मानं चिदिव बिभिदुर्गोमन्तं व्रजमुशिज इव न्यायं वि वव्रुस्तैर्निकामैः सखिभिः सह यः शक्रो विद्वान् विश्वानि नर्याण्यपो वचोभी रिरेच स एव पृथिवीं भोक्तुमर्हति॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। सूर्यो मेघमिव दुष्टनिवारका गोपाला व्रजाद् गा इवाऽन्यायाद् विमोचयितारः सखायो यस्य भवेयुः स नरो भूपतिर्भवितुमर्हति॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**ये**) जो पवन (**अश्मानम्**) जैसे मेघ को (**चित्**) वैसे (**बिभिदुः**) विदीर्ण करते हैं (**गोमन्तम्**) बहुत गौओं से युक्त (**व्रजम्**) गौओं के स्थान की (**उशिजः**) कामना करते हुओं के समान न्याय को (**वि, वव्रुः**) अस्वीकार करते हैं, उन (**निकामैः**) नित्य कामना वाले (**सखिभिः**) मित्रों के साथ जो (**शक्रः**) सामर्थ्य वाला (**विद्वान्**) विद्वान् (**विश्वानि**) सम्पूर्ण (**नर्याणि**) मनुष्यों में उत्तम (**अपः**) कर्मों को (**वचोभिः**) वचनों से (**रिरेच**) पृथक् करता है, वही पृथिवी के भोगने के योग्य है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमावाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। सूर्य्य जैसे मेघ का वैसे दुष्टों के निवारण करनेवाले वा गोपाल लोग जैसे व्रज अर्थात् गौओं के बाड़े से गौओं को वैसे अन्याय से पृथक् करने वाले जिस पुरुष के मित्र होवें, वह मनुष्य राजा होने के योग्य है॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अपो वृत्रं वव्रिवांसं पराहन् प्रावत्ते वज्रं पृथिवी सचेताः।
प्रार्णांसि समुद्रियाण्यैनोः पतिर्भवञ्छवसा शूर धृष्णो॥७॥

अपः। वृत्रम्। वव्रिऽवांसम्। परा। अहन्। प्र। आवत्। ते। वज्रम्। पृथिवी। सऽचेताः। प्र। अर्णांसि। समुद्रियाणि। ऐनोः। पतिः। भवन्। शवसा। शूर। धृष्णो इति॥७॥

पदार्थः-(**अपः**) जलानि (**वृत्रम्**) मेघम् (**वव्रिवांसम्**) विवृतम् (**परा**) (**अहन्**) हन्ति (**प्र, आवत्**) रक्षति (**ते**) तव (**वज्रम्**) किरणरूपम् (**पृथिवी**) (**सचेताः**) चेतसा सहितः (**प्र**) (**अर्णांसि**) उदकानि (**समुद्रियाणि**) समुद्रार्हाणि (**ऐनोः**) प्रेरयेः (**पतिः**) स्वामी (**भवन्**) (**शवसा**) बलेन (**शूर**) (**धृष्णो**) दृढात्मन्॥७॥

अन्वयः-हे धृष्णो शूर! सचेताः शवसा पतिर्भवन्संस्त्वं यथा सूर्य्यो वज्रं प्रहृत्यापो वृत्रं वव्रिवांसं पराहन् समुद्रियाण्यर्णांसि पृथिवीव प्रावत् तथा ते यः प्रजां रक्षित्वा शत्रून् हन्यात् त्वं प्रैनोः॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्य्यवत्प्रजाः सुखयन्ति त एव राजकर्मसु प्रेरणीयाः सन्ति॥७॥

पदार्थः-हे (**धृष्णो**) दृढ़ आत्मा वाले (**शूर**) वीरपुरुष! (**सचेताः**) चित्त के सहित वर्त्तमान (**शवसा**) बल से (**पतिः**) स्वामी (**भवन्**) होते हुए आप जैसे सूर्य्य (**वज्रम्**) किरणरूपी वज्र को फटकार (**अपः**) जलों को प्रकट करते (**वृत्रम्**) मेघ को (**वव्रिवांसम्**) फैल प्रकट (**परा, अहन्**) मारता और (**समुद्रियाणि**) समुद्र के योग्य (**अर्णांसि**) जलों की (**पृथिवी**) पृथिवी के सदृश (**प्र, आवत्**) रक्षा करता है, वैसे (**ते**) आपकी जो प्रजा की रक्षा करके शत्रुओं का नाश करे उसको आप (**प्र, ऐनोः**) प्रेरणा करो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग सूर्य के सदृश प्रजाओं को सुख देते हैं, वे ही राजकर्म्मों में प्रेरणा करने योग्य होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अपो यदद्रिं पुरुहूत दर्दराविर्भुवत्सरमा पूर्व्यं ते।
स नो नेता वाजमा दर्षि भूरिं गोत्रा रुजन्नङ्गिरोभिर्गृणानः॥८॥

अपः। यत्। अद्रिम्। पुरुऽहूत। दर्दः। आविः। भुवत्। सरमा। पूर्व्यम्। ते। सः। नः। नेता। वाजम्। आ। दर्षि। भूरिम्। गोत्रा। रुजन्। अङ्गिरःऽभिः। गृणानः॥८॥

पदार्थः-(**अपः**) जलानि (**यत्**) यः (**अद्रिम्**) मेघम् (**पुरुहूत**) बहुभिः प्रशंसित (**दर्दः**) विदारय (**आविः**) प्राकट्ये (**भुवत्**) भवेत् (**सरमा**) या सरति सा सरला नीतिः (**पूर्व्यम्**) पूर्वम् (**ते**) तव (**सः**)

(नः) अस्माकम् **(नेता)** **(वाजम्)** वेगम् **(आ)** **(दर्षि)** विदीर्णं करोषि **(भूरिम्)** विपुलम् **(गोत्रा)** गोत्राणि मेघस्याऽवयवान् **(रुजन्)** भग्नानि कुर्वन् **(अङ्गिरोभिः)** वायुभिः **(गृणानः)** स्तूयमानः॥८॥

अन्वयः-हे पुरुहूत! या ते सरमाऽऽविर्भुवत्तया त्वं शत्रून् दर्दो यद्यो नो नेताऽऽविर्भुवत्तेन सह पूर्व्यं वाजमादर्षि यस्त्वमङ्गिगिरोभिस्सूर्योऽप इव गृणानो गोत्रा भूरिमद्रिं रुजन् वर्त्तसे, स ते सेनापतिर्भवेत्॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! ये शुद्धनीतयो मनुष्याः प्रसिद्धाः स्युस्तान् रक्षित्वा न्यायेन प्रजाः पालय॥८॥

पदार्थः-हे **(पुरुहूत)** बहुतों से प्रशंसित! जो **(ते)** आपकी **(सरमा)** सरलनीति **(आविः)** प्रकट **(भुवत्)** होवे उससे आप शत्रुओं का **(दर्दः)** नाश करो **(यत्)** जो **(नः)** हम लोगों का **(नेता)** नायक प्रकट होवे उसके साथ **(पूर्व्यम्)** पूर्व **(वाजम्)** वेग का **(आ, दर्षि)** नाश करते हो और जो आप **(अङ्गिरोभिः)** पवनों से सूर्य जैसे **(अपः)** जलों को वैसे **(गृणानः)** स्तुति करते हुए **(गोत्रा)** मेघों के अवयवों को और **(भूरिम्)** बहुत **(अद्रिम्)** मेघ को **(रुजन्)** छिन्न-भिन्न करते हुए वर्त्तमान हो **(सः)** वह आपका सेनापति होवे॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जो शुद्धनीति वाले मनुष्य प्रसिद्ध होवें, उनकी रक्षा करके न्याय से प्रजाओं का पालन करो॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अच्छा॑ क॒विं नृ॑मणो गा अ॒भिष्टौ॒ स्व॑र्षाता मघव॒न्नाध॑मानम्।

ऊ॒तिभि॒स्तमि॑षणो द्यु॒म्नहू॑तौ॒ नि मा॒यावा॒नब्र॑ह्मा॒ दस्यु॑रर्त॥९॥

अच्छ॑। क॒विम्। नृ॒ऽम॒नः॒। गाः॒। अ॒भिष्टौ॑। स्व॑ःऽसाता। म॒घ॒ऽव॒न्। नाध॑मानम्। ऊ॒तिऽभि॑ः। तम्। इ॒ष॒णः॒। द्यु॒म्नऽहू॑तौ। नि। मा॒याऽवा॑न्। अब्र॑ह्मा। दस्यु॑ः। अ॒र्त॒॥९॥

पदार्थः-**(अच्छ)** अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(कविम्)** विद्वांसम् **(नृमणः)** नृषु मनो यस्य तत्सम्बुद्धौ **(गाः)** वाचः **(अभिष्टौ)** अभीष्टसिद्धौ **(स्वर्षाता)** सुखस्यान्तं प्राप्तः **(मघवन्)** बहुधनयुक्त **(नाधमानम्)** ऐश्वर्य्यं कुर्वाणम् **(ऊतिभिः)** रक्षणादिभिः **(तम्)** **(इषणः)** प्रेरयेः **(द्युम्नहूतौ)** धनयशसोर्हूतिः प्राप्तिर्यस्यां तस्याम् **(नि)** **(मायावान्)** कुत्सितप्रज्ञायुक्तः **(अब्रह्मा)** अवेदवित् **(दस्युः)** दुष्टस्वभावः **(अर्त्त)** नश्यतु॥९॥

अन्वयः-हे नृमणो मघवन्! स्वर्षाता त्वमूतिभिरभिष्टौ द्युम्नहूतौ गा नाधमानं कविं चाच्छेषणो यो मायावानब्रह्मा दस्युरर्त्त तं त्वं नीषणो निस्सारय॥९॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वं कपटिनो मूर्खान् दस्यून् हत्वा धार्मिकान् विदुषः सत्कृत्य प्रशंसितः सन्नस्माकं राजा भव॥९॥

पदार्थः-हे **(नृमणः)** मनुष्यों में मन रखनेवाले **(मघवन्)** बहुत धन से युक्त! **(स्वर्षाता)** सुख के अन्त को प्राप्त आप **(ऊतिभिः)** रक्षण आदि से **(अभिष्टौ)** अभीष्ट की सिद्धि होने पर **(द्युम्नहूतौ)** धन और यश की प्राप्ति जिसमें उसमें **(गाः)** वाणियों को **(नाधमानम्)** ईश्वरीय भाव को पहुंचाते हुए **(कविम्)** विद्वान् को **(अच्छ)** उत्तम प्रकार प्रेरणा करें और जो **(मायावान्)** निकृष्ट बुद्धियुक्त **(अब्रह्मा)** वेद को नहीं जानने वाला **(दस्युः)** दुष्ट स्वभावयुक्त पुरुष [का] **(अर्त्त)** नाश हो **(तम्)** उसको आप **(नि, इषणः)** निकालें॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! आप कपटी, मूर्ख और दुष्ट स्वभाव वाले मनुष्यों का नाश करके और धार्मिक विद्वानों का सत्कार करके प्रशंसित हुए हम लोगों के राजा हूजिये॥९॥

अथ राजविषयसम्बन्धिप्रजाविषयमाह॥

अब राजविषयसम्बन्धिप्रजाविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ द॑स्युघ्ना मन॑सा याह्यस्तं भुव॑त्ते कुत्स॑: स॒ख्ये निका॑मः।

स्वे योनौ॒ नि ष॑दतं॒ सरू॑पा॒ वि वां॑ चिकित्सदृत॒चिद्ध॒ नारी॑॥१०॥१८॥

आ। दु॒स्यु॒ऽघ्ना। मन॑सा। या॒हि। अस्त॑म्। भुव॑त्। ते। कुत्स॑ः। स॒ख्ये। निऽका॑मः। स्वे। योनौ॑। नि। स॒द॒त॒म्। स॒ऽरू॑पा। वि। वा॒म्। चि॒कि॒त्स॒त्। ऋ॒त॒ऽचि॑त्। ह॒। नारी॑॥१०॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(दस्युघ्ना)** या दस्यून् हन्ति सा **(मनसा)** अन्तःकरणेन **(याहि)** प्राप्नुहि **(अस्तम्)** प्रक्षिप्ताम् **(भुवत्)** भवेत् **(ते)** तव **(कुत्सः)** निन्दितः **(सख्ये)** मित्राय **(निकामः)** निकृष्टः कामो यस्य सः **(स्वे)** स्वकीये **(योनौ)** गृहे **(नि)** **(सदतम्)** तिष्ठतम् **(सरूपा)** समानं रूपं यस्याः सा **(वि)** **(वाम्)** युवयोः **(चिकित्सत्)** चिकित्सेत् **(ऋतचित्)** या ऋतं सत्यं चिनोति सा **(ह)** किल **(नारी)** नरस्य स्त्री॥१०॥

अन्वयः-हे नर! या मनसा दस्युघ्ना सरूपा ऋतचिन्नारी भुवत्तां त्वमायाहि यस्ते सख्ये कुत्सो निकामो भुवत्तमस्तं कुरु यश्च ते स्वे योनौ वि चिकित्सत्तौ ह वां गृहे निषदतम्॥१०॥

भावार्थः-हे पुरुष! त्वं निन्दितां स्त्रियं त्यक्त्वा समानरूपां दोषघ्नीं प्राप्नुहि द्वौ मिलित्वा प्रीत्या स्वे गृहे निषीदतम्॥१०॥

पदार्थः-हे मनुष्य जो! **(मनसा)** अन्तःकरण से **(दस्युघ्ना)** दुष्टस्वभाव वालों को मारती **(सरूपा)** गुणादिकों से तुल्य रूपवती **(ऋतचित्)** सत्य को इकट्ठा करने वाली **(नारी)** मनुष्य की स्त्री **(भुवत्)** हो उसको आप **(आ)** सब प्रकार **(याहि)** प्राप्त हूजिये और जो **(ते)** आपके **(सख्ये)** मित्र के लिये **(कुत्सः)** निन्दित **(निकामः)** निकृष्ट कामनायुक्त होवे उसको आप **(अस्तम्)** प्रक्षिप्त अर्थात् दूर

करो और आपके **(स्वे)** अपने **(योनौ)** गृह में **(वि, चिकित्सत्)** विशेष चिकित्सा करता है, वह दोनों **(ह)** निश्चय से **(वाम्)** आप दोनों के गृह में **(नि, सदतम्)** रहें॥१०॥

भावार्थः-हे पुरुष! आप निन्दित स्त्री का त्याग करके समान रूपवाली और दोषों के नाश करनेवाली को प्राप्त होओ और दोनों मिल कर प्रीति से अपने गृह में रहो॥१०॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यासि कुत्सेन सरथमवस्युस्तोदो वातस्य हर्योरीशानः।

ऋज्रा वाजं न गध्यं युयूषन् कविर्यदहन् पार्याय भूषात्॥११॥

यासि। कुत्सेन। सऽरथम्। अवस्युः। तोदः। वातस्य। हर्योः। ईशानः। ऋज्रा। वाजम्। न। गध्यम्। युयूषन्। कविः। यत्। अहन्। पार्याय। भूषात्॥११॥

पदार्थः-**(यासि)** गच्छसि **(कुत्सेन)** कुत्सितकर्मणा **(सरथम्)** रथादिभिः सहितं सैन्यम् **(अवस्युः)** आत्मनोऽवो रक्षणमिच्छुः **(तोदः)** शत्रूणां हन्ता **(वातस्य)** वायोः **(हर्य्योः)** अश्वयोः **(ईशानः)** स्वामी **(ऋज्रा)** ऋज्राणि **(वाजम्)** वेगम् **(न)** इव **(गध्यम्)** ग्रहीतव्यम्। अत्र वर्णव्यत्ययेन रेफलोपो हस्य धः। **(युयूषन्)** मिश्रयितुमिच्छन् **(कविः)** क्रान्तप्रज्ञः **(यत्)** यः **(अहन्)** हन्ति **(पार्य्याय)** पारभवाय **(भूषात्)** अलङ्कुर्यात्॥११॥

अन्वयः-हे राजन्! यतस्त्वमवस्युस्तोदो वातस्य हर्योरीशानः सन् सरथं यासि ऋज्रा गध्यं वाजं न युयूषन् कविः सन् कुत्सेन सहितमहन् यद्यः पार्याय भूषात् तं प्राप्नोषि तस्माद्राज्यं कर्त्तुं शक्नोसि॥११॥

भावार्थः-ये कुत्सितानि कर्माणि निन्दितजनसङ्गं च विहाय सत्येन न्यायेन प्रजाः पालयन्तः पुरुषार्थयेयुस्ते सर्वतोऽलङ्कृताः स्युः॥११॥

पदार्थः-हे राजन्! जिससे आप **(अवस्युः)** अपनी रक्षा की इच्छा करते हुए **(तोदः)** शत्रुओं के नाशकर्त्ता **(वातस्य)** पवन और **(हर्य्योः)** घोड़ों के **(ईशानः)** स्वामी होते हुए **(सरथम्)** रथ आदिकों के सहित सेना को **(यासि)** प्राप्त होते हो **(ऋज्रा)** और सरल गमनों को **(गध्यम्)** ग्रहण करने योग्य **(वाजम्)** वेग के **(न)** सदृश **(युयूषन्)** मिलाने की इच्छा करते हुए **(कविः)** श्रेष्ठ बुद्धियुक्त **(कुत्सेन)** निकृष्ट कर्म के सहित वर्त्तमान का **(अहन्)** नाश करता है **(यत्)** जो **(पार्याय)** पार होने के लिये **(भूषात्)** शोभित करे उसको प्राप्त होते हो, इससे राज्य करने को समर्थ हो सकते हो॥११॥

भावार्थः-जो लोग निन्दित कर्म्म और निन्दित जन के सङ्ग का त्याग करके सत्यन्याय से प्रजाओं का पालन करते हुए पुरुषार्थ करें, वे सब प्रकार से शोभित होवें॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कुत्साय शुष्णमशुषं नि बर्हीः प्रपित्वे अह्नः कुयवं सहस्रा।

सद्यो दस्यून् प्र मृण कुत्स्येन प्र सूरश्चक्रं वृहतादभीके॥१२॥

कुत्साय। शुष्णम्। अशुषम्। नि। बर्हीः। प्रऽपित्वे। अह्नः। कुयवम्। सहस्रा। सद्यः। दस्यून्। प्र। मृण। कुत्स्येन। प्र। सूरः। चक्रम्। वृहतात्। अभीके॥१२॥

पदार्थः-(**कुत्साय**) निन्दिताय (**शुष्णम्**) शुष्कं नीरसम् (**अशुषम्**) असुरं दुःखम् (**नि**) (**बर्हीः**) उत्पाटय (**प्रपित्वे**) प्रकृष्टप्राप्ते (**अह्नः**) दिवसस्य (**कुयवम्**) कुत्सिता यवा यस्य तम् (**सहस्रा**) सहस्राणि (**सद्यः**) (**दस्यून्**) दुष्टान् चोरान् (**प्र**) (**मृण**) हिन्धि (**कुत्स्येन**) कुत्से वज्रे भवेन वेगेन (**प्र**) (**सूरः**) सूर्य्यः (**चक्रम्**) चक्रमिव वर्त्तमानं ब्रह्माण्डम् (**वृहतात्**) छिन्द्यात् (**अभीके**) समीपे॥१२॥

अन्वयः-हे राजंस्त्वमह्नः प्रपित्वे कुत्साय कुयवं शुष्णमशुषं निबर्हीः सूरश्चक्रमिव कुत्सेन सहस्रा दस्यून् सद्यः प्रमृणाऽभीके प्रवृहतात्॥१२॥

भावार्थः-हे राजन्! भवान् वज्रादिशस्त्रैर्दस्यून् हत्वा सूर्य्यप्रतापी भवतु॥१२॥

पदार्थः-हे राजन्! आप (**अह्नः**) दिन के (**प्रपित्वे**) उत्तम प्रकार प्राप्त होने पर (**कुत्साय**) निन्दित व्यवहार के लिये (**कुयवम्**) निकृष्ट यव जिसके उस (**शुष्णम्**) रसरहित (**अशुषम्**) दुःख को (**नि, बर्हीः**) दूर करो और जैसे (**सूरः**) सूर्य्य (**चक्रम्**) चक्र के सदृश वर्त्तमान ब्रह्माण्ड को (**कुत्सेन**) वैसे वज्र में हुए वेग से (**सहस्रा**) सहस्रों (**दस्यून्**) दुष्ट चोरों को (**सद्यः**) शीघ्र (**प्र**) (**मृण**) नाश कीजिये (**अभीके**) समीप में (**प्र, वृहतात्**) छेदन कीजिये॥१२॥

भावार्थः-हे राजन्! आप वज्र आदि शस्त्रों से दुष्ट चोरों का नाश करके सूर्य्य के सदृश प्रतापी हूजिये॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं पिप्रुं मृगयं शूशुवांसमृजिश्वने वैदथिनाय रन्धीः।

पञ्चाशत्कृष्णा नि वपः सहस्रात्कं न पुरो जरिमा वि दर्दः॥१३॥

त्वम्। पिप्रुम्। मृगयम्। शूशुऽवांसम्। ऋजिश्वने। वैदथिनाय। रन्धीः। पञ्चाशत्। कृष्णा। नि। वपः। सहस्रा। अत्कम्। न। पुरः। जरिमा। वि। दुर्दुरिति दर्दः॥१३॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**पिप्रुम्**) व्यापकम् (**मृगयम्**) मृगमाचक्षाणम् (**शूशुवांसम्**) बलेन वृद्धम् (**ऋजिश्वने**) ऋजुगुणैर्वृद्धाय (**वैदथिनाय**) विज्ञानवतोऽपत्याय (**रन्धीः**) हिंस्याः (**पञ्चाशत्**) (**कृष्णा**) कृष्णानि सैन्यानि (**नि**) (**वपः**) सन्तनुहि (**सहस्रा**) सहस्राणि (**अत्कम्**) अतति व्याप्नोति तं वायुम् (**न**) इव (**पुरः**) (**जरिमा**) अतिशयेन जरा (**वि**) (**दर्दः**) विदारय॥१३॥

अन्वयः-हे राजंस्त्वं वैदथिनाय ऋजिश्वने पिप्रुं शूशुवांसं मृगयं रन्धीः। अत्कं जरिमा न पुरः पञ्चाशत्सहस्रा कृष्णा निवपो दुष्टान् वि दर्दः॥१३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। राजादिराजपुरुषैः सेनायां सहस्राणि वीरान् रक्षयित्वा विनयेन जरा रूपाणि बलानि हरतीव शत्रूणां बलं शनैः शनैर्हत्वा शुद्धा नीतिः प्रचारणीया॥१३॥

पदार्थः-हे राजन्! **(त्वम्)** आप **(वैदथिनाय)** विज्ञानवाले के पुत्र के लिये **(ऋजिश्वने)** सरलता आदि गुणों से बढ़े हुए पुरुष के लिये **(पिप्रुम्)** व्यापक **(शूशुवांसम्)** बल से वृद्ध **(मृगयम्)** मृग को ढूंढनेवाले का **(रन्धीः)** नाश करो और **(अत्कम्)** व्याप्त होने वाले वायु को **(जरिमा)** अतिवृद्ध अवस्था के **(न)** सदृश **(पुरः)** आगे **(पञ्चाशत्)** पचास और **(सहस्रा)** सहस्रों **(कृष्णा)** कृष्णवर्ण वाले सैन्यजनों का **(नि, वपः)** विस्तार करो और दुष्ट पुरुषों का **(वि, दर्दः)** नाश करो॥१३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। राजा आदि राजपुरुषों को चाहिये कि सेना में हजारों वीरों को रखके और नम्रता से वृद्धावस्था जैसे रूप और बलों को हरती है, वैसे ही शत्रुओं के बल को धीरे-धीरे नष्ट कर शुद्ध नीति का प्रचार करो॥१३॥

अथ राजविषये सैन्यपुरुषरक्षणं तत्फलं चाह॥

अब राजविषय में सेनायोग्य पुरुषों के रखने और उनके फल को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सूर उपाके तन्वं१ दधानो वि यत्ते चेत्यमृतस्य वर्पः।

मृगो न हस्ती तविषीमुषाणः सिंहो न भीम आयुधानि बिभ्रत्॥१४॥

सूरः। उपाके। तन्वम्। दधानः। वि। यत्। ते। चेति। अमृतस्य। वर्पः। मृगः। न। हस्ती। तविषीम्। उषाणः। सिंहः। न। भीमः। आयुधानि। बिभ्रत्॥१४॥

पदार्थः-**(सूरः)** सूर्य्य इव **(उपाके)** समीपे **(तन्वम्)** तेजस्विशरीरम् **(दधानः)** धरन् **(वि)** **(यत्)** यः **(ते)** तव **(चेति)** ज्ञाप्यते **(अमृतस्य)** नित्यस्य **(वर्पः)** रूपम् **(मृगः)** **(न)** इव **(हस्ती)** **(तविषीम्)** बलयुक्तां सेनाम् **(उषाणः)** दहन् **(सिंहः)** **(न)** इव **(भीमः)** **(आयुधानि)** असिभुशुण्डीशतघ्न्यादीनि **(बिभ्रत्)** धरन्॥१४॥

अन्वयः-हे राजन्! यद्य उपाके सूर इव तन्वं दधानस्तेऽमृतस्य वर्पो मृगो न वेगवान् हस्तीव बलिष्ठः सिंहो न भीम आयुधानि बिभ्रच्छत्रुतविषीमुषाणो वि चेति तं त्वं सदा सत्कृत्य रक्ष॥१४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन्! ये दीर्घब्रह्मचर्य्येण सूर्यवत्तेजस्विनो रूपवन्तो वेगवन्तो बलिष्ठाः सिंहवत्पराक्रमिणो धनुर्वेदविदो जनाः स्युस्तत्सेनया शत्रून् विजित्य सर्वत्र सत्कीर्त्या विदितो भव॥१४॥

पदार्थः-हे राजन्! **(यत्)** जो **(उपाके)** समीप में **(सूरः)** सूर्य्य के सदृश **(तन्वम्)** तेजस्वि शरीर

को **(दधानः)** धारण करता हुआ **(ते)** तुम्हारा **(अमृतस्य)** नित्य वस्तु के **(वर्पः)** रूप और **(मृगः)** हरिण के **(न)** तुल्य वा वेगवान् **(हस्ती)** हाथी के तुल्य बलवान् वा **(सिंहः)** सिंह के **(न)** तुल्य **(भीमः)** भयङ्कर **(आयुधानि)** तलवार, भुशुण्डी, शतघ्न्यादि नामों से प्रसिद्ध आयुधों को **(बिभ्रत्)** धारण और शत्रुओं की **(तविषीम्)** बलयुक्त सेना का **(उषाणः)** दाह करता हुआ **(वि, चेति)** जनाया जाता है, उसका आप सदा सत्कार करके रक्खो॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! जो लोग दीर्घ ब्रह्मचर्य से सूर्य्य के समान तेजस्वी रूपवान् और वेगवान् बलिष्ठ, सिंह के सदृश पराक्रमी, धनुर्वेद के जानने वाले जन हों; उनकी सेना से शत्रुओं को जीतकर सब स्थानों में उत्तम कीर्ति से विदित हूजिये॥१४॥

अथ राजविषये सेनामात्यादियोग्यताविषयं चाह॥

अब राजविषय में सेना और अमात्य आदिकों की योग्यता के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रं कामा॑ वसूयन्तो॑ अग्मन्त्स्व॑र्मीळ्हे न सव॑ने चकानाः।
श्रवस्यव॑: शशमानास॑ उक्थैरोको न रण्वा सुदृशी॑व पुष्टिः॥१५॥१६॥

इन्द्र॑म्। कामा॑:। वसुऽयन्त॑:। अग्मन्। स्व॑:ऽमीळ्हे। न। सव॑ने। चकानाः। श्रवस्यव॑:। शशमानास॑:। उक्थैः। ओक॑:। न। रण्वा। सुदृशी॑ऽइव। पुष्टिः॥१५॥

पदार्थः-**(इन्द्रम्)** परमैश्वर्य्यम् **(कामाः)** ये कामयन्ते **(वसूयन्तः)** आत्मनो वसूनि धनानीच्छन्तः **(अग्मन्)** प्राप्नुवन्ति **(स्वर्मीळ्हे)** स्वः सुखेन युक्ते सङ्ग्रामे। **मीळ्ह इति सङ्ग्रामनामसु पठितम्।** (निघं०२.१७) **(न)** इव **(सवने)** प्रेरणे **(चकानाः)** देदीप्यमानाः **(श्रवस्यवः)** आत्मनः श्रवोऽन्नमिच्छन्तः **(शशमानासः)** शत्रुबलस्योल्लङ्घकाः **(उक्थैः)** प्रशंसितैर्गुणैः **(ओकः)** गृहम् **(न)** इव **(रण्वा)** रमणीया **(सुदृशीव)** सुष्ठु द्रष्टुं योग्येव **(पुष्टिः)**॥१५॥

अन्वयः-हे राजन्! ये वसूयन्तः कामाः सवने चकानाः श्रवस्यवः शशमानास उक्थैरोको न स्वर्मीळ्हे न या सुदृशीव रण्वा पुष्टिस्तामग्मन्। तां प्राप्येन्द्रं तांस्त्वं सेनाराज्यकर्माचारिणः कुरु॥१५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये धनकामाः स्युस्ते शरीरात्मबलं वर्धयित्वा युद्धस्य विद्यासामग्र्यौ पूर्णे कुर्वन्तु॥१५॥

पदार्थः-हे राजन्! जो **(वसूयन्तः)** अपने को धनों की इच्छा करते हुए **(कामाः)** कामना करनेवाले **(सवने)** प्रेरणा करने में **(चकानाः)** प्रकाशमान **(श्रवस्यवः)** अपने को अन्न की इच्छा करते हुए **(शशमानासः)** शत्रुओं के बल का उल्लङ्घन करनेवाले **(उक्थैः)** प्रशंसित गुणों से **(ओकः)** गृह के **(न)** सदृश **(स्वर्मीळ्हे)** जैसे सुख से युक्त संग्राम में **(न)** वैसे जो **(सुदृशीव)** उत्तम प्रकार देखने के योग्य सी **(रण्वा)** सुन्दर **(पुष्टिः)** पुष्टि उसको **(अग्मन्)** प्राप्त होते हैं, उसको प्राप्त होकर **(इन्द्रम्)**

अत्यन्त ऐश्वर्य्य वाले को और उन पूर्वोक्त जनों को आप सेना और राज्य के कर्मचारी करिये॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो धन की कामना वाले होवें, वे शरीर और आत्मा के बल को बढ़ाके युद्ध की विद्या और सामग्री पूर्ण करें॥१५॥

अथ राजप्रजाजनानामेकसम्मतिविषयमाह॥

अब राजा और प्रजाजनों की एक सम्मति होने के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तमिद्व इन्द्रं सुहवं हुवेम यस्ता चकार नर्या पुरूणि।

यो मावते जरित्रे गध्यं चिन्मक्षू वाजं भरति स्पार्हराधाः॥१६॥

तम्। इत्। वः। इन्द्रम्। सुऽहवम्। हुवेम। यः। ता। चकार। नर्या। पुरूणि। यः। माऽवते। जरित्रे। गध्यम्। चित्। मक्षु। वाजम्। भरति। स्पार्हऽराधाः॥१६॥

पदार्थः-(**तम्**) (**इत्**) एव (**वः**) युष्मभ्यम् (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्य्यम् (**सुहवम्**) सुष्ठु प्रशंसितम् (**हुवेम**) (**यः**) (**ता**) तानि (**चकार**) कुर्य्यात् (**नर्या**) नृभ्यो हितानि (**पुरूणि**) बहूनि सैन्यानि (**यः**) (**मावते**) मत्सदृशाय (**जरित्रे**) विद्यास्तावकाय (**गध्यम्**) गृह्यम् (**चित्**) अपि (**मक्षू**) अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**वाजम्**) अन्नाद्यैश्वर्य्यम् (**भरति**) धरति (**स्पार्हराधाः**) स्पार्हं स्पृहणीयं राधो धनं यस्य सः॥१६॥

अन्वयः-हे प्रजाजना! यः स्पार्हराधा मावते जरित्रे गध्यं वाजं मक्षू भरति यश्चित् ता पुरूणि नर्य्या चकार तं सुहवमिन्द्रमिदेव वो हुवेम॥१६॥

भावार्थः-यदि राजप्रजाजनैरेकां सम्मतिं कृत्वा शुभगुणकर्म्मस्वभावसम्पन्नो राजा स्वीक्रियते तर्हि पूर्णसुखं प्राप्येत॥१६॥

पदार्थः-हे प्रजाजनो! (**यः**) जो (**स्पार्हराधाः**) इच्छा करने योग्य धनयुक्त पुरुष (**मावते**) मेरे सदृश (**जरित्रे**) विद्या की स्तुति करने वाले के लिये (**गध्यम्**) ग्रहण करने योग्य (**वाजम्**) अन्न आदि ऐश्वर्य को (**मक्षू**) शीघ्र (**भरति**) धारण करता है (**यः**) (**चित्**) और जो (**ता**) उन (**पुरूणि**) बहुत (**नर्य्या**) मनुष्यों के लिये हितकारक सैन्य कामों को (**चकार**) करे (**तम्**) उस (**सुहवम्**) उत्तम प्रकार प्रशंसित (**इन्द्रम्**) अत्यन्त ऐश्वर्य वाले को (**इत्**) ही (**वः**) आप लोगों के लिये (**हुवेम**) हवन करें॥१६॥

भावार्थः-जो राजा और प्रजाजन एक सम्मति करके उत्तम गुण, कर्म्म और स्वभाव से युक्त राजा को स्वीकार करें तो पूर्ण सुख प्राप्त हो॥१६॥

अथ युद्धप्रवृत्तौ विजयताविषयमाह॥

अब युद्ध की प्रवृत्ति में विजयता विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तिग्मा यदन्तरशनिः पताति कस्मिञ्चिच्छूर मुहुके जनानाम्।

घोरा यदर्य समृतिर्भवात्यध स्मा नस्तन्वो बोधि गोपाः॥१७॥

तिग्मा। यत्। अन्तः। अशनिः। पताति। कस्मिन्। चित्। शूर। मुहुके। जनानाम्। घोरा। यत्। अर्य। सम्ऽऋतिः। भवाति। अध। स्म। नः। तन्वः। बोधि। गोपाः॥ १७॥

पदार्थः-(**तिग्मा**) तीव्रा (**यत्**) या (**अन्तः**) मध्ये (**अशनिः**) विद्युत् (**पताति**) पतेत् (**कस्मिन्**) (**चित्**) अपि (**शूर**) (**मुहुके**) मोहप्रापके मुहुर्मुहुः करणीये सङ्ग्रामे (**जनानाम्**) मनुष्याणाम् (**घोरा**) भयङ्करा (**यत्**) या (**अर्य्य**) प्रशंसित (**समृतिः**) युद्धम् (**भवाति**) भवेत् (**अध**) आनन्तर्य्ये (**स्मा**) एव। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**नः**) अस्माकम् (**तन्वः**) (**बोधि**) (**गोपाः**) रक्षकः॥१७॥

अन्वयः-हे शूरार्य्य! यद् घोरा समृतिर्भवात्यध यत्तिग्माऽशनिर्जनानां कस्मिंश्चिन्मुहुकेऽन्तः पताति तत्र स्मा गोपाः सन्नस्तन्वो बोधि॥१७॥

भावार्थः-हे शूरवीरा! यदा बहुशस्त्रसम्पातं युद्धं प्रवर्त्तेत तदा स्वस्य स्वकीयानां च शरीररक्षणेन शत्रूणां हिंसनेन विजयिनो भवत॥१७॥

पदार्थः-हे (**शूर**) वीर! (**अर्य्य**) प्रशंसित (**यत्**) जो (**घोरा**) भयंकर (**समृतिः**) युद्ध (**भवाति**) होवे (**अध**) इसके अनन्तर (**यत्**) जो (**तिग्मा**) तीव्र (**अशनिः**) बिजुली (**जनानाम्**) मनुष्यों के (**कस्मिंश्चित्**) किसी (**मुहुके**) मोह के प्राप्त करानेवाले बारंबार करने योग्य संग्राम के (**अन्तः**) बीच (**पताति**) गिरे, उसमें (**स्मा**) ही (**गोपाः**) रक्षा करनेवाले हुए आप (**नः**) हम लोगों के (**तन्वः**) शरीरों की (**बोधि**) जानिये॥१७॥

भावार्थः-हे शूरवीरो! जब बहुत शस्त्रों के संपातयुक्त युद्ध प्रवृत्त होवे, तब अपने और अपने सम्बन्धियों के शरीरों की रक्षा करने और शत्रुओं के नाश करने से विजयी हूजिये॥१७॥

अथ कीदृशं राजानं कुर्य्युरित्याह॥

अब कैसे को राजा करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भुवोऽविता वामदेवस्य धीनां भुवः सखावृको वाजसातौ।

त्वामनु प्रमतिमा जगन्मोरुशंसो जरित्रे विश्वध स्याः॥ १८॥

भुवः। अविता। वामऽदेवस्य। धीनाम्। भुवः। सखा। अवृकः। वाजऽसातौ। त्वाम्। अनु। प्रऽमतिम्। आ। जगन्म। उरुऽशंसः। जरित्रे। विश्वध। स्याः॥ १८॥

पदार्थः-(**भुवः**) भव (**अविता**) (**वामदेवस्य**) सुरूपयुक्तस्य विदुषः (**धीनाम्**) प्रज्ञानाम् (**भुवः**) भव (**सखा**) सुहृत् (**अवृकः**) अस्तेनः (**वाजसातौ**) सङ्ग्रामे (**त्वाम्**) (**अनु**) (**प्रमतिम्**) प्रकृष्टां प्रज्ञाम् (**आ**) (**जगन्म**) (**उरुशंसः**) बहुप्रशंसः (**जरित्रे**) स्तुत्याय (**विश्वध**) यो विश्वं दधाति तत्सम्बुद्धौ (**स्याः**) भवेत्॥१८॥

अन्वयः-हे विश्वध राजंस्त्वं वाजसातौ वामदेवस्य धीनामविता भुवोऽवृकः सखा भुव उरुशंसो जरित्रे सुखदः स्या यतस्त्वामनु प्रमतिमाजगन्म॥१८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः सर्वाधीशो वीराणां युद्धकुशलानामुपदेशकानां प्रज्ञानां रक्षको भवेत् तमेव राजानं कुरुत॥१८॥

पदार्थः-हे **(विश्वध)** संसार के धारण करने वाले राजन्! आप **(वाजसातौ)** संग्राम में **(वामदेवस्य)** उत्तमरूप से युक्त विद्वान् और **(धीनाम्)** बुद्धियों के **(अविता)** रक्षा करने वाले **(भुवः)** हूजिये **(अवृकः)** चोरीरहित **(सखा)** मित्र **(भुवः)** हूजिये और **(उरुशंसः)** बहुत प्रशंसायुक्त होते हुए **(जरित्रे)** स्तुति करने योग्य के लिये सुखदायक **(स्याः)** हूजिये जिससे **(त्वाम्)** आपके **(अनु)** पश्चात् **(प्रमतिम्)** उत्तम बुद्धि को **(आ, जगन्म)** प्राप्त होवें॥१८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सब का स्वामी और वीरपुरुष युद्ध में चतुर उपदेश देनेवाले और बुद्धिमानों का रक्षक होवे, उसी को राजा करो॥१८॥

अथ राजकर्त्तव्यताविषयमाह॥

अब राजजन के लिये करने योग्य विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एभिर्नृभिरिन्द्र त्वायुभिष्ट्वा मघवद्भिर्मघवन् विश्व आजौ।

द्यावो न द्युम्नैरभि सन्तो अर्यः क्षपो मदेम शरदश्च पूर्वीः॥१९॥

एभिः। नृऽभिः। इन्द्र। त्वायुऽभिः। त्वा। मघवत्ऽभिः। मघऽवन्। विश्वे। आजौ। द्यावः। न। द्युम्नैः। अभि। सन्तः। अर्यः। क्षपः। मदेम। शरदः। च। पूर्वीः॥१९॥

पदार्थः-**(एभिः)** पूर्वोक्तैः **(नृभिः)** नेतृभिः **(इन्द्र)** शत्रूणां विदारक **(त्वायुभिः)** त्वां कामयमानैः **(त्वा)** त्वाम् **(मघवद्भिः)** बहुपूजितधनयुक्तैः **(मघवन्)** बह्वैश्वर्य्य **(विश्वे)** समग्रे **(आजौ)** सङ्ग्रामे **(द्यावः)** किरणाः **(न)** इव **(द्युम्नैः)** यशोधनयुक्तैः **(अभि)** **(सन्तः)** वर्त्तमानाः **(अर्य्यः)** स्वामी **(क्षपः)** रात्रीः **(मदेम)** आनन्देम **(शरदः)** शरदृतून् **(च)** **(पूर्वीः)** पुरातनीः॥१९॥

अन्वयः-हे मघवन्निन्द्र राजन्! वयमेभिस्त्वायुभिर्मघवद्भिर्नृभिः सह विश्व आजौ द्यावो न द्युम्नैः सह त्वाऽऽश्रिताः सन्तोऽर्य्य इव पूर्वीः क्षपश्शरदश्चाभि मदेम॥१९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये धार्मिकैः शरीरात्मबलैः सत्यं कामयमानैः स्वराज्यैर्भवैर्धनाढ्यैः पुरुषैः सह दृढं सन्धिं कृत्वा शत्रून् विजित्य राज्यं प्रशंसन्ति ते सूर्य्यप्रकाश इव कीर्त्तिमन्तो धनिनो भूत्वा सर्वदाऽऽनन्दिता भवन्ति॥१९॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** बहुत ऐश्वर्य्य से युक्त **(इन्द्र)** शत्रुओं के नाशकारक राजन्! हम लोग **(एभिः)** इन पूर्वोक्त **(त्वायुभिः)** आपकी कामना करते हुए **(मघवद्भिः)** बहुत श्रेष्ठ धनों से युक्त

(नृभिः) नायक मनुष्यों के साथ **(विश्वे)** सम्पूर्ण **(आजौ)** संग्राम में **(द्यावः)** किरणों के **(न)** तुल्य और **(द्युम्नैः)** यशरूप धन से युक्त सत्पुरुषों के साथ **(त्वा)** आपके आश्रय का **(सन्तः)** वर्ताव करते हुए **(अर्य्यः)** स्वामी के तुल्य **(पूर्वीः)** पुरानी **(क्षपः)** रात्रियों और **(शरदः)** शरद् ऋतुओं भर **(च)** भी **(अभि, मदेम)** सब ओर से आनन्द करें॥१९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो लोग धार्मिक शरीर और आत्मा के बल से युक्त सत्य की कामना करते हुए अपने राज्य में हुए धनयुक्त पुरुषों के साथ दृढ़ मेल कर और शत्रुओं को जीत के राज्य की प्रशंसा करते हैं, वे सूर्य्य के प्रकाश के सदृश कीर्तियुक्त और धनी होकर सब काल में आनन्दित होते हैं॥१९॥

पुनरमात्यादिकर्मचारिविषयमाह॥

फिर मन्त्री आदि कर्मचारियों के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवेदिन्द्राय वृषभाय वृष्णे ब्रह्माकर्म भृगवो न रथम्।

नू चिद्यथा नः सख्या वियोषदसन्न उग्रोऽविता तनूपाः॥२०॥

एव। इत्। इन्द्राय। वृषभाय। वृष्णे। ब्रह्म। अकर्म। भृगवः। न। रथम्। नु। चित्। यथा। नः। सख्या। विऽयोषत्। असत्। नः। उग्रः। अविता। तनूऽपाः॥२०॥

पदार्थः-**(एव)** **(इत्)** अपि **(इन्द्राय)** परमैश्वर्य्यप्रदाय **(वृषभाय)** वृषभ इव बलिष्ठाय **(वृष्णे)** बलिष्ठाय **(ब्रह्म)** महद्धनम् **(अकर्म)** कुर्य्याम **(भृगवः)** देदीप्यमानाः शिल्पिनः **(न)** इव **(रथम्)** **(नु)** सद्यः **(चित्)** **(यथा)** **(नः)** अस्माकम् **(सख्या)** मित्रेण **(वियोषत्)** सन्दधीत **(असत्)** भवेत् **(नः)** अस्माकम् **(उग्रः)** तेजस्वी **(अविता)** रक्षकः **(तनूपाः)** शरीरपालकः॥२०॥

अन्वयः-यथा राजानः सख्या वियोषदुग्रस्तनूपाः सन्नोन्वविताऽसत्तस्मा इदेव वृषभाय वृष्ण इन्द्राय भृगवो रथं न ब्रह्म चिद्वयमकर्म॥२०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा शिल्पिनो विद्यया पदार्थसम्प्रयोगेण विमानादीनि निर्माय श्रीमन्तो भूत्वा मित्राण्यभ्यर्चन्ति तथैव राजसत्कृता वयं राज्ञैश्वर्य्यं वर्धयित्वा सर्वान् राजादीन् सत्कुर्याम॥२०॥

पदार्थः-**(यथा)** जैसे राजा **(नः)** हमारे **(सख्या)** मित्र के साथ **(वियोषत्)** धारण करे **(उग्रः)** तेजस्वी **(तनूपाः)** शरीर का पालन करने वाला हुआ **(नः)** हम लोगों का **(नु)** शीघ्र **(अविता)** रक्षक **(असत्)** होवे **(इत्, एव)** उसी **(वृषभाय)** बैल के सदृश बलिष्ठ **(वृष्णे)** वीर्यवान् **(इन्द्राय)** अत्यन्त ऐश्वर्य के देनेवाले के लिये **(भृगवः)** प्रकाशमान **(रथम्)** वाहन के **(न)** सदृश **(ब्रह्म, चित्)** बड़े भी धन को हम लोग **(अकर्म)** सिद्ध करें॥२०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे शिल्पीजन विद्या के साथ पदार्थों के संयोग से विमान आदि की रचना करके धनवान् होकर मित्रों का सत्कार करते हैं, वैसे ही राजा से सत्कार किये

गये हम लोग राजा से ऐश्वर्य की वृद्धि करके सब राजा आदिकों का सत्कार करें॥२०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो३ न पीपेः।

अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः॥२१॥२०॥

नु। स्तुतः। इन्द्र। नु। गृणानः। इषम्। जरित्रे। नद्यः। न। पीपेरिति पीपेः। अकारि। ते। हरिऽवः। ब्रह्म। नव्यम्। धिया। स्याम। रथ्यः। सदाऽसाः॥२१॥

पदार्थः-(**नु**) सद्यः। अत्र सर्वत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**स्तुतः**) प्रशंसितः (**इन्द्र**) (**नु**) (**गृणानः**) प्रशंसन् (**इषम्**) अन्नाद्यैश्वर्यम् (**जरित्रे**) स्तावकाय (**नद्यः**) (**न**) इव (**पीपेः**) प्यायय (**अकारि**) (**ते**) तव (**हरिवः**) प्रशंसिताऽश्वः (**ब्रह्म**) असङ्ख्यं धनम् (**नव्यम्**) नवीनम् (**धिया**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**स्याम**) (**रथ्यः**) रथेषु साधुः (**सदासाः**) दासैः सेवकैस्सह वर्त्तमानाः॥२१॥

अन्वयः-हे हरिव इन्द्र! त्वं गृणानस्सञ्जरित्रे नद्यो नेषन्नु पीपेर्यैस्सर्वैर्नु स्तुतोऽकारि तैस्ते तुभ्यं नव्यं ब्रह्म सदासा वयं धिया रथ्यो न कृतवन्तः स्याम॥२१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यो मनुष्यः परीक्षकः सर्वत्र प्रशंसितो नदीवत्प्रजानां तर्प्पकोऽश्व इव सुखेन स्थानान्तरं गमयिता भवेत् तं सर्वाधीशं कृत्वा सभृत्या वयं तदाऽऽज्ञायां वर्त्तित्वा सर्वे सततं सुखिनो भवेमेति॥२१॥

अत्रेन्द्रराजाऽमात्यविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षोडशं सूक्तं विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**हरिवः**) उत्तम घोड़ों से युक्त (**इन्द्र**) ऐश्वर्यवान् राजन्! आप (**गृणानः**) प्रशंसा करते हुए (**जरित्रे**) स्तुति करनेवाले के लिये (**नद्यः**) नदियों के (**न**) सदृश (**इषम्**) अन्न आदि ऐश्वर्य की (**नु**) शीघ्र (**पीपेः**) वृद्धि करावें और जिन सब लोगों से (**नु**) शीघ्र (**स्तुतः**) आप प्रशंसित (**अकारि**) किये गये उन जनों से (**ते**) आपके लिये (**नव्यम्**) नवीन (**ब्रह्म**) सङ्ख्यारहित धन को (**सदासाः**) सेवकों के सहित वर्त्तमान हम लोग (**धिया**) बुद्धि वा कर्म से (**रथ्यः**) वाहनों के निमित्त मार्ग के सदृश सिद्ध कर चुकनेवाले (**स्याम**) हों॥२१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य परीक्षा करनेवाला, सब जगह प्रशंसित और नदी के सदृश प्रजाओं के तृप्तिकर्त्ता, अश्वसमान सुखपूर्वक दूसरे स्थान को पहुँचानेवाला होवे, उसको सर्वाधीश करके नौकरों के सहित हम उसकी आज्ञा के अनुकूल वर्त्ताव करके सब लोग निरन्तर सुखी होवें॥२१॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा, मन्त्री और विद्वान् के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्वसूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सोलहवां सूक्त और बीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकाधिकविंशत्यृचस्य सप्तदशस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ पङ्क्तिः। ७, ९ भुरिक् पङ्क्तिः। १४, १६ स्वराट्पङ्क्तिः। १५ याजुषी पङ्क्तिः। २१ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, १२, १३, १७, १८, १९ निचृत्त्रिष्टुप्। ३, ५, ६, ८, १०, ११ त्रिष्टुप्। ४, २० विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथेन्द्रपदवाच्यराजगुणानाह॥

अब इक्कीस ऋचावाले सत्रहवें सूक्त का आरम्भ है उसके प्रथम मन्त्र में इन्द्रपदवाच्य राजगुणों का वर्णन करते हैं॥

त्वं म॒हाँ इ॑न्द्र॒ तुभ्यं॑ ह॒ क्षा अनु॑ क्ष॒त्रं मं॒हना॑ मन्यत॒ द्यौः।

त्वं वृ॒त्रं शव॑सा जघ॒न्वान्त्सृ॒जः सिन्धूँ॒रहि॑ना जग्रसा॒नान्॥१॥

त्वम्। म॒हान्। इ॒न्द्र॒। तुभ्य॑म्। ह॒। क्षाः। अनु॑। क्ष॒त्रम्। मं॒हना॑। म॒न्य॒त॒। द्यौः। त्वम्। वृ॒त्रम्। शव॑सा। ज॒घ॒न्वान्। सृ॒जः। सिन्धू॑न्। अहि॑ना। ज॒ग्र॒सा॒नान्॥१॥

पदार्थः-(**त्वम्**) महान् (**इन्द्र**) विद्यैश्वर्यसम्पन्न राजन्! (**तुभ्यम्**) (**ह**) खलु (**क्षाः**) भूमयः। **क्षेति पृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१) (**अनु**) (**क्षत्रम्**) राज्यम् (**मंहना**) महती (**मन्यत**) मन्यसे (**द्यौः**) सूर्य्य इव (**त्वम्**) (**वृत्रम्**) मेघवद्वर्त्तमानं शत्रुम् (**शवसा**) बलेन (**जघन्वान्**) (**सृजः**) सृज (**सिन्धून्**) नदीः (**अहिना**) मेघेनेव धनेन (**जग्रसानान्**) शत्रुसेनाग्रस्थानान्॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्त्वं महान् क्षाः क्षत्रं मंहना द्यौरिवानुमन्यत तस्मै ह तुभ्यं वयमपि मन्यामहे यथा वृत्रं जघन्वान् सूर्य्योऽहिना सिन्धून् [सृजः] सृजति तथा त्वं शवसा जग्रसानान् सृजः॥१॥

भावार्थः-हे राजजना! यथा महान् सूर्य्यो वृष्ट्या नदीः प्रीणाति तथैव धनैश्वर्य्येण राज्यमलङ्कुर्वन्तु राजाऽऽज्ञयाऽनुवर्त्य महद्राज्यं सम्पादयन्तु॥१॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) विद्या और ऐश्वर्य्य से युक्त राजन्! जो (**त्वम्**) आप (**महान्**) बड़े (**क्षाः**) भूमियों और (**क्षत्रम्**) राज्य को (**मंहना**) [महान्] जैसे (**द्यौः**) सूर्य्य वैसे (**अनु, मन्यत**) मानते हो (**ह**) उन्हीं (**तुभ्यम्**) आपके लिये हम लोग भी मानते और जैसे (**वृत्रम्**) मेघ के सदृश वर्त्तमान शत्रु को (**जघन्वान्**) नाश करने वाला (**अहिना**) मेघ के सदृश बड़े हुए धन से (**सिन्धून्**) नदियों को (**सृजः**) उत्पन्न करावे [उसी प्रकार] (**त्वम्**) आप (**शवसा**) बल से (**जग्रसानान्**) शत्रुसेना के अग्रणियों के समान उत्तम जनों को उत्पन्न कराओ॥१॥

भावार्थः-हे राजसम्बन्धी जनो! जैसे बड़ा सूर्य वृष्टि से नदियों को पूर्ण करता है, वैसे ही धन और ऐश्वर्य्य से राज्य को शोभित करो। राजा की आज्ञा के अनुकूल वर्त्ताव करके बड़े राज्य को सम्पादन करो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तव॑ त्वि॒षो जनि॑मन् रेजत॒ द्यौ रेज॒द्भूमि॑र्भि॒यसा॒ स्वस्य॑ म॒न्योः।

ऋ॒घा॒यन्त॑ सु॒भ्व१ः पर्व॑तास॒ आर्द॒न् धन्वा॑नि स॒रय॑न्त॒ आप॑ः॥२॥

तव॑। त्वि॒षः। जनि॑मन्। रे॒ज॒त॒। द्यौः। रेज॑त्। भूमि॑ः। भि॒यसा॑। स्वस्य॑। म॒न्योः। ऋ॒घा॒यन्त॑। सु॒ऽभ्व॑ः। पर्व॑तासः। आर्द॑न्। धन्वा॑नि। स॒रय॑न्ते। आप॑ः॥२॥

पदार्थः-(**तव**) (**त्विषः**) प्रतापात् (**जनिमन्**) जन्मवन् (**रेजत**) रेजते (**द्यौः**) (**रेजत्**) रेजते कम्पते (**भूमिः**) (**भियसा**) भयेन (**स्वस्य**) (**मन्योः**) (**ऋघायन्त**) बाध्यन्ते (**सुभ्वः**) सुष्ठु भवन्ति वृष्टयो येभ्यस्ते (**पर्वतासः**) शैला इवोच्छ्रिता मेघाः (**आर्दन्**) हिंसन्ति (**धन्वानि**) स्थलानि (**सरयन्ते**) गमयन्ति (**आपः**) जलानि॥२॥

अन्वयः-हे जनिमन्! राजन्यस्य जगदीश्वरस्य त्विषो भियसा द्यौ रेजत भूमी रेजत्तथा तव स्वस्य मन्योः शत्रवः कम्पन्ताम्। यथा सुभ्वः पर्वतास ऋघायन्ताऽऽर्दन्नापो धन्वानि सरयन्ते तथैव तव सेना अमात्याश्च भवन्तु॥२॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वं परमेश्वरवत्पक्षपातं विहाय नृषु पितृवद्वर्त्तस्व यथा जगदीश्वरभयात् सर्वं जगद् व्यवतिष्ठते तथैव तव दण्डभयात् सर्वं जगद्भोगाय कल्पतां यथा सूर्य्यो मेघं बाधते जलवृष्ट्या जगदानन्दयति तथैव शत्रून् बाधित्वा सज्जनानानन्दय॥२॥

पदार्थः-हे (**जनिमन्**) जन्मवाले राजन्! जिस जगदीश्वर के (**त्विषः**) प्रताप से (**भियसा**) भय से (**द्यौः**) अन्तरिक्ष (**रेजत**) कम्पित होता और (**भूमिः**) पृथ्वी (**रेजत्**) कम्पित होती वैसे (**तव**) आपके (**स्वस्य**) निज (**मन्योः**) क्रोध से शत्रु लोग कांपें और जैसे (**सुभ्वः**) उत्तम प्रकार वृष्टि जिनसे हो ऐसे (**पर्वतासः**) पर्वतों के सदृश ऊंचे मेघ (**ऋघायन्त**) बाधित होते (**आर्दन्**) और नाश करते हैं (**आपः**) जल और (**धन्वानि**) स्थल अर्थात् शुष्क भूमियाँ (**सरयन्ते**) गमन करती हैं, वैसे ही आपकी सेना और मन्त्रीजन होवें॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! आप परमेश्वर के सदृश पक्षपात का त्याग करके मनुष्यों में पिता के सदृश वर्त्ताव करो और जैसे जगदीश्वर के भय से सम्पूर्ण जगत् व्यवस्थित रहता है, वैसे ही आप के दण्ड के भय से सब जगत् भोग के लिये कल्पित हो और सूर्य जैसे मेघ को बाधा करता और जलवृष्टि से जगत् को आनन्दित करता है, वैसे ही शत्रुओं को बाधित करके सज्जनों को आनन्द दीजिये॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भि॒नद्गि॒रिं शव॑सा॒ वज्र॑मि॒ष्णन्ना॑विष्कृण्वा॒नः स॑हसा॒न ओज॑ः।

वधी॑द् वृ॒त्रं वज्रे॑ण मन्दसा॒नः सर॒न्नापो॒ जव॑सा ह॒तवृ॑ष्णीः॥३॥

भि॒नत्। गि॒रिम्। शव॑सा। वज्र॑म्। इ॒ष्णन्। आ॒वि॒ःऽकृ॒ण्वा॒नः। स॒ह॒सा॒नः। ओज॑ः। वधी॑त्। वृ॒त्रम्। वज्रे॑ण। म॒न्द॒सा॒नः। सर॑न्। आप॑ः। जव॑सा। ह॒तऽवृ॑ष्णीः॥३॥

पदार्थः-(**भिनत्**) भिनत्ति विदृणाति (**गिरिम्**) गिरिवद्वर्त्तमानं मेघम् (**शवसा**) बलेन (**वज्रम्**) किरणमिव शस्त्रम् (**इष्णन्**) प्राप्नुवन् (**आविष्कृण्वानः**) प्राकट्यं कुर्वन् (**सहसानः**) सहमानः। अत्र वर्णव्यत्ययेन मस्य सः। (**ओजः**) पराक्रमम् (**वधीत्**) हन्ति (**वृत्रम्**) मेघम् (**वज्रेण**) किरणेन (**मन्दसानः**) आनन्दन् (**सरन्**) गच्छन्ति। अत्राडभावः (**आपः**) जलानि (**जवसा**) वेगेन (**हतवृष्णीः**) हतो वृषा मेघो यासां ताः॥३॥

अन्वयः-हे राजन्! यथा सूर्य्यो गिरिं भिनद्वज्रेण वृत्रं वधीत् तद्धतान्मेघाद्धतवृष्णीरापो जवसा सरंस्तथैव मन्दसानः सहसान ओज आविष्कृण्वानो वज्रमिष्णञ्छवसा शत्रुसेनां विदारय च सेनया शत्रून् हत्वा रुधिराणि प्रवाहय॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्य्यवन्न्यायप्रकाशबलप्रसिद्धा दुष्टविदारकाः सत्पुरुषेभ्य आनन्दप्रदा वर्त्तन्ते त एव प्रकटकीर्त्तयो भूत्वेहाऽमुत्र परजन्मन्यक्षयाऽऽनन्दा जायन्ते॥३॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे सूर्य (**गिरिम्**) पर्वत के समान मेघ को (**भिनत्**) विदीर्ण कर और (**वज्रेण**) किरण से (**वृत्रम्**) मेघ का (**वधीत्**) नाश करता है, उस नाश हुए मेघ से (**हतवृष्णीः**) नष्ट किया गया मेघ जिनका वह (**आपः**) जल (**जवसा**) वेग से (**सरन्**) जाते हैं, वैसे ही (**मन्दसानः**) आनन्द वा (**सहसानः**) सहन करते (**ओजः**) और पराक्रम को (**आविष्कृण्वानः**) प्रकट करते वा (**वज्रम्**) किरण के समान शस्त्र को (**इष्णन्**) प्राप्त होते हुए (**शवसा**) बल से शत्रुओं की सेना का नाश करो और सेना से शत्रुओं का नाश करके रुधिरों को बहाओ॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग सूर्य्य के सदृश न्याय से प्रकाश बल से प्रसिद्ध, दुष्टों के नाशकारक और श्रेष्ठ पुरुषों के लिये आनन्ददायक होते हैं, वे ही प्रकट यश वाले होकर इस संसार में और परलोक अर्थात् दूसरे जन्म में अखण्ड आनन्द वाले होते हैं॥३॥

अथ राजसन्तानविचारविषयमाह॥

अब राजसन्तानविचार को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सु॒वीर॑स्ते जनि॒ता म॑न्यत॒ द्यौरिन्द्र॑स्य क॒र्ता स्वप॑स्तमो भूत्।
य ईं॑ ज॒जान॑ स्व॒र्यं॑ सु॒वज्र॒मन॑पच्युतं॒ सद॑सो॒ न भूम॑॥४॥

सु॒ऽवीर॑ः। ते॒। ज॒नि॒ता। म॒न्य॒त॒। द्यौः। इन्द्र॑स्य। क॒र्ता। स्वप॑ःऽतमः। भू॒त्। यः। ई॒म्। ज॒जान॑। स्व॒र्य॑म्। सु॒ऽवज्र॑म्। अन॑पऽच्युतम्। सद॑सः। न। भूम॑॥४॥

पदार्थः-(**सुवीरः**) शोभनश्चासौ वीरश्च (**ते**) तव (**जनिता**) जनकः (**मन्यत**) मन्येत (**द्यौः**) विद्युदिव (**इन्द्रस्य**) परमैश्वर्यस्य (**कर्त्ता**) (**स्वपस्तमः**) शोभनान्यपांसि कर्माणि यस्य सोऽतिशयितः (**भूत्**) भवेत् (**यः**) (**ईम्**) महान्तम् (**जजान**) (**स्वर्य्यम्**) स्वर्हितम् (**सुवज्रम्**) शोभनानि वज्राण्यायुधानि यस्य तम् (**अनपच्युतम्**) अपचयरहितम् (**सदसः**) सभासदः (**न**) इव (**भूम**)॥४॥

अन्वयः-हे राजँस्त इन्द्रस्य द्यौरिव सुवीरो जनिता मन्यत स्वपस्तमः कर्त्ता भूद् य ईं स्वर्य्यमनपच्युतं सुवज्रं पुरुषं जजान ते सदसो न वयं प्राप्ता भूम॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे राजन्! यथा सुसभ्या अनुत्तमं राजानं प्राप्य न्यायं प्रचार्य कीर्त्तिमन्तो जायन्त एवमेव यदि भवान् धर्म्येण ब्रह्मचर्य्येण पुत्रेष्टिरीत्या प्रियायां सुतं जनयेत्तर्हि सोऽपि प्रख्यातसुकीर्तिः स्यात्॥४॥

पदार्थः-हे राजन्! (**इन्द्रस्य**) अत्यन्त ऐश्वर्यवान् (**ते**) आप का (**द्यौः**) बिजुली के सदृश (**सुवीरः**) श्रेष्ठवीर (**जनिता**) उत्पन्न करने वाला (**मन्यत**) माना जाय और वह (**स्वपस्तमः**) अतीव उत्तम कर्मों से पूरित (**कर्त्ता**) करने वाला (**भूत्**) हो वा (**यः**) जो (**ईम्**) महान् (**स्वर्य्यम्**) अत्यन्त सुख के लिये हित और (**अनपच्युतम्**) नाश से रहित (**सुवज्रम्**) उत्तम आयुधों वाले पुरुष को (**जजान**) उत्पन्न कर चुका उसको (**सदसः**) सभासदों के (**न**) सदृश हम लोग प्राप्त (**भूम**) होवें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमावाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे राजन्! जैसे श्रेष्ठ लोग अति उत्तम राजा को प्राप्त होकर और न्याय का प्रचार करके यशवाले होते हैं, इसी प्रकार यदि आप धर्मयुक्त ब्रह्मचर्य्य से पुत्रेष्टिकर्म्म की रीति से अपनी प्रिया में पुत्र उत्पन्न करें तो वह भी प्रसिद्ध यश वाला होवे॥४॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

य एक इच्च्यावयति प्र भूमा राजा कृष्टीनां पुरुहूत इन्द्रः।

सत्यमेनमनु विश्वे मदन्ति रातिं देवस्य गृणतो मघोनः॥५॥२१॥

यः। एकः। इत्। च्यवयति। प्र। भूम। राजा। कृष्टीनाम्। पुरुऽहूतः। इन्द्रः। सत्यम्। एनम्। अनु। विश्वे। मदन्ति। रातिम्। देवस्य। गृणतः। मघोनः॥५॥

पदार्थः-(**यः**) (**एकः**) (**इत्**) एव (**च्यावयति**) (**प्र**) (**भूम**) भवेम। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**राजा**) शुभगुणैः प्रकाशमानः (**कृष्टीनाम्**) कृषीवलादिप्रजास्थमनुष्याणाम् (**पुरुहूतः**) बहुभिराहूतः प्रशंसितः (**इन्द्रः**) परमैश्वर्य्यवान् (**सत्यम्**) सत्सु साधुम् (**एनम्**) (**अनु**) (**विश्वे**) सर्वे (**मदन्ति**) (**रातिम्**) दातारम् (**देवस्य**) दिव्यगुणसम्पन्नस्य (**गृणतः**) सकलविद्याः स्तुवतः (**मघोनः**) बहुधनयुक्तस्य सभ्यसमूहस्य मध्ये॥५॥

अन्वयः-यः पुरुहूत इन्द्रः कृष्टीनां राजैक इच्छत्रून् प्र च्यावयति तं मघोनो गृणतो देवस्य मध्ये वर्त्तमानं सत्यं रातिं विश्वे विद्वांसः सभासदोऽनुमदन्ति तमेनं राजानं कृत्वा वयं सुखिनो भूम॥५॥

भावार्थः-स एव राजा भवितुमर्हति य एकोऽपि बहूञ्छत्रून् विजेतुं शक्नोति स एव विजयी भवति यः सत्पुरुषाणां सङ्गमुपदेशं प्राप्य धर्म्यं न्यायं सततं करोति॥५॥

पदार्थः-(**यः**) जो (**पुरुहूतः**) बहुतों से बुलाया और प्रशंसा किया गया (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्यवान् (**कृष्टीनाम्**) क्षेत्र बोनेवाले आदि प्रजास्थ मनुष्यों का (**राजा**) उत्तम गुणों से प्रकाशमान राजा (**एकः**) एक (**इत्**) ही शत्रुओं को (**प्र, च्यावयति**) कम्पाता है उसको (**मघोनः**) बहुत धन से युक्त श्रेष्ठ पुरुषों के समूह के मध्य में (**गृणतः**) सम्पूर्ण विद्या की स्तुति करते हुए (**देवस्य**) दिव्यगुणी विद्वानों के समूह में वर्त्तमान (**सत्यम्**) श्रेष्ठों में साधु (**रातिम्**) दाता जन को (**विश्वे**) सम्पूर्ण विद्वान् सभासद् (**अनु, मदन्ति**) अनुमति देते हैं उस (**एनम्**) इसको राजा करके हम लोग सुखी (**भूम**) होवें॥५॥

भावार्थः-वही राजा हो सकता है, जो एक भी बहुत शत्रुओं को जीत सकता है और वही विजयी होता है, जो श्रेष्ठ पुरुषों के सङ्ग और उपदेश को प्राप्त होकर धर्मयुक्त न्याय निरन्तर करता है॥५॥

पुनर्भूपतिविषयमाह॥

फिर भूपतिविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स॒त्रा सोमा॑ अभवन्नस्य॒ विश्वे॑ स॒त्रा मदा॑सो बृह॒तो मदि॑ष्ठाः।

स॒त्राभ॑वो॒ वसु॑पति॒र्वसू॑नां द॒त्रे विश्वा॑ अधिथा इन्द्र कृ॒ष्टीः॥६॥

स॒त्रा। सोमा॑ः। अ॒भ॒व॒न्। अ॒स्य॒। विश्वे॑। स॒त्रा। मदा॑सः। बृ॒ह॒तः। मदि॑ष्ठाः। स॒त्रा। अ॒भ॒वः॒। वसु॑ऽपतिः। वसू॑नाम्। द॒त्रे। विश्वा॑ः। अ॒धि॒थाः॒। इ॒न्द्र॒। कृ॒ष्टीः॥६॥

पदार्थः-(**सत्रा**) सत्याः (**सोमाः**) सौम्यगुणसम्पन्नाः सभ्या जनाः (**अभवन्**) भवन्तु (**अस्य**) राज्ञः (**विश्वे**) सर्वे (**सत्रा**) सत्याः (**मदासः**) आनन्दाः (**बृहतः**) महान्तः (**मदिष्ठाः**) अतिशयेनाऽऽनन्दप्रदाः (**सत्रा**) सत्यः (**अभवः**) भवेः (**वसुपतिः**) धनस्य स्वामी (**वसूनाम्**) धनाढ्यानाम् (**दत्रे**) दातव्ये हिरण्यादिधने सति। **दत्रमिति हिरण्यनामसु पठितम्।** (निघं०१.२) (**विश्वाः**) सर्वाः (**अधिथाः**) धारयेथाः (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्यप्रद (**कृष्टीः**) मनुष्यादिप्रजाः॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यदि त्वं वसूनां वसुपतिः सत्राभवो दत्रे विश्वाः कृष्टीरधिथास्तर्ह्यस्य राज्यस्य मध्ये सत्रा विश्वे सोमाः सत्रा विश्वे मदासो बृहतो मदिष्ठा अभवन्॥६॥

भावार्थः-यो राजा यथात्मने प्रियमिच्छेत्तथैव प्रजाभ्यः सुखं प्रदद्यात्तस्यैवोत्तमाः सभासदः परमैश्वर्य्यं च वर्द्धेत॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देनेवाले! जो आप **(वसूनाम्)** धनाढ्य पुरुषों के बीच **(वसुपतिः)** धन के स्वामी **(सत्रा)** सत्य **(अभवः)** होवें **(दत्रे)** देने योग्य सुवर्ण आदि धन के होने पर **(विश्वाः)** सम्पूर्ण **(कृष्टीः)** मनुष्यादि प्रजाओं को **(अधिथाः)** धारण करो तो **(अस्य)** इस राज्य के मध्य में **(सत्रा)** सत्य **(विश्वे)** सब **(सोमाः)** शान्तिगुणसम्पन्न सभ्यजन **(सत्रा)** सत्य सब **(मदासः)** आनन्द और **(बृहतः)** बड़े **(मदिष्ठाः)** अतीव आनन्द देनेवाले **(अभवन्)** होवें॥६॥

भावार्थः-जो राजा जैसे अपने निमित्त प्रिय की इच्छा करे, वैसे ही प्रजाओं के लिये सुख देवे, उसी के उत्तम सभासद् और अत्यन्त ऐश्वर्य बढ़े॥६॥

अथ राजानं प्रति प्रजापालनप्रकारमाह॥

अब राजा के प्रति प्रजापालन प्रकार को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वमध प्रथमं जायमानोऽमे विश्वा अधिथा इन्द्र कृष्टीः।

त्वं प्रति प्रवत आशयानमहिं वज्रेण मघवन् वि वृश्चः॥७॥

त्वम्। अध। प्रथमम्। जायमानः। अमे। विश्वाः। अधिथाः। इन्द्र। कृष्टीः। त्वम्। प्रति। प्रऽवतः। आऽशयानम्। अहिम्। वज्रेण। मघऽवन्। वि। वृश्चः॥७॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(अध)** आनन्तर्य्ये **(प्रथमम्)** **(जायमानः)** उत्पद्यमानः **(अमे)** गृहे **(विश्वाः)** समग्राः **(अधिथाः)** धारयेथाः **(इन्द्र)** दुष्टानां विदारक **(कृष्टीः)** मनुष्याद्याः प्रजाः **(त्वम्)** **(प्रति)** **(प्रवतः)** निम्नदेशान् **(आशयानम्)** समन्ताच्छयानमिव वर्त्तमानम् **(अहिम्)** मेघम् **(वज्रेण)** किरणैः **(मघवन्)** बहुधनयुक्त **(वि)** **(वृश्चः)** छिन्धि॥७॥

अन्वयः-हे मघवन्निन्द्र राजन्नमे जायमानस्त्वं विश्वाः कृष्टीः प्रथममधिथाः, अध त्वं यथा प्रवतः प्रत्याशयानमहिं वज्रेण सूर्यो हन्ति तथैव दुष्टाँस्त्वं वि वृश्चः॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो हि प्रथमतो ब्रह्मचर्य्येण विद्यया विनयसुशीलाभ्यां सर्वोत्कृष्टो जायते यश्च राज्यपालनयुद्धकरणं विजानाति तमेव राजानं कृत्वा सुखिनो भवत॥७॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** बहुत धन से युक्त **(इन्द्र)** दुष्ट पुरुषों के नाश करनेहारे राजन्! **(अमे)** गृह में **(जायमानः)** उत्पन्न होने वाले **(त्वम्)** आप **(विश्वाः)** सम्पूर्ण **(कृष्टीः)** मनुष्य आदि प्रजाओं को **(प्रथमम्)** पहिले **(अधिथाः)** धारण करो **(अध)** इसके अनन्तर **(त्वम्)** आप जैसे **(प्रवतः)** नीचले स्थलों के **(प्रति)** प्रति **(आशयानम्)** सब प्रकार सोते हुए के सदृश वर्त्तमान **(अहिम्)** मेघ को **(वज्रेण)** किरणों से सूर्य्य नाश करता है, वैसे ही दुष्ट पुरुषों का आप **(वि, वृश्चः)** नाश करो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो पुरुष प्रथम से ब्रह्मचर्य्य, विद्या, विनय और सुशीलता से सब में उत्तम होता है और जो राज्यपालन और युद्ध करने को जानता है,

उसी को राजा करके सुखी होओ॥७॥

अथ प्रजाजनै राजस्वीकारमाह॥

अब प्रजाजनों से राजा के स्वीकार करने को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स॒त्रा॒हणं॒ दाधृ॑षिं॒ तु॒म्रमिन्द्रं॑ म॒हाम॑पा॒रं वृ॑ष॒भं सु॒वज्र॑म्।

हन्ता॒ यो वृ॒त्रं सनि॑तो॒त वाजं॒ दाता॑ म॒घानि॑ म॒घवा॑ सु॒राधाः॑॥८॥

स॒त्रा॒ऽहन॑म्। दधृ॑षिम्। तु॒म्रम्। इन्द्र॑म्। म॒हाम्। अ॒पा॒रम्। वृ॒ष॒भम्। सु॒ऽवज्र॑म्। हन्ता॑। यः॑। वृ॒त्रम्। सनि॑ता। उ॒त। वाज॑म्। दाता॑। म॒घानि॑। म॒घऽवा॑। सु॒ऽराधाः॑॥८॥

पदार्थः-(**सत्राहणम्**) यः सत्येनाऽसत्यं हन्ति (**दाधृषिम्**) भृशं प्रगल्भम् (**तुम्रम्**) प्रेरकम् (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यवन्तम् (**महाम्**) महान्तम् (**अपारम्**) अपारविद्यं गम्भीराशयम् (**वृषभम्**) बलिष्ठम् (**सुवज्रम्**) शोभनशस्त्रास्त्राणां प्रयोक्तारम् (**हन्ता**) (**यः**) (**वृत्रम्**) मेघमिव शत्रुम् (**सनिता**) विभाजकः (**उत**) अपि (**वाजम्**) अन्नाद्यैश्वर्यम् (**दाता**) (**मघानि**) धनानि (**मघवा**) बहुधनयुक्तः (**सुराधाः**) धर्म्येण सञ्चितधनः॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो वृत्रं सूर्य इव शत्रूणां हन्ता वाजं सनितोत मघवा सुराधा मघानि दाता भवेत्तं सत्राहणं दाधृषिं महामपारं तुम्रं वृषभं सुवज्रमिन्द्रं राजानं स्वीकुरुत॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यः पूर्णविद्यः सत्यवादी प्रगल्भो बलिष्ठः शस्त्राऽस्त्रप्रयोगविदभयदाता पुरुषो भवेत्तमेव राज्यायाधिकुरुत॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**वृत्रम्**) मेघ को जैसे सूर्य वैसे शत्रुओं का (**हन्ता**) नाश करने वाला पुरुष (**वाजम्**) अन्न आदि ऐश्वर्य्य का (**सनिता**) विभाग करने वाला (**उत**) भी (**मघवा**) बहुत धन से युक्त (**सुराधाः**) धर्म युक्त व्यवहार से धनसंचयकर्त्ता (**मघानि**) और धनों का (**दाता**) दाता हो उस (**सत्राहणम्**) सत्य से असत्य के नाश करने वाले (**दाधृषिम्**) निरन्तर प्रगल्भ (**महाम्**) महान् (**अपारम्**) अपार विद्यावान् गम्भीर आशय युक्त (**तुम्रम्**) प्रेरणा देने वाले (**वृषभम्**) बलिष्ठ (**सुवज्रम्**) सुन्दर शस्त्र और अस्त्रों के प्रयोगकर्त्ता (**इन्द्रम्**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य युक्त राजा को स्वीकार करो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो पूर्णविद्यायुक्त, सत्यवादी, प्रगल्भ, बलिष्ठ, शस्त्र और अस्त्रों का चलाने वाला और अभयदाता पुरुष हो; उसी को राज्य के लिये नियत करो॥८॥

अथ राज्ञा कीदृशा अमात्यादयो भृत्या संरक्षणीया इत्याह॥

अब राजा को अमात्य आदि भृत्य कैसे रखने चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒यं वृत॑श्चातयते समी॒चीर्य आ॒जिषु॑ म॒घवा॑ शृ॒ण्व एकः॑।

अ॒यं वाजं॑ भरति॒ यं स॒नोत्य॒स्य प्रि॒यासः॑ स॒ख्ये स्या॑म॥९॥

अयम्। वृतः। चातयते। सम्ऽईचीः। यः। आजिषु। मघऽवा। शृण्वे। एकः। अयम्। वाजम्। भरति। यम्। सनोति। अस्य। प्रियासः। सख्ये। स्याम॥९॥

पदार्थः-(**अयम्**) राजा (**वृतः**) (**चातयते**) विज्ञापयति। **चततीति गतिकर्म्मासु पठितम्।** (निघं०२.१४)। (**समीचीः**) याः सम्यगञ्चन्ति शिक्षाः प्राप्नुवन्ति ताः सेनाः (**यः**) (**आजिषु**) सङ्ग्रामेषु (**मघवा**) बहुधनैश्वर्यः (**शृण्वे**) (**एकः**) असहायः (**अयम्**) (**वाजम्**) विज्ञानम् (**भरति**) (**यम्**) (**सनोति**) सम्पन्नं करोति (**अस्य**) (**प्रियासः**) (**सख्ये**) मित्रस्य कर्मणि (**स्याम**) भवेम॥९॥

अन्वयः-हे राजन्! योऽयं वृतः सन्नबुद्धाञ्चातयते यो मघवैक आजिषु समीचीर्भरति। अयं वाजं भरति यमाप्तः सनोति यमहं शृण्वेऽस्य सख्ये वयं प्रियासः स्याम॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! यः सेनाः शिक्षयति विशेषतो युद्धसमय उचितवक्तृत्वेन योधॄनुत्साहयति ये सम्मुखे भवद्दोषान् कथयन्ति तेषां शासने स्थित्वा तेष्वेव मैत्रीं भावयित्वा सर्वाणि कार्याणि साध्नुहि॥९॥

पदार्थः-हे राजन्! (**यः**) जो (**अयम्**) यह राजा (**वृतः**) स्वीकार किया हुआ बोधरहितों को (**चातयते**) विज्ञान करता है और जो (**मघवा**) बहुत धनरूप ऐश्वर्य्य से युक्त (**एकः**) अकेला अर्थात् सहायरहित (**आजिषु**) संग्रामों में (**समीचीः**) शिक्षाओं को प्राप्त होने वाली सेनाओं का (**भरति**) पोषण करता है (**अयम्**) और यह (**वाजम्**) विज्ञान को पुष्ट करता है (**यम्**) जिसको यथार्थवक्ता पुरुष [प्राप्त कर] (**सनोति**) संपन्न करता है, जिसको मैं (**शृण्वे**) सुनता हूँ (**अस्य**) इसके (**सख्ये**) मित्रकर्म्म में हम लोग (**प्रियासः**) प्रिय (**स्याम**) होवें॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! जो सेनाओं को शिक्षा दिलाता है, विशेष करके युद्ध के समय में उचित बात कहने से योद्धाजनों का उत्साह बढ़ाता है और जो जन सम्मुख आपके दोषों को कहते हैं, उनकी शिक्षा में स्थित होकर, उन्हीं जनों में मित्रता करके सम्पूर्ण कार्य्यों को सिद्ध करो॥९॥

अथ राज्ञा राज्यकरणप्रकारमाह॥

अब राजा को राज्य करने का प्रकार अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयं शृण्वे अध जयन्नुत घ्नन्नयमुत प्र कृणुते युधा गाः।
यदा सत्यं कृणुते मन्युमिन्द्रो विश्वं दृळ्हं भयत एजदस्मात्॥१०॥२२॥

अयम्। शृण्वे। अध। जयन्। उत। घ्नन्। अयम्। उत। प्र। कृणुते। युधा। गाः। यदा। सत्यम्। कृणुते। मन्युम्। इन्द्रः। विश्वम्। दृळ्हम्। भयते। एजत्। अस्मात्॥१०॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**शृण्वे**) (**अध**) (**जयन्**) शत्रून् पराजयन् (**उत**) अपि (**घ्नन्**) नाशयन् (**अयम्**) (**उत**) (**प्र**) (**कृणुते**) (**युधा**) युद्धेन (**गाः**) पृथिवीराज्यानि (**यदा**) (**सत्यम्**) (**कृणुते**) (**मन्युम्**) क्रोधम्

(इन्द्रः) परमैश्वर्यो राजा **(विश्वम्)** सर्वं राज्यम् **(दृळहम्)** सुस्थिरम् **(भयते)** बिभेति **(एजत्)** कम्पते **(अस्मात्)** राज्ञः॥१०॥

अन्वयः-हे राजन्! सुपरीक्ष्य वृतोऽयं जनः शत्रून् घ्नन्नुतापि युधा जयन् गाः प्र कृणुते उत यमहं राज्यं कर्त्तुं शृण्वे यदाऽयं सत्यं कृणुते तदा विश्वं दृळहं भवति यदाऽयमिन्द्रो मन्युं कृणुतेऽध तदास्माद्विश्वं दृढमपि राज्यमेजत् सद्भयते॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! यां सुकीर्तिं भवाञ्छृणुयाद्ये च राज्यपालनयुद्धकुशलास्तान् वृत्वा सत्याचारेण वर्तित्वा शान्त्या सज्जनान् सम्पाल्य दुष्टान् भृशं दण्डयेत्तदैव सर्वे धर्मपथं विहायेतस्ततो न विचलेयुः॥१०॥

पदार्थः-हे राजन्! उत्तम प्रकार परीक्षा करके स्वीकार किया गया **(अयम्)** यह जन शत्रुओं का **(घ्नन्)** नाश करता है और **(उत)** भी **(युधा)** युद्ध से **(जयन्)** शत्रुओं को पराजित करता हुआ **(गाः)** पृथिवी के राज्यों को **(प्र, कृणुते)** उत्तम प्रकार करता है **(उत)** और **(शृण्वे)** जिसको मैं राज्य करने को सुनता हूँ **(यदा)** जब **(अयम्)** यह **(सत्यम्)** सत्य को **(कृणुते)** करता है तब **(विश्वम्)** सब राज्य **(दृळहम्)** उत्तम प्रकार स्थिर होता है, जब यह **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्यवाला राजा **(मन्युम्)** क्रोध को करता है **(अध)** इसके अनन्तर तब **(अस्मात्)** इस राजा से सम्पूर्ण उत्तम प्रकार स्थिर भी राज्य **(एजत्)** कंपता हुआ **(भयते)** डरता है॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! जिस उत्तम कीर्त्ति को आप सुनें और जो लोग राज्यपालन और युद्ध में चतुर हों उनका स्वीकार करके सत्याचार से वर्ताव कर शान्ति से सज्जनों का अच्छे प्रकार पालन करके दुष्टजनों को निरन्तर दण्ड देवें, तभी सब जन धर्म के मार्ग का त्याग करके इधर-उधर न चलित होवें॥१०॥

अथ राजा कथं विजयमानन्दं च प्राप्नोतीत्याह॥

अब राजा कैसे विजय और आनन्द को प्राप्त होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

समिन्द्रो गा अजयत् सं हिरण्या समश्विया मघवा यो ह पूर्वीः।

एभिर्नृभिर्नृतमो अस्य शाकै रायो विभक्ता संभरश्च वस्वः॥११॥

सम्। इन्द्रः। गाः। अजयत्। सम्। हिरण्या। सम्। अश्विया। मघऽवा। यः। ह। पूर्वीः। एभिः। नृऽभिः। नृऽतमः। अस्य। शाकैः। रायः। विऽभक्ता। सम्ऽभरः। च। वस्वः॥११॥

पदार्थः-**(सम्)** सम्यक् **(इन्द्रः)** शत्रुविदारकः **(गाः)** भूमीः **(अजयत्)** जयेत् **(सम्)** **(हिरण्या)** सुवर्णादीनि धनानि **(सम्)** **(अश्विया)** अश्वादियुक्तानि **(मघवा)** पूजितधनः **(यः)** **(ह)** खलु **(पूर्वीः)** प्राचीनाः प्रजाः **(एभिः)** **(नृभिः)** नायकैः सह **(नृतमः)** अतिशयेन नेता **(अस्य)** सैन्यस्य **(शाकैः)**

शक्तिभिः **(रायः)** धनस्य **(विभक्ता)** विभागकर्त्ता **(सम्भरः)** यः सम्भरति सः **(च)** **(वस्वः)** धनानि॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो मघवेन्द्र एभिर्नृभिः सह नृतमः सन् गाः समजयदश्विया हिरण्या समजयद्यो ह पूर्वीः प्रजाः समजयत्। योऽस्य शाकै रायो विभक्ता वस्वश्च सम्भरो भवेत् स एव राज्यं कर्त्तुमर्हेत्॥११॥

भावार्थः-य उत्तमसहायः प्रशस्तधनसामग्री शत्रूणां जेता यथार्हेभ्यो विभज्य दाता विचक्षणो राजा भवेत् स एव विजयं प्राप्य मोदेत॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(मघवा)** श्रेष्ठधनयुक्त **(इन्द्रः)** शत्रुओं का नाशकर्त्ता **(एभिः)** इन **(नृभिः)** नायकों के साथ **(नृतमः)** अतिशय नायक हुआ **(गाः)** भूमियों को **(सम्)** उत्तम प्रकार **(अजयत्)** जीते **(अश्विया)** घोड़े आदि से युक्त **(हिरण्या)** सुवर्ण आदि धनों को **(सम्)** उत्तम प्रकार जीते जो **(ह)** निश्चय से **(पूर्वीः)** प्राचीन प्रजाओं को **(सम्)** उत्तम प्रकार जीते और जो **(अस्य)** इस सेना की **(शाकैः)** शक्तियों से **(रायः)** धन का **(विभक्ता)** विभाग करने वाला **(वस्वः)** धनों को **(च)** और **(सम्भरः)** इकट्ठा करने वाला होवे, वही राज्य करने को योग्य होवे॥११॥

भावार्थः-जो उत्तम सहाय और उत्तम धन सामग्रीयुक्त तथा शत्रुओं का जीतने और यथायोग्यों के लिये विभाग करके देनेवाला विद्वान् राजा होवे, वही विजय को प्राप्त होकर आनन्द करे॥११॥

अथ प्रजाजनेषु कस्य राज्ययोग्यतेत्याह॥

अब प्रजाजनों में किसकी राज्य की योग्यता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कियत्स्विदिन्द्रो अध्येति मातुः कियत्पितुर्जनितुर्यो जजान।

यो अस्य शुष्मं मुहुकैरियर्ति वातो न जूतः स्तनयद्भिरभ्रैः॥१२॥

कियत्। स्वित्। इन्द्रः। अधि। एति। मातुः। कियत्। पितुः। जनितुः। यः। जजान। यः। अस्य। शुष्मम्। मुहुकैः। इयर्ति। वातः। न। जूतः। स्तनयत्ऽभिः। अभ्रैः॥१२॥

पदार्थः-**(कियत्)** **(स्वित्)** अपि **(इन्द्रः)** **(अधि, एति)** स्मरति **(मातुः)** **(कियत्)** **(पितुः)** **(जनितुः)** जनकस्य **(यः)** **(जजान)** जायते **(यः)** **(अस्य)** **(शुष्मम्)** बलम् **(मुहुकैः)** मुहुर्मुहुः कुर्वद्भिः **(इयर्ति)** गच्छति **(वातः)** वायुः **(न)** इव **(जूतः)** प्राप्तवेगः **(स्तनयद्भिः)** शब्दायमानैः **(अभ्रैः)** घनैः सह॥१२॥

अन्वयः-यो मुहुकैरस्य शुष्मं स्तनयद्भिरभ्रैः सह जूतो वातो न विजयमियर्ति यः स्विदिन्द्रो मातुः कियज्जनितुः पितुः कियदध्येति स एव राजा जजान॥१२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्या मातुः पितुः कियानुपकारोऽस्तीति विज्ञाय प्रत्युपकुर्वन्ति ते मेघवायुभ्यां प्रेरिता विद्युदिव बलं प्राप्य वारं वारं शत्रून् विजित्य प्रकटकीर्त्तयो भवन्ति॥१२॥

पदार्थः-(**यः**) जो (**मुहुकैः**) बारंबार कार्य्य करने वालों से (**अस्य**) इसके (**शुष्मम्**) बल को (**स्तनयद्भिः**) शब्द करते हुए (**अभ्रैः**) मेघों के साथ (**जूतः**) वेग को प्राप्त (**वातः**) वायु के (**न**) तुल्य विजय को (**इयर्त्ति**) प्राप्त होता है और (**यः**) जो (**स्वित्**) कोई (**इन्द्रः**) तेजस्वी (**मातुः**) माता का (**कियत्**) कितना और (**जनितुः**) उत्पन्न करने वाले (**पितुः**) पिता का (**कियत्**) कितना उपकार (**अधि, एति**) स्मरण करता है, वही राजा (**जजान**) होता है॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य माता और पिता का कितना उपकार है, ऐसा जानकर प्रत्युपकार करते हैं, वे मेघ और वायु से प्रेरित बिजुली के सदृश बल को प्राप्त होकर बारंबार शत्रुओं को जीतकर प्रकट यश वाले होते हैं॥१२॥

अथा राज्ञोत्तमानुत्तमयोर्दण्डसत्कारौ कर्त्तव्याविल्याह॥

अब राजा को उत्तम और अनुत्तम का दण्ड और सत्कार करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

क्षियन्तं त्वमक्षियन्तं कृणोतीयर्ति रेणुं मघवा समोहम्।

विभञ्जनुरशनिमाँइव द्यौरुत स्तोतारं मघवा वसौ धात्॥१३॥

क्षियन्तम्। त्वम्। अक्षियन्तम्। कृणोति। इयर्ति। रेणुम्। मघऽवा। सम्ऽओहम्। विऽभञ्जनुः। अशनिमान्ऽइव। द्यौः। उत। स्तोतारम्। मघऽवा। वसौ। धात्॥१३॥

पदार्थः-(**क्षियन्तम्**) निवसन्तम् (**त्वम्**) (**अक्षियन्तम्**) न निवसन्तम् (**कृणोति**) (**इयर्त्ति**) प्राप्नोति (**रेणुम्**) अपराधम् (**मघवा**) (**समोहम्**) सम्यग्गूढम् (**विभञ्जनुः**) शत्रूणां विभञ्जकः (**अशनिमानिव**) यथा बहुशस्त्रास्त्रः (**द्यौः**) प्रकाशः (**उत**) (**स्तोतारम्**) ऋत्विजम् (**मघवा**) (**वसौ**) धने (**धात्**) दधाति॥१३॥

अन्वयः-हे राजन्! यथा मघवा स्तोतारं वसौ धात्तथा यो द्यौरिवोताप्यशनिमानिव विभञ्जनुस्सन् मघवा क्षियन्तमक्षियन्तं कृणोति समोहं रेणुमियर्त्ति तं त्वं शिक्षय॥१३॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारः [=अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः]। हे राजँस्त्वं योऽपराधं कुर्य्यात्तं दण्डेन विना मा त्यजेः। यथा यजमानो विद्वांसं यज्ञे वृत्वा धनं दत्वा सुखयति तथैव श्रेष्ठान् सभासदो वृत्वैश्वर्य्यं दत्वा सर्वानानन्दय॥१३॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे (**मघवा**) अत्यन्त धनयुक्त पुरुष (**स्तोतारम्**) यज्ञ करनेवाले को (**वसौ**) धन में (**धात्**) धारण करता है, वैसे जो (**द्यौः**) प्रकाश के सदृश (**उत**) और भी (**अशनिमानिव**) बहुत शस्त्र और अस्त्र वाले के सदृश (**विभञ्जनुः**) शत्रुओं का नाश करता हुआ (**मघवा**) श्रेष्ठधन से युक्त

पुरुष **(क्षियन्तम्)** निवास करते और **(अक्षियन्तम्)** नहीं निवास करते हुए को **(कृणोति)** स्वीकार करता है **(समोहम्)** उत्तम प्रकार से छिपे हुए **(रेणुम्)** अपराध को **(इयर्ति)** प्राप्त होता है, उसको **(त्वम्)** आप शिक्षा दीजिये॥१३॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! आप जो अपराध करे उसको दण्ड के विना मत छोड़ो और जैसे यजमान विद्वान् जन को यज्ञ में स्वीकार करके धन देके सुख देता है, वैसे ही श्रेष्ठ सभासदों को स्वीकार करके ऐश्वर्य दे सब को आनन्द दीजिये॥१३॥

अथ राज्ञा वेगवन्ति यन्त्राणि निर्माय दुष्टसंशोधनं कार्यमित्याह॥

अब राजा को वेगवान् यन्त्रों को बनाय दुष्टसंशोधन करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयं चक्रमिषणत्सूर्यस्य न्येतशं रीरमत्ससृमाणम्।

आ कृष्ण ईं जुहुराणो जिघर्ति त्वचो बुध्ने रजसो अस्य योनौ॥१४॥

अयम्। चक्रम्। इषणत्। सूर्यस्य। नि। एतशम्। रीरमत्। ससृमाणम्। आ। कृष्णः। ईम्। जुहुराणः। जिघर्ति। त्वचः। बुध्ने। रजसः। अस्य। योनौ॥१४॥

पदार्थ:-**(अयम्)** **(चक्रम्)** **(इषणत्)** इष्णाति प्राप्नोति **(सूर्यस्य)** **(नि)** **(एतशम्)** अश्वम् **(रीरमत्)** रमयति **(ससृमाणम्)** भृशं गच्छन्तम् **(आ)** **(कृष्णः)** कर्षकः **(ईम्)** जलम् **(जुहुराणः)** कुटिलगतिः **(जिघर्त्ति)** क्षरति **(त्वचः)** वाचः **(बुध्ने)** अन्तरिक्षे **(रजसः)** लोकसमूहस्य **(अस्य)** **(योनौ)** गृहे॥१४॥

अन्वयः-हे राजन्! भवान् यथाऽयं सूर्यस्य मण्डलमिव चक्रमिषणत् ससृमाणमेतशं नि रीरमत् कृष्णो जुहुराण इवेमाजिघर्त्ति त्वचो रजसोऽस्य बुध्ने योनौ रमत इति विज्ञायेमं सत्कृत्य दुष्टं ताडय॥१४॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः कलाकौशलेन चक्रयन्त्राणि निर्माय वेगवन्ति यानान्यासाद्य रमन्ते ते ऐश्वर्यं प्राप्य कुटिलतां विहाय सुखयन्ति॥१४॥

पदार्थ:-हे राजन्! आप जैसे **(अयम्)** यह **(सूर्यस्य)** सूर्य के मण्डल के सदृश **(चक्रम्)** चक्र को **(इषणत्)** प्राप्त होता है **(ससृमाणम्)** निरन्तर प्राप्त होते हुए **(एतशम्)** घोड़े को **(नि, रीरमत्)** रमाता है **(कृष्णः)** खीचने वाला **(जुहुराणः)** कुटिल गमन वाले के सदृश **(ईम्)** जल को **(आ, जिघर्ति)** नष्ट करता है **(त्वचः)** वाणी के संबन्ध में **(रजसः)** लोकसमूह और **(अस्य)** इसके **(बुध्ने)** अन्तरिक्ष और **(योनौ)** गृह में रमता है, ऐसा जानकर इसका सत्कार करके दुष्ट पुरुष को ताड़न दीजिये॥१४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य कलाकौशल से चक्रयन्त्रों का निर्माण करके वेगयुक्त वाहनों को प्राप्त होकर रमण करते हैं, वे ऐश्वर्य को प्राप्त होकर और कुटिलता

को त्याग करके सुख को प्राप्त होते हैं॥१४॥

अथ राजदण्डप्रकर्षतामाह॥

अब राजदण्ड की प्रकर्षता को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

असिक्न्यां यजमानो न होता॥ १५॥ २३॥

असिक्न्याम्। यजमानः। न। होता॥ १५॥

पदार्थः-(**असिक्न्याम्**) रात्रौ। **असिक्नीति रात्रिनामसु पठितम्।** (निघं०१.७) (**यजमानः**) सङ्गन्ता (**न**) इव (**होता**) सुखस्य दाता॥१५॥

अन्वयः-यो राजा यजमानो नाऽसिक्न्यामभयस्य होता स्यात् स एव सततं मोदेत॥१५॥

भावार्थः-यस्य राज्ञः प्रजाजनेषु प्राणिषु सुप्तेषु दण्डो जागर्त्ति सोऽभयदः कुतश्चिदपि भयं नाऽऽप्नोति॥१५॥

पदार्थः-जो राजा (**यजमानः**) मेल करने वाले के (**न**) सदृश (**असिक्न्याम्**) रात्रि में भयरहित (**होता**) सुख को देनेवाला होवे, वही निरन्तर आनन्द करे॥१५॥

भावार्थः-जिस राजा के प्रजाजनों में प्राणियों वा शयन किये हुओं में दण्ड जागता है, वह अभय का देने वाला पुरुष किसी से भी भय को नहीं प्राप्त होता है॥१५॥

अथ प्रजाभ्यः कथं सुखमैश्वर्यं चाह॥

अब प्रजाजनों को कैसे सुख और ऐश्वर्य हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गव्यन्त इन्द्रं सख्याय विप्रा अश्वायन्तो वृषणं वाजयन्तः।

जनीयन्तो जनिदामक्षितोतिमा च्यावयामोऽवते न कोशम्॥ १६॥

गव्यन्तः। इन्द्रम्। सख्याय। विप्राः। अश्वऽयन्तः। वृषणम्। वाजयन्तः। जनिऽयन्तः। जनिऽदाम्। अक्षितऽऊतिम्। आ। च्यवयामः। अवते। न। कोशम्॥ १६॥

पदार्थः-(**गव्यन्तः**) आत्मनो गा इच्छन्तः (**इन्द्रम्**) सूर्य्य इव प्रकाशमानं राजानम् (**सख्याय**) मित्रस्य भावाय कर्मणे वा (**विप्राः**) मेधाविनः (**अश्वायन्तः**) आत्मनोऽश्वानिच्छन्तः (**वृषणम्**) सुखवर्षकम् (**वाजयन्तः**) विज्ञानमन्नं वेच्छन्तः (**जनीयन्तः**) जायामिच्छन्तः (**जनिदाम्**) या जनिं जन्म ददाति (**अक्षितोतिम्**) अक्षीणा ऊती रक्षा यस्य तम् (**आ**) (**च्यावयामः**) प्रापयामः (**अवते**) कूपे। **अवत इति कूपनामसु पठितम्।** (निघं०३.२३) (**न**) इव (**कोशम्**) मेघम्॥१६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा गव्यन्तोऽश्वायन्तो वाजयन्तो जनीयन्तो विप्रा वयं सख्याय वृषणं जनिदामक्षितोतिमवते कोशं नेन्द्रमाच्यावयामस्तथैतं यूयमप्येनमन्यान् प्रापयत॥१६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। येषां सुखैश्वर्येच्छा स्यात्ते मेघ इव धनवर्षकं नित्यरक्षं राजानं मित्रत्वाय सङ्गृह्णीयुः॥१६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(गव्यन्तः)** अपनी गौओं की इच्छा **(अश्वायन्तः)** अपने घोड़ों की इच्छा **(वाजयन्तः)** विज्ञान वा अन्न की इच्छा **(जनीयन्तः)** तथा स्त्री की इच्छा करते हुए **(विप्राः)** बुद्धिमान् हम लोग **(सख्याय)** मित्र होने के वा मित्रकर्म के लिये **(वृषणम्)** सुख के वर्षाने वाले पिता **(जनिदाम्)** जन्म देनेवाली माता **(अक्षितोतिम्)** वा जिसकी रक्षा क्षीण नहीं होती, उस नित्यरक्षक पुरुष को और **(अवते)** कूप में **(कोशम्)** मेघ के **(न)** सदृश **(इन्द्रम्)** वा सूर्य्य के सदृश प्रकाशमान राजा को **(आ, च्यावयामः)** प्राप्त करावें, वैसे इस सब को आप लोग भी औरों को प्राप्त कराओ॥१६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमावाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जिनको सुख और ऐश्वर्य्य की इच्छा होवे, वे मेघ के सदृश धन वर्षाने और नित्य रक्षा करनेवाले राजा को मित्रभाव के लिये ग्रहण करें॥१६॥

अथेश्वरोपासनाविषयमाह॥

अब ईश्वरोपासना विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्राता नो बोधि ददृशान आपिरभिख्याता मर्डिता सोम्यानाम्।

सखा पिता पितृतमः पितॄणां कर्तेमु लोकमुशते वयोधाः॥१७॥

त्राता। नः। बोधि। ददृशानः। आपिः। अभिऽख्याता। मर्डिता। सोम्यानाम्। सखा॥ पिता। पितृऽतमः। पितॄणाम्। कर्ता। ईम्। ऊम् इति। लोकम्। उशते। वयःऽधाः॥१७॥

पदार्थः-**(त्राता)** रक्षकः **(नः)** अस्माकमस्मान् वा **(बोधि)** बुध्यस्व **(ददृशानः)** सम्प्रेक्षकः **(आपिः)** व्याप्तः **(अभिख्याता)** आभिमुख्येनान्तर्यामितयोपदेष्टा **(मर्डिता)** सुखयिता **(सोम्यानाम्)** सोमवच्छान्त्यादिगुणयुक्तानाम् **(सखा)** सुहृत् **(पिता)** जगतो जनकः **(पितृतमः)** अतिशयेन पालकः **(पितॄणाम्)** जनकानां पालकानाम् **(कर्त्ता)** **(ईम्)** सर्वम् (उ) **(लोकम्)** **(उशते)** कामयमानाय **(वयोधाः)** यो वयो जीवनं कमनीयं वस्तु दधाति सः॥१७॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यो नस्त्राता ददृशान आपिरभिख्याता मर्डिता सखा पिता सोम्यानां पितॄणां पितृतमः कर्त्ता लोकमुशत ईमु वयोधा जगदीश्वरोऽस्ति तं बोधि॥१७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वरो मित्रवत्सर्वेषां सुखकरस्सत्योपदेष्टा जनकानां जनकः पालकानां पालकः सर्वेषां कर्मणां द्रष्टा न्यायाधीशोऽन्तर्याम्यभिव्याप्तोऽस्ति तमेव विज्ञायोपाध्वम्॥१७॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जो **(नः)** हम लोगों का वा हम लोगों को **(त्राता)** रक्षा करने **(ददृशानः)** उत्तम प्रकार देखने **(आपिः)** व्याप्त रहने **(अभिख्याता)** सम्मुख अन्तर्यामीपने से उपदेश देने **(मर्डिता)** सुख देने और **(सखा)** मित्र **(पिता)** संसार का उत्पन्न करने वाला **(सोम्यानाम्)** चन्द्रमा के तुल्य शान्ति आदि गुणों से युक्त **(पितॄणाम्)** उत्पन्न वा पालन करने वालों का **(पितृतमः)** अत्यन्त पालन करने वाला

(कर्त्ता) कर्त्तापुरुष **(लोकम्)** लोक की **(उशते)** कामना करते हुए के लिये **(ईम्)** सब को **(उ)** ही **(वयोधाः)** जीवन वा सुन्दर वस्तु का धारण करने वाला जगदीश्वर है, ऐसा उसको **(बोधि)** जानो॥१७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर मित्र के तुल्य सब का सुखकर्त्ता, सत्य का उपदेश देनेवाला, उत्पन्न करने वालों का उत्पन्नकर्त्ता, पालन करने वालों का पालनकर्त्ता, सब कर्म्मों का देखने वाला, न्यायाधीश, अन्तर्य्यामी अभिव्याप्त है, उसी को जानकर उपासना करो॥१७॥

अथ राज्यवर्द्धनप्रकारमाह॥

अब राज्यवर्द्धन प्रकार को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सखीयतामविता बोधि सखा गृणान इन्द्र स्तुवते वयो धाः।

वयं ह्या ते चकृमा सबाध आभिः शमीभिर्महयन्त इन्द्र॥१८॥

सखिऽयताम्। अविता। बोधि। सखा। गृणानः। इन्द्र। स्तुवते। वयः। धाः। वयम्। हि। आ। ते। चकृम। सऽबाधः। आभिः। शमीभिः। महयन्तः। इन्द्र॥१८॥

पदार्थः-**(सखीयताम्)** सखेवाचरताम् **(अविता)** **(बोधि)** बुध्यस्व **(सखा)** सुहृत् **(गृणानः)** स्तुवन् **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्यप्रद **(स्तुवते)** प्रशंसकाय **(वयः)** कमनीयं धनम् **(धाः)** धेहि **(वयम्)** **(हि)** **(आ)** **(ते)** तव **(चकृमा)** कुर्य्याम। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(सबाधः)** बाधेन सह वर्त्तमानः **(आभिः)** **(शमीभिः)** क्रियाभिः **(महयन्तः)** महानिवाचरन्तः **(इन्द्र)** सूर्य इव विद्याविनयप्रकाशित॥१८॥

अन्वयः-हे इन्द्र! सखीयतां सखाविता गृणानः सन् स्तुवते वयो धाः। हे इन्द्र! ये वयं हि ते तुभ्यमाभिः शमीभिर्महयन्तस्सन्तो वयश्चकृमा तांस्त्वं सबाधः सन्नाऽबोधि॥१८॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि वर्धयितुं भवानिच्छेत्तर्हि पक्षपातं विहाय सर्वैः सह मित्रवद्वर्त्तताम्। श्रेष्ठान् रक्षन् दुष्टान् दण्डयन्त्स्वतेजः प्रख्यापयताम्॥१८॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देनेवाले **(सखीयताम्)** मित्र के सदृश आचरण करते हुए पुरुषों के **(सखा)** मित्र **(अविता)** रक्षा करने वाले **(गृणानः)** स्तुति करते हुए **(स्तुवते)** प्रशंसा करनेवाले के लिये **(वयः)** सुन्दर धन को **(धाः)** धारण कीजिये। और हे **(इन्द्र)** सूर्य्य के सदृश विद्या और विनय से प्रकाशित जो **(वयम्)** हम लोग **(हि)** ही **(ते)** आपके लिये **(आभिः)** इन **(शमीभिः)** क्रियाओं से **(महयन्तः)** बड़े के सदृश आचरण करते हुए **(वयः)** सुन्दर धन को **(चकृमा)** करें उनको आप **(सबाधः)** विलोडन के सहित वर्त्तमान होते हुए **(आ, बोधि)** अच्छे प्रकार जानिये॥१८॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि राज्य बढ़वाने की आप इच्छा करें तो पक्षपात का त्याग करके सब के साथ मित्र के सदृश वर्त्ताव करिये और श्रेष्ठ पुरुषों की रक्षा करते और दुष्ट पुरुषों को दण्ड देते हुए अपने तेज की प्रसिद्धि करिये॥१८॥

पुनः कीदृशाञ्जनान् राजा राज्यकर्म्मसु रक्षेदित्याह॥

फिर कैसे जनों को राजा राज्यकर्म्मों में रक्खे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्तुत इन्द्रो मघवा यद्ध वृत्रा भूरीण्येको अप्रतीनि हन्ति।

अस्य प्रियो जरिता यस्य शर्मन्नकिर्देवा वारयन्ते न मर्ताः॥१९॥

स्तुतः। इन्द्रः। मघऽवा। यत्। ह। वृत्रा। भूरीणि। एकः। अप्रतीनि। हन्ति। अस्य। प्रियः। जरिता। यस्य। शर्मन्। नकिः। देवाः। वारयन्ते। न। मर्ताः॥१९॥

पदार्थः-(**स्तुतः**) प्रशंसितः (**इन्द्रः**) सूर्य्य इव राजा (**मघवा**) बह्वैश्वर्य्ययुक्तः (**यत्**) यः (**ह**) किल (**वृत्रा**) वृत्राणि मेघावयवान् (**भूरीणि**) बहूनि (**एकः**) असहायः सन् (**अप्रतीनि**) अप्रीतानि (**हन्ति**) (**अस्य**) (**प्रियः**) कमनीयः (**जरिता**) स्तोता (**यस्य**) (**शर्मन्**) गृहे (**नकिः**) निषेधे (**देवाः**) विद्वांसः (**वारयन्ते**) निषेधयन्ति (**न**) (**मर्त्ताः**) अविद्वांसो मनुष्याः॥१९॥

अन्वयः-हे राजन्! यस्य शर्मन् प्रियो जरिता स्तुतो मघवेन्द्रो यथा सूर्य्योऽप्रतीनि भूरीणि वृत्रैकोऽपि हन्ति तथैव यद्योऽसहायोऽस्य सेनाया ह विद्वान् बहूनां हन्ता वर्त्तेत तं देवा नकिर्वारयन्ते न मर्त्ताश्च॥१९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा सत्योपदेशकान्त्स्वप्रियकारकान् विदुषो राज्यकृत्ये रक्षेत् तस्य पराजयं कर्तुं कोऽपि न समर्थो भवेत्॥१९॥

पदार्थः-हे राजन्! (**यस्य**) जिसके (**शर्मन्**) गृह में (**प्रियः**) मनोहर (**जरिता**) स्तुति करने वाला (**स्तुतः**) प्रशंसित (**मघवा**) बहुत ऐश्वर्य्य से युक्त (**इन्द्रः**) सूर्य्य के सदृश प्रतापी राजा जैसे सूर्य्य (**अप्रतीनि**) नहीं प्रतीत (**भूरीणि**) बहुत (**वृत्रा**) मेघों के अवयवों को (**एकः**) सहायरहित अर्थात् अकेला भी (**हन्ति**) नाश करता है, वैसे ही (**यत्**) जो असहाय (**अस्य**) इसकी सेना में (**ह**) निश्चय से विद्वान् बहुतों का नाश करने वाला वर्त्तावे करे उसको (**देवाः**) विद्वान् लोग (**नकिः**) नहीं (**वारयन्ते**) रोकते हैं और (**न**) न (**मर्त्ताः**) अविद्वान् लोग॥१९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा सत्य के उपदेशक अपने प्रियकारक विद्वानों की राजकृत्य में रक्षा करे, उसका पराजय करने को कोई भी नहीं समर्थ होवे॥१९॥

अथामात्यजनादिभी राज्ञो न्याये प्रवर्त्तयनमाह॥

अब अमात्य आदि जनों से राजा की न्याय के बीच प्रवृत्ति कराने को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवा न इन्द्रो मघवा विरप्शी करत्सत्या चर्षणीधृदनर्वा।

त्वं राजा जनुषां धेह्यस्मे अधि श्रवो माहिनं यज्जरित्रे॥२०॥

एव। नः। इन्द्रः। मघऽवा। विऽरप्शी। करत्। सत्या। चर्षणिऽधृत्। अनर्वा। त्वम्। राजा। जनुषाम्। धेहि। अस्मे इति। अधि। श्रवः। माहिनम्। यत्। जरित्रे॥२०॥

पदार्थः-(**एवा**) अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**नः**) अस्मभ्यम् (**इन्द्रः**) राजा (**मघवा**) धनप्रदः (**विरप्शी**) महान् (**करत्**) कुर्य्यात् (**सत्या**) अविनश्वराणि (**चर्षणीधृत्**) यो मनुष्यान् धरति (**अनर्वा**) अविद्यमाना अश्वा यस्य सः (**त्वम्**) (**राजा**) प्रकाशमानः (**जनुषाम्**) जन्मवताम् (**धेहि**) (**अस्मे**) अस्माकम् (**अधि**) (**श्रवः**) श्रवणमन्नं वा (**माहिनम्**) महत् (**यत्**) यः (**जरित्रे**) स्तावकाय॥२०॥

अन्वयः-हे राजन्! यद्यो नो राजा मघवा विरप्शी चर्षणीधृदनर्वेन्द्रस्त्वं सत्या करत् स एवा त्वं जनुषामस्मे माहिनं श्रवोऽधिधेह्येवं जरित्रे च॥२०॥

भावार्थः-ये मनुष्या अन्याये प्रवर्त्तमानं राजानं निरुन्धन्ति ते सत्यप्रचारकाः सन्तो महत्सुखं प्राप्नुवन्ति॥२०॥

पदार्थः-हे राजन्! (**यत्**) जो (**नः**) हम लोगों के लिये (**राजा**) प्रकाशमान (**मघवा**) धनदाता (**विरप्शी**) बड़े (**चर्षणीधृत्**) मनुष्यों को धारण करने वाले (**अनर्वा**) घोड़ों से रहित (**इन्द्रः**) राजा (**त्वम्**) आप (**सत्या**) नहीं नाश होने वाले कार्यों को (**करत्**) सिद्ध करें (**एवा**) वही आप (**जनुषाम्**) जन्म वाले (**अस्मे**) हम लोगों के (**माहिनम्**) बड़े (**श्रवः**) श्रवण वा अन्न को (**अधि, धेहि**) अधिक धारण करें, इसी प्रकार (**जरित्रे**) स्तुति करनेवाले के लिये भी॥२०॥

भावार्थः-जो मनुष्य अन्याय में प्रवर्त्तमान राजा को रोकते हैं, वे सत्य के प्रचार करनेवाले होते हुए बड़े सुख को प्राप्त होते हैं॥२०॥

अथामात्यादीनामपि कार्यप्रवृत्तिमाह॥

अब अमात्यादिकों की भी कार्य प्रवृत्ति को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो३ न पीपेः।

अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः॥२१॥२४॥

नु। स्तुतः। इन्द्र। नु। गृणानः। इषम्। जरित्रे। नद्यः। न। पीपेरिति पीपेः। अकारि। ते। हरिऽवः। ब्रह्म। नव्यम्। धिया। स्याम। रथ्यः। सदाऽसाः॥२१॥

पदार्थः-(**नू**) सद्यः (**स्तुतः**) प्रशंसितः (**इन्द्र**) राजन् (**नू**) अत्र **ऋचि तुनुघे**त्युभयत्र दीर्घः। (**गृणानः**) सत्यं स्तुवन् (**इषम्**) अन्नं विज्ञानं वा (**जरित्रे**) स्तावकाय (**नद्यः**) सरितः (**न**) इव (**पीपेः**) वर्धय (**अकारि**) क्रियते (**ते**) (**हरिवः**) प्रशस्तमनुष्ययुक्त (**ब्रह्म**) महद्धनम् (**नव्यम्**) नूतनम् (**धिया**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**स्याम**) भवेम (**रथ्यः**) बहुरथवन्तः (**सदासाः**) सेवकैः सह वर्त्तमानाः॥२१॥

अन्वयः-हे हरिव इन्द्र! यो गृणानस्त्वमस्माभिर्नू स्तुतोऽकारि स जरित्रे नद्यो नेषं पीपेः। हे इन्द्र! त्वया नव्यं ब्रह्म न्वकारि तस्य ते वयं सदासा रथ्यो धियाऽनुकूलाः स्याम॥२१॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! योऽनुत्तमगुणकर्मस्वभावविद्य: प्रजाहिताय धनाऽन्नानि वर्धयति तस्याऽऽनुकूल्येन वर्त्तित्वा सेनाऽङ्गानि दृढानि सम्पादनीयानीति॥२१॥

अथेन्द्रराजप्रजाभृत्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तदशं सूक्तं चतुर्विंशो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे **(हरिव:)** श्रेष्ठ मनुष्यों से युक्त **(इन्द्र)** राजन्! जो **(गृणान:)** सत्य की स्तुति करते हुए आप हम लोगों से **(नू)** शीघ्र **(स्तुत:)** प्रशंसित **(अकारि)** किये गये वह आप **(जरित्रे)** स्तुति करने वाले के लिये **(नद्य:)** नदियों के **(न)** सदृश **(इषम्)** अन्न वा विज्ञान को **(पीपे:)** बढ़ाओ और हे राजन्! आप से **(नव्यम्)** नवीन **(ब्रह्म)** बड़ा धन **(नू)** निश्चय से किया गया उन **(ते)** आपके हम लोग **(सदासा:)** सेवकों के साथ वर्त्तमान **(रथ्य:)** बहुत वाहनों से युक्त **(धिया)** बुद्धि वा कर्म से अनुकूल **(स्याम)** होवें॥२१॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो अति उत्तम गुण, कर्म, स्वभाव और विद्या से युक्त और प्रजा के हित के लिये धन और अन्नों को बढ़ाता है, उसके अनुकूलपन से वर्त्ताव करके सेना के अङ्गों का दृढ़ सम्पादन करना चाहिये॥२१॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा, प्रजा और भृत्यों के गुणवर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सत्रहवां सूक्त और चौबीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ त्रयोदशर्चस्याष्टादशस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रादिती देवते। १, ८, १२ त्रिष्टुप्। ५-७, ९-११ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ पङ्क्तिः। ३, ४ भुरिक् पङ्क्तिः। १३ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथेन्द्राय मनुष्याय सन्मार्गोपदेशमाह॥

अब तेरह ऋचावाले अठारहवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में उत्तम ऐश्वर्यवान् मनुष्य के लिये अच्छे मार्ग का उपदेश करते हैं॥

अयं पन्था अनुवित्तः पुराणो यतो देवा उदजायन्त विश्वे।

अतश्चिदा जनिषीष्ट प्रवृद्धो मा मातरममुया पत्तवे कः॥१॥

अयम्। पन्थाः। अनुऽवित्तः। पुराणः। यतः। देवाः। उत्ऽअजायन्त। विश्वे। अतः। चित्। आ। जनिषीष्ट। प्रऽवृद्धः। मा। मातरम्। अमुया। पत्तवे। करिति कः॥१॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**पन्थाः**) मार्गः (**अनुवित्तः**) अनुलब्धः (**पुराणः**) सनातनः (**यतः**) यस्मात् (**देवाः**) विद्वांसः (**उदजायन्त**) उत्कृष्टा भवन्ति (**विश्वे**) सर्वे (**अतः**) अस्मात् (**चित्**) अपि (**आ**) (**जनिषीष्ट**) जायेत (**प्रवृद्धः**) (**मा**) निषेधे (**मातरम्**) जननीम् (**अमुया**) तया (**पत्तवे**) पत्तुं प्राप्तुम् (**कः**) कुर्याः॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यतो विश्वे देवा उदजायन्त सोऽयमनुवित्तः पुराणः पन्था अस्ति। यतोऽयं संसारः प्रवृद्धो जनिषीष्टाऽतश्चित्त्वममुया मातरं पत्तवे माऽकः॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन मार्गेणाप्ता गच्छेयुस्तेनैव मार्गेण यूयमपि गच्छत। यदि महती वृद्धिरपि स्यात्तदपि माता केनापि नाऽवमन्तव्या॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यतः**) जिससे (**विश्वे**) सब (**देवाः**) विद्वान् लोग (**उदजायन्त**) उत्तम होते हैं वह (**अयम्**) यह (**अनुवित्तः**) अनुकूल प्राप्त (**पुराणः**) अनादि काल से सिद्ध (**पन्थाः**) मार्ग है, जिससे यह संसार (**प्रवृद्धः**) बड़ा (**जनिषीष्ट**) उत्पन्न होवे (**अतः**) इस कारण से (**चित्**) भी आप (**अमुया**) उस उत्पत्ति से (**मातरम्**) माता को (**पत्तवे**) प्राप्त होने को (**मा**) मत (**आ, कः**) करे॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस मार्ग से यथार्थवक्ता पुरुष जावें, उसी मार्ग से आप लोग भी चलो, जो बड़ी वृद्धि भी होवे तो भी माता का अपमान किसी को न करना चाहिये॥१॥

पुनर्दृष्टान्तेन पूर्वोक्तमाह॥

फिर दृष्टान्त से पूर्वोक्त विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नाहमतो निरया दुर्गहैतत्तिरश्चता पार्श्वान्निर्गमाणि।

बहूनि मे अकृता कर्त्वानि युध्यै त्वेन सं त्वेन पृच्छै॥२॥

न। अहम्। अतः। निः। अय। दुःऽगहा। एतत्। तिरश्चता। पार्श्वात्। निः। गमानि। बहूनि। मे। अकृता। कर्त्वानि। युध्यै। त्वेन। सम्। त्वेन। पृच्छै॥२॥

पदार्थः-(**न**) (**अहम्**) (**अतः**) अस्मात् (**निः**) नितराम् (**अय**) प्राप्नुहि (**दुर्गहा**) यो दुर्गान् दुःखेन गन्तुं योग्यान् हन्ति (**एतत्**) (**तिरश्चता**) तिरश्चीनेन (**पार्श्वात्**) (**निः**) (**गमानि**) गच्छेयम् (**बहूनि**) (**मे**) मम (**अकृता**) अकृता (**कर्त्वानि**) कर्त्तव्यानि (**युध्यै**) युद्धं कुर्याम् (**त्वेन**) केन (**सम्**) (**त्वेन**) अन्येन (**पृच्छै**) पृच्छेयम्॥२॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथाऽहं दुर्गहा न भवेयं पार्श्वान्निर्गमाणि मे बहून्यकृता कर्त्वानि कर्माणि सन्ति तिरश्चता त्वेन युध्यै त्वेन सम्पृच्छै तथात्वमत एतन्निरय॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाऽहं कर्म न करोमि कृत्वाऽकृतानि न रक्षामि मया सह योद्धुमिच्छेत्तेन सह युद्धे प्रष्टव्यं पृच्छामि तथैतत्सर्वमाचर॥२॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जैसे (**अहम्**) मैं (**दुर्गहा**) दुःख से प्राप्त होने योग्यों का नाश करने वाला (**न**) न होऊँ (**पार्श्वात्**) पाश से (**निः, गमानि**) जाऊं (**मे**) मेरे (**बहूनि**) बहुत (**अकृता**) न किये गये (**कर्त्वानि**) कर्त्तव्य कर्म हैं (**तिरश्चता**) तिरछे बांके से (**त्वेन**) किससे (**युध्यै**) युद्ध करूं (**त्वेन**) अन्य से (**सम्, पृच्छै**) पूछूं, वैसे आप (**अतः**) इस कारण से (**एतत्**) इस पूर्वोक्त को (**निः**) अत्यन्त (**अय**) प्राप्त होओ॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे मैं कर्म नहीं करता हूँ और करके न किये गये न रखता हूँ, मेरे साथ जो युद्ध की इच्छा करे, उसके साथ युद्ध में पूछने योग्य को पूछता हूँ, वैसे इस सब का आचरण करो॥२॥

अथेन्द्राय सेनासंरक्षणविषयमाह॥

अब उत्तम ऐश्वर्यवान् राजा के लिये सेना के संरक्षण विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

परायतीं मातरमन्वचष्ट न नानु गान्यनु नू गमानि।

त्वष्टुर्गृहे अपिबत्सोममिन्द्रः शतधन्यं चम्वोः सुतस्य॥३॥

पराऽयतीम्॥ मातरम्। अनु। अचष्ट। न। न। अनु। गानि। अनु। नु। गमानि। त्वष्टुः। गृहे। अपिबत्। सोमम्। इन्द्रः। शतऽधन्यम्। चम्वोः। सुतस्य॥३॥

पदार्थः-(**परायतीम्**) म्रियमाणाम् (**मातरम्**) जननीम् (**अनु**) (**अचष्ट**) ख्यापयेत् (**न**) (**न**) (**अनु**) (**गानि**) गच्छेयम् (**अनु**) (**नु**) सद्यः (**गमानि**) गच्छेयम् (**त्वष्टुः**) प्रकाशस्य (**गृहे**) (**अपिबत्**) पिबति (**सोमम्**) ओषधिरसम् (**इन्द्रः**) शत्रुविदारकः सेनेशः (**शतधन्यम्**) असङ्ख्ये धने साधुम् (**चम्वोः**) सेनयोर्मध्ये (**सुतस्य**) निष्पन्नस्यैश्वर्यस्य॥३॥

अन्वयः-यथेन्द्रस्त्वष्टुर्गृहे सुतस्य शतधन्यं सोमं चम्वोरपिबत् परायतीं मातरं नाऽन्वचष्ट तथाऽहं न्वनुगानि तथाऽहं नानुगमानि॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सेनाधीशा राजगृहे सत्कारं प्राप्य युक्ताऽऽहारविहाराभ्यां पूर्णं बलं निष्पाद्य द्वयोः स्वस्य शत्रूणां च सेनयोर्मध्ये विवादं विनाशयेयुर्वा योधयेयुस्तेषां सदैव विजयो यथा रुग्णां मातरमपत्यानि सेवन्ते तथैव सेनायाः सेवनं कुर्वन्ति ते न्यायाऽनुगामिनो भवन्ति॥३॥

पदार्थः-जैसे **(इन्द्रः)** शत्रुओं का नाश करनेवाला सेना का ईश **(त्वष्टुः)** प्रकाश के **(गृहे)** स्थान में **(सुतस्य)** ऐश्वर्य्य से युक्त के **(शतधन्यम्)** असंख्य धन में साधु **(सोमम्)** ओषधियों के रस को **(चम्वोः)** सेनाओं के मध्य में **(अपिबत्)** पीता है **(परायतीम्)** और मरनेवाली **(मातरम्)** माता को **(न)** नहीं **(अनु, अचष्ट)** प्रसिद्ध करे, वैसे मैं **(नु)** शीघ्र **(अनु, गानि)** पीछे जाऊं और वैसे मैं **(न)** न **(अनु, गमानि)** पीछे जाऊं॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सेना के अधीश राजगृह में सत्कार को प्राप्त होकर, नियमित आहार और विहार से पूर्ण बल को करके, दोनों अपनी और शत्रुओं की सेना के मध्य में विवाद का नाश करें वा युद्ध करावें, उनका सदा ही विजय और जैसे रोगग्रस्त माता की सन्तान सेवा करते हैं, वैसे ही सेना का सेवन करते हैं, वे न्याय के अनुगामी होते हैं॥३॥

अथेन्द्राय कालदृष्टान्तेन सन्मार्गमुपदिशति॥

अब उत्तम ऐश्वर्यवान् पुरुष के लिये काल दृष्टान्त से अच्छे मार्ग का उपदेश अगले मन्त्र में करते हैं॥

किं स ऋध॑क् कृणव॒द्यं स॒हस्रं॑ मा॒सो ज॒भार॑ श॒रद॑श्च पू॒र्वीः।

न॒ही न्व॑स्य प्रति॒मान॒मस्त्य॒न्तर्जा॒तेषू॒त ये जनि॑त्वाः॥४॥

कि॒म्। सः। ऋध॑क्। कृ॒णव॑त्। यम्। स॒हस्र॑म्। मा॒सः। ज॒भार॑। श॒रदः॑। च॒। पू॒र्वीः। न॒हि। नु। अ॒स्य॒। प्र॒ति॒ऽमान॑म्। अस्ति॑। अ॒न्तः। जा॒तेषु॑। उ॒त। ये। जनि॑ऽत्वाः॥४॥

पदार्थः-**(किम्)** **(सः)** **(ऋधक्)** सत्यम् **(कृणवत्)** कुर्यात् **(यम्)** **(सहस्रम्)** असङ्ख्यम् **(मासः)** चैत्रादिः **(जभार)** **(शरदः)** शरदाद्यृतून् **(च)** **(पूर्वीः)** सनातनीः **(नही)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(नु)** **(अस्य)** **(प्रतिमानम्)** परिमाणसाधनम् **(अस्ति)** **(अन्तः)** आभ्यन्तरे **(जातेषु)** उत्पन्नेषु **(उत)** अपि **(ये)** **(जनित्वाः)** ये जनिष्यन्ते ते॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये जनित्वा अन्तर्जातेषु पूर्वीः शरदो जानन्त्युत यदस्य प्रतिमानं नह्यस्ति मासो जभार यं सहस्रमृधक् कृणवत् स च किन्वाप्नुयात्॥४॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यथा कालो मासाद्यवयवान् धरति स्वयमनन्तः सञ्जगति जातेषु परिमापकोऽस्ति तथैव यूयमपि कुरुत॥४॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! **(ये)** जो **(जनित्वा:)** उत्पन्न होने वाले [के] **(अन्त:)** बीच **(जातेषु)** उत्पन्न हुए पदार्थों में **(पूर्वी:)** अनादि काल से सिद्ध **(शरद:)** शरद् ऋतुओं को जानते हैं **(उत)** और जो **(अस्य)** इसका **(प्रतिमानम्)** परिमाण साधन **(नही)** नहीं **(अस्ति)** है वा **(मास:)** चैत्र आदि मास **(जभार)** पोषण करे और **(यम्)** जिसे **(सहस्रम्)** सङ्ख्यारहित **(ऋधक्)** सत्य **(कृणवत्)** प्रसिद्ध करे **(स:)** वह **(च)** और **(किम्)** किस को **(नु)** निश्चय से प्राप्त होवे॥४॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे काल, मास आदि अवयवों को धारण करता है और आप अनन्त हुआ संसार में उत्पन्न हुओं में नापने वाला है, वैसे ही आप लोग भी करो॥४॥

अथ मानं कुर्वत्या मात्रेन्द्रपालनादिविषयमाह॥

अब मान करने वाली माता से उत्तम ऐश्वर्यवान् पुरुष के पालनादि विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अवद्यमिव मन्यमाना गुहाकरिन्द्रं माता वीर्येणा न्यृष्टम्।

अथोदस्थात्स्वयमत्कं वसान आ रोदसी अपृणाज्जायमानः॥५॥२५॥

अवद्यम्ऽइव। मन्यमाना। गुहा। अकः। इन्द्रम्। माता। वीर्येण। निऽऋष्टम्। अथ। उत्। अस्थात्। स्वयम्। अत्कम्। वसानः। आ। रोदसी इति। अपृणात्। जायमानः॥५॥

पदार्थ:-**(अवद्यमिव)** निन्दनीयमिव **(मन्यमाना)** **(गुहा)** बुद्धौ **(अक:)** करोति **(इन्द्रम्)** राजानम् **(माता)** जननी **(वीर्येणा)** पराक्रमेण। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(न्यृष्टम्)** नितरां प्राप्तम् **(अथ)** **(उत्)** **(अस्थात्)** उत्तिष्ठते **(स्वयम्)** **(अत्कम्)** कूपम् **(वसान:)** आच्छादयन् **(आ)** **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(अपृणात्)** पृणाति पालयति **(जायमान:)** उत्पद्यमानः॥५॥

अन्वय:-यथा मन्यमाना माता गुहा वीर्येणा न्यृष्टमिन्द्रमवद्यमिवाऽकस्तथैव जायमानः सूर्यो रोदसी आपृणाद् यथात्कं वसानो जनस्स्वयमेवोपर्यागच्छेत्तथा य उदस्थात्सोऽथ सर्वं जगद्रक्षति॥५॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि माता सूर्यवद्यानि स्वापत्यानि बोधयति दुष्टाचारानपनीय शिक्षते तानि उत्तमानि भवन्ति॥५॥

पदार्थ:-जैसे **(मन्यमाना)** आदर की गई **(माता)** माता **(गुहा)** बुद्धि में **(वीर्येणा)** पराक्रम से **(न्यृष्टम्)** अत्यन्त प्राप्त **(इन्द्रम्)** राजा को **(अवद्यमिव)** निन्दनीय के सदृश **(अक:)** करती है, वैसे ही **(जायमान:)** उत्पन्न होनेवाला सूर्य **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथ्वी का **(आ, अपृणात्)** पालन करता है और जैसे **(अत्कम्)** कूप का **(वसान:)** आच्छादन करता हुआ जन **(स्वयम्)** आप ही ऊपर को प्राप्त होवे, वैसे जो **(उत, अस्थात्)** उठता है वह **(अथ)** अनन्तर सब जगत् की रक्षा करता है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो माता सूर्य के सदृश जिन अपने सन्तानों को बोध कराती और दुष्ट आचरणों को दूर करके शिक्षा करती है तो वे सन्तान उत्तम होते हैं॥५॥

अथ मेघकृत्यमाह॥

अब मेघ के कृत्य को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एता अर्षन्त्यललाभवन्तीर्ऋतावरीरिव संक्रोशमानाः।
एता वि पृच्छ किमिदं भनन्ति कमापो अद्रिं परिधिं रुजन्ति॥६॥

एताः। अर्षन्ति। अललाऽभवन्तीः। ऋतवरीःऽइव। सम्ऽक्रोशमानाः। एताः। वि। पृच्छ। किम्। इदम्। भनन्ति। कम्। आपः। अद्रिम्। परिऽधिम्। रुजन्ति॥६॥

पदार्थः-(**एताः**) (**अर्षन्ति**) गच्छन्ति (**अललाभवन्तीः**) अलला अलला इव शब्दयन्तीः (**ऋतावरीरिव**) उषस इव (**संक्रोशमानाः**) आक्रोशं कुर्वाणाः (**एताः**) गच्छन्त्यो नद्यः (**वि**) (**पृच्छ**) (**किम्**) (**इदम्**) (**भनन्ति**) शब्दयन्ति (**कम्**) (**आपः**) (**अद्रिम्**) मेघम् (**परिधिम्**) (**रुजन्ति**) भञ्जन्ति॥६॥

अन्वयः-हे जिज्ञासो! या एता नद्य ऋतावरीरिव संक्रोशमाना अललाभवन्तीरर्षन्ति ता एता किमिदं भनन्तीति वि पृच्छ। एता आपः कं परिधिमद्रिं रुजन्तीति च॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! एता नद्यो मेघपुत्र्यास्तटान् भञ्जन्त्य अव्यक्ताञ्छब्दान् कुर्वन्त्य उषा इव गच्छन्ति तथैव सेनाः शत्रूनभिमुखं गच्छन्तु॥६॥

पदार्थः-हे जिज्ञासुजन! जो (**एताः**) ये नदियाँ (**ऋतावरीरिव**) प्रातःकालों के सदृश (**संक्रोशमानाः**) उच्चस्वर को करती हुई (**अललाभवन्तीः**) अलल अर्राती हुई (**अर्षन्ति**) जाती हैं सो (**एताः**) ये (**किम्**) क्या (**इदम्**) यह (**भनन्ति**) शब्द करती हैं, ऐसा (**वि, पृच्छ**) विशेष करके पूछिये और ये (**आपः**) जल (**कम्**) किस (**परिधिम्**) घेर और (**अद्रिम्**) मेघ को (**रुजन्ति**) भञ्जते हैं॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! यह नदियाँ मेघों की पुत्रियाँ अर्थात् उनसे उत्पन्न हुई तटों को तोड़ती और अव्यक्त शब्दों को करती हुई प्रातःकालों के सदृश जाती हैं, वैसे ही सेना शत्रुओं के सम्मुख प्राप्त होवें॥६॥

पुनर्मेघविषयमाह॥

फिर मेघ विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

किमु ष्विदस्मै निविदो भनन्तेन्द्रस्यावद्यं दिधिषन्त आपः।
ममैतान् पुत्रो महता वधेन वृत्रं जघन्वाँ असृजद्वि सिन्धून्॥७॥

किम्। ऊम् इति॑। स्वि॒त्। अ॒स्मै॒। नि॒ऽविदः॑। भ॒न॒न्त॒। इन्द्र॑स्य। अ॒व॒द्यम्। दि॒धि॒ष॒न्ते॒। आपः॑। मम॑। ए॒तान्। पु॒त्रः। म॒ह॒ता। व॒धेन॑। वृ॒त्रम्। ज॒घ॒न्वान्। अ॒सृ॒ज॒त्। वि। सिन्धू॑न्॥७॥

पदार्थः-(**किम्**) (उ) (**स्वित्**) प्रश्ने (**अस्मै**) मेघाय (**निविदः**) नितरां विदन्ति याभिस्ता वाचः। **निविदिति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११) (**भनन्त**) वदन्ति (**इन्द्रस्य**) सूर्य्यस्य (**अवद्यम्**) गर्ह्यम् (**दिधिषन्ते**) शब्दयन्ति (**आपः**) (**मम**) (**एतान्**) (**पुत्रः**) (**महता**) (**वधेन**) (**वृत्रम्**) (**जघन्वान्**) हतवान् (**असृजत्**) सृजति (**वि**) (**सिन्धून्**) नदीः॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ममाऽपत्यस्येन्द्रस्य निविदोऽस्मै मेघाय किमु स्विद्भनन्तापोऽवद्यं दिधिषन्ते मम पुत्रो महता वधेनैतान् वृत्रञ्च जघन्वान्त्सिन्धून् व्यसृजत्॥७॥

भावार्थः-अत्राऽदितिसूर्य्यमेघाऽलङ्कारेण सेनासभाध्यक्षराज्ञां कृत्यं वर्णितमस्ति। यथाऽन्तरिक्षस्य पुत्रवद्वर्त्तमानोऽर्को मेघं हत्वा नदीर्वाहयति तथैव विदुषः सुशिक्षितः पुत्रः सेनाध्यक्षश्शत्रून् हत्वा सेना ऐश्वर्यं प्रापयति॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**मम**) मुझ पुत्र के (**इन्द्रस्य**) सूर्यसम्बन्ध की (**निविदः**) अत्यन्त ज्ञान जिनसे वे वाणी (**अस्मै**) इस मेघ के लिये (**किम्**) क्या (**उ**) और (**स्वित्**) क्यों (**भनन्त**) शब्द करती हैं (**आपः**) जल (**अवद्यम्**) निन्द्य (**दिधिषन्ते**) शब्द करते हैं, मेरा (**पुत्रः**) सन्तान (**महता**) बड़े (**वधेन**) वध से (**एतान्**) इनको और (**वृत्रम्**) मेघ का (**जघन्वान्**) नाश किया हुआ सूर्य्य (**सिन्धून्**) नदियों को (**वि, असृजत्**) उत्पन्न करता है॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में अदिति, सूर्य्य और मेघ के अलङ्कार से सेना, सभाध्यक्ष और राजा के कृत्य का वर्णन है। जैसे अन्तरिक्ष के पुत्र के समान वर्त्तमान सूर्य्य मेघ का नाश करके नदियों को बहाता है, वैसे ही विद्वान् का उत्तम प्रकार शिक्षित पुत्र सेना का अध्यक्ष शत्रुओं का नाश करके सेनाओं को ऐश्वर्य्य प्राप्त कराता है॥७॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मम॑च्च॒न त्वा॑ यु॒व॒तिः प॒रास॒ मम॑च्च॒न त्वा॑ कु॒षवा॑ ज॒गार॑।

मम॑च्चि॒दापः॒ शिश॑वे ममृड्यु॒र्मम॑च्चि॒दिन्द्रः॒ सह॒सोद॑तिष्ठत्॥८॥

मम॑त्। च॒न। त्वा॒। यु॒व॒तिः। प॒रा॒ऽआस॑। मम॑त्। च॒न। त्वा॒। कु॒षवा॑। ज॒गार॑। मम॑त्। चि॒त्। आपः॑। शिश॑वे। म॒मृ॒ड्युः॒। मम॑त्। चि॒त्। इन्द्रः॑। सह॑सा। उत्। अ॒ति॒ष्ठ॒त्॥८॥

पदार्थः-(**ममत्**) प्रमादयन्ती (**चन**) अपि (**त्वा**) त्वाम् (**युवतिः**) पूर्णचतुर्विंशतिवार्षिका (**परास**) पराङ्मुखस्यति (**ममत्**) (**चन**) (**त्वा**) (**कुषवा**) कुत्सितः सवः प्रेरणा यस्याः सा (**जगार**) निगिलति

(ममत्) **(चित्)** **(आप:)** जलवद्वर्त्तमाना मातर: **(शिशवे)** पुत्राय **(ममृड्युः)** सुखयन्ति **(ममत्)** **(चित्)** **(इन्द्र:)** सूर्य इव **(सहसा)** बलेन **(उत्)** **(अतिष्ठत्)** उत्तिष्ठति॥८॥

अन्वय:-हे राजन्! या युवतिस्त्वा ममच्चन परास या ममत् कुषवा त्वा चन जगार तत्सङ्गं त्यज या ममदापश्चिदिव शिशवे ममृड्युर्ये ममच्चिदिन्द्र: सहसा उदतिष्ठत्तं सेवस्व॥८॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। ये प्रमदासु न प्रमाद्यन्ति ते बलिनो जायन्ते ये पुत्रवत् प्रजा: पालयन्ति त उत्कृष्टा भवन्ति॥८॥

पदार्थ:-हे राजन्! जो **(युवति:)** पूर्ण चौबीस वर्ष वाली **(त्वा)** आपको **(ममत्)** मदयुक्त करती हुई **(चन)** भी **(परास)** पराङ्मुख करती है, जो **(ममत्)** प्रमादयुक्त करती हुई **(कुषवा)** निकृष्ट प्रेरणा वाली **(त्वा)** आपको **(चन)** भी **(जगार)** निगलती है, उसके सङ्ग का त्याग करो और जो **(ममत्)** मदयुक्त करती हुई **(आप:)** जलों के सदृश वर्तमान माता से **(चित्)** वैसे **(शिशवे)** पुत्र के लिये **(ममृड्यु:)** सुख देती है और जो **(ममत्)** सुख देता हुआ **(चित्)** सा **(इन्द्र:)** सूर्य के सदृश **(सहसा)** बल से **(उत्, अतिष्ठत्)** उठता है, उसकी सेवा करो॥८॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग प्रमत्त स्त्रियों में प्रमाद को नहीं प्राप्त होते, वे बली होते हैं और जो पुत्र के सदृश प्रजाओं का पालन करते, वे उत्तम होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ममच्चन ते मघवन् व्यंसो निविविध्वाँ अप हनू जघान।

अधा निविद्ध उत्तरो बभूवाञ्छिरो दासस्य सं पिणग्वधेन॥९॥

ममत्। चन। ते। मघऽवन्। विऽअंसः। निऽविविध्वान्। अप। हनू इति। जघान। अध। निऽविद्धः। उत्ऽतरः। बभूवान्। शिरः। दासस्य। सम्। पिणक्। वधेन॥९॥

पदार्थ:-**(ममत्)** हर्षन् **(चन)** अपि **(ते)** **(मघवन्)** बहुधनयुक्त **(व्यंस:)** विप्रकृष्टा अंसा बलादयो यस्य स: **(निविविध्वान्)** यो नितरां शत्रून् विध्यति स: **(अप)** दूरीकरणे **(हनू)** मुखपार्श्वौ **(जघान)** **(अधा)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घ:। **(निविद्ध:)** नितरां वाणैर्विच्छिन्न: **(उत्तर:)** उत्तरकालीन: **(बभूवान्)** भवति **(शिर:)** उत्तमाङ्गम् **(दासस्य)** दातुं योग्यस्य **(सम्)** **(पिणक्)** पिनष्टि **(वधेन)** ताडनेन॥९॥

अन्वय:-हे मघवन्! यस्त दासस्य वधेन शिर: सम्पिणग् व्यंसो निविविध्वान् हनू अप जघानाधा ममच्चनोत्तरो निविद्धो बभूवांस्तं त्वं दण्डय॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! यो विरुद्धेन कर्मणा प्रजासु विचेष्टते तं सदा निबद्धं शस्त्रैर्व्यथितं कृत्वा सर्वतो निबध्नीहि॥९॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** बहुत धन से युक्त पुरुष जो **(ते)** आपके **(दासस्य)** देने योग्य के **(वधेन)** ताड़न से **(शिरः)** शिर को **(सम्, पिणक्)** अच्छे पीसता है **(व्यंसः)** खींच लिये गये हैं बल आदि जिसके ऐसा **(निविविध्वान्)** अत्यन्त शत्रुओं का नाश करने वाला **(हनू)** मुख के आस-पास के भागों को **(अप)** दूर करने में **(जघान)** नाश करता है **(अधा)** इसके **(ममत्)** प्रसन्न होता हुआ **(च न)** भी **(उत्तरः)** आगे के समय में होने वाला **(निविद्धः)** अत्यन्त वाणों से छेदा गया **(बभूवान्)** होता है, उसको आप दण्ड दीजिये॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! जो विरुद्ध कर्म से प्रजाओं में चेष्टा करता है, उस सदा दृढ़ बंधे को शस्त्रों से व्यथित कर सब प्रकार से बांधो॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गृष्टिः ससूव स्थविरं तवागामनाधृष्यं वृषभं तुम्रमिन्द्रम्।

अरीळ्हं वत्सं चरथाय माता स्वयं गातुं तन्व इच्छमानम्॥१०॥

गृष्टिः। ससूव। स्थविरम्। तवागाम्। अनाधृष्यम्। वृषभम्। तुम्रम्। इन्द्रम्। अरीळ्हम्। वत्सम्। चरथाय। माता। स्वयम्। गातुम्। तन्वे। इच्छमानम्॥१०॥

पदार्थः-**(गृष्टिः)** सकृत् प्रसूता गौः **(ससूव)** जनयति **(स्थविरम्)** स्थूलं वृद्धं वा **(तवागाम्)** प्राप्तबलम् **(अनाधृष्यम्)** प्रगल्भम् **(वृषभम्)** वृषभ इव बलिष्ठम् **(तुम्रम्)** सत्कर्मसु प्रेरकम् **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्यवन्तम् **(अरीळहम्)** शत्रूणां हन्तारम् **(वत्सम्)** **(चरथाय)** **(माता)** **(स्वयम्)** **(गातुम्)** वाणीम् **(तन्वे)** विस्तृणुयाम् **(इच्छमानम्)**॥१०॥

अन्वयः-हे मघवन् राजन्! यथा गृष्टिश्चरथाय वत्समिव माता स्थविरं तवागामनाधृष्यं तुम्रं वृषभमिवाऽरीळ्हं स्वयं गातुं पृथिवीमिच्छमानमिन्द्रं ससूव तथाहं त्वदर्थं भूमिराज्यं तन्वे॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! यथा सुसंस्कृताऽन्नादेः समये समये मिताहारः कृतः शरीरं पुष्टं कृत्वा बलं वर्धयित्वा शत्रुविजयनिमित्तं भूत्वा राज्यं वर्धयति तथैव त्वं न्यायेनाऽस्माकं वर्धय॥१०॥

पदार्थः-हे बहुधनयुक्त राजन्! जैसे **(गृष्टिः)** एक वार प्रसूता हुई गौ **(माता)** माता **(चरथाय)** चरने के लिये **(वत्सम्)** बछड़े के सदृश **(स्थविरम्)** स्थूल वा वृद्ध **(तवागाम्)** बल को प्राप्त

(अनाधृष्यम्) प्रगल्भ **(तुम्रम्)** उत्तम कर्म्मों में प्रेरणा करने और **(वृषभम्)** बैल के सदृश बलिष्ठ **(अरीळ्हम्)** शत्रुओं के नाश करने वाले **(स्वयम्)** आप **(गातुम्)**[३] वाणी **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्य्यवान् सुत की **(इच्छमानम्)** इच्छा करते हुए को **(ससूव)** उत्पन्न करती है, वैसे मैं आपके लिये पृथ्वी के राज्य का **(तन्वे)** विस्तार करूं॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जैसे उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त किये हुए अन्न आदि का समय पर नियमित भोजन किया गया शरीर को पुष्ट कर बल को बढ़ाय शत्रुओं का विजयनिमित्तक हो राज्य को बढ़ाता है, वैसे ही आप न्याय से हम लोगों के सुख की वृद्धि करो॥१०॥

अथ सन्तानशिक्षणेन विद्वद्विषयमाह॥

अब सन्तान शिक्षा से विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत माता महिषमन्ववेनदमी त्वा जहति पुत्र देवाः।

अथाब्रवीद् वृत्रमिन्द्रो हनिष्यन्त्सखे विष्णो वितरं वि क्रमस्व॥११॥

उत। माता। महिषम्। अनु। अवेनत्। अमी इति। त्वा। जहति। पुत्र। देवाः। अथ। अब्रवीत्। वृत्रम्। इन्द्रः। हनिष्यन्। सखे। विष्णो इति। विऽतरम्। वि। क्रमस्व॥११॥

पदार्थः-**(उत)** **(माता)** जननी **(महिषम्)** महान्तम् **(अनु)** **(अवेनत्)** याचते **(अमी)** **(त्वा)** त्वाम् **(जहति)** **(पुत्र)** दुःखात्त्रातः **(देवाः)** विद्वांसः **(अथ)** **(अब्रवीत्)** ब्रूते **(वृत्रम्)** मेघमिवाऽविद्याम् **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान्त्सूर्य्य इव पिता **(हनिष्यन्)** हननं करिष्यन् **(सखे)** मित्र **(विष्णो)** सकलविद्याव्यापिन् **(वितरम्)** विविधप्रकारेण तरितुं योग्यम् **(वि)** **(क्रमस्व)** पुरुषार्थी भव॥११॥

अन्वयः-हे सखे विष्णो पुत्र! त्वमिन्द्रो वृत्रमिवाऽविद्यां हनिष्यन् वितरं वि क्रमस्वाथ माता त्वा महिषमवेनदेवमुतापि यथा पिताऽब्रवीत्तथा न कुर्य्याश्चेत्तर्ह्यमी देवास्त्वाऽनुजहति॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। सन्तानानां योग्यतास्ति यथा विद्वांसौ मातापितरौ ब्रह्मचर्य्यादिना विद्याग्रहणं शरीरसुखवर्धनमुपदिशेतां तथैवाऽनुष्ठेयं यानि सुशीलान्यपत्यानि भवन्ति तान्येवाऽऽप्ताऽध्यापका अनुगृह्णन्ति दुर्व्यसनानि त्यजन्ति॥११॥

पदार्थः-हे **(सखे)** मित्र **(विष्णो)** सम्पूर्ण विद्याओं में व्यापक **(पुत्र)** दुःख से रक्षा करने वाले! आप **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्य्यवान् सूर्य्य के सदृश पालनकर्त्ता **(वृत्रम्)** मेघ के समान अविद्या का **(हनिष्यन्)** नाश करनेवाले हुए **(वितरम्)** विविध प्रकार तरने योग्य को **(वि, क्रमस्व)** पुरुषार्थी हूजिये

---

३. संस्कृत एवं हिन्दी पदार्थ में 'गातुम्' का अर्थ 'वाणी' किया है, जबकि अन्वय में 'गातुम्' का अर्थ 'पृथिवी' और निघण्टु (निघं०१.१.२०) में भी यह पृथिवीवाचक में पठित है।

(अथ) इसके अनन्तर **(माता)** माता **(त्वा)** आपको **(महिषम्)** बड़ा **(अवेनत्)** मांगती है, जो इस प्रकार **(उत)** भी जैसे पिता **(अब्रवीत्)** कहता है, वैसे नहीं करे तो **(अमी)** यह **(देवाः)** विद्वान् लोग आपका **(अनु, जहति)** त्याग करते हैं॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। सन्तानों की योग्यता है कि जैसे विद्वान् माता पिता ब्रह्मचर्य आदि से विद्या का ग्रहण और शरीर के सुख के वर्धन का उपदेश करें, वैसे ही करना चाहिये और जो उत्तम शीलयुक्त पुत्र होते हैं, उन्हीं पर यथार्थवक्ता अध्यापक लोग कृपा करते और दुर्व्यसनियों का त्याग करते हैं॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कस्ते॑ मा॒तरं॑ वि॒धवा॑मचक्रच्छ॒युं कस्त्वाम॑जिघांस॒च्चर॑न्तम्।

कस्ते॑ दे॒वो अधि॑ मार्डी॒क आ॑सी॒द्यत्प्राक्षि॑णाः पि॒तरं॑ पाद॒गृह्य॑॥१२॥

कः। ते॒। मा॒तर॑म्। वि॒धवा॑म्। अ॒च॒क्र॒त्। श॒युम्। कः। त्वाम्। अ॒जि॒घां॒स॒त्। चर॑न्तम्। कः। ते॒। दे॒वः। अधि॑। मा॒र्डी॒के। आ॒सी॒त्। यत्। प्र। अक्षि॑णाः। पि॒तर॑म्। पा॒द॒ऽगृह्य॑॥१२॥

पदार्थः-**(कः)** **(ते)** तव **(मातरम्)** **(विधवाम्)** विगतो धवः पतिर्यस्यास्ताम् **(अचक्रत्)** करोति **(शयुम्)** यः शेते तम् **(कः)** **(त्वाम्)** **(अजिघांसत्)** हन्तुमिच्छति **(चरन्तम्)** विहरन्तम् **(कः)** **(ते)** **(देवः)** दिव्यगुणः **(अधि)** उपरि **(मार्डीके)** सुखकरे **(आसीत्)** **(यत्)** यः **(प्र)** **(अक्षिणाः)** क्षयति हन्ति **(पितरम्)** जनकम् **(पादगृह्य)** पादान् ग्रहीतुं योग्यः॥१२॥

अन्वयः-हे पुत्र! ते मातरं विधवां कोऽचक्रत् कश्चरन्तं शयुं त्वामजिघांसत् कस्ते देवो मार्डीकेऽध्यासीत् पादगृह्य यद्यस्ते पितरं प्राऽक्षिणाः॥१२॥

भावार्थः-हे सन्तानाः! ये या वा युष्माकं पितॄन् हत्वा मातॄर्विधवाः कुर्य्युर्युष्मानपि घ्नन्तु तेषां विश्वासं यूयं मा कुरुत॥१२॥

पदार्थः-हे पुत्र! **(ते)** आपकी **(मातरम्)** माता को **(विधवाम्)** पतिहीन **(कः)** कौन **(अचक्रत्)** करता है **(कः)** कौन **(चरन्तम्)** विहार वा **(शयुम्)** शयन करते हुए **(त्वाम्)** आपको **(अजिघांसत्)** मारने की इच्छा करता है **(कः)** कौन **(ते)** आपके **(देवः)** श्रेष्ठ गुण वाला **(मार्डीके)** सुख करने में **(अधि)** सर्वोपरि **(आसीत्)** विराजमान हुआ है **(पादगृह्य)** हे पैरों को ग्रहण करने योग्य! **(यत्)** जो आपके **(पितरम्)** उत्पन्न करने वाले को **(प्र, अक्षिणाः)** नाश करता है॥१२॥

भावार्थः-हे सन्तानो! जो पुरुष वा स्त्रियाँ आप लोगों के पितरों का नाश करके माताओं को विधवा करें और आप लोगों का भी नाश करें, उनका विश्वास आप लोग न करिये॥१२॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अव॑र्त्या॒ शुन॑ आ॒न्त्राणि॑ पेचे॒ न दे॒वेषु॑ विविदे मर्डि॒तार॑म्।

अप॑श्यं जा॒याममही॑यमाना॒मधा॑ मे श्ये॒नो मध्वा ज॑भार॥ १३॥ २६॥ ५॥

अव॑र्त्या। शुन॑:। आ॒न्त्राणि॑। पे॒चे॒। न। दे॒वेषु॑। वि॒वि॒दे॒। म॒र्डि॒तार॑म्। अप॑श्यम्। जा॒याम्। अम॑हीयमानाम्। अध॑। मे॒। श्ये॒नः। मधु॑। आ। ज॒भा॒र॒॥ १३॥

पदार्थः-(**अवर्त्या**) अवर्त्तनीयानि (**शुनः**) कुक्कुरस्येव (**आन्त्राणि**) उदरस्था: स्थूला नाडी (**पेचे**) पचति (**न**) (**देवेषु**) विद्वत्सु (**विविदे**) लभते (**मर्डितारम्**) सुखकरम् (**अपश्यम्**) पश्येयम् (**जायाम्**) स्त्रियम् (**अमहीयमानाम्**) असत्कृताम् (**अधा**) **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**मे**) मम (**श्येनः**) श्येन इव शीघ्रगन्ता (**मधु**) मधुरं विज्ञानम् (**आ**) सर्वतः (**जभार**) हरति॥ १३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यो मेऽमहीयमानां जायां श्येन इवाऽऽजभाराऽधा शुनोऽवर्त्याऽऽन्त्राणीव शरीरं पेचे तस्मान्मर्डितारं त्वामहमपश्यं स यथा देवेषु मधु न विविदे तथा तं भृशं दण्डय॥ १३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! ये पुरुषा याः स्त्रियश्च व्यभिचारं कुर्युस्तांस्तीव्रं दण्डं नीत्वा विनाशय॥ १३॥

अत्रेन्द्रमेघराजविद्वत्कृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्येण दयानन्दसरस्वतीस्वामिना विरचिते संस्कृतार्य्यभाषाभ्यां विभूषिते सुप्रमाणयुक्त ऋग्वेदभाष्ये तृतीयाष्टके पञ्चमोऽध्यायोऽष्टादशं सूक्तं षड्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे राजन्! जो (**मे**) मेरी (**अमहीयमानाम्**) नहीं सत्कार की गई (**जायाम्**) स्त्री को (**श्येनः**) वाज पक्षी के सदृश शीघ्र चलने वाला सब ओर से (**आ, जभार**) हरता है (**अधा**) इसके अनन्तर (**शुनः**) कुत्ते की (**अवर्त्या**) नहीं वर्त्तने योग्य (**आन्त्राणि**) और उठे हैं हाड़ जिनसे उन स्थूल नाड़ियों के सदृश शरीर को (**पेचे**) पचाता है, इससे (**मर्डितारम्**) सुख करने वाले आपका मैं (**अपश्यम्**) दर्शन करूं। वह जैसे (**देवेषु**) विद्वानों में (**मधु**) मधुर विज्ञान को (**न**) नहीं (**विविदे**) प्राप्त होता है, वैसे उसको निरन्तर दण्ड दीजिये॥ १३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जो पुरुष और स्त्रियाँ व्यभिचार करें, उनको तीव्र दण्ड देकर नाश करो॥ १३॥

इस सूक्त में इन्द्र मेघ राजा और विद्वान् के कृत्य वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तृतीय अष्टक में पांचवां अध्याय अठारहवां सूक्त और छब्बीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ तृतीयाष्टके षष्ठाध्यायारम्भः॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथैकादशर्चस्यैकोनविंशतितमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ विराट् त्रिष्टुप्। २, ९ निचृत् त्रिष्टुप्। ३, ५, ८ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४, ६ भुरिक् पङ्क्तिः। ७, १० पङ्क्तिः। ११ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथेन्द्रपदवाच्यराजगुणानाह॥

अब तृतीयाष्टक में छठे अध्याय का और [ग्यारह ऋचा वाले] उन्नीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में इन्द्रपदवाच्य राजगुणों का उपदेश करते हैं॥

ए॒वा त्वामि॑न्द्र वज्रि॒न्नत्र॒ विश्वे॑ दे॒वासः॑ सु॒हवा॑स॒ ऊमाः॑।

म॒हामु॒भे रोद॑सी वृ॒द्धमृ॒ष्वं निरेक॒मिद् वृ॑णते वृ॒त्रह॑त्ये॥१॥

ए॒व। त्वाम्। इ॒न्द्र॒। व॒ज्रि॒न्। अत्र॑। विश्वे॑। दे॒वासः॑। सु॒ऽहवा॑सः। ऊमाः॑। म॒हाम्। उ॒भे इति॑। रोद॑सी॒ इति॑। वृ॒द्धम्। ऋ॒ष्वम्। निः। एक॑म्। इत्। वृ॒ण॒ते॒। वृ॒त्र॒ऽह॑त्ये॥१॥

पदार्थः-(**एवा**) अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**त्वाम्**) त्वाम् (**इन्द्र**) शत्रूणां विदारक (**वज्रिन्**) प्रशंसितशस्त्रास्त्र (**अत्र**) (**विश्वे**) सर्वे (**देवासः**) विद्वांसः (**सुहवासः**) ये सुष्ठ्वाह्वयन्ति ते (**ऊमाः**) रक्षणादिकर्त्तारः (**महाम्**) महान्तम् (**उभे**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**वृद्धम्**) सर्वेभ्यो विस्तीर्णम् (**ऋष्वम्**) श्रेष्ठम् (**निः**) (**एकम्**) अद्वितीयम् (**इत्**) एव (**वृणते**) स्वीकुर्वन्ति (**वृत्रहत्ये**) वृत्रस्य हत्या हननमिव शत्रुहननं यस्मिन्त्सङ्ग्रामे तस्मिन्॥१॥

अन्वयः-हे वज्रिन्निन्द्राऽत्र ये ऊमाः सुहवासो विश्वे देवासो महां वृद्धमृष्वमेकं त्वामेवा वृत्रहत्य उभे रोदसी सूर्य्यमिवेन्निर्वृणते तानेव त्वं सेवस्व॥१॥

भावार्तः-ये विद्वांसोऽत्युत्तमगुणवन्तं राजानं स्वीकुर्य्युस्त एव पूर्णसुखा भवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे (**वज्रिन्**) प्रशंसित शस्त्र और अस्त्र से युक्त (**इन्द्र**) शत्रुओं के विदीर्ण करनेहारे (**अत्र**) इस संसार में जो (**ऊमाः**) रक्षा आदि करने वाले (**सुहवासः**) उत्तम प्रकार पुकारने वाले (**विश्वे**) सब (**देवासः**) विद्वान् लोग (**महाम्**) बड़े (**वृद्धम्**) सब से विस्तीर्ण (**ऋष्वम्**) श्रेष्ठ (**एकम्**) अद्वितीय (**त्वाम्**) (**त्वाम्**) आपको (**एवा**) ही (**वृत्रहत्ये**) मेघ के नाश के सदृश शत्रु का नाश जिस संग्राम में उसमें (**उभे**) दोनों (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी सूर्य्य के सदृश (**इत्**) ही (**निः, वृणते**) स्वीकार करते हैं, उन्हीं की आप सेवा करिये॥१॥

भावार्थः-जो विद्वान् लोग अतिश्रेष्ठ गुण वाले राजा को स्वीकार करें, वे ही पूर्ण सुख वाले होते हैं॥१॥

अथ मेघदृष्टान्तेन राजगुणानाह॥

अब मेघ दृष्टान्त से राजगुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अवा॑सृजन्त॒ जिव्र॑यो॒ न दे॒वा भुव॑: स॒म्राळि॑न्द्र स॒त्ययो॑निः।

अह॒न्नहिं॑ परि॒शया॑न॒मर्णः॒ प्र व॑र्त॒नीर॑रदो वि॒श्वधे॑नाः॥२॥

अव॑। अ॒सृ॒ज॒न्त॒। जिव्र॑यः। न। दे॒वाः। भुव॑ः। स॒म्ऽराट्। इ॒न्द्र॒। स॒त्यऽयो॑निः। अह॑न्। अहि॑म्। प॒रि॒ऽशया॑नम्। अर्णः॑। प्र। व॒र्त॒नीः। अ॒र॒दः॒। वि॒श्वऽधे॑नाः॥२॥

पदार्थः-(**अव**) (**असृजन्त**) सृजन्ते (**जिव्रयः**) दृढजीवनाः (**न**) इव (**देवाः**) चन्द्रादयो दिव्याः पदार्था इव विद्वांसः (**भुवः**) पृथिव्या मध्ये (**सम्राट्**) यः सम्यग्राजते चक्रवर्त्ती (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्ययुक्त (**सत्ययोनिः**) सत्यमविनाशि योनिः कारणङ्गृहं वा यस्य (**अहन्**) हन्ति (**अहिम्**) मेघम् (**परिशयानम्**) योऽन्तरिक्षे सर्वतः शेते तम् (**अर्णः**) उदकम् (**प्र**) (**वर्त्तनीः**) मार्गान् (**अरदः**) विलिखति (**विश्वधेनाः**) विश्वाः सर्वा धेना वाचो येषान्ते॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! भवान् भुवः सम्राट् सत्ययोनिर्यथा सूर्य्यः परिशयानमहिमहन्नर्णो वर्त्तनीः प्रारदस्तथैव शत्रून् हत्वा विराजस्व ये विश्वधेना जिव्रयो न देवास्त्वामवाऽसृजन्त तांस्त्वं सङ्गच्छस्व॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे राजंस्त्वं सत्याचारः सन्नाप्तसहायेन चक्रवर्त्ती सार्वभौमो भव यथा सूर्य्यो मेघं हत्वा जगत् सुखयति तथा दस्यून् विनाश्य प्रजा आनन्दय॥२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्ययुक्त! आप (**भुवः**) पृथिवी के मध्य में (**सम्राट्**) उत्तम प्रकार प्रकाशमान चक्रवर्त्ती (**सत्ययोनिः**) नहीं नाश होने वाला कारण वा स्थान जिसका ऐसा सूर्य्य जैसे (**परिशयानम्**) अन्तरिक्ष में सब ओर से शयन करने वाले (**अहिम्**) मेघ का (**अहन्**) नाश करता है (**अर्णः**) जल (**वर्त्तनीः**) मार्गों को (**प्र, अरदः**) अर्थात् करोदता है, वैसे ही शत्रुओं का नाश करके विराजमान हूजिये जो (**विश्वधेनाः**) समस्त वाणियों वाले (**जिव्रयः**) दृढजीवनों के (**न**) समान (**देवाः**) चन्द्र आदि दिव्य पदार्थों के सदृश विद्वान् जन आपको (**अव, असृजन्त**) उत्पन्न करते हैं, उनका तुम संग करो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमावाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे राजन्! आप सत्य आचरण करने वाले हुए यथार्थ वक्ताओं के सहाय से चक्रवर्त्ती सार्वभौम हूजिये और जैसे सूर्य्य मेघ का नाश करके संसार को सुख देता है, वैसे चोर डाकुओं का नाश करके प्रजाओं को आनन्द दीजिये॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अतृ॑ण्णुवन्तं॒ विय॑तमबु॒ध्यमबु॑ध्यमानं सुषु॒पा॒णमि॑न्द्र।

स॒प्त प्रति॑ प्र॒वत॑ आ॒शया॑न॒महिं॒ वज्रे॑ण॒ वि रि॑णा अप॒र्वन्॥ ३॥

अतृ॑ण्णुवन्तम्। विऽय॑तम्। अ॒बु॒ध्यम्। अबु॑ध्यमानम्। सु॒सु॒पा॒नम्। इ॒न्द्र॒। स॒प्त। प्रति॑। प्र॒ऽवतः॑। आ॒ऽशया॑नम्। अहि॑म्। वज्रे॑ण। वि। रि॒णाः॒। अ॒प॒र्वन्॥ ३॥

पदार्थः-(**अतृण्णुवन्तम्**) भोगेष्वतृप्तम् (**वियतम्**) अजितेन्द्रियम् (**अबुध्यम्**) बुद्धिरहितम् (**अबुध्यमानम्**) उपदेशेनाऽप्यजानन्तम् (**सुषुपाणम्**) शोभनम्पानं यस्य तम् (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त (**सप्त**) (**प्रति**) (**प्रवतः**) अधोमार्गान् (**आशयानम्**) (**अहिम्**) मेघम् (**वज्रेण**) (**वि**) (**रिणाः**) हिंस्याः (**अपर्वन्**) अपर्वणि पर्वरहिते समये॥ ३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं यथा सूर्य्यो वज्रेणाऽऽशयानमहिं हत्वा सप्त प्रवतो गमयति तथैवाऽपर्वन्नतृण्णुवन्तं सुषुपाणं वियतमबुध्यमबुध्यमानमधआस्मिकञ्जनं दण्डेन प्रति वि रिणाः॥ ३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यः किरणैर्मेघञ्छिन्नङ्कृत्वा भूमौ निपात्य विविधेषु मार्गेषु वाहयति तथैव विद्ययाऽविद्यां हत्वा दण्डेनाधार्मिकान् कारगृहे निपात्य बहुशाखां राजनीतिं सर्वत्र प्रचालयेत्॥ ३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्ययुक्त! आप जैसे सूर्य (**वज्रेण**) वज्र से (**आशयानम्**) सब ओर से सोते हुए (**अहिम्**) मेघ का नाश करके (**सप्त**) सात (**प्रवतः**) नीच के मार्गों को प्राप्त कराता है, वैसे ही (**अपर्वन्**) पर्व से रहित समय में (**अतृण्णुवन्तम्**) भोगों में नहीं तृप्त (**सुषुपाणम्**) उत्तम पानयुक्त (**वियतम्**) नहीं जितेन्द्रिय (**अबुध्यम्**) बुद्धि से रहित (**अबुध्यमानम्**) उपदेश से भी नहीं जानते हुए अधार्मिक जन की दण्ड से (**प्रति, वि, रिणाः**) विशेष हिंसा करें॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य किरणों से मेघ को काट के और पृथिवी पर गिरा के नाना प्रकार के मार्गों में बहाता है, वैसे ही विद्या से अविद्या का नाश करके दण्ड से अधार्मिमक पुरुषों को कारगृह अर्थात् जेलखाने में छोड़ के बहुत शाखायुक्त नीति का सर्वत्र प्रचार करे॥ ३॥

अथ मेघदृष्टान्तेन राजसेनाविषयमाह॥

अब मेघदृष्टान्त से राजसेनाविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अक्षो॑दयच्छव॑सा॒ क्षाम॑ बु॒ध्नं वार्ण॒ वात॒स्तवि॑षीभि॒रिन्द्रः॑।

दृ॒ळ्हान्यौ॑भ्नादु॒शमा॑नः॒ ओजोऽवा॑भिनत्क॒कुभः॒ पर्व॑तानाम्॥ ४॥

अक्षो॑दयत्। शव॑सा। क्षाम॑। बु॒ध्नम्। वाः॑। न। वातः॑। तवि॑षीभिः। इन्द्रः॑। दृ॒ळ्हानि॑। औ॒भ्ना॒त्। उ॒शमा॑नः। ओजः॑। अव॑। अ॒भि॒न॒त्। क॒कुभः॑। पर्व॑तानाम्॥ ४॥

पदार्थः-(**अक्षोदयत्**) सञ्चूर्णयति (**शवसा**) बलेन (**क्षाम**) क्षान्तम् (**बुध्नम्**) अन्तरिक्षम् (**वाः**) उदकम् (**न**) इव (**वातः**) वायुः (**तविषीभिः**) बलयुक्ताभिस्सेनाभिः (**इन्द्रः**) दुष्टानां विदारकः (**दृळ्हानि**) पुष्टानि (**औभ्नात्**) मृद्नाति (**उशमानः**) कामयमानः (**ओजः**) पराक्रमम् (**अव**) (**अभिनत्**) भिनत्ति (**ककुभः**) दिशाः (**पर्वतानाम्**) मेघानाम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्तविषीभिस्सहेन्द्रश्शवसा वातः क्षाम बुध्नं वार्ण दृळ्हानि शत्रुसैन्यान्यक्षोदयदोज उशमान औभ्नात् पर्वतानां शिखराणीव ककुभः शत्रूनवाभिनत् तमेव स्वकीयं राजानङ्कुरुत॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा वायुरग्निना सूक्ष्मीकृतजलमन्तरिक्षन्नीत्वा वर्षयित्वा जगदानन्दयति तथैव ससामग्रीविद्यासेनो राजा दुष्टान् सूक्ष्मीकृत्य दण्डोपदेशाभ्यां दुष्टान् भित्त्वा सज्जनान् सम्पाद्य प्रजाः सततं सुखयेत्॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**तविषीभिः**) बल से युक्त सेनाओं के साथ (**इन्द्रः**) दुष्ट पुरुषों का नाश करने वाला (**शवसा**) बल से (**वातः**) वायु (**क्षाम**) सहनयुक्त (**बुध्नम्**) अन्तरिक्ष और (**वाः**) उदक को जैसे (**न**) वैसे (**दृळ्हानि**) पुष्ट शत्रुसैन्य-दलों को (**अक्षोदयत्**) सञ्चूर्णित करता है तथा (**ओजः**) पराक्रम की (**उशमानः**) कामना करता हुआ (**औभ्नात्**) मृदुता करता है (**पर्वतानाम्**) मेघों के शिखरों के सदृश (**ककुभः**) दिशाओं और शत्रुओं को (**अव, अभिनत्**) तोड़ता है, उसीको अपना राजा करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे वायु अग्नि से सूक्ष्म किये हुए जल को अन्तरिक्ष में पहुँचा और वर्षा कर संसार को आनन्द देता है, वैसे ही सामग्री, विद्या और सेना के सहित राजा दुष्टों को न्यून करके दण्ड और उपदेश से दुष्टों का नाश कर और सज्जनों को सिद्ध करके प्रजाओं को निरन्तर सुख दीजिये॥४॥

अथ सेनापतिगुणानाह॥

अब सेनापति के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभि प्र दद्रुर्जनयो न गर्भं रथाइव प्र ययुः साकमद्रयः।

अतर्पयो विसृत उब्ज ऊर्मीन्त्वं वृताँ अरिणा इन्द्र सिन्धून्॥५॥ १॥

अभि। प्र। दद्रुः। जनयः। न। गर्भम्। रथाःऽइव। प्र। ययुः। साकम्। अद्रयः। अतर्पयः। विऽसृतः। उब्जः। ऊर्मीन्। त्वम्। वृतान्। अरिणाः। इन्द्र। सिन्धून्॥५॥

पदार्थः-(**अभि**) आभिमुख्ये (**प्र**) (**दद्रुः**) गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति (**जनयः**) जनित्र्यो भार्य्याः (**न**) इव (**गर्भम्**) (**रथाइव**) (**प्र**) (**ययुः**) प्रयान्ति (**साकम्**) सह (**अद्रयः**) मेघाः (**अतर्पयः**) तर्पय (**विसृतः**) ये विशेषेण सरन्ति तान् (**उब्जः**) हन्याः (**उर्म्मीन्**) सतरङ्गान् (**त्वम्**) (**वृतान्**) स्वीकृतान् (**अरिणाः**) हिनस्ति (**इन्द्र**) शत्रुविदारक (**सिन्धून्**) नदीः॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! येऽद्रयो जनयो न गर्भम्प्राभिदद्रू रथा इव साकं प्रययुर्यथा तान् विसृत ऊर्म्मीन् सिन्धून्त्सूर्य्य उब्जोऽरिणास्तथा त्वं वृतानतर्पयस्तव भृत्या गच्छन्तु भार्य्या गर्भन्धरतु॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यस्य राज्ञो मेघा इवोच्छ्रिता रथा इव सह गामिन्यस्सेना गच्छन्ति तस्य सूर्य्यस्येव विजयो भवति॥५॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** शत्रुओं के नाश करने वाले सेनापति! जो **(अद्रयः)** मेघ **(जनयः)** स्त्रियों के **(न)** तुल्य **(गर्भम्)** गर्भ को **(प्र, अभि, दद्रुः)** सब ओर से प्राप्त होते हैं **(रथाइव)** वाहनों के सदृश **(साकम्)** साथ **(प्र, ययुः)** शीघ्र जाते हैं और जैसे उन **(विसृतः)** जो विशेष करके फैलती **(ऊर्म्मीन्)** उन तरङ्गों के सहित **(सिन्धून्)** नदियों का सूर्य्य **(उब्जः)** नाश करे वा **(अरिणाः)** नाश करता है, वैसे **(त्वम्)** आप **(वृतान्)** स्वीकार किये हुओं को **(अतर्पयः)** तृप्त करो और आपके भृत्य जावें और स्त्री गर्भ को धारण करें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जिस राजा की मेघ के सदृश ऊंची और वाहनों के सदृश साथ चलने वाली सेनायें चलती हैं, उसका सूर्य्य के सदृश विजय होता है॥५॥

पुना राजगुणानाह॥

फिर राजगुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं म॒हीम॒वनिं॑ वि॒श्वधे॑नां तु॒र्वीत॑ये व॒य्या॑य॒ क्षर॑न्तीम्।

अर॑मयो॒ नम॒सैज॒दर्णः॑ सुत॒रणाँ॑ अकृणोरिन्द्र॒ सिन्धू॑न्॥६॥

त्वम्। म॒हीम्। अ॒वनि॑म्। वि॒श्वऽधे॑नाम्। तु॒र्वीत॑ये। व॒य्या॑य। क्षर॑न्तीम्। अर॑मयः। नम॑सा। एज॑त्। अर्णः॑। सु॒ऽत॒रणा॑न्। अ॒कृ॒णोः॒। इ॒न्द्र॒। सिन्धू॑न्॥६॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(महीम्)** पृथिवीम् **(अवनिम्)** रक्षिकाम् **(विश्वधेनाम्)** समग्रवाचम् **(तुर्वीतये)** शत्रूणां हिंसकाय **(वय्याय)** प्राप्तव्याय सुखाय **(क्षरन्तीम्)** प्रापयन्तीम् **(अरमयः)** रमय **(नमसा)** **(एजत्)** कम्पते **(अर्णः)** उदकम् **(सुतरणान्)** सुखं तरणं येषान्तान् **(अकृणोः)** कुर्याः **(इन्द्र)** राजन्! **(सिन्धून्)** नदान्॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं तुर्वीतये वय्याय विश्वधेनां क्षरन्तीमवनिम्महीम्प्राप्याऽस्मान्नमसाऽरमयो यत्राऽर्णं एजत् तान् सिन्धून्त्सुतरणानकृणोः॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! भवान् यदि राज्यम्प्राप्य स्वयमेवाऽऽनन्द्याऽस्मान्नाऽऽनन्दयेत्तर्हि तवाऽऽनन्दः क्षिपन्नश्येद्भवान् सर्वेषां सुखाय नदीनदतडागसमुद्रादीनान्तरणाय नौकादीन्निर्माय धनाढ्यान् सततं सम्पादयतु॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** राजन्! **(त्वम्)** आप **(तुर्वीतये)** शत्रुओं के नाश करने वाले के और **(वय्याय)**

प्राप्त होने योग्य सुख के लिये **(विश्वधेनाम्)** सम्पूर्ण वाणी जिसके लिये उस **(क्षरन्तीम्)** प्राप्त कराती हुई **(अवनिम्)** रक्षा करने वाली **(महीम्)** पृथिवी को प्राप्त होकर हम लोगों को **(नमसा)** अन्न आदि से **(अरमयः)** रमाओ और जिनमें **(अर्णः)** जल **(एजत्)** कम्पता है, उन **(सिन्धून्)** नदों को **(सुतरणान्)** सुखपूर्वक तरना जिनका ऐसे **(अकृणोः)** करो॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! आप जो राज्य को प्राप्त हो, आप ही आनन्दित हो हम लोगों को नहीं आनन्द देवें तो आपका आनन्द शीघ्र नष्ट हो और आप सब लोगों के सुख के लिये नदी, नद, तड़ाग और समुद्र आदिकों के पार उतरने के लिये नौका आदि बना के धनाढ्य निरन्तर करिये॥६॥

अथ प्रजार्थ राजोपदेशविषयमाह॥

अब प्रजाओं के निमित्त राज-उपदेश को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्राग्रुवो नभन्वो३ न वक्वा ध्वस्रा अपिन्वद्युवतीर्ऋतज्ञाः।
धन्वान्यज्राँ अपृणक् तृषाणाँ अधोगिन्द्रः स्तर्यो३ दंसुपत्नीः॥७॥

प्र। अग्रुवः। नभन्वः। न। वक्वाः। ध्वस्राः। अपिन्वत्। युवतीः। ऋतऽज्ञाः। धन्वानि। अज्रान्। अपृणक्। तृषाणान्। अधोक्। इन्द्रः। स्तर्यः। दम्ऽसुपत्नीः॥७॥

पदार्थः-**(प्र) (अग्रुवः)** या अग्रङ्गच्छन्ति ता नद्यः। **अग्रुव इति नदीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१३) **(नभन्वः)** अरीणां हिंसका वीराः **(न) (वक्वाः)** वक्ताः **(ध्वस्राः)** ध्वंसिकाः **(अपिन्वत्)** सेवेत सिञ्चेत वा **(युवतीः)** प्राप्तयौवनाः स्त्रियः **(ऋतज्ञाः)** या ऋतज्ञानन्ति ताः **(धन्वानि)** स्थलप्रदेशान् **(अज्रान्)** येऽजन्ति नित्यङ्गच्छन्ति तान् **(अपृणत्)** तर्पयेत् **(तृषाणान्)** पिपासितान् **(अधोक्)** प्रायात् **(इन्द्रः) (स्तर्यः)** आच्छादिकाः **(दंसुपत्नीः)** दंसूनां कर्मकर्त्तॄणाम्पत्न्यः॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रो वक्वा ध्वस्रा नभन्वोऽग्रुवो न ऋतज्ञा युवतीः प्रापिन्वद् धन्वान्यज्रान् तृषाणानपृणग् याः स्तर्य्यो दंसुपत्नीः स्युस्ता नाधोक् स एव युष्माकं राजा भवतु॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यस्य राज्ञो नदीवत् शत्रुहिंसिका अन्नपानादितृप्ताः स्वविवराच्छादिकाः पतिव्रताः स्त्रिय इव राजभक्ताः सेनाः स्युस्स एव विजयम्प्राप्तुमर्हेत्॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(इन्द्रः)** राजा **(वक्वाः)** टेढ़ी **(ध्वस्राः)** विध्वंस करने वाली सेनाओं को और **(नभन्वः)** शत्रुओं के नाश करनेवाले वीर पुरुष जैसे **(अग्रुवः)** आगे चलनेवाली नदियों को **(न)** वैसे **(ऋतज्ञाः)** सत्य को जानने वाली **(युवतीः)** युवती स्त्रियों को **(प्र, अपिन्वत्)** अच्छे प्रकार सेवे वा सींचे **(धन्वानि)** और स्थलप्रदेशों को अर्थात् जहाँ-तहाँ मार्गस्थानों को **(अज्रान्)** तथा नित्य चलनेवाले **(तृषाणान्)** पियासे मनुष्यादि प्राणियों को **(अपृणक्)** तृप्त करे वा जो **(स्तर्य्यः)** आच्छादन करनेवाली **(दंसुपत्नीः)** कर्म्म करनेवालों की स्त्रियाँ हों, उनके समान **(अधोक्)** पूर्ण करे अर्थात् उनके समान परिपूर्ण सेना रक्खे, वही आप लोगों का राजा होवे॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जिस राजा की नदी के सदृश और शत्रुओं के नाश करनेवाली, अन्न और पान आदि से तृप्त और अपने विवर के ढांपने वाली पतिव्रता स्त्रियों के सदृश राजभक्त सेना होवे, वही विजय प्राप्त होने योग्य है॥७॥

पुना राज्यविषयमाह॥

फिर राज्यविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पूर्वीरुषसः शरदश्च गूर्ता वृत्रं जघन्वाँ असृजद्वि सिन्धून्।

परिष्ठिता अतृणद्बद्बधानाः सीरा इन्द्रः स्रवितवे पृथिव्या॥८॥

पूर्वीः। उषसः। शरदः। च। गूर्ताः। वृत्रम्। जघन्वान्। असृजत्। वि। सिन्धून्। परिऽस्थिताः। अतृणत्। बद्बधानाः। सीराः। इन्द्रः। स्रवितवे। पृथिव्या॥८॥

पदार्थः-(**पूर्वीः**) पूर्वतनीः (**उषसः**) प्रभातवेलाः (**शरदः**) शरदृतून् (**च**) हेमन्तादीन् (**गूर्त्ताः**) गच्छन्त्यो हिंसिकाः (**वृत्रम्**) मेघम् (**जघन्वान्**) हतवान् (**असृजत्**) सृजति (**वि**) विविधान् (**सिन्धून्**) नद्यादीन् (**परिष्ठिताः**) परितः सर्वतः स्थिताः (**अतृणत्**) हिनस्ति (**बद्धधानाः**) वधङ्कुर्वाणाः (**सीराः**) याः सरन्ति ता नद्यः। **सीरा इति नदीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१३) (**इन्द्रः**) सूर्य्यः (**स्रवितवे**) स्रवितुं चलितुम् (**पृथिव्या**) पृथिव्या सह॥८॥

अन्वयः-हे राजन्! यथेन्द्रः पूर्वीर्गूर्त्ता उषसो वृत्रं शरदश्च जघन्वान् सन् सिन्धून् व्यसृजत् परिष्ठिता बद्धधानाः सीराः स्रवितवे पृथिव्या सहाऽतृणत्तथैव नीतिं सेनां सृष्ट्वा विजयं सृज युद्धाय चलन्त्या सुशिक्षितया सेनया शत्रून् हिन्धि॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा प्रातःसमयवच्छुभान्नीतिं नद्योघवत् सेनां निर्मिमीते स एव पृथिवीराज्यमर्हति॥८॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे (**इन्द्रः**) सूर्य्य (**पूर्वीः**) पुरातन (**गूर्त्ताः**) चलती हुई हिंसा करने वाली (**उषसः**) प्रभातवेला (**वृत्रम्**) मेघ को (**शरदः**) शरद् ऋतुओं (**च**) और हेमन्तादि ऋतुओं को (**जघन्वान्**) नष्ट किये हुए (**सिन्धून्**) नद्यादिकों को (**वि**) अनेक प्रकार (**असृजत्**) उत्पन्न करता है (**परिष्ठिताः**) तथा सब ओर से स्थित (**बद्धधानाः**) बदबदातीं तटों का नाश करती हुईं (**सीराः**) जो बहने वाली नदियाँ उनको (**स्रवितवे**) चलने को (**पृथिव्या**) पृथिवी के साथ (**अतृणत्**) नाश करता है, वैसे ही नीति और सेना को उत्पन्न करके विजय सिद्ध करो और युद्ध के लिये चलती हुई उत्तम प्रकार शिक्षित सेना से शत्रुओं का नाश करो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा प्रातःकाल के सदृश उत्तम नीति और नदी के समूह के सदृश सेना को निर्मित करता है, वही पृथिवी के राज्य के योग्य है॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

व॒म्रीभि॑ः पु॒त्रम॒ग्रुवो॑ अदा॒नन्नि॒वेश॑नाद्धरिव॒ आ ज॑भर्थ।
व्य१॒॑न्धो अ॑ख्य॒दहि॑माददा॒नो निर्भू॑दुख॒च्छित्सम॑रन्त॒ पर्व॑॥ ९॥

व॒म्रीभि॑ः। पु॒त्रम्। अ॒ग्रुव॑ः। अ॒दा॒नम्। नि॒ऽवेश॑नात्। ह॒रि॒ऽव॒ः। आ। ज॒भ॒र्थ॒। वि। अ॒न्धः। अ॒ख्य॒त्। अहि॑म्। आ॒ऽद॒दा॒नः। निः। भू॒त्। उ॒ख॒ऽछित्। सम्। अ॒र॒न्त॒। पर्व॑॥ ९॥

पदार्थः-(**वम्रीभिः**) उद्गीर्णाभिः (**पुत्रम्**) (**अग्रुवः**) नद्यः (**अदानम्**) दानस्याऽकर्त्तारम् (**निवेशनात्**) स्वस्थानात् (**हरिवः**) प्रशस्ताऽश्वयुक्त (**आ**) (**जभर्थ**) हरसि (**वि**) (**अन्धः**) अन्धकारकृत् (**अख्यत्**) ख्याति (**अहिम्**) मेघम् (**आददानः**) गृह्णन् (**निः**) (**भूत्**) भवति (**उखच्छित्**) य उखङ्गमनच्छिनत्ति सः (**सम्**) (**अरन्त**) रमते (**पर्व**) पालकम्॥९॥

अन्वयः-हे हरिवो राजन्! यथा निवेशनाद् वम्रीभिरग्रुवस्तटादिकं हरन्ति तथैवाऽदानं पुत्रमाजभर्थ। यथान्धोऽहिमाददानो व्यख्यदुखच्छिन्निर्भूत् पर्व समरन्त तथैवाऽदाता गतिं लभते॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्स्वस्य पुत्रोऽपि कुलक्षणश्चेन्निरधिकारी कर्त्तव्यो यथा वर्षासु नद्यो वर्धन्ते तथैव प्रजा वर्द्धनीयाः॥९॥

पदार्थः-हे (**हरिवः**) प्रशंसित घोड़ों से युक्त राजन्! जैसे (**निवेशनात्**) अपने स्थान से (**वम्रीभिः**) उगली हुई पहाड़ियों से (**अग्रुवः**) नदियाँ तट आदि का हरण करती हैं, वैसे ही (**अदानम्**) दान नहीं करने वाले (**पुत्रम्**) पुत्र को (**आ, जभर्थ**) हरते हो और जैसे (**अन्धः**) अन्धकार करने वाले (**अहिम्**) मेघ को (**आददानः**) ग्रहण करता हुआ (**वि, अख्यत्**) विख्यात करता है और (**उखच्छित्**) गमन का काटने अर्थात् मार्ग छिन्न-भिन्न करने वाला (**निः, भूत्**) निरन्तर होता (**पर्व**) और पालने वाले को (**सम् अरन्त**) अच्छे प्रकार रमाता है, वैसे ही नहीं दान करने वाला गति पाता है॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! अपना पुत्र भी बुरे लक्षणों वाला हो तो नहीं अधिकार देने योग्य और वर्षाकालों में नदियाँ बढ़ती हैं, वैसे ही प्रजाओं की वृद्धि करनी चाहिये॥९॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब विद्वान् के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र ते॒ पूर्वा॑णि॒ कर॑णानि विप्राविद्वाँ आ॑ह वि॒दुषे॒ करां॑सि।
यथा॑यथा॒ वृष्ण्या॑नि॒ स्वगू॒र्तापां॑सि राज॒न्नर्याविवे॑षीः॥ १०॥

प्र। ते॒। पूर्वा॑णि। कर॑णानि। वि॒प्र॒। आ॒ऽवि॒द्वान्। आ॒ह॒। वि॒दुषे॑। करां॑सि। यथा॑ऽयथा। वृष्ण्या॑नि। स्वऽगू॑र्ता। अपां॑सि। रा॒ज॒न्। नर्या॑। अवि॑वेषीः॥ १०॥

पदार्थः-(**प्र**) (**ते**) तव (**पूर्वाणि**) सनातनानि (**करणानि**) क्रियन्ते यैस्तानि (**विप्र**) मेधाविन् (**आविद्वान्**) यः समन्तात् सर्वं वेत्ति (**आह**) ब्रूते (**विदुषे**) (**करांसि**) करणीयानि कर्म्माणि (**यथायथा**) (**वृष्ण्यानि**) बलकराणि (**स्वगूर्त्ता**) स्वेन प्राप्तानि (**अपांसि**) कर्म्माणि (**राजन्**) (**नर्य्या**) नृषु हितानि (**अविवेषीः**) विशेषेण प्राप्नुयाः॥१०॥

अन्वयः-हे विप्र राजन् विदुषे! ते यथायथा पूर्वाणि करणानि करांसि वृष्ण्यानि स्वगूर्त्ता नर्य्याऽपांस्याऽऽविद्वान् प्राह तानि त्वमविवेषीः॥१०॥

भावार्थः-हे विद्वन्! राजँस्त्वं सदाप्तशासने प्रवर्त्तस्व यद्यत्ते त उपदिशेयुस्तथैव कुरुष्व॥१०॥

पदार्थः-हे (**विप्र**) बुद्धिमान् (**राजन्**) राजन्! (**विदुषे**) विद्वान्! (**ते**) आपके लिये (**यथायथा**) जैसे-जैसे (**पूर्वाणि**) अनादि काल से सिद्ध (**करणानि**) जिनसे करें वह कार्य्यसाधन (**करांसि**) और करने योग्य कर्म्म (**वृष्ण्यानि**) बलकारक (**स्वगूर्त्ता**) अपने से प्राप्त (**नर्य्या**) मनुष्यों में हित करने वाले (**अपांसि**) कर्म्मों को (**आविद्वान्**) सब प्रकार से समस्त जानता हुआ (**प्र, आह**) अच्छे कहता है, उनको आप (**अविवेषीः**) विशेष करके प्राप्त हूजिये॥१०॥

भावार्थः-हे विद्वन् राजन्! आप सदा श्रेष्ठ पुरुषों की शिक्षा में प्रवृत्त हूजिये और जो-जो आपके लिये वे उपदेश देवें, वैसे ही करिये॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो३ न पीपेः।

अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः॥११॥२॥

नु। स्तुतः। इन्द्र। नु। गृणानः। इषम्। जरित्रे। नद्यः। न। पीपेरिति पीपेः। अकारि। ते। हरिऽवः। ब्रह्म। नव्यम्। धिया। स्याम। रथ्यः। सदाऽसाः॥११॥

पदार्थः-(**नु**) सद्यः (**स्तुतः**) प्राप्तप्रशंसः (**इन्द्र**) प्रशंसनीयकर्म्मन् (**नु**) (**गृणानः**) सत्यं स्तुवन् (**इषम्**) अन्नं विज्ञानं वा (**जरित्रे**) स्तावकाय (**नद्यः**) सरितः (**न**) इव (**पीपेः**) वर्धय (**अकारि**) क्रियते (**ते**) तव (**हरिवः**) प्रशस्तपुरुषयुक्त (**ब्रह्म**) महद्धनम् (**नव्यम्**) नूतनम् (**धिया**) प्रज्ञया कर्म्मणा वा (**स्याम**) भवेम (**रथ्यः**) रमणीयबहुरथादियुक्ताः (**सदासाः**) ससेवकाः॥११॥

अन्वयः-हे हरिव इन्द्र! येन विदुषा ते नव्यम्ब्रह्माऽकारि तस्मै जरित्रे स्तुतस्संस्त्वन्नद्यो न नु पीपेः। गृणानः सन्निषन्नु देहि एवम्भूतस्य रथ्यः सदासा वयं धियाऽनुकूलाः स्याम॥११॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन्! ये प्रशंसितानि कर्म्माणि कुर्य्युस्तांस्त्वं सततं सत्कुर्य्यास्ते च भवदनुकूलास्सन्तः सर्वे यूयं धर्मार्थकामसाधका भवतेति॥११॥

अथेन्द्रमेघसेनासेनापतिराजप्रजाविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकोनविंशतितमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(हरिवः)** उत्तम पुरुषों से युक्त **(इन्द्र)** प्रशंसा करने योग्य कर्म्म करनेवाले! जिस विद्वान् से **(ते)** आपका **(नव्यम्)** नवीन **(ब्रह्म)** बड़ा धन **(अकारि)** किया जाता है उस **(जरित्रे)** स्तुति करने वाले के लिये **(स्तुतः)** प्रशंसा को प्राप्त हुए आप **(नद्यः)** नदियों के **(न)** सदृश **(नु)** शीघ्र **(पीपेः)** वृद्धि दिलाइये और **(गृणानः)** सत्य की प्रशंसा करते हुए **(इषम्)** अन्न वा विज्ञान को **(नु)** शीघ्र दीजिये, इस प्रकार के हुए सम्बन्ध में **(रथ्यः)** रमण करने योग्य बहुत रथादिकों से युक्त **(सदासाः)** सेवकों के सहित हम लोग **(धिया)** बुद्धि वा कर्म्म से अनुकूल **(स्याम)** होवें॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! जो प्रशंसित कर्म्म करें, उनका आप निरन्तर सत्कार करिये और वे आपके अनुकूल हुए और तुम लोग सब धर्म्म, अर्थ और काम के साधक हूजिये॥११॥

इस सूक्त में इन्द्र, मेघ, सेना, सेनापति, राजा, प्रजा और विद्वान् के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह उन्नीसवां सूक्त और द्वितीय वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्य विंशतितमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ३, ६ निचृत्त्रिष्टुप्। ४, ५ विराट्त्रिष्टुप्। ८, १० त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ पङ्क्तिः। ७, ९ स्वराट् पङ्क्तिः। ११ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथेन्द्रपदवाच्यराजगुणानाह॥

अब ग्यारह ऋचावाले बीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में इन्द्रपदवाच्य राजगुणों को कहते हैं॥

आ न इन्द्रो दूरादा न आसादभिष्टिकृदवसे यासदुग्रः।
ओजिष्ठेभिर्नृपतिर्वज्रबाहुः संगे समत्सु तुर्वणिः पृतन्यून्॥ १॥

आ। नः। इन्द्रः। दूरात्। आ। नः। आसात्। अभिष्टिऽकृत्। अवसे। यासत्। उग्रः। ओजिष्ठेभिः। नृऽपतिः। वज्रऽबाहुः। सम्ऽगे। समत्ऽसु। तुर्वणिः। पृतन्यून्॥ १॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**नः**) अस्मान् (**इन्द्रः**) परमैश्वर्य्यवान् राजा (**दूरात्**) (**आ**) (**नः**) अस्माकमस्मभ्यं वा (**आसात्**) समीपात् (**अभिष्टिकृत्**) अभीष्टसुखकारी (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**यासत्**) प्राप्नुयात् (**उग्रः**) तेजस्वी (**ओजिष्ठेभिः**) अतिशयेन बलादिगुणयुक्तैर्नरोत्तमसैन्यैः (**नृपतिः**) नृणां पालकः (**वज्रबाहुः**) वज्रः शस्त्रविशेषो बाहौ यस्य सः (**सङ्गे**) सह (**समत्सु**) सङ्ग्रामेषु (**तुर्वणिः**) शीघ्रकारी (**पृतन्यून्**) आत्मनः पृतनां सेनामिच्छून्॥१॥

अन्वयः-हे राजप्रजाजना! योऽभिष्टिकृद्वज्रबाहुरुग्रो नृपतिस्तुर्वणिरिन्द्र ओजिष्ठेभिस्सह नोऽवसे दूरादासाद्वाऽऽयासत्समत्सु पृतन्यून्नोऽस्मान् सङ्गे आयासत् सोऽस्माभिस्सदैव रक्षणीयः सत्कर्त्तव्यश्च॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! सर्वतोऽभिरक्षितारम्महाबलिष्ठं विद्याबलयुक्तं सभ्यसेनं संग्रामे विजेतारं राजानं स्वीकृत्य सर्वदाऽऽनन्दन्तु॥१॥

पदार्थः-हे राजा और प्रजाजनो! जो (**अभिष्टिकृत्**) अपेक्षित सुख करने वाला (**वज्रबाहुः**) शस्त्र विशेष जिसकी बाहु में विद्यमान (**उग्रः**) जो तेजस्वी (**नृपतिः**) मनुष्यों का पालन करने वाला (**तुर्वणिः**) शीघ्रकारी (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्यवान् राजा (**ओजिष्ठेभिः**) अत्यन्त बल आदि गुणों से युक्त मनुष्यों में उत्तम सेनाजनों के साथ (**नः**) हम लोगों की वा हम लोगों के अर्थ (**अवसे**) रक्षा आदि के लिये (**दूरात्**) दूर और (**आसात्**) समीप से वा (**आ**) सब प्रकार सेना (**यासत्**) प्राप्त होवे और (**समत्सु**) सङ्ग्रामों में (**पृतन्यून्**) अपनी सेना की इच्छा करने वाले (**नः**) हम लोगों को (**सङ्गे**) साथ (**आ**) प्राप्त होवे, वह हम लोगों से सदा ही रक्षा करने और सत्कार करने योग्य है॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! सब प्रकार से रक्षा करने वाले, बड़े बलिष्ठ, विद्या और बलयुक्त श्रेष्ठ सेनाजनों के सहित वर्त्तमान और सङ्ग्राम में जीतनेवाले राजा को स्वीकार करके सब काल में आनन्द करो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ नु इन्द्रो हरिभिर्यात्वच्छार्वाचीनोऽवसे राधसे च।

तिष्ठाति वज्री मघवा विरप्शीमं यज्ञमनु नो वाजसातौ॥ २॥

आ। नः। इन्द्रः। हरिऽभिः। यातु। अच्छ। अर्वाचीनः। अवसे। राधसे। च। तिष्ठाति। वज्री। मघऽवा। विऽरप्शी। इमम्। यज्ञम्। अनु। नः। वाजऽसातौ॥ २॥

पदार्थः-(**आ**) (**नः**) अस्मानस्माकं वा (**इन्द्रः**) परमैश्वर्य्यवान् राजा (**हरिभिः**) प्रशस्तैर्नरैस्सह (**यातु**) आयातु प्राप्नोतु (**अच्छ**) (**अर्वाचीनः**) इदानीन्तनः (**अवसे**) अन्नाद्याय। **अव इत्यन्ननामसु पठितम्।** (निघं०२.७) (**राधसे**) धनाय (**च**) (**तिष्ठाति**) तिष्ठेत् (**वज्री**) शस्त्राऽस्त्रवित् (**मघवा**) न्यायार्जितधनत्वात् पूजनीयः (**विरप्शी**) महान् (**इमम्**) (**यज्ञम्**) प्रजापालनाख्यम् (**अनु**) (**नः**) अस्माकम् (**वाजसातौ**) संग्रामे॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽर्वाचीनो मघवा वज्री विरप्शीन्द्रो हरिभिस्सह नोऽवसे राधसे चाऽच्छाऽऽयात्विमं यज्ञन्नो वाजसातौ चानुतिष्ठाति तमेव राजानं स्वीकुरुत॥ २॥

भावार्थः-यो राजोत्तमैस्सभ्यैः प्रजासुखायाऽन्नधने बहुले कृत्वा संग्रामे विजयी न्यायकारी भवेत् स खलु राजा भवितुमर्हेत्॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अर्वाचीनः**) इस काल में उत्पन्न (**मघवा**) न्याय से इकट्ठे किये हुए धन के होने से आदर करने योग्य (**वज्री**) शस्त्रों और अस्त्रों का जानने वाले (**विरप्शी**) बड़ा (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य वाला राजा (**हरिभिः**) श्रेष्ठ मनुष्यों के साथ (**नः**) हम लोगों को वा हम लोगों के (**अवसे**) अन्न आदि के (**च**) और (**राधसे**) धन के लिये (**अच्छ**) उत्तम प्रकार (**आ, यातु**) प्राप्त हो (**इमम्**) इस (**यज्ञम्**) प्रजापालनरूप यज्ञ को (**नः**) हम लोगों के (**वाजसातौ**) सङ्ग्राम में (**अनु, तिष्ठाति**) अनुष्ठान करे, उसी को राजा मानो॥ २॥

भावार्थः-जो राजा उत्तम सभा के जनों से प्रजा के सुख के लिये अन्न और धन बहुत करके सङ्ग्राम में जीतने वाला न्यायकारी होवे, वही राजा होने को योग्य होवे॥ २॥

अथामात्यगुणानाह॥

अब अमात्य के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमं यज्ञं त्वमस्माकमिन्द्र पुरो दधत्सनिष्यसि क्रतुं नः।

श्वघ्नीव वज्रिन्त्सनये धनानां त्वया वयमर्य आजिं जयेम॥ ३॥

इमम्। यज्ञम्। त्वम्। अस्माकम्। इन्द्र। पुरः। दधत्। सनिष्यसि। क्रतुम्। नः। श्वघ्नीऽइव। वज्रिन्। सनये। धनानाम्। त्वया। वयम्। अर्यः। आजिम्। जयेम॥३॥

पदार्थः-(**इमम्**) वर्त्तमानम् (**यज्ञम्**) राजधर्म्मानुष्ठानाख्यम् (**त्वम्**) (**अस्माकम्**) (**इन्द्र**) पुष्कलधनप्रद सेनापते! (**पुरः**) नगराणि (**दधत्**) धरन्त्सन् (**सनिष्यसि**) सम्भजिष्यसि (**क्रतुम्**) प्रज्ञाम् (**नः**) अस्माकम् (**श्वघ्नीव**) वृकीव (**वज्रिन्**) शस्त्राऽस्त्रवित् (**सनये**) संविभागाय (**धनानाम्**) (**त्वया**) (**वयम्**) (**अर्य्यः**) स्वामी (**आजिम्**) सङ्ग्रामम्। **आजिरिति सङ्ग्रामनामसु पठितम्।** (निघं०२.१७) (**जयेम**)॥३॥

अन्वयः-हे वज्रिन्निन्द्र! यतोऽर्य्यस्त्वमस्माकमिमं यज्ञं पुरश्च दधत् सन्नोऽस्माकं क्रतुं सनिष्यसि तस्मात्त्वया सह वयं धनानां सनये श्वघ्नीवाऽऽजिञ्जयेम॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यत्र राजाऽमात्यानमात्या राजानञ्च हर्षयित्वा सम्भज्य दत्त्वा गृहीत्वा प्रीत्या बलिष्ठाः सन्तो ह्यैश्वर्य्याय यथा वृक्यजां हन्यात्तथा शत्रून् हत्वा विजयेन भूषिता भवन्ति तत्रैव सर्वाणि सुखानि भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे (**वज्रिन्**) शस्त्र और अस्त्र के प्रयोग जानने और (**इन्द्र**) बहुत धन के देने वाले सेनापति! जिससे कि (**अर्य्यः**) स्वामी (**त्वम्**) आप (**अस्माकम्**) हम लोगों के (**इमम्**) इस वर्त्तमान (**यज्ञम्**) राजधर्म के निर्वाहरूप यज्ञ को और (**पुरः**) नगरों को (**दधत्**) धारण करते हुए (**नः**) हम लोगों की (**क्रतुम्**) बुद्धि का (**सनिष्यसि**) सेवन करोगे इससे (**त्वया**) आपके साथ (**वयम्**) हम लोग (**धनानाम्**) धनों के (**सनये**) सम्यक् विभाग करने के लिये (**श्वघ्नीव**) भेड़िनी के सदृश (**आजिम्**) सङ्ग्राम को (**जयेम**) जीतें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जहाँ राजा मन्त्रियों और मन्त्री राजा को प्रसन्न करके और विभाग कर दे और ग्रहण करके प्रीति से बलिष्ठ हुए ही ऐश्वर्य्य के लिये जैसे भेड़िनी बकरी को मारे, वैसे शत्रुओं का नाश करके विजय से भूषित होते हैं, वहीं सम्पूर्ण सुख होते हैं॥३॥

पुना राजगुणानाह॥

फिर राजगुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उशन्नु षु णः सुमना उपाके सोमस्य नु सुषुतस्य स्वधावः।
पा इन्द्र प्रतिभृतस्य मध्वः समन्धसा ममदः पृष्ठ्येन॥४॥

उशन्। ऊँ इति। सु। नः। सुऽमनाः। उपाके। सोमस्य। नु। सुऽसुतस्य। स्वधाऽवः। पाः। इन्द्र। प्रतिऽभृतस्य। मध्वः। सम्। अन्धसा। ममदः। पृष्ठ्येन॥४॥

पदार्थः-(**उशन्**) कामयमान (**उ**) (**सु**) (**नः**) अस्माकम् (**सुमनाः**) प्रसन्नचित्तः (**उपाके**) समीपे (**सोमस्य**) ऐश्वर्य्ययुक्तस्य (**नु**) (**सुषुतस्य**) सुष्ठु विद्याविनयाभ्यां निष्पन्नस्य (**स्वधावः**) अन्नाद्यैश्वर्य्ययुक्त (**पाः**) रक्ष (**इन्द्र**) (**प्रतिभृतस्य**) धृतं धृतं प्रति वर्त्तमानस्य (**मध्वः**) माधुर्य्यादिगुणोपेतस्य (**सम्**) (**अन्धसा**) अन्नाद्येन (**ममदः**) आनन्द (**पृष्ठ्येन**) पृष्ठ्येन पश्चाद्भवेन सुखेन॥४॥

अन्वयः-हे उशन् स्वधाव इन्द्र राजंस्त्वं सुमनाः सन्न उपाके सुषुतस्य सोमस्य प्रतिभृतस्य नु सु पाः। मध्वोऽन्धसा पृष्ठ्येनो सम्ममदः॥४॥

भावार्थः-यो राजा प्रेम्णा भृत्यवर्गमैश्वर्य्याऽन्नाद्येन रक्षति स कामसिद्धिं प्राप्य पुनः सततं मोदते॥४॥

पदार्थः-हे (**उशन्**) कामना करते हुए (**स्वधावः**) अन्न आदि ऐश्वर्य से युक्त (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्यवान् राजन्! आप (**सुमनाः**) प्रसन्न चित्तवाले हुए (**नः**) हम लोगों के (**उपाके**) समीप में (**सुषुतस्य**) उत्तम प्रकार विद्या और विनय से निष्पन्न अर्थात् प्रसिद्ध (**सोमस्य**) ऐश्वर्ययुक्त (**प्रतिभृतस्य**) धारण-धारण किये गये के प्रति वर्त्तमान जन की (**नु**) निश्चय से (**सु, पाः**) अच्छे प्रकार रक्षा कीजिये और (**मध्वः**) माधुर्य्य आदि गुणों से युक्त पदार्थसम्बन्धी (**अन्धसा**) अन्न आदि से (**पृष्ठ्येन, उ**) और पीछे हुए सुख से (**सम्, ममदः**) अच्छे प्रकार आनन्द कीजिये॥४॥

भावार्थः-जो राजा प्रेम से भृत्यजनों के समूह को ऐश्वर्य और अन्न आदि से रक्षा करता है, वह कामना की सिद्धि को प्राप्त होकर फिर निरन्तर आनन्द को प्राप्त होता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वि यो र॒रप्श ऋषि॑भि॒र्नवे॑भिर्वृ॒क्षो न प॒क्वः सृण्यो॒ न जेता॑।

मर्यो॒ न योषा॑म॒भि मन्य॑मा॒नोऽच्छा॑ विवक्मि पुरुहू॒तमिन्द्र॑म्॥५॥३॥

वि। यः। र॒रप्शे। ऋषि॑ऽभिः। नवे॑भिः। वृ॒क्षः। न। प॒क्वः। सृण्यः॑। न। जेता॑। मर्यः॑। न। योषा॑म्। अ॒भि। मन्य॑मानः। अच्छ॑। वि॒व॒क्मि॒। पु॒रु॒ऽहू॒तम्। इन्द्र॑म्॥५॥

पदार्थः-(**वि**) (**यः**) (**ररप्शे**) स्तूयते। अत्र रभधातोर्लिटि सस्य शः। (**ऋषिभिः**) वेदार्थविद्भिः (**नवेभिः**) नूतनाऽध्ययनैः (**वृक्षः**) (**न**) इव (**पक्वः**) परिपक्वफलादिः (**सृण्यः**) प्राप्तबलाः सुशिक्षिताः सेनाः (**न**) इव (**जेता**) जेतुं शीलः (**मर्यः**) मनुष्यः (**न**) इव (**योषाम्**) स्त्रियम् (**अभि**) आभिमुख्ये (**मन्यमानः**) जानन् (**अच्छा**) **संहितायामि**ति दीर्घः। (**विवक्मि**) विशेषेणोपदिशामि (**पुरुहूतम्**) बहुभिः स्तुतम् (**इन्द्रम्**) प्रशंसितगुणधरम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो नवेभिर्ऋषिभिर्वि ररप्शे वृक्षो न पक्वः सृण्यो न जेता मर्य्यो योषां न प्रजामभिमन्यमानोऽस्ति तं पुरुहूतमिन्द्रं यथाऽहमच्छा विवक्मि तथैनं यूयमप्युपदिशत॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये आप्तेषु प्राप्तप्रशंसो वृक्ष इव दृढोत्साहफल एकाकी सेनावद्विजयमानः पतिव्रता भार्य्यावत् प्रजाप्रीतो भवेत् तं प्रशंसितं राजानं यूयम्मन्यध्वम्॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(नवेभिः)** नवीन अध्ययनकर्त्ता **(ऋषिभिः)** वेदार्थ के जानने वालों से **(वि, ररप्शे)** स्तुति किये जाते हो **(वृक्षः)** वृक्ष के **(न)** सदृश **(पक्वः)** पके हुए फल आदि युक्त **(सृण्यः)** बल को प्राप्त उत्तम प्रकार शिक्षित सेना के **(न)** सदृश **(जेता)** जीतने वाला **(मर्त्यः)** मनुष्य **(योषाम्)** स्त्री के **(न)** तुल्य प्रजा को **(अभि, मन्यमानः)** प्रत्यक्ष जानता हुआ वर्तमान है, उस **(पुरुहूतम्)** बहुतों से स्तुति किये गये **(इन्द्रम्)** प्रशंसित गुणों के धारण करने वाले को जैसे मैं **(अच्छा)** उत्तम प्रकार **(विवक्मि)** विशेष करके उपदेश करता हूँ, वैसे इसको आप लोग भी उपदेश दीजिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो यथार्थवक्ता जनों में प्रशंसा को प्राप्त, वृक्ष के सदृश दृढ़ उत्साहरूप फलवान्, अकेला सेना के सदृश जीतने वाला, पतिव्रता स्त्री के सदृश प्रजा में प्रसन्न होवे, उस प्रशंसित को राजा आप लोग मानो॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गिरिर्न यः स्वतवाँ ऋष्व इन्द्रः सनादेव सहसे जात उग्रः।

आदर्ता वज्रं स्थविरं न भीम उद्नेव कोशं वसुना न्यृष्टम्॥६॥

गिरिः। न। यः। स्वऽतवान्। ऋष्वः। इन्द्रः। सनात्। एव। सहसे। जातः। उग्रः। आऽदर्ता। वज्रम्। स्थविरम्। न। भीमः। उद्नाऽइव। कोशम्। वसुना। निऽऋष्टम्॥६॥

पदार्थः-**(गिरिः)** मेघः **(न)** इव **(यः)** **(स्वतवान्)** स्वैर्गुणैर्वृद्धः **(ऋष्वः)** महान् **(इन्द्रः)** सूर्य इव प्रतापी **(सनात्)** सदा **(एव)** **(सहसे)** बलाय **(जातः)** प्रसिद्धः **(उग्रः)** तीव्रस्वभावः **(आदर्त्ता)** समन्ताच्छत्रूणां विदारकः **(वज्रम्)** विद्युद्रूपम् **(स्थविरम्)** स्थूलम् **(न)** इव **(भीमः)** भयङ्करः **(उद्नेव)** जलानीव **(कोशम्)** मेघम् **(वसुना)** धनेन **(न्यृष्टम्)** नितरां प्राप्तम्॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो गिरिर्न स्वतवानृष्वः सनादेव सहसे जात उग्र इन्द्रः स्थविरं वज्रं नादर्त्ता भीमः कोशमुद्नेव वसुना न्यृष्टं करोति स एव विजयी भवितुमर्हति॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो मेघ इव महान् प्रजासुखकरः सनातनधर्म्मसेवी विद्युद्वद्भयङ्करोऽक्षयकोशः शत्रुविनाशको बलवान् भवेत् स सर्वस्य राजा भवितुमर्हेदिति विजानीत॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(गिरिः)** मेघ के **(न)** सदृश **(स्वतवान्)** अपने गुणों से वृद्ध **(ऋष्वः)** बड़ा **(सनात्)** सब काल में **(एव)** ही **(सहसे)** बल के लिये **(जातः)** प्रसिद्ध **(उग्रः)** तीव्र स्वभावयुक्त **(इन्द्रः)** सूर्य्य के समान प्रतापी **(स्थविरम्)** स्थूल **(वज्रम्)** बिजुलीरूप के **(न)** समान **(आदर्त्ता)** सब प्रकार से शत्रुओं का नाश करने वाला **(भीमः)** भयङ्कर और **(कोशम्)** मेघ को **(उद्नेव)**

जलों के सदृश **(वसुना)** धन से **(न्यृष्टम्)** अत्यन्त प्राप्त करता है, वही विजयी होने के योग्य होता है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो मेघ के सदृश बड़ा प्रजाओं का सुख करने और सनातनधर्म्म का सेवन करनेवाला, बिजुली के सदृश भयंकर, नहीं नाश होने वाले खजाने से युक्त, शत्रुओं का नाश करने वाला और बलवान् होवे, वह सब का राजा होने को योग्य है, ऐसा जानिये॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न यस्य॑ व॒र्ता ज॒नुषा॒ न्वस्ति॒ न राध॑स आमरी॒ता म॒घस्य॑।

उ॒द्वा॒वृ॒षा॒णस्त॑विषीव उग्रा॒स्मभ्य॑ं दद्धि पुरुहूत रा॒यः॥७॥

न। यस्य॑। व॒र्ता। ज॒नुषा॑। नु। अस्ति॑। न। राध॑सः। आ॒ऽम॒री॒ता। म॒घस्य॑। उ॒त्ऽव॒वृ॒षा॒णः। त॒वि॒षी॒ऽव॒ः। उ॒ग्र॒। अ॒स्मभ्य॑म्। द॒द्धि। पु॒रु॒ऽहू॒त॒। रा॒यः॥७॥

पदार्थः-**(न)** निषेधे **(यस्य)** **(वर्त्ता)** निवारकः **(जनुषा)** जन्मना **(नु)** **(अस्ति)** **(न)** निषेधे **(राधसः)** धनाऽन्नस्य **(आमरीता)** समन्ताद्विनाशकः **(मघस्य)** धनस्य **(उद्वावृषाणः)** उत्कृष्टतया भृशम्बलकरस्य **(तविषीवः)** बलवत्सेनावन् **(उग्र)** प्रतापिन् **(अस्मभ्यम्)** **(दद्धि)** देहि **(पुरुहूत)** बहूनामाह्वयक **(रायः)** धनानि॥७॥

अन्वयः-हे पुरुहूतोग्र राजन्! यस्य जनुषा वर्त्ता कोऽपि नास्ति यस्य मघस्य राधस आमरीता न विद्यते। उद्वावृषाणस्तविषीवो विजयी स त्वमस्मभ्यं रायो नु दद्धि॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यस्योत्तमकुले जन्म यस्य कुलं प्रशंसितं कर्म्म कृतवद् यस्य संग्रामे विचारे वा रोधको न विद्यते स एव सुखदाता राजाऽस्माकम्भवेदिति वयमिच्छेम॥७॥

पदार्थः-हे **(पुरुहूत)** बहुतों के पुकारने वाले **(उग्र)** प्रतापी राजन् **(यस्य)** जिसका **(जनुषा)** जन्म से **(वर्त्ता)** निवारण करनेवाला कोई भी **(न)** नहीं **(अस्ति)** है जिसके **(मघस्य)** धन और **(राधसः)** धनरूप अन्न का **(आमरीता)** सब प्रकार नाश करनेवाला **(न)** नहीं विद्यमान है। हे **(उद्वावृषाणः)** उत्तमता से अत्यन्त बल करने वाले की **(तविषीवः)** बलयुक्त सेनावान् जीतने वाला वह आप **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(रायः)** धनों को **(नु)** निश्चय से **(दद्धि)** दीजिये॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिसका उत्तम कुल में जन्म और जिसका कुल प्रशंसित कर्म्म किये गये के समान और जिसका संग्राम में वा विचार में रोकने वाला नहीं है, वही सुख देने वाला राजा हम लोगों का होवे, ऐसी हम लोग इच्छा करें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ईक्षे रायः क्षयस्य चर्षणीनामुत व्रजमपवर्तासि गोनाम्।

शिक्षानरः समिथेषु प्रहावान् वस्वो राशिमभिनेताऽसि भूरिम्॥८॥

ईक्षे। रायः। क्षयस्य। चर्षणीनाम्। उत। व्रजम्। अपऽवर्ता। असि। गोनाम्। शिक्षाऽनरः। सम्ऽइथेषु। प्रहाऽवान्। वस्वः। राशिम्। अभिऽनेता। असि। भूरिम्॥८॥

पदार्थः-(**ईक्षे**) पश्यामि (**रायः**) धनस्य (**क्षयस्य**) निवासस्य (**चर्षणीनाम्**) मनुष्याणाम् (**उत**) अपि (**व्रजम्**) शस्त्राऽस्त्रम् (**अपवर्त्ता**) अपवारयिता। अत्र तृन् प्रत्ययः। (**असि**) (**गोनाम्**) स्तोतृणाम् (**शिक्षानरः**) विद्योपादानेन नेता (**समिथेषु**) संग्रामेषु (**प्रहावान्**) विजयं प्राप्तवान् (**वस्वः**) धनस्य (**राशिम्**) समूहम् (**अभिनेता**) आभिमुख्यं प्रापयिता। अत्रापि तृन्। (**असि**) (**भूरिम्**) बहुविधम्॥८॥

अन्वयः-हे राजन्! यतः शिक्षानरस्त्वं प्रहावान् समिथेषु वस्वो भूरिं राशिमभिनेताऽसि चर्षणीनां रायः क्षयस्योत गोनाञ्च व्रजमपवर्त्ताऽसि तमहं राजानमीक्षे॥८॥

भावार्थः-स एव राजा दिक्षु कीर्तिमान् भवेद्यो मनुष्येभ्यो विद्यां धनं सुवासं च दत्वा संग्रामादिषु सततं सर्वान् रक्षेत्॥८॥

पदार्थः-हे राजन्! जिस कारण (**शिक्षानरः**) विद्या के देने से नायक आप (**प्रहावान्**) विजय को प्राप्त तथा (**समिथेषु**) संग्रामों में (**वस्वः**) धन के (**भूरिम्**) बहुत प्रकार के (**राशिम्**) समूह को (**अभिनेता**) सम्मुख पहुंचाने वाले (**असि**) हो और (**चर्षणीनाम्**) मनुष्यों के (**रायः**) धन (**क्षयस्य**) निवास (**उत**) और (**गोनाम्**) स्तुति करने वालों के सम्बन्धी (**व्रजम्**) शस्त्र-अस्त्रों को (**अपवर्त्ता**) दूर करने वाले (**असि**) हो उनको मैं राजा होने को (**ईक्षे**) देखता हूँ॥८॥

भावार्थः-वही राजा दिशाओं में यशस्वी होवे कि जो मनुष्यों को विद्या, धन और उत्तम वास देकर संग्रामादिकों में निरन्तर सब की रक्षा करे॥८॥

अथ विद्वदुपदेशगुणानाह॥

अब विद्वानों के उपदेशगुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कया तच्छृण्वे शच्या शचिष्ठो यया कृणोति मुहु का चिदृष्वः।

पुरु दाशुषे विचयिष्ठो अंहोऽथा दधाति द्रविणं जरित्रे॥९॥

कया। तत्। शृण्वे। शच्या। शचिष्ठः। यया। कृणोति। मुहु। का। चित्। ऋष्वः। पुरु। दाशुषे। विऽचयिष्ठः। अंहः। अथ। दधाति। द्रविणम्। जरित्रे॥९॥

पदार्थः-(**कया**) (**तत्**) तानि (**शृण्वे**) शृणुयाम् (**शच्या**) प्रज्ञया क्रियया वा (**शचिष्ठः**) अतिशयेन प्राज्ञः (**यया**) (**कृणोति**) (**मुहु**) वारं वारम् (**का**) कानि (**चित्**) अपि (**ऋष्वः**) महान् (**पुरु**)

बहु **(दाशुषे)** दात्रे **(विचयिष्ठ:)** अतिशयेन वियोजक: **(अंह:)** अपराधम् **(अथा)** अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घ:। **(दधाति)** **(द्रविणम्)** धनम् **(जरित्रे)** स्तावकाय॥९॥

अन्वय:-हे राजन्! यथा शचिष्ठो विचयिष्ठ ऋष्वो विद्वानंह: पृथक्कृत्याऽथा जरित्रे दाशुषे पुरु द्रविणं दधाति यानि का चिदुत्तमानि कर्म्माणि यया कया शच्या मुहु कृणोति तत्तया शृण्वे॥९॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। मनुष्याणां योग्यतास्ति यथाऽऽप्ता: पापानि विहाय धर्म्माचरणङ्कृत्वा प्रमात्मकञ्ज्ञानं धृत्वा जगत्कल्याणाय पुष्कलं विज्ञानं प्रसारयन्ति तथैव यूयमाचरत॥९॥

पदार्थ:-हे राजन्! जैसे **(शचिष्ठ:)** अत्यन्त बुद्धिमान् **(विचयिष्ठ:)** अत्यन्त वियोग करने वाला **(ऋष्व:)** बड़ा विद्वान् **(अंह:)** अपराध को पृथक् करके **(अथा)** अनन्तर **(जरित्रे)** स्तुति करने और **(दाशुषे)** देनेवाले के लिये **(पुरु)** बहुत **(द्रविणम्)** धन को **(दधाति)** धारण करता है और जिन **(का)** किन्हीं **(चित्)** भी उत्तम कर्म्मों को **(यया)** जिस **(कया)** किसी **(शच्या)** बुद्धि वा क्रिया से **(मुहु)** बार-बार **(कृणोति)** सिद्ध करता है **(तत्)** उन्हें उससे **(शृण्वे)** सुनूं॥९॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों की योग्यता है कि जैसे यथार्थवक्ता जन पापों का त्याग, धर्म्म का आचरण और यथार्थ ज्ञानस्वरूप ज्ञान को धारण करके जगत् के कल्याण के लिये बहुत ज्ञान को फैलाते हैं, वैसे ही आप लोग आचरण करो॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा नो॑ मर्धी॒रा भ॑रा द॒द्धि तन्न॒: प्र दा॒शुषे॒ दात॑वे॒ भूरि॒ यत्ते॑।

नव्ये॑ दे॒ष्णे श॒स्ते अ॒स्मिन्त॑ उ॒क्थे प्र ब्र॑वाम व॒यमि॑न्द्र स्तु॒वन्त॑:॥१०॥

मा। न॒:। म॒र्धी॒:। आ। भ॒र॒। द॒द्धि। तत्। न॒:। प्र। दा॒शुषे॑। दात॑वे। भूरि॑। यत्। ते॒। नव्ये॑। दे॒ष्णे। श॒स्ते। अ॒स्मिन्। ते॒। उ॒क्थे। प्र। ब्र॒वा॒म॒। व॒यम्। इ॒न्द्र॒। स्तु॒वन्त॑:॥१०॥

पदार्थ:-**(मा)** निषेधे **(न:)** अस्मान् **(मर्धी:)** उन्दितान् मा कुरु **(आ)** **(भर)** धर **(दद्धि)** देहि **(तत्)** धनम् **(न:)** अस्मभ्यम् **(प्र)** **(दाशुषे)** दानशीलाय **(दातवे)** दातुम् **(भूरि)** बहु **(यत्)** **(ते)** तव **(नव्ये)** नवीने **(देष्णे)** दातुं योग्ये **(शस्ते)** प्रशंसिते **(अस्मिन्)** **(ते)** तुभ्यम् **(उक्थे)** वक्तव्ये **(प्र)** **(ब्रवाम)** उपदिशेम **(वयम्)** **(इन्द्र)** राजन् **(स्तुवन्त:)**॥१०॥

अन्वय:-हे इन्द्र! त्वं नो मा मर्धीर्नस्तदाऽऽभर यत्तेऽस्मिन् नव्ये देष्णे ते शस्त उक्थे भूरि द्रव्यमस्ति तद्दाशुषे दातवे प्रभर सर्वेभ्यो नोऽस्मभ्यं दद्धि। स्तुवन्तो वयमिदं त्वां प्र ब्रवाम॥१०॥

भावार्थः-हे राजंस्तुभ्यं कर्त्तव्यं कर्म्म यद्यद्वदेम तत्तदाचर प्रजाऽमात्यराज्योन्नतये बहु धनं विद्यान्यायौ च प्रसारय॥१०॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** राजन्! आप **(नः)** हम लोगों को **(मा)** मत **(मर्धीः)** गीला कीजिये हम लोगों के लिये **(तत्)** उस धन को **(आ, भर)** धारण कीजिये **(यत्)** जो **(ते)** आपके **(अस्मिन्)** इस **(नव्ये)** नवीन **(देष्णे)** देने और **(ते)** आपके **(शस्ते)** प्रशंसित **(उक्थे)** कहने योग्य व्यवहार में **(भूरि)** बहुत द्रव्य है वह **(दाशुषे)** दानशील के लिये **(दातवे)** देने को **(प्र)** अत्यन्त धारण कीजिये और **(नः)** हम सब लोगों के लिये **(दद्धि)** दीजिये और **(स्तुवन्तः)** स्तुति करते हुए **(वयम्)** हम लोग यह आपको **(प्र, ब्रवाम)** उपदेश करें॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! आपके लिये करने योग्य कर्म्म जो-जो कहें उस-उसका आचरण करो और प्रजा, मन्त्री और राज्य की उन्नति के लिये बहुत धन, विद्या और न्याय को फैलाओ॥१०॥

पुनरुपदेशविषयमाह॥

फिर उपदेशविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो३ न पीपेः।

अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः॥११॥४॥

नु। स्तुतः। इन्द्र। नु। गृणानः। इषम्। जरित्रे। नद्यः। न। पीपेरिति पीपेः। अकारि। ते। हरिऽवः। ब्रह्म। नव्यम्। धिया। स्याम। रथ्यः। सदाऽसाः॥११॥

पदार्थः-**(नु)** सद्यः **(स्तुतः)** प्रशंसितः **(इन्द्र)** सुखप्रदातः **(नु)** **(गृणानः)** स्तुवन् **(इषम्)** विज्ञानम् **(जरित्रे)** सत्यप्रशंसकाय **(नद्यः)** **(न)** इव **(पीपेः)** वर्धय **(अकारि)** क्रियते **(ते)** तव **(हरिवः)** बहुसेनाङ्गयुक्त **(ब्रह्म)** महद्धनमन्नं वा **(नव्यम्)** नवीनम् **(धिया)** कर्म्मणा **(स्याम)** **(रथ्यः)** बहुरमणीयरथादियुक्ताः **(सदासाः)** समानदासेवकाः॥११॥

अन्वयः-हे इन्द्र! स्तुतस्संस्त्वं जरित्रे नव्यम्ब्रह्म नु नद्यो न पीपेः। गृणानः सन्नव्यमिषम्पीपेः। हे हरिवो! यस्मै तेऽस्माभिर्धिया नव्यं ब्रह्माऽकारि तत्सहायेन सदासा वयं रथ्यो नु स्याम॥११॥

भावार्थः-अमात्यसेनाप्रजाजनैः प्रशंसितानि कर्म्माणि कुर्वतो राज्ञः स्तुतिर्यथा कार्य्या तथैव राज्ञाप्येतेषां शुभकर्म्मसु प्रवर्त्तमानानां प्रशंसा कर्त्तव्येति॥११॥

अत्रेन्द्रराजाऽमात्यविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति विंशतितमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सुख के देनेवाले! **(स्तुतः)** प्रशंसित हुए आप **(जरित्रे)** सत्य कहनेवाले के लिये **(नव्यम्)** नवीन **(ब्रह्म)** बड़े धन वा अन्न की **(नु)** शीघ्र **(नद्यः)** नदियों के **(न)** सदृश **(पीपेः)** वृद्धि करो और **(गृणानः)** स्तुति करता हुआ नवीन **(इषम्)** विज्ञान की वृद्धि करो हे **(हरिवः)** बहुत

सेना के अङ्गों से युक्त! जिसके लिये **(ते)** आपके हम लोगों ने **(धिया)** कर्म से नवीन बड़ा धन वा अन्न **(अकारि)** किया उसके सहाय से **(सदासाः)** समान दान देने वाले सेवक हम लोग **(रथ्यः)** बहुत सुन्दर रथ आदिकों से युक्त **(नु)** निश्चय **(स्याम)** होवें॥११॥

भावार्थः-मन्त्री, सेना और प्रजाजनों को श्रेष्ठ कर्म्म करते हुए राजा की स्तुति जैसी कर्त्तव्य है, वैसी ही राजा को भी इन उत्तम कर्म्मों में प्रवर्त्तमान लोगों की प्रशंसा करनी चाहिये॥११॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा, अमात्य और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बीसवां सूक्त और चौथा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्यैकाधिकविंशतितमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २, ७, १० भुरिक्पङ्क्तिः। ३ स्वराट् पङ्क्तिः। ११ निचृत् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ४, ५ निचृत्त्रिष्टुप्। ६, ८ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। ९ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथेन्द्रपदवाच्यराजगुणानाह॥

अब ग्यारह ऋचावाले इक्कीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में इन्द्रपदवाच्य राजगुणों को कहते हैं॥

आ यात्विन्द्रोऽवस उप न इह स्तुतः सधमादस्तु शूरः।
वावृधानस्तविषीर्यस्य पूर्वीर्द्यौर्न क्षत्रमभिभूति पुष्यात्॥ १॥

आ। यातु। इन्द्रः। अवसे। उप। नः। इह। स्तुतः। सधऽमात्। अस्तु। शूरः। वावृधानः। तविषीः। यस्य। पूर्वीः। द्यौः। न। क्षत्रम्। अभिऽभूति। पुष्यात्॥ १॥

पदार्थः-(**आ**) (**यातु**) आगच्छतु (**इन्द्रः**) प्रजारक्षकः (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**उप**) (**नः**) अस्माकम् (**इह**) अस्मिन् राजप्रजाव्यवहारे (**स्तुतः**) प्राप्तप्रशंसः (**सधमात्**) समानस्थानात् यस्सह माद्यति (**अस्तु**) (**शूरः**) शत्रूणां हिंसकः (**वावृधानः**) वर्धमानः (**तविषीः**) बलयुक्ताः सेनाः (**यस्य**) (**पूर्वीः**) प्राचीनाः (**द्यौः**) सूर्य्यः (**न**) इव (**क्षत्रम्**) राज्यम् (**अभिभूति**) शत्रूणां तिरस्कारनिमित्तम् (**पुष्यात्**) पुष्टं भवेत्॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यस्य राज्ञो द्यौर्न पूर्वीस्तविषीः स्युर्द्यौर्नाऽभिभूति क्षत्रं पुष्यात् स वावृधानः शूरः स्तुत इन्द्रो नोऽस्माकमवस इहोपायात्वस्माभिः सधमादस्तु॥ १॥

भावार्थः-यो राजा विद्युद्वद्बलिष्ठः सूर्य्यवत् सुप्रकाशाः सेनाः कृत्वा निष्कण्टकं राज्यं पुष्यात्स एवेह सर्वां प्रतिष्ठामखिलमानन्दं प्राप्य देहान्ते मोक्षं गच्छेत्॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! (**यस्य**) जिस राजा की (**द्यौः**) सूर्य्य के (**न**) सदृश (**पूर्वीः**) प्राचीन (**तविषीः**) बलयुक्त सेना हों और सूर्य्य के सदृश (**अभिभूति**) शत्रुओं के तिरस्कार में निमित्त (**क्षत्रम्**) राज्य (**पुष्यात्**) पुष्ट होवे वह (**वावृधानः**) बढ़ने और (**शूरः**) शत्रुओं का नाश करने वाला (**स्तुतः**) प्रशंसा को प्राप्त (**इन्द्रः**) प्रजारक्षक (**नः**) हम लोगों के (**अवसे**) रक्षण आदि के लिये (**इह**) यहाँ राजा और प्रजा के व्यवहार में (**उप, आ, यातु**) समीप प्राप्त हो और हम लोगों के (**सधमात्**) समीप स्थान से आनन्द करने वाला (**अस्तु**) हो॥ १॥

भावार्थः-जो राजा बिजुली के सदृश बलिष्ठ, सूर्य्य के सदृश उत्तम प्रकार प्रकाशित, सेना कर निष्कंटक अर्थात् दुष्टजनादिरहित राज्य को पुष्ट करे, वही इस संसार में सम्पूर्ण प्रतिष्ठा और सम्पूर्ण आनन्द को प्राप्त होके शरीर के त्याग के समय मोक्ष को प्राप्त होवे॥ १॥

अथ राजगुणानाह॥

अब राजगुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तस्येदिह स्तवथ वृष्ण्यानि तुविद्युम्नस्य तुविराधसो नॄन्।

यस्य क्रतुर्विदथ्यो३ न सम्राट् साह्वान् तरुत्रो अभ्यस्ति कृष्टीः॥ २॥

तस्य। इत्। इह। स्तवथ। वृष्ण्यानि। तुविऽद्युम्नस्य। तुविऽराधसः। नॄन्। यस्य। क्रतुः। विदथ्यः। न। सम्ऽराट्। सह्वान्। तरुत्रः। अभि। अस्ति। कृष्टीः॥ २॥

पदार्थः-(**तस्य**) (**इत्**) (**इह**) अस्मिन् राज्ये (**स्तवथ**) प्रशंसथ (**वृष्ण्यानि**) बलेषु साधूनि (**तुविद्युम्नस्य**) बहुयशसः (**तुविराधसः**) बह्वैश्वर्यस्य (**नॄन्**) नायकान् (**यस्य**) (**क्रतुः**) प्रज्ञाराज्यपालनाख्यो यज्ञो वा (**विदथ्यः**) विज्ञातुं योग्यः (**न**) इव (**सम्राट्**) सार्वभौमो राजमानः (**साह्वान्**) सोढा (**तरुत्रः**) दुःखेभ्यस्तारकः (**अभि**) (**अस्ति**) (**कृष्टीः**) मनुष्यान्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य तुविद्युम्नस्य तुविराधसो राज्ञ इह विदथ्यो सम्राण्न साह्वान् तरुत्रः क्रतुरभ्यस्ति वृष्ण्यानि सन्ति तस्येन्नॄन् कृष्टीर्यूयं स्तवथ॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्य पूर्णबलानि सैन्यानि महाकीर्त्तिरसङ्ख्यं धनं पूर्णा विद्या शुभा गुणकर्म्मस्वभावाः सहायाश्च स्युस्स एव चक्रवर्त्ती राजा भवितुमर्हति॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यस्य**) जिस (**तुविद्युम्नस्य**) बहुत यशयुक्त (**तुविराधसः**) बहुत ऐश्वर्य्य वाले राजा के (**इह**) इस राज्य में (**विदथ्यः**) जानने योग्य (**सम्राट्**) सम्पूर्ण भूमि में प्रसिद्ध और प्रकाशमान के (**न**) सदृश (**साह्वान्**) सहने वा (**तरुत्रः**) दुःखों से पार उतारने वाला (**क्रतुः**) बुद्धि और राज्य का पालनरूप यज्ञ (**अभि, अस्ति**) सब ओर से है और (**वृष्ण्यानि**) बलों में साधु कार्य हैं (**तस्य, इत्**) उसी के (**नॄन्**) नायक अर्थात् मुख्य (**कृष्टीः**) मनुष्यों की (**स्तवथ**) तुम लोग प्रशंसा करो॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसकी पूर्णबलवाली सेना और बड़ा यश, असंख्य धन, पूर्णविद्या, उत्तम गुण, कर्म्म, स्वभाव और सहाय होवें; वही चक्रवर्त्ती राजा होने के योग्य होता है॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ यात्विन्द्रो दिव आ पृथिव्या मक्षू समुद्रादुत वा पुरीषात्।

स्वर्णरादवसे नो मरुत्वान् परावतो वा सदनादृतस्य॥ ३॥

आ। यातु। इन्द्रः। दिवः। आ। पृथिव्याः। मक्षु। समुद्रात्। उत। वा। पुरीषात्। स्वः। ऽनरात्। अवसे। नः। मरुत्वान्। पराऽवतः। वा। सदनात्। ऋतस्य॥ ३॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**यातु**) प्राप्नोतु (**इन्द्रः**) सूर्य इव राजा (**दिवः**) प्रकाशात् (**आ**) (**पृथिव्याः**) भूमेः (**मक्षू**) शीघ्रम्। **मक्षिवति क्षिप्रनामसु पठितम्।** (निघं० २.१५) (**समुद्रात्**) अन्तरिक्षात्

(उत) **(वा)** **(पुरीषात्)** उदकात्। **पुरीषमित्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२) **(स्वर्णरात्)** स्वरादित्य इव नरान्नायकात् **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(नः)** अस्माकम् **(मरुत्वान्)** वायुवानिव प्रशस्तपुरुषयुक्तः **(परावतः)** दूरदेशात् **(वा)** **(सदनात्)** स्थानात् **(ऋतस्य)** सत्यस्य कारणस्य॥३॥

अन्वयः-यथा सूर्य्य आ दिवः पृथिव्या उत समुद्राद्वा पुरीषात् परावत ऋतस्य सदनाद्वा नोऽवसे मक्ष्वायाति तथैव स्वर्णरान्नोऽवसे मरुत्वान्त्सन्निन्द्र आ यातु॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! यथा सूर्य्योऽन्तरिक्षं प्रकाशं भूमिञ्जलं कार्य्यं जगच्च व्याप्य सर्वं रक्षति तथैव प्रतापी सुसहायो भूत्वाऽस्मान् संरक्ष्य प्रकाशितो भव॥३॥

पदार्थः-जैसे सूर्य **(आ, दिवः)** प्रकाश से **(पृथिव्याः)** भूमि से **(उत)** और **(समुद्रात्)** अन्तरिक्ष से **(वा)** वा **(पुरीषात्)** जल से **(परावतः)** दूर देश से **(ऋतस्य)** सत्य कारण के **(सदनात्)** स्थान से **(वा)** वा हम संसारी जनों की रक्षा आदि के लिये **(मक्षू)** शीघ्र प्राप्त होता है, वैसे ही **(स्वर्णरात्)** सूर्य्य के सदृश नायक से **(नः)** हम लोगों के **(अवसे)** रक्षण आदि के लिये **(मरुत्वान्)** वायुवान् पदार्थ के सदृश प्रशंसित पुरुषों से युक्त होता हुआ **(इन्द्रः)** सूर्य के समान राजा **(आ, यातु)** प्राप्त हो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जैसे सूर्य्य अन्तरिक्ष, प्रकाश, भूमि, जल और कार्य्य जगत् को व्याप्त होकर सब की रक्षा करता है, वैसे ही प्रतापी और उत्तम सहाययुक्त होकर और हम लोग की उत्तम प्रकार रक्षा करके प्रकाशित हूजिये॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्थूरस्य॑ रा॒यो बृ॑ह॒तो य ईशे॒ तमु॑ ष्टवाम वि॒दथे॒ष्विन्द्र॑म्।

यो वा॒युना॒ जय॑ति॒ गोम॑तीषु॒ प्र धृ॑ष्णु॒या नय॑ति॒ वस्यो॒ अच्छ॑॥४॥

स्थूरस्य॑। रा॒यः। बृ॒ह॒तः। यः। ईशे॑। तम्। ऊम् इति॑। स्त॒वा॒म॒। वि॒दथे॑षु। इन्द्र॑म्। यः। वा॒युना॑। जय॑ति। गोऽम॑तीषु। प्र। धृ॒ष्णु॒ऽया। नय॑ति। वस्यः॑। अच्छ॑॥४॥

पदार्थः-**(स्थूरस्य)** स्थूलस्य **(रायः)** धनस्य **(बृहतः)** महतः **(यः)** **(ईशे)** ईष्ट ईश्वरो भवति **(तम्)** **(उ)** **(स्तवाम)** प्रशंसेम **(विदथेषु)** सङ्ग्रामेषु **(इन्द्रम्)** शत्रुविदारकम् **(यः)** **(वायुना)** पवनेन **(जयति)** **(गोमतीषु)** प्रशंसिता गावो वाचो यासु सेनासु तासु **(प्र)** **(धृष्णुया)** धृष्णूनि प्रगल्भानि याति यैस्तानि **(नयति)** **(वस्यः)** अतिशयेन श्रेष्ठं धनम् **(अच्छ)**॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो बृहतः स्थूरस्य राय ईशे विदथेष्विन्द्रमच्छ नयति यो गोमतीषु धृष्णुया वायुनाऽच्छ जयति वस्यः प्रणयति तमु वयं स्तवाम॥४॥

भावार्थः-यो राजा महतीभिस्सेनाभिः सङ्ग्रामेषु विजयं प्राप्य महान्ति धनानि प्रतिष्ठाञ्च लब्ध्वा प्रशंसितो जायते तस्यैव स्तुतिः कर्त्तव्या॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(बृहतः)** बड़े **(स्थूरस्य)** स्थूल **(रायः)** धन का **(ईशे)** स्वामी होता है **(विदथेषु)** सङ्ग्रामों में **(इन्द्रम्)** शत्रु के नाश करने वाले को **(अच्छ)** उत्तम प्रकार **(नयति)** प्राप्त करता है **(यः)** जो **(गोमतीषु)** प्रशंसित वाणियों से युक्त सेनाओं में **(धृष्णुया)** प्रगल्भता और **(वायुना)** पवन के साथ उत्तम प्रकार **(जयति)** विजयी होता है **(वस्यः)** अत्यन्त श्रेष्ठ धन को **(प्र)** प्रीति के साथ चाहता है **(तम्, उ)** उसी की हम लोग **(स्तवाम)** प्रशंसा करें॥४॥

भावार्थः-जो राजा बड़ी सेनाओं से सङ्ग्रामों में विजय को प्राप्त हो तथा बहुत धनों और प्रतिष्ठा को प्राप्त होकर प्रशंसित होता है, उसी की स्तुति करनी चाहिये॥४॥

पुनस्तमेव राजविषयमाह॥

फिर उसी राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उप यो नमो नमसि स्तभायन्नियर्ति वाचं जनयन् यजध्यै।

ऋञ्जसानः पुरुवार उक्थैरेन्द्रं कृण्वीत सदनेषु होता॥५॥५॥

उप। यः। नमः। नमसि। स्तभायन्। इयर्ति। वाचम्। जनयन्। यजध्यै। ऋञ्जसानः। पुरुऽवारः। उक्थैः। आ। इन्द्रम्। कृण्वीत। सदनेषु। होता॥५॥

पदार्थः-**(उप)** **(यः)** **(नमः)** अन्नम् **(नमसि)** अन्ने सत्कारे वा **(स्तभायन्)** स्तम्भयन् **(इयर्त्ति)** प्राप्नोति **(वाचम्)** सुशिक्षितां वाणीम् **(जनयन्)** प्रकटयन् **(यजध्यै)** यष्टुं सङ्गन्तुम् **(ऋञ्जसानः)** प्रसाध्नुवन् **(पुरुवारः)** बहुभिः स्वीकृतः **(उक्थैः)** प्रशंसितैः कर्म्मभिः **(आ)** **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्य्यम् **(कृण्वीत)** कुर्य्यात् **(सदनेषु)** न्यायस्थानेषु **(होता)** न्यायस्य दाता॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो यजध्यै वाचं जनयन्नुक्थैर्ऋञ्जसानः पुरुवारो होता सदनेषु नमसि नम उप स्तभायन्निन्द्रमा कृण्वीत स नमः सत्कारमियर्त्ति॥५॥

भावार्थः-यो राजा विद्यासुशिक्षायुक्तां नीतिं प्रकटयन् सत्काराऽर्हान् सत्कुर्वन् दुष्टान् दण्डयन् प्रयतमानः राज्यपालनेनैश्वर्योन्नतिं करोति स एव सर्वत्र सत्कृतो जायते॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(यजध्यै)** मेल करने को **(वाचम्)** उत्तम शिक्षायुक्त वाणी **(जनयन्)** प्रकट करता हुआ **(उक्थैः)** प्रशंसित कर्म्मों से **(ऋञ्जसानः)** अत्यन्त सिद्ध करता हुआ **(पुरुवारः)** बहुतों से स्वीकार किया गया **(होता)** न्याय को देनेवाला **(सदनेषु)** न्याय के स्थानों में **(नमसि)** अन्न वा सत्कार के निमित्त **(नमः)** अन्न को **(उप, स्तभायन्)** स्तम्भित अर्थात् रोकता हुआ **(इन्द्रम्)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य को **(आ, कृण्वीत)** सिद्ध करे, वह अन्न और सत्कार को **(इयर्त्ति)** प्राप्त होता है॥५॥

भावार्थः-जो राजा विद्या और उत्तम शिक्षा से युक्त नीति को प्रकट करता, सत्कार करने के योग्यों का सत्कार करता, दुष्टों को दण्ड देता और प्रयत्न करता हुआ राज्य के पालन से ऐश्वर्य्य की उन्नति करता है, वही सर्वत्र सत्कृत होता है॥५॥

अथ राज्ञा सह प्रजाजनविषयमाह॥

अब राजा के साथ प्रजाजनों के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

धिषा यदि धिषण्यन्तः सरण्यान्त्सदन्तो अद्रिमौशिजस्य गोहे।

आ दुरोषाः पास्त्यस्य होता यो नो महान्त्संवरणेषु वह्निः॥६॥

धिषा। यदि। धिषण्यन्तः। सरण्यान्। सदन्तः। अद्रिम्। औशिजस्य। गोहे। आ। दुरोषाः। पास्त्यस्य। होता। यः। नः। महान्। सम्ऽवरणेषु। वह्निः॥६॥

पदार्थः-(**धिषा**) स्तुत्या (**यदि**) (**धिषण्यन्तः**) स्तुवन्तः (**सरण्यान्**) सरणं प्राप्तान् (**सदन्तः**) निवासयन्तः (**अद्रिम्**) मेघमिव (**औशिजस्य**) कामयमानाऽपत्यस्य (**गोहे**) संवरणीये गृहे (**आ**) (**दुरोषाः**) दुर्गतो दूरीभूत ओषः क्रोधो यस्य सः (**पास्त्यस्य**) गृहे भवस्य (**होता**) दाता (**यः**) (**नः**) अस्माकम् (**महान्**) (**संवरणेषु**) आच्छादकेषु व्यवहारेषु (**वह्निः**) वोढाग्निरिव॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो नः पास्त्यस्य संवरणेषु वह्निरिव महान् दुरोषा होता भवेद्यदि तमद्रिमिवौशिजस्य गोहे धिषण्यन्तः सरण्यानासदन्तो धिषा यूयं गृह्णीत तर्हि युष्मान्त्सर्वं सुखम्प्राप्नुयात्॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि राजादयो मनुष्याः प्रशंसितान् प्रशंसयेयुः प्राप्तान् रक्षेयुस्तर्हि ते महान्तो भवेयुः॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**नः**) हम लोगों के (**पास्त्यस्य**) गृह में उत्पन्न हुए के (**संवरणेषु**) आच्छादक अर्थात् ढाँपने वाले व्यवहारों में (**वह्निः**) पदार्थ पहुँचाने वाले अग्नि के सदृश (**महान्**) बड़ा (**दुरोषाः**) क्रोध से रहित (**होता**) देने वाला हो (**यदि**) जो उसके (**अद्रिम्**) मेघ के सदृश (**औशिजस्य**) कामना करने वाले के सन्तान के (**गोहे**) ढांपने योग्य गृह में (**धिषण्यन्तः**) स्तुति करते और (**सरण्यान्**) सरण्यान् अर्थात् सन्मार्ग को प्राप्त जनों को (**आ, सदन्तः**) निवास देते हुए (**धिषा**) स्तुति अर्थात् प्रशंसा के साथ आप लोग ग्रहण करो तो आप लोगों को सब सुख प्राप्त होवे॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा आदि मनुष्य प्रशंसित पुरुषों की प्रशंसा करावें **[=करें]** और प्राप्त हुए पुरुषों की रक्षा करें तो वे श्रेष्ठ होवें॥६॥

अथ राजविषयान्तर्गतराजभृत्यकर्माह॥

अब राजविषयान्तर्गत राजभृत्यों के कर्म को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स॒त्रा यदीं॑ भार्व॒रस्य॒ वृष्णः॑ सिष॑क्ति॒ शुष्मः॑ स्तुव॒ते भरा॑य।

गुहा॒ यदी॑मौशि॒जस्य॒ गोहे॒ प्र यद्धि॒ये प्राय॑से॒ मदा॑य॥७॥

स॒त्रा। यत्। ई॒म्। भा॒र्व॒रस्य॑। वृष्णः॑। सिस॑क्ति। शुष्मः॑। स्तु॒व॒ते। भराय॑। गुहा॑। यत्। ई॒म्। औ॒शि॒जस्य॑। गोहे॑। प्र। यत्। धि॒ये। प्र। अय॑से। मदा॑य॥७॥

पदार्थः-(**सत्रा**) सत्येन (**यत्**) यः (**ईम्**) सर्वतः (**भार्वरस्य**) प्रजाः भर्तृ राज्ञः (**वृष्णः**) बलिष्ठस्य (**सिषक्ति**) सिञ्चति (**शुष्मः**) बलवान् (**स्तुवते**) प्रशंसां कुर्वते (**भराय**) धारकाय (**गुहा**) बुद्धौ (**यत्**) यः (**ईम्**) (**औशिजस्य**) कामयमानेषु कुशलस्य (**गोहे**) संवरणीये गृहे (**प्र**) (**यत्**) यः (**धिये**) प्रज्ञायै (**प्र**) (**अयसे**) गमनाय (**मदाय**) आनन्दाय॥७॥

अन्वयः-यद्यः शुष्मः सत्रेम् भार्वरस्य वृष्णः स्तुवते भराय सिषक्ति यद्यो गुहौशिजस्य गोहे सत्यं प्र सिषक्ति यद्योऽयसे मदाय धिये गुहा प्रज्ञानमीं प्र सिषक्ति स एव सर्वं लभते॥७॥

भावार्थः-ये भृत्या धर्म्येण राज्यं शासतो राज्ञो राष्ट्रे सत्येन न्यायेन प्रजाः पालयन्ति तेऽतुलमानन्दं लभन्ते॥७॥

पदार्थः-(**यत्**) जो (**शुष्मः**) बलवान् (**सत्रा**) सत्य से (**ईम्**) सब प्रकार (**भार्वरस्य**) प्रजा के पालन करने वाले राजा के (**वृष्णः**) बलिष्ठ की (**स्तुवते**) प्रशंसा करते हुए (**भराय**) धारण करने वाले के लिए (**सिषक्ति**) सींचता है और (**यत्**) जो (**गुहा**) बुद्धि में (**औशिजस्य**) कामना करने वालों में चतुर के (**गोहे**) स्वीकार करने योग्य घर में सत्य का (**प्र**) सिञ्चन करता है (**यत्**) जो (**अयसे**) गमन (**मदाय**) आनन्द और (**धिये**) बुद्धि के लिये बुद्धि में प्रज्ञान को (**ईम्**) सब प्रकार से (**प्र**) अत्यन्त सींचता है, वही सम्पूर्ण लाभ को प्राप्त होता है॥७॥

भावार्थः-जो कर्मचारी लोग धर्म से राज्य का शासन करते हुए राजा के राज्य में सत्य-न्याय से प्रजाओं का पालन करते हैं, वे अतुल आनन्द को प्राप्त होते हैं॥७॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वि यद्वरां॑सि॒ पर्व॑तस्य वृ॒ण्वे पयो॑भिर्जि॒न्वे अ॒पां जवां॑सि।

वि॒दद्गौ॒रस्य॑ गव॒यस्य॒ गोहे॒ यदी॒ वाजा॑य सु॒ध्यो॒३॒॑ वह॑न्ति॥८॥

वि। यत्। वरां॑सि। पर्व॑तस्य। वृ॒ण्वे। पयः॑ऽभिः। जि॒न्वे। अ॒पाम्। जवां॑सि। वि॒दत्। गौ॒रस्य॑। ग॒व॒यस्य॑। गोहे॑। यदि॑। वाजा॑य। सु॒ऽध्यः॑। वह॑न्ति॥८॥

पदार्थः-(**वि**) (**यत्**) यः (**वरांसि**) वरणीयानि धर्म्याणि कर्म्माणि (**पर्वतस्य**) मेघस्येव (**वृण्वे**) स्वीकुर्य्याम् (**पयोभिः**) उदकैः (**जिन्वे**) तर्पयामि (**अपाम्**) जलानाम् (**जवांसि**) वेगा इव (**विदत्**)

लभमानः **(गौरस्य)** **(गवयस्य)** गोसदृशस्य **(गोहे)** गृहे **(यदी)** अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(वाजाय)** वेगाय **(सुध्यः)** शोभना धीर्येषान्ते **(वहन्ति)** प्रापयन्ति॥८॥

अन्वयः-हे राजन्! यदी सुध्यो वाजाय गौरस्य गवयस्य गोहे वि वहन्ति तर्हि सुखं लभन्ते यद्योऽहं पर्वतस्य पयोभिरिव वरांसि वृण्वेऽपां जवांसि विदत् सन् राज्यं जिन्वे तान्माञ्च भवान् सत्करोतु॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा गवयस्य साधर्म्यं गौ रक्षति तथैव धार्मिकानां साधर्म्यं राजानो रक्षन्तु यथा मेघो जलदानेन सर्वं प्रीणाति तथैव राजाऽभयदानेन सर्वं सुखयेत्॥८॥

पदार्थः-हे राजन्! **(यदी)** जो **(सुध्यः)** उत्तम बुद्धि वाले जन **(वाजाय)** वेग के लिये **(गौरस्य)** गौर **(गवयस्य)** गोसदृश के **(गोहे)** गृह में **(वि, वहन्ति)** स्वीकार करते हैं तो सुख को प्राप्त होते हैं और **(यत्)** जो मैं **(पर्वतस्य)** मेघ के **(पयोभिः)** जलों के सदृश पदार्थों और **(वरांसि)** स्वीकार करने योग्य धर्म्मयुक्त कर्म्मों का **(वृण्वे)** स्वीकार करूं और **(अपाम्)** जलों के **(जवांसि)** वेगों के सदृश कर्म्मों को **(विदत्)** प्राप्त होता हुआ राज्य को **(जिन्वे)** शोभित करता हूँ, उनका और मेरा आप सत्कार करो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे गवय के साधर्म्य को गौ धारण करती है, वैसे ही धार्मिक पुरुषों के साधर्म्य को राजा लोग धारण करें और जैसे मेघ जलदान से सब को तृप्त करता है, वैसे ही राजा अभयदान से सब को सुख देवे॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भ॒द्रा ते॒ हस्ता॒ सुकृ॑तो॒त पा॒णी प्र॑य॒न्तारा॑ स्तुव॒ते राध॑ इन्द्र।

का ते॒ निष॑त्तिः॒ किमु॒ नो म॑मत्सि॒ किं नोदु॑दु हर्षसे॒ दात॒वा उ॑॥९॥

भ॒द्रा। ते॒। हस्ता॑। सुऽकृ॑ता। उ॒त। पा॒णी इति॑। प्र॒ऽय॒न्तारा॑। स्तु॒व॒ते। राधः॑। इ॒न्द्र॒। का। ते॒। निऽस॑त्तिः। किम्। ऊ॒म् इति॑। नो इति॑। म॒म॒त्सि॒। किम्। न। उत्ऽउ॑त्। ऊ॒म् इति॑। हर्ष॑से। दात॒वै। ऊँ॒ इति॑॥९॥

पदार्थः-**(भद्रा)** कल्याणकर्म्मकरौ **(ते)** तव **(हस्ता)** हस्तौ **(सुकृता)** शोभनं धर्म्यं कर्म्म क्रियते याभ्यान्तौ **(उत)** अपि **(पाणी)** बाहू **(प्रयन्तारा)** प्रयच्छन्ति याभ्यान्तौ **(स्तुवते)** सत्यं वदते **(राधः)** धनम् **(इन्द्र)** सर्वेभ्यः सुखप्रद **(का)** **(ते)** तव **(निषत्तिः)** निषीदन्ति यया सा स्थितिर्नीतिर्वा **(किम्)** **(उ)** **(नः)** अस्मान् **(ममत्सि)** हर्षयसि **(किम्)** **(न)** निषेधे **(उदुत्)** उत्कृष्टे **(उ)** वितर्के **(हर्षसे)** आनन्दसि **(दातवै)** दातुम् **(उ)**॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्य ते सुकृता हस्ता उतापि प्रयन्तारा भद्रा पाणी स्तुवते राधो दद्यातां तस्य ते का निषत्तिरु त्वं किं नो ममत्सि दातवा उ किं न उ उदुद्धर्षसे॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! यस्मात्त्वमस्मानानन्दयसि तस्मादानन्दितः सततञ्जायसे यतस्त्वं सुवर्णपाणिर्दानहस्तो योग्यान् सत्करोषि तस्मात्तव कल्याणकरी नीतिरस्ति॥९॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सब के लिये सुख देनेवाले! जिन **(ते)** आपके **(सुकृता)** श्रेष्ठ धर्म्मयुक्त कर्म्म किया जाता जिनसे वे **(हस्ता)** हाथ **(उत)** और **(प्रयन्तारा)** देते हैं जिनसे वे **(भद्रा)** कल्याण कर्म करने वाले **(पाणी)** हाथ **(स्तुवते)** सत्य बोलते हुए के लिये **(राधः)** धन देवें उन **(ते)** आपको **(का)** कौन **(निषत्तिः)** स्थित होते हैं जिससे ऐसी मर्य्यादा वा नीति है **(उ)** और आप **(किम्)** क्या **(नः)** हम लोगों को **(ममत्सि)** प्रसन्न करते हो और **(दातवै)** देने को **(उ)** भी **(किम्)** क्यों **(न, उ)** नहीं **(उदुत्)** उत्तम प्रकार **(हर्षसे)** आनन्दित होते हो॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! जिससे आप हम लोगों को आनन्द देते हो, इससे आनन्दित निरन्तर होते हो और जिससे आप सुवर्ण हस्त में धारण किये हुए दानसहित हस्तयुक्त हुए योग्यों का सत्कार करते हो, इससे आपकी कल्याण करनेवाली नीति है॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवा वस्व इन्द्रः सत्यः सम्राड्ढन्ता वृत्रं वरिवः पूरवे कः।

पुरुष्टुत क्रत्वा नः शग्धि रायो भक्षीय तेऽवसो दैव्यस्य॥१०॥

एव। वस्वः। इन्द्रः। सत्यः। सम्ऽराट्। हन्ता। वृत्रम्। वरिवः। पूरवे। करिति कः। पुरुऽस्तुत। क्रत्वा। नः। शग्धि। रायः। भक्षीय। ते। अवसः। दैव्यस्य॥१०॥

पदार्थः-**(एवा)** निश्चये। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(वस्वः)** धनस्य **(इन्द्रः)** ऐश्वर्य्यप्रदाता **(सत्यः)** सत्सु पुरुषेषु साधुः **(सम्राट्)** सार्वभौमो राजा **(हन्ता)** **(वृत्रम्)** मेघमिव शत्रुम् **(वरिवः)** सेवनम् **(पूरवे)** धार्मिकाय मनुष्याय। **पूरव इति मनुष्यनामसु पठितम्।** (निघं०२.३) **(कः)** कुर्य्याः **(पुरुष्टुत)** बहुभिः प्रशंसित **(क्रत्वा)** श्रेष्ठया प्रज्ञयोत्तमेन कर्म्मणा वा **(नः)** अस्मान् **(शग्धि)** देहि **(रायः)** धनानि **(भक्षीय)** सेवेय भुञ्जीय वा **(ते)** तव **(अवसः)** रक्षणस्य **(दैव्यस्य)** दिव्यसुखप्रापकस्य॥१०॥

अन्वयः-हे पुरुष्टुत! यः सत्य इन्द्रस्त्वं सूर्य्यो वृत्रमिव शत्रून् हन्तैवा सम्राट् पूरवे वस्वो वरिवः कः यस्त्वं क्रत्वा नो रायः शग्धि तस्यैव ते दैव्यस्याऽवसः सकाशाद्रक्षितोऽहं धनानि भक्षीय॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यः सूर्य्यवत् प्रकाशितन्यायोऽभयदाता सर्वथा सर्वस्य रक्षको नरो भवेत् स एव चक्रवर्त्ती भवितुमर्हति॥१०॥

पदार्थः-हे **(पुरुष्टुत)** बहुतों से प्रशंसित! जो **(सत्यः)** श्रेष्ठ पुरुषों में श्रेष्ठ **(इन्द्रः)** ऐश्वर्य्य के देने वाले आप सूर्य **(वृत्रम्)** मेघ को जैसे वैसे शत्रुओं को **(हन्ता, एवा)** नाश करनेवाले ही **(सम्राट्)** सम्पूर्ण भूमि के राजा **(पूरवे)** धार्मिक मनुष्य के लिये **(वस्वः)** धन का **(वरिवः)** सेवन **(कः)** करें और जो

आप **(क्रत्वा)** श्रेष्ठ बुद्धि वा उत्तम कर्म्म से **(नः)** हम लोगों के लिये **(रायः)** धनों को **(शग्धि)** देवें उन्हीं **(ते)** आपके **(दैव्यस्य)** श्रेष्ठ सुख प्राप्त कराने वाले **(अवसः)** रक्षण की उत्तेजना से रक्षित मैं धनों का **(भक्षीय)** सेवन वा भोग करूं॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सूर्य के सदृश प्रकाशित, न्याययुक्त, अभय का देनेवाला और सब प्रकार से सब का रक्षक नायक होवे, वही चक्रवर्त्ती होने के योग्य होता है॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो३ न पीपेः।

अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः॥११॥६॥

नु। स्तुतः। इन्द्र। नु। गृणानः। इषम्। जरित्रे। नद्यः। न। पीपेरिति पीपेः। अकारि। ते। हरिऽवः। ब्रह्म। नव्यम्। धिया। स्याम। रथ्यः। सदाऽसाः॥११॥

पदार्थः-**(नु)** सद्यः **(स्तुतः)** प्रशंसितः **(इन्द्र)** विद्यैश्वर्य्ययुक्त **(नु)** अत्रोभयत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(गृणानः)** विद्यां स्तुवन् **(इषम्)** **(जरित्रे)** सकलविद्याऽध्यापकाय **(नद्यः)** **(न)** इव **(पीपेः)** वर्धय **(अकारि)** **(ते)** तुभ्यम् **(हरिवः)** विद्वत्सङ्गप्रिय **(ब्रह्म)** विद्याधनम् **(नव्यम्)** नवीनम् **(धिया)** प्रज्ञया **(स्याम)** **(रथ्यः)** बहुरथाद्यैश्वर्य्ययुक्ताः **(सदासाः)** ससेवकाः॥११॥

अन्वयः-हे हरिव इन्द्र! येन धिया ते नव्यं ब्रह्माऽकारि यस्य रथ्यः सदासा वयं स्याम तदर्थमिषं नु गृणानो नु ष्टुतस्सन्नस्मै जरित्रे नद्यो न पीपेः॥११॥

भावार्थः-यो यस्मै विद्यां दद्यात् तस्य सेवा तेन यथावत् कर्त्तव्येति॥११॥

अत्रेन्द्रराजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकाऽधिकविंशतमं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(हरिवः)** विद्वानों के सङ्ग में प्रीति करने वाले **(इन्द्र)** विद्या और ऐश्वर्य्य से युक्त! जिस **(धिया)** बुद्धि से **(ते)** आपके लिये **(नव्यम्)** नवीन **(ब्रह्म)** विद्यारूप धन **(अकारि)** किया गया और जिसके **(रथ्यः)** बहुत रथ आदि ऐश्वर्य्य से युक्त **(सदासाः)** सेवा करनेवालों के सहित वर्त्तमान हम लोग **(स्याम)** होवें इसके लिये **(इषम्)** अन्न की **(नू)** निश्चय **(गृणानः)** विद्या की स्तुति करता हुआ **(नु)** शीघ्र **(स्तुतः)** प्रशंसा को प्राप्त इस **(जरित्रे)** सम्पूर्ण विद्याओं के अध्यापक के लिये **(नद्यः)** नदियों के **(न)** सदृश **(पीपेः)** वृद्धि करो॥११॥

भावार्थः-जो जिसके लिये विद्या को देवे उसकी सेवा उसको चाहिये कि यथायोग्य करे॥११॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा और प्रजा के गुणवर्णन करने से इसके अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इक्कीसवां सूक्त और छठा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्य द्वाविंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रो देवता १, २, ५, १० निचृत्त्रिष्टुप्। ३, ४ विराट्त्रिष्टुप्। ६, ७ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ८ भुरिक् पङ्क्तिः। ९ स्वराट् पङ्क्तिः। ११ निचृत् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथेन्द्रगुणानाह॥

अब ग्यारह ऋचा वाले बाईसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में इन्द्रपदवाच्य राजगुणों को कहते हैं॥

यन्न इन्द्रो जुजुषे यच्च वष्टि तन्नो महान् करति शुष्म्या चित्।

ब्रह्म स्तोमं मघवा सोममुक्था यो अश्मानं शवसा बिभ्रदेति॥१॥

यत्। नः। इन्द्रः। जुजुषे। यत्। च। वष्टि। तत्। नः। महान्। करति। शुष्मी। आ। चित्। ब्रह्म। स्तोमम्। मघऽवा। सोमम्। उक्था। यः। अश्मानम्। शवसा। बिभ्रत्। एति॥१॥

पदार्थः-(**यत्**) यः (**नः**) अस्मान् (**इन्द्रः**) परमसुखप्रदो राजा (**जुजुषे**) सेवते (**यत्**) यः (**च**) (**वष्टि**) कामयते (**तत्**) सः (**नः**) अस्मभ्यम् (**महान्**) (**करति**) कुर्य्यात् (**शुष्मी**) महाबलिष्ठः (**आ**) (**चित्**) अपि (**ब्रह्म**) महद्धनमन्नं वा (**स्तोमम्**) प्रशंसनीयम् (**मघवा**) परमपूजितधनः (**सोमम्**) ओषध्यादिगणैश्वर्य्यम् (**उक्था**) प्रशंसनीयानि वस्तूनि (**यः**) (**अश्मानम्**) मेघमिव राज्यम् (**शवसा**) बलेन (**बिभ्रत्**) धरन्त्सन् (**एति**) प्राप्नोति॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्य इन्द्रो नो जुजुषे यश्चो महांश्चाऽऽवष्टि यः शुष्मी मघवा सूर्य्योऽश्मानमिव शवसा ब्रह्म स्तोमं सोममुक्था चिद्बिभ्रत् सन् राज्यमेति तत् स नस्सुखं करतीति विजानीत॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्य्यो मेघं धरति हन्ति च तथैव यो राजा श्रेष्ठान् दधाति दुष्टान् दण्डयति स एवाऽस्मान् पालयितुमर्हति॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यत्**) जो (**इन्द्रः**) अत्यन्त सुख का देनेवाला राजा (**नः**) हम लोगों की (**जुजुषे**) सेवा करता है (**यत्, च**) और जो (**महान्**) बड़ा ऐश्वर्यवाला (**आ, वष्टि**) कामना करता है (**यः**) जो (**शुष्मी**) अत्यन्त बलवान् (**मघवा**) अति उत्तम धनयुक्त राजा सूर्य्य (**अश्मानम्**) मेघ को जैसे वैसे (**शवसा**) बल से (**ब्रह्म**) बहुत धन वा अन्न (**स्तोमम्**) प्रशंसा करने योग्य (**सोमम्**) ओषधी आदि पदार्थसमूह से ऐश्वर्य्य और (**उक्था**) प्रशंसा करने योग्य वस्तुओं को (**चित्**) भी (**बिभ्रत्**) धारण करता हुआ राज्य को (**एति**) प्राप्त होता है (**तत्**) वह (**नः**) हम लोगों को सुख (**करति**) करता है, ऐसा जानो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य मेघ को धारण करता और नाश करता है, वैसे ही जो राजा श्रेष्ठों को धारण करता और दुष्टों को दण्ड देता है, वही हम लोगों के पालन करने योग्य है॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वृषा वृषन्धिं चतुरश्रिमस्यन्नुग्रो बाहुभ्यां नृतमः शचीवान्।

श्रिये परुष्णीमुषमाण ऊर्णां यस्याः पर्वाणि सख्याय विव्ये॥२॥

वृषा। वृषन्धिम्। चतुःऽअश्रिम्। अस्यन्। उग्रः। बाहुभ्याम्। नृऽतमः। शचीऽवान्। श्रिये। परुष्णीम्। उषमाणः। ऊर्णाम्। यस्याः। पर्वाणि। सख्याय। विव्ये॥२॥

पदार्थः-(**वृषा**) बलिष्ठः (**वृषन्धिम्**) बलिष्ठानां धारकम् (**चतुरश्रिम्**) चतुरङ्गिणीं सेनां प्राप्तम् (**अस्यन्**) प्रक्षिपन् (**उग्रः**) तेजस्वी (**बाहुभ्याम्**) भुजाभ्याम् (**नृतमः**) अतिशयेन नायकः श्रेष्ठः (**शचीवान्**) बहुप्रजावान् (**श्रिये**) लक्ष्म्यै (**परुष्णीम्**) विभागवतीम् (**उषमाणः**) दहन् (**ऊर्णाम्**) आच्छादिकाम् (**यस्याः**) (**पर्वाणि**) पूर्णानि पालनानि (**सख्याय**) मित्रस्य भावाय कर्म्मणे वा (**विव्ये**) कामयते॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो वृषा वृषन्धिं चतुरश्रिं बाहुभ्यामस्यन्नुग्रो नृतमश्शचीवान् यस्याः पर्वाणि श्रिये प्रभवन्ति तां परुष्णीमूर्णामुषमाणः सन्त्सख्याय विव्ये स एवाऽस्माकं राजा भवितुमर्हेत्॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो बाहुबलेन दुष्टाँस्तिरस्कुर्वन्नरोत्तमगुणैरुत्कृष्टो मित्रवत् प्रजाः पालयति स एव श्रीमान् प्रजावान् न्यायाधीशो राजा भवितुमर्हति॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**वृषा**) अत्यन्त बलवान् (**वृषन्धिम्**) बलिष्ठों के धारण करने वाले (**चतुरश्रिम्**) चतुरङ्ग सेना को प्राप्त जन को (**बाहुभ्याम्**) भुजाओं से (**अस्यन्**) फेंकता हुआ (**उग्रः**) तेजस्वी (**नृतमः**) अतिशय नायक (**शचीवान्**) बहुत प्रजावाला (**यस्याः**) जिसके (**पर्वाणि**) पूर्ण पालन (**श्रिये**) लक्ष्मी के लिये समर्थ होते हैं उस (**परुष्णीम्**) विभागवती (**ऊर्णाम्**) ढांपने वाली दुर्बुद्धि को (**उषमाणः**) जलाता हुआ (**सख्याय**) मित्र होने के वा मित्र के कर्म्म के लिये (**विव्ये**) कामना करता है, वही हम लोगों का राजा होने को योग्य होवे॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो बाहुबल से दुष्टों का तिरस्कार करता हुआ मनुष्यों के उत्तम गुणों से उत्तम और मित्र के सदृश प्रजाओं को पालता है वही लक्ष्मीवान् प्रजावान् न्यायाधीश राजा होने के योग्य होता है॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यो देवो देवतमो जायमानो महो वाजेभिर्महद्भिश्च शुष्मैः।

दधानो वज्रं बाह्वोरुशन्तं द्याममेन रेजयत् प्र भूम॥३॥

यः। देवः। देवऽतमः। जायमानः। महः। वाजेभिः। महत्ऽभिः। च। शुष्मैः। दधानः। वज्रम्। बाह्वोः। उशन्तम्। द्याम्। अमेन। रेजयत्। प्र। भूम॥३॥

पदार्थः-(**यः**) (**देवः**) विद्वान् (**देवतमः**) विद्वत्तमः (**जायमानः**) उत्पद्यमानः (**महः**) महान् (**वाजेभिः**) वेगवद्भिः सैन्यैः (**महद्भिः**) महागुणविशिष्टैः (**च**) (**शुष्मैः**) बलैस्सह (**दधानः**) धरन् (**वज्रम्**) शस्त्राऽस्त्रम् (**बाह्वोः**) भुजयोः (**उशन्तम्**) कामयमानम् (**द्याम्**) प्रकाशम् (**अमेन**) बलेन (**रेजयत्**) कम्पयते (**प्र**) (**भूम**) भूमिम्। अत्र पृषोदरादिना रूपसिद्धिः॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो महद्भिर्वाजेभिश्च शुष्मैस्सह महो जायमानो देवो देवतमो राजा बाह्वोर्वज्रं दधानोऽमेन सूर्य्यो द्यां भूम च यथा प्र रेजयत् तथोशन्तं कामयमानं शत्रुं कम्पयते तमस्माकं सुखं कामयमानं वयं वृणुयाम॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो न्याय्येन दण्डेन सूर्यः प्रकाशं भूगोलांश्च कम्पयन्निव प्रजां अधर्म्माचरणात् कम्पयति स एव पूर्णविद्यो राजवरो ज्ञायते॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**महद्भिः**) बड़े गुणों से विशिष्ट (**वाजेभिः**) वेगयुक्त सेनाजनों और (**शुष्मैः**) बलों के साथ (**महः**) बड़ा (**जायमानः**) उत्पन्न होता हुआ (**देवः**) विद्वान् (**देवतमः**) अत्यन्त विद्वान् राजा (**बाह्वोः**) भुजाओं के बीच (**वज्रम्**) शस्त्र और अस्त्र को (**दधानः**) धारण करता हुआ (**अमेन**) बल से सूर्य्य (**द्याम्**) प्रकाश (**च**) और (**भूम**) पृथिवी को जैसे (**प्र, रेजयत्**) कम्पाता है, वैसे (**उशन्तम्**) कामना करते हुए शत्रु को कम्पाता है, उस हम लोगों के सुख की कामना करते हुए राजा को हम लोग स्वीकार करें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो योग्य दण्ड से सूर्य्य, प्रकाश और भूगोलों को कम्पाते हुए के सदृश प्रजाओं को अधर्म्माचरण से कम्पाता है, वही पूर्ण विद्वान् राजा होता है॥३॥

अथ पृथिवीधारणभ्रमणविषयमाह॥

अब पृथिवी के धारण [और] भ्रमणविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विश्वा रोधांसि प्रवतश्च पूर्वीर्द्यौर्ऋष्वाज्जनिमन् रेजत क्षाः।
आ मातरा भरति शुष्म्या गोर्नृवत्परिज्मन्नोनुवन्त वाताः॥४॥

विश्वा। रोधांसि। प्रऽवतः। च। पूर्वीः। द्यौः। ऋष्वात्। जनिमन्। रेजत। क्षाः। आ। मातरा। भरति। शुष्मी। आ। गोः। नृऽवत्। परिऽज्मन्। नोनुवन्त। वाताः॥४॥

पदार्थः-(**विश्वा**) सर्वाणि (**रोधांसि**) रोधनानि (**प्रवतः**) अधस्ताद्वर्त्तमानान् (**च**) (**पूर्वीः**) प्राचीनाः सनातनीः (**द्यौः**) विद्युत् (**ऋष्वात्**) महतः कारणात् (**जनिमन्**) जन्मनि प्रादुर्भावे (**रेजत**) कम्पयति (**क्षाः**) भूमयः (**आ**) (**मातरा**) मातापितृरूपौ राजप्रजाजनौ (**भरति**) धरति (**शुष्मी**) बलवान्

(आ) (गोः) पृथिव्याः **(नृवत्)** मनुष्यवत् **(परिज्मन्)** सर्वतो व्याप्तेऽन्तरिक्षे विस्तृतायां भूमौ वा। **ज्मेति पृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१) **(नोनुवन्त)** भृशं शब्दायन्ते **(वाताः)** वायवः॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या ऋष्वाज्जनिमन् प्रादुर्भूता पूर्वीर्द्यौः क्षा आ भरति प्रवतश्च विश्वा रोधांसि नृवदाऽऽभरति यश्शुष्मी गोर्मातरा द्यावाभूमी नृवद्रेजत यत्र परिज्मन् वाता नोनुवन्त तान् यूयं विजानीत॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः प्रकृतेर्जातो महानग्निः सर्वान् भूगोलान् रुणद्धि मातापितृवत् सर्वान् पालयत्यन्तरिक्षे भ्रामयति तं विज्ञायोपयुङ्ग्ध्वम्॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(ऋष्वात्)** बड़े प्रकृतिरूप कारण से **(जनिमन्)** उत्पत्ति में प्रकट हुई **(पूर्वीः)** प्राचीनकाल से सिद्ध क्रियाओं को **(द्यौः)** बिजुली और **(क्षाः)** पृथिवी **(आ, भरति)** अच्छे प्रकार धारण करती है **(च)** और **(प्रवतः)** नीचे के स्थल में वर्त्तमान **(विश्वा)** सम्पूर्ण प्रजाओं तथा **(रोधांसि)** रुकावटों को **(नृवत्)** मनुष्यों के सदृश **(आ)** अच्छे प्रकार धारण करती है और जो **(शुष्मी)** बलवान् अग्नि **(गोः)** पृथिवी के सम्बन्ध में **(मातरा)** माता और पितारूप राजा और प्रजाजन तथा अन्तरिक्ष और पृथिवी को मनुष्यों के सदृश **(रेजत)** कम्पाता है, जहाँ **(परिज्मन्)** सब ओर से व्याप्त अन्तरिक्ष वा विस्तृत भूमि में **(वाताः)** पवन **(नोनुवन्त)** अत्यन्त शब्द करते हैं, उनको आप लोग जानो॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो प्रकृतिरूप कारण से उत्पन्न हुआ बड़ा अग्नि सम्पूर्ण भूगोलों का आकर्षण करता है, माता और पिता के सदृश सब का पालन करता और अन्तरिक्ष में घुमाता है, उसको जान के कार्य्य सिद्ध करो॥४॥

अथ भूगोलभ्रमणदृष्टान्तेन राजगुणानाह॥

अब भूगोल के भ्रमणदृष्टान्त से राजगुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ता तू त इन्द्र महतो महानि विश्वेष्वित्सवनेषु प्रवाच्या।

यच्छूर धृष्णो धृषता दधृष्वानहिं वज्रेण शवसाविवेषीः॥५॥७॥

ता। तु। ते। इन्द्र। महतः। महानि। विश्वेषु। इत्। सवनेषु। प्रऽवाच्या। यत्। शूर। धृष्णो इति। धृषता। दधृष्वान्। अहिम्। वज्रेण। शवसा। अविवेषीः॥५॥

पदार्थः-**(ता)** तानि **(तू)** अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(ते)** तव **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्यप्रयोजक **(महतः)** पूजनीयस्य **(महानि)** महान्ति **(विश्वेषु)** समग्रेषु **(इत्)** एव **(सवनेषु)** ऐश्वर्य्ययुक्तेषु लोकेषु **(प्रवाच्या)** प्रकर्षेण वक्तुं योग्यानि **(यत्)** यानि **(शूर)** निर्भय **(धृष्णो)** दृढप्रगल्भ **(धृषता)** प्रागल्भ्येन **(दधृष्वान्)** धारयन् **(अहिम्)** मेघमिव **(वज्रेण)** किरणेनेव शस्त्राऽस्त्रेण **(शवसा)** बलेन **(अविवेषीः)** व्याप्नुयाः॥५॥

अन्वयः-हे धृष्णो शूर इन्द्र राजन्! यद्यानि विश्वेषु सवनेषु महतस्ते महानि प्रवाच्या सन्ति ता इदेव तू दधृष्वान् धृषता शवसा वज्रेणाऽहिं सूर्य्य इवाऽविवेषीः॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्य्यः किरणैराकृष्य सर्वान् भूगोलान् धरति तथैव महतीं सत्पुरुषादिसामग्रीं कृत्वा राजा दीपद्वीपान्तरस्थानि राज्यानि शिष्यात्॥५॥

पदार्थः-हे **(धृष्णो)** अत्यन्त ढीठ **(शूर)** भयरहित **(इन्द्र)** परम ऐश्वर्य्य का प्रयोग करने वाले राजन्! **(यत्)** जो **(विश्वेषु)** सम्पूर्ण **(सवनेषु)** ऐश्वर्य्य से युक्त लोकों में **(महतः)** आदर करने योग्य **(ते)** आपके **(महानि)** बड़े-बड़े **(प्रवाच्या)** उत्तमता से कहने योग्य कार्य्य हैं **(ता, इत्)** उन्हीं को **(तू)** तो **(दधृष्वान्)** धारण करते हुए **(धृषता)** अत्यन्त ढिठाई और **(शवसा)** बल से **(वज्रेण)** किरण से **(अहिम्)** मेघ को सूर्य्य जैसे वैसे शस्त्र और अस्त्र से **(अविवेषीः)** प्राप्त हूजिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य किरणों से आकर्षण करके सम्पूर्ण भूगोलों को धारण करता है, वैसे ही बड़ी सत्पुरुष आदि सामग्री को करके राजा द्वीप और द्वीपान्तरों में स्थित राज्यों को शासन देवे॥५॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वद्विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ता तू ते सुत्या तुविनृम्ण विश्वा प्र धेनवः सिस्रते वृष्ण ऊध्नः।

अधा ह त्वद् वृषमणो भियानाः प्र सिन्धवो जवसा चक्रमन्त॥६॥

ता। तु। ते। सत्या। तुविऽनृम्ण। विश्वा। प्र। धेनवः। सिस्रते। वृष्णः। ऊध्नः। अध। ह। त्वत्। वृषऽमनः। भियानाः। प्र। सिन्धवः। जवसा। चक्रमन्त॥६॥

पदार्थः-**(ता)** तानि **(तु)** पुनः। अत्र **ऋचि तुनुघे**ति दीर्घः। **(ते)** तव **(सत्या)** सत्सु साधूनि कर्म्माणि **(तुविनृम्ण)** बहुधन **(विश्वा)** सर्वाणि **(प्र)** **(धेनवः)** वाचः **(सिस्रते)** सरन्ति प्राप्नुवन्ति **(वृष्णः)** ब्रह्मचर्य्यादिना बलिष्ठान् **(ऊध्नः)** विस्तीर्णबलान् **(अधा)** अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(ह)** खलु **(त्वत्)** तव सकाशात् **(वृषमणः)** वृषस्य बलयुक्तस्य मन इव मनो यस्य तत्सम्बुद्धौ **(भियानाः)** भयम्प्राप्ताः **(प्र)** **(सिन्धवः)** नद्यः **(जवसा)** वेगेन **(चक्रमन्त)** क्रमन्ते गच्छन्ति॥६॥

अन्वयः-हे तुविनृम्ण वृषमण इन्द्र! यथा सिन्धवो जवसा चक्रमन्त तथा त्वद्भियानाः शत्रवोः दूरं पलायन्तेऽधा या ते विश्वा सत्या आचरणानि धेनवो वाचो वृष्ण ऊध्नः प्र सिस्रते ता तू ह त्वं जवसा प्र साध्नुहि॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यस्य राज्ञोऽमोघा वाग्धर्म्यं कर्म्म वर्त्तते तस्माद्धेनुभ्यो वत्सा इव प्रजास्तृप्ता भवन्ति तस्माद् दुष्टा बिभ्यति यशश्च प्रथते॥६॥

पदार्थः-हे **(तुविनृम्ण)** बहुत धनवाले और **(वृषमणः)** बलयुक्त पुरुष के मन के सदृश मन से युक्त राजन्! जैसे **(सिन्धवः)** नदियाँ **(जवसा)** वेग से **(चक्रमन्त)** चलती हैं, वैसे **(त्वत्)** आपके समीप से **(भियानाः)** भय को प्राप्त शत्रु लोग दूर भागते हैं **(अधा)** इसके अनन्तर जो **(ते)** आपके **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(सत्या)** श्रेष्ठ पुरुषों में साधु कर्म्म अर्थात् उत्तम आचरण और **(धेनवः)** वाणियाँ **(वृष्णः)** ब्रह्मचर्य्य आदि से बलिष्ठ **(ऊध्नः)** विस्तीर्ण बलवालों को **(प्र, सिस्रते)** अच्छे प्रकार प्राप्त होती हैं **(ता)** उनको **(तू)** फिर **(ह)** निश्चय से आप वेग से **(प्र)** अत्यन्त सिद्ध करो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जिस राजा की सफल वाणी और धर्मयुक्त कर्म्म वर्तमान है, उससे गौओं से बछड़ों के सदृश प्रजा तृप्त होती है और उससे दुष्ट डरते हैं और यश विस्तृत होता है॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अत्राह॑ ते हरिव॒स्ता उ॑ दे॒वीरवो॑भिरिन्द्र स्तवन्त॒ स्वसा॑रः।

यत्सी॒मनु॒ प्र मु॒चो ब॑द्बधा॒ना दी॒र्घामनु॒ प्रसि॑तिं स्य॒न्द॒यध्यै॑॥७॥

अत्र॑। अह॑। ते॒। ह॒रि॒ऽव॒ः। ताः। ऊ॒म् इति॑। दे॒वीः। अवः॑ऽभिः। इ॒न्द्र॒। स्त॒व॒न्त॒। स्वसा॑रः। यत्। सी॒म्। अनु॑। प्र। मु॒चः। ब॒द्ब॒धा॒नाः। दी॒र्घाम्। अनु॑। प्रऽसि॑तिम्। स्य॒न्द॒यध्यै॑॥७॥

पदार्थः-**(अत्र)** अस्मिन् राज्ये **(अह)** विनिग्रहे **(ते)** तव **(हरिवः)** प्रशस्तपुरुषयुक्त **(ताः)** **(उ)** **(देवीः)** देदीप्यमाना विदुष्यस्स्त्रियः **(अवोभिः)** रक्षणादिभिः **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्ययुक्त राजन् **(स्तवन्त)** स्तुवन्ति **(स्वसारः)** अङ्गुल्य इव मैत्रीं भगिनित्वमाचरन्त्यः **(यत्)** याः **(सीम्)** सर्वतः **(अनु)** **(प्र)** **(मुचः)** मोचय **(बद्बधानाः)** प्रबन्धकर्त्र्यः **(दीर्घाम्)** लम्बीभूताम् **(अनु)** **(प्रसितिम्)** बन्धनम् **(स्यन्दयध्यै)** स्यन्दयितुं प्रस्रावयितुम्॥७॥

अन्वयः-हे हरिव इन्द्र! अत्राऽह यद्या ते बद्बधानाः स्वसार इव वर्त्तमाना विदुष्यस्स्त्रियः स्यन्दयध्यै दीर्घां प्रसितिमनु स्तवन्त ता उ देवीरवोभिः सीं दुःखबन्धनात्त्वमनु प्र मुचः॥७॥

भावार्थः-हे राजादयो मनुष्या! यथा भवन्तो ब्रह्मचर्य्येण विद्या अधीत्य राजनीत्या राज्यं पालयन्ति तथैव भवतां स्त्रियः स्त्रीणां न्यायं कुर्युरेवं कृते सति दृढो राजधर्मप्रबन्धो भवतीति वेद्यम्॥७॥

पदार्थः-हे **(हरिवः)** श्रेष्ठ पुरुषों से और **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त **(अत्र)** इस राज्य में **(अह)** ग्रहण करने में **(यत्)** जो **(ते)** आपकी **(बद्बधानाः)** प्रबन्ध करने वाली **(स्वसारः)** अङ्गुलियों के समान वर्तमान बहिनपने का आचरण करती और पढ़ी हुई स्त्रियाँ **(स्यन्दयध्यै)** बहाने को **(दीर्घाम्)** लम्बीभूत **(प्रसितिम्)** बन्धावट की **(अनु, स्तवन्त)** अनुकूल स्तुति करती हैं **(ताः, उ)** उन्हीं **(देवीः)** प्रकाशित पढ़ी हुई स्त्रियों को **(अवोभिः)** रक्षण आदि व्यवहारों से **(सीम्)** सब प्रकार दुःखरूप बन्धन

से आप (**अनु, प्र, मुचः**) अच्छे प्रकार छुड़ाइये॥७॥

भावार्थः-हे राजा आदि मनुष्यो! जैसे आप लोग ब्रह्मचर्य से विद्याओं को पढ़कर राजनीति से राज्य का पालन करते हैं, वैसे ही आप लोगों की स्त्रियाँ स्त्रियों का न्याय करें। ऐसा करने पर दृढ़ राज्यधर्म्म का प्रबन्ध होता है, ऐसा जानना चाहिये॥७॥

अथ राजनीत्यध्ययनेनाध्यापकविषयमाह॥

अब राजनीति के अध्ययन से अध्यापकविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पिपीळे अंशुर्मद्यो न सिन्धुरा त्वा शमी शशमानस्य शक्तिः।

अस्मद्र्यक् शुशुचानस्य यम्या आशुर्न रश्मिं तुव्योजसं गोः॥८॥

पिपीळे। अंशुः। मद्यः। न। सिन्धुः। आ। त्वा। शमी। शशमानस्य। शक्तिः। अस्मद्र्यक्। शुशुचानस्य। यम्याः। आशुः। न। रश्मिम्। तुविऽओजसम्। गोः॥८॥

पदार्थः-(**पिपीळे**) पीडयति (**अंशुः**) प्रापकः (**मद्यः**) आनन्दयिता (**न**) इव (**सिन्धुः**) नदीव (**आ**) (**त्वा**) त्वाम् (**शमी**) उत्तमं कर्म्म (**शशमानस्य**) अधर्ममुल्लङ्घतः (**शक्तिः**) सामर्थ्यम् (**अस्मद्र्यक्**) याऽस्मानञ्चति प्राप्नोति (**शुशुचानस्य**) भृशं शोधकस्य (**यम्याः**) रात्रयः। **यम्येति रात्रिनामसु पठितम्।** (निघं०१.७) (**आशुः**) शीघ्रगाम्यश्वः (**न**) इव (**रश्मिम्**) सूर्य्यप्रकाशम् (**तुव्योजसम्**) बहुबलपराक्रमम् (**गोः**) स्तावकस्य। **गौरिति स्तोतृनामसु पठितम्।** (निघं०३.१६)॥८॥

अन्वयः-हे राजन्! मद्यस्सिन्धुर्न यन्त्वामंशुराऽपिपीळे तस्य शशमानस्य शुशुचानस्य गोस्त आशुर्न यम्या रश्मिमिव याऽस्मद्र्यक् शक्तिरस्मान् पालयेत् सा शमी च तुव्योजसन्त्वाऽऽप्नोतु॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे प्रजाजना! ये स्वं राजानं पीडयेयुस्ते युष्माभिर्हन्तव्याः। यथा रात्रयो रश्मिं प्रानश्यन्ति तथैव धार्मिकस्य राज्ञो बलं प्राप्य शत्रवो निवर्त्तन्ते॥८॥

पदार्थः-हे राजन्! (**मद्यः**) आनन्दित कराने वाली (**सिन्धुः**) नदी जैसे (**न**) वैसे जिन आपको (**अंशुः**) पदार्थ पहुंचने वाला (**आ, पिपीळे**) पीड़ा देता है उन (**शशमानस्य**) अधर्म्म का उल्लङ्घन करने (**शुशुचानस्य**) अत्यन्त शोधने और (**गोः**) स्तुति करनेवाले आपके (**आशुः**) शीघ्र चलनेवाले घोड़े के (**न**) सदृश (**यम्याः**) रात्रियाँ (**रश्मिम्**) सूर्य्य के प्रकाश को जैसे वैसे जो (**अस्मद्र्यक्**) हम को प्राप्त होनेवाली (**शक्तिः**) सामर्थ्य हम लोगों का पालन करे वह और (**शमी**) उत्तम कर्म्म (**तुव्योजसम्**) बहुत बल और पराक्रमयुक्त (**त्वा**) आपको प्राप्त होवे॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे प्रजाजनो! जो लोग अपने राजा को पीड़ा देवें, वे आप लोगों से नाश करने योग्य हैं। और जैसे रात्रि[याँ] किरणों को नष्ट करती हैं, वैसे ही धार्म्मिक राजा के बल को प्राप्त होकर शत्रु दूर होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्मे वर्षिष्ठा कृणुहि ज्येष्ठा नृम्णानि सत्रा सहुरे सहांसि।

अस्मभ्यं वृत्रा सुहनानि रन्धि जहि वधर्वनुषो मर्त्यस्य॥ ९॥

अस्मे इति। वर्षिष्ठा। कृणुहि। ज्येष्ठा। नृम्णानि। सत्रा। सहुरे। सहांसि। अस्मभ्यम्। वृत्रा। सुऽहनानि। रन्धि। जहि। वधः। वनुषः। मर्त्यस्य॥ ९॥

पदार्थः-(**अस्मे**) अस्मासु (**वर्षिष्ठा**) अतिशयेन वृद्धानि (**कृणुहि**) कुरु (**ज्येष्ठा**) प्रशस्यानि (**नृम्णानि**) धनानि (**सत्रा**) सत्यानि (**सहुरे**) सहनशीलेन्द्र (**सहांसि**) सहनानि (**अस्मभ्यम्**) (**वृत्रा**) वृत्राणि मेघघना इव शत्रुसैन्यानि (**सुहनानि**) सुष्ठु हन्तुं योग्यानि (**रन्धि**) नाशय (**जहि**) दूरे प्रक्षिप (**वधः**) वधसाधनम् (**वनुषः**) सेवमानस्य (**मर्त्त्यस्य**)॥ ९॥

अन्वयः-हे सहुरे राजन्! यानि ते सत्रा वर्षिष्ठा ज्येष्ठा नृम्णानि सहांसि वर्त्तन्ते तान्यस्मे कृणुहि। अस्मभ्यं दुःखप्रदस्य वनुषो मर्त्त्यस्य वधर्जहि सुहनानि वृत्रेव शत्रुसैन्यानि रन्धि॥ ९॥

भावार्थः-हे राजादयो जना! यूयम्मिलित्वा प्रजापीडकस्य बलं घ्नत यानि स्वेषामुत्तमानि वस्तूनि तान्यस्मासु दधत यान्यस्माकमुत्तमानि रत्नानि तानि युष्मासु वयं धरेम॥ ९॥

पदार्थः-हे (**सहुरे**) सहनशील राजन्! जो आपके (**सत्रा**) सत्य (**वर्षिष्ठा**) अत्यन्त वृद्ध (**ज्येष्ठा**) प्रशंसा करने योग्य (**नृम्णानि**) धन (**सहांसि**) और सहन वर्त्तमान हैं उनको (**अस्मे**) हम लोगों में (**कृणुहि**) करो (**अस्मभ्यम्**) हम लोगों के लिये दुःख देने वाले (**वनुषः**) सेवा करते हुए (**मर्त्त्यस्य**) मनुष्य के (**वधः**) मारने के साधन को (**जहि**) दूर फेंको और (**सुहनानि**) उत्तम प्रकार नाश करने योग्य (**वृत्रा**) मेघ बादलों के समान शत्रुओं की सेनाओं का (**रन्धि**) नाश कीजिये॥ ९॥

भावार्थः-हे राजा आदि जनो! आप लोग मिल के प्रजा को पीड़ा देने वाले के बल का नाश करो और जो आप लोगों के उत्तम वस्तु उनको हम लोगों में धारण कीजिये और जो हम लोगों के उत्तम रत्न उनको आप लोग धरें॥ ९॥

अथोपदेशकविषयमाह॥

अब उपदेशकविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्माकमित्सु शृणुहि त्वमिन्द्रास्मभ्यं चित्राँ उप माहि वाजान्।

अस्मभ्यं विश्वा इषणः पुरंधीरस्माकं सु मघवन् बोधि गोदाः॥ १०॥

अस्माकम्। इत्। सु। शृणुहि। त्वम्। इन्द्र। अस्मभ्यम्। चित्रान्। उप। माहि। वाजान्। अस्मभ्यम्। विश्वाः। इषणः। पुरम्ऽधीः। अस्माकम्। सु। मघऽवन्। बोधि। गोऽदाः॥ १०॥

पदार्थः-**(अस्माकम्)** **(इत्)** एव **(सु)** **(शृणुहि)** **(त्वम्)** **(इन्द्र)** **(अस्मभ्यम्)** **(चित्रान्)** अद्भुतान् **(उप)** **(माहि)** मन्यस्व **(वाजान्)** अन्नादीन् **(अस्मभ्यम्)** **(विश्वाः)** समग्राः **(इषणः)** प्रेरय **(पुरन्धीः)** याः पुरूणि विज्ञानानि दधति ताः प्रज्ञाः **(अस्माकम्)** **(सु)** **(मघवन्)** **(बोधि)** बुध्यस्व **(गोदाः)** यो गां धेनुं ददाति सः॥१०॥

अन्वयः-हे मघवन्निन्द्र! त्वमस्माकं वचांसि सुशृणुह्यस्मभ्यं चित्रान् वाजानुप माह्यस्मभ्यं विश्वाः पुरन्धीरिदिषणोऽस्माकं गोदास्सन्नस्मान् सु बोधि॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येऽस्माकं न्यायवचांसि शृणवन्त्यस्मान् विदुषः प्रज्ञान् कुर्वन्ति तेषां सेवाऽस्माभिः सततं कार्य्या॥१०॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** बहुत धन से युक्त **(इन्द्र)** राजन् **(त्वम्)** आप **(अस्माकम्)** हम लोगों के वचनों को **(सु, शृणुहि)** उत्तम प्रकार सुनो और **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(चित्रान्)** अद्भुत **(वाजान्)** अन्न आदिक पदार्थों को **(उप, माहि)** उपमित कीजिये अर्थात् उत्तमता से मानिये और **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(विश्वाः)** सम्पूर्ण **(पुरन्धीः)** विज्ञानों को धारण करने वाली बुद्धियों को **(इत्)** ही **(इषणः)** प्रेरित करो और **(अस्माकम्)** हम लोगों के **(गोदाः)** गौ को देनेवाले होते हुए आप हम लागों को **(सु, बोधि)** उत्तम प्रकार जानिये॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो लोग हम लोगों के नीति के अनुकूल वचनों को सुनते और हम लोगों को विद्वान् करते हैं, उन लोगों की सेवा हम लोगों को चाहिये कि निरन्तर करें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो३ न पीपेः।

अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः॥११॥८॥

नु। स्तुतः। इन्द्र। नु। गृणानः। इषम्। जरित्रे। नद्यः। न। पीपेरिति पीपेः। अकारि। ते। हरिऽवः। ब्रह्म। नव्यम्। धिया। स्याम। रथ्यः। सदाऽसाः॥११॥

पदार्थः-**(नु)** **(स्तुतः)** प्रशंसितः **(इन्द्र)** यज्ञैश्वर्य्ययुक्त **(नु)** **(गृणानः)** **(इषम्)** अन्नम् **(जरित्रे)** विदुषे **(नद्यः)** सरितः **(न)** इव **(पीपेः)** वर्धय **(अकारि)** **(ते)** **(हरिवः)** प्रशस्तविद्यार्थियुक्त **(ब्रह्म)** धनम् **(नव्यम्)** नवीनं नवीनम् **(धिया)** **(स्याम)** **(रथ्यः)** **(सदासाः)**॥११॥

अन्वयः-हे हरिव इन्द्र! यतस्त्वं स्तुतस्सञ्जरित्र इषं दत्वा नद्यो न नु पीपेः। यतस्त्वमस्माभिर्गृणानो न्वकारि ते तुभ्यं नव्यं ब्रह्म दीयेत तस्माद् रथ्यः सदासा वयं धिया तव सखायः स्याम॥११॥

भावार्थ:-हे विद्वन्! यस्मात्त्वं सर्वेभ्यो विद्यां ददासि तस्मात्त्वया सह मैत्रीं कृत्वा तुभ्यं पुष्कलधनमन्नञ्च दत्वा सततं सत्कुर्याम॥११॥

अत्रेन्द्रपृथिवीधारणभ्रमणविद्वदध्यापकोपदेशकगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वाविंशत्तमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे **(हरिव:)** श्रेष्ठ विद्यार्थियों और **(इन्द्र)** यज्ञ के ऐश्वर्य्य से युक्त! जिससे आप **(स्तुत:)** प्रशंसित हुए **(जरित्रे)** विद्वान् पुरुष के लिये **(इषम्)** अन्न को देकर **(नद्य:)** नदियों के **(न)** सदृश **(नु)** शीघ्र **(पीपे:)** वृद्धि कराओ जिससे आप हम लोगों से **(गृणान:)** प्रशंसा करते हुए **(नु)** निश्चय **(अकारि)** किये गये और **(ते)** आपके लिये **(नव्यम्)** नवीन-नवीन **(ब्रह्म)** धन दिया जाय इससे **(रथ्य:)** रथयुक्त **(सदासा:)** दासों के सहित वर्त्तमान हम लोग **(धिया)** बुद्धि से आपके मित्र **(स्याम)** होवे॥११॥

भावार्थ:-हे विद्वन्! जिससे आप सब के लिये विद्या देते हो, इससे आपके साथ मित्रता करके आपके लिये बहुत धन और अन्न देकर निरन्तर सत्कार करें॥११॥

इस सूक्त के अर्थ में इन्द्र, पृथिवी, धारण, भ्रमण, विद्वान्, अध्यापक और उपदेशक के गुणवर्णन करने से इसके अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बाईसवां सूक्त और आठवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्य त्रयोविंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। १-७, ११ इन्द्रः। ८-१० इन्द्र ऋतदेवा देवताः। १-३, ७-९ त्रिष्टुप्। ४, १० निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५, ६ भुरिक् पङ्क्तिः। ११ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ प्रश्नोत्तरविषयमाह॥

अब ग्यारह ऋचा वाले तेईसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में प्रश्नोत्तरविषय को कहते हैं॥

कथा महामवृधत्कस्य होतुर्यज्ञं जुषाणो अभि सोममूधः।
पिबन्नुशानो जुषमाणो अन्धो ववक्ष ऋष्वः शुचते धनाय॥ १॥

कथा। महाम्। अवृधत्। कस्य। होतुः। यज्ञम्। जुषाणः। अभि। सोमम्। ऊधः। पिबन्। उशानः। जुषमाणः। अन्धः। ववक्षे। ऋष्वः। शुचते। धनाय॥ १॥

पदार्थः-(**कथा**) (**महाम्**) महान्तम् (**अवृधत्**) वर्धते (**कस्य**) (**होतुः**) न्यायादिकर्म्मकर्तुः (**यज्ञम्**) सङ्गन्तव्यं व्यवहारम् (**जुषाणः**) सेवमानः (**अभि**) (**सोमम्**) दुग्धादिरसम् (**ऊधः**) उत्कृष्टम् (**पिबन्**) (**उशानः**) कामयमानः (**जुषमाणः**) सेवमानः (**अन्धः**) अन्नम् (**ववक्षे**) वहति (**ऋष्वः**) महान् (**शुचते**) पवित्रयति विचारयति वा (**धनाय**)॥१॥

अन्वयः-हे विद्वन्! कस्य होतुर्महां यज्ञं जुषाणः कथाऽभ्यवृधत् य ऊधस्सोमं पिबन्नैश्वर्यमुशानोऽन्धो जुषमाणो ववक्ष ऋष्वस्सन् धनाय शुचते॥१॥

भावार्थः-हे विद्वन्! कस्मादधीत्य विद्यार्थी कथं वर्धेत कथं विद्यां सेवेत कश्च विद्वान् भवेदित्यस्य प्रश्नस्यः ब्रह्मचर्य्येण वीर्य्यं निगृह्य विद्यां कामयमान आचार्य्यमुपेत्य सेवां कृत्वा मिताऽऽहारविहारः सन्नरोगो: भूत्वा विद्याप्राप्तये भृशं प्रयतत इत्युत्तरम्॥१॥

पदार्थः-हे विद्वन्! (**कस्य**) किस (**होतुः**) न्याय आदि कर्म्म करनेवाले के (**महाम्**) बड़े (**यज्ञम्**) मेल करने योग्य व्यवहार का (**जुषाणः**) सेवन करता हुआ (**कथा**) किस प्रकार से (**अभि, अवृधत्**) बढ़ता और जो (**ऊधः**) उत्तम (**सोमम्**) दुग्ध आदि रस को (**पिबन्**) पीता ऐश्वर्य की (**उशानः**) कामना करता और (**अन्धः**) अन्न की (**जुषमाणः**) सेवा करता हुआ (**ववक्षे**) पदार्थ पहुंचाता है (**ऋष्वः**) तथा बड़ा हुआ (**धनाय**) धन के लिये (**शुचते**) पवित्र कराता विचार कराता है॥१॥

भावार्थः-हे विद्वन्! किससे पढ़कर विद्यार्थी कैसे बढ़े? कैसे विद्या का सेवन करे? और कौन विद्वान् होवे? इस प्रश्न का, ब्रह्मचर्य्य से वीर्य्य का निग्रह करके, विद्या की कामना करता हुआ, आचार्य्य के समीप जा और सेवा करके, नियत आहार-विहार युक्त हुआ, रोगरहित होकर, विद्या की प्राप्ति के लिये अत्यन्त प्रयत्न करता है, यह उत्तर है॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

को अस्य वीरः सधमादमाप समानंश सुमतिभिः को अस्य।

कदस्य चित्रं चिकिते कदूती वृधे भुवच्छशमानस्य यज्योः॥२॥

कः। अस्य। वीरः। सधऽमादम्। आप। सम्। आनंश। सुमतिऽभिः। कः। अस्य। कत्। अस्य। चित्रम्। चिकिते। कत्। ऊती। वृधे। भुवत्। शशमानस्य। यज्योः॥२॥

पदार्थः-(**कः**) (**अस्य**) अध्यापकस्य राज्ञो वा (**वीरः**) विद्यया प्राप्तशरीरात्मबलः (**सधमादम्**) सहाऽऽनन्दम् (**आप**) आप्नुयात् (**सम्**) (**आनंश**) प्राप्नोति (**सुमतिभिः**) श्रेष्ठैर्विद्वद्भिस्सह (**कः**) (**अस्य**) (**कत्**) कदा (**अस्य**) (**चित्रम्**) अद्भुतं विज्ञानम् (**चिकिते**) जानाति (**कत्**) (**ऊती**) ऊत्या रक्षणाद्येन (**वृधे**) वृद्धये (**भुवत्**) भवेत् (**शशमानस्य**) प्रशंसितस्य (**यज्योः**) सङ्गन्तुमर्हस्य सत्यव्यवहारस्य॥२॥

अन्वयः-हे विद्वन्! को वीरोऽस्य सधमादमाप को वीरोऽस्य सुमतिभिश्चित्रं चिकिते कदस्य विद्यां समानंश को वीर ऊती शशमानस्य यज्योर्वृधे कद्भुवत्॥२॥

भावार्थः-हे विद्वन् राजन् वा! कः केन सह पठेत् कः केन सह न्यायं कुर्याद् युद्धयेद्वा क एषां वरिष्ठ इति प्रश्नस्य ये प्रशंसितकर्म्मणामनुष्ठातारो वर्धकाः स्युरित्युत्तरम्॥२॥

पदार्थः-हे विद्वन्! (**कः**) कौन (**वीरः**) विद्या से प्राप्त शरीर और आत्मबलयुक्त (**अस्य**) इस अध्यापक वा राजा के (**सधमादम्**) साथ आनन्द को (**आप**) प्राप्त होवे (**कः**) कौन वीर (**अस्य**) इसके (**सुमतिभिः**) श्रेष्ठ विद्वानों के साथ (**चित्रम्**) अद्भुत विज्ञान को (**चिकिते**) जानता है (**कत्**) कब (**अस्य**) इसको विद्या को (**सम्, आनंश**) प्राप्त होता है और कौन वीर (**ऊती**) रक्षण आदि से (**शशमानस्य**) प्रशंसित (**यज्योः**) संगम करने योग्य सत्य व्यवहार की (**वृधे**) वृद्धि के लिये (**कत्**) कब (**भुवत्**) होवे॥२॥

भावार्थः-हे विद्वन् वा राजन्! कौन किसके साथ पढ़े? कौन किसके साथ न्याय करे? वा युद्ध करे? कौन इनमें श्रेष्ठ? इस प्रश्न का जो प्रशंसित कर्म्मों के अनुष्ठान और वृद्धि करने वाले होवें, यह उत्तर है॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कथा शृणोति हूयमानमिन्द्रः कथा शृण्वन्नवसामस्य वेद।

का अस्य पूर्वीरुपमातयो ह कथैनमाहुः पपुरिं जरित्रे॥३॥

कथा। शृणोति। हूयमानम्। इन्द्रः। कथा। शृण्वन्। अवसाम्। अस्य। वेद। काः। अस्य। पूर्वीः। उपऽमातयः। ह। कथा। एनम्। आहुः। पपुरिम्। जरित्रे॥३॥

पदार्थः-(**कथा**) केन प्रकारेण (**शृणोति**) (**हूयमानम्**) स्पर्द्धमानम् (**इन्द्रः**) अध्यापको राजा वा (**कथा**) (**शृण्वन्**) (**अवसाम्**) रक्षणादीनाम् (**अस्य**) (**वेद**) जानीयात् (**काः**) (**अस्य**) (**पूर्वीः**) प्राचीनाः (**उपमातयः**) उपमाः (**ह**) खलु (**कथा**) (**एनम्**) (**आहुः**) (**पपुरिम्**) पालकम् (**जरित्रे**) विदुषे॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! इन्द्रो हूयमानं कथा शृणोति शृण्वन्नस्याऽवसां हूयमानं कथा वेदाऽस्य पूर्वीरुपमातयो ह काः सन्ति। अथैनं जरित्रे पपुरिं कथाऽऽहुरिति प्रष्टव्यम्॥३॥

भावार्थः-ये विद्यार्थिनो राजजनाश्चाऽऽप्तानां वचांसि शास्त्राणि सम्यक्छ्रुत्वा मत्वा निश्चित्य पुनः कर्म्माऽऽरभन्ते त एव सर्वं वेदितव्यं विजानन्ति॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**इन्द्रः**) अध्यापक वा राजा (**हूयमानम्**) स्पर्द्धा करते हुए को (**कथा**) किस प्रकार (**शृणोति**) सुनता है और (**शृण्वन्**) सुनता हुआ (**अस्य**) इसके (**अवसाम्**) रक्षण आदिकों की स्पर्द्धा करते हुए को (**कथा**) किस प्रकार से (**वेद**) जाने (**अस्य**) इसकी (**पूर्वीः**) प्राचीन (**उपमातयः**) उपमा (**ह**) ही (**काः**) कौन हैं? अनन्तर (**एनम्**) इसको (**जरित्रे**) विद्वान् के लिये (**पपुरिम्**) पालन करने वाला (**कथा**) किस प्रकार (**आहुः**) कहते हैं, ऐसा पूछना चाहिए॥३॥

भावार्थः-जो विद्यार्थी और राजा के जन यथार्थवक्ता पुरुषों के वचनों के शास्त्रों को उत्तम प्रकार सुन, मान और निश्चय करके पुनः कर्मों का आरम्भ करते हैं, वे ही सम्पूर्ण जानने योग्य को जानते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कथा सबाधः शशमानो अस्य नशदभि द्रविणं दीध्यानः।

देवो भुवन्नवेदा म ऋतानां नमो जगृभ्वाँ अभि यज्जुजोषत्॥४॥

कथा। सऽबाधः। शशमानः। अस्य। नशत्। अभि। द्रविणम्। दीध्यानः। देवः। भुवत्। नवेदाः। मे। ऋतानाम्। नमः। जगृभ्वान्। अभि। यत्। जुजोषत्॥४॥

पदार्थः-(**कथा**) (**सबाधः**) बाधेन सह वर्त्तमानः (**शशमानः**) प्रशंसन् (**अस्य**) (**नशत्**) नश्यति (**अभि**) (**द्रविणम्**) धनम् (**दीध्यानः**) प्रकाशयन् (**देवः**) विद्वान् (**भुवत्**) भवेत् (**नवेदाः**) यो न वेत्ति सः (**मे**) मम (**ऋतानाम्**) सत्यानाम् (**नमः**) अन्नम् (**जगृभ्वान्**) गृहीतवान् (**अभि**) (**यत्**) यः (**जुजोषत्**) सेवते॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! अस्य सबाधः कथा नशद् द्रविणमभि दीध्यानः शशमानो देवः कथा भुवन्नवेदा म ऋतानां नमो जगृभ्वान् यद्यः स कथाऽभि जुजोषत्॥४॥

भावार्थः-हे अध्यापक राजन् वा! कथमेतान् विद्याऽभयं वा प्राप्नुयात्। कथमिमे विद्वांसो भवेयुरिति प्रश्नस्य ये सत्कारेण सत्पुरुषेभ्यः शिक्षां गृहीत्वा धर्म्मं सेवेरन्नित्युत्तरम्॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(अस्य)** इस का **(सबाधः)** बाधसहित अर्थात् दुःख के सहित वर्त्तमान **(कथा)** किस प्रकार से **(नशत्)** नष्ट होता है **(द्रविणम्)** धन का **(अभि, दीध्यानः)** सब ओर से प्रकाश और **(शशमानः)** प्रशंसा करता हुआ **(देवः)** विद्वान् किस प्रकार **(भुवत्)** होवे **(नवेदाः)** नहीं जाननेवाला जन **(मे)** मेरे **(ऋतानाम्)** सत्य व्यवहारों के सम्बन्ध में **(नमः)** अन्न को **(जगृभ्वान्)** ग्रहण किये हुए **(यत्)** जो जन वह किस प्रकार से **(अभि, जुजोषत्)** सेवन करता है॥४॥

भावार्थः-हे अध्यापक वा राजन्! किस प्रकार से इस विद्या वा अभय को प्राप्त होवे? और किस प्रकार से ये विद्वान् होवें? इस प्रश्न का, जो सत्कार से श्रेष्ठ पुरुषों से शिक्षा को ग्रहण करके धर्म्म का सेवन करें, यह उत्तर है॥४॥

अथ प्रश्नोत्तराभ्याम्मैत्रीकरणविषयमाह॥

अब प्रश्नोत्तर से मैत्रीकरणविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कथा कदस्या उषसो व्युष्टौ देवो मर्तस्य सख्यं जुजोष।

कथा कदस्य सख्यं सखिभ्यो ये अस्मिन् कामं सुयुजं ततस्रे॥५॥९॥

कथा। कत्। अस्याः। उषसः। विऽउष्टौ। देवः। मर्तस्य। सख्यम्। जुजोष। कथा। कत्। अस्य। सख्यम्। सखिऽभ्यः। ये। अस्मिन्। कामम्। सुऽयुजम्। ततस्रे॥५॥

पदार्थः-**(कथा)** **(कत्)** **(अस्याः)** वर्त्तमानायाः **(उषसः)** प्रातर्वेलायाः **(व्युष्टौ)** विशेषदीप्तौ **(देवः)** सूर्य्य इव विद्वान् **(मर्त्तस्य)** मनुष्यस्य **(सख्यम्)** सख्युर्भावं कर्म्म वा **(जुजोष)** सेवते **(कथा)** **(कत्)** कदा **(अस्य)** **(सख्यम्)** सख्युर्भावं कर्म्म वा **(सखिभ्यः)** मित्रेभ्यः **(ये)** **(अस्मिन्)** मित्रभावकर्म्मणि **(कामम्)** इच्छाम् **(सुयुजम्)** सुष्ठु योक्तुमर्हम् **(ततस्रे)** तन्वन्ति॥५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! देवो विद्वानस्या उषसो व्युष्टौ मर्त्तस्य सख्यं कत्कथा जुजोष तेभ्यः सखिभ्योऽस्य सख्यं कत् कथा भवितुं योग्यं येऽस्मिन्त्सुयुजं कामं ततस्रे॥५॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! मनुष्यैः केन सह कदा मित्रता कथं मित्रत्वनिर्वाहं कर्त्तव्यः। सखिभिस्सह कथं वर्त्तितव्यमिति प्रश्नस्य यदा सम्यक् परीक्षां कुर्य्यात्तदा तेन सह मैत्रीं ये चाऽस्मिञ्जगति सर्वैस्सह मित्राचारं कर्त्तुं कामयन्ते तैः सह सदैव सखित्वं रक्षणीयम्॥५॥

पदार्थः-हे विद्वज्जनो **(देवः)** सूर्य्य के सदृश विद्वान् **(अस्याः)** इस वर्त्तमान **(उषसः)** प्रातःकाल के **(व्युष्टौ)** विशेष प्रकाश में **(मर्त्तस्य)** मनुष्य के **(सख्यम्)** मित्रपने वा मित्र के कर्म का **(कत्)** कब **(कथा)** किस प्रकार **(जुजोष)** सेवन करता है उन **(सखिभ्यः)** मित्रों के लिये **(अस्य)** इस का **(सख्यम्)** मित्रपन वा मित्रकर्म्म **(कत्)** कब **(कथा)** किस प्रकार से होने के योग्य है **(ये)** जो **(अस्मिन्)** इस

मित्रपने रूप कर्म्म में **(सुयुजम्)** उत्तम प्रकार मिलाने के योग्य **(कामम्)** इच्छा का **(ततस्रे)** विस्तार करते हैं॥५॥

भावार्थ:-हे विद्वानो! मनुष्यों को किसके साथ कब मित्रता और किस प्रकार मित्रता का निर्वाह करना चाहिये और मित्रों के साथ कैसे वर्त्तना चाहिये? इस प्रश्न का यह उत्तर है कि जब उत्तम प्रकार परीक्षा करे, तब उसके साथ मित्रता करे और जो इस जगत् में सबके साथ मित्राचार करने की कामना करते हैं, उनके साथ सदा ही मित्रता की रक्षा करनी चाहिये॥५॥

पुनर्मैत्रीकरणविषयमाह॥

फिर भी मैत्रीकरणविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

किमादमंत्रं सुख्यं सखिभ्यः कुदा नु ते भ्रात्रं प्र ब्रवाम।

श्रिये सुदृशो वपुरस्य सर्गाः स्वर्ण चित्रतममिष आ गोः॥६॥

किम्। आत्। अमत्रम्। सुख्यम्। सखिऽभ्यः। कुदा। नु। ते। भ्रात्रम्। प्र। ब्रवाम। श्रिये। सुऽदृशः। वपुः। अस्य। सर्गाः। स्वः। न। चित्रऽतमम्। इषे। आ। गोः॥६॥

पदार्थ:-**(किम्) (आत्)** आनन्तर्ये **(अमत्रम्)** सुपात्रम् **(सख्यम्) (सखिभ्यः) (कदा) (नु) (ते)** तव **(भ्रात्रम्)** भ्रातुरिदं कर्म्म तद्वद्वर्त्तमानम् **(प्र) (ब्रवाम)** उपदिशेम **(श्रिये)** सेवायै धनाय वा **(सुदृशः)** सुष्ठु द्रष्टव्यस्य **(वपुः)** सुरूपं शरीरम् **(अस्य) (सर्गाः)** सृष्टयः **(स्वः)** सुखम् **(न)** इव **(चित्रतमम्)** अतिशयेनाश्चर्य्यरूपम् **(इषे)** इच्छायै **(आ) (गोः)** पृथिव्यादेः॥६॥

अन्वय:-हे विद्वन् राजन् वा! ते सखिभ्यो भ्रात्रं सख्यं कदा नु प्र ब्रवामाऽऽत् किममत्रं ते सखिभ्यः प्रब्रवाम। ये सुदृशोऽस्य श्रिये आ गोस्सर्गा वपुरिषे सन्ति तद्विज्ञानं चित्रतमं स्वर्ण वर्त्तत इति प्रब्रवाम॥६॥

भावार्थ:-सर्वैर्मनुष्यैराप्तानां विदुषां मित्रता सदैव कार्या यतस्ते सदुपदेशेन सर्वान् सृष्टिविद्याविदो धर्म्मात्मनः सम्पाद्यातीवोत्तमं विज्ञानं दत्वा सुखिनः कुर्य्युरिति॥६॥

पदार्थ:-हे विद्वन् वा राजन्! **(ते)** आपके **(सखिभ्यः)** मित्रों के लिये **(भ्रात्रम्)** भ्रातृसम्बन्धि कर्म्म के सदृश वर्त्तमान **(सख्यम्)** मित्रपने वा मित्र के कर्म्म का **(कदा)** कब **(नु)** शीघ्र **(प्र, ब्रवाम)** उपदेश देवें **(आत्)** इसके अनन्तर **(किम्)** किस **(अमत्रम्)** सुपात्र का आपके मित्रों के लिये उपदेश देवें और जो **(सुदृशः)** उत्तम प्रकार देखने योग्य **(अन्य)** इसकी **(श्रिये)** सेवा वा धन के लिये **(आ, गोः)** पृथिवी से लेकर **(सर्गाः)** सृष्टियाँ **(वपुः)** उत्तम रूपयुक्त शरीर की **(इषे)** इच्छा के लिये हैं, उनका विज्ञान **(चित्रतमम्)** अत्यन्त आश्चर्य्यरूप **(स्वः)** सुख के **(न)** सदृश वर्त्तमान है, ऐसा उपदेश देवें॥६॥

भावार्थ:-सब मनुष्यों को चाहिये कि यथार्थवक्ता विद्वानों से मित्रता सदा ही करें, जिससे वे उत्तम उपदेश से सब को सृष्टिविद्या के जाननेवाले धर्म्मात्मा करके बहुत ही उत्तम विज्ञान को देकर सुखी

करें॥६॥

अथ शत्रुनिवारणसेनोन्नतिविषयमाह॥

अब शत्रुनिवारण के अनुकूल सेना की उन्नति के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

द्रुहं जिघांसन् ध्वरसमनिन्द्रां तेतिक्ते तिग्मा तुजसे अनीका।

ऋणा चिद्यत्र ऋणया न उग्रो दूरे अज्ञाता उषसो बबाधे॥७॥

द्रुहम्। जिघांसन्। ध्वरसम्। अनिन्द्राम्। तेतिक्ते। तिग्मा। तुजसे। अनीका। ऋणा। चित्। यत्र। ऋणऽयाः। नः। उग्रः। दूरे। अज्ञाताः। उषसः। बबाधे॥७॥

पदार्थः-(**द्रुहम्**) द्रोग्धारम् (**जिघांसन्**) हन्तुमिच्छन् (**ध्वरसम्**) हिंसकम् (**अनिन्द्राम्**) अनीश्वरीं गतिम् (**तेतिक्ते**) भृशं तीक्ष्णं करोति (**तिग्मा**) तिग्मानि तीव्राणि (**तुजसे**) बलाय शत्रूणां हिंसनाय वा (**अनीका**) शत्रुभिः प्राप्तुमनर्हाणि सैन्यानि (**ऋणा**) प्राप्तानि (**चित्**) अपि (**यत्र**) (**ऋणयाः**) प्राप्तया सेनया (**नः**) अस्माकम् (**उग्रः**) तीव्रः प्रभावः (**दूरे**) विप्रकृष्टे (**अज्ञाताः**) न ज्ञाताः (**उषसः**) प्रभातान् (**बबाधे**) बाधते॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यत्र नो य उग्रो दूरेऽज्ञाताः शत्रुसेना उषसस्तमः सूर्य्य इव बबाध ऋणयाश्चित् तुजसे तिग्मा ऋणा अनीका तेतिक्ते द्रुहं ध्वरसं जिघांसन्ननिन्द्रां बबाधे॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! ये सुशिक्षितान्युत्तमानि शत्रूणां सद्यः पराजयकराणि सैन्यानि सम्पादयेयुर्यतोऽदूरेऽपि सन्तः शत्रवो बिभियुर्दारिद्र्यं भयञ्च दूरीकृत्य स्वप्रजाश्चाऽऽनन्द्य दुष्टान् सततं हिंस्युस्तांस्त्वं सदैव सत्कुर्याः॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यत्र**) जहाँ (**नः**) हम लोगों का जो (**उग्रः**) तीव्र प्रताप (**दूरे**) दूर स्थान में (**अज्ञाताः**) नहीं जानी गई शत्रुओं की सेनाओं को (**उषसः**) प्रातःकाल से अन्धकार को जैसे सूर्य्य वैसे (**बबाधे**) विलोता है (**ऋणयाः**) प्राप्त सेना से (**चित्**) भी (**तुजसे**) बल के लिये अथवा शत्रुओं के नाश के लिये (**तिग्मा**) तीव्र (**ऋणा**) प्राप्त (**अनीका**) शत्रुओं से प्राप्त नहीं होने योग्य सैन्यसमूहों को (**तेतिक्ते**) अत्यन्त तीक्ष्ण करता है (**द्रुहम्**) द्रोह करने और (**ध्वरसम्**) हिंसा करनेवाले को (**जिघांसन्**) नष्ट करने की इच्छा करता हुआ (**अनिन्द्राम्**) ईश्वरसम्बन्धरहित मार्ग को (**बबाधे**) विलोता है॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जो लोग उत्तम प्रकार शिक्षित, श्रेष्ठ, शत्रुओं को शीघ्र पराजय करने वाली सेनाओं को सिद्ध करें, जिनसे दूर स्थान में भी वर्त्तमान शत्रु लोग डरें, दारिद्र्य और भय को दूरकर अपनी प्रजा को आनन्द देकर दुष्टों का निरन्तर नाश करें, उनका आप सदा ही सत्कार करो॥७॥

अथ सत्याचरणोत्तमताविषयमाह॥

अब सत्याचरणोत्तमता विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋतस्य हि शुरुधः सन्ति पूर्वीर्ऋतस्य धीतिर्वृजिनानि हन्ति।
ऋतस्य श्लोको बधिरा ततर्द कर्णा बुधानः शुचमान आयोः॥८॥

ऋतस्य। हि। शुरुधः। सन्ति। पूर्वीः। ऋतस्य। धीतिः। वृजिनानि। हन्ति। ऋतस्य। श्लोकः। बधिरा। ततर्द। कर्णा। बुधानः। शुचमानः। आयोः॥८॥

पदार्थः-(**ऋतस्य**) सत्यस्य (**हि**) यतः (**शुरुधः**) याः शु सद्यो रुन्धन्ति ताः स्वसेनाः। **शुरुध इति पदनामसु पठितम्।** (निघं०४.३) (**सन्ति**) (**पूर्वीः**) प्राचीनाः (**ऋतस्य**) यथार्थस्य (**धीतिः**) धारणावती प्रज्ञा (**वृजिनानि**) बलानि। **वृजिनमिति बलनामसु पठितम्।** (निघं०२.९) (**हन्ति**) (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**श्लोकः**) वाक्। **श्लोक इति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११) (**बधिरा**) बधिराणि (**ततर्द**) हिनस्ति (**कर्णा**) कर्णानि (**बुधानः**) बोधयन् (**शुचमानः**) पवित्रः पवित्रयन् (**आयोः**) जीवनस्य॥८॥

अन्वयः-हे राजन्! यस्यर्त्तस्य सत्याचारस्य पूर्वीः शुरुधः सन्ति यस्यर्त्तस्य धीतिर्वृजिनानि प्राप्य शत्रून् हन्ति यस्यर्त्तस्य श्लोको बधिरा कर्णा ततर्द योऽन्यान् बुधानः शुचमान आयोर्जीवनस्योपायानुपदिशति तं हि गुरुवत् सत्कुर्य्याः॥८॥

भावार्थः-हे अध्यापक राजन् वा! ये जितेन्द्रिया दुष्टाचारस्य निरोधकाः सत्यस्य प्रचारकाः सत्यवाचो बधिरवद्वर्त्तमानाज्ञान् बोधयन्तो ब्रह्मचर्य्याद्युपदेशेन दीर्घायुषः सम्पादयन्तः क्लेशानां शत्रूणाञ्च हन्तारः स्युस्त एव स्वात्मवन्माननीयाः स्युः॥८॥

पदार्थः-हे राजन्! जिस (**ऋतस्य**) सत्य आचार की (**पूर्वीः**) प्राचीन (**शुरुधः**) शीघ्र रोकने वाली अपनी सेना (**सन्ति**) हैं जिस (**ऋतस्य**) सत्य की (**धीतिः**) धारणा करने वाली बुद्धि (**वृजिनानि**) बलों को प्राप्त होकर शत्रुओं का (**हन्ति**) नाश करती है और जिसे (**ऋतस्य**) सत्य की (**श्लोकः**) वाणी (**बधिरा**) बधिर (**कर्णा**) कर्णों का (**ततर्द**) नाश करती है और जो अन्य जनों को (**बुधानः**) जनाता और (**शुचमानः**) पवित्र होकर पवित्र करता हुआ (**आयोः**) जीवन के उपायों का उपदेश देता है, उसका (**हि**) जिससे गुरु के सदृश सत्कार करो॥८॥

भावार्थः-हे अध्यापक वा राजन्! जो जितेन्द्रिय दुष्ट आचार के रोकने और सत्य के प्रचार करने वाले सत्यवाणीयुक्त और बधिर के सदृश वर्त्तमान अज्ञ पुरुषों को बोध देते हुए ब्रह्मचर्य्य आदि उपदेश से अधिक अवस्था वाले करते हुए क्लेश और शत्रुओं के नाश करनेवाले होवें, वे ही अपने आत्मा के सदृश आदर करने योग्य होवें॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋतस्य दृळ्हा धरुणानि सन्ति पुरूणि चन्द्रा वपुषे वपूंषि।

ऋतेन दीर्घमिषणन्त पृक्ष ऋतेन गाव ऋतमा विवेशुः॥९॥

ऋतस्य। दृळ्हा। धरुणानि। सन्ति। पुरूणि। चन्द्रा। वपुषे। वपूंषि। ऋतेन। दीर्घम्। इषणन्त। पृक्षः। ऋतेन। गावः। ऋतम्। आ। विवेशुः॥९॥

पदार्थः-(**ऋतस्य**) सत्यस्य धर्म्मस्य (**दृळ्हा**) दृढानि (**धरुणानि**) उदकानीव शान्तान्याचरणानि। **धरुणमित्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२) (**सन्ति**) (**पुरूणि**) बहूनि (**चन्द्रा**) आह्लादकानि सुवर्णादीनि (**वपुषे**) सुरूपाय शरीराय (**वपूंषि**) रूपाणि (**ऋतेन**) सत्याचरणेन (**दीर्घम्**) चिरञ्जीविनम् (**इषणन्त**) प्राप्नुवन्ति (**पृक्षः**) संस्पृष्टव्यमन्नादिकम् (**ऋतेन**) सत्याचरणेन (**गावः**) धेनवो वत्सस्थानानीव सुशिक्षिता वाचः (**ऋतम्**) सत्यं ब्रह्म (**आ**) (**विवेशुः**) आविशन्ति॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ऋतस्याचरणेनैव दृळ्हा धरुणानि पुरूणि चन्द्रा वपुषे वपूंषि प्राप्तानि सन्ति। ऋतेन पृक्षो दीर्घञ्चायुरिषणन्त ऋतेन गाव ऋतमाविवेशुरिति विजानीत॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा जलेन प्राणधारणमन्नाद्युत्पत्तिः सुरूपं दीर्घमायुश्च जायते तथैव सत्याचारेण सकलैश्वर्य्यं विद्या चिरञ्जीवनञ्च भवति यतः सततं सत्यमेवाऽऽचरत॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**ऋतस्य**) सत्य धर्म्म के आचरण से हो (**दृळ्हा**) दृढ़ (**धरुणानि**) जलों के सदृश शान्त आचार (**पुरूणि**) बहुत (**चन्द्रा**) आनन्द देने वाले सुवर्ण आदि (**वपुषे**) सुन्दर रूपयुक्त शरीर के लिये (**वपूंषि**) रूपों को प्राप्त (**सन्ति**) हैं और (**ऋतेन**) सत्य आचरण से (**पृक्षः**) उत्तम प्रकार स्पर्श होने योग्य अन्न आदिक (**दीर्घम्**) चिरकाल रहने वाले आयु को (**इषणन्त**) प्राप्त होते हैं (**ऋतेन**) सत्य आचरण से (**गावः**) गौवें जैसे बछड़ों के स्थानों को वैसे उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियाँ (**ऋतम्**) सत्य ब्रह्म को (**आ, विवेशुः**) प्राप्त होती हैं, ऐसा जानो॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे जल से प्राणधारण, अन्न आदि की उत्पत्ति और सुन्दर और दीर्घ अवस्था होती है, वैसे ही सत्य आचरण से सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य, विद्या और बहुत काल पर्य्यन्त जीवन होता है, जिससे निरन्तर सत्य ही का आचरण करो॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋतं येमान ऋतमिद्वनोत्यृतस्य शुष्मस्तुरया उ गव्युः।
ऋताय पृथ्वी बहुले गभीरे ऋताय धेनू परमे दुहाते॥१०॥

ऋतम्। येमानः। ऋतम्। इत्। वनोति। ऋतस्य। शुष्मः। तुरऽयाः। ऊम् इति। गव्युः। ऋताय। पृथ्वी इति। बहुले इति। गभीरे इति। ऋताय। धेनू इति। परमे इति। दुहाते इति॥१०॥

पदार्थः-(**ऋतम्**) सत्यम् (**येमानः**) नियमयन्तः (**ऋतम्**) (**इत्**) एव (**वनोति**) याचते (**ऋतस्य**) (**शुष्मः**) बलम् (**तुरयाः**) शीघ्रतां प्राप्तम् (**उ**) (**गव्युः**) य आत्मनो गां पृथ्वीं वाचं वेच्छुः (**ऋताय**) सत्याय जलाय वा (**पृथ्वी**) भूम्यन्तरिक्षे (**बहुले**) बहुपदार्थयुक्ते (**गभीरे**) गम्भीराश्रये (**ऋताय**) सत्याय (**धेनू**) गावाविव वर्त्तमाने (**परमे**) प्रकृष्टे (**दुहाते**) प्रातः॥१०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथर्त्ताय बहुले गभीरे पृथ्वी यथर्त्ताय परमे धेनू दुहाते तथर्तं ये येमानस्तथर्त्तं यो वनोति तथर्त्तस्य यः शुष्मस्तुरया उ गव्युरस्ति त इत् सदैव पूर्णं सुखं लभन्ते॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये मनुष्यशरीरं प्राप्य नियमेन सत्याचारं सत्ययाञ्चा कृत्वा सद्यो धार्मिका जायन्ते भूमिसूर्य्यवत् सर्वेषां कामपूर्तिं कर्त्तुं शक्नुवन्ति॥१०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**ऋताय**) सत्य के लिये (**बहुले**) बहुत पदार्थों से युक्त (**गभीरे**) गम्भीर आश्रय में (**पृथ्वी**) भूमि और अन्तरिक्ष तथा जैसे (**ऋताय**) सत्य और जल के लिये (**परमे**) अति उत्तम (**धेनू**) गौओं के सदृश वर्त्तमान (**दुहाते**) प्रातःकाल वैसे (**ऋतम्**) सत्य को जो (**येमानः**) नियम करते हुए और वैसे (**ऋतम्**) सत्य की जो (**वनोति**) याचना करता है तथा (**ऋतस्य**) सत्य के जो (**शुष्मः**) बल को (**तुरयाः**) शीघ्रता को प्राप्त (**उ**) और (**गव्युः**) निज सम्बन्धिनी पृथिवी वा वाणी को चाहनेवाला है, वे (**इत्**) ही सर्वदा पूर्ण सुख को प्राप्त होते हैं॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो लोग मनुष्य के शरीर को प्राप्त होकर नियम से सत्य आचार, सत्य याञ्चा करके शीघ्र धार्मिक होते हैं, वे भूमि और सूर्य्य के सदृश सब की कामना की पूर्ति कर सकते हैं॥१०॥

पुनः प्रशंसापरत्वेन पूर्वविषयमाह॥

फिर प्रशंसापरत्व से पूर्व विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो३ न पीपेः।

अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः॥११॥१०॥

नु। स्तुतः। इन्द्र। नु। गृणानः। इषम्। जरित्रे। नद्यः। न। पीपेरिति पीपेः। अकारि। ते। हरिऽवः। ब्रह्म। नव्यम्। धिया। स्याम। रथ्यः। सदाऽसाः॥११॥

पदार्थः-(**नु**) (**स्तुतः**) सत्याचारेण प्रशंसितः (**इन्द्र**) सत्यैश्वर्य्यप्रद (**नु**) (**गृणानः**) सत्याचारं स्तुवन् (**इषम्**) विज्ञानम् (**जरित्रे**) विद्यामिच्छुकाय (**नद्यः**) (**न**) इव (**पीपेः**) (**अकारि**) (**ते**) (**हरिवः**) (**ब्रह्म**) बृहद्विद्याधनम् (**नव्यम्**) (**धिया**) प्रज्ञया (**स्याम**) (**रथ्यः**) (**सदासाः**)॥११॥

अन्वयः-हे हरिव इन्द्र! यस्य ते नव्यम्ब्रह्म येनाऽकारि तस्मै जरित्रे स्तुतो नद्यो नेषं दत्वा नु पीपेः सत्यं गृणानो धर्म्मं प्रापय्य नु पीपेः यथा वयं धिया पुरुषार्थेन रथ्यः सदासाः स्याम तथा त्वं भव॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये यथा युष्मासु धर्म्यां नीतिं स्थापयेयुस्तेषां सेवां कृत्वा सखायो भूत्वा सर्वा विद्या विजानीतेति॥११॥

अत्र प्रश्नोत्तरमैत्रीशत्रुनिवारणसेनोन्नतिसत्याचारोत्कर्षवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रयोविंशतितमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्तः।

पदार्थः-हे **(हरिवः)** बहुत धनयुक्त **(इन्द्र)** सत्य ऐश्वर्य्य के देने वाले जिस **(ते)** आपका **(नव्यम्)** नवीन **(ब्रह्म)** बड़ा विद्यारूप धन जिसने **(अकारि)** किया उस **(जरित्रे)** विद्या की इच्छा करने वाले के लिये **(स्तुतः)** सत्य आचरण से प्रशंसित **(नद्यः)** नदियों के **(न)** सदृश **(इषम्)** विज्ञान को देकर **(नु)** शीघ्र **(पीपेः)** पालन करे और सत्य का **(गृणानः)** प्रचार करता हुआ धर्म्म को प्राप्त कराय के **(नु)** निश्चय पालन करो और जैसे हम लोग **(धिया)** बुद्धि से और पुरुषार्थ से **(रथ्यः)** रथयुक्त और **(सदासाः)** दासों के सहित वर्त्तमान **(स्याम)** होवें, वैसे आप हूजिये॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो जैसे आप लोगों में धर्म्मयुक्त नीति का स्थापन करें, उनकी सेवा करके मित्र हो के सम्पूर्ण विद्याओं को जानिये॥११॥

इस सूक्त में प्रश्न उत्तर, मैत्री, शत्रुओं का निवारण, सेना की उन्नति और सत्य आचरण की उत्तमता का वर्णन करने से इसके अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तेईसवां सूक्त तथा दशमा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्य चतुर्विंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ५, ७ त्रिष्टुप्। ३, ९ निचृत्त्रिष्टुप्। ४ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ८ भुरिक्पङ्क्तिः। ६ स्वराट् पङ्क्तिः। ११ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। १० निचृदनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ ब्रह्मचर्य्यवतः पुत्रप्रशंसामाह॥

अब ग्यारह ऋचा वाले चौबीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में ब्रह्मचर्य्यावान् के पुत्र की प्रशंसा कहते हैं॥

का सुष्टुतिः शवसः सूनुमिन्द्रमर्वाचीनं राधस आ ववर्तत्।
ददिर्हि वीरो गृणते वसूनि स गोपतिर्निष्षिधां नो जनासः॥ १॥

का। सुऽस्तुतिः। शवसः। सूनुम्। इन्द्रम्। अर्वाचीनम्। राधसे। आ। ववर्तत्। ददिः। हि। वीरः। गृणते। वसूनि। सः। गोऽपतिः। निःऽसिधाम्। नः। जनासः॥ १॥

पदार्थः-(**का**) (**सुष्टुतिः**) शोभना प्रशंसा (**शवसः**) बहुबलवतः (**सूनुम्**) अपत्यम् (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्य्यप्रदम् (**अर्वाचीनम्**) इदानीन्तनं युवावस्थास्थम् (**राधसे**) धनैश्वर्य्याय (**आ**) (**ववर्त्तत्**) आवर्त्तयेत् (**ददिः**) दाता (**हि**) यतः (**वीरः**) व्याप्तविद्याशौर्य्यादिगुणः (**गृणते**) प्रशंसितकर्म्मणे (**वसूनि**) द्रव्याणि (**सः**) (**गोपतिः**) गोः पृथिव्याः स्वामी (**निष्षिधाम्**) नितरां शासितॄणां मङ्गलाचाराणाम् (**नः**) अस्माकम् (**जनासः**) विद्वांसो वीराः॥ १॥

अन्वयः-हे जनासो! यो वीरो गृणते वसूनि ददिर्वर्त्तते स हि निष्षिधां नो गोपतिर्भवतु। का सुष्टुतिः शवसः सूनुमर्वाचीनमिन्द्रमाववर्त्तत्। को राधसे धनस्य योगमाववर्त्तत्॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः पूर्णकृतब्रह्मचर्यस्य पुत्रः स्वयमनुष्ठितपूर्णब्रह्मचर्य्यविद्यः प्रशंसिताचरणस्सुखदाता भवेत् स एव युष्माकमस्माकञ्च राजा भवतु॥ १॥

पदार्थः-हे (**जनासः**) विद्वान् वीरपुरुषो! जो (**वीरः**) विद्या और शौर्य्य आदि गुणों से व्याप्त जन (**गृणते**) प्रशंसित कर्म्मवान् के लिये (**वसूनि**) द्रव्यों को (**ददिः**) देनेवाला वर्त्तमान है (**सः**) वह (**हि**) जिससे (**निष्षिधाम्**) अत्यन्त शासन करने वालों के मङ्गलाचारों से युक्त (**नः**) हम लोगों का (**गोपतिः**) पृथिवीपति अर्थात् राजा हो (**का**) कौन (**सुष्टुतिः**) उत्तम प्रशंसा और (**शवसः**) बहुत बलवान् के (**सूनुम्**) पुत्र को (**अर्वाचीनम्**) इस समय वाले युवावस्थायुक्त (**इन्द्रम्**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देनेवाले का (**आ, ववर्त्तत्**) वर्त्ताव करावे और कौन (**राधसे**) धन और ऐश्वर्य्यवान् के लिये धन के योग का वर्त्ताव करावे॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो पूर्ण ब्रह्मचर्य्य को किये हुए का पुत्र और वह स्वयं भी पूर्ण ब्रह्मचर्य्य और विद्या से युक्त और प्रशंसित आचरण करने और सुख देनेवाला होवे, वह ही आप का और हम लोगों का राजा हो॥ १॥

अथोक्तविषये धनुर्वेदाध्ययनफलमाह॥

अब पूर्वोक्त विषय के अन्तर्गत धनुर्वेदाध्ययन के फल को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स वृ॒त्रह॑त्ये॒ हव्यः॒ स ईड्यः॒ स सुष्टु॑त॒ इन्द्रः॑ स॒त्यरा॑धाः।

स याम॒न्ना म॒घवा॒ मर्त्या॑य ब्रह्मण्य॒ते सुष्वा॑ये॒ वरि॑वो धात्॥ २॥

सः। वृ॒त्र॒ऽहत्ये॑। हव्यः॑। सः। ईड्यः॑। सः। सुऽस्तु॑तः। इन्द्रः॑। स॒त्यऽरा॑धाः। सः। याम॑न्। आ। म॒घऽवा॑। मर्त्या॑य। ब्र॒ह्म॒ण्यते॑। सु॒स्वये॑। वरि॑वः। धा॒त्॥ २॥

पदार्थः-(**सः**) (**वृत्रहत्ये**) महासङ्ग्रामे (**हव्यः**) आह्वातुं योग्यः (**सः**) (**ईड्यः**) प्रशंसितुमर्हः (**सः**) (**सुष्टुतः**) सर्वत्र प्राप्तसुकीर्त्तिः (**इन्द्रः**) परमैश्वर्य्यवान् (**सत्यराधाः**) न्यायोपार्जितसत्यधनः (**सः**) (**यामन्**) यामनि मार्गे (**आ**) (**मघवा**) पूजितराज्यः (**मर्त्याय**) मनुष्याय (**ब्रह्मण्यते**) आत्मनो धर्मेण धनमिच्छते (**सुष्वये**) ऐश्वर्य्यप्राप्त्यनुष्ठात्रे (**वरिवः**) सेवनम् (**धात्**) दध्यात्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो मघवा सुष्वये ब्रह्मण्यते मर्त्याय वरिव आ धात् स इन्द्रो यामन् स सत्यराधाः स वृत्रहत्ये सुष्टुतः स ईड्यः स हव्यश्च भवेत्॥ २॥

भावार्थः-यो मनुष्यो बाल्याऽवस्थामारभ्य सुचेष्टो विद्वत्सेवी सुशिक्षो न्यायमार्गाऽनुवर्ती धनुर्वेदविदज्ञो युद्धे निर्भयः स्यात्तमेव राजानङ्कुरुत॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**मघवा**) सत्कृत राज्ययुक्त (**सुष्वये**) ऐश्वर्य्य की प्राप्ति का अनुष्ठान करने वाले (**ब्रह्मण्यते**) अपने धर्म से धन की इच्छा करने वाले (**मर्त्याय**) मनुष्य के लिये (**वरिवः**) सेवन को (**आ, धात्**) धारण करे (**सः**) वह (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्य्यवाला (**यामन्**) मार्ग में (**सः**) वह (**सत्यराधाः**) न्याय से इकट्ठे किये हुए सत्यधन से युक्त (**सः**) वह (**वृत्रहत्ये**) बड़े सङ्ग्राम में (**सुष्टुतः**) सर्वत्र प्राप्त उत्तम कीर्त्तियुक्त (**सः**) वह (**ईड्यः**) प्रशंसा करने योग्य और वह (**हव्यः**) पुकारने योग्य होवे॥ २॥

भावार्थः-जो मनुष्य बाल्यावस्था से लेकर उत्तम चेष्टायुक्त, विद्वानों की सेवा करने वाला, उत्तम प्रकार शिक्षायुक्त, न्यायमार्ग का अनुगामी, धनुर्वेद का जानने वाला, चतुर और युद्ध में भयरहित होवे, उसी को राजा करो॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तमिन्नरो॒ वि ह्व॑यन्ते समी॒के रि॑रि॒क्वांस॑स्त॒न्वः॑ कृण्वत॒ त्राम्।

मि॒थो यत्त्या॒गमु॒भया॑सो॒ अग्म॒न्नर॑स्तो॒कस्य॒ तन॑यस्य सा॒तौ॥ ३॥

तम्। इत्। नरः। वि। ह्वयन्ते। सम्ऽईके। रिरिक्वांसः। तन्वः। कृण्वत। त्राम्। मिथः। यत्। त्यागम्। उभयासः। अग्मन्। नरः। तोकस्य। तनयस्य। सातौ॥ ३॥

पदार्थः-(**तम्**) (**इत्**) एव (**नरः**) नायकाः (**वि**) विशेषेण (**ह्वयन्ते**) स्पर्द्धन्ते (**समीके**) सम्यक् प्राप्ते सङ्ग्रामे। **समीक इति सङ्ग्रामनामसु पठितम्।** (निघं० २.१७) (**रिरिक्वांसः**) रेचनङ्कारयन्तः (**तन्वः**) शरीरस्य (**कृण्वत**) कुरुत (**त्राम्**) रक्षकम् (**मिथः**) अन्योऽन्यम् (**यत्**) यम् (**त्यागम्**) (**उभयासः**) उभयत्र वर्त्तमानाः (**अग्मन्**) प्राप्नुत (**नरः**) राज्यस्य नेतारः (**तोकस्य**) सद्यो जातस्याऽपत्यस्य (**तनयस्य**) कुमाराऽवस्थां प्राप्तस्य (**सातौ**) संविभक्ते॥ ३॥

अन्वयः-हे रिरिक्वांसो नरः! समीके यद्यं विद्वांसो वि ह्वयन्ते तमिदेव तन्वस्त्रां कृण्वत। हे नरस्तोकस्य तनयस्य साता उभयासो दुःखस्य त्यागङ्कुर्वन्तो मिथः शत्रून् घ्नन्तोऽग्मँस्तान् सेवध्वम्॥ ३॥

भावार्थः-हे सेनाजना! यो भृत्यानां रक्षक उत्साहक शूरवीरो भवेत्तं सत्कृत्य ये सङ्ग्रामङ्कृत्वा पलायन्ते तानसत्कृत्य भृशं दण्डयित्वा विजयं प्राप्नुत॥ ३॥

पदार्थः-हे (**रिरिक्वांसः**) रेचन कराते हुए (**नरः**) नायक लोगो! (**समीके**) उत्तम प्रकार प्राप्त सङ्ग्राम में (**यत्**) जिसकी विद्वान् लोग (**वि**) विशेष करके (**ह्वयन्ते**) स्पर्द्धा करते हैं (**तम्**) उसको (**इत्**) ही (**तन्वः**) शरीर का (**त्राम्**) रक्षक (**कृण्वत**) करिये और हे (**नरः**) राज्य के नायको! (**तोकस्य**) शीघ्र उत्पन्न हुए और (**तनयस्य**) कुमारावस्था को प्राप्त बालक के (**सातौ**) उत्तम प्रकार विभाग में (**उभयासः**) दोनों ओर वर्त्तमान और दुःख का (**त्यागम्**) त्याग तथा (**मिथः**) परस्पर शत्रुओं को नष्ट करते हुए जन (**अग्मन्**) प्राप्त हों, उनका सेवन करो॥ ३॥

भावार्थः-हे सेना के जनो! जो भृत्यों का रक्षक, उत्साहयुक्त और शूरवीर होवे, उसका सत्कार करके और जो सङ्ग्राम को छोड़के भागते हैं, उनका नहीं सत्कार करके और अत्यन्त दण्ड देकर विजय को प्राप्त होओ॥ ३॥

अथाधर्मत्यागेन सुकर्मणा प्रज्ञैश्वर्यवर्धनविषयमाह॥

अब अधर्मत्याग से तथा अच्छे कर्म से प्रज्ञा और ऐश्वर्यवृद्धि विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

क्रतूयन्ति क्षितयो योग उग्राशुषाणासो मिथो अर्णसातौ।
सं यद्विशोऽववृत्रन्त युध्मा आदिन्नेम इन्द्रयन्ते अभीके॥ ४॥

क्रतुऽयन्ति। क्षितयः। योगे। उग्र। आशुषाणासः। मिथः। अर्णऽसातौ। सम्। यत्। विशः। अववृत्रन्त। युध्माः। आत्। इत्। नेमे। इन्द्रयन्ते। अभीके॥ ४॥

पदार्थः-(**क्रतूयन्ति**) प्रज्ञां कर्म्माणि चेच्छन्ति (**क्षितयः**) मनुष्याः (**योगे**) समागमे यमाऽऽद्यनुष्ठाने वा (**उग्र**) तीक्ष्णस्वभाव (**आशुषाणासः**) शीघ्रकारिणः (**मिथः**) परस्परम् (**अर्णसातौ**)

प्राप्तविभागे **(सम्) (यत्)** ये **(विशः)** प्रजाः **(अववृत्रन्त)** विरोधेन धनं प्राप्नुवन्तु **(युध्माः)** योद्धारः **(आत्) (इत्)** एव **(नेमे)** नियन्तारः **(इन्द्रयन्ते)** इन्द्रं स्वामिनं कुर्वते **(अभीके)** समीपे॥४॥

अन्वयः-हे उग्र राजन्! यद्ये क्षितयो योग आशुषाणासो मिथः प्रीतिमन्तः सन्तोऽर्णसातौ क्रतूयन्ति विश इन्द्रयन्ते युध्मा नेमेऽभीके समववृत्रन्त ताऽऽदिदेव तव भृत्याः सन्तु॥४॥

भावार्थः-न हि योगाऽभ्यासमन्तरा प्रज्ञा वर्धते, न प्रज्ञया विना धनात्मसिद्धिर्जायते, न विद्यापुरुषार्थन्यायैरन्तरा प्रजापालनं कर्त्तुं शक्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(उग्र)** तीक्ष्णस्वभावयुक्त राजन्! **(यत्)** जो **(क्षितयः)** मनुष्य **(योगे)** मिलने वा यम नियमादिकों के अनुष्ठान में **(आशुषाणासः)** शीघ्र करने वाले **(मिथः)** परस्पर प्रीतियुक्त हुए **(अर्णसातौ)** प्राप्त विभाग में **(क्रतूयन्ति)** बुद्धि कर्म्मों की इच्छा करते हैं और **(विशः)** प्रजा **(इन्द्रयन्ते)** स्वामी करती हैं **(युध्माः)** युद्ध करने वाले **(नेमे)** नायक अर्थात् अग्रणी लोग **(अभीके)** समीप में **(सम्, अववृत्रन्त)** विरोध से धन को प्राप्त हों और **(आत्) (इत्)** उसी समय आपके भृत्य हों॥४॥

भावार्थः-योगाभ्यास के विना बुद्धि नहीं बढ़ती है और बुद्धि के विना धन और आत्मा की सिद्धि नहीं होती है और विद्या पुरुषार्थ और न्याय के विना प्रजा का पालन-नहीं कर सकते हैं॥४॥

अथ युक्ताहारविहारविषयमाह॥

अब योग्य आहार-विहार विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आदिद्ध नेम इन्द्रियं यजन्त आदित्पक्तिः पुरोळाशं रिरिच्यात्।

आदित्सोमो वि पपृच्यादसुष्वीनादिज्जुजोष वृषभं यजध्यै॥५॥११॥

आत्। इत्। ह। नेमे। इन्द्रियम्। यजन्ते। आत्। इत्। पक्तिः। पुरोळाशम्। रिरिच्यात्। आत्। इत्। सोमः। वि। पपृच्यात्। असुस्वीन्। आत्। इत्। जुजोष। वृषभम्। यजध्यै॥५॥

पदार्थः-**(आत्)** आनन्तर्य्ये **(इत्)** एव **(ह)** किल **(नेमे)** अन्ये **(इन्द्रियम्)** धनम् **(यजन्ते)** सङ्गच्छन्ते **(आत्) (इत्) (पक्तिः)** पाकः **(पुरोळाशम्)** सुसंस्कृतान्नम् **(रिरिच्यात्)** अतिरिच्यात् **(आत्) (इत्) (सोमः)** ऐश्वर्य्यम् **(वि) (पपृच्यात्)** संयुज्येत **(असुष्वीन्)** येऽसूनभिसुन्वन्ति तान् **(आत्) (इत्) (जुजोष)** जुषते **(वृषभम्)** बलिष्ठम् **(यजध्यै)** यष्टुं सङ्गन्तुम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! येषां पुरोळाशं पक्ती रिरिच्यात् ते नेम आदिदिन्द्रियं यजन्ते यस्यादित् सोमोऽसुष्वीन् वि पपृच्यात् स आदिद् यजध्यै वृषभं जुजोष। आदिद्ध ते सर्वे राज्यं बलञ्च प्राप्तुमर्हेयुः॥५॥

भावार्थः-ये जनाः सुसंस्कृतान्यन्नानि पक्त्वा यथारुचि भुञ्जते ते बलम्प्राप्य रोगातिरिक्ता भवितुमर्हेयुरैश्वर्यं प्राप्य धर्म्ममाप्तांश्च सेवेरन्॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिनके **(पुरोळाशम्)** उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्न को **(पक्तिः)** पाक **(रिरिच्यात्)** बढ़ावें वे **(नेमे)** अन्य जन **(आत्)** अनन्तर **(इत्)** ही **(इन्द्रियम्)** धन को **(यजन्ते)** प्राप्त होते हैं और जिसके **(आत्)** अनन्तर **(इत्)** ही **(सोमः)** ऐश्वर्य **(असुष्वीन्)** जो प्राणों को प्राप्त होते हैं उनको **(वि, पपृच्यात्)** संयुक्त हो वह **(आत्)** अनन्तर **(इत्)** ही **(यजध्यै)** मिलने के लिये **(वृषभम्)** बलिष्ठ का **(जुजोष)** सेवन करता है **(आत्)** अनन्तर **(इत्, ह)** ही वे सब राज्य और बल को प्राप्त होने के योग्य होवें॥५॥

भावार्थः-जो जन उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्नों का पाक करके रुचिपूर्वक भोजन करते हैं, वे बल को प्राप्त होके रोग से रहित होने के योग्य होवें और ऐश्वर्य्य को प्राप्त होके धर्म्म और यथार्थवक्ता पुरुषों की सेवा करें॥५॥

अथ शत्रुविजयार्थराज्यप्रबन्धविषयमाह॥

अब शत्रुजनों को जीतने के लिये राज्यप्रबन्ध को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कृणोत्यस्मै वरिवो य इत्थेन्द्राय सोममुशते सुनोति।

सध्रीचीनेन मनसाविवेनम् तमित्सखायं कृणुते समत्सु॥६॥

कृणोति। अस्मै। वरिवः। यः। इत्था। इन्द्राय। सोमम्। उशते। सुनोति। सध्रीचीनेन। मनसा। अविऽवेनम्। तम्। इत्। सखायम्। कृणुते। समत्ऽसु॥६॥

पदार्थः-**(कृणोति)** **(अस्मै)** **(वरिवः)** सेवनम् **(यः)** जनः **(इत्था)** अनेन प्रकारेण **(इन्द्राय)** परमैश्वर्य्याय राज्ञे **(सोमम्)** ऐश्वर्य्यम् **(उशते)** कामयमानाय **(सुनोति)** निष्पादयति **(सध्रीचीनेन)** संज्ञापकेनाऽनुष्ठापकेन वा **(मनसा)** अन्तःकरणेन **(अविवेनम्)** विगतकामः **(तम्)** **(इत्)** एव **(सखायम्)** मित्रम् **(कृणुते)** कुरुते **(समत्सु)** सङ्ग्रामेषु॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽस्मै सोममुशत इन्द्रायेत्था वरिवः कृणोति सध्रीचीनेन मनसाऽविवेनन्त्सन्नैश्वर्य्यं सुनोति समत्सु सखायं कृणुते तमिदेव राजानं प्रधानञ्च कुरुत॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! ये मनुष्याः स्वराज्यभक्ता धर्म्मसेविन ऐश्वर्य्यं कामयमाना अधर्म्मं त्यक्तवन्तः सङ्ग्रामे परस्परं स्वकीयेषु जनेषु मैत्रीमाचरन्तो विचक्षणा जनाः स्युस्त एव भवता राजशासने संस्थापनीयाः॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(अस्मै)** इस **(सोमम्)** ऐश्वर्य्य की **(उशते)** कामना करनेवाले **(इन्द्राय)** अत्यन्त ऐश्वर्यवाले राजा के लिये **(इत्था)** इस प्रकार से **(वरिवः)** सेवन को **(कृणोति)** करता है **(सध्रीचीनेन)** ज्ञापक वा अनुष्ठापक अर्थात् समझाने वा आरम्भ करनेवाले के सहित **(मनसा)** अन्तःकरण से **(अविवेनन्)** कामनारहित होता हुआ ऐश्वर्य्य को **(सुनोति)** उत्पन्न करता और **(समत्सु)** सङ्ग्रामों में **(सखायम्)** मित्र को **(कृणुते)** करता है **(तम्)** उसको **(इत्)** ही राजा और प्रधान करो॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! जो मनुष्य अपने राज्य के भक्त, धर्म्म का सेवन और ऐश्वर्य्य की कामना करने तथा अधर्म्म को छोड़ने वाले, सङ्ग्राम में परस्पर अपने जनों में मैत्री करते हुए विद्वान् जन होवें, वे ही आपको राजशासन में संस्थापन करने योग्य हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

य इन्द्राय सुनवत् सोममद्य पचात् पक्तीरुत भृज्जाति धानाः।

प्रति मनायोरुचथानि हर्यन् तस्मिन् दधद् वृषणं शुष्ममिन्द्रः॥७॥

यः। इन्द्राय। सुनवत्। सोमम्। अद्य। पचात्। पक्तीः। उत। भृज्जाति। धानाः। प्रति। मनायोः। उचथानि। हर्यन्। तस्मिन्। दधत्। वृषणम्। शुष्मम्। इन्द्रः॥७॥

पदार्थः-(**यः**) (**इन्द्राय**) सुखप्रदात्रे द्रव्यैश्वर्य्याय (**सुनवत्**) निष्पादयेत् (**सोमम्**) ऐश्वर्य्यम् (**अद्य**) (**पचात्**) पचेत् (**पक्तीः**) पाकान् (उत) (**भृज्जाति**) भृज्जेत (**धानाः**) यवा: (**प्रति**) (**मनायोः**) प्रशंसां कामयमानस्य (**उचथानि**) रुचिकराणि (**हर्य्यन्**) कामयमान: (**तस्मिन्**) (**दधत्**) धरेत् (**वृषणम्**) बलकरम् (**शुष्मम्**) बलिष्ठम् (**इन्द्रः**) राजा॥७॥

अन्वयः-य इन्द्रो राजाद्येन्द्राय सोमं सुनवत् पक्तीः पचादुतापि धाना भृज्जाति मनायोरुचथानि हर्य्यन् सँस्तस्मिन् वृषणं शुष्मं प्रति दधत् स पुष्कला विजयिनीं सेनां प्राप्नुयात्॥७॥

भावार्थः-ये राजपुरुषा राज्यायैश्वर्य्यं बलाय सेनायै च भोजनादिसामग्रीर्दध्युस्ते रुचितानि सुखानि लभेरन्॥७॥

पदार्थः-(**यः**) जो (**इन्द्रः**) राजा (**अद्य**) आज (**इन्द्राय**) सुख देनेवाले द्रव्य और ऐश्वर्य्ययुक्त के लिये (**सोमम्**) ऐश्वर्य्य को (**सुनवत्**) उत्पन्न करे (**पक्तीः**) पाकों को (**पचात्**) पकावे (**उत**) और (**धानाः**) यवों को (**भृज्जाति**) भूंजे (**मनायोः**) प्रशंसा की कामना करने वाले की (**उचथानि**) रुचि करनेवालों की (**हर्य्यन्**) कामना करता हुआ (**तस्मिन्**) उसमें (**वृषणम्**) बल करने वाले (**शुष्मम्**) बलयुक्त पुरुष को (**प्रति, दधत्**) धारण करे, वह बहुत जीतने वाली सेना को प्राप्त होवे॥७॥

भावार्थः-जो राजपुरुष राज्य के लिये ऐश्वर्य्य को बल और सेना के लिये भोजन आदि सामग्रियों को धारण करें, वे प्रीतिकारक सुखों को प्राप्त होवें॥७॥

अथ शत्रुविजयेन राज्यादिरक्षणविषयमाह॥

अब शत्रुओं के विजय से राज्यादि पदार्थों के रक्षण विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यदा समर्यं व्यचेद् ऋघावा दीर्घं यदाजिमभ्यख्यदर्यः।

अचिक्रदद् वृषणं पत्न्यच्छा दुरोण आ निशितं सोमसुद्भिः॥८॥

यदा। सुऽमर्यम्। वि। अचेत्। ऋघावा। दीर्घम्। यत्। आजिम्। अभि। अख्यत्। अर्यः। अचिक्रदत्। वृषणम्। पत्नी। अच्छ। दुरोणे। आ। निऽशितम्। सोमसुत्ऽभिः॥८॥

पदार्थः-(**यदा**) यस्मिन् काले (**समर्य्यम्**) सङ्ग्रामम् (**वि**) (**अचेत्**) चेतयति (**ऋघावा**) शत्रूणां हन्ता (**दीर्घम्**) लम्बीभूतम् (**यत्**) यः (**आजिम्**) अजन्ति प्रक्षिपन्ति शस्त्राण्यस्मिंस्तम् (**अभि**) (**अख्यत्**) प्रख्यापयेत् (**अर्य्यः**) स्वामीश्वरो राजा (**अचिक्रदत्**) भृशमाक्रन्दति (**वृषणम्**) बलिष्ठम् (**पत्नी**) (**अच्छा**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**दुरोणे**) गृहे (**आ**) (**निशितम्**) नितरां तीक्ष्णम् (**सोमसुद्भिः**) ये सोममैश्वर्य्यमोषधिगणं वा सुन्वन्ति तैः॥८॥

अन्वयः-यदाऽर्य्यः समर्य्यं व्यचेद्यदृघावा दीर्घमाजिमभ्यख्यद् वृषणमचिक्रदत्तदा दुरोणे पत्नीव सोमसुद्भिः सहानिशितमच्छाचिक्रदत्॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा पतिव्रता स्त्री सर्वाण्यैश्वर्य्याणि संरक्ष्योन्नीय पत्यादीनानन्दयति तथैव विद्याविनयो राजा स्वप्रजाः संरक्ष्यैश्वर्य्यं वर्द्धयित्वा सर्वान्त्सज्जनान् रक्षयति॥८॥

पदार्थः-(**यदा**) जिस काल में (**अर्य्यः**) स्वामी ईश्वर अर्थात् राजा (**समर्य्यम्**) सङ्ग्राम को (**वि, अचेत्**) चेतन कराता है (**यत्**) जो (**ऋघावा**) शत्रुओं का नाश करने वाला (**दीर्घम्**) लम्बे बहुत (**आजिम्**) फेंकते हैं शस्त्र जिसमें उस सङ्ग्राम की (**अभि, अख्यत्**) प्रसिद्धि करावे और (**वृषणम्**) बलिष्ठ के प्रति (**अचिक्रदत्**) अत्यन्त चिल्लाता है, तब (**दुरोणे**) गृह में (**पत्नी**) स्त्री के सदृश (**सोमसुद्भिः**) ऐश्वर्य्य वा ओषधियों के समूह की उत्पन्न करने वालों के साथ (**आ, निशितम्**) अच्छे प्रकार निरन्तर तीक्ष्ण (**अच्छा**) अच्छा अत्यन्त शब्द करता है॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे पतिव्रता स्त्री सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यों की उत्तम प्रकार रक्षा और उन्नति करके पति आदि को आनन्द देती है, वैसे ही विद्या और विनययुक्त राजा अपने प्रजाजनों की अच्छे प्रकार रक्षा और ऐश्वर्य्य की वृद्धि करके सब सज्जनों की रक्षा करता है॥८॥

अथ ज्येष्ठकनिष्ठव्यवहारविषयमाह॥

अब ज्येष्ठ-कनिष्ठ के व्यवहार विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भूयसा वस्नमचरत् कनीयोऽविक्रीतो अकानिषं पुनर्यन्।
स भूयसा कनीयो नारिरेचीद्दीना दक्षा वि दुहन्ति प्र वाणम्॥९॥

भूयसा। वस्नम्। अचरत्। कनीयः। अविऽक्रीतः। अकानिषम्। पुनः। यन्। सः। भूयसा। कनीयः। न। अरिरेचीत्। दीनाः। दक्षाः। वि। दुहन्ति। प्र। वाणम्॥९॥

पदार्थः-(**भूयसा**) बहुना (**वस्नम्**) हट्टस्रस्तरम् (**अचरत्**) (**कनीयः**) अतिशयेन कनिष्ठम् (**अविक्रीतः**) न विक्रीतः (**अकानिषम्**) प्रदीपयेयम् (**पुनः**) (**यन्**) गच्छन् (**सः**) (**भूयसा**) बहुना

(कनीयः) **(न)** निषेधे **(अरिरेचीत्)** रिक्तङ्कुर्यात् **(दीनाः)** क्षीणाः **(दक्षाः)** चतुराः **(वि)** **(दुहन्ति)** पूरिताङ्कुर्वन्ति **(प्र)** **(वाणम्)** वाणीम्। **वाण इति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११)॥९॥

अन्वयः-योऽविक्रीतो भूयसा कनीयो वस्नमचरत् स पुनर्यन् भूयसा कनीयो नारिरेचीद्ये दीना दक्षा वाणं वि प्र दुहन्ति तानहमकानिषं कामयेयम्॥९॥

भावार्थः-ये मनुष्या विविधव्यापारकारिणो निरभिमानाः प्राज्ञाः सन्तो विद्याशिक्षाभ्यां पूर्णां वाचं कुर्वन्ति ते कनीयसः पालयितुं शक्नुवन्ति॥९॥

पदार्थः-जो **(अविक्रीतः)** नहीं बेचा गया **(भूयसा)** बहुत प्रकार से **(कनीयः)** अत्यन्त अल्प **(वस्नम्)** हट्टस्रस्तर अर्थात् हटिया में बिछाने का **(अचरत्)** आचरण करे **(सः)** वह **(पुनः)** फिर **(यन्)** जाता हुआ **(भूयसा)** बहुत भाव से **(कनीयः)** अत्यन्त न्यून कर्म को **(न)** नहीं **(अरिरेचीत्)** रीता करे और जो **(दीनाः)** क्षीण **(दक्षाः)** चतुर जन **(वाणम्)** वाणी को **(वि, प्र, दुहन्ति)** अच्छे प्रकार पूरित करते हैं, उनको मैं **(अकानिषम्)** प्रदीप्त करूं और कामना करूं॥९॥

भावार्थः-जो मनुष्य अनेक प्रकार के व्यापार करने वाले, अभिमानरहित, बुद्धिमान् हुए, विद्या और शिक्षा से पूर्ण वाणी को करते हैं, वे छोटों को पाल सकते हैं॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

क इमं दशभिर्ममेन्द्रं क्रीणाति धेनुभिः।

यदा वृत्राणि जङ्घनदथैनं मे पुनर्ददत्॥१०॥

कः। इमम्। दशऽभिः। मम। इन्द्रम्। क्रीणाति। धेनुऽभिः। यदा। वृत्राणि। जङ्घनत्। अथ। एनम्। मे। पुनः। ददत्॥१०॥

पदार्थः-**(कः)** **(इमम्)** **(दशभिः)** अङ्गुलिभिः **(मम)** **(इन्द्रम्)** ऐश्वर्यम् **(क्रीणाति)** **(धेनुभिः)** दोग्ध्रीभिर्गोभिरिव वाग्भिः **(यदा)** **(वृत्राणि)** धनानि **(जङ्घनत्)** भृशं हन्ति प्राप्नोति **(अथ)** **(एनम्)** **(मे)** मह्यम् **(पुनः)** **(ददत्)** ददाति॥१०॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! को दशभिर्धेनुभिर्ममेममिन्द्रं क्रीणाति यदा यो वृत्राणि जङ्घनदथैनं **[मे]** पुनर्ददत् तदैश्वर्य्यं वर्धेत॥१०॥

भावार्थः-क ऐश्वर्यं वर्द्धितुं शक्नुयादिति प्रश्नस्य, यः सर्वथा पुरुषार्थी सुशिक्षितया वाचा युक्तश्चेति कुतो य आदावैश्वर्य्यं प्राप्नुयात् स एवान्येभ्यो दातुमर्हेत्॥१०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(कः)** कौन **(दशभिः)** दश अङ्गुलियों और **(धेनुभिः)** दोहने वाली गौओं के सदृश वाणियों से **(मम)** मेरे **(इमम्)** इस **(इन्द्रम्)** ऐश्वर्य्य को **(क्रीणाति)** खरीदता है **(यदा)** जब जो

(वृत्राणि) धनों को **(जङ्घनत्)** अत्यन्त प्राप्त होता है **(अथ)** अनन्तर **(एनम्)** इसको **(मे)** मेरे लिये **(पुनः)** फिर **(ददत्)** देता है, तभी ऐश्वर्य्य बढ़े॥१०॥

भावार्थः-कौन ऐश्वर्य्य को बढ़ा सके इस प्रश्न का, जो सब प्रकार पुरुषार्थयुक्त, उत्तम प्रकार शिक्षित वाणी से युक्त है, यह उत्तर है, क्योंकि जो आदि में ऐश्वर्य्य को प्राप्त होवे, वही औरों को देने को योग्य होवे॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो३ न पीपेः।

अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः॥११॥१२॥

नु। स्तुतः। इन्द्र। नु। गृणानः। इषम्। जरित्रे। नद्यः। पीपेरिति पीपेः। अकारि। ते। हरिऽवः। ब्रह्म। नव्यम्। धिया। स्याम। रथ्यः। सदाऽसाः॥११॥

पदार्थः-**(नु)** अत्रोभयत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(स्तुतः)** शुद्धव्यवहारेण प्रशंसितः **(इन्द्र)** ऐश्वर्यमिच्छुक **(नु)** **(गृणानः)** पुरुषार्थं स्तुवन् **(इषम्)** अन्नम् **(जरित्रे)** याचमानाऽयाचिताय वा **(नद्यः)** सरितः **(न)** इव **(पीपेः)** वर्द्धय **(अकारि)** क्रियते **(ते)** तव **(हरिवः)** प्रशंसितभृत्ययुक्त **(ब्रह्म)** महद्धनम् **(नव्यम्)** देशदेशान्तराद् द्वीपद्वीपान्तराद्वा **(धिया)** व्यवहारज्ञया प्रज्ञया सुष्ठु कृतेन कर्म्मणा वा **(स्याम)** भवेम **(रथ्यः)** बहुरथादियुक्ताः **(सदासाः)** भृत्यैः सहिताः॥११॥

अन्वयः-हे हरिव इन्द्र! स्तुतो गृणानस्त्वं जरित्रे नद्यो नेषं नु पीपेस्तस्मात्तेऽस्माभिर्धिया नव्यं ब्रह्माकारि त्वया सह रथ्यः सदासा वयमैश्वर्य्यन्तो नु स्याम॥११॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यदि यूयं धनमिच्छत तर्हि धर्म्येण पुरुषार्थेन योग्यां क्रियां सततं कुरुतेति॥११॥

अत्र ब्रह्मचर्य्यवतः पुत्रप्रशंसाऽधर्म्मत्यागेन सुकर्म्मणा प्रज्ञैश्वर्य्यवर्धनं युक्ताऽहारविहारः शत्रुविजयो ज्येष्ठकनिष्ठव्यवहारश्चोक्तोऽत एतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुर्विंशं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(हरिवः)** प्रशंसा करने योग्य भृत्यों से युक्त **(इन्द्र)** ऐश्वर्य्य की इच्छा करने वाले! **(स्तुतः)** शुद्ध व्यवहार से प्रशंसित **(गृणानः)** पुरुषार्थ की स्तुति करते हुए आप **(जरित्रे)** याचना करने वाले वा जिसकी याचना नहीं की गई उसके लिये **(नद्यः)** नदियों के **(न)** सदृश **(इषम्)** अन्न को **(नु)** निश्चय **(पीपेः)** बढ़ाओ तिससे [=उससे] **(ते)** आपका हम लोगों से **(धिया)** व्यवहार को जानने वाली बुद्धि वा उत्तम किये हुए कर्म्म से **(नव्यम्)** देश-देशान्तर वा द्वीप-द्वीपान्तर से नवीन **(ब्रह्म)** बहुत धन **(अकारि)** किया जाता है और आपके साथ **(रथ्यः)** बहुत रथ आदि से युक्त **(सदासाः)** भृत्यों के

सहित हम लोग ऐश्वर्य्य वाले **(नु)** शीघ्र **(स्याम)** होवें॥११॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! यदि आप लोग धन की इच्छा करो तो धर्म्मयुक्त पुरुषार्थ से योग्य क्रिया को निरन्तर करो॥११॥

इस सूक्त में ब्रह्मचर्य्य वाले के पुत्र की प्रशंसा, अधर्म्म के त्याग से और उत्तम कर्म्म से बुद्धि और ऐश्वर्य्य की वृद्धि, नियमित आहार-विहार, शत्रु का विजय और ज्येष्ठ कनिष्ठ का व्यवहार कहा गया, इससे इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चौबीसवां सूक्त और बारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथाऽष्टर्चस्य पञ्चविंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ निचृत् पङ्क्तिः। २, ८ स्वराट् पङ्क्तिः। ४, ६ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३, ५, ७ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ प्रश्नोत्तरविषय आरभ्यते॥

अब आठ ऋचावाले पच्चीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में प्रश्नोत्तरविषय का आरम्भ किया जाता है॥

को अद्य नर्यो देवकाम उशन्निन्द्रस्य सख्यं जुजोष।

को वा महेऽवसे पार्याय समिद्धे अग्नौ सुतसोम ईट्टे॥१॥

कः। अद्य। नर्यः। देवऽकामः। उशन्। इन्द्रस्य। सख्यम्। जुजोष। कः। वा। महे। अवसे। पार्याय। सम्ऽइद्धे। अग्नौ। सुतऽसोमः। ईट्टे॥१॥

पदार्थः-(**कः**) (**अद्य**) इदानीम् (**नर्य्यः**) नृषु साधुः (**देवकामः**) यो देवान् विदुषः कामयते (**उशन्**) कामयमानः (**इन्द्रस्य**) परमैश्वर्य्ययुक्तस्य (**सख्यम्**) मित्रत्वम् (**जुजोष**) सेवते (**कः**) (**वा**) विकल्पे (**महे**) महते (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**पार्य्याय**) दुःखपारं गमयते (**समिद्धे**) प्रसिद्धे (**अग्नौ**) पावके (**सुतसोमः**) सुतः सोमो येन (**ईट्टे**) ऐश्वर्य्यं लभते॥१॥

अन्वयः-हे विद्वन्नद्य को देवकाम इन्द्रस्य सख्यमुशन्नर्य्यो धर्म्मं जुजोष को वा महे पार्य्यायावसे समिद्ध अग्नौ सुतसोमः सन्नैश्वर्य्यमीट्टे इति वयं पृच्छामः॥१॥

भावार्थः-यो विद्यामित्रत्वकामस्सर्वजगत्प्रियाचारी सर्वेषां रक्षणं कुर्वन्नग्नौ होमादिना प्रजाहितं कुर्य्यात् स एव जगद्धितैषी वर्त्तत इत्युत्तरम्॥१॥

पदार्थः-हे विद्वन्! (**अद्य**) इस समय (**कः**) कौन (**देवकामः**) विद्वानों की कामना करने वाला (**इन्द्रस्य**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त के (**सख्यम्**) मित्रत्व की (**उशन्**) कामना करता हुआ (**नर्य्यः**) मनुष्यों में श्रेष्ठ धर्म्म का (**जुजोष**) सेवन करता है (**कः, वा**) अथवा कौन (**महे**) बड़े (**पार्य्याय**) दुःख के पार उतारने वाले (**अवसे**) रक्षण आदि के लिये (**समिद्धे**) प्रसिद्ध (**अग्नौ**) अग्नि में (**सुतसोमः**) सोमरस को उत्पन्न करने वाला हुआ ऐश्वर्य्य को (**ईट्टे**) प्राप्त होता है, यह हम लोग पूछते हैं॥१॥

भावार्थः-जो विद्या और मित्रता की कामना करनेवाला, सम्पूर्ण जगत् का प्रिय आचरण करता और सब का रक्षण करता हुआ अग्नि में होम आदि से प्रजा का हित करे, वही जगत् का हित चाहने वाला है, यह उत्तर है॥१॥

अथ राजकर्त्तव्यविषयमाह॥

अब राजकर्त्तव्यविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

को नानाम वचसा सोम्याय मनायुर्वा भवति वस्त उस्राः।

क इन्द्रस्य युज्यं कः सखित्वं को भ्रात्रं वष्टि कवये क ऊती॥२॥

कः। नुनाम्। वचसा। सोम्याय। मनायुः। वा। भवति। वस्ते। उस्राः। कः। इन्द्रस्य। युज्यम्। कः। सखिऽत्वम्। कः। भ्रात्रम्। वष्टि। कवये। कः। ऊती॥२॥

पदार्थः-(**कः**) (**नानाम**) नम्रो भवति। अत्र **तुजादीनां दीर्घोऽभ्यासस्येति** दीर्घः। (**वचसा**) वचनेन (**सोम्याय**) सोमैश्वर्य्यसाधवे (**मनायुः**) मनो विज्ञानं कामयमानः (**वा**) (**भवति**) (**वस्ते**) कामयते (**उस्राः**) रश्मय इव। **उस्रा इति रश्मिनामसु पठितम्।** (निघं०१.५) (**कः**) (**इन्द्रस्य**) (**युज्यम्**) योक्तुमर्हम् (**कः**) (**सखित्वम्**) (**कः**) (**भ्रात्रम्**) भ्रातृभावम् (**वष्टि**) कामयते (**कवये**) प्राज्ञाय (**कः**) (**ऊती**) ऊत्या रक्षणादिक्रियया॥२॥

अन्वयः-हे विद्वांसः! को वचसा सोम्याय नानाम को वा वचसा सोम्याय मनायुर्भवति क उस्रा इव सर्वान् गुणैर्वस्ते क इन्द्रस्य युज्यं सखित्वं को वा कवय ऊती भ्रात्रं वष्टीत्युत्तरं ब्रूत॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो मनसा कर्म्मणा वाचा नम्रो जायते यो रश्मिवत् प्रकाशात्मव्यवहारो यो जगदीश्वरेण मित्रत्वमाचरति सर्वैस्सह भ्रातृभावं रक्षति यश्च विद्वद्भ्यो हितं करोति स एव सर्वमिष्टं फलं लभते॥२॥

पदार्थः-हे विद्वानो (**कः**) कौन (**वचसा**) वचन से (**सोम्याय**) सोमरूप ऐश्वर्य्य की सिद्धि करनेवाले के लिये (**नानाम**) नम्र होता है (**कः, वा**) अथवा कौन वचन से सोमरूप ऐश्वर्य्य की सिद्धि करने वाले के लिये (**मनायुः**) विज्ञान की कामना करता हुआ (**भवति**) होता है (**कः**) कौन (**उस्राः**) किरणों के सदृश सब को गुणों से (**वस्ते**) चाहता है (**कः**) कौन (**इन्द्रस्य**) ऐश्वर्य्ययुक्त के (**युज्यम्**) जोड़ने योग्य (**सखित्वम्**) मित्रपने को (**कः**) अथवा कौन (**कवये**) बुद्धिमान् के लिये (**ऊती**) रक्षण आदि कर्म्म से (**भ्रात्रम्**) भ्रातृपने की (**वष्टि**) कामना करता है, इस का उत्तर कहो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मन, कर्म्म और वचन से नम्र होता है, जो किरणों के तुल्य प्रकाशस्वरूप व्यवहारयुक्त, जो जगदीश्वर के साथ मित्रता करता तथा सबके साथ भ्रातृपन की रक्षा करता और जो विद्वानों के लिये हित करता है, वही सम्पूर्ण इष्टफल को प्राप्त होता है॥२॥

अथोत्तममध्यमनिकृष्टकर्त्तव्यकर्मविषयमाह॥

अब उत्तम, मध्यम और निकृष्टों को कर्त्तव्यकर्मविषय का उपदेश अगले मन्त्र में दिया है॥

को देवानामवो अद्या वृणीते क आदित्याँ अदितिं ज्योतिरीट्टे।

कस्याश्विनाविन्द्रो अग्निः सुतस्यांशोः पिबन्ति मनसाविवेनम्॥३॥

कः। देवानाम्। अवः। अद्य। वृणीते। कः। आदित्यान्। अदितिम्। ज्योतिः। ईट्टे। कस्य। अश्विनौ। इन्द्रः। अग्निः। सुतस्य। अंशोः। पिबन्ति। मनसा। अविऽवेनम्॥ ३॥

पदार्थः-(**कः**) (**देवानाम्**) विदुषाम् (**अवः**) रक्षणादि (**अद्य**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**वृणीते**) स्वीकुरुते (**कः**) (**आदित्यान्**) मासानिव वर्त्तमानान् पूर्णविद्यान् (**अदितिम्**) पृथिवीम् (**ज्योतिः**) प्रकाशम् (**ईट्टे**) अधीच्छति (**कस्य**) (**अश्विनौ**) द्यावापृथिव्यौ (**इन्द्रः**) सूर्य्यः (**अग्निः**) विद्युत् प्रसिद्धस्वरूपः (**सुतस्य**) निष्पन्नस्य (**अंशोः**) प्राप्तव्यस्य महौषधिरस्य (**पिबन्ति**) (**मनसा**) विज्ञानेन (**अविवेनम्**) दुष्टकामनारहितम्॥ ३॥

अन्वयः-हे विद्वांसः! कोऽद्य देवानामवो वृणीते क आदित्यानदितिञ्ज्योतिश्चेट्टे। कस्य सुतस्यांशोर्मनसाऽविवेनमश्विनाविन्द्रोऽग्निश्च रसं पिबन्ति॥ ३॥

भावार्थः-ये विद्वत्सङ्गङ्कुर्वन्ति ते सूर्य्यादिवत् सर्वान् कामान् प्रापयितुं शक्नुवन्ति। येऽकमनीयं न कामयन्ते ते सिद्धकामा जायन्त इत्युत्तरम्॥ ३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**कः**) कौन (**अद्य**) आज (**देवानाम्**) विद्वानों के (**अवः**) रक्षण आदि का (**वृणीते**) स्वीकार करता है (**कः**) कौन (**आदित्यान्**) महीनों के सदृश वर्त्तमान पूर्ण विद्वानों तथा (**अदितिम्**) पृथिवी और (**ज्योतिः**) प्रकाश की (**ईट्टे**) अधिक इच्छा करता है (**कस्य**) किस (**सुतस्य**) उत्पन्न (**अंशोः**) प्राप्त होने योग्य बड़ी औषध के रस के (**मनसा**) विज्ञान से (**अविवेनम्**) दुष्ट कामनाओं से रहित जैसे हो, वैसे (**अश्विनौ**) अन्तरिक्ष-पृथिवी (**इन्द्रः**) सूर्य्य और (**अग्निः**) बिजुली वा प्रसिद्धरूप अग्निरस को (**पिबन्ति**) पीते हैं॥ ३॥

भावार्थः-जो विद्वानों के सङ्ग को करते हैं, वे सूर्य आदि के सदृश सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त करा सकते हैं और जो नहीं कामना करने योग्य वस्तु की नहीं कामना करते हैं, वे कामनाओं की सिद्धि से युक्त होते हैं, यह उत्तर है॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तस्मा अग्निर्भारतः शर्म यंसज्ज्योक् पश्यात् सूर्यमुच्चरन्तम्।
य इन्द्राय सुनवामेत्याह नरे नर्याय नृतमाय नृणाम्॥ ४॥

तस्मै। अग्निः। भारतः। शर्म। यंसत्। ज्योक्। पश्यात्। सूर्यम्। उत्ऽचरन्तम्। यः। इन्द्राय। सुनवाम। इति। आह। नरे। नर्याय। नृऽतमाय। नृणाम्॥ ४॥

पदार्थः-(**तस्मै**) (**अग्निः**) पावकवद्वर्त्तमानः (**भारतः**) धारकस्यायं धर्त्ता (**शर्म**) गृहमिव सुखम्। **शर्मेति गृहनामसु पठितम्।** (निघं०३.४) (**यंसत्**) यच्छेत् प्राप्नुयात् (**ज्योक्**) निरन्तरम्

(पश्यात्) सम्प्रेक्षेत **(सूर्य्यम्)** सूर्य्यमण्डलम् **(उच्चरन्तम्)** ऊर्ध्वं विहरन्तम् **(यः)** **(इन्द्राय)** परमैश्वर्य्याय **(सुनवाम)** निष्पादयेम **(इति)** **(आह)** ब्रूते **(नरे)** नायकाय **(नर्य्याय)** नृषु कुशलाय **(नृतमाय)** अतिशयेन नायकाय **(नृणाम्)** विद्यासुशीलयुक्तानां मनुष्याणाम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽग्निरिव भारतः शर्म्म यंसत् स उच्चरन्तं सूर्य्यं ज्योक् पश्यात् तस्मै नृणां नृतमाय नरे नर्य्यायेन्द्रायेत्याह तं वयं सुनवाम॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो गृहे निवास इव विद्यायां निवसेद् ब्रह्मचर्य्येण खगोलदिविद्यां प्राप्नुयान्मनुष्येभ्यो हितमुपदिशेत् स एवोत्तमः सञ्छतं वर्षाणि जीवन्त्सूर्य्यादिकं पश्यन्त्सर्वं सुखं यच्छेत्॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(अग्निः)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान **(भारतः)** धारण करने वाले का यह धारण करने वाला **(शर्म्म)** गृह के सदृश सुख को **(यंसत्)** प्राप्त होवे वह **(उच्चरन्तम्)** ऊपर को घूमते हुए **(सूर्य्यम्)** सूर्य्यमण्डल को **(ज्योक्)** निरन्तर **(पश्यात्)** देखे **(तस्मै)** उस **(नृणाम्)** विद्या और उत्तमशीलयुक्त मनुष्यों के **(नृतमाय)** अत्यन्त मुखिया **(नरे)** नायक **(नर्य्याय)** मनुष्यों में कुशल **(इन्द्राय)** उत्तम ऐश्वर्य्यवान् के लिये **(इति)** ऐसा **(आह)** कहता है, उसको हम लोग **(सुनवाम)** उत्पन्न करें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो गृह में निवास के सदृश विद्या में निवास करे और ब्रह्मचर्य्य से खगोल आदि विद्या को प्राप्त होवे और मनुष्यों के लिये हित का उपदेश देवे, वही उत्तम होता सौ वर्ष पर्य्यन्त जीवता और सूर्य्य आदि को देखता हुआ सब सुख को देवे॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न तं जिनन्ति बहवो न दभ्रा उर्वस्मा अदितिः शर्म यंसत्।

प्रियः सुकृत् प्रिय इन्द्रे मनायुः प्रियः सुप्रावीः प्रियो अस्य सोमी॥५॥१३॥

न। तम्। जिनन्ति। बहवः। न। दभ्राः। उरु। अस्मै। अदितिः। शर्म। यंसत्। प्रियः। सुऽकृत्। प्रियः। इन्द्रे। मनायुः। प्रियः। सुप्रऽअवीः। प्रियः। अस्य। सोमी॥५॥

पदार्थः-**(न)** **(तम्)** **(जिनन्ति)** जयन्ति। अत्र विकरणव्यत्ययः। **(बहवः)** अनेके **(न)** **(दभ्राः)** हिंसकाः **(उरु)** बहु **(अस्मै)** **(अदितिः)** माता **(शर्म)** सुखम् **(यंसत्)** ददाति **(प्रियः)** योऽन्यान् प्रीणाति सः **(सुकृत्)** सुष्ठु सत्यं कर्म्म करोति सः **(प्रियः)** प्रीतिकरः **(इन्द्रे)** परमैश्वर्य्ये **(मनायुः)** मन इवाचरति **(प्रियः)** हर्षशोकरहितः **(सुप्रावीः)** सुष्ठु शुभगुणप्राप्तः **(प्रियः)** कमनीयः **(अस्य)** **(सोमी)** सोमो बहुविधमैश्वर्य्यं विद्यते यस्य सः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रे प्रियः सुकृज्जनेषु प्रियः प्रियेषु मनायुर्धर्म्येण प्रियो विद्यासु सुप्रावीर्विद्वत्सु प्रियोऽस्य जगतो मध्ये सोमी वर्त्तते तं शत्रवो न जिनन्ति बहवो दभ्रा न हिंसन्त्यस्मा अदितिरुरु शर्म यंसत्॥५॥

भावार्थः-येऽजातशत्रवः परमेश्वरोपासकाः सर्वप्रियसाधका जना भवन्ति तान् कोऽपि शत्रुर्जेतुं न शक्नोति यथा मातरं श्रेष्ठं गृहं वा प्राप्य मनुष्यः सुखयति तथैव सर्वाणि सुखानि प्राप्य सततं मोदते॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(इन्द्रे)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य होने पर **(प्रियः)** अन्यों को प्रसन्न करने **(सुकृत्)** सत्य कर्म्म करने, जनों में **(प्रियः)** प्रीति करने और प्रियों में **(मनायुः)** मन के सदृश आचरण करने वाला धर्म्मयुक्त कर्म्म से **(प्रियः)** आनन्द और शोक से रहित विद्याओं में **(सुप्रावीः)** अच्छे प्रकार उत्तम गुणों को प्राप्त विद्वानों में **(प्रियः)** सुन्दर और **(अस्य)** इस जगत् के मध्य में **(सोमी)** अनेक प्रकार के ऐश्वर्य्य से युक्त है **(तम्)** उसको शत्रु लोग **(न)** नहीं **(जिनन्ति)** जीतते हैं **(बहवः)** अनेक **(दभ्राः)** नाश करने वाले **(न)** नहीं नाश करते हैं **(अस्मै)** इसके लिये **(अदितिः)** माता **(उरु)** बहुत **(शर्म्म)** सुख को **(यंसत्)** देती है॥५॥

भावार्थः-जो शत्रुरहित परमेश्वर की उपासना करते और सब के प्रिय साधने वाले जन होते हैं, उनको कोई भी शत्रु जीत नहीं सकता है और जैसे माता वा श्रेष्ठ गृह को प्राप्त होकर मनुष्य सुख का आचरण करता है, वैसे ही सब सुखों को प्राप्त होकर निरन्तर आनन्दित होता है॥५॥

अथ राजामात्यादिगुणानाह॥

अब राजा अमात्यादिकों के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सुप्राव्यः प्राशुषाळेष वीरः सुष्वेः पक्तिं कृणुते केवलेन्द्रः।

नासुष्वेरापिर्न सखा न जामिर्दुष्प्राव्योऽवहन्तेदवाचः॥६॥

सुप्रऽअव्यः। प्राशुषाट्। एषः। वीरः। सुस्वेः। पक्तिम्। कृणुते। केवला। इन्द्रः। न। असुस्वेः। आपिः। न। सखा। न। जामिः। दुःप्रऽअव्यः। अवहन्ता। इत्। अवाचः॥६॥

पदार्थः-**(सुप्राव्यः)** सुष्ठु रक्षितुं योग्यः **(प्राशुषाट्)** यः प्राशून् वेगवतश्शत्रून् सहते **(एषः)** वर्त्तमानः **(वीरः)** बलिष्ठः **(सुष्वेः)** सुष्ठु निष्पन्नस्याऽन्नस्य **(पक्तिम्)** पाकम् **(कृणुते)** करोति **(केवला)** केवलाम् **(इन्द्रः)** ऐश्वर्य्यवान् **(न)** **(असुष्वेः)** अलसस्याऽनिष्पादकस्य **(आपिः)** यः सर्वानाप्नोति **(न)** इव **(सखा)** सुहृत् **(न)** **(जामिः)** बन्धुः **(दुष्प्राव्यः)** दुःखेन प्रावितुं योग्यः **(अवहन्ता)** विरुद्धस्य हननकर्त्ता **(इत्)** एव **(अवाचः)** दुष्टवचनस्य॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः सुप्राव्यः प्राशुषाडेष वीर इन्द्रः सुष्वेः केवला पक्तिं कृणुते योऽसुष्वेरापिर्न सखा न जामिर्दुष्प्राव्योऽवाचोऽवहन्तेदेव विरोधं न कृणुते स एव सर्वस्य सुखदाता जायते॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये राजपुरुषाः सुसंस्कृतान्नं भुक्त्वा मित्रवद् बन्धुवद्वर्त्तित्वा दुःशीलान् घ्नन्ति न ते दारिद्र्यं पराजयञ्च प्राप्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(सुप्राव्यः)** उत्तम प्रकार रक्षा करने योग्य **(प्राशुषाट्)** वेगयुक्त शत्रुओं को सहने वाला **(एषः)** यह **(वीरः)** बलिष्ठ **(इन्द्रः)** ऐश्वर्य्ययुक्त जन **(सुष्वेः)** उत्तम प्रकार उत्पन्न अन्न के **(केवला)** केवल **(पक्तिम्)** पाक को **(कृणुते)** करता है और जो **(असुष्वेः)** आलस्य भरे हुए अर्थात् नहीं उत्पन्न करने वाले के सम्बन्ध में **(आपिः)** सब को प्राप्त होने वाले के **(न)** सदृश वा **(सखा)** मित्र के **(न)** सदृश **(जामिः)** बन्धु **(दुष्प्राव्यः)** दुःख से रक्षा करने योग्य और **(अवाचः)** दुष्ट वचन वाले के **(अवहन्ता)** विरुद्ध काम का हनन करने वाला **(इत्)** ही विरोध को **(न)** नहीं करता है, वही सब का सुखदाता होता है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजपुरुष उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्न का भोग तथा मित्र और बन्धुओं के सदृश वर्त्ताव करके दुष्ट स्वभाववालों का नाश करते, वे दारिद्र्य और पराजय को नहीं प्राप्त होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न रेवता पणिना सख्यमिन्द्रोऽसुन्वता सुतपाः सं गृणीते।

आस्य वेदः खिदति हन्ति नग्नं वि सुष्वये पक्तये केवलो भूत्॥७॥

न। रेवता। पणिना। सख्यम्। इन्द्रः। असुन्वता। सुतऽपाः। सम्। गृणीते। आ। अस्य। वेदः। खिदति। हन्ति। नग्नम्। वि। सुस्वये। पक्तये। केवलः। भूत्॥७॥

पदार्थः-**(न)** **(रेवता)** प्रशस्तधनवता **(पणिना)** व्यवहर्त्रा वणिग्जनादिना **(सख्यम्)** मित्रभावम् **(इन्द्रः)** परमैश्वर्य्यवान् राजा **(असुन्वता)** अपुरुषार्थिना **(सुतपाः)** सुष्ठु धर्म्मात्मा रागद्वेषरहितः **(सम्)** **(गृणीते)** उपदिशति **(आ)** **(अस्य)** प्रज्ञः **(वेदः)** द्रव्यम् **(खिदति)** दैन्यं प्राप्नोति **(हन्ति)** **(नग्नम्)** निर्लज्जम् **(वि)** **(सुष्वये)** सुष्ठु निष्पादकाय **(पक्तये)** पाककर्त्रे **(केवलः)** असहायः **(भूत्)** भवति॥७॥

अन्वयः-यः सुतपा इन्द्रो रेवता पणिनाऽसुन्वता सह सख्यं न करोति सर्वेभ्यः सत्यं न्यायं सङ्गृणीते यः केवलः सन् सुष्वये पक्तये भूद्यो नग्नं विहन्त्यस्य वेदः कदाचिन्नाखिदति॥७॥

भावार्थः-यो राजा धनादिलोभेन धनिनामुपरि प्रीतो दरिद्रान् प्रत्यप्रसन्नो न भवति, यो दुष्टान्तसम्यग्दण्डयित्वा श्रेष्ठान् सततं रक्षति नैवाऽस्य राष्ट्रं कदाचित् खेदं प्राप्नोति॥७॥

पदार्थः-जो **(सुतपाः)** उत्तम प्रकार धर्म्मात्मा और राग अर्थात् विषयों में प्रीति और प्राणियों में द्वेष से रहित **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्य्यवाला राजा **(रेवता)** श्रेष्ठ धनवाले **(पणिना)** व्यवहारी वैश्य जन आदि और **(असुन्वता)** नहीं पुरुषार्थ करने वाले जन के साथ **(सख्यम्)** मित्रपने को **(न)** नहीं करता

और सब को सत्य न्याय का **(सम्, गृणीते)** अच्छे प्रकार उपदेश देता है और जो **(केवलः)** सहायरहित हुआ **(सुष्वये)** उत्तम प्रकार उत्पन्न करने वाले **(पक्तये)** पाककर्त्ता के लिये **(भूत्)** होता है और जो **(नग्नम्)** निर्लज्ज का **(वि, हन्ति)** उत्तम प्रकार नाश करता है **(अस्य)** इस राजा का **(वेदः)** द्रव्य कभी नहीं **(आ, खिदति)** दीनता अर्थात् नाश को प्राप्त होता है॥७॥

भावार्थः-जो राजा धन आदि के लोभ से धनियों के ऊपर प्रसन्न और दरिद्रों के प्रति अप्रसन्न नहीं होता है और जो दुष्टों को उत्तम प्रकार दण्ड देकर श्रेष्ठों की निरन्तर रक्षा करता है, नहीं इस का राज्य कभी खेद को प्राप्त होता है॥७॥

अथ पक्षपातराहित्याचरणविषयमाह॥

अब पक्षपातरहित आचरण विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रं परेऽवरे मध्यमास इन्द्रं यान्तोऽवसितास इन्द्रम्।

इन्द्रं क्षियन्त उत युध्यमाना इन्द्रं नरो वाजयन्तो हवन्ते॥८॥१४॥

इन्द्रम्। परे। अवरे। मध्यमासः। इन्द्रम्। यान्तः। अवऽसितासः। इन्द्रम्। इन्द्रम्। क्षियन्तः। उत। युध्यमानाः। इन्द्रम्। नरः। वाजयन्तः। हवन्ते॥८॥

पदार्थः-**(इन्द्रम्)** परमैश्वर्य्यवन्तम् **(परे)** प्रकृष्टा जनाः **(अवरे)** निकृष्टाः **(मध्यमासः)** पक्षपातरहिताः **(इन्द्रम्)** सर्वसुखप्रदातारम् **(यान्तः)** प्राप्नुवन्तः **(अवसितासः)** कृतनिश्चयाः **(इन्द्रम्)** दुष्टानां हन्तारम् **(इन्द्रम्)** सर्वसुखधर्त्तारम् **(क्षियन्तः)** निवसन्तः **(उत)** अपि **(युध्यमानाः)** युद्धं कुर्वन्तः **(इन्द्रम्)** दुष्टानां विदारकम् **(नरः)** नायकाः **(वाजयन्तः)** विज्ञापयन्तः **(हवन्ते)** स्तुवन्ति स्पर्द्धयन्ति वा॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये परेऽवरे मध्यमास इन्द्रं यान्त इन्द्रमवसितास इन्द्रं क्षियन्त इन्द्रं वाजयन्त उतापि युध्यमाना नर इन्द्रं हवन्ते त एव राज्यं कर्म कर्त्तुमर्हेयुः॥८॥

भावार्थः-यस्य राज्ये श्रेष्ठा मध्यस्था निकृष्टाश्च धर्म्मात्मानो विद्वांसोऽविद्वांसश्च स्वराज्यप्रियाः शत्रूणां हन्तारः स्वस्वामिभक्ताः सन्ति तत्र सदा राष्ट्रं वर्द्धत इति वेदितव्यम्॥८॥

अत्र प्रश्नोत्तरराजोत्तममध्यमनिकृष्टमनुष्यगुणवर्णनं राजाऽमात्यपक्षपातराहित्याचरणं चोपदिष्टमत एतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वाविंशतितमं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(परे)** श्रेष्ठ **(अवरे)** निकृष्ट और **(मध्यमासः)** पक्षपात से रहित जन **(इन्द्रम्)** अत्यन्त ऐश्वर्य वाले को **(यान्तः)** प्राप्त होते हुए **(इन्द्रम्)** सब सुख धारण करने वाले का **(अवसितासः)** निश्चय किये हुए और **(इन्द्रम्)** दुष्टों के मारनेवाले को **(क्षियन्तः)** निवास करते हुए **(इन्द्रम्)** सब सुख देनेवाले को **(वाजयन्तः)** जनाते **(उत)** और **(युध्यमानाः)** युद्ध करते हुए **(नरः)**

नायक लोग **(इन्द्रम्)** दुष्टों के नाश करने वाले की **(हवन्ते)** स्तुति वा ईर्ष्या करते हैं, वे ही राज्यकर्म्म करने को योग्य होवें॥८॥

भावार्थः-जिसके राज्य में श्रेष्ठ, मध्यस्थ और निकृष्ट अर्थात् नीची श्रेणी में वर्त्तमान धर्मात्मा, विद्वान् और अविद्वान् लोग, अपने राज्य के प्रिय, शत्रुओं के नाश करने वाले, धन और स्वामी के भक्त हैं, वहाँ सदा राज्य बढ़ता है, ऐसा जानना चाहिये॥८॥

इस सूक्त में प्रश्न-उत्तर, राजा, उत्तम, मध्यम, निकृष्ट मनुष्यों के गुणों का वर्णन, राजा के मन्त्री के पक्षपात राहित्यरूप आचरण का उपदेश किया, इससे इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पच्चीसवां सूक्त और चौदहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य षड्विंशतितमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रो देवता १ पङ्क्तिः। २ भुरिक् पङ्क्तिः। ३, ७ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ४ निचृत्त्रिष्टुप्। ५ विराट् त्रिष्टुप्। ६ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथेश्वरगुणानाह॥

अब सात ऋचावाले छब्बीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में ईश्वर के गुणों का उपदेश करते हैं॥

अहं मनुरभवं सूर्यश्चाहं कक्षीवाँ ऋषिरस्मि विप्रः।

अहं कुत्समार्जुनेयं न्यृञ्जेऽहं कविरुशना पश्यता मा॥१॥

अहम्। मनुः। अभवम्। सूर्यः। च। अहम्। कक्षीवान्। ऋषिः। अस्मि। विप्रः। अहम्। कुत्सम्। आर्जुनेयम्। नि। ऋञ्जे। अहम्। कविः। उशना। पश्यत। मा॥१॥

पदार्थः-(**अहम्**) सृष्टिकर्त्तेश्वरः (**मनुः**) मननशीलो विद्वानिव सर्वविद्याविज्ञापकः (**अभवम्**) अस्मि (**सूर्य्यः**) सूर्य्य इव सर्वप्रकाशकः (**च**) इन्द्र इव सर्वाह्लादकः (**अहम्**) (**कक्षीवान्**) सर्वसृष्टिकक्षा विद्यन्ते यस्मिन्त्सः (**ऋषिः**) मन्त्रार्थवेत्तेव (**अस्मि**) (**विप्रः**) मेधावीव सर्ववेत्ता (**अहम्**) (**कुत्सम्**) वज्रम् (**आर्जुनेयम्**) अर्जुनेनर्जुना विदुषा निष्पादितमिव (**नि**) नितराम् (**ऋञ्जे**) साध्नोमि (**अहम्**) (**कविः**) सर्वशास्त्रविद्विद्वान् (**उशना**) सर्वहितङ्कामयमानः (**पश्यत**) सम्प्रेक्षध्वम्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**मा**) माम्॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽहं मनुः सूर्य्यश्चाभवमहं कक्षीवानृषिर्विप्रोऽस्म्यहमार्जुनेयं कुत्सं न्यृञ्जेऽहमुशना कविरस्मि तं मा यूयं पश्यत॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो जगदीश्वरो मन्त्रिणां मन्त्री प्रकाशकानां प्रकाशको विदुषां विद्वाननभिहतन्यायः सर्वज्ञः सर्वोपकारी वर्त्तते तमेव विद्याधर्म्माचरणयोगाभ्यासैः साक्षात्कुरुत॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अहम्**) मैं सृष्टि को करने वाला ईश्वर (**मनुः**) विचार करने और विद्वान् के सदृश सम्पूर्ण विद्याओं का जनाने वाला (**च**) और (**सूर्य्यः**) सूर्य्य के सदृश सब का प्रकाशक (**अभवम्**) हूँ और (**अहम्**) मैं (**कक्षीवान्**) सम्पूर्ण सृष्टि की कक्षा अर्थात् परम्पराओं से युक्त (**ऋषिः**) मन्त्रों के अर्थ जानने वाले के सदृश (**विप्रः**) बुद्धिमान् के सदृश सब पदार्थों को जानने वाला (**अस्मि**) हूँ और (**अहम्**) मैं (**आर्ज्जुनेयम्**) सरल विद्वान् ने उत्पन्न किये हुए (**कुत्सम्**) वज्र को (**नि**) अत्यन्त (**ऋञ्जे**) सिद्ध करता हूँ और (**अहम्**) मैं (**उशना**) सब के हित की कामना करता हुआ (**कविः**) सम्पूर्ण शास्त्र को जानने वाला विद्वान् हूँ, उस (**मा**) मुझको तुम (**पश्यत**) देखो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर मन्त्रियों अर्थात्

विचार करने वालों में विचार करने और प्रकाश करने वालों का प्रकाशक, विद्वानों में विद्वान्, अखण्डित न्याययुक्त, सर्वज्ञ और सब का उपकारी है; उस ही का विद्या, धर्म्माचरण और योगाऽभ्यास से प्रत्यक्ष करो॥१॥

पुनरीश्वरगुणानाह॥

फिर ईश्वर के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अहं भूमिमददामार्यायाहं वृष्टिं दाशुषे मर्त्याय।

अहमपो अनयं वावशाना मम देवासो अनु केतमायन्॥२॥

अहम्। भूमिम्। अददाम्। आर्याय। अहम्। वृष्टिम्। दाशुषे। मर्त्याय। अहम्। अपः। अनयम्। वावशानाः। मम। देवासः। अनु। केतम्। आयन्॥२॥

पदार्थः-(**अहम्**) सर्वधर्त्ता सर्वस्रष्टेश्वरः (**भूमिम्**) पृथिवीराज्यम् (**अददाम्**) ददामि (**आर्य्याय**) धर्म्यगुणकर्मस्वभावाय (**अहम्**) (**वृष्टिम्**) (**दाशुषे**) दानशीलाय (**मर्त्याय**) मनुष्याय (**अहम्**) (**अपः**) प्राणान् वायून् वा (**अनयम्**) प्रापयेयम् (**वावशानाः**) कामयमानाः (**मम**) (**देवासः**) विद्वांसः (**अनु**) (**केतम्**) प्रज्ञां प्रज्ञापनं वा (**आयन्**) प्राप्नुवन्ति॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽहमार्य्याय भूमिमददामहं दाशुषे मर्त्याय वृष्टिमनयमहमपोऽनयं यस्य मम वावशाना देवासः केतमन्वायंस्तं मां यूयं सेवध्वम्॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो न्यायशीलाय भूमिराज्यं ददाति सर्वस्य सुखाय वृष्टिं करोति सर्वेषां जीवनाय वायुं प्रेरयति यस्योपदेशद्वारा विद्वांसो भवन्ति तमेव सततमनूपाध्वम्॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अहम्**) सबका धारण करने और सब का उत्पन्न करने वाला ईश्वर मैं (**आर्य्याय**) धर्म्मयुक्त गुण, कर्म्म और स्वभाव वाले के लिये (**भूमिम्**) पृथिवी के राज्य को (**अददाम्**) देता हूँ (**अहम्**) मैं (**दाशुषे**) देने वाले (**मर्त्याय**) मनुष्य के लिये (**वृष्टिम्**) वर्षा को (**अनयम्**) प्राप्त कराऊं (**अहम्**) मैं (**अपः**) प्राणों वा पवनों को प्राप्त कराऊं जिस (**मम**) मेरे (**वावशानाः**) कामना करते हुए (**देवासः**) विद्वान् लोग (**केतम्**) बुद्धि वा जनाने के लिये (**अनु, आयन्**) अनुकूल प्राप्त होते हैं, उस मुझको तुम सेवो॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो न्यायकारी स्वभाव वाले के लिये भूमि का राज्य देता, सब के सुख के लिये वृष्टि करता और सब के जीवन के लिये वायु को प्रेरणा करता है और जिसके उपदेश के द्वारा विद्वान् होते हैं, उसी की निरन्तर उपासना करो॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अहं पुरो मन्दसानो व्यैरं नव साकं नवतीः शम्बरस्य।
शततमं वेश्यं सर्वताता दिवोदासमतिथिग्वं यदावम्॥ ३॥

अहम्। पुरः। मन्दसानः। वि। ऐरम्। नव। साकम्। नवतीः। शम्बरस्य। शतऽतमम्। वेश्यम्। सर्वऽताता। दिवःऽदासम्। अतिथिऽग्वम्। यत्। आवम्॥ ३॥

पदार्थः-(**अहम्**) जगदीश्वरः (**पुरः**) प्रथमम् (**मन्दसानः**) आनन्दस्वरूप आनन्दयिता (**वि**) (**ऐरम्**) प्रेरयेयम् (**नव**) (**साकम्**) सह (**नवतीः**) एतत्सङ्ख्याकान् पदार्थान् (**शम्बरस्य**) मेघस्य (**शततमम्**) अतिशयेनाऽसङ्ख्यातम् (**वेश्यम्**) वेशेषु प्रवेशेषु भवम् (**सर्वताता**) सर्वतातौ सर्वस्मिन्नेव सङ्गन्तव्ये जगति (**दिवोदासम्**) विज्ञानमयस्य प्रकाशस्य दातारम् (**अतिथिग्वम्**) योऽतिथीन् गच्छति गमयति वा तम् (**यत्**) यम् (**आवम्**) रक्षयेयम्॥ ३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो मन्दसानोऽहं पुरः शम्बरस्य शततमं वेश्यं नव नवतीः साकं व्यैरम्। सर्वताता यद्यं दिवोदासमतिथिग्वमावन्तं मामुपाध्वं स चाऽऽनन्दी भवति॥ ३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वरो जगदुत्पत्तेः प्राक् चेतनस्वरूपेण वर्त्तमानः स सर्वं जगदुत्पाद्य सर्वैः सह सर्वेषां सम्बन्धं विधाय सर्वहितं विदधाति॥ ३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**मन्दसानः**) आनन्दस्वरूप और आनन्द देने वाला (**अहम्**) मैं जगदीश्वर (**पुरः**) प्रथम (**शम्बरस्य**) मेघ के (**शततमम्**) अत्यन्त असंख्यात (**वेश्यम्**) उत्तम वेशों अर्थात् प्रवेशों में उत्पन्न (**नव, नवतीः**) निन्नानवे पदार्थों को (**साकम्**) साथ (**वि, ऐरम्**) प्रेरणा करूं (**सर्वताता**) सब में ही मिलने योग्य जगत् में (**यत्**) जिस (**दिवोदासम्**) विज्ञानस्वरूप प्रकाश के देनेवाले (**अतिथिग्वम्**) अतिथियों को प्राप्त हो वा प्राप्त करावे उसकी (**आवम्**) रक्षा करूं, उस मेरी उपासना करो और वह आनन्दयुक्त होता है॥ ३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर जगत् की उत्पति के प्रथम चेतनस्वरूप से वर्त्तमान, वह सब जगत् को उत्पन्न करके, सब के साथ सब का सम्बन्ध करके सब का हित करता है॥ ३॥

अथ राजसेनाविषयमाह॥

अब राजसेनाविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र सु ष विभ्यो मरुतो विरस्तु प्र श्येनः श्येनेभ्य आशुपत्वा।
अचक्रया यत्स्वधया सुपर्णो हव्यं भरन्मनवे देवजुष्टम्॥ ४॥

प्र। सु। सः। विऽभ्यः। मरुतः। विः। अस्तु। प्र। श्येनः। श्येनेभ्यः। आशुऽपत्वा। अचक्रया। यत्। स्वधया। सुऽपर्णः। हव्यम्। भरत्। मनवे। देवऽजुष्टम्॥ ४॥

पदार्थः-(**प्र**) (**सु**) (**सः**) (**विभ्यः**) पक्षिभ्यः (**मरुतः**) मनुष्याः (**विः**) पक्षी (**अस्तु**) भवतु (**प्र**) (**श्येनः**) (**श्येनेभ्यः**) पक्षिविशेषेभ्यः (**आशुपत्वा**) सद्यः पतित्वा (**अचक्रया**) अविद्यमानचक्राकारया (**यत्**) यः (**स्वधया**) अन्नादिना (**सुपर्णः**) शोभनपतनः (**हव्यम्**) ग्रहीतुमर्हम् (**भरत्**) दधाति (**मनवे**) मनुष्याय (**देवजुष्टम्**) विद्वद्भिः सेवितम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा श्येनो विः श्येनेभ्यो विभ्य अचक्रया आशुपत्वा वेगं भरत्तथा मरुतो मनुष्याणां सेनावेगादिकं प्रभरद्यद्यो सुपर्णो मनवे स्वधया देवजुष्टं हव्यं प्र सु भरत् स सर्वत्र सुखकार्य्यस्तु॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! अस्यां सृष्टावन्तरिक्षे यथा पक्षिण आकाशे गत्वाऽऽगच्छन्ति तथैव सर्वे लोकलोकान्तरा भ्रमन्ति यः सृष्टिविद्यां जानाति स एव मनुष्यादीनां सुखकारी भवति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**श्येनः**) वाज (**विः**) पक्षी (**श्येनेभ्यः**) वाजनामक (**विभ्यः**) पक्षी विशेषों से (**अचक्रया**) अविद्यमान चक्राकारगति के साथ (**आशुपत्वा**) शीघ्र गिर के वेग को (**भरत्**) धारण करता है, वैसे (**मरुतः**) मनुष्य जन मनुष्यों की सेना के वेगादिगुण को (**प्र**) विशेष करके धारण करता है (**यत्**) जो (**सुपर्णः**) उत्तम पतनयुक्त (**मनवे**) मनुष्य के लिये (**स्वधया**) अन्न आदि से (**देवजुष्टम्**) विद्वानों से सेवित (**हव्यम्**) ग्रहण करने योग्य वस्तु को (**प्र**) अत्यन्त (**सु**) उत्तम प्रकार धारण करता है (**सः**) वह सब स्थानों में सुखकारी (**अस्तु**) हो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! इस सृष्टि और अन्तरिक्ष में जैसे पक्षी आकाश में जाकर आते हैं, वैसे ही सब लोक और लोकान्तर घूमते हैं, जो सृष्टिविद्या को जानता है, वही मनुष्यादिकों का सुखकारी होता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भरद्यदि विरतो वेविजानः पथोरुणा मनोजवा असर्जि।

तूयं ययौ मधुना सोम्येनोत श्रवो विविदे श्येनो अत्र॥५॥

भरत्। यदि। विः। अतः। वेविजानः। पथा। उरुणा। मनःऽजवाः। असर्जि। तूयम्। ययौ। मधुना। सोम्येन। उत। श्रवः। विविदे। श्येनः। अत्र॥५॥

पदार्थः-(**भरत्**) पुष्यात् (**यदि**) (**विः**) पक्षी (**अतः**) अस्मात् स्थानात् (**वेविजानः**) कम्पमानः (**पथा**) मार्गेण (**उरुणा**) बहुना (**मनोजवाः**) मनोवद्वेगाः (**असर्जि**) सृजति (**तूयम्**) तूर्णम् (**ययौ**) याति गच्छति (**मधुना**) मधुरेण (**सोम्येन**) सोमेष्वोषधीषु भवेन (**उत**) अपि (**श्रवः**) अन्नादिकम् (**विविदे**) विन्दति (**श्येनः**) हिंस्रो वेगवान् पक्षी (**अत्र**) अस्मिन् संसारे॥५॥

अन्वयः-हे राजपुरुषा! यद्यत्र भवद्भिर्मनोजवाः सेना असर्जि तर्ह्यतो यथा श्येनो विर्वेविजानः सन्नुरुणा पथा तूयं ययौ तथा यो राजा मधुना सोम्येन श्रवोऽन्नमुत सेनां भरत् स विजयं विविदे॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजजना! भवन्तो यावच्छ्येनवद्वेगवतीं सेनां न कुर्वन्ति तावद्विजयधनलाभो भवितुमशक्यः॥५॥

पदार्थः-हे राजजनो! **(यदि)** जो **(अत्र)** इस संसार में आप लोगों से **(मनोजवाः)** मन के सदृश वेगयुक्त सेनाओं को **(असर्जि)** बनाता है तो **(अतः)** इस स्थान से जैसे **(श्येनः)** हिंसा करने वाला वेगयुक्त **(विः)** पक्षी **(वेविजानः)** कम्पता हुआ **(उरुणा)** बहुत **(पथा)** मार्ग से **(तूयम्)** शीघ्र **(ययौ)** जाता है, वैसे जो राजा **(मधुना)** मधुर **(सोम्येन)** सोम अर्थात् ओषधियों में उत्पन्न हुए रस से **(श्रवः)** अन्न आदि को **(उत)** और सेना को **(भरत्)** पुष्ट करे, वह विजय को **(विविदे)** प्राप्त होता है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजजनो! आप लोग जब तक वाजपक्षी के के सदृश वेग युक्त सेना को नहीं करते हैं, तब तक विजय से धन का लाभ नहीं हो सकता है॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋजीपी श्येनो ददमानो अंशुं परावतः शकुनो मन्द्रं मदम्।

सोमं भरद् दादृहाणो देवावान् दिवो अमुष्मादुत्तरादादाय॥६॥

ऋजीपी। श्येनः। ददमानः। अंशुम्। पराऽवतः। शकुनः। मन्द्रम्। मदम्। सोमम्। भरत्। दुदृहाणः। देवऽवान्। दिवः। अमुष्मात्। उत्ऽतरात्। आऽदाय॥६॥

पदार्थः-**(ऋजीपी)** सरलगामी **(श्येनः)** प्रवृद्धवेगः **(ददमानः)** **(अंशुम्)** विज्ञानादिकं पदार्थम् **(परावतः)** दूरदेशात् **(शकुनः)** पक्षी **(मन्द्रम्)** प्रशंसनीयम् **(मदम्)** आनन्दकरम् **(सोमम्)** ऐश्वर्य्यम् **(भरत्)** धरति **(दादृहाणः)** वर्धमानः **(देवावान्)** बहवो देवा विद्वांसो विद्यन्ते यस्य सः **(दिवः)** विद्युत्प्रकाशात् **(अमुष्मात्)** परोक्षात् **(उत्तरात्)** **(आदाय)**॥६॥

अन्वयः-हे राजन्! यथर्जीपी श्येनः शकुनः परावतो देशात् पतित्वा स्वाभीष्टं पदार्थं भरत् तथैव भवानंशुं मदं मन्द्रं सोमं ददमानो देवावानमुष्मादुत्तराद् दिवो विद्यामादाय दादृहाणो भवेत्॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा पक्षिणो भूमेरुत्थायाऽन्तरिक्षमार्गेण गत्वाऽऽगत्य स्वप्रयोजनं साध्नुवन्ति तथैव देशदेशान्तरं विमानादिना गत्वा स्वप्रयोजनं साध्नुवन्तु॥६॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे **(ऋजीपी)** सीधी चाल वाला **(श्येनः)** बढ़े हुए वेग से युक्त **(शकुनः)** पक्षी **(परावतः)** दूर देश से गिर के अपने अपेक्षित पदार्थ को **(भरत्)** धारण करता है, वैसे ही आप **(अंशुम्)** विज्ञान आदि पदार्थ **(मदम्)** आनन्द करने वाले **(मन्द्रम्)** प्रशंसा करने योग्य **(सोमम्)** ऐश्वर्य्य

को **(ददमानः)** देते हुए **(देवावान्)** बहुत विद्वानों से युक्त **(अमुष्मात्)** परोक्ष **(उत्तरात्)** आने वाले **(दिवः)** बिजुली के प्रकाश से विद्या को **(आदाय)** ग्रहण करके **(दादृहाणः)** बढ़ते हुए होवें॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे पक्षी पृथिवी से उड़ के अन्तरिक्ष के मार्ग से जाकर और आकर अपने प्रयोजन को सिद्ध करते हैं, वैसे ही देश-देशान्तर में विमान आदि से जाकर अपने प्रयोजन को सिद्ध करो॥६॥

पुनः प्रकारान्तरेण पूर्वोक्तविषयमाह॥

फिर प्रकारान्तर से पूर्वोक्त विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आदाय श्येनो अभरत्सोमं सहस्रं सवाँ अयुतं च साकम्।

अत्रा पुरंधिरजहादरातीर्मदे सोमस्य मूरा अमूरः॥७॥ १५॥

आऽदाय। श्येनः। अभरत्। सोमम्। सहस्रम्। सवान्। अयुतम्। च। साकम्। अत्र। पुरम्ऽधिः। अजहात्। अरातीः। मदे। सोमस्य। मूराः। अमूरः॥७॥

पदार्थः-(आदाय) गृहीत्वा **(श्येनः)** श्येनपक्षिवत् **(अभरत्)** धरेत् **(सोमम्)** ऐश्वर्य्यमोषध्यादिकं वा **(सहस्रम्) (सवान्)** निष्पन्नान् पदार्थान् **(अयुतम्)** अपरिमितसङ्ख्याकम् **(च) (साकम्) (अत्रा)** अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(पुरन्धिः)** यः पुरं दधाति **(अजहात्)** जहाति त्यजति **(अरातीः)** शत्रून् **(मदे)** आनन्दे **(सोमस्य)** ऐश्वर्य्यस्य **(मूराः)** मूढाः **(अमूरः)** मोहरहितः॥७॥

अन्वयः-यः सेनेशः श्येन इव सहस्रं सोममयुतञ्च सवानादाय सेनाराष्ट्रेऽभरत् स अमूरोऽत्रा पुरन्धिः सोमस्य मदे मूरा अरातीरजहात् सोऽत्र साकं विजयमाप्नुयात्॥७॥

भावार्थः-ये शत्रुबलादधिकं बलं शत्रोः सामग्र्याः शतशोऽधिकां सामग्रीं सुशिक्षितां सेनां विदुषोऽध्यक्षान् कृत्वा युध्येरँस्ते ध्रुवं विजयमाप्नुयुः॥७॥

अत्रेश्वरराजसेनागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षड्विंशं सूक्तं पञ्चदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो सेना का स्वामी **(श्येनः)** वाज नामक पक्षी के सदृश **(सहस्रम्)** सहस्र संख्यायुक्त **(सोमम्)** ऐश्वर्य्य वा ओषधि आदि पदार्थ **(च)** और **(अयुतम्)** असंख्य **(सवान्)** उत्पन्न हुए पदार्थों को **(आदाय)** ग्रहण करके सेना और राज्य को **(अभरत्)** धारण करे वह **(अमूरः)** निर्मोह जन **(अत्रा)** इस में **(पुरन्धिः)** पुर को धारण करने वाला **(सोमस्य)** ऐश्वर्य्य सम्बन्धी **(मदे)** आनन्द के निमित्त **(मूराः)** मूढ़ **(अरातीः)** शत्रुओं का **(अजहात्)** त्याग करता है, वह इसमें **(साकम्)** साथ ही विजय को प्राप्त

होवे॥७॥

भावार्थः-जो शत्रु के बल से अधिक बल, शत्रु की सामग्री से सैकड़ों गुणी अधिक सामग्री, उत्तम प्रकार शिक्षायुक्त सेना और विद्वानों को अध्यक्ष करके युद्ध करें, वे निश्चय विजय को प्राप्त होवें॥७॥

इस सूक्त में ईश्वर और राजसेना के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह छब्बीसवां सूक्त और पन्द्रहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य सप्तविंशतितमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ४ निचृत्त्रिष्टुप्। २ विराट् त्रिष्टुप्। ३ त्रिष्टुप् छन्दः। ५ निचृच्छक्वरीछन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ जीवगुणानाह॥

अब पांच ऋचा वाले सत्ताईसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में जीव के गुणों को कहते हैं॥

गर्भे नु सन्नन्वेषामवेदमहं देवानां जनिमानि विश्वा।

शतं मा पुर आयसीररक्षन्नध श्येनो जवसा निरदीयम्॥१॥

गर्भे। नु। सन्। अनु। एषाम्। अवेदम्। अहम्। देवानाम्। जनिमानि। विश्वा। शतम्। मा। पुरः। आयसीः। अरक्षन्। अध। श्येनः। जवसा। निः। अदीयम्॥१॥

पदार्थः-(गर्भे) **(नु)** सद्यः **(सन्)** **(अनु)** पश्चात् **(एषाम्)** **(अवेदम्)** विजानामि **(अहम्)** विद्वान् **(देवानाम्)** दिव्यानां पृथिव्यादीनां पदार्थानां विदुषां वा **(जनिमानि)** जन्मानि **(विश्वा)** सर्वाणि **(शतम्)** **(मा)** माम् **(पुरः)** नगर्य्यः **(आयसीः)** सुवर्णमयीर्लोहमयीर्वा **(अरक्षन्)** रक्षन्ति **(अध)** अथ **(श्येनः)** **(जवसा)** वेगेन **(निः)** नितराम् **(अदीयम्)** निःसरेयम्॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽहं गर्भे सन्नेषां देवानां विश्वा जनिमान्यन्ववेदं यं मा आयसीः शतं पुरोऽरक्षन्नध सोऽहं श्येन इवाऽस्माच्छरीराज्जवसा नु निरदीयम्॥१॥

भावार्थः-मनुष्यैस्सदा सृष्टिविद्याबोधस्य जन्ममरणयोः शारीरिकी च विद्या विज्ञेया, यतो सदैव निर्भयता वर्त्तेत॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(अहम्)** मैं विद्वान् **(गर्भे)** गर्भ में **(सन्)** वर्त्तमान **(एषाम्)** इन **(देवानाम्)** श्रेष्ठ पृथिवी आदि पदार्थ वा विद्वानों के **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(जनिमानि)** जन्मों को **(अनु, अवेदम्)** अनुकूल जानता हूँ जिस **(मा)** मुझको **(आयसीः)** सुवर्ण वाली वा लोह वाली **(शतम्)** सौ **(पुरः)** नगरी **(अरक्षन्)** रक्षा करती हैं **(अध)** इसके अनन्तर सो मैं **(श्येनः)** वाज पक्षी के सदृश इस शरीर से **(जवसा)** वेग के साथ **(नु)** शीघ्र **(निः)** अत्यन्त **(अदीयम्)** निकलूं॥१॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सदा सृष्टिविद्या बोध और जन्म-मरण की शरीर सम्बन्धिनी विद्या जानें, जिससे सदैव निर्भयता वर्त्ते॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न घा स मामप जोषं जभाराभीमास त्वक्षसा वीर्येण।

ईर्मा पुरंधिरजहादरातीरुत वाताँ अतरच्छूशुवानः॥२॥

न। घ। सः। माम्। अप। जोषम्। जभार। अभि। ईम्। आस। त्वक्षसा। वीर्येण। ईर्मा। पुरम्ऽधिः। अजहात्। अरातीः। उत। वातान्। अतरत्। शूशुवानः॥ २॥

पदार्थः-(**न**) निषेधे (**घा**) एव। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**सः**) (**माम्**) (**अप**) (**जोषम्**) विपरीतसेवनम् (**जभार**) धरेत् (**अभि**) (**ईम्**) सर्वतः (**आस**) भवेयम् (**त्वक्षसा**) तीव्रेण (**वीर्येण**) बलेन (**ईर्मा**) प्रेरकः (**पुरन्धिः**) बहुधरः (**अजहात्**) (**अरातीः**) शत्रून् (**उत**) (**वातान्**) वायुवद्वेगयुक्तान् (**अतरत्**) तरेत् (**शूशुवानः**) वर्धमानः॥ २॥

अन्वयः-यः शूशुवानः पुरन्धिरीर्मा त्वक्षसा वीर्येण वातानिवाऽरातीरजहादुत शत्रुबलमतरत् स घा मामप जोषं न जभार एतेनाऽहमीं सर्वतस्सुरभ्यास॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या वायुवद्बलिष्ठा भूत्वा शत्रून् धर्षन्ति ते दुःखं तीर्त्वा दुष्टकर्म्म त्यक्त्वा सुखिनो भवन्ति॥ २॥

पदार्थः-जो (**शूशुवानः**) बढ़ने (**पुरन्धिः**) बहुत पदार्थों को धारण करने और (**ईर्मा**) प्रेरणा करने वाला (**त्वक्षसा**) तीव्र (**वीर्य्येण**) बल से (**वातान्**) वायु के सदृश वेगयुक्त पदार्थों के समान (**अरातीः**) शत्रुओं का (**अजहात्**) त्याग करे (**उत**) और शत्रुओं के बल के (**अतरत्**) पार होवे (**सः, घा**) वही (**माम्**) मेरे (**अप, जोषम्**) विपरीत सेवन को (**न**) नहीं (**जभार**) धारण करे, इससे मैं (**ईम्**) सब प्रकार सुखयुक्त (**अभि, आस**) सब ओर से होऊँ॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य वायु के सदृश बलवान् होकर शत्रुओं को दबाते हैं, वे दुःख को लांघ और और बुरे कर्म को त्याग के सुखी होते हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अव यच्छ्येनो अस्वनीदध द्योर्वि यद्यदि वात ऊहुः पुरंधिम्।
सृजद्यदस्मा अव ह क्षिपज्ज्यां कृशानुरस्ता मनसा भुरण्यन्॥ ३॥

अव। यत्। श्येनः। अस्वनीत्। अध। द्योः। वि। यत्। यदि। वा। अतः। ऊहुः। पुरम्ऽधिम्। सृजत्। यत्। अस्मै। अव। ह। क्षिपत्। ज्याम्। कृशानुः। अस्ता। मनसा। भुरण्यन्॥ ३॥

पदार्थः-(**अव**) (**यत्**) यः (**श्येनः**) श्येन इव वर्त्तमानः (**अस्वनीत्**) शब्दयेदुपदिशेत् (**अध**) (**द्योः**) प्रकाशस्य (**वि**) (**यत्**) यः (**यदि**) (**वा**) (**अतः**) (**ऊहुः**) वहन्ति (**पुरन्धिम्**) बहुधरं राजानम् (**सृजत्**) सृजेत् (**यत्**) यः (**अस्मै**) (**अव**) (**ह**) खलु (**क्षिपत्**) प्रेरयति (**ज्याम्**) धनुषः प्रत्यञ्चाम् (**कृशानुः**) शत्रूणां कर्षकः (**अस्ता**) प्रक्षेप्ता (**मनसा**) अन्तःकरणेन (**भुरण्यन्**) धरन् पुष्यन् वा॥ ३॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! यद्यः श्येन इवावास्वनीदध यद् द्योः पुरन्धिं सृजद् यद्वा शत्रुबलं कम्पयेदस्मै ह ज्यामवक्षिपदतः कृशानुरिव मनसा भुरण्यन्नस्ता व्यवक्षिपद्यदि तमन्य ऊहुस्तर्हि स सर्वत्र विजयी स्यात्॥३॥

भावार्थः-ये मनुष्या सत्यमुपदेष्टारं सत्यन्यायकरं शत्रूणां जेतारं प्रजापालकं राजानं प्राप्नुयुस्ते सर्वतः सुखिनः स्युः॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्)** जो **(श्येनः)** वाज पक्षी के सदृश वर्त्तमान **(अव, अस्वनीत्)** शब्द करे उपदेश देवे **(अध)** इसके अनन्तर **(यत्)** जो **(द्योः)** प्रकाश के सम्बन्ध में **(पुरन्धिम्)** बहुत धारण करने वाले राजा को **(सृजत्)** उत्पन्न करे **(यत्, वा)** अथवा जो शत्रुबल को कम्पावे **(अस्मै,ह)** इसी के लिये **(ज्याम्)** धनुष् की तांत की **(अव, क्षिपत्)** प्रेरणा देता है **(अतः)** इस कारण **(कृशानुः)** शत्रुओं को खींचने वाला जैसे वैसे **(मनसा)** अन्तःकरण से **(भुरण्यन्)** पदार्थों का धारण वा पोषण करता हुआ **(अस्ता)** फेंकनेवाला **(वि)** विशेष करके फेंकता है **(यदि)** जो उसको अन्य जन **(ऊहुः)** पहुँचाते हैं तो वह सब स्थान में विजयी होवे॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य सत्य के उपदेश करने, सत्य न्याय करने, शत्रुओं के जीतने और प्रजा के पालन करने वाले राजा को प्राप्त होवें, वे सब प्रकार से सुखी होवें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋजिप्य ईमिन्द्रावतो न भुज्युं श्येनो जभार बृहतो अधि ष्णोः।

अन्तः पतत् पतत्र्यस्य पर्णमध यामनि प्रसितस्य तद्वेः॥४॥

ऋजिप्यः। ईम्। इन्द्रऽवतः। न। भुज्युम्। श्येनः। जभार। बृहतः। अधि। स्नोः। अन्तरिति। पतत्। पतत्रि। अस्य। पर्णम्। अध। यामनि। प्रऽसितस्य। तत्। वेरिति वेः॥४॥

पदार्थः-**(ऋजिप्यः)** य ऋजुगामिषु साधुः **(ईम्)** सर्वतः **(इन्द्रावतः)** ऐश्वर्य्ययुक्तान् **(न)** इव **(भुज्युम्)** भोक्तारम् **(श्येनः)** श्येन इव **(जभार)** धरति **(बृहतः)** महतः **(अधि)** **(स्नोः)** प्रकाशमानात् पुरुषार्थात् **(अन्तः)** मध्ये **(पतत्)** पतति **(पतत्रि)** पतनशीलम् **(अस्य)** **(पर्णम्)** पत्रम् **(अध)** **(यामनि)** मार्गे **(प्रसितस्य)** बद्धस्य **(तत्)** **(वेः)** पक्षिणः॥४॥

अन्वयः-य ऋजिप्यो मनुष्यः श्येन इव बृहतः स्नोरिन्द्रावतो न भुज्युमधि जभार। अस्य पर्णं यामनि प्रसितस्य वेर्वत् पतत्रि पर्णमन्तः पतत् तज्जभार सोऽधेमानन्दं प्राप्नुयात्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा श्येनः पक्षी स्वपुरुषार्थेन पुष्कलं भोगं प्राप्नोति सद्यो गच्छति तथैव पुरुषार्थिनो जनाः पुष्कलं सुखं प्राप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-जो **(ऋजिप्यः)** सरल मार्ग चलनेवालों में श्रेष्ठ मनुष्य **(श्येनः)** वाज पक्षी के सदृश **(बृहतः)** बड़े **(स्नोः)** प्रकाशमान पुरुषार्थ से **(इन्द्रावतः)** ऐश्वर्य्य से युक्तों को **(न)** जैसे वैसे **(भुज्युम्)** भोग करने वाले को **(अधि, जभार)** अधिक धारण करता है **(अस्य)** इसका **(पर्णम्)** पत्र **(यामनि)** मार्ग में और **(प्रसितस्य)** बंधे हुए **(वेः)** पक्षी का जो **(पतत्रि)** गिरनेवाला पत्र **(अन्तः)** मध्य में **(पतत्)** गिरता है **(तत्)** उसको **(जभार)** धारण करता है वह **(अध)** इसके अनन्तर **(ईम्)** सब प्रकार से आनन्द को प्राप्त होवे॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे वाज पक्षी अपने पुरुषार्थ से बहुत भोग को प्राप्त होता और शीघ्र चलता है, वैसे ही पुरुषार्थ करने वाले जन बहुत सुख को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अध श्वेतं कलशं गोभिरक्तमापिप्यानं मघवा शुक्रमन्धः।
अध्वर्युभिः प्रयतं मध्वो अग्रमिन्द्रो मदाय प्रति धत्पिबध्यै
शूरो मदाय प्रति धत् पिबध्यै॥५॥१६॥

अध। श्वेतम्। कलशम्। गोभिः। अक्तम्। आऽपिप्यानम्। मघऽवा। शुक्रम्। अन्धः। अध्वर्युऽभिः। प्रऽयतम्। मध्वः। अग्रम्। इन्द्रः। मदाय। प्रति। धत्। पिबध्यै। शूरः। मदाय। प्रति। धत्। पिबध्यै॥५॥

पदार्थः-**(अध)** **(श्वेतम्)** **(कलशम्)** कुम्भम् **(गोभिः)** धेनुभिः **(अक्तम्)** सम्बद्धम् **(आपिप्यानम्)** सर्वतो वर्धमानम् **(मघवा)** बहुपूजितधनः **(शुक्रम्)** उदकम्। **शुक्रमित्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२) **(अन्धः)** अन्नम् **(अध्वर्युभिः)** आत्मनोऽध्वरमहिंसामिच्छुभिः **(प्रयतम्)** प्रयत्नसाध्यम् **(मध्वः)** मधुरादिगुणस्य **(अग्रम्)** **(इन्द्रः)** परमैश्वर्य्यवान् **(मदाय)** आनन्दाय **(प्रति)** **(धत्)** प्रतिदधाति **(पिबध्यै)** पातुम् **(शूरः)** निर्भयः **(मदाय)** **(प्रति)** **(धत्)** **(पिबध्यै)** पातुम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो मघवा गोभिरक्तमापिप्यानं श्वेतं कलशं शुक्रमन्धः पिबध्यै मदाय प्रतिधदध यः शूर इन्द्रो मदायाऽध्वर्य्युभिः सह मध्वोऽग्रं प्रयतं पिबध्यै प्रतिधत् सोऽक्षयं बलमाप्नोति॥५॥

भावार्थः-ये युक्ताहारविहारा अहिंस्राः शूरवीराः स्युस्ते सदा विजयमाप्नुयुरिति॥५॥

अत्र जीवगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तविंशतितमं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(मघवा)** बहुत श्रेष्ठ धनयुक्त **(गोभिः)** गौओं से **(अक्तम्)** सम्बद्ध

(आपिप्यानम्) बढ़े हुए **(श्वेतम्)** श्वेत वर्ण वाले **(कलशम्)** घड़े **(शुक्रम्)** जल और **(अन्धः)** अन्न को **(पिबध्यै)** पीने के लिये **(मदाय)** आनन्द के लिये **(प्रति, धत्)** धारण करता है **(अध)** और जो **(शूरः)** भय से रहित **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य वाला **(मदाय)** आनन्द के लिये **(अध्वर्य्युभिः)** अपने नहीं नाश होने की इच्छा करने वालों के साथ **(मध्वः)** मधुर आदि गुणों के **(अग्रम्)** प्रथम **(प्रयतम्)** प्रयत्न से सिद्ध करने योग्य आनन्द के लिये **(पिबध्यै)** पीने को **(प्रति, धत्)** धारण करता है, वह नहीं नष्ट होने वाले बल को प्राप्त होता है॥५॥

भावार्थः-जो नियमित आहार और विहार करने और नहीं हिंसा करने वाले शूरवीर होवें, वे सदा विजय को प्राप्त होवें॥५॥

इस सूक्त में जीव के गुणों के वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सत्ताईसवां सूक्त और सोलहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्याष्टविंशतितमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रासोमौ देवते। १ निचृत्त्रिष्टुप्। ३ विराट्त्रिष्टुप्। ४ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ भुरिक् पङ्क्तिः। ५ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथेन्द्रपदवाच्यसूर्य्यदृष्टान्तेन राजप्रजागुणानाह॥

अब पांच ऋचा वाले अट्ठाईसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में इन्द्रपदवाच्य सूर्य्यदृष्टान्त से राजप्रजागुणों का उपदेश करते हैं॥

त्वा युजा तव तत्सोम सख्य इन्द्रो अपो मनवे सस्रुतस्कः।

अहन्नहिमरिणात् सप्त सिन्धूनपावृणोदपिहितेव खानि॥१॥

त्वा। युजा। तव। तत्। सोम। सख्ये। इन्द्रः। अपः। मनवे। सऽस्रुतः। करिति कः। अहन्। अहिम्। अरिणात्। सप्त। सिन्धून्। अप। अवृणोत्। अपिहिताऽइव। खानि॥१॥

पदार्थः-(**त्वा**) त्वाम् (**युजा**) युक्तेन (**तव**) (**तत्**) (**सोम**) ऐश्वर्य्यसम्पन्न (**सख्ये**) मित्रत्वाय (**इन्द्रः**) सूर्य्य इव राजा (**अपः**) जलानि (**मनवे**) मनुष्याय (**सस्रुतः**) गमनशीलान् (**कः**) करोति (**अहन्**) हन्ति (**अहिम्**) मेघम् (**अरिणात्**) प्रेरयति (**सप्त**) एतत्सङ्ख्याकान् (**सिन्धून्**) नदीः (**अप**) (**अवृणोत्**) आच्छादयति (**अपिहितेव**) आच्छादितानीव। (**खानि**) इन्द्रियाणि॥१॥

अन्वयः-हे सोम! तव सख्ये यथेन्द्रो मनवे सस्रुतः कोऽहिमहन् सप्त सिन्धूनरिणात् खान्यपिहितेवापोऽपावृणोत् तथा तत्त्वा युजा पुरुषेण कर्म्म कर्त्तुं शक्यम्॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्य्यः सर्वेषां सुखाय वृष्टिं कृत्वा सर्वानानन्दयति तथैव विदुषां मित्रता सर्वानन्दप्रदाऽस्तीति वेद्यम्॥१॥

पदार्थः-हे (**सोम**) ऐश्वर्य्य से युक्त (**तव**) आपकी (**सख्ये**) मित्रता के लिये जैसे (**इन्द्रः**) सूर्य्य के सदृश राजा (**मनवे**) मनुष्य के लिये (**सस्रुतः**) चलने वालों को (**कः**) करता (**अहिम्**) मेघ का (**अहन्**) नाश करता (**सप्त**) सात (**सिन्धून्**) नदियों को (**अरिणात्**) प्रेरित करता और (**खानि**) इन्द्रियाँ (**अपिहितेव**) घिरी हुईं सी (**अपः**) जलों को (**अप, अवृणोत्**) घेरती हैं, वैसे (**तत्**) वह (**त्वा**) आपको (**युजा**) युक्त पुरुष के साथ कर्म करने योग्य हो सकता है॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमावाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य सब के सुख के लिये वर्षा करके सब को आनन्द देता है, वैसे ही विद्वानों की मित्रता सब को आनन्द देने वाली है, यह जानना चाहिये॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वा युजा नि खिदत् सूर्यस्येन्द्रश्चक्रं सहसा सद्य इन्दो।

अधि ष्णुना बृहता वर्तमानं महो द्रुहो अप विश्वायु धायि॥२॥

त्वा। युजा। नि। खिदत्। सूर्यस्य। इन्द्रः। चक्रम्। सहसा। सद्यः। इन्दो इति। अधि। स्नुना। बृहता। वर्तमानम्। महः। द्रुहः। अप। विश्वऽआयु। धायि॥२॥

पदार्थः-(**त्वा**) त्वाम् (**युजा**) युक्तेन (**नि**) (**खिदत्**) दैन्यमप्राप्नोति (**सूर्यस्य**) (**इन्द्रः**) विद्युत् (**चक्रम्**) (**सहसा**) बलेन (**सद्यः**) शीघ्रम् (**इन्दो**) ऐश्वर्य्यवन् (**अधि**) उपरि (**स्नुना**) व्याप्तेन (**बृहता**) महता (**वर्त्तमानम्**) (**महः**) महत् (**द्रुहः**) द्वेष्टुः (**अप**) (**विश्वायु**) सर्वमायुः (**धायि**) ध्रियते॥२॥

अन्वयः-हे इन्दो! त्वा युजा दुहोऽप धायि महो वर्त्तमानं विश्वायु अधिधायि बृहता स्नुना सहसा सद्यः सूर्य्यस्येन्द्र इव चक्रं यो नि खिदत् स इष्टं सुखमाप्नुयात्॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विदुषा राज्ञा पालिता विद्याधर्म्मब्रह्मचर्य्यादियुक्ता-श्चिरञ्जीविनः स्युस्ते शत्रूणां विजेतारो भवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे (**इन्दो**) ऐश्वर्य्यवान्! (**त्वा**) आपको (**युजा**) युक्तजन से (**द्रुहः**) द्वेष करने वाले का सम्बन्ध (**अप, धायि**) नहीं धारण किया जाता और (**महः**) बड़ी (**वर्त्तमानम्**) वर्त्तमान (**विश्वायु**) सम्पूर्ण अवस्था (**अधि**) अधिक धारण की जाती है (**बृहता**) बड़े (**स्नुना**) व्याप्त (**सहसा**) बल से (**सद्यः**) शीघ्र (**सूर्य्यस्य**) सूर्य्य की (**इन्द्रः**) बिजुली के सदृश (**चक्रम्**) चक्र की जो (**नि, खिदत्**) दीनता को प्राप्त होता है, वह अपेक्षित सुख को प्राप्त होवे॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्वान् राजा से पालित विद्या धर्म्म और ब्रह्मचर्य्य आदि से युक्त अतिकाल पर्य्यन्त जीवने वाले होवें, वे शत्रुओं के जीतने वाले होते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अहन्निन्द्रो अदहदग्निरिन्दो पुरा दस्यून् मध्यंदिनादभीके।

दुर्गे दुरोणे क्रत्वा न यातां पुरू सहस्रा शर्वा नि बर्हीत्॥३॥

अहन्। इन्द्रः। अदहत्। अग्निः। इन्दो इति। पुरा। दस्यून्। मध्यंदिनात्। अभीके। दुःऽगे। दुरोणे। क्रत्वा। न। याताम्। पुरु। सहस्रा। शर्वा। नि। बर्हीत्॥३॥

पदार्थः-(**अहन्**) हन्ति (**इन्द्रः**) सूर्य्य इव राजा (**अदहत्**) दहति भस्मीकरोति (**अग्निः**) पावक इव (**इन्दो**) परमैश्वर्य्ययुक्त प्रजाजन (**पुरा**) प्रथमतः (**दस्यून्**) महासाहसिकान् (**मध्यन्दिनात्**) मध्यन्दिने वर्त्तमानात् तापात् (**अभीके**) समीपे (**दुर्गे**) प्रकोटे (**दुरोणे**) गृहे (**क्रत्वा**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**न**) इव (**याताम्**) गच्छताम् (**पुरू**) बहूनि (**सहस्रा**) सहस्राणि (**शर्वा**) सर्वाणि हिंसनानि (**नि**) (**बर्हीत्**)॥३॥

अन्वयः-हे इन्दो! ये इन्द्र इव मध्यन्दिनाद् दस्यूनहन्नग्निरिवाभीके दुष्टानदहत् पुरा दुर्गे दुरोणे क्रत्वा न पुरू शर्वा सहस्रा नि बर्हीत् स त्वं चैवं सुखं याताम्॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा मध्याह्ने सूर्य्यस्सर्वान् प्रतापयति तथैव न्यायशीलो राजा दुष्टाञ्चोरादीन् दुःखयति, अग्निवद्भस्मीभूतान् कृत्वा सर्वा हिंसा निवारयेत्॥३॥

पदार्थः-हे **(इन्दो)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त प्रजाजन जो **(इन्द्रः)** सूर्य्य के सदृश राजा **(मध्यन्दिनात्)** मध्य दिन में वर्त्तमान ताप से **(दस्यून्)** बड़े साहस करने वालों को **(अहन्)** नाश करता है **(अग्निः)** अग्नि के सदृश **(अभीके)** समीप में दुष्टों को **(अदहत्)** जलाता है और **(पुरा)** पहिले से **(दुर्गे)** राजगढ़ **(दुरोणे)** गृह में **(क्रत्वा)** बुद्धि वा कर्म्म के **(न)** सदृश **(पुरू)** बहुत **(शर्वा)** सम्पूर्ण हिंसनों और **(सहस्रा)** हजारों को **(नि, बर्हीत्)** नाश करे वह और आप इस प्रकार से सुख को **(याताम्)** प्राप्त होओ॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमावाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे मध्याह्न में सूर्य्य सब को तपाता है, वैसे ही न्यायकारी राजा दुष्ट चोरादिकों को दुःख देता है और अग्नि के सदृश भस्मीभूत करके सम्पूर्ण हिंसा दूर करे॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विश्वस्मात् सीमधमाँ इन्द्र दस्यून् विशो दासीरकृणोरप्रशस्ताः।

अबाधेथाममृणतं नि शत्रूनविन्देथामपचितिं वधत्रैः॥४॥

विश्वस्मात्। सीम्। अधमान्। इन्द्र। दस्यून्। विशः। दासीः। अकृणोः। अप्रऽशस्ताः। अबाधेथाम्। अमृणतम्। नि। शत्रून्। अविन्देथाम्। अपऽचितिम्। वधत्रैः॥४॥

पदार्थः-**(विश्वस्मात्)** सर्वस्मात् **(सीम्)** आदित्य इव **(अधमान्)** पापाचारान् **(इन्द्र)** दुष्टविदारक **(दस्यून्)** **(विशः)** प्रजाः **(दासीः)** दानशीलाः **(अकृणोः)** कुर्य्याः **(अप्रशस्ताः)** प्रशस्तसुखरहिताः **(अबाधेथाम्)** बाधेथाम् **(अमृणतम्)** सुखयतम् **(नि)** नितराम् **(शत्रून्)** **(अविन्देथाम्)** प्राप्नुतम् **(अपचितिम्)** सत्कारम् **(वधत्रैः)** वधैः॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं सीमिव दासीर्विशोऽप्रशस्ताः कुर्वतोऽधमान् दस्यून् विश्वस्मात् पीडितानकृणोः। हे राजप्रजाजनौ! मिलित्वा युवां वधत्रैः शत्रूनबाधेथां प्रजा अमृणतमपचितिं न्यविन्देथाम्॥४॥

भावार्थः-हे राजादयो राजजना! ये साहसिका ये च कूपदेशेन प्रजादूषका नीचा जनाः स्युस्तान् सततं बाधन्ताम् श्रेष्ठान्त्सत्कुर्वन्तु एवङ्कृते युष्माकं महान् सत्कारो भविष्यतीति वेद्यम्॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** दुष्टों के नाश करने वाले आप **(सीम्)** सूर्य्य के सदृश **(दासीः)** देने वाली **(विशः)** प्रजाओं को **(अप्रशस्ताः)** श्रेष्ठ सुख से रहित करते हुए **(अधमान्)** पाप के आचरण करने वाले **(दस्यून्)** दुष्टों को **(विश्वस्मात्)** सब से पीड़ायुक्त **(अकृणोः)** करें। हे राजा और प्रजाजनो मिलकर आप दोनों **(वधत्रैः)** वधों से **(शत्रून्)** शत्रुओं को **(अबाधेथाम्)** बाधा देओ और प्रजा को **(अपृणतम्)** सुख देओ **(अपचितिम्)** सत्कार को **(नि)** अत्यन्त **(अविन्देथाम्)** प्राप्त होओ॥४॥

भावार्थः-हे राजा आदि राजजनो! जो साहस कर्म्म करने और जो दुष्ट उपदेश से प्रजा को दोषयुक्त करनेवाले नीच जन होवें, उनको निरन्तर बाधा देओ और श्रेष्ठों का सत्कार करो। ऐसा करने पर आप लोगों का बड़ा सत्कार होगा, यह जानना चाहिये॥४॥

पुना राजप्रजागुणानाह॥

फिर राजप्रजा के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवा सत्यं मघवाना युवं तदिन्द्रश्च सोमोर्वमश्व्यं गोः।

आदर्दृतमपिहितान्यश्ना रिरिचथुः क्षाश्चित्ततृदाना॥५॥१७॥

एव। सत्यम्। मघऽवाना। युवम्। तत्। इन्द्रः। च। सोम। ऊर्वम्। अश्व्यम्। गोः। आ। अदर्दृतम्। अपिऽहितानि। अश्ना। रिरिचथुः। क्षाः। चित्। ततृदाना॥५॥

पदार्थः-**(एवा)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(सत्यम्)** **(मघवाना)** बहुधनयुक्तौ राजप्रजाजनौ **(युवम्)** **(तत्)** **(इन्द्रः)** राजा **(च)** **(सोम)** सोम्यगुणसम्पन्नौ **(ऊर्वम्)** आच्छादकम् **(अश्व्यम्)** अश्वेषु भवम् **(गोः)** पृथिव्याः **(आ)** **(अदर्दृतम्)** भृशं विदारयतम् **(अपिहितानि)** आच्छादितानि **(अश्ना)** भोक्तव्यानि **(रिरिचथुः)** रेचताम् **(क्षाः)** पृथिवीः **(चित्)** **(ततृदाना)** दुःखस्य हिंसकौ॥५॥

अन्वयः-हे सोम! मघवाना युवं यत्सत्यं गोरूर्वमश्व्यं प्राप्य शत्रूनादर्दृतं तदिन्द्रः सङ्गृह्य शत्रून् हिंस्याद् यान्यपिहितान्यश्ना रिरिचथुः क्षाश्च चिद्रिरिचथुस्ताः प्राप्य दुष्टानां ततृदाना स्यातामेवमेवेन्द्रः स्यात्॥५॥

भावार्थः-यदि राजाऽमात्यसेनाप्रजाजनाः परस्परस्मिन् प्रीतिं विधाय राज्यशासनं कुर्य्युस्तर्ह्येषां कोऽपि शत्रुर्नोपतिष्ठेतेति॥५॥

अत्रेन्द्रराजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टाविंशतितमं सूक्तं सप्तदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(सोम)** उत्तम गुणों से युक्त **(मघवाना)** बहुत धनों से युक्त राजा और प्रजाजनो **(युवम्)** आप दोनों जो **(सत्यम्)** सत्य **(गोः)** पृथिवी का **(ऊर्वम्)** ढांपने वाला **(अश्व्यम्)** घोड़ों में उत्पन्न हुए को प्राप्त होकर शत्रुओं को **(आ, अदर्दृतम्)** निरन्तर नाश करो **(तत्)** उसको **(इन्द्रः)** राजा ग्रहण करके शत्रुओं का नाश करे और जिन **(अपिहितानि)** घिरे हुए **(अश्ना)** भोग करने योग्य पदार्थों

को **(रिरिचथुः)** छोड़ो **(क्षाः, च)** पृथिवियों को **(चित्)** भी छोड़ो, उनको प्राप्त होकर दुष्ट संबन्धी **(ततृदाना)** दुःख के नाश करने वाले होवें, इस प्रकार से **(एव)** ऐसे ही राजा भी होवे॥५॥

भावार्थः-जो राजा, मन्त्री, सेना और प्रजाजन परस्पर में स्नेह करके राज्य शिक्षा करें तो इनका कोई भी शत्रु नहीं उपस्थित हो॥५॥

इस सूक्त में राजा और प्रजादि के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह अट्ठाईसवां सूक्त और सत्रहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्यैकोनत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ विराट् त्रिष्टुप्। ३ निचृत्त्रिष्टुप्। [२], ४ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ राजविषयमाह॥

अब पांच ऋचावाले उनतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजविषय को कहते हैं॥

आ नः स्तुत उप वाजेभिरूती इन्द्र याहि हरिभिर्मन्दसानः।
तिरश्चिदर्यः सवना पुरूण्याङ्गूषेभिर्गृणानः सत्यराधाः॥ १॥

आ। नः। स्तुतः। उप। वाजेभिः। ऊती। इन्द्र। याहि। हरिऽभिः। मन्दसानः। तिरः। चित्। अर्यः। सवना। पुरूणि। आङ्गूषेभिः। गृणानः। सत्यऽराधाः॥ १॥

पदार्थः-(**आ**) (**नः**) अस्मान् (**स्तुतः**) प्रशंसितः (**उप**) (**वाजेभिः**) अन्नसेनादिभिः सह (**ऊती**) ऊत्यै रक्षणाद्याय (**इन्द्र**) राजन् (**याहि**) प्राप्नुहि (**हरिभिः**) उत्तमैर्वीरपुरुषैः (**मन्दसानः**) आनन्दन् (**तिरः**) तिर्यक् (**चित्**) अपि (**अर्य्यः**) स्वामीश्वरः (**सवना**) ऐश्वर्याणि (**पुरूणि**) बहूनि (**आङ्गूषेभिः**) स्तावकैः (**गृणानः**) स्तूयमानः (**सत्यराधाः**) सत्येन राधो धनं यस्य सः॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्र! स्तुतो मन्दसान आङ्गूषेभिर्गृणानः सत्यराधा अर्य्यस्त्वं पुरूणि सवना प्राप्तः तिरश्चित्सन्नूती वाजेभिर्हरिभिश्च सह न उपायाहि॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योऽत्र प्रशंसितगुणकर्मस्वभाव आपत्कालनिवारकः प्रजारक्षणतत्परः सुसहायोत्तमसेनो न्यायकारी धर्म्योपार्जितधनो निरभिमानो भवेत्तमेव राजानं मन्यध्वम्॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) राजन् (**स्तुतः**) प्रशंसित (**मन्दसानः**) आनन्द करते और (**आङ्गूषेभिः**) स्तुति करने वालों से (**गृणानः**) स्तुति को प्राप्त होते हुए (**सत्यराधाः**) सत्य से धनयुक्त (**अर्य्यः**) स्वामी आप (**पुरूणि**) बहुत (**सवना**) ऐश्वर्यों को प्राप्त (**तिरः**) तिरछे (**चित्**) भी होते हुए (**ऊती**) रक्षण आदि के लिये (**वाजेभिः**) अन्न, सेना आदि के और (**हरिभिः**) उत्तम वीर पुरुषों के साथ (**नः**) हम लोगों को (**उप, आ, याहि**) प्राप्त हूजिये॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो यहाँ प्रशंसित गुण, कर्म्म और स्वभावयुक्त, आपत्काल का निवारण करने वाला, प्रजा के रक्षण में तत्पर, श्रेष्ठ सहायवाली उत्तम सेना से युक्त, न्यायकारी, धर्म्म से इकट्ठे किये हुए धनवाला और अभिमान से रहित होवे, उसी को राजा मानो॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ हि ष्मा याति नर्यश्चिकित्वान् हूयमानः सोतृभिरुप यज्ञम्।

स्वश्वो यो अभीरुर्मन्यमानः सुष्वाणेभिर्मदति सं ह वीरैः॥२॥

आ। हि। स्म। याति। नर्यः। चिकित्वान्। हूयमानः। सोतृऽभिः। उप। यज्ञम्। सुऽअश्वः। यः। अभीरुः। मन्यमानः। सुस्वानेभिः। मदति। सम्। ह। वीरैः॥२॥

पदार्थः-(**आ**) (**हि**) यतः (**स्मा**) एव। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**याति**) आगच्छति (**नर्य्यः**) नृषु साधुः (**चिकित्वान्**) ज्ञानवान् (**हूयमानः**) स्तूयमानः (**सोतृभिः**) अभिषवकर्तृभिः (**उप**) (**यज्ञम्**) राजप्रजाव्यवहारम् (**स्वश्वः**) शोभना अश्वा यस्य सः (**यः**) (**अभीरुः**) भयरहितः (**मन्यमानः**) सत्याभिमानी (**सुष्वाणेभिः**) सुष्ठु शब्दायमानैः (**मदति**) आनन्दति (**सम्**) (**ह**) खलु (**वीरैः**) शौर्य्यादिगुणोपेतैर्जनैः सह॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽभीरुर्मन्यमानः स्वश्वश्चिकित्वान् हूयमानो नर्य्यो हि सोतृभिः सह यज्ञमुपायाति ष्मा स सुष्वाणेभिर्वीरैस्सह सम्मदति ह॥२॥

भावार्थः-यथा चतुर्वेदविच्छ्रोत्रियैस्सह यज्ञमुपागत्य स्तूयते तथैव शुभलक्षणैरमात्यभृत्यैस्सह राजा स्तूयते॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**अभीरुः**) भयरहित (**मन्यमानः**) सत्य का अभिमान रखने वाला (**स्वश्वः**) श्रेष्ठ घोड़ों से युक्त (**चिकित्वान्**) ज्ञानवान् (**हूयमानः**) स्तुति किया गया (**नर्य्यः**) मनुष्यों में श्रेष्ठ (**हि**) जिससे (**सोतृभिः**) सत्य आचरण करने वालों के साथ (**यज्ञम्**) राजा और प्रजा के व्यवहार को (**उप, आ, याति, स्म**) समीप आता ही है, वह (**सुष्वाणेभिः**) उत्तम प्रकार शब्द करते हुए (**वीरैः**) शूरता आदि गुणों से युक्त पुरुषों के साथ (**सम्, मदति, ह**) आनन्द करता ही है॥२॥

भावार्थः-जैसे चार वेदों का जानने वाला वेद विद्यानिपुण विद्वानों के साथ यज्ञ को प्राप्त होकर स्तुति किया जाता है, वैसे ही श्रेष्ठ लक्षणों से युक्त मन्त्री और भृत्यों के साथ राजा स्तुति किया जाता है॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

श्रावयेदस्य कर्णा वाजयध्यै जुष्टामनु प्र दिशं मन्दयध्यै।
उद्वावृषाणो राधसे तुविष्मान् करन्न इन्द्रः सुतीर्थाभयं च॥३॥

श्रवय। इत्। अस्य। कर्णा। वाजयध्यै। जुष्टाम्। अनु। प्र। दिशम्। मन्दयध्यै। उत्ऽववृषाणः। राधसे। तुविष्मान्। करत्। नः। इन्द्रः। सुऽतीर्था। अभयम्। च॥३॥

पदार्थः-(**श्रावय**) (**इत्**) एव (**अस्य**) (**कर्णा**) श्रोत्रौ (**वाजयध्यै**) विज्ञापयितुम् (**जुष्टाम्**) सद्भी राजभिस्सेवितां नीतिम् (**अनु**) (**प्र**) (**दिशम्**) (**मन्दयध्यै**) आनन्दयितुम् (**उद्वावृषाणः**) उत्कृष्टतया बलिष्ठः

सन् **(राधसे)** धनाय **(तुविष्मान्)** प्रशंसितबलः **(करत्)** कुर्यात् **(नः)** अस्माकम् **(इन्द्रः)** सत्यन्यायधर्त्ता **(सुतीर्था)** शोभनानि तीर्थानि दुःखतारकाण्याचार्यब्रह्मचर्यसत्यभाषणादीनि येषान्तान् **(अभयम्)** भयरहितम् **(च)**॥३॥

अन्वयः-हे सत्योपदेशकाचार्योपदेशक! त्वमस्य कर्णा वाजयध्यै जुष्टामनु श्रावय येनाऽयं दिशं मन्दयध्यै उद्वावृषाणस्तुविष्मानिन्द्रो राधसे नः सुतीर्थाभयञ्चेदेव प्र करत्॥३॥

भावार्थः-यस्य राज्ञः सत्यन्यायोपदेशका धार्मिका विद्वांसः स्युस्स विद्याविनयादिशुभैर्गुणैः सहितः सन् सर्वानभयान् कृत्वा सततं प्रसादयितुं शक्नुयात्॥३॥

पदार्थः-हे सत्य के उपदेशक करने वाले आचार्य्य और उपदेशक! आप **(अस्य)** इसके **(कर्णा)** कानों को **(वाजयध्यै)** जनाने के लिये **(जुष्टाम्)** श्रेष्ठ राजाओं से सेवन की गई नीति को **(अनु, श्रावय)** अनुकूल सुनाइये जिससे यह **(दिशम्)** दिशा को **(मन्दयध्यै)** प्रसन्न करने को **(उद्वावृषाणः)** अति बलिष्ठ **(तुविष्मान्)** प्रशंसित बलयुक्त **(इन्द्रः)** सत्य-न्याय को धारण करने वाला **(राधसे)** धन के लिये **(नः)** हमारे **(सुतीर्था)** सुन्दर दुःखों को दूर करने वाले आचार्य्य, ब्रह्मचर्य्य और सत्यभाषण आदि जिनमें उनको **(च)** और **(अभयम्)** भय रहित को **(इत्)** ही **(प्र, करत्)** करे॥३॥

भावार्थः-जिस राजा के सत्य और न्याय के उपदेश करने वाले धार्मिक विद्वान् होवें, वह राजा विद्या और विनय आदि उत्तम गुणों के सहित होता हुआ सब को भयरहित करके निरन्तर प्रसन्न कर सके॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अच्छा॒ यो गन्ता॒ नाध॑मानमू॒ती इ॒त्था विप्रं॒ हव॑मानं गृ॒णन्त॑म्।

उप॑ त्मनि॒ दधा॑नो धु॒र्या॒३॒॑शून्त्स॒हस्रा॑णि श॒तानि॒ वज्र॑बाहुः॥४॥

अच्छ॑। यः। गन्ता॑। नाध॑मानम्। ऊ॒ती। इ॒त्था। विप्र॑म्। हव॑मानम्। गृ॒णन्त॑म्। उप॑। त्मनि॑। दधा॑नः। धु॒रि। आ॒शून्। स॒हस्रा॑णि। श॒तानि॑। वज्र॑ऽबाहुः॥४॥

पदार्थः-**(अच्छ)** सम्यक्। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(यः)** **(गन्ता)** **(नाधमानम्)** ऐश्वर्य्यवन्तं प्रशंसितम् **(ऊती)** रक्षणाद्याय **(इत्था)** अनेन प्रकारेण **(विप्रम्)** मेधाविनम् **(हवमानम्)** स्पर्धमानम् **(गृणन्तम्)** स्तुवन्तम् **(उप)** **(त्मनि)** आत्मनि **(दधानः)** **(धुरि)** रथस्य युग्मे **(आशून्)** आशुगामिनोऽश्वात् **(सहस्राणि)** **(शतानि)** बहून् **(वज्रबाहुः)** शस्त्रहस्तः॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो गन्तोती इत्था नाधमानं हवमानं गृणन्तं विप्रं त्मन्युप दधानः सहस्राणि शतान्याशून् धुरि दधानोऽच्छ गन्ता वज्रबाहू राजा भवेत् सोऽस्मानभयङ्कर्त्तुमर्हेत्॥४॥

भावार्थ:-यो नृप: श्रेष्ठान् मनुष्यान् सङ्गृह्णीत स एव राज्यं वर्द्धयितुमर्हेत्॥४॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! **(य:)** जो **(गन्ता)** चलने वाला **(ऊती)** रक्षण आदि के लिये **(इत्था)** इस प्रकार से **(नाधमानम्)** ऐश्वर्य्यवान् प्रशंसित **(हवमानम्)** ईर्ष्या करने वाले **(गृणन्तम्)** स्तुति करते हुए **(विप्रम्)** बुद्धिमान् को **(त्मनि)** आत्मा में **(उप, दधान:)** धारण करता हुआ **(सहस्राणि)** सहस्रों और **(शतानि)** सैकड़ों **(आशून्)** शीघ्र चलने वाले घोड़ों को **(धुरि)** रथ के जुए में धारण करता हुआ **(अच्छ)** उत्तम प्रकार चलने वाला **(वज्रबाहु:)** शस्त्र हाथों में लिये राजा होवे, वह हम लोगों को भयरहित करने योग्य हो॥४॥

भावार्थ:-जो राजा श्रेष्ठ मनुष्यों को ग्रहण करे, वही राज्य बढ़ाने को योग्य होवे॥४॥

अथ प्रजागुणानाह॥

अब प्रजागुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वोतासो मघवन्निन्द्र विप्रा वयं ते स्याम सूरयो गृणन्तः।

भेजानासो बृहद्दिवस्य राय आकाय्यस्य दावने पुरुक्षोः॥५॥१८॥

त्वाऽऊतासः। मघऽवन्। इन्द्र। विप्राः। वयम्। ते। स्याम। सूरयः। गृणन्तः। भेजानासः। बृहत्ऽदिवस्य। रायः। आऽकाय्यस्य। दावने। पुरुऽक्षोः॥५॥

पदार्थ:-**(त्वोतास:)** त्वया रक्षिता वर्धिता: **(मघवन्)** उत्तमधन **(इन्द्र)** शुभगुणधारक राजन् **(विप्रा:)** मेधाविन: **(वयम्)** **(ते)** तव **(स्याम)** **(सूरय:)** प्रकाशितविद्या: **(गृणन्त:)** स्तुवन्त: **(भेजानास:)** भजमाना:। अत्र वर्णव्यत्ययेनात्स्येत्वम्। **(बृहद्दिवस्य)** प्रकाशमानस्य **(राय:)** धनस्य **(आकाय्यस्य)** समन्तात् काये भवस्य **(दावने)** दात्रे **(पुरुक्षो:)** बह्वन्नादियुक्तस्य॥५॥

अन्वय:-हे मघवन्निन्द्र! त्वोतासो भेजानासो गृणन्तो विप्रा: सूरयो वयं बृहद्दिवस्याकाय्यस्य पुरुक्षो: ते रायो दावने स्थिरा: स्याम॥५॥

भावार्थ:-हे राजन्! यदि भवानस्मान् सर्वतो रक्षेत्तर्हि वयमत्युन्नता भवेम॥५॥

अत्र राजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकोनत्रिंशत्तमं सूक्तमष्टादशो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे **(मघवन्)** श्रेष्ठ धनयुक्त **(इन्द्र)** उत्तम गुणों के धारण करनेवाले राजन्! **(त्वोतास:)** आप से रक्षा और वृद्धि को प्राप्त **(भेजानास:)** सेवन और **(गृणन्त:)** स्तुति करते हुए **(विप्रा:)** बुद्धिमान् **(सूरय:)** प्रकाशित विद्या वाले **(वयम्)** हम लोग **(बृहद्दिवस्य)** प्रकाशमान **(आकाय्यस्य)** सब प्रकार शरीर में उत्पन्न **(पुरुक्षो:)** बहुत अन्नादि से युक्त **(ते)** आपके **(राय:)** धन के और **(दावने)** देने वाले के लिये स्थिर **(स्याम)** होवें॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आप हम लोगों की सब प्रकार से रक्षा करें तो हम लोग अति उन्नतियुक्त होवें॥५॥

इस सूक्त में राजा और प्रजा के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह उनत्तीसवां सूक्त और अठारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ चतुर्विंशत्यृचस्य त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। १-८, १२-२४ इन्द्रः। ९-११ इन्द्र उषाश्च देवते। १, ३, ५, ९, ११, १२, १६, १८, १९, २३ निचृद् गायत्री। २, १०, ७, १३-१५, १७, २१, २२ गायत्री। ४, ६ विराट् गायत्री। २० पिपीलिकामध्या गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। ८, २४ विराडनुष्टुप् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ सूर्य्यदृष्टान्तेन राजविषयमाह॥

अब चौबीस ऋचा वाले तीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में सूर्यदृष्टान्त से राजविषय को कहते हैं॥

नकिरिन्द्र त्वदुत्तरो न ज्यायाँ अस्ति वृत्रहन्। नकिरेवा यथा त्वम्॥ १॥

नकिः। इन्द्र। त्वत्। उत्ऽतरः। न। ज्यायान्। अस्ति। वृत्रऽहन्। नकिः। एव। यथा। त्वम्॥ १॥

पदार्थः-(नकिः) निषेधे **(इन्द्र)** राजन् **(त्वत्)** **(उत्तरः)** पश्चात् **(न)** निषेधे **(ज्यायान्)** ज्येष्ठः **(अस्ति)** **(वृत्रहन्)** यो वृत्रं हन्ति स सूर्य्यस्तद्वद्वर्त्तमान **(नकिः)** **(एव)** अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(यथा)** **(त्वम्)**॥१॥

अन्वयः-हे वृत्रहन्निन्द्र! यथा त्वमसि तथैव त्वदुत्तरो नकिरस्ति न ज्यायानस्ति नकिरुत्तमश्चैव॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः सर्वेभ्यः श्रेष्ठो भवेत्तमेव राजानं कुरुत॥१॥

पदार्थः-हे **(वृत्रहन्)** मेघ को नाश करने वाले सूर्य के सदृश वर्त्तमान **(इन्द्र)** राजन्! **(यथा)** जैसे **(त्वम्)** आप हो, वैसे ही **(त्वत्)** आप से **(उत्तरः)** पीछे **(नकिः)** नहीं **(अस्ति)** है **(न)** नहीं **(ज्यायान्)** बड़ा है और **(नकिः, एव)** न उत्तम ही है॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सबसे श्रेष्ठ होवे, उसी का राजा करो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सत्रा ते अनु कृष्टयो विश्वा चक्रेव वावृतुः। सत्रा महाँ असि श्रुतः॥ २॥

सत्रा। ते। अनु। कृष्टयः। विश्वा। चक्राऽइव। ववृतुः। सत्रा। महान्। असि। श्रुतः॥ २॥

पदार्थः-(सत्रा) सत्याचारस्य **(ते)** तव **(अनु)** **(कृष्टयः)** मनुष्याः **(विश्वा)** सर्वाणि **(चक्रेव)** चक्राणीव **(वावृतुः)** वर्त्तेरन्। अत्र **तुजादीनामित्यभ्यासदैर्घ्यम्। (सत्रा)** सत्याचरणेन **(महान्)** **(असि)** **(श्रुतः)** सकलशास्त्रश्रवणेन कीर्तिमान्॥२॥

अन्वयः-हे राजन्! यदि त्वं सत्रा महाञ्छ्रुतोऽसि तर्हि ते सत्रा कृष्टयो विश्वा चक्रेवानु वावृतुः॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! भवान् न्यायकारी भवेत्तर्हि सर्वाः प्रजास्त्वामानुवर्त्तेरन्॥२॥

पदार्थः-हे राजन्! जो आप **(सत्रा)** सत्य आचरण के **(महान्)** बड़े **(श्रुतः)** सम्पूर्ण शास्त्र के श्रवण से यशयुक्त **(असि)** हो तो **(ते)** आपके सम्बन्ध में **(सत्रा)** सत्य आचरण से **(कृष्टयः)** मनुष्य **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(चक्रेव)** चक्रों के सदृश अर्थात् जैसे गाड़ी में पहिया वैसे **(अनु, वावृतुः)** वर्त्ताव करें॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! आप न्यायकारी होवें तो सम्पूर्ण प्रजा आपके अनुकूल वर्त्ताव करें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विश्वे चनेदना त्वा देवास इन्द्र युयुधुः। यदहा नक्तमातिरः॥३॥

विश्वे। चन। इत्। अना। त्वा। देवासः। इन्द्र। युयुधुः। यत्। अहा। नक्तम्। आ। अतिरः॥३॥

पदार्थः-**(विश्वे)** **(सर्वे)** **(चन)** अपि **(इत्)** **(अना)** प्राणात्मकानि **(त्वा)** त्वाम् **(देवासः)** विद्वांसः **(इन्द्र)** शत्रूणां विदारक **(युयुधुः)** युध्यन्ते **(यत्)** ये **(अहा)** दिनानि **(नक्तम्)** रात्रिम् **(आ, अतिरः)** हन्याः॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यद्ये विश्व इद् देवासोऽनाऽहा नक्तं त्वाश्रित्य शत्रुभिः सह युयुधुस्तैश्चन त्वं शत्रूनातिरः॥३॥

भावार्थः-राज्ञा भृत्याः सुशिक्षिताः श्रेष्ठ रक्षणीया येनाहर्निशं शत्रवो निलीना निवसेयुः॥३॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** शत्रुओं के विदीर्ण करने वाले **(यत्)** जो **(विश्वे इत्)** सभी **(देवासः)** विद्वान् जन **(अना)** प्रतिज्ञास्वरूप **(अहा)** दिनों और **(नक्तम्)** रात्रि को **(त्वा)** आपका आश्रय लेकर शत्रुओं के साथ **(युयुधुः)** युद्ध करते हैं, उनके **(चन)** भी साथ आप शत्रुओं का **(आ, अतिरः)** नाश करिये॥३॥

भावार्थः-राजा को चाहिये कि भृत्यजन उत्तम शिक्षित और श्रेष्ठ रक्खें, जिससे दिन-रात्रि शत्रु लोग छिपे हुए रहें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यत्रोत बाधितेभ्यश्चक्रं कुत्साय युध्यते। मुषाय इन्द्र सूर्यम्॥४॥

यत्र। उत। बाधितेभ्यः। चक्रम्। कुत्साय। युध्यते। मुषायः। इन्द्र। सूर्यम्॥४॥

पदार्थः-**(यत्र)** यस्मिन् राज्ये **(उत)** अपि **(बाधितेभ्यः)** पीडितेभ्यः **(चक्रम्)** चक्रवद्वर्त्तमानं राज्यम् **(कुत्साय)** शस्त्रास्त्रयुक्ताय **(युध्यते)** युद्धङ्कुर्वते **(मुषायः)** यो मुष इवाऽऽचरति **(इन्द्र)** **(सूर्य्यम्)** सूर्य्यमिव वर्त्तमानं न्यायम्॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यत्र मुषायो बाधितेभ्यः कुत्साय युध्यते जनाय सूर्य्यमिव चक्रं वर्त्तयति तत्रोतापि सुखं न वर्द्धते॥४॥

भावार्थः-यो राजा प्रजापीडां न निवारयेत् सूर्यवद् सद्गुणैः प्रकाशमानो न स्यात् प्रजाभ्यः करञ्च गृह्णीयात् स च न स्यात्॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सूर्य्य के सदृश वर्त्तमान न्यायकारिन्! **(यत्र)** जिस राज्य में **(मुषाय:)** चोरी करने वाले के सदृश आचरण करने वाले **(बाधितेभ्य:)** पीड़ायुक्त जनों से **(कुत्साय)** शस्त्र और अस्त्र से युक्तजन और **(युध्यते)** युद्ध करते हुए जन के लिये **(सूर्यम्)** सूर्य के सदृश वर्त्तमान न्यायरूपी **(चक्रम्)** चक्र को वर्त्ताता है, वहाँ **(उत)** भी सुख नहीं बढ़ता है॥४॥

भावार्थः-जो राजा प्रजा की पीड़ा को नहीं निवारण करे और सूर्य के सदृश श्रेष्ठ गुणों से प्रकाशमान न हो और प्रजाओं से कर ग्रहण करे, वह राजा नहीं होवे॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यत्र देवाँ ऋघायतो विश्वाँ अयुध्य एक इत्। त्वमिन्द्र वनूँरहन्॥५॥१९॥

यत्र। देवान्। ऋघायतः। विश्वान्। अयुध्यः। एकः। इत्। त्वम्। इन्द्र। वनून्। अहन्॥५॥

पदार्थः-**(यत्र)** **(देवान्)** विदुषः **(ऋघायत:)** बाधमानान् **(विश्वान्)** **(अयुध्य:)** योद्धुमनर्हः **(एक:)** **(इत्)** एव **(त्वम्)** **(इन्द्र)** **(वनून्)** अधर्म्मसेविनः **(अहन्)** हन्याः॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! एक इदेव त्वं यत्र विश्वान् देवानृघायतो वनूनहंस्तत्र शत्रुभिरयुध्यो भवेः॥५॥

भावार्थः-यदा यदा दुष्टाः श्रेष्ठान् बाधन्तां तदा तदा त्वं सर्वानधर्मिणो भृशं दण्डय॥५॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** तेजस्वी राजन् **(एक:)** एक **(इत्)** ही **(त्वम्)** आप **(यत्र)** जहाँ **(विश्वान्)** सम्पूर्ण **(देवान्)** विद्वानों को **(ऋघायत:)** बाधते हुए **(वनून्)** अधर्म्म के सेवन करनेवालों का **(अहन्)** नाश करें, वहाँ शत्रुओं से **(अयुध्य:)** नहीं युद्ध करने योग्य अर्थात् शत्रुजन आप से युद्ध न कर सकें, ऐसे होवें॥५॥

भावार्थः-जब-जब दुष्टजन श्रेष्ठों को बाधा देवें, तब-तब आप सम्पूर्ण अधर्म्मियों को अत्यन्त दण्ड दीजिये॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यत्रोत मर्त्याय कमरिणा इन्द्र सूर्यम्। प्रावः शचीभिरेतशम्॥६॥

यत्र। उत। मर्त्याय। कम्। अरिणाः। इन्द्र। सूर्यम्। प्र। आवः। शचीभिः। एतशम्॥६॥

पदार्थः-(**यत्र**) यस्मिन् राज्ये (**उत**) अपि (**मर्त्याय**) मनुष्याय (**कम्**) सुखम् (**अरिणाः**) प्रदद्याः (**इन्द्र**) सुखप्रदातः (**सूर्य्यम्**) सवितारं वायुरिव (**प्र**) (**आवः**) रक्षेः (**शचीभिः**) प्रज्ञाभिः कर्म्मभिर्वा (**एतशम्**) प्राप्तविद्यमश्ववद् बलिष्ठम्॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं सूर्य्यं वायुरिव शचीभिरेतशं प्रावः। यत्र मर्त्याय कमरिणास्तत्रोत दुष्टान् दुःखं दद्याः॥६॥

भावार्थः-यत्र राजा श्रेष्ठान्त्सत्कृत्य दुष्टान् दण्डयित्वा विद्याविनयौ वर्द्धयति तत्र सर्वाः प्रजाः स्वस्था भवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सुख के देनेवाले आप (**सूर्य्यम्**) सूर्य्य को वायु के सदृश (**शचीभिः**) बुद्धियों वा कर्म्मों से (**एतशम्**) विद्या को प्राप्त घोड़े के सदृश बलवान् की (**प्र, आवः**) रक्षा करें (**यत्र**) जिस राज्य में (**मर्त्याय**) मनुष्य के लिये (**कम्**) सुख (**अरिणाः**) देवें वहाँ (**उत**) भी दुष्टों को दुःख देवें॥६॥

भावार्थः-जहाँ राजा श्रेष्ठों का सत्कार और दुष्टों को दण्ड देकर विद्या और विनय को बढ़ाता है, वहाँ सम्पूर्ण प्रजा स्वस्थ होती है॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

किमादुतासि वृत्रहन् मघवन् मन्युमत्तमः। अत्राह दानुमातिरः॥७॥

किम्। आत्। उत। असि। वृत्रऽहन्। मघऽवन्। मन्युमत्ऽतमः। अत्र। अह। दानुम्। आ। अतिरः॥७॥

पदार्थः-(**किम्**) (**आत्**) आनन्तर्य्ये (**उत**) (**असि**) (**वृत्रहन्**) शत्रुनाशक (**मघवन्**) प्रशंसितधन (**मन्युमत्तमः**) प्रशंसितो मन्युः क्रोधो यस्य सोऽतिशयितः (**अत्र**) (**अह**) (**दानुम्**) दातारम् (**आ**) (**अतिरः**) हंसि॥७॥

अन्वयः-हे मघवन् वृत्रहन्! मन्युमत्तमस्त्वं सूर्यो मेघमिव दानुमातिरोऽत्राहाऽऽत् किमुत राजाऽसि॥७॥

भावार्थः-यो राजा दुष्टानामुपर्य्यतिक्रोधकृच्छ्रेष्ठेषु शान्ततमो भवति स एव राज्यं वर्द्धयितुमर्हति॥७॥

पदार्थः-हे (**मघवन्**) श्रेष्ठ धनयुक्त (**वृत्रहन्**) शत्रुओं के नाश करने वाले! (**मन्युमत्तमः**) प्रशंसित क्रोधयुक्त आप सूर्य्य मेघ को जैसे वैसे (**दानुम्**) देनेवाले का (**आ, अतिरः**) नाश करते हैं, (**अत्र, अह, आत्, किम्, उत**) अहह इस विषय में तो क्या अनन्तर आप राजा भी (**असि**) हो॥७॥

भावार्थः-जो राजा दुष्टों के ऊपर अति क्रोध करने और श्रेष्ठों में अत्यन्त शान्ति रखने वाला होता है, वही राज्य बढ़ा सकता है॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एतद् घेदुत वीर्य१मिन्द्र चकर्थ पौंस्यम्। स्त्रियं यद्दुर्हणायुवं वधीर्दुहितरं दिवः॥८॥

एतत्। घ। इत्। उत। वीर्यम्। इन्द्र। चकर्थ। पौंस्यम्। स्त्रियम्। यत्। दुःऽहनायुवम्। वधीः। दुहितरम्। दिवः॥८॥

पदार्थः-(**एतत्**) कर्म्म (**घ**) एव (**इत्**) (**उत**) (**वीर्य्यम्**) पराक्रमम् (**इन्द्र**) दोषविनाशक (**चकर्थ**) करोषि (**पौंस्यम्**) पुंभ्यो हितम् (**स्त्रियम्**) (**यत्**) (**दुर्हणायुवम्**) दुःखेन हन्तुं योग्यं कामयते ताम् (**वधीः**) हंसि (**दुहितरम्**) दुहितरमिव वर्त्तमानामुषसम् (**दिवः**) प्रकाशस्य॥८॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यथा सूर्य्यो दुर्हणायुवं दिवो दुहितरं हन्ति तथैतत् पौंस्यं वीर्य्यं चकर्थ त्वं शत्रून् घ वधीरिद्यत् स्त्रियमुतापि भृत्यं पालयेः॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्यो रात्रिं हत्वा दिनं जनयित्वा प्राणिनः सुखयति तथैव दुष्टाचारान् हत्वा श्रेष्ठान्त्सम्पाल्य विद्यां जनयित्वा सर्वाः प्रजाः सुखयेत्॥८॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) दोषों के नाश करनेवाले जैसे सूर्य्य (**दुर्हणायुवम्**) दुःख से नाश करने योग्य की कामना करनेवाले (**दिवः**) प्रकाश की (**दुहितरम्**) कन्या के सदृश वर्त्तमान प्रातर्वेला का नाश करता है, वैसे (**एतत्**) इस कर्म्म और (**पौंस्यम्**) पुरुषों के लिये हित (**वीर्य्यम्**) पराक्रम को (**चकर्थ**) करते हो और आप (**घ**) शत्रुओं ही का (**वधीः, इत्**) नाश करते ही हो (**यत्**) जो (**स्त्रियम्**) स्त्री (**उत**) और भृत्य को भी पालिये॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य रात्रि का नाश और दिन की उत्पत्ति करके प्राणियों को सुख देता है, वैसे ही दुष्ट आचरणों का नाश और श्रेष्ठों का पालन कर और विद्या को उत्पन्न करके सम्पूर्ण प्रजाओं को सुख देवें॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दिवश्चिद् घा दुहितरं महान् महीयमानाम्। उषासमिन्द्र सं पिणक्॥९॥

दिवः। चित्। घ। दुहितरम्। महान्। महीयमानाम्। उषसम्। इन्द्र। सम्। पिणक्॥९॥

पदार्थः-(**दिवः**) सूर्य्यस्य (**चित्**) इव (**घ**) इव। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**दुहितरम्**) कन्यामिव वर्त्तमानाम् (**महान्**) (**महीयमानाम्**) विस्तीर्णाम् (**उषासम्**) प्रातर्वेलाम् (**इन्द्र**) (**सम्**) (**पिणक्**) पिनष्टि॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजन्! यथा महान्त्सूर्य्यो दिवो दुहितरं महीयमानामुषासञ्चित् सम्पिणक् तथा घाविद्यां दुष्टांश्च निवारय॥९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये राजपुरुषा चान्यायान्धकारं निवार्य्य विद्यां न्यायार्कञ्च जनयन्ति ते सूर्य्य इव प्रतापिनो जायन्ते॥९॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** तेजस्वि राजन्! जैसे **(महान्)** महानुभाव कोई **(दिवः, दुहितरम्)** कन्या के सदृश वर्त्तमान सूर्य्य की **(महीयमानाम्)** विस्तीर्ण **(उषासम्)** प्रातर्वेला के **(चित्)** सदृश **(पम्, पिणक्)** पीसता है, वैसे **(घ)** ही अविद्या और दुष्टों का निवारण करो॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजपुरुष और राजा अन्यायरूप अन्धकार को निवृत्त करके विद्या और न्यायरूप सूर्य्य को उत्पन्न करते, वे सूर्य्य के सदृश प्रतापी होते हैं॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अपोषा अनसः सरत्संपिष्टादह बिभ्युषी। नि यत्सीं शिश्नथद् वृषा॥१०॥२०॥

अप। उषाः। अनसः। सरत्। सम्ऽपिष्टात्। अह। बिभ्युषी। नि। यत्। सीम्। शिश्नथत्। वृषा॥१०॥

पदार्थः-**(अप)** **(उषाः)** प्रातर्वेलेव **(अनसः)** शकटस्याग्रम् **(सरत्)** सरति **(सम्पिष्टात्)** सञ्चूर्णितात् **(अह)** **(बिभ्युषी)** भयप्रदा **(नि)** **(यत्)** या **(सीम्)** सर्वतः **(शिश्नथत्)** शिथिलीकरोति **(वृषा)** बलिष्ठो राजा॥१०॥

अन्वयः-यो वृषा यथा बिभ्युषी उषा अनसोऽग्रमिव सम्पिष्टादहाप सरद् यद् या सीं नि शिश्नथत् तथाचरेत् स सूर्य्य इव तेजस्वी भवेत्॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा रथस्याग्रं पुरःसरं भवति तथैव सूर्य्यस्याग्र उषा गच्छति यथा सूर्य्यस्तमो हन्ति तथा राजाऽन्यायाऽऽचारं हन्यात्॥१०॥

पदार्थः-जो **(वृषा)** बलिष्ठ राजा जैसे **(बिभ्युषी)** भय देनेवाली **(उषाः)** प्रातर्वेला **(अनसः)** गाड़ी के अग्रभाग के सदृश आगे चलने वाली **(सम्पिष्टात्)** चूर्णित हुए **(अह)** ही अन्धकार से **(अप, सरत्)** आगे चलती है **(यत्)** जो **(सीम्)** सब प्रकार **(नि, शिश्नथत्)** शिथिल करती है, वैसा आचरण करे, वह सूर्य्य के सदृश तेजस्वी होवे॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे रथ का अग्रभाग आगे होता है, वैसे ही सूर्य्य के आगे प्रातःकाल चलता है और जैसे सूर्य्य अन्धकार का नाश करता है, वैसे राजा अन्याय के आचार का नाश करे॥१०॥

[अथ] पुनः सूर्य्यविषयमाह॥

अब सूर्य्यविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एतदस्या अनः शये सुसंपिष्टं विपाश्या। ससार सीं परावतः॥११॥

एतत्। अस्याः। अनः। शये। सुऽसम्पिष्टम्। विऽपाशि। आ। ससार। सीम्। पराऽवतः॥ ११॥

पदार्थः-(**एतत्**) (**अस्याः**) उषसः (**अनः**) शकटमिव (**शये**) शयनं कुर्य्याम् (**सुसम्पिष्टम्**) सुष्ठ्वेकत्र पिष्टं यस्मिँस्तत् (**विपाशि**) विगतपाशे बन्धनरहिते मार्गे (**आ**) (**ससार**) समन्ताद्गच्छति (**सीम्**) आदित्यः (**परावतः**) दूरदेशात्॥ ११॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा सीमादित्योऽस्या उषस एतत् सुसम्पिष्टमनो विपाशि परावत आ ससार यस्यामहं शये तथैतां त्वं विजानीहि॥ ११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा श्रेष्ठानि यानानि सद्यो दूरं यान्ति तथैवोषा दूरं गच्छतीति वेद्यम्॥ ११॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जैसे (**सीम्**) सूर्य्य (**अस्याः**) इस प्रातःकाल का (**एतत्**) यह (**सुसम्पिष्टम्**) उत्तम प्रकार एक स्थान में पीसा चूर्ण हो जिसमें उस अन्धकार को (**अनः**) गाड़ी के सदृश (**विपाशि**) बन्धनरहित मार्ग में (**परावतः**) दूर देश से (**आ, ससार**) सब प्रकार चलता है, जिसमें मैं (**शये**) शयन करूं, वैसे इसको आप जानिये॥ ११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे श्रेष्ठ वाहन शीघ्र दूर जाते हैं, वैसे ही प्रातःकाल दूर जाता है, ऐसा जानना चाहिये॥ ११॥

अथ मेघसंबन्धिनदीसंतरणविषयमाह॥

अब मेघसंबन्धि नदीसंतरण विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत सिन्धुं विबाल्यं वितस्थानामधि क्षमि। परि ष्ठा इन्द्र मायया॥ १२॥

उत। सिन्धुम्। विऽबाल्यम्। विऽतस्थानाम्। अधि। क्षमि। परि। स्थाः। इन्द्र। मायया॥ १२॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**सिन्धुम्**) नदम् (**विबाल्यम्**) विगतं बाल्यं यस्य तम् (**वितस्थानाम्**) विशेषेण स्थिताम् (**अधि**) (**क्षमि**) पृथिव्याम् (**परि**) सर्वतः (**स्थाः**) तिष्ठति (**इन्द्र**) विद्यैश्वर्य्य (**मायया**) प्रज्ञया॥ १२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! भवान् मायया अधि क्षमि वितस्थानां नदीमुत विबाल्यं सिन्धुं परि ष्ठाः॥ १२॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! समुद्रनदीनदतरणाय प्रज्ञया नौकादिकं निर्माय श्रीमन्तो भवन्तु॥ १२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) विद्या और ऐश्वर्य्य से युक्त आप (**मायया**) बुद्धि से (**अधि, क्षमि**) पृथिवी के बीच (**वितस्थानाम्**) विशेष करके स्थित नदी (**उत**) और (**विबाल्यम्**) बालपन से रहित अर्थात् छोटे नहीं बड़े (**सिन्धुम्**) नद के (**परि**) सब ओर से (**स्थाः**) स्थित होते हैं॥ १२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! समुद्र, नदी, नद के पार होने के लिये बुद्धि से नौका आदि को रच के लक्ष्मीवान् होओ॥ १२॥

अथ राजसम्बन्धेन मनुष्यविषयमाह॥

अब राजसम्बन्ध से मनुष्य विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत शुष्णस्य धृष्णुया प्र मृक्षो अभि वेदनम्। पुरो यदस्य संपिणक्॥ १३॥

उत। शुष्णस्य। धृष्णुऽया। प्र। मृक्षः। अभि। वेदनम्। पुरः। यत्। अस्य। सम्ऽपिणक्॥ १३॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**शुष्णस्य**) बलस्य (**धृष्णुया**) प्रगल्भत्वेन (**प्र**) (**मृक्षः**) सिञ्चय (**अभि**) (**वेदनम्**) विज्ञानम् (**पुरः**) नगराणि (**यत्**) यतः (**अस्य**) शत्रोः (**संपिणक्**) सञ्चूर्णय॥१३॥

अन्वयः-हे राजन्! यद्यतस्त्वं शुष्णस्य बलिष्ठस्य सैन्यस्य धृष्णुयाऽस्य पुरः प्र मृक्षोऽतः शत्रून् संपिणगुताप्यभिवेदनं प्रापय॥१३॥

भावार्थः-स एव राजा सम्मतो भवेद्यः सेनां वर्द्धयित्वाऽन्यायाचारान्निवार्य्याऽविहिताज्ञो भवेत्॥१३॥

पदार्थः-हे राजन्! (**यत्**) जिससे आप (**शुष्णस्य**) बलयुक्त सेना की (**धृष्णुया**) ढिठाई से (**अस्य**) इस शत्रु के (**पुरः**) नगरों को (**प्र, मृक्षः**) अच्छे प्रकार सींचो अत एव शत्रुओं को (**सम्पिणक्**) चूर्णित करो (**उत**) और भी (**अभि, वेदनम्**) विज्ञान को प्राप्त कराओ॥१३॥

भावार्थः-वही राजा सम्मत होवे कि जो सेना को बढ़ाय और अन्याय के आचरणों को दूर करके बिन कहे को अच्छा जानने वाला होवे॥१३॥

पुनः सूर्यदृष्टान्तेन राजविषयमाह॥

फिर सूर्यदृष्टान्त से राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत दासं कौलितरं बृहतः पर्वतादधि। अवाहन्निन्द्र शम्बरम्॥ १४॥

उत। दासम्। कौलिऽतरम्। बृहतः। पर्वतात्। अधि। अव। अहन्। इन्द्र। शम्बरम्॥ १४॥

पदार्थः-(**उत**) (**दासम्**) सेवकम् (**कौलितरम्**) अतिशयेन कुलीनम् (**बृहतः**) महतः (**पर्वतात्**) शैलात् (**अधि**) उपरि (**अव**) (**अहन्**) हन्ति (**इन्द्र**) (**शम्बरम्**) शं सुखं वृणोति यस्मात्तं मेघम्॥१४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं यथा सूर्य्यो बृहतः पर्वतादधि शम्बरमवाहन्नुतापि प्रजाः पालयसि तथैव शत्रून् हत्वा कौलितरं दासं पालय॥१४॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! यथा सूर्य्यो मेघाज्जलं भूमौ निपात्य सर्वाञ्जीवयति तथैव पर्वतोपरिस्थानपि दस्यूनधो निपात्य प्रजाः पालयतः॥१४॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) तेजस्वि राजन्! आप जैसे सूर्य्य (**बृहतः**) बड़े (**पर्वतात्**) पर्वत से (**अधि**) ऊपर (**शम्बरम्**) सुख प्राप्त होता है, जिससे उस मेघ को (**अव, अहन्**) नाश करता और (**उत**) भी प्रजाओं को पालता है, वैसे ही शत्रुओं का नाश करके (**कौलितरम्**) अत्यन्त कुलीन (**दासम्**) सेवक का

पालन करो॥१४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य मेघ से जल को पृथिवी में गिरा के सब को जिलाता है, वैसे ही पर्वत के ऊपर स्थित भी डाकुओं को नीचे गिरा के प्रजाओं का पालन करो॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत दासस्य वर्चिनः सहस्राणि शताऽवधीः। अधि पञ्च प्रधीरिव॥१५॥२१॥

उत। दासस्य। वर्चिनः। सहस्राणि। शता। अवधीः। अधि। पञ्च। प्रधीन्ऽइव॥१५॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**दासस्य**) सेवकस्य (**वर्चिनः**) बह्वधीतस्य (**सहस्राणि**) असंख्यानि (**शता**) शतानि (**अवधीः**) हन्याः (**अधि**) (**पञ्च**) (**प्रधीनिव**) चक्रस्थानि तीक्ष्णानि कीलकानीव वर्त्तमानान् जगत्कण्टकान् दुष्टान्॥१५॥

अन्वयः-हे राजंस्त्वं प्रधीनिव वर्त्तमानान् पञ्च शता सहस्राणि दुष्टानध्यवधीरुतापि वर्चिनो दासस्य जनान् पालय॥१५॥

भावार्थः-स राजभी राजपुरुषैर्यदि दुष्टान्निवार्य्य श्रेष्ठान् सत्कुर्य्यात्तर्हि सर्वं जगत् तस्य सेवकं भवेत्॥१५॥

पदार्थः-हे राजन्! आप (**प्रधीनिव**) चक्र में स्थित पैनी कीलों के सदृश वर्त्तमान संसार में कण्टक दुष्टों को (**पञ्च**) पांच (**शता**) सौ वा (**सहस्राणि**) सहस्रों दुष्टों का (**अधि, अवधीः**) नाश करो (**उत**) और (**वर्चिनः**) बहुत पढ़े हुए (**दासस्य**) सेवक के जनों को पालिये॥१५॥

भावार्थः-वह राजा जो राजमाता राजपुरुषों से यदि दुष्टों का निवारण करके श्रेष्ठों का सत्कार करे तो सम्पूर्ण जगत् उसका सेवक होवे॥१५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत त्यं पुत्रमग्रुवः परावृक्तं शतक्रतुः। उक्थेष्विन्द्र आभजत्॥१६॥

उत। त्यम्। पुत्रम्। अग्रुवः। पराऽवृक्तम्। शतऽक्रतुः। उक्थेषु। इन्द्रः। आ। अभजत्॥१६॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**त्यम्**) तम् (**पुत्रम्**) (**अग्रुवः**) अग्रसराः (**परावृक्तम्**) अच्छिन्नवीर्य्यम् (**शतक्रतुः**) असंख्यप्रज्ञः (**उक्थेषु**) प्रशंसनीयेषु शास्त्रेषु (**इन्द्रः**) परमैश्वर्य्यवान् (**आ**) (**अभजत्**) समन्तात् सेवते॥१६॥

अन्वयः-यश्शतक्रतुरिन्द्र उक्थेषु त्यं परावृक्तं पुत्रमग्रुव इवाऽभजदुतापि शिक्षेत स सिद्धकार्य्यो भवेत्॥१६॥

भावार्थः-यो राजा मातरोऽपत्यानीव प्रजाः पालयेत्तं प्रजाः पितरमिव मन्येरन्॥१६॥

पदार्थः-जो **(शतक्रतुः)** असंख्यबुद्धियों वा **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्य्यवान् राजा **(उक्थेषु)** प्रशंसा करने योग्य शास्त्रों में **(त्यम्)** उस **(परावृक्तम्)** नहीं नष्ट हुए पराक्रम वाले **(पुत्रम्)** पुत्र को **(अग्रुवः)** अग्रगामियों के सदृश **(आ, अभजत्)** सब प्रकार सेवन करता है **(उत)** और शिक्षा भी देवे, वह सिद्धकार्य्य होवे॥१६॥

भावार्थः-जो राजा माता पुत्रों का जैसे वैसे प्रजाओं का पालन करे, उसको प्रजाजन पिता के समान मानें॥१६॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वद्विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत त्या तुर्वशायदू अस्नातारा शचीपतिः। इन्द्रो विद्वाँ अपारयत्॥१७॥

उत। त्या। तुर्वशायदू इति। अस्नातारा। शचीऽपतिः। इन्द्रः। विद्वान्। अपारयत्॥१७॥

पदार्थः-(उत) अपि **(त्या)** तौ **(तुर्वशायदू)** शीघ्रं वशंकरौ यत्नवाँश्च तौ मनुष्यौ। **तुर्वशा इति मनुष्यनामसु पठितम्।** (निघं०२.३) यदव इति च। **(अस्नातारा)** स्नानादिकर्मरहितौ **(शचीपतिः)** प्रजापतिर्वाक्पतिर्वा **(इन्द्रः)** राजा **(विद्वान्)** **(अपारयत्)** दुःखात् पारयेत्॥१७॥

अन्वयः-शचीपतिर्विद्वानिन्द्रो यौ तुर्वशायदू उताप्यस्नातारापारयत् त्या सुखिनौ स्याताम्॥१७॥

भावार्थः-यान् मनुष्यानाप्ता विद्वांसः सुशिक्षेरंस्ते दुःखान्तं गत्वा सुखिनो भवन्ति॥१७॥

पदार्थः-**(शचीपतिः)** प्रजा वा वाणी का पति **(विद्वान्)** विद्वान् **(इन्द्रः)** और राजा जिन **(तुर्वशायदू)** शीघ्र वश करने और यत्न करने वाले मनुष्य **(उत)** और **(अस्नातारा)** स्नान आदि कर्म्मों से रहित मनुष्यों को **(अपारयत्)** दुःख से पार उतारे **(त्या)** वे दोनों सुखी होवें॥१७॥

भावार्थः-जिन मनुष्यों को यथार्थवक्ता विद्वान् लोग शिक्षा देवें, वे दुःख के पार जाकर सुखी होते हैं॥१७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत त्या सद्य आर्या सरयोरिन्द्र पारतः। अर्णाचित्ररथावधीः॥१८॥

उत। त्या। सद्यः। आर्या। सरयोः। इन्द्र। पारतः। अर्णाचित्ररथा। अवधीः॥१८॥

पदार्थः-(उत) **(त्या)** तौ **(सद्यः)** शीघ्रम् **(आर्या)** उत्तमगुणकर्म्मस्वभावौ **(सरयोः)** गच्छतोः **(इन्द्र)** **(पारतः)** परात् **(अर्णाचित्ररथा)** अर्णौ प्रापकौ च तौ चित्ररथा आश्चर्य्यरथौ च तौ **(अवधीः)** हन्याः॥१८॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं सद्यस्त्या सरयोः पारतो वर्त्तमानावर्णाचित्ररथावधीरुताप्यार्य्यौ पालयेः॥१८॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वं सततं दुष्टान् ताडय श्रेष्ठान् सत्कुरु॥१८॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** राजन् आप **(सद्यः)** शीघ्र **(त्या)** उन दोनों **(सरयोः)** चलते हुओं के **(पारतः)** पार से वर्त्तमान **(अर्णाचित्ररथा)** पहुंचाने वाले आश्चर्य्यकारक रथों का **(अवधीः)** नाश करो **(उत)** और **(आर्य्या)** उत्तम गुण, कर्म्म और स्वभाव वालों का पालन करो॥१८॥

भावार्थः-हे राजन्! आप निरन्तर दुष्टों का ताड़न और श्रेष्ठों का सत्कार करो॥१८॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अनु द्वा जहिता नयोऽन्धं श्रोणं च वृत्रहन्। न तत्ते सुम्नमष्टवे॥१९॥

अनु। द्वा। जहिता। नयः। अन्धम्। श्रोणम्। च। वृत्रऽहन्। न। तत्। ते। सुम्नम्। अष्टवे॥१९॥

पदार्थः-**(अनु)** **(द्वा)** द्वौ **(जहिता)** जहितौ त्यक्तारौ **(नयः)** नायकः **(अन्धम्)** चक्षुर्विज्ञानविकलम् **(श्रोणम्)** खञ्जम् **(च)** **(वृत्रहन्)** शत्रुहन्तः **(न)** **(तत्)** **(ते)** तव **(सुम्नम्)** सुखम् **(अष्टवे)** व्याप्तुम्॥१९॥

अन्वयः-हे वृत्रहन्! यदि नयः संस्त्वमन्धं श्रोणञ्च द्वा जहिताऽनु पालयेस्तर्हि ते तत्सुम्नमष्टवे कश्चिदपि शत्रुर्न शक्नुयात्॥१९॥

भावार्थः-यो राजानाथानन्धादीन् सततं पालयेत्तस्य राज्यं सुखञ्च न नश्येत्॥१९॥

पदार्थः-हे **(वृत्रहन्)** शत्रुओं के नाश करने वाले! जो **(नयः)** नायक अर्थात् अग्रणी होते हुए आप **(अन्धम्)** नेत्रों के विज्ञान से विकल **(श्रोणं, च)** और खञ्ज अर्थात् पङ्गु **(द्वा)** दोनों **(जहिता)** छोड़ने वालों का **(अनु)** पश्चात् पालन करें तो **(ते)** आपके **(तत्)** उस **(सुम्नम्)** सुख को **(अष्टवे)** व्याप्त होने को कोई भी शत्रु **(न)** नहीं समर्थ होवें॥१९॥

भावार्थः-जो राजा अनाथ अन्धादिकों का निरन्तर पालन करे, उसका राज्य और सुख कभी नहीं नष्ट होवे॥१९॥

पुनः सूर्यदृष्टान्तेन राजविषयमाह॥

फिर सूर्यदृष्टान्त से राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शतमश्मन्मयीनां पुरामिन्द्रो व्यास्यत्। दिवोदासाय दाशुषे॥२०॥२२॥

शतम्। अश्मन्ऽमयीनाम्। पुराम्। इन्द्रः। वि। आस्यत्। दिवःऽदासाय। दाशुषे॥२०॥

पदार्थः-(**शतम्**) (**अश्मन्मयीनाम्**) मेघप्रचुराणामिव पाषाणनिर्मितानाम् (**पुराम्**) नगरीणाम् (**इन्द्रः**) (**वि**) (**आस्यत्**) व्यसेच्छिन्द्यात् (**दिवोदासाय**) प्रकाशस्य सेवकाय (**दाशुषे**) दात्रे॥२०॥

अन्वयः-य इन्द्रो रविरिव दिवोदासाय दाशुषेऽश्मन्मयीनां पुरां शतं व्यास्यत् स एव विजयी भवितुमर्हेत्॥२०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! यदि त्वमतिप्रवृद्धानां मेघानां सूर्य्यवदनेकानि शत्रुपुराणि जेतुं शक्नुयास्तर्हि राज्यश्रियं कीर्त्तिञ्चाप्तुमर्हेः॥२०॥

पदार्थः-जो (**इन्द्रः**) तेजस्वी सूर्य्य के सदृश (**दिवोदासाय**) प्रकाश के सेवने वाले और (**दाशुषे**) देनेवाले के लिये (**अश्मन्मयीनाम्**) मेघों के समूहों के सदृश पाषाणों से बने हुए (**पुराम्**) नगरों के (**शतम्**) सैकड़े को (**वि, आस्यत्**) काटे, वही विजयी होने के योग्य होवे॥२०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जो आप बहुत बढ़े हुए मेघों को जैसे सूर्य्य वैसे अनेक शत्रुओं के नगरों को जीत सकें तो राज्यलक्ष्मी और यश को प्राप्त होने के योग्य होवें॥२०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्वापयद्दभीतये सहस्रा त्रिंशतं हथैः। दासानामिन्द्रो मायया॥२१॥

अस्वापयत्। दभीतये। सहस्रा। त्रिंशतम्। हथैः। दासानाम्। इन्द्रः। मायया॥२१॥

पदार्थः-(**अस्वापयत्**) स्वापयेत् (**दभीतये**) हिंसनाय (**सहस्रा**) असंख्यानि (**त्रिंशतम्**) एतत्संख्यातम् (**हथैः**) हननैः (**दासानाम्**) सेवकानाम् (**इन्द्रः**) राजा (**मायया**) प्रज्ञया॥२१॥

अन्वयः-य इन्द्रो मायया दासानां सेवकानां शत्रूणां हथैर्दभीतये सहस्रा त्रिंशतमस्वापयत् स एव विजयवान् भवेत्॥२१॥

भावार्थः-ये सेनापत्यादयो बुद्ध्या शत्रून् हन्युस्ते सदैव सुखिनः स्युः॥२१॥

पदार्थः-जो (**इन्द्रः**) राजा (**मायया**) बुद्धि से (**दासानाम्**) सेवकों और शत्रुओं के (**हथैः**) हननसाधनों से (**दभीतये**) हिंसन करने के लिये (**सहस्रा**) असंख्य (**त्रिंशतम्**) वा तीस को (**अस्वापयत्**) सुलावे, वही जीतने वाला होवे॥२१॥

भावार्थः-जो सेनापति आदि बुद्धि से शत्रुओं का नाश करें, वे सदा ही सुखी होवें॥२१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स घेदुतासि वृत्रहन्त्समान इन्द्र गोपतिः। यस्ता विश्वानि चिच्युषे॥२२॥

सः। घ। इत्। उत। असि। वृत्रऽहन्। समानः। इन्द्र। गोऽपतिः। यः। ता। विश्वानि। चिच्युषे॥ २२॥

पदार्थः-(**सः**) (**घ**) एव (**इत्**) (**उत**) अपि (**असि**) (**वृत्रहन्**) शत्रुविदारक (**समानः**) सूर्येण तुल्यः (**इन्द्र**) पुष्कलैश्वर्य्यकारक (**गोपतिः**) पृथिव्याः स्वामी (**यः**) (**ता**) तानि (**विश्वानि**) सर्वाणि (**चिच्युषे**) च्यावयसि॥ २२॥

अन्वयः-हे वृत्रहन्निन्द्र! यो गोपतिः समानस्त्वं ता विश्वानि चिच्युषे घ स इद् बलवानुतापि सुख्यसि॥ २२॥

भावार्थः-यो राजा सूर्य्यवन्न्यायप्रकाशेन रागद्वेषवान् सन् सर्वं राष्ट्रं पालयति स एव गणनीयो जायते॥ २२॥

पदार्थः-हे (**वृत्रहन्**) शत्रुओं के नाश करनेवाले (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के कर्त्ता! (**यः**) जो (**गोपतिः**) पृथिवी के स्वामी (**समानः**) सूर्य्य के सदृश आप (**ता**) उन (**विश्वानि**) सब की (**चिच्युषे**) वृद्धि करते (**घ**) ही हो (**स, इत्**) वही बलवान् (**उत**) और सुखी (**असि**) होते हैं॥ २२॥

भावार्थः-जो राजा सूर्य्य के सदृश न्याय के प्रकाश से रागद्वेष वाला होता हुआ सम्पूर्ण राज्य का पालनकर्त्ता है, वही गणना करने योग्य होता है॥ २२॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत नूनं यदिन्द्रियं करिष्या इन्द्र पौंस्यम्। अद्या नकिष्टदा मिनत्॥ २३॥

उत। नूनम्। यत्। इन्द्रियम्। करिष्याः। इन्द्र। पौंस्यम्। अद्य। नकिः। तत्। आ। मिनत्॥ २३॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**नूनम्**) निश्चितम् (**यत्**) (**इन्द्रियम्**) (**करिष्याः**) (**इन्द्र**) सर्वरक्षक (**पौंस्यम्**) पुंसु साधुः (**अद्य**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**नकिः**) (**तत्**) (**आ**) (**मिनत्**) हिंस्यात्॥ २३॥

अन्वयः-हे इन्द्रत्वमद्य यन्नूनमिन्द्रियमुत पौंस्यं करिष्यास्तत् कोऽपि नकिरामिनत्॥ २३॥

भावार्थः-यो राजा वर्त्तमानसमये बलं वर्द्धयितुं शक्नुयात् शत्रुभिरजितस्सन् निश्चितं विजयं प्राप्नुयात्॥ २३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सब के रक्षा करने वाले आप (**अद्य**) आज (**यत्**) जो (**नूनम्**) निश्चित (**इन्द्रियम्**) इन्द्रिय को (**उत**) और (**पौंस्यम्**) पुरुषों में श्रेष्ठ कर्म्म को (**करिष्याः**) करें (**तत्**) उसकी कोई भी (**नकिः**) नहीं (**आ, मिनत्**) हिंसा करे॥ २३॥

भावार्थः-जो राजा वर्त्तमान समय में बल को बढ़ा सके, वह शत्रुओं से अजित हुआ निश्चय विजय को प्राप्त होवे॥ २३॥

अथ विद्वदुपदेशविषयमाह॥

अब विद्वानों के उपदेशविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वामंवामं त आदुरे देवो ददात्वर्यमा।

वामं पूषा वामं भगो वामं देवः करूळती॥२४॥२३॥

वामम्ऽवामम्। ते। आऽदुरे। देवः। ददातु। अर्यमा। वामम्। पूषा। वामम्। भगः। वामम्। देवः। करूळती॥२४॥

पदार्थः-(**वामंवामम्**) प्रशस्यं प्रशस्यम्। **वाम इति प्रशस्यनामसु पठितम्।** (निघं०३.८) (**ते**) तुभ्यम् (**आदुरे**) शत्रूणां विदारक (**देवः**) विजयप्रदाता (**ददातु**) (**अर्य्यमा**) न्यायेशः (**वामम्**) प्राप्तव्यम् (**पूषा**) पुष्टिकर्त्ता (**वामम्**) भजनीयं धनम् (**भगः**) ऐश्वर्यवान् (**वामम्**) श्रेष्ठं विज्ञानम् (**देवः**) प्रकाशमानः (**करूळती**) यः करूनूढा कामयते स करूळतः सोऽस्यास्तीति॥२४॥

अन्वयः-हे आदुरे राजन्! यः करूळती देवस्ते वामंवामं ददातु यः करूळत्यर्य्यमा वामं ददातु यः करूळती पूषा वामं प्रयच्छतु यः करूळती भगो देवो वामं ददातु तान्सर्वांस्त्वं सदा सेवयेः॥२४॥

भावार्थः-हे राजन्! ये सत्यमुपदेशं सत्यं न्यायं यथार्थां विद्यां क्रियां च त्वां शिक्षेरँस्तान् सर्वांस्त्वं सततं सत्कुर्यादिति॥२४॥

अत्र सूर्य्यमेघमनुष्यविद्वद्राजगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह संगतिर्वेद्या॥

इति त्रिंशत्तमं सूक्तं त्रयोविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-(**आदुरे**) शत्रुओं के नाश करनेवाले राजन्! (**करूळती**) जिसके कारीगरों की कामना करनेवाला विद्यमान वह (**देवः**) विजय का देनेवाला (**ते**) आपके लिये (**वामंवामम्**) प्रशंसा करने योग्य प्रशंसा करने योग्य को (**ददातु**) देवे और जिसके कारीगरों की कामना करनेवाला विद्यमान वह (**अर्य्यमा**) न्यायाधीश (**वामम्**) प्राप्त होने योग्य पदार्थ दे और जिसके कारीगरों की कामना करनेवाला विद्यमान वह (**पूषा**) पुष्टि करनेवाला (**वामम्**) सेवन करने योग्य धन को दे और जिसके कारीगरों की कामना करनेवाला विद्यमान वह (**भगः**) ऐश्वर्य्य से युक्त (**देवः**) प्रकाशमान (**वामम्**) श्रेष्ठ विज्ञान को देवे, उन सब की आप सदा सेवा करो॥२४॥

भावार्थः-हे राजन्! जो लोग सत्य उपदेश, सत्य न्याय, यथार्थ विद्या और क्रिया की आपको शिक्षा देवें, उन सब का आप निरन्तर सत्कार करो॥२४॥

इस सूक्त में सूर्य्य, मेघ, मनुष्य, विद्वान् और राजा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तीसवां सूक्त और तेईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चदशर्चस्यैकाऽधिकत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ७-१०, १४ गायत्री। २, ६, १२, १३, १५ निचृद्गायत्री। ३ त्रिपाद्गायत्री। ४, ५ विराड् गायत्री। ११ पिपीलिकामध्यागायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ राजप्रजाधर्ममाह॥

अब पन्द्रह ऋचा वाले इकतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजप्रजाधर्मविषय को कहते हैं॥

कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता॥१॥

कया। नः। चित्रः। आ। भुवत्। ऊती। सदाऽवृधः। सखा। कया। शचिष्ठया। वृता॥१॥

पदार्थः-(कया) **(नः)** अस्माकम् **(चित्रः)** अद्भुतगुणकर्मस्वभावः **(आ)** **(भुवत्)** भवेः **(ऊती)** ऊत्या रक्षणादिक्रियया सह **(सदावृधः)** सर्वदा वर्धमानः **(सखा)** **(कया)** **(शचिष्ठया)** अतिशयेन श्रेष्ठया वाचा प्रज्ञया कर्मणा वा **(वृता)** संयुक्तया॥१॥

अन्वयः-हे राजन्! सदावृधस्त्वं नः कयोती, कया शचिष्ठया वृता चित्रः सखा आ भुवत्॥१॥

भावार्थः-हे राजन्! भवतास्माभिस्सह तादृशानि कर्माणि कर्त्तव्यानि यैरस्माकं प्रीतिर्वर्द्धेत॥१॥

पदार्थः-हे राजन्! **(सदावृधः)** सर्वदा वृद्धि को प्राप्त होते हुए आप **(नः)** हम लोगों की **(कया)** किस **(ऊती)** रक्षण आदि क्रिया के साथ और **(कया)** किस **(शचिष्ठया)** अत्यन्त श्रेष्ठ वाणी बुद्धि वा कर्म्म जो **(वृता)** संयुक्त उससे **(चित्रः)** अद्भुत गुण, कर्म्म और स्वभाव वाले **(सखा)** मित्र **(आ, भुवत्)** हूजिये॥१॥

भावार्थः-हे राजन्! आपको चाहिये कि हम लोगों के साथ, वैसे कर्म्म करें कि जिनसे हम लोगों की प्रीति बढ़े॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्सदन्धसः। दृळ्हा चिदारुजे वसु॥२॥

कः। त्वा। सत्यः। मदानाम्। मंहिष्ठः। मत्सत्। अन्धसः। दृळ्हा। चित्। आऽरुजे। वसु॥२॥

पदार्थः-(कः) **(त्वा)** **(सत्यः)** सत्सु साधुः **(मदानाम्)** आनन्दानाम् **(मंहिष्ठः)** अतिशयेन महान् **(मत्सत्)** आनन्दयेत् **(अन्धसः)** अन्नादेः **(दृळ्हा)** दृढानि **(चित्)** अपि **(आरुजे)** समन्ताद्रोगाय **(वसु)** धनानि॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्य! मदानामन्धसो मंहिष्ठः सत्यस्त्वा मत्सदारुजे दृळ्हा वसु चित्को भवेत्॥२॥

भावार्थः-यदि मनुष्या ब्रह्मचर्यादिधर्म्माचरणेन यथावदाहारविहारौ कुर्युस्तर्हि तेषु कदाचिद्दारिद्र्यं रोगश्च नैवागच्छेत्॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्य **(मदानाम्)** आनन्दों और **(अन्धसः)** अन्न आदि के सम्बन्ध में **(मंहिष्ठः)** अत्यन्त बड़ा **(सत्यः)** श्रेष्ठों में श्रेष्ठ **(त्वा)** आपको **(मत्सत्)** आनन्द देवे और **(आरुजे)** सब प्रकार से रोग के लिये **(दृळ्हा)** दृढ़ **(वसु)** धनरूप **(चित्)** भी **(कः)** कौन होवे अर्थात् रोग के दूर करने को अत्यन्त संलग्न कौन हो॥ २॥

भावार्थः-जो मनुष्य ब्रह्मचर्य्य आदि धर्म्माचरण से यथायोग्य आहार और विहार करें तो उनमें कभी दारिद्र्य और रोग नहीं आवे॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभी षु णः सखीनामविता जरितॄणाम्। शतं भवास्यूतिभिः॥ ३॥

अभि। सु। नः। सखीनाम्। अविता। जरितॄणाम्। शतम्। भवासि। ऊतिऽभिः॥ ३॥

पदार्थः-(अभि) आभिमुख्ये। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(सु) (नः)** अस्माकम् **(सखीनाम्)** सर्वसुहृदाम् **(अविता)** रक्षकः **(जरितॄणाम्)** सद्विद्याविदाम् **(शतम्) (भवासि) (ऊतिभिः)** रक्षणादिभिः॥ ३॥

अन्वयः-हे राजन्! यस्त्वमूतिभिर्जरितॄणां सखीनां नश्शतं भवासि तस्मादभि स्वविता भव॥ ३॥

भावार्थः-ये मनुष्याः स्वात्मवत्सुखदुःखहानिलाभानन्येषामपि विज्ञाय परप्रियाय वर्त्तेरंस्तेष्वन्येऽपि मैत्रीं कुर्य्युः॥ ३॥

पदार्थः-हे राजन्! जो आप **(ऊतिभिः)** रक्षणादिकों से **(जरितॄणाम्)** श्रेष्ठ विद्याओं के जानने वाले **(सखीनाम्)** सब के मित्र **(नः)** हम लोगों के **(शतम्)** सैकड़े **(भवासि)** होते हो इससे **(अभि)** सम्मुख **(सु)** उत्तम प्रकार **(अविता)** रक्षक हूजिये॥ ३॥

भावार्थः-जो मनुष्य अपने आत्मा के सदृश सुख-दुःख, हानि और लाभ को औरों के भी जानकर दूसरे के प्रिय के लिये वर्त्ताव करें, उनमें अन्य जन भी मित्रता करें॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभी न आ ववृत्स्व चक्रं न वृत्तमर्वतः। नियुद्भिश्चर्षणीनाम्॥ ४॥

अभि। नः। आ। ववृत्स्व। चक्रम्। न। वृत्तम्। अर्वतः। नियुत्ऽभिः। चर्षणीनाम्॥ ४॥

पदार्थः-**(अभि)** अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(नः)** अस्मान् **(आ)** **(ववृत्स्व)** आवर्तय **(चक्रम्)** **(न)** इव **(वृत्तम्)** सर्वतो दृढम् **(अर्वतः)** अश्वान् **(नियुद्भिः)** वायुगतिभिरिव वेगैः **(चर्षणीनाम्)** मनुष्याणाम्॥४॥

अन्वयः-हे राजँस्त्वं नोऽस्मान् वृत्तं चक्रं न सत्कर्मस्वभ्याववृत्स्व नियुद्भिः सह चर्षणीनामर्वतश्चाभ्याववृत्स्व॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! भवान्सत्ये न्याये वर्त्तित्वास्मानपि वर्तयतु॥४॥

पदार्थः-हे राजन्! आप **(नः)** हम लोगों को **(वृत्तम्)** सब प्रकार से दृढ़ **(चक्रम्)** चक्र के **(न)** सदृश श्रेष्ठ कर्म्मों में **(अभि, आ, ववृत्स्व)** सब ओर से अच्छे प्रकार वर्त्ताइये **(नियुद्भिः)** और वायु के गमनों के सदृश वेगों के साथ **(चर्षणीनाम्)** मनुष्यों के **(अर्वतः)** घोड़ों को वर्त्ताईये॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! आप सत्य न्याय में वर्त्ताव करके हम लोगों को भी उसी के अनुसार वर्त्ताव कराइये॥४॥

पुना राजप्रजाधर्मविषयमाह॥

फिर राजप्रजाधर्मविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रवता हि क्रतूनामा हा पदेव गच्छसि। अभक्षि सूर्ये सचा॥५॥२४॥

प्रऽवता। हि। क्रतूनाम्। आ। ह। पदाऽइव। गच्छसि। अभक्षि। सूर्ये। सचा॥५॥

पदार्थः-**(प्रवता)** निम्नेन मार्गेण **(हि)** यतः **(क्रतूनाम्)** प्रज्ञानां कर्मणां वा **(आ)** **(ह)** खलु। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(पदेव)** पद्भ्यामिव **(गच्छसि)** **(अभक्षि)** सेवे **(सूर्ये)** सवितरि **(सचा)** सत्येन॥५॥

अन्वयः-हे राजँस्त्वं हि क्रतूनां प्रवता मार्गेण पदेवागच्छसि तस्माद्ध तथैव सचा सहाहं सूर्य्ये प्रकाश इव धर्म्ममभक्षि॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाप्ता विद्वांसः शुद्धेन मार्गेण गत्वा पूर्णां प्रज्ञां प्राप्नुवन्ति तथैवेतरेऽपि वर्त्तित्वा प्रज्ञां प्राप्नुवन्तु॥५॥

पदार्थः-हे राजन्! आप **(हि)** जिससे **(क्रतूनाम्)** बुद्धि वा कर्म्मों के **(प्रवता)** नीचे मार्ग से **(पदेव)** पैरों के सदृश **(आ, गच्छसि)** आते हो इससे **(ह)** निश्चय वैसे ही **(सचा)** सत्य के साथ मैं **(सूर्य्ये)** सूर्य्ये में प्रकाश के सदृश धर्म्म का **(अभक्षि)** सेवन करता हूँ॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे श्रेष्ठ विद्वान् लोग शुद्ध मार्ग से जाकर पूर्ण बुद्धि को प्राप्त होते हैं, वैसा ही अन्य जन भी वर्त्ताव करके बुद्धि को प्राप्त हों॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सं यत्त इन्द्र मन्यवः सं चक्राणि दधन्विरे। अध त्वे अध सूर्ये॥६॥

सम्। यत्। ते। इन्द्र। मन्यवः। सम्। चक्राणि। दधन्विरे। अध। त्वे इति। अध। सूर्ये॥६॥

पदार्थः-(सम्) (यत्) ये **(ते)** तव **(इन्द्र)** जीव **(मन्यवः)** क्रोधादयो व्यवहाराः **(सम्) (चक्राणि)** चक्रवद्वर्त्तमानानि कर्माणि **(दधन्विरे)** धरन्ति **(अध) (त्वे)** त्वयि **(अध) (सूर्ये)** सवितरि॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ते यन्मन्यवश्चक्राणि संदधन्विरेऽध त्वे धनं दधत्यध ते सूर्ये प्रकाश इव प्रतापं संदधन्विरे॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्य! यदि त्वं दुष्टाचारं प्रति क्रोधं श्रेष्ठाचारं प्रत्याह्लादं कुर्यास्तर्हि त्वं सूर्य्य इव प्रतापी भवेः॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** जीव **(ते)** तेरे **(यत्)** जो **(मन्यवः)** क्रोध आदि व्यवहार **(चक्राणि)** चक्र के सदृश वर्तमान कर्म्मों को **(सम्, दधन्विरे)** धारण करते हैं **(अध)** अनन्तर **(त्वे)** आप में धन को धारण करते **(अध)** इसके अनन्तर वे **(सूर्य्ये)** सूर्य्य में प्रकाश के सदृश प्रताप को **(सम्)** धारण करते हैं॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्य! जो तू दुष्ट आचरण करने वाले पर क्रोध और श्रेष्ठ आचरण करने वाले के प्रति हर्ष करे तो सूर्य्य के सदृश प्रतापी होवे॥६॥

पुनः प्रतिज्ञापालकराजप्रजाधर्म्मविषयमाह॥

फिर प्रतिज्ञा पालने वाले राजप्रजाधर्म्मविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत स्मा हि त्वामाहुरिन्मघवानं शचीपते। दातारमविदीधयुम्॥७॥

उत। स्म। हि। त्वाम्। आहुः। इत्। मघऽवानम्। शचीऽपते। दातारम्। अविऽदीधयुम्॥७॥

पदार्थः-(उत) अपि **(स्मा)** एव। अत्र **निपातस्य च** इति दीर्घः। **(हि)** यतः **(त्वाम्) (आहुः)** कथयन्ति **(इत्)** एव **(मघवानम्)** परमपूजितबहुधनम् **(शचीपते)** वाचः प्रज्ञायाः पालक **(दातारम्) (अविदीधयुम्)** द्यूतादिदुष्टकर्म्मरहितम्॥७॥

अन्वयः-हे शचीपते राजन्! हि त्वां मघवानमविदीधयुं दातारं स्म विद्वांस आहुरुतापि सेवेरनतस्तमिदेव वयमपि सेवेमहि॥७॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यदि यूयं धर्म्याणि कर्माण्याचरत तर्हि युष्मास्वैश्वर्यं दातृत्वं च कदाचिन्न हीयेत॥७॥

पदार्थः-हे **(शचीपते)** वाणी और बुद्धि के पालन करने वाले राजन्! **(हि)** जिससे **(त्वाम्)** आपको **(मघवानम्)** अत्यन्त श्रेष्ठ बहुत धन वाले **(अविदीधयुम्)** जुआ आदि दुष्ट कर्म्मों से रहित **(दातारम्)** देनेवाला **(स्म)** ही विद्वान् लोग **(आहुः)** कहते हैं **(उत)** और सेवा भी करें, इससे **(इत्)** उन्हीं को हम लोग भी सेवें॥७॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जो आप लोग धर्म्मयुक्त कर्म्मों का आचरण करें तो आप लोगों में ऐश्वर्य्य और दानकर्म्म कभी न नष्ट होवें॥७॥

पुनर्न्यायपालनराजप्रजाधर्मविषयमाह॥

फिर न्यायपालन राजप्रजाधर्मविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत स्मा सद्य इत्परि शशमानाय सुन्वते। पुरू चिन्मंहसे वसु॥८॥

उत। स्म। सद्यः। इत्। परि। शशमानाय। सुन्वते। पुरु। चित्। मंहसे। वसु॥८॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**स्मा**) एव (**सद्यः**) (**इत्**) (**परि**) सर्वतः (**शशमानाय**) प्रशंसिताय (**सुन्वते**) पुरुषार्थेनाभिषवं कुर्वते (**पुरू**) बहु। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**चित्**) अपि (**मंहसे**) वर्धयसि (**वसु**) धनम्॥८॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यतस्त्वं शशमानाय सुन्वते चित् पुरू वसु परि मंहसे तस्मात्त्वं सद्य उत स्मेदैश्वर्य्यं प्राप्नोति॥८॥

भावार्थः-ये मनुष्या आप्तानां सत्कारं कुर्वन्ति ते तूर्णं गुणवन्तो भूत्वैश्वर्य्ययुक्ता भवेयुः॥८॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जिससे कि आप (**शशमानाय**) प्रशंसित और (**सुन्वते**) पुरुषार्थ से ओषधियों के रस को उत्पन्न करते हुए के लिये (**चित्**) भी (**पुरू**) बहुत (**वसु**) धन को (**परि**) सब प्रकार (**मंहसे**) बढ़वाते हो इससे आप (**सद्यः**) शीघ्र (**उत**) फिर (**स्म**) ही (**इत्**) निश्चित ऐश्वर्य्य को प्राप्त होते हो॥८॥

भावार्थः-जो मनुष्य यथार्थवक्ता पुरुषों का सत्कार करते हैं, वे शीघ्र गुणवान् होकर ऐश्वर्य्य से युक्त होवें॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नहि ष्मा ते शतं चन राधो वरन्त आमुरः। न च्यौत्नानि करिष्यतः॥९॥

नहि। स्म। ते। शतम्। चन। राधः। वरन्त। आऽमुरः। न। च्यौत्नानि। करिष्यतः॥९॥

पदार्थः-(**नहि**) निषेधे (**स्मा**) एव। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**ते**) तव (**शतम्**) असंख्यम् (**चन**) अपि (**राधः**) धनम् (**वरन्ते**) स्वीकुर्वन्ति (**आमुरः**) समन्ताद् रोगकारिणः (**न**) (**च्यौत्नानि**) बलानि (**करिष्यतः**)॥९॥

अन्वयः-हे राजन्! च्यौत्नानि करिष्यतस्ते शतं राधश्चनामुरो नहि वरन्ते न च विजयं स्माप्नुवन्ति॥९॥

भावार्थः हे राजन्! यदि भवान् यथावन्न्यायशीलो भवेत्तर्हि तव धनं बलं कदाचिन्न नश्येच्छतशो वर्द्धेत॥९॥

पदार्थः-हे राजन्! **(च्यौत्नानि)** बलों को **(करिष्यतः)** करते हुए **(ते)** आपके **(शतम्)** असंख्य **(राधः)** धन को **(चन)** भी **(आमुरः)** सब प्रकार रोग करने वाले **(नहि)** नहीं **(वरन्ते)** स्वीकार करते हैं **(न)** और न विजय को **(स्म)** ही प्राप्त होते हैं॥९॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आप यथायोग्य न्यायकारी होवें तो आपका धन और बल कभी न नष्ट होवे और सैकड़ों प्रकार बढ़े॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्माँ अवन्तु ते शतमस्मान्त्सहस्रमूतयः। अस्मान् विश्वा अभिष्टयः॥१०॥२५॥

अस्मान्। अवन्तु। ते। शतम्। अस्मान्। सहस्रम्। ऊतयः। अस्मान्। विश्वाः। अभिष्टयः॥१०॥

पदार्थः-(अस्मान्) (अवन्तु) (ते) तव **(शतम्)** असंख्याः **(अस्मान्) (सहस्रम्)** बहुविधाः **(ऊतयः)** रक्षाः **(अस्मान्) (विश्वाः)** सर्वाः **(अभिष्टयः)** इष्टय इच्छाः॥१०॥

अन्वयः-हे राजन्! ते सहस्रमूतयः शतं विश्वा अभिष्टयोऽस्मानवन्त्वस्मान् वर्द्धयन्त्वस्मानानन्दयन्तु॥१०॥

भावार्थः-हे राजँस्तदैव त्वं सत्यो राजा भवेर्यदा स्वात्मवत्पितृवदस्मान् पालयित्वा वर्द्धयित्वाऽऽनन्दयेः॥१०॥

पदार्थः-हे राजन्! **(ते)** आपकी **(सहस्रम्)** अनेक प्रकार की **(ऊतयः)** रक्षायें **(शतम्)** संख्यारहित **(विश्वाः)** सम्पूर्ण **(अभिष्टयः)** इच्छायें **(अस्मान्)** हम लोगों की **(अवन्तु)** रक्षा और **(अस्मान्)** हम लागों की वृद्धि करें **(अस्मान्)** तथा हम लोगों को आनन्द देवें॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! तभी आप सत्य राजा होवें, जब अपने और पिता के सदृश हम लोगों का पालन और वृद्धि करा के आनन्द देवें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्माँ इहा वृणीष्व सख्याय स्वस्तये। महो राये दिवित्मते॥११॥

अस्मान्। इह। वृणीष्व। सख्याय। स्वस्तये। महः। राये। दिवित्मते॥११॥

पदार्थः-(अस्मान्) (इहा) संसारे राज्ये वा। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(वृणीष्व)** स्वीकुर्याः **(सख्याय)** मित्रत्वाय **(स्वस्तये)** सुखाय **(महः)** महते **(राये)** धनाय **(दिवित्मते)** विद्याधर्म्मन्यायप्रकाशिताय॥११॥

अन्वयः-हे इन्द्र! राजँस्त्वमिहास्मान् स्वस्तये महो दिवित्मते सख्याय राये च वृणीष्व॥११॥

भावार्थः-हे राजन्! यथा भवानस्मासु मैत्रीं रक्षति तथा वयमपि त्वयि सदैव सखायः सन्तो वर्त्तेमहि॥११॥

पदार्थः-हे तेजस्वी राजन्! आप **(इह)** इस संसार वा राज्य में **(अस्मान्)** हम लोगों को **(स्वस्तये)** सुख के लिये **(महः)** बड़े **(दिवित्मते)** विद्या, धर्म्म और न्याय से प्रकाशित **(सख्याय)** मित्रत्व के लिये और **(राये)** धन के लिये **(वृणीष्व)** स्वीकार करो॥११॥

भावार्थः-हे राजन्! जैसे आप हम लोगों में मित्रता रखते हैं, वैसे हम लोग भी आप में सदा ही मित्र हुए वर्त्ताव करें॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्माँ अविड्ढि विश्वहेन्द्र राया परीणसा। अस्मान् विश्वाभिरूतिभिः॥१२॥

अस्मान्। अविड्ढि। विश्वहा। इन्द्र। राया। परीणसा। अस्मान्। विश्वाभिः। ऊतिऽभिः॥१२॥

पदार्थः-**(अस्मान्)** **(अविड्ढि)** प्रवेशय **(विश्वहा)** सर्वाणि दिनानि **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्ययुक्त राजन् **(राया)** धनेन **(परीणसा)** बहुविधेन **(अस्मान्)** **(विश्वाभिः)** अखिलाभिः **(ऊतिभिः)** रक्षादिभिः क्रियाभिः॥१२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं विश्वहा परीणसा राया सहास्मानविड्ढि विश्वाभिरूतिभिरस्मानविड्ढि॥१२॥

भावार्थः-स एवोत्तमो राजा राजपुरुषाश्च ये सर्वतो रक्षणेन प्रजा धनाढ्याः कुर्य्युः॥१२॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त राजन्! आप **(विश्वहा)** सम्पूर्ण दिनों को **(परीणसा)** अनेक प्रकार के **(राया)** धन के साथ **(अस्मान्)** हम लोगों को **(अविड्ढि)** प्रवेश कराइये और **(विश्वाभिः)** सम्पूर्ण **(ऊतिभिः)** रक्षा आदि क्रियाओं से हम लोगों को प्रवेश कराईये अर्थात् युक्त करिये॥१२॥

भावार्थः-वही उत्तम राजा और राजपुरुष हैं कि जो सब प्रकार रक्षा से प्रजा को धनाढ्य करें॥१२॥

पुनः प्रजावर्द्धनप्रकारेण राजप्रजाधर्मविषयमाह॥

फिर प्रजावृद्धिप्रकार से राजप्रजाधर्म विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्मभ्यं ताँ अपा वृधि व्रजाँ अस्तेव गोमतः। नवाभिरिन्द्रोतिभिः॥१३॥

अस्मभ्यम्। तान्। अप। वृधि। व्रजान्। अस्ताऽइव। गोऽमतः। नवाभिः। इन्द्र। ऊतिऽभिः॥१३॥

पदार्थः-(**अस्मभ्यम्**) (**तान्**) (**अपा**) अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**वृधि**) वर्धय (**व्रजान्**) व्रजन्ति गावो येषु तान् (**अस्तेव**) गृहाणीव (**गोमतः**) बह्व्यो गावो विद्यन्ते येषु तान् (**नवाभिः**) नूतनाभिः (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्यप्रद राजन् (**ऊतिभिः**) रक्षादिभिः॥१३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं नवाभिरूतिभिरस्मभ्यं गोमतो व्रजाँस्तानस्तेव वृधि दुःखान्यपावृधि॥१३॥

भावार्थः-हे राजन्! यथा गोपाला गा वर्धयित्वा दुग्धादिभिराढ्या भूत्वाऽऽनन्दन्ति तथैवाऽऽस्मान् वर्धयित्वाऽढ्यो भूत्वा सदैवानन्द॥१३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) परम ऐश्वर्य्य के देनेवाले राजन्! आप (**नवाभिः**) नवीन (**ऊतिभिः**) रक्षादिकों से (**अस्मभ्यम्**) हम लोगों के लिये (**गोमतः**) जिनमें बहुत गौएँ विद्यमान और (**व्रजान्**) बहुत गौएँ जातीं (**तान्**) उन गोड़ों (**अस्तेव**) गृहों के समान बढ़ाइये और दुःखों को (**अपा**, **वृधि**) न्यून कीजिये, नष्ट कीजिये॥१३॥

भावार्थः-हे राजन्! जैसे गोपाल गौओं को बढ़ा के दुग्धादिकों से आढ्य होते हैं, वैसे ही हम लोगों की वृद्धि करो और आढ्य होकर सदैव आनन्द कीजिये॥१३॥

पुना राजप्रजाधर्मविषयमाह॥

फिर राजाप्रजा धर्मविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒स्माकं॑ धृष्णु॒या रथो॑ द्यु॒माँ इ॑न्द्रान॑पच्यु॒तः। ग॒व्युर॑श्व॒युरी॑यते॥१४॥

अ॒स्माक॑म्। धृ॒ष्णु॒ऽया। रथः॑। द्यु॒ऽमान्। इ॒न्द्र॒। अन॑पऽच्युतः। ग॒व्युः। अ॒श्व॒ऽयुः। ई॒य॒ते॥१४॥

पदार्थः-(**अस्माकम्**) (**धृष्णुया**) दृढत्वेन युक्तः (**रथः**) सद्यो गमयिता विमानादियानविशेषः (**द्युमान्**) बहुकलायन्त्रादिप्रकाशित (**इन्द्र**) राजन्! (**अनपच्युतः**) अपचयरहितः (**गव्युः**) बहवो गावो विद्यन्ते यस्मिन् सः (**अश्वयुः**) बह्वश्वबलयुक्तः (**ईयते**) गच्छति॥१४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! योऽस्माकं धृष्णुया द्युमाननपच्युतो गव्युरश्वयू रथ ईयते तेन सह शत्रून् विजयस्व॥१४॥

भावार्थः-राजा प्रजाजनाश्चैवं मन्येरन् ये राज्ञः पदार्थास्तेऽस्माकं येऽस्माकं ते च राज्ञस्सन्तीति॥१४॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) राजन्! जो (**अस्माकम्**) हम लोगों को (**धृष्णुया**) दृढ़ता से युक्त (**द्युमान्**) बहुत कलायन्त्र आदि से प्रकाशित (**अनपच्युतः**) घटने से रहित (**गव्युः**) बहुत गौओं और (**अश्वयुः**) बहुत घोड़ों के बल से युक्त (**रथः**) शीघ्र पहुँचानेवाला विमान आदि विशेष वाहन (**ईयते**) जाता है, उसके साथ शत्रुओं को जीतिये॥१४॥

भावार्थः-राजा और प्रजाजन ऐसा मानें कि जो राजा के पदार्थ वे हम लोगों के और जो हम लोगों के वे राजा के हैं॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒स्माक॑मुत्त॒मं कृ॑धि॒ श्रवो॑ दे॒वेषु॑ सूर्य। वर्षि॑ष्ठं॒ द्यामि॑वो॒परि॑॥ १५॥ २६॥

अ॒स्माक॑म्। उ॒त्ऽत॒मम्। कृ॒धि॒। श्रवः॑। दे॒वेषु॑। सू॒र्य॒। वर्षि॑ष्ठम्। द्याम्ऽइ॑व। उ॒परि॑॥ १५॥ २६॥

पदार्थः-(अस्माकम्) (उत्तमम्) अतिश्रेष्ठम् **(कृधि)** कुरु **(श्रवः)** अन्नादिकं श्रवणं वा **(देवेषु)** विद्वत्सु **(सूर्य्य)** सूर्य इव वर्त्तमान **(वर्षिष्ठम्)** अतिशयेन वृद्धम् **(द्यामिव)** प्रकाशमिव **(उपरि)** ऊर्ध्वं वर्त्तमानम्॥ १५॥

अन्वयः-हे सूर्य्य राजँस्त्वमुपरि द्यामिवाऽस्माकमुत्तमं वर्षिष्ठं श्रवो देवेषु कृधि॥ १५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाऽऽकाशे सूर्य्यो महानस्ति तथैव विद्याविनयोन्नत्या सर्वोत्कृष्टमैश्वर्य्यं जनयतेति॥ १५॥

अत्र राजप्रजाधर्म्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकत्रिंशत्तमं सूक्तं षड्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(सूर्य्य)** सूर्य्य के सदृश वर्त्तमान राजन्! आप **(उपरि)** ऊपर वर्त्तमान **(द्यामिव)** प्रकाश के सदृश **(अस्माकम्)** हम लोगों के **(उत्तमम्)** अत्यन्त श्रेष्ठ **(वर्षिष्ठम्)** अत्यन्त बड़े हुए **(श्रवः)** अन्न आदि वा श्रवण को **(देवेषु)** विद्वानों में **(कृधि)** करिये॥ १५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे आकाश में सूर्य्य बड़ा है, वैसे ही विद्या और विनय की उन्नति से उत्तम ऐश्वर्य्य को उत्पन्न करो॥ १५॥

इस सूक्त में राजा और प्रजा के धर्म्म वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इकतीसवां सूक्त और छब्बीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ चतुर्विंशत्यृचस्य द्वात्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। १-२२ इन्द्रः। २३, २४ इन्द्राश्वौ देवते। १, ८-१०, १४, १६, १८, २२, २३ गायत्री। २, ४, ७ विराड्गायत्री। ३, ५, ६, १२, १३, १५, १९-२१ निचृद्गायत्री। ११ पिपीलिकामध्या गायत्री छन्दः। १७ पादनिचृद्गायत्री। २४ स्वराडार्ची गायत्री च छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथेन्द्रपदवाच्यराजप्रजागुणानाह॥

अब चौबीस ऋचा वाले बत्तीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में इन्द्रपदवाच्य राजप्रजागुणों को कहते हैं॥

आ तू न इन्द्र वृत्रहन्नस्माकमुर्धमा गहि। मुहान् मुहीभिरूतिभिः॥१॥

आ। तु। नुः। इुन्द्र। वृत्रुऽहुन्। अुस्माकम्। अुर्धम्। आ। गुहि। मुहान्। मुहीभिः। ऊुतिऽभिः॥१॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**तु**) पुनः (**नः**) अस्मान् (**इन्द्र**) राजन्! (**वृत्रहन्**) यो वृत्रं हन्ति सूर्यस्तद्वत् (**अस्माकम्**) (**अर्द्धम्**) वर्धनम् (**आ, गहि**) आगच्छ (**महान्**) (**महीभिः**) महतीभिः (**ऊतिभिः**) रक्षादिभिः॥१॥

अन्वयः-हे वृत्रहन्निन्द्र! त्वमस्माकमर्द्धमागहि महीभिरूतिभिस्सह महान् सन्नोऽस्माँस्त्वागहि॥१॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि भवानस्माकं वृद्धिं कुर्यात्तर्हि वयं भवन्तमति वर्धयेम॥१॥

पदार्थः-हे (**वृत्रहन्**) मेघ को नाश करनेवाले सूर्य के सदृश (**इन्द्र**) राजन्! आप (**अस्माकम्**) हम लोगों की (**अर्द्धम्**) वृद्धि को (**आ, गहि**) प्राप्त हूजिये और (**महीभिः**) बड़ी (**ऊतिभिः**) ऊतियों अर्थात् रक्षादिकों के साथ (**महान्**) बढ़े हुए (**नः**) हम लोगों को (**तु**) फिर (**आ**) प्राप्त होओ॥१॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आप हम लोगों की वृद्धि करें तो हम लोग आपकी अतिवृद्धि करें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भृमिश्चिद् घासि तूतुजिरा चित्र चित्रिणीष्वा। चित्रं कृणोष्यूतये॥२॥

भृमिः। चित्। घ। असि। तूतुजिः। आ। चित्र। चित्रिणीषु। आ। चित्रम्। कृणोषि। ऊतये॥२॥

पदार्थः-(**भृमिः**) भ्रमणशीलः (**चित्**) अपि (**घ**) (**असि**) अभीष्टकारी भवसि (**तूतुजिः**) शीघ्रकारी (**आ**) (**चित्र**) आश्चर्यगुणकर्मस्वभाव (**चित्रिणीषु**) अद्भुतासु सेनासु (**आ**) (**चित्रम्**) अद्भुतम् (**कृणोषि**) (**ऊतये**) रक्षाद्याय॥२॥

अन्वयः-हे चित्र! तूतुजिर्भृमिस्त्वमूतये चित्रिणीषु चित्रमाकृणोषि चिदाघासि तस्मात् सत्कर्त्तव्योऽसि॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि भवान्त्सर्वत्र भ्रमित्वा सद्यो न्यायं कृत्वा सर्वस्य रक्षां कुर्यात्तर्हि भवत आश्चर्याः प्रजा अद्भुतमैश्वर्यमुन्नयेयुः॥२॥

पदार्थः-हे **(चित्र)** आश्चर्य्यवान् गुण, कर्म स्वभावयुक्त **(तूतुजिः)** शीघ्रकारी **(भृमिः)** घूमने वाले आप **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये **(चित्रिणीषु)** अद्भुत सेनाओं में **(चित्रम्)** अद्भुत व्यवहार को **(आ, कृणोषि)** करते हो **(चित्)** और **(आ, घ, असि)** अभीष्टकारी होते हो, इससे सत्कार करने योग्य हो॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आप सब जगह घूमके शीघ्र न्याय करके सब की रक्षा करें तो आपकी आश्चर्यजनक प्रजा अद्भुत ऐश्वर्य की उन्नति करे॥२॥

पुनस्तमेव राजप्रजाविषयमाह॥

फिर उसी राजप्रजाविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

द॒भ्रेभि॑श्चि॒च्छशी॑यांसं॒ हंसि॒ व्राध॑न्तमो॒ज॑सा। सखि॑भि॒र्ये त्वे सचा॑॥३॥

द॒भ्रेभिः॑। चि॒त्। शशी॑यांसम्। हंसि॑। व्राध॑न्तम्। ओज॑सा। सखि॑ऽभिः। ये। त्वे इति॑। सचा॑॥३॥

पदार्थः-**(दभ्रेभिः)** अल्पैर्ह्रस्वैर्वा **(चित्)** अपि **(शशीयांसम्)** धर्ममुत्प्लवमानम् **(हंसि)** **(व्राधन्तम्)** व्याधमिव प्रजाहिंसकम् **(ओजसा)** बलेन **(सखिभिः)** सुहृद्भिः **(ये)** **(त्वे)** त्वयि **(सचा)**॥३॥

अन्वयः-हे सेनेश राजन्! यदि त्वं दभ्रेभिः सखिभिश्चिदोजसा शशीयांसं व्राधन्तं हंसि ये च त्वे सचा सत्येन वर्त्तन्ते तान् रक्षसि तर्हि विजयं कथन्न प्राप्नोसि॥३॥

भावार्थः-यदि धार्मिका अल्पा अपि परस्परं सुहृदो भूत्वा शत्रुभिस्सह युद्धेरँस्तर्हि बहूनप्यधर्माचारिणो विजयेरन्॥३॥

पदार्थः-हे सेनापति राजन्! जो आप **(दभ्रेभिः)** थोड़े वा छोटे **(सखिभिः)** मित्रों से **(चित्)** भी **(ओजसा)** बल से **(शशीयांसम्)** धर्म्म के उल्लङ्घन करने और **(व्राधन्तम्)** बहिलिये के सदृश प्रजा के नाश करने वाले का **(हंसि)** नाश करते हो और **(ये)** जो **(त्वे)** आप में **(सचा)** सत्य से वर्त्तमान हैं, उनकी रक्षा करते हो तो विजय को कैसे न प्राप्त होते हो॥३॥

भावार्थः-जो धार्मिक थोड़े भी परस्पर मित्र होकर शत्रुओं के साथ युद्ध करें तो बहुत अधर्म्माचारियों को जीतें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

व॒यमि॑न्द्र॒ त्वे सचा॑ व॒यं त्वा॒भि नो॑नुमः। अ॒स्माँअ॑स्माँ॒ इदुद॑व॥४॥

वयम्। इन्द्र। त्वे। इति। सचा। वयम्। त्वा। अभि। नोनुमः। अस्मान्ऽअस्मान्। इत्। उत्। अव॥४॥

पदार्थः-(**वयम्**) (**इन्द्र**) राजन् (**त्वे**) त्वयि (**सचा**) सत्याचारेण (**वयम्**) (**त्वा**) त्वाम् (**अभि, नोनुमः**) भृशं नताः स्मः (**अस्मानस्मान्**) (**इत्**) एव (**उत्**) (**अव**) रक्ष॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये वयं त्वे सचा वर्त्तेमहि वयं त्वाभिनोनुमस्तानस्मानस्मान् सततमिदुदव॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! यथा वयं त्वयि सत्यभावेन वर्त्तेमहि प्रीत्या भवन्तं सत्कुर्याम तथैव भवानस्मान्त्सततं वर्धयेत्॥४॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) राजन्! जो (**वयम्**) हम लोग (**त्वे**) आप में (**सचा**) सत्य आचरण से वर्त्ताव करें और (**वयम्**) हम लोग (**त्वा**) आपको (**अभि, नोनुमः**) सब प्रकार निरन्तर नमस्कार करते हैं, उन (**अस्मानस्मान्**) हम लोगों की हम लोगों की निरन्तर (**इत्, उत**) निश्चित ही (**अव**) रक्षा करो॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! जैसे हम लोग आप में सत्यभाव से वर्त्ताव और प्रीति से आप का सत्कार करें, वैसे ही आप हम लोगों की निरन्तर वृद्धि करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स नश्चित्राभिरद्रिवोऽनवद्याभिरूतिभिः। अनाधृष्टाभिरा गहि॥५॥२७॥

सः। नः। चित्राभिः। अद्रिऽवः। अनवद्याभिः। ऊतिऽभिः। अनाधृष्टाभिः। आ। गहि॥५॥२७॥

पदार्थः-(**सः**) (**नः**) अस्माकम् (**चित्राभिः**) अद्भुताभिः (**अद्रिवः**) अद्रयो मेघा विद्यन्ते सम्बन्धे यस्य सूर्यस्य तद्वद्वर्त्तमान (**अनवद्याभिः**) प्रशंसनीयाभिः (**ऊतिभिः**) रक्षादिभिः (**अनाधृष्टाभिः**) शत्रुभिर्धर्षितुमयोग्याभिः (**आ, गहि**) प्राप्नुयाः॥५॥

अन्वयः-हे अद्रिवो राजन्! स त्वं चित्राभिरनवद्याभिरनाधृष्टाभिरूतिभिः सह नोऽस्मानागहि॥५॥

भावार्थः-हे प्रजाजना यथा राजा युष्मान् सर्वतो रक्षेत्तथा यूयमपि राजानं सर्वथा रक्षत॥५॥

पदार्थः-हे (**अद्रिवः**) मेघों के सम्बन्ध से युक्त सूर्य्य के सदृश वर्त्तमान राजन्! (**सः**) वह आप (**चित्राभिः**) अद्भुत (**अनवद्याभिः**) प्रशंसा करने योग्य (**अनाधृष्टाभिः**) शत्रुओं से दबाने को नहीं योग्य (**ऊतिभिः**) रक्षादिकों के साथ (**नः**) हम लोगों को (**आ, गहि**) प्राप्त हूजिये॥५॥

भावार्थः-हे प्रजाजनो! जैसे राजा आप लोगों की सब प्रकार रक्षा करे, वैसे आप लोग भी राजा की सब प्रकार रक्षा करो॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भूयामो षु त्वावतः सखाय इन्द्र गोमतः। युजो वाजाय घृष्वये॥६॥

भूयामो इति। सु। त्वाऽवतः। सखायः। इन्द्र। गोऽमतः। युजः। वाजाय। घृष्वये॥६॥

पदार्थः-(**भूयामो**) भवेम। अत्र **वाच्छन्दसी**त्यस्योत्वम् (**सु**) शोभने (**त्वावतः**) त्वया रक्षिताः (**सखायः**) सुहृदः (**इन्द्र**) राजन् (**गोमतः**) गावो विद्यन्ते येषान्ते (**युजः**) ये युञ्जते तान् (**वाजाय**) विज्ञानायाऽन्नाय वा (**घृष्वये**) घर्षणाय॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वावतः सखायो वयं घृष्वये वाजाय गोमतो युजः प्राप्य सुभूयामो॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि भवान् पृथिव्यादियुक्तानस्मानैश्वर्येण सह योजयेत्तर्हि वयमपि त्वया सह युञ्जीमहि॥६॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) राजन्! (**त्वावतः**) आपसे रक्षित (**सखायः**) मित्र हम लोग (**घृष्वये**) घिसने और (**वाजाय**) विज्ञान वा अन्न के लिये (**गोमतः**) गौओं से युक्त (**युजः**) युक्त होने वालों को प्राप्त होकर (**सु**) सुन्दर (**भूयामो**) होवें॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आप पृथिवी आदि से युक्त हम लोगों को ऐश्वर्य्य के साथ युक्त करें तो हम लोग भी आपके साथ युक्त हों॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं ह्येक ईशिष इन्द्र वाजस्य गोमतः। स नो यन्धि महीमिषम्॥७॥

त्वम्। हि। एकः। ईशिषे। इन्द्र। वाजस्य। गोऽमतः। सः। नः। यन्धि। महीम्। इषम्॥७॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**हि**) यतः (**एकः**) असहायः (**ईशिषे**) (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्ययुक्त विद्वन्! (**वाजस्य**) विज्ञानादियुक्तस्य (**गोमतः**) बहुविधपृथिव्यादिसहितस्य (**सः**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**यन्धि**) प्रयच्छ (**महीम्**) महतीम् (**इषम्**) अन्नादिकम्॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यो ह्येकस्त्वं गोमतो वाजस्येशिषे स नो महीमिषं यन्धि॥७॥

भावार्थः-यो विद्वान् पुरुषार्थेन महदैश्वर्य्यं प्राप्यान्येभ्यो ददाति स एव सर्वेषामीश्वरो भवति॥७॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त विद्वान् जो (**हि**) जिससे (**एकः**) सहायरहित (**त्वम्**) आप (**गोमतः**) बहुत प्रकार की पृथिवी आदि के सहित (**वाजस्य**) विज्ञान आदि से युक्त जनसमूह के (**ईशिषे**) स्वामी हो (**सः**) वह (**नः**) हम लोगों के लिये (**महीम्**) बड़े (**इषम्**) अन्न आदि को (**यन्धि**) दीजिये॥७॥

भावार्थः-जो विद्वान् पुरुषार्थ से बड़े ऐश्वर्य्य को प्राप्त होकर अन्य जनों के लिये देता है, वही सब का ईश्वर होता है॥७॥

अथाध्यापकोपदेशकगुणानाह॥

अब अध्यापक और उपदेशक के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न त्वा॑ वरन्ते अ॒न्यथा॒ यद्दित्स॑सि स्तु॒तो म॒घम्। स्तो॒तृभ्य॑ इन्द्र गिर्वणः॥८॥

न। त्वा॒। व॒र॒न्ते॒। अ॒न्यथा॑। यत्। दित्स॑सि। स्तु॒तः। म॒घम्। स्तो॒तृऽभ्यः॑। इ॒न्द्र॒। गि॒र्व॒णः॥८॥

पदार्थः-(न) (त्वा) त्वाम् **(वरन्ते)** स्वीकुर्वन्ति **(अन्यथा) (यत्)** यः **(दित्ससि)** दातुमिच्छसि **(स्तुतः)** प्रशंसितः **(मघम्)** धनम् **(स्तोतृभ्यः)** विद्वद्भ्यः **(इन्द्र)** राजन् **(गिर्वणः)** गीर्भिस्सत्कृत॥८॥

अन्वयः-हे गिर्वण इन्द्र! यद्यः स्तुतः सँस्त्वं स्तोतृभ्यो मघं दित्ससि तं त्वाऽन्यथा मनुष्या न वरन्ते॥८॥

भावार्थः-योऽत्र दाता भवति स एव सर्वेषां प्रियो जायते नैव तस्य कोऽपि विरोधी भवति॥८॥

पदार्थः-हे **(गिर्वणः)** वाणियों से सत्कार को प्राप्त **(इन्द्र)** राजन्! **(यत्)** जो **(स्तुतः)** प्रशंसा किये गये आप **(स्तोतृभ्यः)** विद्वानों के लिये **(मघम्)** धन को **(दित्ससि)** देने की इच्छा करते हो उन **(त्वा)** आपको **(अन्यथा)** अन्य प्रकार से मनुष्य **(न)** नहीं **(वरन्ते)** स्वीकार करते हैं॥८॥

भावार्थः-जो इस संसार में देनेवाला होता है, वही सब को प्रिय होता और कोई भी उसका विरोधी नहीं होता है॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒भि त्वा॒ गोत॑मा गि॒रानू॑षत॒ प्र दा॒वने॑। इन्द्र॒ वाजा॑य॒ घृष्व॑ये॥९॥

अ॒भि। त्वा॒। गोत॑माः। गि॒रा। अनू॑षत। प्र। दा॒वने॑। इन्द्र॑। वाजा॑य। घृष्व॑ये॥९॥

पदार्थः-(अभि) (त्वा) त्वाम् **(गोतमाः)** प्रशस्ता गोर्वाग्विद्यते येषान्ते। **गौरिति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११) **(गिरा)** वाण्या **(अनूषत)** स्तुवन्तु **(प्र) (दावने)** दात्रे **(इन्द्र)** राजन् **(वाजाय)** विज्ञानाऽन्नाद्याय **(घृष्वये)** घर्षिताय शुद्धाय॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये गोतमा गिरा त्वाभ्यनूषत वाजाय घृष्वये दावने प्राऽनूषत तांस्त्वं प्रशंस॥९॥

भावार्थः-यस्य प्रशंसां विद्वांसः कुर्वन्ति स एव प्रशंसितो मन्तव्यः॥९॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** राजन्! **(गोतमाः)** श्रेष्ठ वाणी से युक्त जन **(गिरा)** वाणी से **(त्वा)** आपकी **(अभि, अनूषत)** सब ओर से स्तुति करें **(वाजाय)** विज्ञान और अन्न आदि के **(घृष्वये)** घिसे अर्थात् शुद्ध और **(दावने)** देनेवाले के लिये **(प्र)** उत्तम प्रकार स्तुति करें, उनकी आप प्रशंसा करो॥९॥

भावार्थः-जिसकी प्रशंसा विद्वान् जन करते हैं, वही प्रशंसित मानने के योग्य है॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र ते वोचाम वीर्या३ या मन्दसान आरुजः। पुरो दासीरभीत्य॥१०॥२८॥

प्र। ते। वोचाम। वीर्या। याः। मन्दसानः। आ। अरुजः। पुरः। दासीः। अभिऽइत्य॥१०॥

पदार्थः-(प्र) (ते) तव **(वोचाम)** उपदिशेम **(वीर्या)** बलपराक्रमयुक्तानि कर्म्माणि **(याः) (मन्दसानः)** कामयमानः **(आ, अरुजः)** समन्ताद्रोगयुक्ताः **(पुरः)** नगरीः **(दासीः)** सेविकाः **(अभीत्य)** अभितः प्राप्य॥१०॥

अन्वयः-हे राजन्! मन्दसानस्त्वं शत्रूणां या दासीरिवारुजः पुरोऽभीत्य विजयसे तस्य ते वीर्या वयं प्रवोचाम॥१०॥

भावार्थः-यो राजा शत्रूणां पराजयं कर्त्तुं शक्नुयात् स एव राज्यं कर्तुमर्हेत्॥१०॥

पदार्थः-हे राजन्! **(मन्दसानः)** कामना करते हुए आप शत्रुओं की **(याः)** जो **(दासीः)** सेविकाओं के सदृश **(आ, अरुजः)** सब प्रकार रोगयुक्त **(पुरः)** नगरियों की **(अभीत्य)** सब ओर से प्राप्त होकर जीतते हो उन **(ते)** आपके **(वीर्य्या)** बल, पराक्रम से युक्त कर्म्मों का हम लोग **(प्र, वोचाम)** उपदेश करें॥१०॥

भावार्थः-जो राजा शत्रुओं का पराजय कर सके, वही राज्य करने को योग्य हो॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ता ते गृणन्ति वेधसो यानि चकर्थ पौंस्या। सुतेष्विन्द्र गिर्वणः॥११॥

ता। ते। गृणन्ति। वेधसः। यानि। चकर्थ। पौंस्या। सुतेषु। इन्द्र। गिर्वणः॥११॥

पदार्थः-(ता) तानि **(ते)** तव **(गृणन्ति) (वेधसः)** मेधाविनः **(यानि) (चकर्थ)** करोषि **(पौंस्या)** पुंभ्यो हितानि बलानि **(सुतेषु)** निष्पन्नेषु पदार्थेषु **(इन्द्र)** राजन् **(गिर्वणः)** गीर्भिः स्तुत॥११॥

अन्वयः-हे गिर्वण इन्द्र! यानि वेधसस्ते पौंस्या गृणन्ति यानि त्वं सुतेषु चकर्थ ता वयं प्रशंसेम॥११॥

भावार्थः-तान्येव प्रशंसनीयानि कर्माणि भवन्ति यान्याप्ता प्रशंसेयुः॥११॥

पदार्थः-हे **(गिर्वणः)** वाणियों से स्तुति किये गये **(इन्द्र)** राजन्! **(यानि)** जो **(वेधसः)** बुद्धिमान् **(ते)** आपके **(पौंस्या)** पुरुषों के लिये हितकारक बलों को **(गृणन्ति)** कहते हैं और जिनको आप **(सुतेषु)** उत्पन्न पदार्थों में **(चकर्थ)** करते हो **(ता)** उनकी हम लोग प्रशंसा करें॥११॥

भावार्थः-वे ही प्रशंसा करने योग्य कर्म्म होते हैं कि जिनकी यथार्थवक्ता जन प्रशंसा करें॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अवीवृधन्त गोतमा इन्द्र त्वे स्तोमवाहसः। ऐषु धा वीरवद्यशः॥१२॥

अवीवृधन्त। गोतमाः। इन्द्र। त्वे इति। स्तोमऽवाहसः। आ। एषु। धाः। वीरऽवत्। यशः॥१२॥

पदार्थः-(अवीवृधन्त) वर्धन्तु **(गोतमाः)** विद्वांसः **(इन्द्र)** विद्वन्! **(त्वे)** त्वयि **(स्तोमवाहसः)** प्रशंसाप्रापकाः **(आ) (एषु) (धाः)** धेहि **(वीरवत्)** वीरा विद्यन्ते यस्मिंस्तत् **(यशः)** कीर्तिं धनं वा॥१२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये स्तोमवाहसो गोतमास्त्वे वीरवद्यशोऽवीवृधन्तैषु त्वं वीरवद्यश आ धाः॥१२॥

भावार्थः-हे राजन्! ये सत्कर्मणा तव कीर्त्तिं वर्धयेयुस्तेषां कीर्त्तिं त्वमपि वर्धय॥१२॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** विद्वन् जो **(स्तोमवाहसः)** प्रशंसा को प्राप्त करानेवाले **(गोतमाः)** विद्वान् जन **(त्वे)** आप में **(वीरवत्)** वीर पुरुष जिसमें विद्यमान उस **(यशः)** कीर्ति वा धन को **(अवीवृधन्त)** बढ़ावें **(एषु)** इनमें आप वीरयुक्त कीर्ति वा धन को **(आ, धाः)** अच्छे प्रकार धारण कीजिये॥१२॥

भावार्थः-हे राजन्! जो लोग उत्तम कर्म्म से आपकी कीर्ति को बढ़ावें, उनकी कीर्ति आप भी बढ़ाइये॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यच्चिद्धि शश्वतामसीन्द्र साधारणस्त्वम्। तं त्वा वयं हवामहे॥१३॥

यत्। चित्। हि। शश्वताम्। असि। इन्द्र। साधारणः। त्वम्। तम्। त्वा। वयम्। हवामहे॥१३॥

पदार्थः-(यत्) यः **(चित्)** अपि **(हि)** खलु **(शश्वताम्)** अनादिभूतानां मध्ये **(असि) (इन्द्र)** परमैश्वर्य्ययुक्त परमेश्वर **(साधारणः)** सामान्येन व्याप्तः **(त्वम्) (तम्) (त्वा)** त्वाम् **(वयम्) (हवामहे)** स्तूमह आश्रयेम॥१३॥

अन्वयः-हे इन्द्र जगदीश्वर! यद्यस्त्वं शश्वतां प्रकृत्यादीनां मध्ये साधारणोऽसि तं चित् वा हि वयं हवामहे॥१३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः परमेश्वरः सनातनानां स्वामी धर्ता स कार्यनिर्माता व्यवस्थापकोऽन्तर्यामी वर्त्तते तमेव सदोपासीरन्॥१३॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त जगदीश्वर! **(यत्)** जो **(त्वम्)** आप **(शश्वताम्)** अनादि काल से हुए प्रकृति आदि पदार्थों के मध्य में **(साधारणः)** सामान्य से व्याप्त **(असि)** होते हो **(तम्, चित्)** उन्हीं **(त्वा)** आपकी **(हि)** निश्चय **(वयम्)** हम लोग **(हवामहे)** स्तुति करते वा आपका आश्रय

करते हैं॥१३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो परमेश्वर अनादि काल से सिद्ध प्रकृति आदि पदार्थों का स्वामी, उनका धारण करनेवाला, वह कार्य्य का निर्माणकर्ता और कार्य्यों की व्यवस्था करनेवाला अन्तर्यामी है, उसी की सदा उपासना करो॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अर्वाचीनो वसो भवास्मे सु मत्स्वान्धसः। सोमानामिन्द्र सोमपाः॥१४॥

अर्वाचीनः। वसो इति। भव। अस्मे इति। सु। मत्स्व। अन्धसः। सोमानाम्। इन्द्र। सोमऽपाः॥१४॥

पदार्थः-(**अर्वाचीनः**) इदानीन्तनः (**वसो**) वासकर्त्तः (**भव**) (**अस्मे**) अस्मासु (**सु**) (**मत्स्व**) आनन्द (**अन्धसः**) अन्नादेः (**सोमानाम्**) पदार्थानाम् (**इन्द्र**) राजन् (**सोमपाः**) यः सोममैश्वर्य्यं पाति सः॥१४॥

अन्वयः-हे वसो इन्द्र! अर्वाचीनः सोमपास्त्वमस्मेऽन्धसः सोमानां रक्षको भव सु मत्स्व॥१४॥

भावार्थः-यो राजा प्रजापदार्थानां यथावद्रक्षां कुर्यात् स उत्तरकाले वृद्धसुखः स्यात्॥१४॥

पदार्थः-हे (**वसो**) वास करने वाले (**इन्द्र**) राजन्! (**अर्वाचीनः**) इस काल में वर्त्तमान (**सोमपाः**) ऐश्वर्य्य की रक्षा करनेवाले आप (**अस्मे**) हम लोगों में (**अन्धसः**) अन्न आदि और (**सोमानाम्**) अन्य पदार्थों के रक्षक (**भव**) हूजिये और (**सु, मत्स्व**) उत्तम प्रकार आनन्द कीजिये॥१४॥

भावार्थः-जो राजा प्रजा के पदार्थों की यथायोग्य रक्षा करे, वह आगे के समय में सुख की वृद्धियुक्त होवे॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्माकं त्वा मतीनामा स्तोम इन्द्र यच्छतु। अर्वागा वर्तया हरी॥१५॥

अस्माकम्। त्वा। मतीनाम्। आ। स्तोमः। इन्द्र। यच्छतु। अर्वाक्। आ। वर्तय। हरी इति॥१५॥

पदार्थः-(**अस्माकम्**) (**त्वा**) त्वाम् (**मतीनाम्**) मननशीलानां मनुष्याणाम् (**आ**) (**स्तोमः**) स्तुतिः (**इन्द्र**) (**यच्छतु**) निगृह्णातु (**अर्वाक्**) पुनः (**आ**) (**वर्त्तय**) अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**हरी**) अग्निजले अश्वौ वा॥१५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! अस्माकं मतीनां स्तोमो यं त्वा आ यच्छतु स त्वमर्वाग्धरी आवर्त्तय॥१५॥

भावार्थः-यं विद्याविनययुक्तं राजानं सर्वतः प्रशंसा प्राप्नुयात् स एव प्रजा नियन्तुं शक्नुयात्॥१५॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** राजन्! **(अस्माकम्)** हम **(मतीनाम्)** विचारशील मनुष्यों की **(स्तोमः)** स्तुति जिन **(त्वा)** आपको **(आ, यच्छतु)** प्राप्त होवे वह आप **(अर्वाक्)** फिर **(हरी)** अग्नि जल वा घोड़ों को **(आ, वर्त्तय)** अच्छे प्रकार वर्त्ताइये॥१५॥

भावार्थः-जिस विद्या और विनय से युक्त राजा को सब प्रकार प्रशंसा प्राप्त होवे, वही प्रजा को नियमयुक्त कर सके॥१५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पुरोळाशं च नो घसो जोषयासे गिरश्च नः। वधूयुरिव योषणाम्॥१६॥२९॥

पुरोळाशम्। च। नः। घसः। जोषयासे। गिरः। च। नः। वधूयुःऽइव। योषणाम्॥१६॥

पदार्थः-(पुरोळाशम्) सुसंस्कृतान्नविशेषम् **(च)** **(नः)** अस्मभ्यम् **(घसः)** भोगः **(जोषयासे)** सेवय **(गिरः)** वाणीः **(च)** **(नः)** अस्माकम् **(वधूयुरिव)** **(योषणाम्)** भार्याम्॥१६॥

अन्वयः-हे वैद्यराज! यो नो घसोऽस्ति तं पुरोळाशं च जोषयासे योषणां वधूयुरिव नो गिरश्च जोषयासे॥१६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो राजा स्त्रियं कामयमानः पतिरिव प्रजावाचः श्रुत्वा न्यायं करोत्यैश्वर्यञ्च दधाति स राष्ट्रे पूज्यो भवति॥१६॥

पदार्थः-हे वैद्यराज! जो **(नः)** हम लोगों के लिये **(घसः)** भोग है उसकी **(पुरोळाशम्, च)** और उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्नविशेष की **(जोषयासे)** सेवा कराओ और **(योषणाम्)** स्त्री को **(वधूयुरिव)** वधूयु अर्थात् अपने को वधू की चाहना करनेवाली के सदृश **(नः)** हम लोगों को **(गिरः)** वाणियों की **(च)** भी सेवा कराओ॥१६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो राजा स्त्री की कामना करते हुए पति के सदृश प्रजा की वाणियों को सुन के न्याय करता और ऐश्वर्य को धारण करता है, वह राज्य में पूज्य होता है॥१६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सहस्रं व्यतीनां युक्तानामिन्द्रमीमहे। शतं सोमस्य खार्यः॥१७॥

सहस्रम्। व्यतीनाम्। युक्तानाम्। इन्द्रम्। ईमहे। शतम्। सोमस्य। खार्यः॥१७॥

पदार्थः-(**सहस्रम्**) (**व्यतीनाम्**) गमनकर्तॄणाम् (**युक्तानाम्**) समाहितानाम् (**इन्द्रम्**) दुष्टदर्त्तारं राजानम् (**ईमहे**) याचामहे (**शतम्**) (**सोमस्य**) धान्याद्यैश्वर्यस्य (**खार्यः**) एतत्परिमाण-मितान्यन्नादीनि॥१७॥

अन्वयः-हे धनाढ्य! व्यतीनां युक्तानां सहस्रं सोमस्य खार्यः शतं सन्ति ता इन्द्रं प्राप्येमहे॥१७॥

भावार्थः-ये धनाढ्यान् प्राप्यासंख्यान् पदार्थान् याचन्ते ते स्वल्पं लभन्ते ये च न याचन्ते ते बहु प्राप्नुवन्ति॥१७॥

पदार्थः-हे धनाढ्य पुरुष (**व्यतीनाम्**) गमन करने वाले (**युक्तानाम्**) उत्तम प्रकार सावधान चित्त हुए जनों का (**सहस्रम्**) एक सहस्र और (**सोमस्य**) धान्य आदि ऐश्वर्य की (**खार्यः**, **शतम्**) सौ खारी अर्थात् सौ मन तुले हुए अन्न आदि पदार्थ हैं उनकी (**इन्द्रम्**) दुष्टों का नाश करनेवाले राजा को प्राप्त होकर (**ईमहे**) याचना करते हैं॥१७॥

भावार्थः-जो धनाढ्य जनों को प्राप्त होकर असङ्ख्य पदार्थों की याचना करते हैं, वे थोड़ा पाते हैं और जो याचना नहीं करते हैं, वे बहुत पाते हैं॥१७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स॒हस्रा॑ ते श॒ता व॒यं गवा॒मा च्या॑वयामसि। अ॒स्म॒त्रा राध॑ एतु ते॥१८॥

स॒हस्रा॑। ते॒। श॒ता। व॒यम्। गवा॑म्। आ। च्या॒व॒या॒म॒सि॒। अ॒स्म॒ऽत्रा। राध॑ः। ए॒तु॒। ते॒॥१८॥

पदार्थः-(**सहस्रा**) सहस्राणि (**ते**) तव (**शता**) शतानि (**वयम्**) (**गवाम्**) (**आ**) (**च्यावयामसि**) प्रापयामः (**अस्मत्रा**) अस्मासु (**राधः**) धनम् (**एतु**) प्राप्नोतु (**ते**) तव॥१८॥

अन्वयः-हे धनेश! ते राधोऽस्मत्रैतु ते तव गवां सहस्रा शता वयमाच्यावयामसि॥१८॥

भावार्थः-हे धनाढ्य! तव सकाशाद्वयं गवादीन् प्राप्याऽन्येभ्यो दद्मः। अस्माकं धनं भवन्तं प्राप्नोतु॥१८॥

पदार्थः-हे धन के ईश (**ते**) आप का (**राधः**) धन (**अस्मत्रा**) हम लोगों में (**एतु**) प्राप्त हो और (**ते**) आपकी (**गवाम्**) गौ के (**सहस्रा**) हजारों और (**शता**) सैकड़ों समूह को (**वयम्**) हम लोग (**आ, च्यावयामसि**) प्राप्त कराते हैं॥१८॥

भावार्थः-हे धनाढ्य! आपके समीप से हम लोग गौ आदि पदार्थों को प्राप्त होकर औरों के लिये देते हैं और हम लोगों का धन आपको प्राप्त हो॥१८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दर्श ते कुलशानां हिरण्यानामधीमहि। भूरिदा असि वृत्रहन्॥१९॥

दर्श। ते। कुलशानाम्। हिरण्यानाम्। अधीमहि। भूरिऽदाः। असि। वृत्रऽहन्॥१९॥

पदार्थः-(दश) **(ते)** तव **(कलशानाम्)** घटानाम् **(हिरण्यानाम्)** **(अधीमहि)** प्राप्नुयाम **(भूरिदाः)** बहूनां दाता **(असि)** **(वृत्रहन्)** शत्रुहन्ता॥१९॥

अन्वयः-हे वृत्रहन्! यतस्त्वं भूरिदा असि तस्मात्ते हिरण्यानां कलशानां दशाधीमहि॥१९॥

भावार्थः-यो मनुष्यो बहुप्रदो भवति तस्य मित्राणि बहूनि जायन्ते॥१९॥

पदार्थः-हे **(वृत्रहन्)** शत्रुओं के नाश करनेवाले! जिससे आप **(भूरिदाः)** बहुतों के देनेवाले **(असि)** हो इससे **(ते)** आपके **(हिरण्यानाम्)** सुवर्ण के बने हुए **(कलशानाम्)** घटों के **(दश)** दशसंख्यायुक्त समूह को हम लोग **(अधीमहि)** प्राप्त होवें॥१९॥

भावार्थः-जो मनुष्य बहुत देनेवाला होता है, उसके मित्र बहुत होते हैं॥१९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भूरिदा भूरि देहि नो मा दुभ्रं भूर्या भर। भूरि घेदिन्द्र दित्ससि॥२०॥

भूरिऽदाः। भूरि। देहि। नः। मा। दुभ्रम्। भूरि। आ। भर। भूरि। घ। इत्। इन्द्र। दित्ससि॥२०॥

पदार्थः-(भूरिदाः) बहुदाः **(भूरि)** बहु **(देहि)** **(नः)** अस्मभ्यम् **(मा)** **(दभ्रम्)** अल्पम् **(भूरि)** बहु **(आ)** **(भर)** समन्ताद्धर **(भूरि)** बहु **(घ)** एव **(इत्)** अपि **(इन्द्र)** दातः **(दित्ससि)** दातुमिच्छसि॥२०॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्त्वं नो भूरि दित्ससि स भूरिदास्त्वं नो भूरि देहि भूर्याभर दभ्रं घेन्मा देहि दभ्रमिन्माभर॥२०॥

भावार्थः-यो बहुप्रदोऽस्ति स एव प्रशंसां लभते योऽल्पदः स नैवं प्रशंसितो भवति॥२०॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** देनेवाले! जो आप **(नः)** हम लोगों के लिये **(भूरि)** बहुत **(दित्ससि)** देने की इच्छा करते हो वह **(भूरिदाः)** बहुत देनेवाले आप हम लोगों के लिये **(भूरि)** बहुत **(देहि)** दीजिये और **(भूरि)** बहुत को **(आ, भर)** सब प्रकार धारण कीजिये **(दभ्रम्)** थोड़े को **(घ)** ही **(मा)** मत दीजिये और थोड़े को **(इत्)** ही न धारण कीजिये॥२०॥

भावार्थः-जो बहुत देनेवाला है वही प्रशंसा को प्राप्त होता है और जो थोड़ा देनेवाला वह नहीं इस प्रकार प्रशंसित होता है॥२०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

भूरिदा ह्यसि श्रुतः पुरुत्रा शूर वृत्रहन्। आ नो भजस्व राधसि॥२१॥

भूरिऽदाः। हि। असि। श्रुतः। पुरुऽत्रा। शूर। वृत्रऽहन्। आ। नः। भजस्व। राधसि॥२१॥

पदार्थः-(भूरिदाः) बहुप्रदाः **(हि)** यतः **(असि)** **(श्रुतः)** सर्वत्र प्रसिद्धकीर्त्तिः **(पुरुत्रा)** बहुषु प्रतिष्ठितः **(शूर)** शत्रुहन्तः **(वृत्रहन्)** प्राप्तधन **(आ)** **(नः)** अस्मान् **(भजस्व)** सेवस्व **(राधसि)** संसाध्नोसि॥२१॥

अन्वयः-हे शूर वृत्रहन्! राजँस्त्वं हि भूरिदा असि तस्मात् पुरुत्रा श्रुतोऽसि यतस्त्वं नो राधसि तस्मादस्माना भजस्व॥२१॥

भावार्थः-योऽत्र जगति बहुदाता भवति स एव सर्वदिक्कीर्त्तिर्भवति॥२१॥

पदार्थः-हे **(शूर)** शत्रुओं के नाश करनेवाले **(वृत्रहन्)** धन को प्राप्त राजन्! आप **(हि)** जिससे **(भूरिदाः)** बहुत देनेवाले **(असि)** हो इससे **(पुरुत्रा)** बहुतों में प्रतिष्ठित और **(श्रुतः)** सब जगह प्रसिद्ध यशवाले हो जिससे आप **(नः)** हम लोगों को **(राधसि)** अच्छे प्रकार साधते हैं, इससे हम लोगों को **(आ, भजस्व)** अच्छे प्रकार सेवो॥२१॥

भावार्थः-जो इस संसार में बहुत देनेवाला होता है, वही सम्पूर्ण दिशाओं में कीर्तियुक्त होता है॥२१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र ते बभ्रू विचक्षण शंसामि गोषणो नपात्। माभ्यां गा अनु शिश्रथः॥२२॥

प्र। ते। बभ्रू इति। विऽचक्षण। शंसामि। गोऽसनः। नपात्। मा। आभ्याम्। गाः। अनु। शिश्रथः॥२२॥

पदार्थः-(प्र) **(ते)** तव **(बभ्रू)** सकलविद्याधारकावध्यापकोपदेशकौ **(विचक्षण)** प्राज्ञ **(शंसामि)** **(गोषणः)** यो गाः सनुते याचते तत्संबुद्धौ **(नपात्)** यो न पतति **(मा)** **(आभ्याम्)** सह **(गाः)** पृथिव्यादीन् **(अनु)** **(शिश्रथः)** श्रथ्नासि॥२२॥

अन्वयः-हे गोषणो विचक्षण! यौ बभ्रू अहं प्रशंसामि तौ ते शिक्षकौ स्याताम्। आभ्यां त्वं नपात् सन् गा मानु शिश्रथः॥२२॥

भावार्थः-हे जिज्ञासो! त्वमध्यापकमुपदेशकं च प्राप्य पुरुषार्थेन विद्यामुपदेशञ्च सद्यो गृहाणालस्यं मा कुरु॥२२॥

पदार्थः-हे **(गोषणः)** गौ मांगने वाले **(विचक्षण)** उत्तम ज्ञाता! जो **(बभ्रू)** सम्पूर्ण विद्याओं के धारण करने वाले अध्यापक और उपदेशक की मैं **(प्र, शंसामि)** प्रशंसा करता हूँ वे **(ते)** आपके शिक्षक होवें **(आभ्याम्)** इनके साथ आप **(नपात्)** नहीं गिरने वाले होते हुए **(गाः)** पृथिव्यादिकों को **(मा)** मत

(अनु, शिश्रथः) शिथिल करते हैं॥२२॥

भावार्थः-हे जिज्ञासु ज्ञान को चाहने वाले! तू अध्यापक और उपदेशक को पाकर पुरुषार्थ से विद्या और उपदेश को शीघ्र ग्रहण कर, आलस्य मत कर॥२२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कनीनकेव विद्रधे नवे द्रुपदे अर्भके। बभ्रू यामेषु शोभेते॥२३॥

कनीनकाऽइव। विद्रधे। नवे। द्रुऽपदे। अर्भके। बभ्रू इति। यामेषु। शोभेते इति॥२३॥

पदार्थः-(कनीनकेव) कमनीयेव **(विद्रधे)** विशेषेण दृढे **(नवे)** नवीने **(द्रुपदे)** सद्यः प्रापणीये वृक्षादिद्रव्यपदे वा **(अर्भके)** अल्पे **(बभ्रू)** अध्यापकोपदेशकौ **(यामेषु)** प्रहरेषु **(शोभेते)**॥२३॥

अन्वयः-हे विद्वांसौ! भवन्तौ यौ बभ्रू यामेषु कनीनकेव नवे विद्रधे द्रुपदे अर्भके शोभेते ताविव जगदुपकारकौ भवितुमर्हतः॥२३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये विद्वांसोऽधिकेऽल्पे विज्ञाने कर्मणि वा सुशोभिताः स्युस्ते जगति कल्याणकाराः स्युः॥२३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! आप जो **(बभ्रू)** अध्यापक और उपदेशक **(यामेषु)** प्रहरों में **(कनीनकेव)** सुन्दर के तुल्य **(नवे)** नवीन **(विद्रधे)** विशेष दृढ़ **(द्रुपदे)** शीघ्र प्राप्त होने योग्य पदार्थ वा वृक्ष आदि द्रव्यों के स्थान और **(अर्भके)** छोटे बालक के निमित्त **(शोभेते)** शोभित होते हैं, उनके सदृश संसार के उपकार करनेवाले होने को योग्य हों॥२३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो विद्वान् अधिक वा न्यून विज्ञान में वा काम में सुशोभित हों, वे जगत् के बीच कल्याण करनेवाले हों॥२३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अरं म उस्रयाम्णेऽरमनुस्रयाम्णे। बभ्रू यामेष्वस्रिधा॥२४॥३०॥६॥३॥

अरम्। मे। उस्रऽयाम्ने। अरम्। अनुस्रऽयाम्ने। बभ्रू इति। यामेषु। अस्रिधा॥२४॥

पदार्थः-(अरम्) अलम् **(मे)** मह्यम् **(उस्रयाम्णे)** उस्रैः किरणैरिव यानेन याति तस्मै **(अरम्)** अलम् **(अनुस्रयाम्णे)** योऽनुस्रं शीतं देशं याति तस्मै **(बभ्रू)** सत्यधारकौ **(यामेषु)** प्रहरेषु **(अस्रिधा)** अहिंसकौ॥२४॥

अन्वयः-यावस्रिधा बभ्रू यामेषूस्रयाम्णे मेऽरमनुस्रयाम्णे मेऽरं भवतस्तौ मया सेवनीयौ॥२४॥

भावार्थः-यावध्यापकोपदेशकौ शीतोष्णदेशनिवासिनं मामध्यापयितुमुपदेष्टुं च शक्नुतस्तौ सदैव मया सत्कर्त्तव्यौ भवत इति॥२४॥

अत्रेन्द्रराजाप्रजाध्यापकोपदेशकगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यृक्संहितायां तृतीयाष्टके षष्ठोऽध्यायस्त्रिंशो वर्गश्चतुर्थमण्डले द्वात्रिंशत्तमं सूक्तं तृतीयोऽनुवाकश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो **(अस्त्रिधा)** नहीं हिंसा करने **(बभ्रू)** और सत्य की धारणा करने वाले **(यामेषु)** प्रहरों में **(उस्रयाम्णे)** किरणों के समान जो यान से जाता उस **(मे)** मेरे लिये **(अरम्)** समर्थ और **(अनुस्रयाम्णे)** शीत देश को जाने वाले मेरे लिये **(अरम्)** समर्थ होते हैं, वे मुझसे सेवने योग्य हैं॥२४॥

भावार्थः-जो अध्यापक और उपदेशक शीतोष्ण देश निवासी मुझको पढ़ा और उपदेश दे सकते हैं, वे सदैव मुझ से सत्कार करने योग्य होते हैं॥२४॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा, प्रजा, अध्यापक और उपदेशक के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह ऋग्वेद संहिता के तीसरे अष्टक में छठा अध्याय तीसवां वर्ग तथा चतुर्थ मण्डल में बत्तीसवां सूक्त और तीसरा अनुवाक पूरा हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ तृतीयाष्टके सप्तमाध्यायारम्भः

विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथैकादशर्चस्य त्रयस्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। ऋभवो देवताः। १ भुरिक् त्रिष्टुप्। २, ४, ५, ११ त्रिष्टुप्। ३, ६, १० निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ७, ८ भुरिक् पङ्क्तिः। ९ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब ग्यारह ऋचा वाले तेंतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् के विषय को कहते हैं॥

प्र ऋ॒भुभ्यो॑ दू॒तमि॑व॒ वाच॑मिष्य उप॒स्तिरे॒ श्वैत॑रीं धे॒नुमी॑ळे।

ये वात॑जूतास्त॒रणि॑भि॒रेवैः॒ परि॒ द्यां स॒द्यो अ॒पसो॑ बभू॒वुः॥ १॥

प्र। ऋ॒भुऽभ्यः॑। दू॒तम्ऽइ॑व। वाच॑म्। इ॒ष्ये॒। उ॒प॒ऽस्तिरे॑। श्वैत॑रीम्। धे॒नुम्। ई॒ळे॒। ये। वात॑ऽजूताः। त॒रणि॑ऽभिः। एवैः॑। परि॑। द्याम्। स॒द्यः। अ॒प॑सः। ब॒भू॒वुः॥ १॥

पदार्थः-(प्र) (ऋभुभ्यः) मेधाविभ्यः। **ऋभुरिति मेधाविनामसु पठितम्।** (निघं०३.१५) **(दूतमिव)** यथा दूतो दौत्यमिच्छति **(वाचम्) (इष्ये)** प्राप्नोमि **(उपस्तिरे)** स्वस्तराय **(श्वैतरीम्)** अतिशयेन शुद्धाम् **(धेनुम्)** धारणाम् **(ईळे)** स्तौमि प्राप्नोमि **(ये) (वातजूताः)** वायुप्रेरितास्त्रसरेण्वादिपदार्थाः **(तरणिभिः)** सन्तरणैः **(एवैः)** प्राप्तैर्वेगादिगुणैः **(परि) (द्याम्)** आकाशम् **(सद्यः)** शीघ्रम् **(अपसः)** कर्माणि **(बभूवुः)** भवन्ति॥१॥

अन्वयः-ये वाजतूजाः पदार्था एवैस्तरणिभिः सद्यो द्यामपसः परिबभूवुस्तैरहमुपस्तिर ऋभुभ्यो दूतमिव श्वैतरीं धेनुं वाचं प्रेष्ये तथा पदार्थविज्ञानमीळे॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये पुरुषा यथा त्रसरेणवो वायुना क्रियां सततं कुर्वन्ति तथैव विद्वद्भ्यो विद्यां प्राप्य पुरुषार्थं सदा कुर्वन्ति ते सर्वविद्यायुक्तां शोभनां वाचं प्राप्नुवन्ति॥१॥

पदार्थः-(ये) जो **(वातजूताः)** वायु से उड़ाये गये त्रसरेणु आदि पदार्थ **(एवैः)** प्राप्त वेग आदि गुणों और **(तरणिभिः)** उत्तम प्रकार तैरने आदि क्रियाओं से **(सद्यः)** शीघ्र **(द्याम्)** आकाश और **(अपसः)** कर्मों के प्रति **(परिबभूवुः)** परिभूत तिरस्कृत अर्थात् रूपान्तर को प्राप्त होते हैं, उनसे [मैं] **(उपस्तिरे)** विस्तार के अर्थ और **(ऋभुभ्यः)** बुद्धिमानों के लिये **(दूतमिव)** जैसे दूत दूतपन की इच्छा करे वैसे **(श्वैतरीम्)** अत्यन्त शुद्ध **(धेनुम्)** धारण करने वाली **(वाचम्)** वाणी को **(प्र, इष्ये)** प्राप्त करता

हूँ, उस वाणी से पदार्थ विज्ञान की **(ईळे)** स्तुति करता हूँ॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो पुरुष जैसे त्रसरेणु वायु से क्रिया को निरन्तर करते हैं, वैसे ही विद्वानों से विद्या को प्राप्त होकर पुरुषार्थ सदा करते हैं, वे सर्व विद्याओं से युक्त सुन्दर वाणी को प्राप्त होते हैं॥१॥

अथ मातापित्रादिशिक्षाविषयमाह॥

अब माता पिता आदि के शिक्षा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यदारमक्रन्नृभवः पितृभ्यां परिविष्टी वेषणा दंसनाभिः।

आदिद्देवानामुप सख्यमायन् धीरासः पुष्टिमवहन् मनायै॥२॥

यदा। अरम्। अक्रन्। ऋभवः। पितृऽभ्याम्। परिऽविष्टी। वेषणा। दंसनाभिः। आत्। इत्। देवानाम्। उप। सख्यम्। आयन्। धीरासः। पुष्टिम्। अवहन्। मनायै॥२॥

पदार्थः-**(यदा)** **(अरम्)** अलम् **(अक्रन्)** कुर्वन्ति **(ऋभवः)** प्राज्ञाः **(पितृभ्याम्)** विद्वद्भ्यां जननीजनकाभ्याम् **(परिविष्टी)** सर्वतो विद्या व्याप्नोति यया तया क्रियया **(वेषणा)** व्याप्तेन पदार्थेन **(दंसनाभिः)** उत्तमैः कर्मभिः **(आत्)** **(इत्)** एव **(देवानाम्)** विदुषाम् **(उप)** **(सख्यम्)** मित्रभावम् **(आयन्)** प्राप्नुवन्ति **(धीरासः)** योगयुक्ता ध्यानवन्तः **(पुष्टिम्)** सर्वाऽवयवदृढत्वम् **(अवहन्)** प्राप्नुवन्ति **(मनायै)** मन्तव्यायै विद्यायै॥२॥

अन्वयः-ऋभवो यदा पितृभ्यां परिविष्टी वेषणा दंसनाभिर्देवानां सख्यमरमक्रन्नादित्ते धीरासो मनायै बुद्धिमुपायन् पुष्टिमवहन्॥२॥

भावार्थः-ये मनुष्या बाल्यावस्थायामापञ्चमाद् वर्षान्मातृशिक्षामाष्टात् संवत्सरात् पितृशिक्षामष्टाचत्वारिंशाद् वर्षादाचार्य्यशिक्षां च गृह्णन्ति त एव विद्वांसो मेधाविनो धार्मिका चिरञ्जीविनो जगत्कल्याणकरा भवन्ति॥२॥

पदार्थः-**(ऋभवः)** बुद्धिमान् जन **(यदा)** जब **(पितृभ्याम्)** विद्वान् माता और पिता से **(परिविष्टी)** सब प्रकार विद्या को व्याप्त होता जिससे उस क्रिया और **(वेषणा)** व्याप्त पदार्थ से तथा **(दंसनाभिः)** उत्तम कर्मों से **(देवानाम्)** विद्वानों के **(सख्यम्)** मित्रपन को **(अरम्)** पूरा **(अक्रन्)** करते हैं **(आत्, इत्)** तभी वे **(धीरासः)** योग से युक्त ध्यान वाले **(मनायै)** मानने योग्य विद्या के लिये बुद्धि को **(उप, आयन्)** प्राप्त होते और **(पुष्टिम्)** सम्पूर्ण अवयवों की पुष्टि को **(अवहन्)** प्राप्त होते हैं॥२॥

भावार्थः-जो मनुष्य बाल्यावस्था में पांचवें वर्ष से माता की शिक्षा और आठवें वर्ष से लेकर पिता की शिक्षा को और अड़तालीस वर्ष पर्य्यन्त आचार्य्य की शिक्षा को ग्रहण करते हैं, वे ही विद्वान्, बुद्धिमान्, धार्मिक, बहुत काल पर्य्यन्त जीवने और संसार के कल्याण करनेवाले होते हैं॥२॥

पुनर्मातापितृशिक्षाविषयमाह॥

फिर माता-पिता से शिक्षा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पुनर्ये चक्रुः पितरा युवाना सना यूपेव जरणा शयाना।

ते वाजो विभ्वाँ ऋभुरिन्द्रवन्तो मधुप्सरसो नोऽवन्तु यज्ञम्॥३॥

पुनः। ये। चक्रुः। पितरा। युवाना। सना। यूपाऽइव। जरणा। शयाना। ते। वाजः। विऽभ्वा। ऋभुः। इन्द्रऽवन्तः। मधुऽप्सरसः। नः। अवन्तु। यज्ञम्॥३॥

पदार्थः-(**पुनः**) (**ये**) (**चक्रुः**) कुर्य्युः (**पितरा**) पितरौ (**युवाना**) प्राप्तयौवनौ (**सना**) संसेविनौ (**यूपेव**) स्तम्भ इव दृढौ (**जरणा**) जरां प्राप्तौ (**शयाना**) यौ शयाते तौ (**ते**) (**वाजः**) ज्ञानवान् (**विभ्वा**) विभुना ज्ञानेन जगदीश्वरेण (**ऋभुः**) विद्वान् (**इन्द्रवन्तः**) परमैश्वर्य्ययुक्ताः (**मधुप्सरसः**) मधुप्सरसस्वरूपं सुन्दरं येषान्ते (**नः**) अस्माकम् (**अवन्तु**) (**यज्ञम्**) अध्ययनाध्यापनादिकम्॥३॥

अन्वयः-ये जरणा शयाना सन्तौ सना पितरा युवाना यूपेव पुनश्चक्रुस्ते मधुप्सरस इन्द्रवन्तो भूत्वा नो यज्ञमवन्तु तत्सङ्गेन विभ्वा वाज ऋभुरहं भवेयम्॥३॥

भावार्थः-ये पितरः स्वसन्तानान् दीर्घेण ब्रह्मचर्य्येण सुशीलान् विदुषः कुर्वन्ति ते तत्सेवया पुनरपि वृद्धाः सन्तो युवान इव भवन्ति॥३॥

पदार्थः-(**ये**) जो जन (**जरणा**) बुढ़ापे को प्राप्त (**शयाना**) सोते हुए (**सना**) उत्तम प्रकार सेवा करने वाले (**पितरा**) माता-पिता को (**युवाना**) जवान (**यूपेव**) खम्भे के सदृश पुष्ट (**पुनः**) फिर (**चक्रुः**) करें (**ते**) वे (**मधुप्सरसः**) सुन्दर स्वरूप और (**इन्द्रवन्तः**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त होकर (**नः**) हम लोगों के (**यज्ञम्**) पढ़ने-पढ़ाने आदि कर्म्म की (**अवन्तु**) रक्षा करें, उस कर्म्म के संग से (**विभ्वा**) व्यापक जाने गये जगदीश्वर से (**वाजः**) ज्ञानवान् और (**ऋभुः**) विद्वान् मैं होऊँ॥३॥

भावार्थः-जो पितृजन अपने सन्तानों को अतिकाल पर्य्यन्त ब्रह्मचर्य्य से उत्तम स्वभाव और विद्यायुक्त करते हैं, वे उन सन्तानों की सेवा से फिर भी वृद्ध हुए युवावस्था वालों के सदृश होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यत्संवत्समृभवो गामरक्षन् यत्संवत्समृभवो मा अपिंशन्।

यत्संवत्समभरन् भासो अस्यास्ताभिः शमीभिरमृतत्वमाशुः॥४॥

यत्। सम्ऽवत्सम्। ऋभवः। गाम्। अरक्षन्। यत्। सम्ऽवत्सम्। ऋभवः। माः। अपिंशन्। यत्। सम्ऽवत्सम्। अभरन्। भासः। अस्याः। ताभिः। शमीभिः। अमृतत्वम्। आशुः॥४॥

पदार्थः-(**यत्**) ये (**संवत्सम्**) सङ्गतं वत्समिव (**ऋभवः**) मेधाविनः पितरः (**गाम्**) (**अरक्षन्**) रक्षन्ति (**यत्**) ये (**संवत्सम्**) एकीभूतं वात्सल्येन पालितं सन्तानम् (**ऋभवः**) (**माः**) मातृः (**अपिंशन्**) साऽवयवान् कुर्वन्ति (**यत्**) याः (**संवत्सम्**) (**अभरन्**) धरन्ति पुष्णन्ति वा (**भासः**) प्रकाशमानायाः (**अस्याः**) विद्यायाः (**ताभिः**) मातृपित्राचार्यसेवया विद्याप्राप्तिभिः (**शमीभिः**) श्रेष्ठैः कर्मभिः (**अमृतत्वम्**) मोक्षभावमुत्तममानन्दं वा (**आशुः**) प्राप्नुवन्ति॥४॥

अन्वयः-यद्य ऋभवः संवत्समिवाऽपत्यानि शिक्षन्ते गां वाचमरक्षन् यद्य ऋभवः संवत्समिव मा अपिंशन् यद्या मातरो भासोऽस्याः संवत्समभरँस्ते ताश्च ताभिः शमीभिरमृतत्वमाशुः॥४॥

भावार्थः-ये विद्वांसः पितरः स्वसन्तानान् ब्रह्मचर्य्यविद्याविनयैर्विद्याबलशुभगुणकर्माचरणान् कुर्वन्ति तेऽत्यन्तं सुखमाप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-(**यत्**) जो (**ऋभवः**) बुद्धिमान् पितृजन (**संवत्सम्**) प्राप्त बछड़े के सदृश सन्तानों को शिक्षा देते हैं (**गाम्**) वाणी की (**अरक्षन्**) रक्षा करते हैं और (**यत्**) जो (**ऋभवः**) बुद्धिमान् पितृ, आचार्य्यजन (**संवत्सम्**) एक हुए और प्रेम से पाले गये सन्तान के सदृश (**माः**) माताओं को (**अपिंशन्**) अवयवों के सहित करते हैं अर्थात् भरण-पोषण से उनके अङ्गों को पुष्ट करते और (**यत्**) जो मातृजन (**भासः**) प्रकाशमान (**अस्याः**) इस विद्या के (**संवत्सम्**) एकीभाव को प्राप्त प्रेम से पालित सन्तान का (**अभरन्**) धारण वा पोषण करते हैं, वे बुद्धिमान् पितृजन और मातृजन (**ताभिः**) उन मातृ-पितृ-आचार्य्य की सेवा और विद्या की प्राप्तियों और (**शमीभिः**) श्रेष्ठ कर्म्मों से (**अमृतत्वम्**) मोक्षभाव वा उत्तम आनन्द को (**आशुः**) प्राप्त होते हैं॥४॥

भावार्थः-जो विद्वान् पितृजन अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य्य और विद्या [तथा विनय] से विद्या, बल और उत्तम गुण और कर्मों के आचरण [से] युक्त करते हैं, वे अत्यन्त सुख को प्राप्त होते हैं॥४॥

अथ मनुष्यगुणानाह॥

अब मनुष्यगुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ज्येष्ठ आह चमसा द्वा करेति कनीयान् त्रीन् कृणवामेत्याह।

कनिष्ठ आह चतुरस्करेति त्वष्ट ऋभवस्तत्पनयद्वचो वः॥५॥१॥

ज्येष्ठः। आह। चमसा। द्वा। कर। इति। कनीयान्। त्रीन्। कृणवाम। इति। आह। कनिष्ठः। आह। चतुरः। कर। इति। त्वष्टा। ऋभवः। तत्। पनयत्। वचः। वः॥५॥

पदार्थः-(**ज्येष्ठः**) पूर्वजः (**आह**) वदति (**चमसा**) चमसौ (**द्वा**) द्वौ (**कर**) कुर्य्याः (**इति**) अनेन प्रकारेण (**कनीयान्**) कनिष्ठः (**त्रीन्**) (**कृणवाम**) कुर्य्याम (**इति**) (**आह**) (**कनिष्ठः**) (**आह**) (**चतुरः**) (**कर**) (**इति**) (**त्वष्टा**) शिक्षकः (**ऋभवः**) मेधाविनः (**तत्**) (**पनयत्**) प्रशंसेत् (**वचः**) वचनम् (**वः**) युष्माकम्॥५॥

अन्वयः-हे ऋभवो! यद्वो वचस्त्वष्टा पनयत् तत् द्वा चमसा करेति ज्येष्ठ आह। कनीयाँस्त्रीन् कृणवामेत्याह कनिष्ठश्चतुरः करेत्याह॥५॥

भावार्थः-बन्धवो विद्वांसो भूत्वा परस्परं संवदेरन् यथा ज्येष्ठ आज्ञो कुर्यात् तथा कनिष्ठो यथा कनिष्ठो ब्रूयात्तथा ज्येष्ठ आचरेत् यथात्र कनीयानिति कर्त्तृपदमेकवचनान्तं कृणवामेति बहुवचनान्ता क्रिया न सङ्गच्छत इति सम्बोधनीयं यद्वा यथा वयं परस्परं संवदेमहि तथैव युष्माभिरपि परस्परं वक्तव्यं यथा सत्यं प्रशंसितव्यं वचनं स्यात्तथैव सर्वैर्वाच्यमिति॥५॥

पदार्थः-हे **(ऋभवः)** बुद्धिमानो! जिस **(वः)** आपके **(वचः)** वचन की **(त्वष्टा)** शिक्षा देनेवाला **(पनयत्)** प्रशंसा करे **(तत्)** वह वचन **(द्वा)** दो **(चमसा)** चमसों को **(कर)** करे **(इति)** इस प्रकार से **(ज्येष्ठः)** प्रथम उत्पन्न हुआ **(आह)** कहता है **(कनीयान्)** पीछे उत्पन्न हुआ छोटा **(त्रीन्)** तीन को **(कृणवाम)** करे **(इति)** इस प्रकार से **(आह)** कहता है और **(कनिष्ठः)** कनिष्ठ अर्थात् छोटा **(चतुरः)** चार को **(कर)** करे **(इति)** इस प्रकार से **(आह)** कहता है॥५॥

भावार्थः-बन्धुजन विद्वान् होकर परस्पर वार्त्तालाप करें कि जैसे बड़ा आज्ञा करे, वैसे छोटा और जैसे छोटा कहे वैसा ही ज्येष्ठ आचरण करे। जैसे इस मन्त्र में **(कनीयान्)** यह कर्त्तृ पद एकवचनान्त और **(कृणवाम)** यह बहुवचनान्त क्रिया नहीं संगत होते हैं, ऐसा जनाना चाहिये अर्थात् अहं कर्त्ता की योग्यता में वयं कर्त्ता के पक्ष से योजना कर समझना चाहिये अथवा जैसे हम लोग परस्पर वार्त्तालाप करें, वैसे ही आप लोगों को भी परस्पर वार्त्तालाप करना चाहिये और जिस प्रकार सत्य और प्रशंसित वचन होवे, उसी प्रकार सब को बोलना चाहिये॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सत्यमूचुर्नर एवा हि चक्रुरनु स्वधामृभवो जग्मुरेताम्।

विभ्राजमानांश्चमसाँ अहेवावेनत् त्वष्टा चतुरो ददृश्वान्॥६॥

सत्यम्। ऊचुः। नरः। एव। हि। चक्रुः। अनु। स्वधाम्। ऋभवः। जग्मुः। एताम्। विऽभ्राजमानान्। चमसान्। अहाऽइव। अवेनत्। त्वष्टा। चतुरः। ददृश्वान्॥६॥

पदार्थः-**(सत्यम्)** यथार्थम् **(ऊचुः)** वदन्तु **(नरः)** मनुष्याः **(एवा)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(हि)** यतः **(चक्रुः)** कुर्य्युः **(अनु)** **(स्वधाम्)** अन्नम् **(ऋभवः)** मेधाविनः **(जग्मुः)** प्राप्नुवन्ति **(एताम्)** एतत् **(विभ्राजमानान्)** प्रकाशमानान् **(चमसान्)** मेघान्। **चमस इति मेघनामसु पठितम्।** (निघं०१.१०) **(अहेव)** अहानीव **(अवेनत्)** कामयते **(त्वष्टा)** ज्ञाता **(चतुरः)** **(ददृश्वान्)** दृष्टवान्॥६॥

अन्वयः-यथर्भव एतां स्वधां जग्मुराप्ताचरणमनुचक्रुस्तथैव नरः सत्यमूचुर्यो हि त्वष्टा चतुरो ददृश्वान् भवेत् स विभ्राजमानांश्चमसानहेव चतुरः पदार्थानवेनत्॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैरिहाप्तानुकरणं कृत्वा यथाक्रमेण वर्त्तित्वा दिनानि प्रावृड्तुं प्राप्नुवन्ति तथैव क्रमेण कर्मोपासनाज्ञानानि सत्यभाषणादीनि वर्द्धयित्वा धर्मार्थकाममोक्षान् साधयन्तीति विज्ञातव्यम्॥६॥

पदार्थः-जैसे (**ऋभवः**) बुद्धिमान् जन (**एताम्**) इस (**स्वधाम्**) अन्न को (**जग्मुः**) प्राप्त होते हैं और यथार्थ वक्ताओं के आचरण को (**अनु, चक्रुः**) करें वैसे (**एवा**) ही (**नरः**) मनुष्य (**सत्यम्**) यथार्थ (**ऊचुः**) कहें और जो (**हि**) जिससे (**त्वष्टा**) जानने वाला (**चतुरः**) चार को (**ददृश्वान्**) देखने वाला होवे वह (**विभ्राजमानान्**) प्रकाशित हुए (**चमसान्**) मेघों को (**अहेव**) दिनों के सदृश चार पदार्थों की (**अवेनत्**) कामना करता है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि इस संसार में यथार्थवक्ताओं का अनुकरण करके जैसे क्रम से वर्त्ताव कर दिन वर्षा ऋतु को प्राप्त होते हैं, वैसे ही क्रम से कर्म, उपासना और ज्ञान, सत्यभाषण आदि को बढ़ा के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सिद्ध कराते हैं, यह जानें॥६॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

द्वाद॑श॒ द्यून् यदगो॑ह्यस्याति॒थ्ये रण॑न्नृभव॑: स॒सन्त॑:।

सु॒क्षेत्रा॑कृण्व॒न्नन॑यन्त॒ सिन्धू॒न् धन्वाति॑ष्ठ॒न्नोष॑धीर्नि॒म्नमाप॑:॥७॥

द्वाद॑श। द्यून्। यत्। अगो॑ह्यस्य। आ॒ति॒थ्ये। रण॑न्। ऋ॒भव॑:। स॒सन्त॑:। सु॒ऽक्षेत्रा॑। अ॒कृ॒ण्व॒न्। अन॑यन्त। सिन्धू॑न्। धन्व॑। आ। अ॒ति॒ष्ठ॒न्। ओष॑धी:। नि॒म्नम्। आप॑:॥७॥

पदार्थः-(**द्वादश**) (**द्यून्**) दिनानि (**यत्**) ये (**अगोह्यस्य**) असंवृतस्य (**आतिथ्ये**) अतिथीनां सत्कारम् (**रणन्**) उपदिशन्तु (**ऋभवः**) मेधाविनः (**ससन्तः**) शयाना उत्थाय (**सुक्षेत्रा**) शोभनानि क्षेत्राणि (**अकृण्वन्**) कुर्वन्ति (**अनयन्त**) नयन्ति (**सिन्धून्**) नदीन् समुद्रान् वा (**धन्व**) अन्तरिक्षम् (**आ**) (**अतिष्ठन्**) तिष्ठन्ति (**ओषधीः**) (**निम्नम्**) (**आपः**) जलानि॥७॥

अन्वयः-यद्ये ससन्त ऋभवो यथाऽऽपः सिन्धून् धन्वौषधीर्निम्नमातिष्ठँस्तथाऽगोह्यस्याऽऽतिथ्ये द्वादश द्यून् रणन्त्सुक्षेत्राऽकृण्वन्त्सुखान्यनयन्त ते मङ्गलप्रदाः सन्ति॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। विद्वांसो यथा शयानान् प्रबोद्धय जागरयन्ति तथैवाऽविद्यान्त्संशिक्ष्य विदुषः कृत्वाऽऽनन्दयन्तु॥७॥

पदार्थः-(**यत्**) जो (**ससन्तः**) सोते हुए उठकर (**ऋभवः**) बुद्धिमान् जन जिस प्रकार से (**आपः**) जलों और (**सिन्धून्**) नदी वा समुद्रों (**धन्व**) तथा अन्तरिक्ष और (**ओषधीः**) ओषधियों के (**निम्नम्**) नीचे (**आ, अतिष्ठन्**) स्थित होते हैं, वैसे (**अगोह्यस्य**) अगुप्त के (**आतिथ्ये**) आतिथ्य में [अर्थात्] अतिथिसम्बन्धी सत्कार में (**द्वादश**) बारह (**द्यून्**) दिन (**रणन्**) उपदेश देवें तथा (**सुक्षेत्रा**) सुन्दर स्थानों

को **(अकृण्वन्)** करते और सुखों को **(अनयन्त)** प्राप्त होते हैं, वे मङ्गल देने वाले हैं॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। विद्वान् जन जैसे सोते हुओं को चेताय के जगाते हैं, वैसे ही अविद्वानों को उत्तम शिक्षा दे विद्वान् करके आनन्द देवें॥७॥

पुनर्मनुष्यगुणानाह॥

फिर मनुष्यगुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

रथं ये चक्रुः सुवृतं नरेष्ठां ये धेनुं विश्वजुवं विश्वरूपाम्।

त आ तक्षन्त्वृभवो रयिं नः स्ववसः स्वपसः सुहस्ताः॥८॥

रथम्। ये। चक्रुः। सुऽवृतम्। नरेऽस्थाम्। ये। धेनुम्। विश्वऽजुवम्। विश्वऽरूपाम्। ते। आ। तक्षन्तु। ऋभवः। रयिम्। नः। सुऽअवसः। सुऽअपसः। सुऽहस्ताः॥८॥

पदार्थः-**(रथम्)** विमानादियानम् **(ये)** **(चक्रुः)** कुर्वन्ति **(सुवृतम्)** सुष्ठु रचितं साङ्गोपाङ्गसहितम् **(नरेष्ठाम्)** नरास्तिष्ठन्ति यस्मिंस्तम् **(ये)** **(धेनुम्)** वाचम् **(विश्वजुवम्)** समग्रवेगाम् **(विश्वरूपाम्)** समग्रशास्त्रस्वरूपविदम् **(ते)** **(आ)** **(तक्षन्तु)** रचयन्तु **(ऋभवः)** मेधाविनः **(रयिम्)** धनम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(स्ववसः)** शोभनमवी रक्षणादिकं कर्म येषान्ते **(स्वपसः)** सुष्ठु धर्म्याणि कर्म्माणि येषान्ते **(सुहस्ताः)** शोभनाः कर्मसाधका हस्ता येषान्ते॥८॥

अन्वयः-य ऋभवः सुवृतं नरेष्ठां रथं चक्रुर्ये विश्वरूपां विश्वजुवं धेनुं प्राप्नुवन्ति ते स्ववसः स्वपसः सुहस्ता नो रयिमा तक्षन्तु॥८॥

भावार्थः-ये मनुष्याः प्रथमतो विद्यां पुनर्हस्तक्रियां गृहीत्वा श्रेष्ठाचाराः सन्त आत्मीयं बाह्यञ्च विज्ञानं सुलक्षीकृत्य शिल्पकार्य्याणि कुर्वन्ति ते धीमन्तः सन्त ऐश्वर्य्यं प्राप्नुवन्ति॥८॥

पदार्थः-**(ये)** जो **(ऋभवः)** बुद्धिमान् जन **(सुवृतम्)** उत्तम रचित और अङ्गों वा उपाङ्गों के सहित **(नरेष्ठाम्)** मनुष्य जिसमें स्थित होते हैं उस **(रथम्)** विमान आदि वाहन को **(चक्रुः)** करते हैं और **(ये)** जो **(विश्वरूपाम्)** सम्पूर्ण शास्त्रज्ञान वाली और **(विश्वजुवम्)** सम्पूर्ण वेगों से युक्त **(धेनुम्)** वाणी को प्राप्त होते हैं **(ते)** वे **(स्ववसः)** सुन्दर रक्षण आदि कर्म से और **(स्वपसः)** उत्तम प्रकार धर्मयुक्त कर्मों से युक्त **(सुहस्ताः)** सुन्दर कर्मसाधक हाथों वाले **(नः)** हम लोगों के लिये **(रयिम्)** धन को **(आ, तक्षन्तु)** रखें॥८॥

भावार्थः-जो मनुष्य पहिले विद्या को और फिर हस्तक्रिया को ग्रहण करके उत्तम आचरण वाले होते हुए आत्मसम्बन्धी और बाहिर के विशेष ज्ञान को उत्तम प्रकार जांच के शिल्पविद्यासम्बन्धी कार्य्यों को करते हैं, वे बुद्धिमान् होते हुए ऐश्वर्य्य को प्राप्त होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अपो ह्येषामजुषन्त देवा अभि क्रत्वा मनसा दीध्यानाः।
वाजो देवानामभवत् सुकर्मेन्द्रस्य ऋभुक्षा वरुणस्य विभ्वा॥९॥

अपः। हि। एषाम्। अजुषन्त। देवाः। अभि। क्रत्वा। मनसा। दीध्यानाः। वाजः। देवानाम्। अभवत्। सुऽकर्मा। इन्द्रस्य। ऋभुक्षाः। वरुणस्य। विऽभ्वा॥९॥

पदार्थः-**(अपः)** विमानादिनिर्माणसाधकं कर्म **(हि)** यतः **(एषाम्)** **(अजुषन्त)** जुषन्ते **(देवाः)** विद्वांसः **(अभि)** **(क्रत्वा)** प्रज्ञया **(मनसा)** विज्ञानेन **(दीध्यानाः)** देदीप्यमानाः **(वाजः)** अन्नादि **(देवानाम्)** विदुषाम् **(अभवत्)** भवति **(सुकर्मा)** शोभनानि कर्माणि यस्य सः **(इन्द्रस्य)** विद्युदादेः **(ऋभुक्षाः)** महान्। **ऋभुक्षा इति महन्नामसु पठितम्।** (निघं०३.३) **(वरुणस्य)** जलादेः **(विभ्वा)** व्याप्त्या॥९॥

अन्वयः-ये क्रत्वा मनसा दीध्याना देवा ह्येषां पदार्थानां कार्य्यसिद्ध्यर्थमपोऽभ्यजुषन्त सुकर्मा देवानामिन्द्रस्य वरुणस्य विभ्वा वाजो देवानां मध्य ऋभुक्षा अभवत् ते स च श्रीमन्तो जायन्ते॥९॥

भावार्थः-ये मनुष्या इह सृष्टिस्थानां पदार्थानां सुपरीक्षया संयोगविभागाभ्यां श्रेष्ठान् पदार्थान् कर्माणि च निष्पादयन्ति ते विद्वद्वरा धनाढ्यतमाश्च जायन्ते॥९॥

पदार्थः-जो **(क्रत्वा)** बुद्धि और **(मनसा)** विज्ञान से **(दीध्यानाः)** प्रकाशमान **(देवाः)** विद्वान् जन **(हि)** जिस कारण **(एषाम्)** इन पदार्थों को कार्य्यसिद्धि के लिये **(अपः)** विमान आदि के बनाने में साधक कर्म का **(अभि, अजुषन्त)** सब प्रकार सेवन करते हैं और **(सुकर्मा)** उत्तम कर्म करने वाला **(देवानाम्)** विद्वानों **(इन्द्रस्य)** बिजुली आदि और **(वरुणस्य)** जल आदि की **(विभ्वा)** व्याप्ति से **(वाजः)** अन्न, आदि विद्वानों के मध्य में **(ऋभुक्षाः)** बड़ा **(अभवत्)** होता है, वे और वह श्रीमान् होते हैं॥९॥

भावार्थः-जो मनुष्य इस संसार में सृष्टिस्थ पदार्थों की उत्तम परीक्षा से संयोग और विभाग के द्वारा श्रेष्ठ पदार्थ और कार्य्यों को सिद्ध करते हैं, वे विद्वानों में श्रेष्ठ और अत्यन्त धनी होते हैं॥९॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वद्विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ये हरी मेधयोक्था मदन्त इन्द्राय चक्रुः सुयुजा ये अश्वा।
ते रायस्पोषं द्रविणान्यस्मे धत्त ऋभवः क्षेमयन्तो न मित्रम्॥१०॥

ये। हरी इति। मेधया। उक्था। मदन्तः। इन्द्राय। चक्रुः। सुऽयुजा। ये। अश्वा। ते। रायः। पोषम्। द्रविणानि। अस्मे इति। धत्त। ऋभवः। क्षेमऽयन्तः। न। मित्रम्॥१०॥

पदार्थः-(**ये**) (**हरी**) तुरङ्गाविवाग्निजले (**मेधया**) प्रज्ञया (**उक्था**) प्रशंसनैः (**मदन्तः**) आनन्दन्तः (**इन्द्राय**) ऐश्वर्य्याय (**चक्रुः**) कुर्वन्ति (**सुयुजा**) यो सुष्ठु युङ्क्तस्तौ (**ये**) (**अश्वा**) आशुगामिनौ (**ते**) (**रायः**) धनादेः (**पोषम्**) पुष्टिम् (**द्रविणानि**) द्रव्याणि यशांसि वा (**अस्मे**) अस्मासु (**धत्त**) धरत (**ऋभवः**) मेधाविनः (**क्षेमयन्तः**) क्षेमं रक्षणं कुर्वन्तः (**न**) इव (**मित्रम्**) सुहृदम्॥१०॥

अन्वयः-हे ऋभवो! ये मेधयोक्था मदन्त इन्द्राय हरी अश्वा सुयुजा चक्रुः ये चैतद्विद्यां जानीयुस्ते यूयं मित्रं क्षेमयन्तो नाऽस्मे रायस्पोषं द्रविणानि धत्त॥१०॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! भवन्तो सृष्टिक्रमेण पदार्थविद्याः प्राप्याऽन्यान् बोधयित्वा स्वसदृशान् कृत्वा धनाढ्यान् कुर्वन्तु॥१०॥

पदार्थः-हे (**ऋभवः**) बुद्धिमानो! (**ये**) जो (**मेधया**) बुद्धि (**उक्था**) और प्रशंसाओं से (**मदन्तः**) आनन्द करते हुए (**इन्द्राय**) ऐश्वर्य्य के लिये (**हरी**) घोड़ों के सदृश अग्नि और जल को (**अश्वा**) शीघ्र चलने वाले और (**सुयुजा**) उत्तम प्रकार जुड़े हुए (**चक्रुः**) करते हैं और (**ये**) जो इस विद्या को जानें (**ते**) वे आप लोग (**मित्रम्**) मित्र की (**क्षेमयन्तः**) रक्षा करते हुए के (**न**) सदृश (**अस्मे**) हम लोगों के निमित्त (**रायः, पोषम्**) धन आदि की पुष्टि को (**द्रविणानि**) तथा द्रव्यों वा यशों को (**धत्त**) धारण करो॥१०॥

भावार्थः-हे विद्वानो! आप लोग सृष्टि के क्रम से पदार्थविद्याओं को प्राप्त होकर अन्य जनों को बोध कराय के अपने सदृश करके धनाढ्य करो॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इ॒दाह्नः॑ पी॒तिमु॒त वो॒ मदं॒ धुर्न ऋ॒ते श्रा॒न्तस्य॑ स॒ख्याय॑ दे॒वाः।

ते नू॒नम॒स्मे ऋ॑भवो॒ वसू॑नि तृ॒तीये॑ अ॒स्मिन्त्सव॑ने दधात॥११॥२॥

इ॒दा। अह्नः॑। पी॒तिम्। उ॒त। व॒ः। मद॑म्। धुः॒। न। ऋ॒ते। श्रा॒न्तस्य॑। स॒ख्याय॑। दे॒वाः। ते। नू॒नम्। अ॒स्मे। इति॑। ऋ॒भ॒वः॒। वसू॑नि। तृ॒तीये॑। अ॒स्मिन्। सव॑ने। द॒धा॒त॒॥११॥

पदार्थः-(**इदा**) इदानीम् (**अह्नः**) दिनस्य मध्ये (**पीतिम्**) पानम् (**उत**) अपि (**वः**) युष्माकम् (**मदम्**) आनन्दम् (**धुः**) दध्युः (**न**) (**ऋते**) विना (**श्रान्तस्य**) तपसा हतकिल्विषस्य (**सख्याय**) मित्रभावाय (**देवाः**) विद्वांसः (**ते**) (**नूनम्**) निश्चितम् (**अस्मे**) अस्मासु (**ऋभवः**) मेधाविनः (**वसूनि**) धनानि (**तृतीये**) अन्त्ये (**अस्मिन्**) (**सवने**) सत्कर्मणि (**दधात**)॥११॥

अन्वयः-हे ऋभवो! ये देवा वो युष्माकमह्नः पीतिमुत वो मदं धुस्त इदा श्रान्तस्य सेवया ऋते सख्याय न प्रभवन्ति तेऽस्मिँस्तृतीये सवनेऽस्मे नूनं दधात॥११॥

भावार्थः-ये वर्त्तमाने समये यथार्थं पुरुषार्थं कुर्वन्ति ते धनपतयो भवन्ति ये च विद्वत्सङ्गं न कुर्वन्ति ते धनहीनाः सन्तो दारिद्र्यं भजन्ते॥११॥

अत्र विद्वन्मातापितृमनुष्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति त्रयस्त्रिंशत्तमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(ऋभवः)** बुद्धिमानो! जो **(देवाः)** विद्वान् जन **(वः)** आप लोगों में से **(अह्नः)** दिन के मध्य में **(पीतिम्)** पान को **(उत)** और आप लोगों के **(मदम्)** आनन्द को **(धुः)** धारण करें **(ते)** वे **(इदा)** इस समय **(श्रान्तस्य)** तप से नष्ट हुआ है पाप जिसका उसकी सेवा के **(ऋते)** विना **(सख्याय)** मित्रपने के लिये **(न)** नहीं समर्थ होते हैं वे **(अस्मिन्)** इस **(तृतीये)** अन्त्य **(सवने)** श्रेष्ठ कर्म के निमित्त **(अस्मे)** हम लोगों में **(वसूनि)** धनों को **(नूनम्)** निश्चय युक्त **(दधात)** धारण करो॥११॥

भावार्थः-जो जन वर्त्तमान समय में यथार्थ पुरुषार्थ को करते हैं, वे धनपति होते हैं और जो विद्वानों के सङ्ग को नहीं करते हैं, वे धन से रहित हुए दारिद्र्य को भजते हैं॥११॥

इस सूक्त में विद्वान्, माता, पिता और मनुष्यों के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ संगति है, यह जानना चाहिये॥

यह तेतीसवां सूक्त और द्वितीय वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्य चतुस्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। ऋभवो देवताः। १ विराट् त्रिष्टुप्। २ भुरिक् त्रिष्टुप्। ४-९ निचृत् त्रिष्टुप्। १० त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३, ११, स्वराट् पङ्क्तिः। ५ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ मेधाविगुणानाह॥

अब ग्यारह ऋचा वाले चौतीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मेधावी बुद्धिमान् के गुणों को कहते हैं॥

ऋभुर्विभ्वा वाज इन्द्रो नो अच्छेमं यज्ञं रत्नधेयोप यात।
इदा हि वो धिषणा देव्यह्नामधात् पीतिं सं मदा अग्मता वः॥१॥

ऋभुः। विऽभ्वा। वाजः। इन्द्रः। नः। अच्छ। इमम्। यज्ञम्। रत्नऽधेया। उप। यात। इदा। हि। वः। धिषणा। देवी। अह्नाम्। अधात्। पीतिम्। सम्। मदाः। अग्मत। वः॥१॥

पदार्थः-(ऋभुः) मेधावी **(विभ्वा)** विभुनेश्वरेण **(वाजः)** विज्ञानवान् **(इन्द्रः)** ऐश्वर्य्ययुक्तः **(नः)** अस्माकम् **(अच्छ) (इमम्) (यज्ञम्)** विद्याप्रज्ञावर्द्धकम् **(रत्नधेया)** रत्नानि धनानि धीयन्ते यया तस्यै **(उत, यात)** प्राप्नुत **(इदा)** इदानीम् **(हि) (वः)** युष्माकम् **(धिषणा)** प्रज्ञा **(देवी)** दिव्यगुणा **(अह्नाम्) (अधात्)** दधाति **(पीतिम्)** पानम् **(सम्) (मदाः)** आनन्दाः **(अग्मत)** प्राप्नुत। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(वः)** युष्मान्॥१॥

अन्वयः-यथा मदा वः समग्मत यथा हि देवी धिषणाह्नां पीतिमधाद् विद्वांसो यूयं रत्नधेयेमं यज्ञमुप यात तथेदा वाज इन्द्र ऋभुर्विभ्वा नो वोऽच्छायातु॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा युष्मानानन्दाः प्राप्नुयुस्तथैव कर्मप्रज्ञावर्द्धिं च कुरुत विभोरीश्वरस्योपासनां च विदधत॥१॥

पदार्थः-जैसे **(मदाः)** आनन्द **(वः)** आप लोगों के **(सम्, अग्मत)** सम्यक् प्राप्त होवें, जैसे **(हि)** निश्चित **(देवी)** श्रेष्ठ गुण वाली **(धिषणा)** बुद्धि **(अह्नाम्)** दिनों के बीच **(पीतिम्)** पान को **(अधात्)** धारण करती है और हे विद्वान् जनो! आप **(रत्नधेया)** धनों को धारण करने वाली क्रिया के लिये **(इमम्)** इस **(यज्ञम्)** विद्या और बुद्धि के बढ़ाने वाले यज्ञ को **(उप, यात)** प्राप्त होवें, वैसे **(इदा)** इस समय **(वाजः)** विज्ञानवान् और **(इन्द्रः)** ऐश्वर्य्य से युक्त **(ऋभुः)** बुद्धिमान् पुरुष **(विभ्वा)** ईश्वर की सहायता से **(नः)** हम लोगों को और **(वः)** तुम लोगों को **(अच्छ)** उत्तम प्रकार प्राप्त हो॥१॥

भावार्थः-[इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है।] हे मनुष्यो! जैसे आप लोगों को आनन्द प्राप्त होवे, वैसे ही कर्म्म और बुद्धि की वृद्धि को करो और व्यापक ईश्वर की उपासना भी करो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विदानासो जन्मनो वाजरत्ना उत ऋतुभिर्ऋभवो मादयध्वम्।
सं वो मदा अग्मत सं पुरंधिः सुवीराम॒स्मे रयिमेरयध्वम्॥ २॥

विदानासः। जन्मनः। वाजऽरत्नाः। उत। ऋतुऽभिः। ऋभवः। मादयध्वम्। सम्। वः। मदाः। अग्मत। सम्। पुरम्ऽधिः। सुऽवीराम्। अस्मे इति। रयिम्। आ। ईरयध्वम्॥ २॥

पदार्थः-(**विदानासः**) ज्ञानवन्तो विद्याग्रहणाय कृतप्रतिज्ञाः (**जन्मनः**) (**वाजरत्नाः**) विज्ञानादीनि रत्नादीनि येषान्ते (**उत**) अपि (**ऋतुभिः**) मेधाविभिः सह (**ऋभवः**) मेधाविनः (**मादयध्वम्**) आनन्दयत (**सम्**) (**वः**) युष्मान् (**मदाः**) आनन्दाः (**अग्मत**) प्राप्नुवन्तु (**सम्**) (**पुरन्धिः**) पुरां धारको राज्यभावः (**सुवीराम्**) शोभना वीरा यस्यां सेनायां ताम् (**अस्मे**) अस्मभ्यम् (**रयिम्**) श्रियम् (**आ**) समन्तात् (**ईरयध्वम्**) प्रापयतम्॥ २॥

अन्वयः-हे वाजरत्ना ऋभवो! यूयं जन्मनो विदानासस्सन्त ऋभुभिः सह मादयध्वं यतो वो मदाः समग्मतोत पुरन्धिः प्राप्नोतु। अस्मे सुवीरां रयिं च समेरयध्वम्॥ २॥

भावार्थः-ये द्वितीये विद्याजन्मनि प्राप्तविद्यायौवना भवन्ति ते विद्वांसो भूत्वा विद्वत्सु मैत्रीमाचरन्तोऽविदुषां कल्याणाय प्रयतन्ते॥ २॥

पदार्थः-हे (**वाजरत्नाः**) विज्ञान आदि रत्नों से युक्त (**ऋभवः**) बुद्धिमानो! आप लोग (**जन्मनः**) जन्म से (**विदानासः**) ज्ञानवान् और विद्या ग्रहण के लिये प्रतिज्ञा करनेवाले हुए (**ऋतुभिः**) बुद्धिमानों के साथ (**मादयध्वम्**) आनन्द कराओ जिससे (**वः**) आप लोगों को (**मदाः**) आनन्द (**सम्**) उत्तम प्रकार (**अग्मत**) प्राप्त हों (**उत**) और (**पुरन्धिः**) नगरों का धारण करनेवाला राज्य प्राप्त हो तथा (**अस्मे**) हम लोगों के लिये (**सुवीराम्**) सुन्दर वीरों से युक्त सेना और (**रयिम्**) लक्ष्मी को (**सम्, आ, ईरयध्वम्**) सब प्रकार से प्राप्त कराओ॥ २॥

भावार्थः-जो दूसरे विद्यारूप जन्म के होने पर प्राप्त विद्यारूप यौवनावस्थायुक्त होते हैं, वे विद्वान् होकर विद्वानों में मित्रता करते हैं और अविद्वानों के कल्याण के लिये प्रयत्न करते हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयं वो यज्ञ ऋभवोऽकारि यमा मनुष्वत् प्रदिवो दधिध्वे।
प्र वोऽच्छा जुजुषाणासो अस्थुरभूत विश्वे अग्रियोत वाजाः॥ ३॥

अयम्। वः। यज्ञः। ऋभवः। अकारि। यम्। आ। मनुष्वत्। प्रऽदिवः। दधिध्वे। प्र। वः। अच्छ। जुजुषाणासः। अस्थुः। अभूत। विश्वे। अग्रियाः। उत। वाजाः॥ ३॥

पदार्थः-(अयम्) (वः) युष्माकम् **(यज्ञः)** अध्यापनोपदेशाख्यः **(ऋभवः) (अकारि)** क्रियते **(यम्) (आ) (मनुष्वत्)** मननशीलविद्वद्वत् **(प्रदिवः)** प्रकर्षेण विद्यादिसद्गुणान् कामयमानान् **(दधिध्वे)** धरत **(प्र) (वः)** युष्मान् **(अच्छा)** अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(जुजुषाणासः)** भृशं सेवमानाः **(अस्थुः)** तिष्ठन्तु **(अभूत)** भवत **(विश्वे)** सर्वे **(अग्रिया)** अग्रे भवाः **(उत)** अपि **(वाजाः)** सत्कर्मसु वेगाः॥३॥

अन्वयः-हे ऋभवो! विद्वद्भिरयं वो यज्ञोऽकारि यं मनुष्वद् यूयं दधिध्वे। ये प्रदिवो वोऽच्छा जुजुषाणासः प्रास्थुरुतापि विश्व अग्रिया वाजा ये भवेयुस्तान् यूयं प्राप्ता अभूत॥३॥

भावार्थः-हे धीमन्तो विद्यार्थिनो! ये युष्मभ्यं विद्यां प्रयच्छेयुस्तान्निष्कपटेन प्रीत्या सेवध्वं जितेन्द्रिया भूत्वा यथार्थविद्यां प्राप्नुत॥३॥

पदार्थः-हे **(ऋभवः)** बुद्धिमानो! विद्वानों से जो **(अयम्)** यह **(वः)** आप लोगों का **(यज्ञः)** पढ़ाना और उपदेश करना रूप यज्ञ **(अकारि)** किया जाता है **(यम्)** जिसको **(मनुष्वत्)** विचार करने वाले विद्वानों के सदृश आप लोग **(दधिध्वे)** धारण करो और जो **(प्रदिवः)** अतिशय विद्या आदि उत्तम गुणों की कामना करते हुए **(वः)** आप लोगों की **(अच्छा)** उत्तम प्रकार **(आ, जुजुषाणासः)** अत्यन्त सेवा करते हुए **(प्र, अस्थुः)** उत्तम स्थित हूजिये **(उत)** और **(विश्वे)** सम्पूर्ण **(अग्रिया)** प्रथम उत्पन्न हुए **(वाजाः)** श्रेष्ठ कर्म्मों में वेग जो होवें, उनको आप लोग प्राप्त **(अभूत)** हूजिये॥३॥

भावार्थः-हे बुद्धिमान् विद्यार्थी जनो! जो आप लोगों के लिये विद्या देवें, उनकी कपटरहित प्रीति से सेवा करो और जितेन्द्रिय होकर यथार्थ विद्या को प्राप्त होओ॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभूदु वो विधते रत्नधेयमिदा नरो दाशुषे मर्त्याय।

पिबत वाजा ऋभवो ददे वो महि तृतीयं सवनं मदाय॥४॥

अभूत्। ऊम् इति। वः। विधते। रत्नऽधेयम्। इदा। नरः। दाशुषे। मर्त्याय। पिबत। वाजाः। ऋभवः। ददे। वः। महि। तृतीयम्। सवनम्। मदाय॥४॥

पदार्थः-(अभूत्) भवेत् **(उ)** वितर्के **(वः)** युष्मभ्यम् **(विधते)** विद्यासुशिक्षाविधानं कुर्वतेऽध्यापकोपदेशकाय वा **(रत्नधेयम्)** रत्नानि धीयन्ते यस्मिँस्तत् **(इदा) (नरः)** नेतारः **(दाशुषे)** विद्यादात्रे **(मर्त्याय)** मनुष्याय **(पिबत) (वाजाः)** विज्ञानवन्तः **(ऋभवः)** प्राज्ञाः **(ददे)** दद्याम् **(वः)** युष्मभ्यम् **(महि)** महत् **(तृतीयम्)** त्रयाणां पूरकम् **(सवनम्)** सुखैश्वर्य्यम् **(मदाय)** आनन्दाय॥४॥

अन्वयः-हे वाजा नर ऋभवो! वो विधते दाशुषे मर्त्याय रत्नधेयमिदाभूदु वो युष्मभ्यं यन्मदाय महि तृतीयं सवनमहं ददे तद्यूयं पिबत युष्मभ्यं विद्यामहमाददे॥४॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! येषां सकाशाद्विद्या भवन्तो गृह्णीयुस्तेभ्यो रत्नानि ददतु। यत उभयत्र विद्यैश्वर्य्यं वर्द्धेत॥४॥

पदार्थ:-हे **(वाजाः)** बुद्धिमान् **(नरः)** सत्कर्म्मों में अग्रगामी और **(ऋभवः)** विज्ञानवान् जनो! **(वः)** आप लोगों के वा **(विधते)** विद्या और उत्तम शिक्षा का ग्रहण करते हुए अध्यापक वा उपदेशक जन के तथा **(दाशुषे)** विद्या के देने वाले **(मर्त्याय)** मनुष्य के लिये **(रत्नधेयम्)** रत्नों का पात्र **(इदा)** इस समय **(अभूत्)** होवे **(उ)** और **(वः)** आप लोगों के लिये जो **(मदाय)** आनन्द के अर्थ **(महि)** बड़े **(तृतीयम्)** तीन संख्या को पूर्ण करने वाले **(सवनम्)** सुख और ऐश्वर्य को मैं **(ददे)** देता हूँ, उसका आप लोग **(पिबत)** पान करो और आप लोगों से मैं विद्याग्रहण करता हूँ॥४॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जिन लोगों के समीप से विद्या आप लोग ग्रहण करें, उनके लिये रत्न दो, जिससे दोनों जगह विद्या और ऐश्वर्य्य बढ़े॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ वाजा यातोप न ऋभुक्षा महो नरो द्रविणसो गृणानाः।

आ वः पीतयोऽभिपित्वे अह्नामिमा अस्तं नवस्वइव ग्मन्॥५॥३॥

आ। वाजाः। यात। उप। नः। ऋभुक्षाः। महः। नरः। द्रविणसः। गृणानाः। आ। वः। पीतयः। अभिऽपित्वे। अह्नाम्। इमाः। अस्तम्। नवस्वः‍ऽइव। ग्मन्॥५॥

पदार्थ:-**(आ)** समन्तात् **(वाजाः)** प्राप्तब्रह्मचर्य्याः **(यात)** प्राप्नुत **(उप)** **(नः)** अस्मान् **(ऋभुक्षाः)** सद्गुणैर्महान्तः **(महः)** पूजनीयाः **(नरः)** नेतारः **(द्रविणसः)** यशोधनस्य **(गृणानाः)** स्तुवन्तः **(आ)** **(वः)** युष्मान् **(पीतयः)** पानानि **(अभिपित्वे)** प्राप्तौ **(अह्नाम्)** दिनानाम् **(इमाः)** प्रत्यक्षाः **(अस्तम्)** गृहम् **(नवस्वइव)** यथा नवीनसुखः **(ग्मन्)** प्राप्नुवन्तु॥५॥

अन्वय:-हे ऋभुक्षा वाजा महो नरो! द्रविणसो गृणाना यूयं न उपायाताह्नामभिपित्व इमाः पीतयोऽस्तं नवस्वइव व आग्मन्॥५॥

भावार्थ:-सर्वैर्मनुष्यैरियमाशीर्नित्या कर्त्तव्यास्मानाप्ताविद्वांसः प्राप्नुताऽहर्निशमैश्वर्य्यप्राप्तिर्भवेद् यथा नूतना विवाहाश्रमं सेवन्ते तथैव स्त्रीपुरुषा गृहकृत्यानि सेवेरन्॥५॥

पदार्थ:-हे **(ऋभुक्षाः)** उत्तम गुणों से बड़े **(वाजाः)** ब्रह्मचर्य्य को प्राप्त **(महः)** आदर करने योग्य **(नरः)** नायक! **(द्रविणसः)** यशरूप धन की **(गृणानाः)** स्तुति प्रशंसा करते हुए आप लोग **(नः)** हम लोगों के **(उप, आ, यात)** समीप प्राप्त हूजिये और **(अह्नाम्)** दिनों की **(अभिपित्वे)** प्राप्ति होने में **(इमाः)** यह प्रत्यक्ष **(पीतयः)** जो पान हैं वह **(अस्तम्, नवस्वइव)** जैसे नवीन सुख वाला घर को प्राप्त होता है, वैसे **(वः)** आपको **(आ, ग्मन्)** प्राप्त हों॥५॥

भावार्थः-सब मनुष्यों को चाहिये कि ऐसी इच्छा नित्य करें कि हम लोगों को यथार्थवक्ता विद्वान् लोग प्राप्त होवें और दिन-रात्रि ऐश्वर्य्य की प्राप्ति होवे। जैसे नवीन विवाहाश्रम का सेवन करते हैं, वैसे ही स्त्री और पुरुष गृह के कृत्यों का सेवन करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ नपातः शवसो यातनोपेमं यज्ञं नमसा हूयमानाः।

सजोषसः सूरयो यस्य च स्थ मध्वः पात रत्नधा इन्द्रवन्तः॥६॥

आ। नपातः। शवसः। यातन। उप। इमम्। यज्ञम्। नमसा। हूयमानाः। सऽजोषसः। सूरयः। यस्य। च। स्थ। मध्वः। पात। रत्नऽधाः। इन्द्रऽवन्तः॥६॥

पदार्थः-(**आ**) (**नपातः**) न विद्यते पात् पतनं येषान्ते (**शवसः**) बलवन्तः (**यातन**) प्राप्नुत (**उप**) (**इमम्**) (**यज्ञम्**) विद्यावृद्धिकरं व्यवहारम् (**नमसा**) सत्कारेण (**हूयमानाः**) स्पर्द्धमानाः (**सजोषसः**) समानप्रीतिसेवनाः (**सूरयः**) विद्वांसः (**यस्य**) (**च**) (**स्थ**) सन्तु (**मध्वः**) मधुरगुणयुक्तस्य (**पात**) रक्षत (**रत्नधाः**) ये रत्नानि धनानि दधति ते (**इन्द्रवन्तः**) ऐश्वर्य्यवन्तः॥६॥

अन्वयः-हे हूयमानाः शवसो नपातः सजोषसो रत्नधा इन्द्रवन्तः सूरयो! यूयन्नमसेमं यज्ञमुपायातन यस्य च मध्वः प्राप्ताः स्थ तन्नित्यं पात॥६॥

भावार्थः-मनुष्यैः परस्परम्मित्रतां विधाय शरीरात्मबलं वर्द्धयित्वा विद्याधनैश्वर्य्यं प्राप्य संरक्ष्य वर्द्धयित्वाऽनेन सर्वे सुखिनः कर्त्तव्याः॥६॥

पदार्थः-हे (**हूयमानाः**) ईर्ष्या करते हुए (**शवसः**) बलयुक्त (**नपातः**) नहीं गिरना जिनके विद्यमान (**सजोषसः**) तुल्य प्रीति के सेवनकर्त्ता (**रत्नधाः**) धनों को धारण करने वाले (**इन्द्रवन्तः**) ऐश्वर्य्य से युक्त (**सूरयः**) विद्वान् जनो! आप लोग (**नमसा**) सत्कार से (**इमम्**) इस (**यज्ञम्**) विद्यावृद्धि करनेवाले यज्ञ को (**उप, आ, यातन**) प्राप्त हूजिये (**च**) और (**यस्य**) जिसके (**मध्वः**) मधुरगुणयुक्त पदार्थ को प्राप्त (**स्थ**) होओ उसकी नित्य (**पात**) रक्षा कीजिये॥६॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि परस्पर मित्रता कर शरीर और आत्मा का बल बढ़ाय, विद्याधनरूप ऐश्वर्य्य को प्राप्त हों, उसकी उत्तम प्रकार रक्षा कर और बढ़ाय के इससे सब को सुखी करें॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सजोषा इन्द्र वरुणेन सोमं सजोषाः पाहि गिर्वणो मरुद्भिः।

अग्रेपाभिर्ऋतुपाभिः सजोषा ग्नास्पत्नीभी रत्नधाभिः सजोषाः॥७॥

सऽजोषाः। इन्द्र। वरुणेन। सोमम्। सऽजोषाः। पाहि। गिर्वणः। मरुत्ऽभिः। अग्रेऽपाभिः। ऋतुऽपाभिः। सऽजोषाः। ग्नाःपत्नीभिः। रत्नऽधाभिः। सऽजोषाः॥७॥

पदार्थः-(**सजोषाः**) समानप्रीतिसेवी (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्यप्रद (**वरुणेन**) वरेण पुरुषार्थेन (**सोमम्**) ऐश्वर्य्यम् (**सजोषाः**) (**पाहि**) (**गिर्वणः**) गीर्भिः स्तुत (**मरुद्भिः**) मनुष्यैः सह (**अग्रेपाभिः**) येऽग्रे पान्ति रक्षन्ति तैः (**ऋतुपाभिः**) ये ऋतुषु पान्ति तैः (**सजोषाः**) (**ग्नास्पत्नीभिः**) या ग्नाः पतीनां स्त्रियस्ताभिः (**रत्नधाभिः**) या रत्नानि द्रव्याणि दधति ताभिः (**सजोषाः**)॥७॥

अन्वयः-हे गिर्वण इन्द्र! त्वं वरुणेन सजोषाः सोमं पाह्यग्रेपाभिर्मरुद्भिः सह सजोषाः सन्त्सोमं पाहि त्वं रत्नधाभिर्ग्नास्पत्नीभिः सह सजोषाः सोमं पाहि त्वमृतुपाभिः सह सजोषाः सोमं पाहि॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं सत्पुरुषसन्धिनैश्वर्य्यमुन्नयत ये विनाशात् पुरस्तादृतुषु च रक्षां कुर्वन्ति या च स्वपत्नी पतिव्रता भवति तैस्तया च सह समानप्रीतिसुखदुःखलाभसेविनः सन्तः सर्वेषां प्रिया भवत॥७॥

पदार्थः-हे (**गिर्वणः**) वाणियों से स्तुति किये (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्य के देने वाले! आप (**वरुणेन**) श्रेष्ठ पुरुषार्थ से (**सजोषाः**) तुल्य प्रीति के सेवने वाले (**सोमम्**) ऐश्वर्य्य की (**पाहि**) रक्षा करो और (**अग्रेपाभिः**) प्रथम रक्षा करने वाले (**मरुद्भिः**) मनुष्यों के साथ (**सजोषाः**) तुल्य प्रीति सेवने वाले हुए ऐश्वर्य्य की रक्षा करो और आप (**रत्नधाभिः**) द्रव्यों को धारण करने वाली (**ग्नास्पत्नीभिः**) पतियों की स्त्रियों के साथ (**सजोषाः**) समान सेवने वाले ऐश्वर्य्य की रक्षा करो और आप (**ऋतुपाभिः**) ऋतुओं में रक्षा करने वालों के साथ (**सजोषाः**) समान सेवन करने वाले ऐश्वर्य्य की रक्षा करो॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग श्रेष्ठ पुरुषों के मेल से ऐश्वर्य्य की उन्नति करो और जो विनाश से पहिले और ऋतुओं में रक्षा करते हैं और जो अपनी स्त्री पतिव्रता होती है, उन मनुष्यों और उस स्त्री के साथ तुल्य प्रीति, सुख-दुःख और लाभ का सेवन करते हुए सब के प्रिय होओ॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सजोषस आदित्यैर्मादयध्वं सजोषस ऋभवः पर्वतेभिः।
सजोषसो दैव्येना सवित्रा सजोषसः सिन्धुभी रत्नधेभिः॥८॥

सऽजोषसः। आदित्यैः। मादयध्वम्। सऽजोषसः। ऋभवः। पर्वतेभिः। सऽजोषसः। दैव्येन। सवित्रा। सऽजोषसः। सिन्धुऽभिः। रत्नऽधेभिः॥८॥

पदार्थः-(**सजोषसः**) समानोत्तमगुणकर्मस्वभावसेविनः (**आदित्यैः**) कृताष्टाचत्वरिंशद् ब्रह्मचर्य्यविद्यैः (**मादयध्वम्**) परस्परानानन्दयत (**सजोषसः**) (**ऋभवः**) मेधाविनः (**पर्वतेभिः**) मेघैः सह (**सजोषसः**) (**दैव्येन**) दिव्यस्वरूपेण। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**सवित्रा**) विद्युद्रूपेण (**सजोषसः**) (**सिन्धुभिः**) नदीभिः समुद्रैर्वा (**रत्नधेभिः**) ये रत्नानि द्रव्याणि दधति तैः॥८॥

अन्वयः-हे ऋभवो! यूयमादित्यैः सह सजोषसः पर्वतेभिः सह सजोषसः दैव्येना सवित्रा सह सजोषसो रत्नधेभिः सिन्धुभिः सह सजोषसः सन्तोऽस्मान् मादयध्वम्॥८॥

भावार्थः-ये मनुष्याः पूर्णविद्यैः सह सङ्गत्य पदार्थविद्यां गृह्णन्ति ते विमानादीनि निर्माय मेघमण्डले तत ऊर्ध्वं वा समुद्रेषु नदीषु च सुखेन विहर्त्तुमर्हन्ति॥८॥

पदार्थः-हे (**ऋभवः**) बुद्धिमानो! आप लोग (**आदित्यैः**) अड़तालीस वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य्य और विद्या का ग्रहण जिन्होंने किया उनके साथ (**सजोषसः**) समान उत्तम गुण, कर्म, स्वभाव के सेवन करने और (**पर्वतेभिः**) मेघों के साथ (**सजोषसः**) समान उत्तम गुण, कर्म, स्वभाव के सेवन करने और (**दैव्येन**) उत्तम स्वरूप वाले (**सवित्रा**) बिजुलीरूप के साथ (**सजोषसः**) तुल्य प्रीति सेवन करने (**रत्नधेभिः**) रत्नों को धारण करने वाले (**सिन्धुभिः**) नदी वा समुद्रों के साथ (**सजोषसः**) उत्तम गुण, कर्म, स्वभाव के सेवन करने वाले हुए आप हम लोगों को परस्पर (**मादयध्वम्**) आनन्दित कीजिये॥८॥

भावार्थः-जो मनुष्य पूर्ण विद्वानों के साथ मेल करके पदार्थविद्या का ग्रहण करते हैं, वे विमान आदि को रचके मेघमण्डल वा उससे ऊपर समुद्र और नदियों में सुख से विहार करने के योग्य होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ये अ॒श्विना॒ ये पि॒तरा॒ य ऊ॒ती धे॒नुं त॑त॒क्षुर्ऋ॒भवो॒ ये अश्वा॑।

ये अंस॑त्रा य ऋ॒धग्रोद॑सी॒ ये विभ्वो॒ नरः॑ स्वप॒त्यानि॑ च॒क्रुः॥९॥

ये। अ॒श्विना॑। ये। पि॒तरा॑। ये। ऊ॒ती। धे॒नुम्। त॒त॒क्षुः। ऋ॒भवः॑। ये। अश्वा॑। ये। अंस॑त्रा। ये। ऋ॒धक्। रोद॑सी॒ इति॑। ये। विऽभ्वः॑। नरः॑। सु॒ऽअ॒प॒त्यानि॑। च॒क्रुः॥९॥

पदार्थः-(**ये**) (**अश्विना**) सकलविद्याव्याप्तौ (**ये**) (**पितरा**) सर्वथा पालकौ (**ये**) (**ऊती**) रक्षणाद्येन (**धेनुम्**) विद्यासहितां वाचम् (**ततक्षुः**) सूक्ष्मां विस्तृताञ्च कुर्वन्ति (**ऋभवः**) मेधाविनः (**ये**) (**अश्वा**) वेगेनाऽध्वानि व्याप्तिशीलौ युग्मौ पदार्थौ (**ये**) (**अंसत्रा**) अंसान् गत्यादीन् रक्षतस्तौ (**ये**) (**ऋधक्**) यथार्थतया (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**ये**) (**विभ्वः**) सकलविद्यासु व्यापकाः (**नरः**) नेतारो मनुष्याः (**स्वपत्यानि**) सुष्ठु शिक्षयोत्तमानि चापत्यानि च तानि (**चक्रुः**) कुर्य्युः॥९॥

अन्वयः-य ऋभवोऽश्विना ये पितरा येऽश्वा येंऽसत्रा ये रोदसी ये च विभ्वो नरो य ऋभव ऊती धेनुं ततक्षुः स्वपत्यानि चर्धक् चक्रुस्ते महाभाग्यशालिनः स्युः॥९॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्यां सत्पुरुषसङ्गं वृद्धसेवनं प्राप्तरक्षां च कृत्वा स्वसन्तानाञ्छ्रेष्ठान् कुर्युस्ते विस्तीर्णसुखप्राप्ता भवेयुः॥९॥

पदार्थः-(**ये**) जो (**ऋभवः**) बुद्धिमान् (**अश्विना**) सम्पूर्ण विद्याओं में व्याप्त (**ये**) जो (**पितरा**) सब प्रकार से पालन करने वाले और (**ये**) जो (**अश्वा**) वेग से मार्ग के बीच व्याप्त होने वाले दो पदार्थ (**ये**) (**अंसत्रा**) गमन आदि के रक्षक और (**ये**) जो (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी और (**ये**) जो (**विभ्वः**) सम्पूर्ण विद्याओं में व्यापक (**नरः**) नायक मनुष्य और (**ये**) जो बुद्धिमान् (**ऊती**) रक्षण आदि से (**धेनुम्**) विद्यासहित वाणी को (**ततक्षुः**) सूक्ष्म और विस्तारयुक्त करते हैं और (**स्वपत्यानि**) उत्तम शिक्षा से सन्तानों को श्रेष्ठ (**ऋधक्**) यथार्थ भाव से (**चक्रुः**) करें, वे बड़े भाग्यशाली होवें॥९॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्या और सत्पुरुषों का संग, वृद्धों का सेवन और अपने समीप प्राप्तों की रक्षा करके अपने सन्तानों को श्रेष्ठ करें, वे विस्तारयुक्त सुख को प्राप्त होवें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ये गोमन्तं वाजवन्तं सुवीरं रयिं धत्थ वसुमन्तं पुरुक्षुम्।

ते अग्रेपा ऋभवो मन्दसाना अस्मे धत्त ये च रातिं गृणन्ति॥१०॥

ये। गोऽमन्तम्। वाजऽवन्तम्। सुऽवीरम्। रयिम्। धत्थ। वसुऽमन्तम्। पुरुऽक्षुम्। ते। अग्रेऽपाः। ऋभवः। मन्दसानाः। अस्मे इति। धत्त। ये। च। रातिम्। गृणन्ति॥१०॥

पदार्थः-(**ये**) (**गोमन्तम्**) बह्व्यो गावो विद्यन्ते यस्मिँस्तं बहुराज्ययुक्तम् (**वाजवन्तम्**) बह्वन्नविज्ञानसाधकम् (**सुवीरम्**) उत्तमवीरप्रापकम् (**रयिम्**) धनम् (**धत्थ**) (**वसुमन्तम्**) बहुविधद्रव्यसहितम् (**पुरुक्षुम्**) बहुधनधान्यसहितम् (**ते**) (**अग्रेपाः**) पुरस्ताद्रक्षकाः (**ऋभवः**) विपश्चितः (**मन्दसानाः**) आनन्दन्तः (**अस्मे**) धत्त (**ये**) (**च**) (**रातिम्**) दानम् (**गृणन्ति**) स्तुवन्ति॥१०॥

अन्वयः-हे ऋभवो! ये गोमन्तं वाजवन्तं वसुमन्तं पुरुक्षुं सुवीरं रयिं येऽग्रेपा मन्दसाना ये चाऽस्मे रातिं गृणन्ति ते यूयमेतदस्मे धत्थैतेनास्मासु सुखं धत्त॥१०॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यूयं येभ्यः साध्यजन्यसुखं प्राप्याऽन्येभ्यो दत्थ ते सुपात्रेभ्यो दानं दातुं प्रशंसन्ति॥१०॥

पदार्थः-हे (**ऋभवः**) विद्वानो! (**ये**) जो (**गोमन्तम्**) बहुत गौओं से युक्त (**वाजवन्तम्**) बहुत अन्न और विज्ञान के साधने वाले और (**वसुमन्तम्**) अनेक प्रकार द्रव्यों तथा (**पुरुक्षुम्**) बहुत धन और

धान्य के सहित **(सुवीरम्)** श्रेष्ठ वीरों के प्राप्त कराने वाले **(रयिम्)** धन को **(ये)** जो **(अग्रेपाः)** पहिले रक्षा करने वाले **(मन्दसानाः)** आनन्द करते हुए **(च)** और जो **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(रातिम्)** दान की **(गृणन्ति)** स्तुति करते हैं **(ते)** वे आप लोग इसको हम लोगों के लिये **(धत्थ)** धारण करो और इससे हम लोगों में सुख को **(धत्त)** धारण करो॥१०॥

भावार्थः-हे विद्वानो! आप लोग जिनके लिये सिद्ध करने योग्य पदार्थ से उत्पन्न सुख को प्राप्त होकर अन्य जनों के लिये देते हैं, वे सुपात्रों के लिये दान देने की प्रशंसा करते हैं॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नापा॑भूत न वो॑ऽतीतृषामानिः॑शस्ता ऋभवो य॒ज्ञे अ॒स्मिन्।

समिन्द्रे॑ण मद॑थ सं म॒रुद्भिः॒ सं राज॑भी रत्न॒धेया॑य देवाः॥११॥४॥

न। अप॑। अ॒भू॒त॒। न। वः॒। अ॒ती॒तृ॒षा॒म॒। अनिः॑ऽशस्ताः। ऋ॒भ॒वः॒। य॒ज्ञे। अ॒स्मिन्। सम्। इन्द्रे॑ण। मद॑थ। सम्। म॒रुत्ऽभिः॑। सम्। राज॑ऽभिः। र॒त्न॒ऽधेया॑य। दे॒वाः॒॥११॥

पदार्थः-**(न)** निषेधे **(अप, अभूत)** तिरस्कृता भवत **(न)** **(वः)** युष्मान् **(अतितृषाम)** अतितृष्णायुक्तान् कुर्य्याम। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(अनिःशस्ताः)** निर्गतं शस्तं प्रशंसनं येभ्यस्तद्विरुद्धाः **(ऋभवः)** मेधाविनः **(यज्ञे)** राज्यपालनाख्ये **(अस्मिन्)** **(सम्)** **(इन्द्रेण)** ऐश्वर्य्येण **(मदथ)** आनन्दत **(सम्)** **(मरुद्भिः)** उत्तमैर्मनुष्यैः सह **(सम्)** **(राजभिः)** **(रत्नधेयाय)** रत्नानि धीयन्ते यस्मिन् कोषे तस्मै **(देवाः)** विद्वांसः॥११॥

अन्वयः-हे देवा ऋभवोऽनिःशस्ता यूयं क्वापि नापाभूत यथाऽस्मिन् यज्ञे वो नातितृषाम तथाऽत्रेन्द्रेण सह सम्मदथ मरुद्भिः सह सम्मदथ राजभिः सह रत्नधेयाय सम्मदथ॥११॥

भावार्थः-ये लोभादिदोषरहिता राजप्रजाजनैः सह मिलित्वा गृहाश्रमव्यवहारमुन्नयन्ति ते क्वापि तिरस्कृता न भवन्ति॥११॥

अत्र मेधाविगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुस्त्रिंशत्तमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(देवाः)** विद्वान् और **(ऋभवः)** बुद्धिमानो! **(अनिःशस्ताः)** निरन्तर प्रशंसा को प्राप्त आप लोग कहीं भी **(न)** नहीं **(अप, अभूत)** तिरस्कृत हूजिये और जैसे **(अस्मिन्)** इस **(यज्ञे)** राज्यपालन करने रूप यज्ञ में **(वः)** तुम लोगों को **(न)** नहीं **(अतितृषाम)** अतितृष्णा युक्त करें, वैसे इस में **(इन्द्रेण)** ऐश्वर्य्य के साथ **(सम्, मदथ)** आनन्द करो और **(मरुद्भिः)** उत्तम मनुष्यों के साथ **(सम्)** आनन्द करो और **(राजभिः)** राजा लोगों के साथ **(रत्नधेयाय)** जिसमें धन रक्खे जाते हैं उस कोश के लिये **(सम्)** आनन्द करो॥११॥

भावार्थः-जो लोभ आदि दोषों से रहित हुए राजा और प्रजाजनों के साथ मिल कर गृहाश्रम के व्यवहार की उन्नति करते हैं, वे कहीं तिरस्कृत नहीं होते हैं॥११॥

इस सूक्त में मेधावी के गुणवर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ संगति है, यह जानना चाहिये॥

यह चौबीसवां सूक्त और चौथा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्य पञ्चत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। ऋभवो देवताः। १, २, ४, ६, ७, ९ निचृत् त्रिष्टुप्। ८ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३ भुरिक् पङ्क्तिः। ५ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब नव ऋचा वाले पैंतीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् के विषय को कहते हैं॥

इहोप यात शवसो नपातः सौधन्वना ऋभवो माप भूत।

अस्मिन् हि वः सवने रत्नधेयं गमन्त्विन्द्रमनु वो मदासः॥ १॥

इह। उप। यात। शवसः। नपातः। सौधन्वनाः। ऋभवः। मा। अप। भूत। अस्मिन्। हि। वः। सवने। रत्नऽधेयम्। गमन्तु। इन्द्रम्। अनु। वः। मदासः॥ १॥

पदार्थः-(इह) अस्मिन् **(उप) (यात)** प्राप्नुत **(शवसः)** प्रशस्तबलाः **(नपातः)** अविद्यमानह्रासाः **(सौधन्वनाः)** शोभनानि धन्वान्यन्तरिक्षस्थानि येषान्तेषामिमे **(ऋभवः)** मेधाविनः **(मा)** निषेधे **(अप) (भूत)** अपमानयुक्ता भवत **(अस्मिन्) (हि)** यतः **(वः)** युष्माकम् **(सवने)** क्रियामये व्यवहारे **(रत्नधेयम्) (गमन्तु)** गच्छन्तु **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्य्यम् **(अनु) (वः)** युष्माकम् **(मदासः)** आनन्दाः॥१॥

अन्वयः-हे शवसो नपातः सौधन्वना ऋभवो! यूयमिहोप यात वोऽस्मिन्त्सवने हि वो मदासो रत्नधेयमिन्द्रमनुगमन्तु। अत्र एतत्प्राप्य क्वचिन्मापभूत तिरस्कृता मा भवत॥१॥

भावार्थः-य उत्साहेनैश्वर्य्यमुन्नेतुमिच्छन्ति ते सकलैश्वर्य्यं प्राप्य सर्वत्र सत्कृता ये चालसास्ते दरिद्रत्वेनाऽभिभूताः सदा तिरस्कृता भवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे **(शवसः)** प्रशंसा करने योग्य बलयुक्त **(नपातः)** पतनरहित अर्थात् हानि से रहित **(सौधन्वनाः)** सुन्दर धनुष् अन्तरिक्ष में स्थित जिनके उनके सम्बन्धी **(ऋभवः)** बुद्धिमानो! आप लोग **(इह)** यहाँ **(उप, यात)** समीप में प्राप्त हूजिये **(वः)** आप लोगों के **(अस्मिन्)** इस **(सवने)** क्रियामय व्यवहार में **(हि)** जिस कारण **(वः)** आप लोगों के **(मदासः)** आनन्द **(रत्नधेयम्)** धन धरने के पात्ररूप **(इन्द्रम्)** परम ऐश्वर्य्य युक्त जन के **(अनु, गमन्तु)** पीछे जावें, इस कारण इसको प्राप्त होकर कहीं **(मा)** मत **(अप, भूत)** अपमान से युक्त हूजिये॥१॥

भावार्थः-जो लोग उत्साह से ऐश्वर्य्य की वृद्धि करने की इच्छा करते हैं, वे सब जगह सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य को प्राप्त होकर सर्वत्र सत्कारयुक्त और जो आलस्ययुक्त होते हैं, वे दरिद्रपन से अभिभूत अर्थात् सदा तिरस्कृत होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आगन्नृभूणामिह रत्नधेयमभूत् सोमस्य सुषुतस्य पीतिः।
सुकृत्यया यत्स्वपस्यया चँ एकं विचक्र चमसं चतुर्धा॥ २॥

आ। अगन्। ऋभूणाम्। इह। रत्नऽधेयम्। अभूत्। सोमस्य। सुऽसुतस्य। पीतिः। सुऽकृत्यया। यत्। सुऽअपस्यया। च। एकम्। विऽचक्र। चमसम्। चतुःऽधा॥ २॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**अगन्**) (**ऋभूणाम्**) मेधाविनाम् (**इह**) अस्मिन् संसारे (**रत्नधेयम्**) (**अभूत्**) भवेत् (**सोमस्य**) ऐश्वर्य्यस्य (**सुषुतस्य**) सुष्ठु निष्पादितस्य (**पीतिः**) पानम् (**सुकृत्यया**) शोभनक्रियया (**यत्**) यम् (**स्वपस्यया**) सुष्ठ्वपांसि कर्माणि तान्यात्मन इच्छया (**च**) (**एकम्**) (**विचक्र**) कुर्वन्ति (**चमसम्**) चमसं मेघमिव गर्जनावन्तं रथम् (**चतुर्धा**) अधऊर्ध्वतिर्यक्समगतियुक्तम्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! भवन्तो सुकृत्यया स्वपस्यया यद्यमेकं चमसं चतुर्धा विचक्र येन सुषुतस्य सोमस्य पीतिरभूदिहर्भूणां रत्नधेयमागँस्तेन च गमनादिकार्य्याणि साध्नुत॥ २॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सुष्ठुहस्तक्रिययोत्तमकर्मणा सर्वतो गमयितारं रथादिकं निर्ममते ते भोज्यपेयासङ्ख्यधनानि प्राप्नुवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! आप (**सुकृत्यया**) सुन्दर क्रिया से (**स्वपस्यया**) वा सुन्दर कर्म्मों को अपनी इच्छा से (**यत्**) जिस (**एकम्**) एक (**चमसम्**) मेघ के सदृश गर्जना करने वाले रथ को (**चतुर्धा**) नीचे, ऊपर, तिरछी और मध्यम गति वाला (**विचक्र**) करते हैं जिससे (**सुषुतस्य**) उत्तम प्रकार उत्पन्न किये गये (**सोमस्य**) ऐश्वर्य्य का (**पीतिः**) पान (**अभूत्**) होवे और (**इह**) इस संसार में (**ऋभूणाम्**) बुद्धिमानों के (**रत्नधेयम्**) रत्न धरने के पात्ररूप जन को (**आ, अगन्**) सब प्रकार प्राप्त होवें (**च**) उसीसे गमन आदि कार्य्यों को सिद्ध करो॥ २॥

भावार्थः-जो मनुष्य उत्तम हस्तक्रिया और उत्तम कर्म से सर्वत्र पहुँचाने वाले वाहन आदि को रचते हैं, वे खाने और पीने योग्य पदार्थ और असङ्ख्य धनों को प्राप्त होते हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

व्यकृणोत चमसं चतुर्धा सखे वि शिक्षेत्यब्रवीत।
अथैत वाजा अमृतस्य पन्थां गणं देवानामृभवः सुहस्ताः॥ ३॥

वि। अकृणोत। चमसम्। चतुःऽधा। सखे। वि। शिक्ष। इति। अब्रवीत। अथ। ऐत। वाजाः। अमृतस्य। पन्थाम्। गणम्। देवानाम्। ऋभवः। सुऽहस्ताः॥ ३॥

पदार्थः-(**वि**) विशेषेण (**अकृणोत**) (**चमसम्**) यथा यज्ञसाधनम् (**चतुर्धा**) (**सखे**) (**वि**) (**शिक्ष**) अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्। (**इति**) (**अब्रवीत**) उपदिशत (**अथ**) (**ऐत**) प्राप्नुत (**वाजाः**)

(अमृतस्य) नाशरहितस्य मोक्षस्य **(पन्थाम्)** **(गणम्)** समूहम् **(देवानाम्)** विदुषाम् **(ऋभवः)** मेधाविनः **(सुहस्ताः)**॥३॥

अन्वयः-हे सखे! यथाप्ता विद्वांसो सत्यविद्यां शिक्षन्ते तथा त्वं शिक्ष। हे वाजाः सुहस्ता ऋभवो! यथा सखायस्तथा यूयं चमसं चतुर्धा व्यकृणोत शास्त्राणि व्यब्रवीत। अथेति देवानां गणममृतस्य पन्थामैत॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! परमेश्वरो युष्मान् चतुर्विधं पुरुषार्थं साध्नुतेति ब्रूते यदि सखायो भूत्वा कार्य्यसिद्धये प्रयत्नं कुर्य्युस्तर्हि धर्मार्थकाममोक्षसिद्धिर्युष्मानसंशयं प्राप्नुयात्॥३॥

पदार्थः-हे **(सखे)** मित्र! जैसे यथार्थवक्ता विद्वान् जन सत्यविद्या की शिक्षा देते हैं, वैसे आप **(शिक्ष)** शिक्षा देओ और हे **(वाजाः)** विज्ञानयुक्त **(सुहस्ताः)** अच्छे हाथों वाले **(ऋभवः)** बुद्धिमान् जनो! जैसे मित्र वैसे आप लोग **(चमसम्)** यज्ञ सिद्ध कराने वाले पात्र के सदृश कार्य्य को **(चतुर्धा)** चार प्रकार **(वि)** विशेषता से **(अकृणोत)** करो और शास्त्रों का **(वि)** विशेष करके **(अब्रवीत)** उपदेश देओ। **(अथ)** इसके अनन्तर **(इति)** इस प्रकार से **(देवानाम्)** विद्वानों के **(गणम्)** समूह को और **(अमृतस्य)** नाशरहित मोक्ष के **(पन्थाम्)** मार्ग को **(ऐत)** प्राप्त होओ॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! परमेश्वर आप लोगों के प्रति चार प्रकार के पुरुषार्थ को सिद्ध करो, ऐसा कहता है कि जो परस्पर मित्र होकर कार्य्य की सिद्धि के लिये प्रयत्न करो तो धर्म्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि आप लोगों को विना संशय प्राप्त होवे॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

किंमयः स्विच्चमस एष आस यं काव्येन चतुरो विचक्र।

अथा सुनुध्वं सवनं मदाय पात ऋभवो मधुनः सोम्यस्य॥४॥

किम्ऽमयः। स्वित्। चमसः। एषः। आस। यम्। काव्येन। चतुरः। विऽचक्र। अथ। सुनुध्वम्। सवनम्। मदाय। पात। ऋभवः। मधुनः। सोम्यस्य॥४॥

पदार्थः-**(किंमयः)** यः किं मिनोति सः **(स्वित्)** प्रश्ने **(चमसः)** आचामति येन सः **(एषः)** **(आस)** **(यम्)** **(काव्येन)** कविना निर्मितेन विधिना **(चतुरः)** एतत्सङ्ख्याकान् **(विचक्र)** विदधति **(अथ)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(सुनुध्वम्)** निष्पादयत **(सवनम्)** कार्य्यसिद्ध्यर्थं कर्म **(मदाय)** आनन्दाय **(पात)** रक्षत **(ऋभवः)** मेधाविनः **(मधुनः)** ज्ञानजन्यस्य **(सोम्यस्य)** सोमैश्वर्य्ये साधोः॥४॥

अन्वयः-हे ऋभव! एष चमसः स्वित्किंमय आस यं काव्येन चतुरो यूयं विचक्र मदाय मधुनः सोम्यस्य सवनं सुनुध्वमथैतत्पात॥४॥

भावार्थः-कर्म्मसाधनानि कीदृशानि किंमयानि भवन्तीति पृच्छ्यते यद्यद्विद्यायुक्तिभ्यां निर्मितं स्यात् तत्तत्साधनं कार्य्यसिद्धिकरं भवतीत्युत्तरम्॥४॥

पदार्थः-हे **(ऋभवः)** बुद्धिमानो! **(एषः)** यह **(चमसः)** यज्ञपात्र जिससे कि आचमन करता है **(स्वित्)** सो क्या **(किंमयः)** किसी को फेंकता **(आस)** हुआ है **(यम्)** जिसको **(काव्येन)** कवियों के बनाये गये कर्म से **(चतुरः)** चार भाग आप लोग **(विचक्र)** विधान करते हैं और **(मदाय)** आनन्द के लिये **(मधुनः)** ज्ञान से उत्पन्न **(सोमस्य)** ऐश्वर्य्य में श्रेष्ठ पदार्थ के **(सवनम्)** कार्य्य की सिद्धि करने वाले को **(सुनुध्वम्)** उत्पन्न करो **(अथ)** इसके अनन्तर इसकी **(पात)** रक्षा करो॥४॥

भावार्थः-कार्य्यों के साधन कैसे और काहे के बने हुए होते हैं, यह पूछा जाता है। जो-जो विद्या और युक्ति से बनाया गया हो, वह-वह साधन कार्य्य की सिद्धि करने वाला होता है, यह उत्तर है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शच्यांकर्त पितरा युवाना शच्यांकर्त चमसं देवपानम्

शच्या हरी धनुतरावतष्टेन्द्रवाहावृभवो वाजरत्नाः॥५॥५॥

शच्यां। अकर्त। पितरां। युवाना। शच्यां। अकर्त। चमसम्। देवऽपानम्। शच्यां। हरी इतिं। धनुऽतरौ। अतष्ट। इन्द्रऽवाहौ। ऋभवः। वाजऽरत्नाः॥५॥

पदार्थः-**(शच्या)** प्रज्ञया **(अकर्त्त)** कुरुत **(पितरा)** विज्ञानवन्तावध्यापकोपदेशकौ **(युवाना)** प्राप्तयौवनौ **(शच्या)** कर्मणा **(अकर्त्त)** **(चमसम्)** पेयसाधनम् **(देवपानम्)** देवाः पिबन्ति येन तत् **(शच्या)** वाण्या। **शचीति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११) **(हरी)** वायुविद्युतौ **(धनुतरौ)** शीघ्रं गमयितारौ **(अतष्ट)** निष्पादयत **(इन्द्रवाहौ)** ऐश्वर्यप्रापकौ **(ऋभवः)** धीमन्तः **(वाजरत्नाः)** वाजा अन्नादयो रत्नानि सुवर्णादीनि च येषान्ते॥५॥

अन्वयः-हे वाजरत्ना ऋभवो! यूयं शच्या युवाना पितराकर्त्त शच्या देवपानं चमसमकर्त्त शच्या धनुतराविन्द्रवाहौ हरी अतष्ट॥५॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यूयमेवं यत्नं कुरुत यथा मनुष्यसन्ताना युवावस्था यावत्तावत् प्राप्तपूर्णविज्ञाना भूत्वा पूर्णायां युवावस्थायां परस्परस्य प्रीत्यनुमतिभ्यां स्वयंवरं विवाहं कृत्वा सर्वदाऽऽनन्दिताः स्युः॥५॥

पदार्थः-हे **(वाजरत्नाः)** अन्न आदि पदार्थ और सुवर्ण आदि पदार्थों से युक्त **(ऋभवः)** बुद्धिमानो! आप लोग **(शच्या)** उत्तम बुद्धि से **(युवाना)** युवावस्था को प्राप्त **(पितरा)** विज्ञान वाले अध्यापक और उपदेशक को **(अकर्त्त)** करिये **(शच्या)** कर्म से **(देवपानम्)** देव विद्वान् जन जिससे पान करते हैं उस **(चमसम्)** पान करने के साधन को **(अकर्त्त)** करिये **(शच्या)** वाणी से **(धनुतरौ)** शीघ्र

पहुंचाने और **(इन्द्रवाहौ)** ऐश्वर्य्य को प्राप्त कराने वाले **(हरी)** वायु और बिजुली को **(अतष्ट)** उत्पन्न करो॥५॥

भावार्थः-हे विद्वानो! आप लोग इस प्रकार यत्न करो जैसे कि मनुष्यों के सन्तान युवावस्था जब तक तब तक प्राप्त पूर्ण विज्ञान वाले होकर पूर्ण युवावस्था में परस्पर प्रीति और अनुमति से स्वयंवर विवाह करके सदा आनन्दित होवें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यो वः सुनोत्यभिपित्वे अह्नां तीव्रं वाजासः सवनं मदाय।

तस्मै रयिमृभवः सर्ववीरमा तक्षत वृषणो मन्दसानाः॥६॥

यः। वः। सुनोति। अभिऽपित्वे। अह्नाम्। तीव्रम्। वाजासः। सवनम्। मदाय। तस्मै। रयिम्। ऋभवः। सर्वऽवीरम्। आ। तक्षत। वृषणः। मन्दसानाः॥६॥

पदार्थः-(यः) **(वः)** युष्मभ्यम् **(सुनोति)** निष्पादयति **(अभिपित्वे)** अभीष्टप्राप्तौ **(अह्नाम्)** दिनानां मध्ये **(तीव्रम्)** तेजोमयम् **(वाजासः)** विज्ञानवन्तः **(सवनम्)** ऐश्वर्य्यम् **(मदाय)** नित्यानन्दाय **(तस्मै)** **(रयिम्)** श्रियम् **(ऋभवः)** प्राज्ञाः **(सर्ववीरम्)** सर्वे वीरा यस्मात्तम् **(आ)** **(तक्षत)** साध्नुत **(वृषणः)** बलिष्ठः **(मन्दसानाः)** कामयमानाः॥६॥

अन्वयः-हे वृषणो वाजास ऋभवो! मन्दसाना यूयं यो वोऽह्नामभिपित्वे मदाय तीव्रं सवनं सुनोति तस्मै सर्ववीरं रयिमातक्षत॥६॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! ये युष्माकं सेवामाज्ञानुसारेण वर्त्तमानं कर्म च कुर्वन्ति तान् विदुषः सुशिक्षातान् कृत्वा समग्रैश्वर्य्यं प्रापयत॥६॥

पदार्थः-हे **(वृषणः)** बलयुक्त **(वाजासः)** विज्ञान वाले **(ऋभवः)** बुद्धिमानो! **(मन्दसानाः)** कामना करते हुए आप लोग **(यः)** जो **(वः)** आप लोगों के लिये **(अह्नाम्)** दिनों के मध्य में **(अभिपित्वे)** अभीष्ट की प्राप्ति होने पर **(मदाय)** नित्य आनन्द के लिये **(तीव्रम्)** तेजःस्वरूप **(सवनम्)** ऐश्वर्य्य को **(सुनोति)** उत्पन्न करता है **(तस्मै)** उसके लिये **(सर्ववीरम्)** सम्पूर्ण वीर जिससे हों उस **(रयिम्)** धन को **(आ, तक्षत)** सिद्ध करो॥६॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जो आप लोगों की सेवा तथा आज्ञा के अनुसार कार्य करते हैं, उनको विद्वान् और उत्तम प्रकार शिक्षित करके सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य को प्राप्त कराइये॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रातः सुतमपिबो हर्यश्व माध्यंदिनं सवनं केवलं ते।

समृभुभिः पिबस्व रत्नधेभिः सखीँर्याँ इन्द्र चकृषे सुकृत्या॥७॥

प्रातरिति। सुतम्। अपिबः। हरिऽअश्व। माध्यंदिनम्। सवनम्। केवलम्। ते। सम्। ऋभुऽभिः। पिबस्व। रत्नऽधेभिः। सखीन्। यान्। इन्द्र। चकृषे। सुऽकृत्या॥७॥

पदार्थः-(**प्रातः**) (**सुतम्**) निष्पन्नं दुग्धमुदकं वा (**अपिबः**) पिब (**हर्यश्व**) हर्याः कमनीया गमनीया अश्वा यस्य तत्सम्बुद्धौ (**माध्यन्दिनम्**) मध्ये दिने भवं भोजनादिकम् (**सवनम्**) सकलसंस्काररसोपेतम् (**केवलम्**) (**ते**) तव (**सम्**) (**ऋभुभिः**) मेधाविभिः सह (**पिबस्व**) (**रत्नधेभिः**) ये रत्नानि दधति तैः (**सखीन्**) सुहृदः (**यान्**) (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्यप्रद राजन् (**चकृषे**) करोषि (**सुकृत्या**) शोभनेन धर्म्येण कर्मणा॥७॥

अन्वयः-हे हर्य्यश्वेन्द्र! त्वं सुकृत्या यान् सखीञ्चकृषे तै रत्नधेभिर्ऋभुभिः सह प्रातः सुतं माध्यन्दिनं केवलं सवनमपिबः सम्पिबस्वैवं ते ध्रुवं ते कल्याणं भवेत्॥७॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्वन्मित्राः सर्वेषां सुखैषिणः प्रातर्मध्यसायं कर्त्तव्यानि कर्माण्यभिहरणानि च कृत्वा सुकर्मणो भवेयुस्ते सर्वमित्राः सन्तो भाग्यशालिनः स्युः॥७॥

पदार्थः-हे (**हर्य्यश्व**) उत्तम प्रकार चलने योग्य घोड़ों से युक्त (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्य के देने वाले राजन्! आप (**सुकृत्या**) उत्तम धर्मयुक्त कर्म से (**यान्**) जिन (**सखीन्**) मित्रों को (**चकृषे**) करते हो और उन (**रत्नधेभिः**) धनों को धारण करने वाले (**ऋभुभिः**) बुद्धिमानों के साथ (**प्रातः**) प्रातःकाल में (**सुतम्**) उत्पन्न दूध वा जल (**माध्यन्दिनम्**) तथा मध्य दिन में उत्पन्न भोजन आदि और (**केवलम्**) केवल (**सवनम्**) सम्पूर्ण संस्कारों के रसों से युक्त पीने योग्य पदार्थ का (**अपिबः**) पान करो (**सम्, पिबस्व**) अच्छे प्रकार आप पान करिये, इस प्रकार (**ते**) आप का निश्चय कल्याण होवे॥७॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्वानों के मित्र, सब के सुख चाहने वाले, प्रातःकाल, मध्यकाल और सायंकाल में करने योग्य कर्मों को करके उत्तम कर्म करनेवाले होवें, ये सबके मित्र हुए भाग्यशाली होवें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ये देवासो अभवता सुकृत्या श्येनाइवेदधि दिवि निषेद।

ते रत्नं धात शवसो नपातः सौधन्वना अभवतामृतासः॥८॥

ये। देवासः। अभवत। सुऽकृत्या। श्येनाःऽइव। इत्। अधि। दिवि। निऽसेद। ते। रत्नम्। धात। शवसः। नपातः। सौधन्वनाः। अभवत। अमृतासः॥८॥

पदार्थः-(**ये**) (**देवासः**) विद्वांसः (**अभवत**) भवन्ति। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**सुकृत्या**) सुकृतेन कर्मणा (**श्येनाइव**) श्येनवत्पुरुषार्थिनः (**इत्**) एव (**अधि**) उपरि (**दिवि**) द्युलोके अन्तरिक्षे (**निषेद**) निषीदन्ति। अत्र वचनव्यत्ययेनैकवचनम्। (**ते**) (**रत्नम्**) रमणीयं धनम् (**धात**) धरन्ति (**शवसः**) बलवन्तः सन्तः (**नपातः**) ये धर्मान्न पतन्ति (**सौधन्वनाः**) शोभनं धन्वान्तरिक्षं येषान्ते तेषां पुत्राः (**अभवत**) भवन्ति (**अमृतासः**) प्राप्तमोक्षसुखाः॥८॥

अन्वयः-ये देवासः सुकृत्याऽभवत श्येनाइव दिव्यधि निषेद त इच्छवसो नपातः सौधन्वना रत्नं धातामृतासोऽभवत॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये श्येनवद्विमानेनान्तरिक्षे गच्छन्ति धर्माचरणेन विद्वांसो भूत्वाऽन्यानपि तादृशान् कुर्वन्ति ते ऐश्वर्य्यं लब्ध्वा भुक्त्वा मुक्तिमधिगच्छन्ति॥८॥

पदार्थः-(**ये**) जो (**देवासः**) विद्वान् (**सुकृत्या**) श्रेष्ठ कर्म से (**अभवत**) होते और (**श्येनाइव**) वाज के सदृश पुरुषार्थी (**दिवि**) अन्तरिक्ष में (**अधि**) ऊपर (**निषेद**) स्थित होते हैं (**ते**) वे (**इत्**) ही (**शवसः**) बलवान् हुए (**नपातः**) धर्म से नहीं गिरने वाले (**सौधन्वनाः**) जिनका सुन्दर अन्तरिक्ष अर्थात् जिन्होंने यज्ञादि कर्म से अन्तरिक्ष को स्वच्छ किया उनके पुत्र (**रत्नम्**) सुन्दर धन को (**धात**) धारण करते हैं और (**अमृतासः**) मोक्षसुख को प्राप्त (**अभवत**) होते हैं॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो बाज के सदृश विमान से अन्तरिक्ष में जाते हैं, धर्म के आचरण से विद्वान् होकर अन्य जनों को भी वैसे करते हैं, ऐश्वर्य्य को प्राप्त हो तथा उसका भोग करके अन्त में मोक्ष को प्राप्त होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यत्तृतीयं सवनं रत्नधेयमकृणुध्वं स्वपस्या सुहस्ताः।

तदृभवः परिषिक्तं व एतत्सं मदेभिरिन्द्रियेभिः पिबध्वम्॥९॥६॥

यत्। तृतीयम्। सवनम्। रत्नऽधेयम्। अकृणुध्वम्। सुऽअपस्या। सुऽहस्ताः। तत्। ऋभवः। परिऽसिक्तम्। वः। एतत्। सम्। मदेभिः। इन्द्रियेभिः। पिबध्वम्॥९॥

पदार्थः-(**यत्**) (**तृतीयम्**) अष्टाचत्वारिंशद्वर्षपरिमितसेवितं ब्रह्मचर्य्यम् (**सवनम्**) सकलैश्वर्य्यप्रापकम् (**रत्नधेयम्**) रत्नानि धीयन्ते यस्मिँस्तत् (**अकृणुध्वम्**) (**स्वपस्या**) सुष्ठु धर्म्यकर्मेच्छया (**सुहस्ताः**) शोभनाः धर्म्यकर्मकरा हस्ता येषान्ते (**तत्**) (**ऋभवः**) (**परिषिक्तम्**) परितः सर्वतः श्रेष्ठपदार्थैः संयोजितम् (**वः**) युष्मभ्यम् (**एतत्**) (**सम्**) (**मदेभिः**) आनन्दैः (**इन्द्रियेभिः**) (**पिबध्वम्**)॥९॥

अन्वयः-हे सुहस्ता ऋभवो! यूयं यद्व एतत्परिषिक्तं तन्मदेभिरिन्द्रियेभिः स्वपस्या सम्पिबध्वं तद्रत्नधेयं तृतीयं सवनमकृणुध्वम्॥९॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यूयं प्रथमे वयसि विद्याभ्यासं द्वितीये गृहाश्रमं तृतीये न्यायादिकर्मानुष्ठानं च कृत्वा पूर्णमैश्वर्य्यं प्राप्नुत॥९॥

अत्र विद्वत्कृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चत्रिंशत्तमं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे **(सुहस्ता:)** सुन्दर धर्म्मसम्बन्धी कर्म्म करने वाले हाथों से युक्त **(ऋभव:)** बुद्धिमानो! [आप] **(यत्)** जो **(व:)** आप लोगों के लिये **(एतत्)** यह **(परिषिक्तम्)** सब प्रकार श्रेष्ठ पदार्थों से संयुक्त किया हुआ **(तत्)** उसको **(मदेभि:)** आनन्दों **(इन्द्रियेभि:)** चक्षुरादि इन्द्रियों और **(स्वपस्या)** उत्तम धर्मसम्बन्धी कर्म की इच्छा से **(सम्, पिबध्वम्)** पान करो और **(रत्नधेयम्)** जिसमें रत्न धरे जाते हैं उस **(तृतीयम्)** तीसरे अर्थात् अड़तालीसवें वर्ष पर्य्यन्त सेवित ब्रह्मचर्य्य और **(सवनम्)** सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यों के प्राप्त करने वाले कर्म को **(अकृणुध्वम्)** करिये॥९॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! तुम प्रथम अर्थात् युवावस्था में विद्या का अभ्यास, द्वितीय अर्थात् मध्यम अवस्था में गृहाश्रम और तृतीय में न्याय आदि कर्मों का अनुष्ठान करके पूर्ण ऐश्वर्य्य को प्राप्त होओ॥९॥

इस सूक्त में विद्वानों का कृत्य वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पैतीसवां सूक्त और छठा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्य षट्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। ऋभवो देवताः। १, ६, ८ स्वराट् त्रिष्टुप् छन्दः। ९ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २-५ विराड् जगती। ७ जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ शिल्पविद्याविषयमाह॥

अब नव ऋचा वाले छत्तीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में शिल्पविद्या के विषय को कहते हैं॥

अनश्वो जातो अनभीशुरुक्थ्यो३ रथस्त्रिचक्रः परि वर्तते रजः।

महत्तद्वो देव्यस्य प्रवाचनं द्यामृभवः पृथिवीं यच्च पुष्यथ॥१॥

अनश्वः। जातः। अनभीशुः। उक्थ्यः। रथः। त्रिऽचक्रः। परि। वर्तते। रजः। महत्। तत्। वः। देव्यस्य। प्रऽवाचनम्। द्याम्। ऋभवः। पृथिवीम्। यत्। च। पुष्यथ॥१॥

पदार्थः-(अनश्वः) अविद्यमाना अश्वा यस्मिन्त्सः **(जातः)** उत्पन्नः **(अनभीशुः)** अप्रतिग्रहः **(उक्थ्यः)** प्रशंसितुमर्हः **(रथः)** यानविशेषः **(त्रिचक्रः)** त्रीणि चक्राणि यस्मिन् सः **(परि)** सर्वतः **(वर्त्तते) (रजः)** लोकसमूहः **(महत्) (तत्) (वः)** युष्मभ्यम् **(देव्यस्य)** देवेषु विद्वत्सु भवस्य **(प्रवाचनम्)** उपदेशनम् **(द्याम्)** प्रकाशम् **(ऋभवः)** मेधाविनः **(पृथिवीम्)** अन्तरिक्षं भूमिं वा **(यत्) (च) (पुष्यथ)**॥१॥

अन्वयः-हे ऋभवो! वोऽनश्वोऽनभीशुरुक्थ्यस्त्रिचक्रो रथो जातः सन् यन्महद्रजः परिवर्त्तते तद्देव्यस्य प्रवाचनं परिवर्त्तते तेन द्यां पृथिवीं च यूयं पुष्यथ॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयमनेकविधान्यनेककलाचक्राणि पश्वश्ववहनरहितान्यग्न्युदकवाहितानि विमानादीनि यानानि निर्माय पृथिव्यामप्स्वन्तरिक्षे च गत्वाऽऽगत्यैश्वर्य्यं प्राप्य पुष्टसुखा भवत॥१॥

पदार्थः-हे **(ऋभवः)** बुद्धिमानो! **(वः)** आप लोगों के लिये **(अनश्वः)** घोड़ों से रहित **(अनभीशुः)** जिसने किसी का दिया नहीं लिया वह **(उक्थ्यः)** प्रशंसा करने योग्य **(त्रिचक्रः)** तीन पहियों से युक्त **(रथः)** वाहनविशेष **(जातः)** उत्पन्न हुआ **(यत्)** जो **(महत्)** बड़े **(रजः)** लोकसमूह के **(परि)** सब ओर **(वर्त्तते)** वर्त्तमान है **(तत्)** वह **(देव्यस्य)** विद्वानों में उत्पन्न कर्म का **(प्रवाचनम्)** उपदेश सब ओर वर्त्तमान है, उससे **(द्याम्)** प्रकाश **(च)** और **(पृथिवीम्)** अन्तरिक्ष वा भूमि को आप लोग **(पुष्यथ)** पुष्ट करो॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम लोग अनेक प्रकार के अनेक कलाचक्रों तथा पशु घोड़ा के वाहन से रहित, अग्नि और जल से चलाये गये विमान आदि वाहनों को बना पृथिवी, जलों और अन्तरिक्ष में जा आकर और ऐश्वर्य्य को प्राप्त होकर पूर्ण सुख वाले होओ॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

रथं ये चक्रुः सुवृतं सुचेतसोऽविह्वरन्तं मनसस्परि ध्यया।
ताँ ऊ न्व१स्य सवनस्य पीतय आ वो वाजा ऋभवो वेदयामसि॥ २॥

रथम्। ये। चक्रुः। सुऽवृतम्। सुऽचेतसः। अविऽह्वरन्तम्। मनसः। परि। ध्यया। तान्। ऊम् इति। नु। अस्य। सवनस्य। पीतये। आ। वः। वाजाः। ऋभवः। वेदयामसि॥ २॥

पदार्थः-(**रथम्**) विमानादियानम् (**ये**) (**चक्रुः**) कुर्वन्ति (**सुवृतम्**) सुष्ठु साङ्गोपाङ्गसहितम् (**सुचेतसः**) सुष्ठुविज्ञानाः (**अविह्वरन्तम्**) अकुटिलगतिम् (**मनसः**) विज्ञानात् (**परि**) (**ध्यया**) ध्यानेन (**तान्**) (**उ**) (**नु**) (**अस्य**) (**सवनस्य**) शिल्पविद्याजनितस्य कार्यस्य (**पीतये**) तृप्तये (**आ**) (**वः**) युष्मान् (**वाजा**) प्राप्तहस्तक्रियाः (**ऋभवः**) मेधाविनः (**वेदयामसि**) वेदयामः प्रज्ञापयामः॥ २॥

अन्वयः-हे वाजा ऋभवो! ये वोऽस्य सनवस्य पीतये सुचेतसो मनसो ध्ययाविह्वरन्तं सुवृतं रथं परि चक्रुर्यान् वयमावेदयामसि तान्नू यूयं सद्यः परिगृह्णीत॥ २॥

भावार्थः-हे मेधाविनो ये यानरचनचालनकुशलाः शिल्पिनः स्युस्तान् परिगृह्य सत्कृत्य शिल्पविद्योन्नतिं कुरुत॥ २॥

पदार्थः-हे (**वाजाः**) हस्तक्रिया को प्राप्त हुए (**ऋभवः**) बुद्धिमानो! (**ये**) जो (**वः**) आप लोगों को (**अस्य**) इस (**सवनस्य**) शिल्पविद्या से उत्पन्न हुए कार्य की (**पीतये**) तृप्ति के लिये (**सुचेतसः**) उत्तम विज्ञान वाले (**मनसः**) विज्ञान से (**ध्यया**) ध्यान से (**अविह्वरन्तम्**) नहीं टेढ़े चलने वाले (**सुवृतम्**) उत्तम प्रकार अङ्ग और उपाङ्गों के सहित (**रथम्**) विमान आदि वाहन को (**परि, चक्रुः**) सब ओर से बनाते हैं और जिनको हम लोग (**आ, वेदयामसि**) जनाते हैं (**तान्**) उनको (**नु**) निश्चय करके (**उ**) ही आप लोग शीघ्र ग्रहण कीजिये॥ २॥

भावार्थः-हे बुद्धिमानो! जो वाहनो के बनाने और चलाने में चतुर शिल्पीजन होवें, उनका ग्रहण और सत्कार करके शिल्पविद्या की उन्नति करो॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तद्वो वाजा ऋभवः सुप्रवाचनं देवेषु विभ्वो अभवन्महित्वनम्।
जिव्री यत्सन्ता पितरा सनाजुरा पुनर्युवाना चरथाय तक्षथ॥ ३॥

तत्। वः। वाजाः। ऋभवः। सुऽप्रवाचनम्। देवेषु। विऽभ्वः। अभवत्। महिऽत्वनम्। जिव्री इति। यत्। सन्ता। पितरा। सनाऽजुरा। पुनः। युवाना। चरथाय। तक्षथ॥ ३॥

पदार्थः-**(तत्)** **(वः)** युष्मान् **(वाजाः)** अन्नादियुक्ताः **(ऋभवः)** मेधाविनः **(सुप्रवाचनम्)** सुष्ठ्वध्यापनमुपदेशनं च **(देवेषु)** विद्वत्सु **(विभ्वः)** सकलविद्यासु व्याप्ताः **(अभवत्)** भवेत् **(महित्वनम्)** महत्त्वम् **(जिव्री)** जीवन्तौ **(यत्)** **(सन्ता)** सन्तौ विद्यमानौ **(पितरा)** पितरौ **(सनाजुरा)** सदा जरावस्थास्थौ **(पुनः)** **(युवाना)** प्राप्तयौवनौ **(चरथाय)** गमनाय विज्ञानाय भोजनाय वा **(तक्षथ)** कुरुत॥३॥

अन्वयः-हे वाजा ऋभवो! विभ्वो यद्वो युष्मान् प्रति देवेषु महित्वनं सुप्रवाचनमभवत् तत्प्राप्य जिव्री सन्ता सनाजुरा पितरा चरथाय पुनर्युवाना तक्षथ॥३॥

भावार्थः-हे धीमन्तो जना! यदि युष्माभिर्विद्वत्सु स्थित्वैतेभ्योऽध्ययनमुपदेशनं च क्रियेत तर्हि ज्ञानवृद्धत्वाद्युवानः सन्तोऽपि वृद्धा भूत्वा सत्कृताः स्युः॥३॥

पदार्थः-हे **(वाजाः)** अन्न आदिकों से युक्त **(ऋभवः)** बुद्धिमानो! **(विभ्वः)** सकल विद्याओं में व्याप्त **(यत्)** जो **(वः)** आप लोगों के प्रति **(देवेषु)** विद्वानों में **(महित्वनम्)** प्रतिष्ठा को **(सुप्रवाचनम्)** उत्तम प्रकार पढ़ाना और उपदेश करना **(अभवत्)** होवे **(तत्)** उसको प्राप्त होकर **(जिव्री)** जीवते हुए **(सन्ता)** विद्यमान और **(सनाजुरा)** सदा वृद्धावस्था को प्राप्त **(पितरः)** माता-पिता **(चरथाय)** चलने, विज्ञान वा भोजन के लिये **(पुनः)** फिर **(युवाना)** युवावस्था को प्राप्त हुए **(तक्षथ)** करो॥३॥

भावार्थः-हे बुद्धिमान् जनो! जो आप लोग विद्वानों में स्थित होकर उनसे अध्ययन और उपदेश करें तो ज्ञानवृद्ध होने से युवावस्था को प्राप्त हुए भी वृद्ध होकर सत्कृत होवें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एकं वि चक्र चमसं चतुर्वयं निश्चर्मणो गामरिणीत धीतिभिः।

अथा देवेष्वमृतत्वमानश श्रुष्टी वाजा ऋभवस्तद्व उक्थ्यम्॥४॥

एकम्। वि। चक्र। चमसम्। चतुःऽवयम्। निः। चर्मणः। गाम्। अरिणीत। धीतिऽभिः। अथ। देवेषु। अमृतऽत्वम्। आनश। श्रुष्टी। वाजाः। ऋभवः। तत्। वः। उक्थ्यम्॥४॥

पदार्थः-**(एकम्)** असहायम् **(वि)** **(चक्र)** कुर्य्याम **(चमसम्)** मेघमिव विभक्तम् **(चतुर्वयम्)** चत्वारो वयम् **(निः)** नितराम् **(चर्मणः)** त्वचः **(गाम्)** पृथिवीम् **(अरिणीत)** प्राप्नुत **(धीतिभिः)** अङ्गुलिभिरिव विलेखनगतिभिः **(अथ)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(देवेषु)** विद्वत्सु **(अमृतत्वम्)** मोक्षसुखम् **(आनश)** प्राप्नुयुः **(श्रुष्टी)** क्षिप्रम् **(वाजाः)** विभवयुक्ताः **(ऋभवः)** विपश्चितः **(तत्)** **(वः)** युष्माकम् **(उक्थ्यम्)** प्रशंसनीयं कर्म॥४॥

अन्वयः-हे वाजा ऋभवस्तद्व उक्थ्यं कर्म येन यूयं श्रुष्टी धीतिभिश्चर्मणो गामरिणीत। अथैतेन देवेष्वमृतत्वमानश यथैकं चमसं चतुर्वयं विनिश्चक्र तथ यूयमपि कुरुत॥४॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये प्रशंसितानि कर्माणि कुर्वन्ति ते व्यावहारिकपारमार्थिकसुखं लब्ध्वा विपश्चिद्वरेषु प्रशंसां लभन्ते॥४॥

पदार्थ:-हे **(वाजा:)** ऐश्वर्य्य से युक्त **(ऋभव:)** बुद्धिमान् जनो! **(तत्)** वह **(व:)** आप लोगों का **(उक्थ्यम्)** प्रशंसा करने योग्य कर्म कि जिससे आप लोग **(श्रुष्टी)** शीघ्र **(धीतिभि:)** अङ्गुलियों के सदृश विलेखनगतियों से **(चर्मण:)** त्वचा की **(गाम्)** भूमि को **(अरिणीत)** प्राप्त हूजिये **(अथ)** इसके अनन्तर इससे **(देवेषु)** विद्वानों में **(अमृतत्वम्)** मोक्षसुख को **(आनश)** प्राप्त हूजिये और जैसे **(एकम्)** सहायरहित अर्थात् अकेले **(चमसम्)** मेघों के सदृश विभक्त **(चतुर्वयम्)** चार हम लोग **(वि, नि:, चक्र)** करें, वैसे आप लोग भी करो॥४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो प्रशंसित कर्मों को करते हैं, वे व्यावहारिक और पारमार्थिक सुख को प्राप्त होकर पण्डितवरों में प्रशंसा को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋभुतो रयिः प्रथमश्रवस्तमो वाजश्रुतासो यमजीजनन् नरः।

विभ्वतष्टो विदथेषु प्रवाच्यो यं देवासोऽवथा स विचर्षणिः॥५॥७॥

ऋभुतः। रयिः। प्रथमश्रवःऽतमः। वाजऽश्रुतासः। यम्। अजीजनन्। नरः। विभ्वऽतष्टः। विदथेषु। प्रऽवाच्यः। यम्। देवासः। अवथ। सः। विऽचर्षणिः॥५॥

पदार्थ:-**(ऋभुत:)** ऋभूणां सकाशात् **(रयि:)** श्री: **(प्रथमश्रवस्तम:)** अतिशयेन प्रथम: श्रव: श्रवणमन्नं वा यस्मात् स: **(वाजश्रुतास:)** वाजं विज्ञानं श्रुतं यैस्ते **(यम्)** **(अजीजनन्)** जनयन्ति **(नर:)** नायका: **(विभ्वतष्ट:)** यो विभुषु पदार्थेष्वतष्टोऽविचक्षण: स: **(विदथेषु)** विज्ञापनीयेषु व्यवहारेषु **(प्रवाच्य:)** प्रवक्तुं योग्य: **(यम्)** **(देवास:)** विद्वांस: **(अवथ)** रक्षथ **(स:)** **(विचर्षणि:)** सर्वद्रष्टव्यद्रष्टा मनुष्य:॥५॥

अन्वय:-हे देवासो! ये वाजश्रुतासो नरो यमजीजनन्त्स विभ्वतष्टो विदथेषु प्रवाच्य: स्यात्। तेनर्भुत: प्रथमश्रवस्तमो रयि: प्राप्येत तं यूयमवथ स विचर्षणिर्भवेत्॥५॥

भावार्थ:-त एव विद्वांस उत्तमा ये विद्यार्थिनो विदुष: कुर्वन्ति। त एवाध्यापनीया उपदेष्टव्या ये पदार्थविद्याविरहा: स्युस्त एव सुखिनो भवन्ति ये विद्याश्रियौ प्राप्य धर्मात्मानो भवेयु:॥५॥

पदार्थ:-हे **(देवास:)** विद्वानो! जो **(वाजश्रुतास:)** विज्ञान के सुनने वाले **(नर:)** नायकजन **(यम्)** जिसको **(अजीजनन्)** उत्पन्न करते हैं **(स:)** वह **(विभ्वतष्ट:)** व्यापक पदार्थों में नहीं पण्डित अर्थात् उनको नहीं जानने वाला **(विदथेषु)** जनाने योग्य व्यवहारों में **(प्रवाच्य:)** कहने के योग्य होवे इससे **(ऋभुत:)** बुद्धिमानों के समीप से **(प्रथमश्रवस्तम:)** अत्यन्त प्रथम श्रवण वा अन्न जिससे वह

(रयिः) धन प्राप्त होवे और **(यम्)** जिसकी आप लोग **(अवथ)** रक्षा करते हो [वह] **(विचर्षणिः)** सम्पूर्ण देखने योग्य पदार्थों को देखने वाला मनुष्य होवे॥५॥

भावार्थः-वे ही विद्वान् उत्तम हैं कि जो विद्यार्थियों को विद्वान् करते हैं, उन्हीं को पढ़ाना और उपदेश देना चाहिये जो पदार्थविद्या से रहित होवें, वे ही सुखी होते हैं जो विद्या और धन को प्राप्त होकर धर्मात्मा होवें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स वाज्यर्वा स ऋषिर्वचस्यया स शूरो अस्ता पृतनासु दुष्टरः।

स रायस्पोषं स सुवीर्यं दधे यं वाजो विभ्वाँ ऋभवो यमाविषुः॥६॥

सः। वाजी। अर्वा। सः। ऋषिः। वचस्यया। सः। शूरः। अस्ता। पृतनासु। दुस्तरः। सः। रायः। पोषम्। सः। सुऽवीर्यम्। दधे। यम्। वाजः। विऽभ्वा। ऋभवः। यम्। आविषुः॥६॥

पदार्थः-**(सः)** **(वाजी)** विज्ञानवान् **(अर्वा)** शुभगुणप्रापकः **(सः)** **(ऋषिः)** वेदार्थवेत्ता **(वचस्यया)** अतिशयितया प्रशंसया **(सः)** **(शूरः)** **(अस्ता)** शत्रूणां प्रक्षेप्ता **(पृतनासु)** शत्रुसेनासु **(दुष्टरः)** दुःखेनोल्लङ्घयितुं योग्यः **(सः)** **(रायः)** धनस्य **(पोषम्)** **(सः)** **(सुवीर्य्यम्)** सुष्ठु बलं पराक्रमम् **(दधे)** दधाति **(यम्)** **(वाजः)** विज्ञानवान् **(विभ्वा)** विभुना पदार्थेन **(ऋभवः)** मेधाविनः **(यम्)** **(आविषुः)** प्राप्तविद्यं कुर्वन्तु॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ऋभवो विभ्वा यमाविषुर्यं वाजो दधाति स वचस्यया सहार्वा वाजी स ऋषिः सः पृतनासु दुष्टरः शूरोऽस्ता भवति स रायस्पोषं सः सुवीर्य्यं च दधे॥६॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्वत्सङ्गेन गुणान् ग्रहीतुमिच्छन्ति ते प्रशंसिता शत्रुभिरजेया धनाढ्या वीर्य्यवन्तश्च जायन्ते॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(ऋभवः)** बुद्धिमान् जन **(विभ्वा)** व्यापक पदार्थ से **(यम्)** जिसको **(आविषुः)** विद्यायुक्त करें और **(यम्)** जिसको **(वाजः)** विज्ञानवान् धारण करता है **(सः)** वह **(वचस्यया)** अत्यन्त प्रशंसा के साथ **(अर्वा)** उत्तम गुणों को प्राप्त कराने वाला **(वाजी)** विज्ञानयुक्त **(सः)** वह **(ऋषिः)** वेदार्थ को जानने वाला **(सः)** वह **(पृतनासु)** शत्रुओं की सेनाओं में **(दुष्टरः)** दुःख से उल्लङ्घन करने योग्य **(शूरः)** वीर पुरुष **(अस्ता)** शत्रुओं का फेंकने वाला होता है **(सः)** वह **(रायः)** धन की **(पोषम्)** पुष्टि और **(सः)** वह **(सुवीर्य्यम्)** उत्तम बल और पराक्रम को **(दधे)** धारण करता है॥६॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्वानों के संग से गुणों के ग्रहण करने की इच्छा करते हैं; वे प्रशंसित, शत्रुओं से नहीं जीतने योग्य, धनाढ्य और पराक्रमी होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

श्रेष्ठं वः पेशो अधि धायि दर्शतं स्तोमो वाजा ऋभवस्तं जुजुष्टन।
धीरासो हि ष्ठा कवयो विपश्चितस्तान् व एना ब्रह्मणा वेदयामसि॥७॥

श्रेष्ठम्। वः। पेशः। अधि। धायि। दर्शतम्। स्तोमः। वाजाः। ऋभवः। तम्। जुजुष्टन। धीरासः। हि। स्थ। कवयः। विपःऽचितः। तान्। वः। एना। ब्रह्मणा। आ। वेदयामसि॥७॥

पदार्थः-(श्रेष्ठम्) अतिशयेन प्रशस्यम् **(वः)** युष्माकम् **(पेशः)** सुन्दरं रूपं हिरण्यञ्च। **पेश इति रूपनामसु पठितम्।** (निघं०३.७) **हिरण्यनामसु च।** (निघं०१.२) **(अधि)** उपरि **(धायि)** ध्रियते **(दर्शतम्)** द्रष्टव्यम् **(स्तोमः)** प्रशंसा **(वाजाः)** प्राप्तसुशीला वेगवन्तः **(ऋभवः)** सूरयः **(तम्) (जुजुष्टन)** सेवध्वम् **(धीरासः)** योगिनो विचारवन्तः **(हि)** यतः **(स्थ)** भवत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(कवयः)** बहुदर्शिन उपदेशकाः **(विपश्चितः)** सदसद्विवेका विद्वांसः **(तान्) (वः)** युष्मान् **(एना)** एनेन **(ब्रह्मणा)** वेदेन **(आ) (वेदयामसि)** ज्ञापयामः॥७॥

अन्वयः-हे वाजा ऋभवो! यूयं येन वो श्रेष्ठं दर्शतं पेशः स्तोमोऽधिधायि ये हि धीरासः कवयो विपश्चित उपदेशकाः स्युर्यं यान् व एना ब्रह्मणाऽऽवेदयामसि तं तांश्च जुजुष्टनैतत्सङ्गेन विद्वांसः स्थ॥७॥

भावार्थः-ये विद्यार्थिनः श्रेष्ठानध्यापकान् विदुष आप्तान् संसेव्य शिक्षां गृह्णीयुस्ते विद्वांसः श्रीमन्तश्च भवेयुः॥७॥

पदार्थः-हे **(वाजाः)** उत्तम स्वभावयुक्त और वेगवाले **(ऋभवः)** बुद्धिमान्! आप लोग जिसके **(वः)** आप लोगों के **(श्रेष्ठम्)** अत्यन्त प्रशंसा करने योग्य और **(दर्शतम्)** देखने योग्य **(पेशः)** सुन्दररूप और सुवर्ण तथा **(स्तोमः)** प्रशंसा **(अधि)** ऊपर **(धायि)** धारण की जाती है और जो **(हि)** जिससे **(धीरासः)** योगी विचार वाले **(कवयः)** बहुत शास्त्रों को देखे अर्थात विचारे हुए उपदेशक **(विपश्चितः)** सत्य और मिथ्या को पृथक् करने वाले विद्वान् जन उपदेशक होवें जिसको और जिन **(वः)** आप लोगों को **(एना)** इस **(ब्रह्मणा)** वेद से **(आ, वेदयामसि)** जनाते हैं **(तम्)** उस और **(तान्)** उनकी **(जुजुष्टन)** सेवा करो अर्थात् उसमें और अपने में प्रीति करो इसके संग से विद्वान् **(स्थ)** होओ॥७॥

भावार्थः-जो विद्यार्थी जन श्रेष्ठ अध्यापक और विद्वान् यथार्थवक्ता जनों की सेवा करके शिक्षा ग्रहण करें, वे विद्वान् और लक्ष्मीवान् होवें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यूयमस्मभ्यं धिषणाभ्यस्परि विद्वांसो विश्वा नर्याणि भोजना।

द्युमन्तं वाजं वृषशुष्ममुत्तममा नो रयिमृभवस्तक्षता वयः॥८॥

यूयम्। अस्मभ्यम्। धिषणाभ्यः। परि। विद्वांसः। विश्वा। नर्याणि। भोजना। द्युऽमन्तम्। वाजम्। वृषऽशुष्मम्। उत्ऽतमम्। आ। नः। रयिम्। ऋभवः। तक्षत। आ। वयः॥८॥

पदार्थः-(यूयम्) (अस्मभ्यम्) (धिषणाभ्यः) प्रज्ञाभ्यः **(परि)** सर्वतः **(विद्वांसः) (विश्वा)** सर्वाणि **(नर्य्याणि)** नृषु साधूनि नृभ्यो हितानि वा **(भोजना)** पालनान्यन्नानि वा **(द्युमन्तम्)** प्रकाशवन्तम् **(वाजम्)** विज्ञानम् **(वृषशुष्मम्)** वृषणां बलीनां बलम् **(उत्तमम्)** श्रेष्ठम् **(आ) (नः)** अस्मभ्यम् **(रयिम्)** धनम् **(ऋभवः)** मेधाविनः **(तक्षत)** विस्तृणुत **(आ) (वयः)** जीवनम्॥८॥

अन्वयः-हे विद्वांस ऋभवो! यूयमस्मभ्यं धिषणाभ्यो विश्वा नर्य्याणि भोजना द्युमन्तं वृषशुष्ममुत्तमं वाजं रयिं नो वयश्चातक्षत तेन सुखं पर्य्यावर्द्धयत॥८॥

भावार्थः-ये विद्वांसोऽध्यापनोपदेशाभ्यां मनुष्याणां प्रज्ञां वर्द्धयन्ति ते सर्वहितैषिणो विज्ञेयाः॥८॥

पदार्थः-हे **(विद्वांसः)** विद्वानो **(ऋभवः)** बुद्धिमानो! **(यूयम्)** आप लोग **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(धिषणाभ्यः)** बुद्धियों से **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(नर्य्याणि)** मनुष्यों में श्रेष्ठ वा मनुष्यों के लिये हितकारक **(भोजना)** पालन वा अन्न **(द्युमन्तम्)** प्रकाश वाले **(वृषशुष्मम्)** बलियों के बल और **(उत्तमम्)** श्रेष्ठ **(वाजम्)** विज्ञान और **(रयिम्)** धन का तथा **(नः)** हम लोगों के लिये **(वयः)** जीवन का **(आ, तक्षत)** विस्तार कीजिये, उससे सुख को **(परि, आ)** सब प्रकार से बढ़ाइये॥८॥

भावार्थः-जो विद्वान् पढ़ाने और उपदेश करने से मनुष्यों की बुद्धि बढ़ाते हैं, वे सब के हितैषी जानने चाहिये॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इह प्रजामिह रयिं रराणा इह श्रवो वीरवत्तक्षता नः।

येन वयं चितयेमात्यन्यान् तं वाजं चित्रमृभवो ददा नः॥९॥८॥

इह। प्रऽजाम्। इह। रयिम्। रराणाः। इह। श्रवः। वीरऽवत्। तक्षत। नः। येन। वयम्। चितयेम। अति। अन्यान्। तम्। वाजम्। चित्रम्। ऋभवः। दद। नः॥९॥८॥

पदार्थः-(इह) अस्मिन् संसारे **(प्रजाम्)** उत्तमान् सन्तानान् राष्ट्रं वा **(इह) (रयिम्)** धनम् **(रराणाः)** ददमानाः **(इह) (श्रवः)** अन्नं श्रवणं वा **(वीरवत्)** प्रशस्तवीरकारम् **(तक्षत)** प्रापयत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(नः)** अस्मभ्यम् **(येन) (वयम्) (चितयेम)** चितिं संज्ञानमाचक्ष्महि **(अति) (अन्यान्) (तम्) (वाजम्)** विज्ञानम् **(चित्रम्)** अद्भुतम् **(ऋभवः) (ददा)** ददतु। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(नः)**॥९॥

अन्वय:-हे ऋभवो! भवन्त इह न: प्रजामिह रयिमिह वीरवच्छ्रवो रराणा: सन्तस्तक्षत येन वयमन्यानति चितयेम तं चित्रं वाजं नो ददा॥९॥

भावार्थ:-यदा मनुष्या विदुष: सङ्गच्छन्ते तदा विज्ञानं सत्यश्रवणं धनमुत्तमां प्रजां शूरवीरयुक्तसेनां च याचन्तां तेभ्यो यथार्थां विद्यां प्राप्याऽन्यान् सततं बोधयेयुरिति॥९॥

अत्र विपश्चिद्गुणकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षट्त्रिंशत्तमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे **(ऋभव:)** बुद्धिमानो! आप लोग **(इह)** इस संसार में **(न:)** हम लोगों के लिये **(प्रजाम्)** उत्तम सन्तान वा राज्य को **(इह)** इस संसार में **(रयिम्)** धन को और **(इह)** इस संसार में **(वीरवत्)** प्रशंसा करने योग्य वीरों के करने वाले **(श्रव:)** अन्न वा श्रवण को **(रराणा:)** देते हुए **(तक्षत)** प्राप्त कराओ **(येन)** जिससे **(वयम्)** हम लोग **(अन्यान्)** औरों के प्रति **(अति, चितयेम)** उत्तम रीति से विज्ञान को कहें **(तम्)** उस **(चित्रम्)** अद्भुत **(वाजम्)** विज्ञान को **(न:)** हम लोगों के लिये **(ददा)** दीजिये॥९॥

भावार्थ:-जब मनुष्य विद्वानों को प्राप्त होवें तब विज्ञान, सत्यश्रवण, धन, उत्तम प्रजा और शूरवीरयुक्त सेना की याचना करें, उनसे यथार्थ विद्या को प्राप्त होकर अन्यों को निरन्तर बोध करावें॥९॥

इस सूक्त में विपश्चित् के गुणकृत्य [का] वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह छत्तीसवां सूक्त और आठवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथाष्टर्चस्य सप्तत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। ऋभवो देवताः। १ विराट् त्रिष्टुप्। २ त्रिष्टुप्। ३, ८ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ५, ७ अनुष्टुप्। ६ निचृदनुष्टुप् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथाप्तविषयमाह॥

अब आठ ऋचा वाले सैंतीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में आप्त के विषय को कहते हैं॥

उप॑ नो वाजा अध्व॒रमृ॑भुक्षा॒ देवा॑ या॒त प॒थिभि॑र्दे॒व॒यानैः॑।

यथा॑ य॒ज्ञं मनु॑षो वि॒क्ष्वा॒३॒॑सु द॑धि॒ध्वे र॑ण्वाः सु॒दिने॒ष्वह्ना॑म्॥ १॥

उप॑। नः॒। वा॒जाः॒। अ॒ध्व॒रम्। ऋ॒भु॒क्षाः॒। देवाः॑। या॒त। प॒थिऽभिः॑। दे॒व॒ऽयानैः॑। यथा॑। य॒ज्ञम्। मनु॑षः। वि॒क्षु। आ॒सु। द॒धि॒ध्वे। र॒ण्वाः॒। सु॒ऽदिने॑षु। अह्ना॑म्॥ १॥

पदार्थः-(**उप**) (**नः**) अस्माकम् (**वाजाः**) विज्ञानवन्तः (**अध्वरम्**) अहिंसामयं यज्ञम् (**ऋभुक्षाः**) महान्तः (**देवाः**) (**यात**) प्राप्नुत (**पथिभिः**) मार्गैः (**देवयानैः**) देवा विद्वांसो यन्ति येषु तैः (**यथा**) (**यज्ञम्**) वैरादिदोषरहितं व्यवहारम् (**मनुषः**) मननशीलाः (**विक्षु**) प्रजासु (**आसु**) प्रत्यक्षवर्त्तमानासु (**दधिध्वे**) धरध्वम् (**रण्वाः**) रमणीयाः (**सुदिनेषु**) सुखेन वर्त्तमानेष्वहःसु (**अह्नाम्**) दिनानां मध्ये॥ १॥

अन्वयः-हे ऋभुक्षा वाजा देवा! भवन्तो यथा रण्वा मनुषोऽह्नां सुदिनेष्वासु विक्षु यज्ञं दधति तथैव यूयमेतं दधिध्वे तथा पथिभिर्देवयानैर्नोऽध्वरमुपयात॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये धार्मिकाणां विदुषां मार्गेण गच्छन्ति ते प्रजाहितकरणे समर्था जायन्ते॥ १॥

पदार्थः-हे (**ऋभुक्षाः**) बड़े (**वाजाः**) विज्ञानवाले (**देवाः**) विद्वानो! आप लोग (**यथा**) जैसे (**रण्वाः**) सुन्दर (**मनुषः**) विचार करने वाले (**अह्नाम्**) दिनों के मध्य में (**सुदिनेषु**) सुख से वर्त्तमान दिनों में और (**आसु**) इन प्रत्यक्ष वर्त्तमान (**विक्षु**) प्रजाओं में (**यज्ञम्**) वैर आदि दोषरहित व्यवहार को धारण करते हैं, वैसे ही आप लोग इसको (**दधिध्वे**) धारण कीजिये वैसे (**पथिभिः**) मार्गों (**देवयानैः**) विद्वान् लोग जिसमें जायें उनसे (**नः**) हम लोगों के (**अध्वरम्**) अहिंसामय यज्ञ को (**उप, यात**) प्राप्त हूजिये॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो जन धार्मिक विद्वानों के मार्ग अर्थात् मर्यादा से चलते हैं, वे प्रजा के हित करने में समर्थ होते हैं॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ते वो हृदे मनसे सन्तु यज्ञा जुष्टासो अद्य घृतनिर्णिजो गुः।

प्र वः सुतासो हरयन्त पूर्णाः क्रत्वे दक्षाय हर्षयन्त पीताः॥२॥

ते। वः। हृदे। मनसे। सन्तु। यज्ञाः। जुष्टासः। अद्य। घृतऽनिर्निजः। गुः। प्र। वः। सुतासः। हरयन्त। पूर्णाः। क्रत्वे। दक्षाय। हर्षयन्त। पीताः॥२॥

पदार्थः-(**ते**) (**वः**) युष्माकम् (**हृदे**) हृदयाय (**मनसे**) अन्तःकरणाय (**सन्तु**) (**यज्ञाः**) सत्या व्यवहाराः (**जुष्टासः**) विद्वद्भिः सेविताः (**अद्य**) (**घृतनिर्णिजः**) घृतेनाज्येनोदकेन शुद्धीकृताः (**गुः**) प्राप्नुवन्तु (**प्र**) (**वः**) युष्मान् (**सुतासः**) निष्पन्नाः (**हरयन्त**) कामयन्ताम् (**पूर्णाः**) (**क्रत्वे**) प्रज्ञायै (**दक्षाय**) चातुर्याय (**हर्षयन्त**) (**पीताः**)॥२॥

अन्वयः-हे विद्वांसस्ते हृदे मनसेऽद्य वो घृतनिर्णिजो जुष्टासो यज्ञाः प्राप्ताः सन्तु सुतासो वो गुः प्र हरयन्त क्रत्वे दक्षाय पूर्णाः पीता हर्षयन्त॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! भवन्त एवं पुरुषार्थमनुतिष्ठन्तु यतो पवित्रता प्रज्ञा चातुर्य्यञ्च वर्द्धेरन्। ये मांसमद्याहारं विहायोत्तमं भुञ्जते ते सततं विज्ञानमुन्नयन्ति॥२॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**ते**) वे (**हृदे**) हृदय वा (**मनसे**) अन्तःकरण के लिये (**अद्य**) आज (**वः**) आप लोगों के (**घृतनिर्णिजः**) घृत वा जल से शुद्ध किये गये (**जुष्टासः**) विद्वानों से सेवित (**यज्ञाः**) सत्य व्यवहार प्राप्त (**सन्तु**) होवें (**सुतासः**) उत्पन्न हुए (**वः**) आप लोगों को (**गुः**) प्राप्त हों और (**प्र, हरयन्त**) कामना करें तथा (**क्रत्वे**) बुद्धि और (**दक्षाय**) चतुरता के लिये (**पूर्णाः**) पूर्ण (**पीताः**) पालन किये गये (**हर्षयन्त**) प्रसन्न होवें॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग ऐसा पुरुषार्थ करो जिससे पवित्रता, बुद्धि और चातुर्य्य बढ़े और जो मांस, मद्य के आहार का त्याग करके उत्तम पदार्थ का भोग करते, वे निरन्तर विज्ञान को बढ़ाते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्र्युदायं देवहितं यथा वः स्तोमो वाजा ऋभुक्षणो ददे वः।

जुह्वे मनुष्वदुपरासु विक्षु युष्मे सचा बृहद्दिवेषु सोमम्॥३॥

त्रिऽउदायम्। देवऽहितम्। यथा। वः। स्तोमः। वाजाः। ऋभुक्षणः। ददे। वः। जुह्वे। मनुष्वत्। उपरासु। विक्षु। युष्मे इति। सचा। बृहत्ऽदिवेषु। सोमम्॥३॥

पदार्थः-(**त्र्युदायम्**) यं मनोदेहवचनैरुदायन्ति तम् (**देवहितम्**) देवेभ्यो हितकरम् (**यथा**) (**वः**) युष्माकं युष्मभ्यं वा (**स्तोमः**) प्रशंसा (**वाजाः**) अन्नविज्ञानवन्तः (**ऋभुक्षणः**) महान्तः (**ददे**) ददामि

(वः) युष्मान् **(जुह्वे)** स्पर्द्धे **(मनुष्वत्)** विद्वद्वत् **(उपरासु)** श्रेष्ठासु **(विक्षु)** मनुष्यादिप्रजासु **(युष्मे)** युष्मान् **(सचा)** सत्येन **(बृहद्दिवेषु)** दिव्येषु पदार्थेषु **(सोमम्)** ऐश्वर्य्यम्॥३॥

अन्वयः-हे वाजा ऋभुक्षणो! यथा वः स्तोमो मां सुखं ददाति तथा युष्मभ्यमानन्दमहं ददे। यथाहं मनुष्वद्व उपरासु विक्षु सचा बृहद्दिवेषु त्र्युदायं देवहितं सोमं जुह्वे युष्मे सुखं प्रयच्छामि तथा मां यूयमाह्वयत सुखं प्रयच्छत॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा विद्वांसो युष्मभ्यं सुखं ददति युष्माकं हितं चिकीर्षन्ति तथैव यूयमपि तदर्थमाचरत॥३॥

पदार्थः-हे **(वाजाः)** अन्न तथा विज्ञानवाले **(ऋभुक्षणः)** श्रेष्ठ जनो! **(यथा)** जैसे **(वः)** आप लोगों की वा आप लोगों के लिये **(स्तोमः)** प्रशंसा मुझको सुख देती है, वैसे आप लोगों के लिये आनन्द को मैं **(ददे)** देता हूँ और जैसे मैं **(मनुष्वत्)** विद्वान् के सदृश **(वः)** आप लोगों को **(उपरासु)** श्रेष्ठ **(विक्षु)** मनुष्य आदि प्रजाओं में **(सचा)** सत्य से **(बृहद्दिवेषु)** महान् दिव्य पदार्थों में **(त्र्युदायम्)** मन, देह और वचन इन तीनों से जिसको देते हैं उस **(देवहितम्)** विद्वानों के लिये हितकारक **(सोमम्)** ऐश्वर्य्य को **(जुह्वे)** स्पर्द्धा करता हूँ और **(युष्मे)** आप लोगों के लिये सुख देता हूँ, वैसे मुझको आप लोग भी बुलाओ और सुख दो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् जन आप लोगों के लिये सुख देते हैं और आप लोगों के हित की इच्छा करते हैं, वैसे ही आप लोग भी उनके लिये आचरण करो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पीवोअश्वाः शुचद्रथा हि भूतायःशिप्रा वाजिनः सुनिष्काः।

इन्द्रस्य सूनो शवसो नपातोऽनु वश्चेत्यग्रियं मदाय॥४॥

पीवःऽअश्वाः। शुचत्ऽरथाः। हि। भूत। अयःऽशिप्राः। वाजिनः। सुऽनिष्काः। इन्द्रस्य। सूनो इति। शवसः। नपातः। अनु। वः। चेति। अग्रियम्। मदाय॥४॥

पदार्थः-**(पीवोअश्वाः)** पीवसः स्थूला अश्वा येषान्ते **(शुचद्रथाः)** शुचन्तः पवित्रा रथा यानानि येषान्ते **(हि)** यतः **(भूत)** भवत **(अयःशिप्राः)** अय इव शिप्रे हनूनासिके येषामश्वानां तद्वन्तः **(वाजिनः)** वेगवन्तः **(सुनिष्काः)** शोभनानि निष्कानि सुवर्णमयान्याभूषणानि येषान्ते **(इन्द्रस्य)** परमैश्वर्य्यवतो राज्ञः **(सूनो)** अपत्य **(शवसः)** बलवतः **(नपातः)** अविद्यमानाऽधःपतनस्य **(अनु)** **(वः)** **(चेति)** विज्ञायते **(अग्रियम्)** अग्रे भवं सुखम् **(मदाय)** आनन्दाय॥४॥

अन्वयः-हे पीवोअश्वाः शुचद्रथा अयःशिप्राः सुनिष्का वाजिनो यूयं हि विजयिनो भूत। हे नपातः शवस इन्द्रस्य सूनो! त्वं मदायाग्रियं पुरुषार्थं कुरु यथाऽस्माभिर्वः सुखमनु चेति तथा युष्माभिरस्मत्सुखवृद्धिः प्रयत्येत॥४॥

भावार्थः-हे राजपुरुषा! भवन्तो विस्तीर्णबलाः सेनाङ्गसहिता ऐश्वर्य्यालङ्कृता राज्याऽऽनन्दवृद्धये पुरुषार्थं कुर्वन्तु यतः शत्रवो युष्मान् तिरस्कर्तुं न शक्नुयुः॥४॥

पदार्थः-हे **(पीवोअश्वाः)** मोटे घोड़ों **(शुचद्रथाः)** पवित्र वाहनों और **(अयः शिप्राः)** लोह के सदृश ठुड्ढी और नासिका वाले घोड़ों से युक्त **(सुनिष्काः)** सुन्दर सुवर्ण के आभूषणों वाले **(वाजिनः)** वेगयुक्त आप लोग **(हि)** जिससे जीतने वाले **(भूत)** हूजिये। और हे **(नपातः)** नीचे गिरना अर्थात् नीच दशा को प्राप्त होना जिसके नहीं उस **(शवसः)** बलवान् **(इन्द्रस्य)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य वाले राजा के **(सूनो)** पुत्र! आप **(मदाय)** आनन्द के लिये **(अग्रियम्)** प्रथम हुए सुख और पुरुषार्थ को करो और जैसे हम लोगों से **(वः)** आप लोगों का सुख **(अनु, चेति)** जाना जाता है, वैसे आप लोगों को हम लोगों की सुखवृद्धि का प्रयत्न करना चाहिये॥४॥

भावार्थः-हे राजपुरुषो! आप लोग विस्तीर्ण बल से युक्त और सेना के अङ्गों के सहित विराजमान और ऐश्वर्य्य से शोभित हुए राज्य के आनन्द की वृद्धि के लिये पुरुषार्थ करो, जिससे शत्रुजन आप लोगों का तिरस्कार करने को समर्थ न हो सकें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋभुमृ॑भुक्षणो र॒यिं वाजे॑ वा॒जिन्त॑मं॒ युज॑म्।

इन्द्र॑स्वन्तं हवामहे सदा॒सात॑मम॒श्विन॑म्॥५॥९॥

ऋ॒भुम्। ऋ॒भु॒क्ष॒णः॒। र॒यिम्। वाजे॑। वा॒जिन्ऽत॑मम्। युज॑म्। इन्द्र॑स्वन्तम्। ह॒वा॒म॒हे॒। स॒दा॒ऽसात॑मम्। अ॒श्विन॑म्॥५॥

पदार्थः-**(ऋभुम्)** मेधाविनम् **(ऋभुक्षणः)** महान्तो विद्वांसः **(रयिम्)** धनम् **(वाजे)** सङ्ग्रामे **(वाजिन्तमम्)** प्रशंसिता बहवोऽतिशयिता वाजिनो विद्यन्ते यस्मिँस्तम् **(युजम्)** समाधातुमर्हम् **(इन्द्रस्वन्तम्)** परमैश्वर्य्ययुक्तस्वामिसहितम् **(हवामहे)** आदद्मः **(सदासातमम्)** सदाऽतिशयेन विभजनीयम् **(अश्विनम्)** बहूत्तमाश्वादियुक्तम्॥५॥

अन्वयः-हे ऋभुक्षणो! यूयं वाज ऋभुं वाजिन्तमं युजमिन्द्रस्वन्तं सदासातममश्विनं रयिं वयं हवामहे तथैवैतं यूयमप्याहूयत॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं स्पर्द्धया परस्परस्य बलं वर्द्धयित्वा युधि शत्रून् विजयध्वम्॥५॥

पदार्थः-हे **(ऋभुक्षणः)** बड़े विद्वान्! आप लोग **(वाजे)** संग्राम में **(ऋभुम्)** बुद्धिमान् **(वाजिन्तमम्)** प्रशंसित अतीव बहुत घोड़ों से युक्त **(युजम्)** समाधान करने को योग्य **(इन्द्रस्वन्तम्)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त स्वामी के सहित **(सदासातमम्)** सदा अतिशय करके विभाग करने योग्य **(अश्विनम्)** बहुत उत्तम घोड़े आदि से युक्त **(रयिम्)** धन को हम लोग **(हवामहे)** ग्रहण करते हैं, वैसे ही इसको आप लोग बुलावें ग्रहण करें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! आप लोग स्पर्द्धा से परस्पर बल बढ़ाय के सङ्ग्राम में शत्रुओं को जीतो॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सेदृभवो यमवथ यूयमिन्द्रश्च मर्त्यम्।

स धीभिरस्तु सनिता मेधसाता सो अर्वता॥६॥

सः। इत्। ऋभवः। यम्। अवथ। यूयम्। इन्द्रः। च। मर्त्यम्। सः। धीभिः। अस्तु। सनिता। मेधऽसाता। सः। अर्वता॥६॥

पदार्थः-**(सः)** **(इत्)** एव **(ऋभवः)** मेधाविनः **(यम्)** **(अवथ)** रक्षथ **(यूयम्)** **(इन्द्रः)** परमैश्वर्य्यो राजा **(च)** **(मर्त्यम्)** मनुष्यम् **(सः)** **(धीभिः)** प्रज्ञाभिः **(अस्तु)** भवतु **(सनिता)** सत्याऽसत्ययोः संविभाजकः **(मेधसाता)** शुद्धसङ्ग्रामविभक्तम् **(सः)** **(अर्वता)** अश्वादिना॥६॥

अन्वयः-हे ऋभवो! यूयं यं मर्त्यमवथेन्द्रश्चावति स इद्धीभिर्युक्तः स सनिता सोऽर्वता मेधसाता विजय्यस्तु॥६॥

भावार्थः-हे राजसेनाजना! यदि युष्माकमध्यक्षा राजा मेधाविनश्च रक्षकाः स्युस्तर्हि युष्माकं सर्वत्र विजयः सुखञ्च सततं वर्द्धेत॥६॥

पदार्थः-हे **(ऋभवः)** बुद्धिमान् जनो! **(यूयम्)** आप लोग **(यम्)** जिस **(मर्त्यम्)** मनुष्य की **(अवथ)** रक्षा करते हो और **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य युक्त राजा **(च)** भी रक्षा करता है **(सः)** **(इत्)** वही **(धीभिः)** बुद्धियों से युक्त **(सः)** वह **(सनिता)** सत्य और असत्य का विभाग करने वाला और **(सः)** वह **(अर्वता)** घोड़ा आदि से **(मेधसाता)** शुद्ध संग्राम में विजयी **(अस्तु)** होवे॥६॥

भावार्थः-हे राजसेनाजनो! जो आप लोगों के अध्यक्ष राजा और बुद्धिमान् रक्षक होवें तो आप लोगों का सर्वत्र विजय और सुख निरन्तर बढ़े॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वि नो॑ वाजा ऋभुक्षणः प॒थश्चि॑तन॒ यष्ट॑वे।

अ॒स्मभ्यं॑ सूरयः स्तु॒ता विश्वा॒ आशा॑स्तरी॒षणि॑॥७॥

वि। न॒ः। वा॒जा॒ः। ऋ॒भु॒क्ष॒ण॒ः। प॒थः। चि॒त॒न॒। यष्ट॑वे। अ॒स्मभ्य॑म्। सू॒र॒य॒ः। स्तु॒ताः। विश्वा॑ः। आशा॑ः। त॒री॒षणि॑॥७॥

पदार्थः-(**वि**) (**नः**) अस्माकम् (**वाजाः**) (**ऋभुक्षणः**) महान्तः (**पथः**) मार्गान् (**चितन**) ज्ञापयत (**यष्टवे**) सङ्गन्तुम् (**अस्मभ्यम्**) (**सूरयः**) विद्वांसः (**स्तुताः**) (**विश्वाः**) अखिलाः (**आशाः**) इच्छाः (**तरीषणि**) दुःखं तरितुं सामर्थ्यम्॥७॥

अन्वयः-हे वाजा ऋभुक्षणः स्तुताः सूरयो! यूयमस्मभ्यं यष्टवे पथो विचितन यतो तरीषणि प्राप्य नोऽस्माकं विश्वा आशाः पूर्णाः स्युः॥७॥

भावार्थः-ये मनुष्या बाल्यावस्थामारभ्य विद्वच्छिक्षां गृह्णीयुस्तेषां सकला इच्छाः पूर्णाः स्युः॥७॥

पदार्थः-हे (**वाजाः**) प्रशंसित (**ऋभुक्षणः**) बड़े (**स्तुताः**) स्तुति किये गये (**सूरयः**) विद्वानो! आप लोग (**अस्मभ्यम्**) हम लोगों के लिये (**यष्टवे**) मिलने को (**पथः**) मार्ग (**वि चितन**) जनाइये जिससे (**तरीषणि**) दुःख के पार उतरने के सामर्थ्य को प्राप्त होकर (**नः**) हम लोगों की (**विश्वाः**) सम्पूर्ण (**आशाः**) इच्छायें पूर्ण होवें॥७॥

भावार्थः-जो मनुष्य बाल्यावस्था से लेकर विद्वानों की शिक्षा का ग्रहण करें, उनकी सम्पूर्ण इच्छा पूर्ण होवें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तं नो॑ वाजा ऋभुक्षण॒ इन्द्र॒ नास॑त्या र॒यिम्।

सम॑श्वं चर्ष॒णिभ्य॒ आ पु॒रु श॑स्त म॒घत्त॑ये॥८॥१०॥

तम्। न॒ः। वा॒जा॒ः। ऋ॒भु॒क्ष॒ण॒ः। इन्द्र॑। नास॑त्या। र॒यिम्। सम्। अश्व॑म्। च॒र्ष॒णिऽभ्य॑ः। आ। पु॒रु। श॒स्त॒। म॒घत्त॑ये॥८॥

पदार्थः-(**तम्**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**वाजाः**) दातारः (**ऋभुक्षणः**) महान्तः (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्ययुक्त (**नासत्या**) अविद्यमानासत्याचारौ सभान्यायेशौ (**रयिम्**) धनम् (**सम्**) (**अश्वम्**) महान्तम् (**चर्षणिभ्यः**) मनुष्येभ्यः (**आ**) समन्तात् (**पुरु**) बहु (**शस्त**) प्रशंसत (**मघत्तये**) पूजितधनप्राप्तये॥८॥

अन्वयः-हे वाजा ऋभुक्षणो! यूयं यथा नासत्या तथा नश्चर्षणिभ्यो मघत्तये तमश्वं रयिं पुरु समादत्त। हे इन्द्र! त्वमेताञ्छस्त॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यै राज्ञो राजपुरुषेभ्यश्च धनोन्नतिः सदा कार्या येन बहुविधं सुखं भवेदिति॥८॥

अत्र विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तत्रिंशत्तमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(वाजाः)** देने वाले! **(ऋभुक्षणः)** बड़े! आप लोग जैसे **(नासत्या)** असत्याचार से रहित सभा और न्याय के ईश वैसे **(नः)** हम **(चर्षणिभ्यः)** मनुष्यों के अर्थ **(मघत्तये)** श्रेष्ठ धन की प्राप्ति के लिये **(तम्)** उस **(अश्वम्)** बड़े **(रयिम्)** धन को **(पुरु)** बहुत **(सम्)** उत्तम प्रकार **(आ)** ग्रहण करिये। और हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त! आप इन लोगों की **(शस्त)** प्रशंसा कीजिये॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि राजा और राजपुरुषों से धन की उन्नति सदा करें, जिससे बहुत प्रकार का सुख होवे॥८॥

इस सूक्त में विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह सैंतीसवां सूक्त और दशवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ दशर्चस्याष्टत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। १ द्यावापृथिव्यौ देवते। २-१० दधिक्रा देवताः। १, ४ विराट् पङ्क्तिः। ६ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ३ त्रिष्टुप्। ५, ८-१० निचृत् त्रिष्टुप्। ७ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

कीदृशो राजा भवेदित्याह॥

अब दश ऋचा वाले अड़तीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में कैसा राजा हो, इस विषय को कहते हैं॥

उ॒तो हि वां॑ दा॒त्रा सन्ति॒ पूर्वा॒ या पू॒रुभ्य॑स्त्र॒सद॑स्युर्नितो॒शे।

क्षे॒त्रा॒सां द॑दथुरुर्व॒रा॒सां घ॒नं दस्यु॑भ्यो अ॒भिभू॑तिमु॒ग्रम्॥ १॥

उ॒तो इति॑। हि। वा॒म्। दा॒त्रा। सन्ति॑। पूर्वा॑। या। पू॒रुऽभ्यः॑। त्र॒सद॑स्युः। नि॒ऽतो॒शे। क्षे॒त्र॒ऽसाम्। द॒द॒थुः॒। उ॒र्व॒रा॒ऽसाम्। घ॒नम्। दस्यु॑ऽभ्यः। अ॒भिऽभू॑तिम्। उ॒ग्रम्॥ १॥

पदार्थः-(**उतो**) अपि (**हि**) यतः (**वाम्**) युवयोः (**दात्रा**) दातारौ (**सन्ति**) (**पूर्वा**) पूर्वौ (**याः**) यः (**पुरुभ्यः**) बहुभ्यः (**त्रसदस्युः**) त्रस्यन्ति दस्यवो यस्मात्सः (**नितोशे**) नितरां वधे। **नितोशत इति वधकर्मासु पठितम्।** (निघं०२.१९) (**क्षेत्रासाम्**) यः क्षेत्राणि सनति विभजति तम् (**ददथुः**) दत्तः (**उर्वरासाम्**) बहुश्रेष्ठाः पदार्थाः सन्ति यस्यान्तां भूमिं सनति तम् (**घनम्**) हन्ति येन तम् (**दस्युभ्यः**) साहसिकेभ्यश्चौरेभ्यः (**अभिभूतिम्**) पराजयम् (**उग्रम्**) कठिनम्॥ १॥

अन्वयः-हे राजन्! भवान् सेनापतिस्त्रसदस्युस्सन् ये हि वां भृत्याः सन्ति तेभ्यः पूरुभ्यो या पूर्वा दात्रा युवां नितोशे क्षेत्रासामुर्वरासां ददथुरुतो दस्युभ्य उग्रमभिभूतिं तेन सह दस्युभ्यो घनं प्रहृत्योग्रमभिभूतिं ददथुस्तस्मात् सत्कर्त्तव्यौ स्तः॥ १॥

भावार्थः-हे राजसेनाध्यक्षौ! युवां सुशिक्षितान् भृत्यान् संरक्ष्य दस्यून् हत्वा विजयं प्राप्य न्यायेन राष्ट्रं पालयतम्॥ १॥

पदार्थः-हे राजन्! आप और सेनापति (**त्रसदस्युः**) डरते हैं दस्यु जिससे ऐसे होते हुए जो (**हि**) जिस कारण (**वाम्**) आप दोनों के भृत्य (**सन्ति**) हैं उन (**पूरुभ्यः**) बहुतों से (**या**) जो (**पूर्वा**) प्रथम वर्त्तमान (**दात्रा**) दाता जन आप दोनों (**नितोशे**) अत्यन्त वध करने में (**क्षेत्रासाम्**) क्षेत्रों को विभाग करने और (**उर्वरासाम्**) बहुत श्रेष्ठ पदार्थों से युक्त भूमि सेवने वाले को (**ददथुः**) देते हो (**उतो**) और (**दस्युभ्यः**) साहस करने वाले चोरों के लिये (**उग्रम्**) कठिन (**अभिभूतिम्**) पराजय को और उसके साथ चोरों के लिये (**घनम्**) जिससे नाश करता है, उसका प्रहार करके कठिन पराजय को देते हो, इससे सत्कार करने योग्य हो॥ १॥

भावार्थः-हे राजा और सेना के अध्यक्ष! आप दोनों उत्तम प्रकार शिक्षित भृत्यों को रख दुष्टों को नाश करके और विजय को प्राप्त होकर न्याय से राज्य का पालन करो॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत वाजिनं पुरुनिष्षिध्वानं दधिक्रामु ददथुर्विश्वकृष्टिम्।

ऋजिप्यं श्येनं प्रुषितप्सुमाशुं चर्कृत्यमर्यो नृपतिं न शूरम्॥ २॥

उत। वाजिनम्। पुरुनिःऽसिध्वानम्। दधिऽक्राम्। ऊम् इति। ददथुः। विश्वऽकृष्टिम्। ऋजिप्यम्। श्येनम्। प्रुषितऽप्सुम्। आशुम्। चर्कृत्यम्। अर्यः। नृऽपतिम्। न। शूरम्॥ २॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**वाजिनम्**) बहुवेगवन्तम् (**पुरुनिष्षिध्वानम्**) बहवः शत्रवो निष्षिध्यन्ते येन तम् (**दधिक्राम्**) यो दधिना धारकेणाऽधिकेन सह तम् (उ) (**ददथुः**) दद्यातम् (**विश्वकृष्टिम्**) विश्वे सर्वे कृष्टयो मनुष्या विजयिनो यस्मात्तम् (**ऋजिप्यम्**) ऋजिपेषु सरलानां पालकेषु साधुम् (**श्येनम्**) श्येनमिव सद्योगामिनम् (**प्रुषितप्सुम्**) यः प्रुषितान् स्निग्धान् पदार्थान् प्साति भक्षयति तम् (**आशुम्**) पूर्णमध्वानं प्राप्नुवन्तम् (**चर्कृत्यम्**) भृशं कर्त्तुं योग्यम् (**अर्य्यः**) स्वामी (**नृपतिम्**) नराणां पालकम् (**न**) इव (**शूरम्**) शूरवीरम्॥ २॥

अन्वयः-हे सभासेनेशौ! युवां यस्मायर्यः शूरं नृपतिं न वाजिनं पुरुनिष्षिध्वानं दधिक्रां विश्वकृष्टिमुत वाजिनमु ऋजिप्यं प्रुषितप्सुं श्येनमिव चर्कृत्यमाशुं ददथुः स विजयाय प्रभवेत्॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यदि राजजनाः शिल्पविद्याजन्यानि शस्त्रास्त्राणि सुशिक्षितां चतुरङ्गिणीं सेनां च निष्पादयेयुस्तर्हि क्वापि पराजयो न स्यात्॥ २॥

पदार्थः-हे सभा और सेना के ईश! आप दोनों जिसके लिये (**अर्य्यः**) स्वामी (**शूरम्**) वीर (**नृपतिम्**) मनुष्यों के पालन करने वाले राजा के (**न**) सदृश (**वाजिनम्**) बहुत वेगयुक्त (**पुरुनिष्षिध्वानम्**) बहुत शत्रुओं के हराने वाले। (**दधिक्राम्**) धारण करने वाली अधिकता के सहित वर्त्तमान (**विश्वकृष्टिम्**) सब मनुष्य जीतते जिससे उस (**उत**) और बहुत वेगवाले (उ) और (**ऋजिप्यम्**) सरलों के पालन करने वालों में श्रेष्ठ (**प्रुषितप्सुम्**) जो श्रेष्ठ पदार्थों को भक्षण करने वाले (**श्येनम्**) शीघ्रगामी वाज के सदृश (**चर्कृत्यम्**) निरन्तर करने के योग्य (**आशुम्**) पूर्ण मार्ग को व्याप्त होने वाले को (**ददथुः**) देवें, वह विजय के लिये समर्थ होवे॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजजन शिल्पविद्या से उत्पन्न शस्त्र-अस्त्र और उत्तम प्रकार शिक्षित चार अङ्गों से युक्त सेना को सिद्ध करें तो कहीं भी पराजय न होवे॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यं सीमनु प्रवतेव द्रवन्तं विश्वः पूरुर्मदति हर्षमाणः।

पुड्भिर्गृध्यन्तं मेधुयुं न शूरं रथुतुरं वातमिव ध्रजन्तम्॥३॥

यम्। सीम्। अनु। प्रवताऽइव। द्रवन्तम्। विश्वः। पूरुः। मदति। हर्षमाणः। पट्ऽभिः। गृध्यन्तम्। मेधुऽयुम्। न। शूरम्। रथुऽतुरम्। वातम्ऽइव। ध्रजन्तम्॥३॥

पदार्थः-(**यम्**) (**सीम्**) सर्वतः (**अनु**) (**प्रवतेव**) निम्नस्थलेनेव (**द्रवन्तम्**) (**विश्वः**) सर्वः (**पूरुः**) मनुष्यः (**मदति**) आनन्दति (**हर्षमाणः**) आनन्दितः सन् (**पड्भिः**) पादैः (**गृध्यन्तम्**) अभिकाङ्क्षमाणम् (**मेधयुम्**) मेधं हिंसां कामयमानम् (**न**) इव (**शूरम्**) (**रथतुरम्**) यो रथेन सद्यो गच्छति तम् (**वातमिव**) (**ध्रजन्तम्**) गच्छन्तम्॥३॥

अन्वयः-हे राजन्! यं सीं जलं प्रवतेव द्रवन्तमनु विश्वो हर्षमाणः पूरुर्मदति स मेधयुं शूरं न ध्रजन्तं वातमिव रथतुरं पड्भिर्गृध्यन्तं शत्रुं हन्तुं प्रभवति॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यस्य राज्ञो राष्ट्रे निम्नं स्थानं जलमिव सर्वतो गुणाधानं चेकीभवति तस्य सन्निधौ योग्याः पुरुषा निवसन्ति॥३॥

पदार्थः-हे राजन्! (**यम्**) जिसको (**सीम्**) सब ओर से जल (**प्रवतेव**) नीचे स्थल से जैसे वैसे (**द्रवन्तम्**) जाते हुए को (**अनु**) पीछे (**विश्वः**) सब (**हर्षमाणः**) हर्षित होता हुआ (**पूरुः**) मनुष्यमात्र (**मदति**) आनन्दित होता है वह (**मेधयुम्**) हिंसा की कामना करते और (**शूरम्**) वीर पुरुष के (**न**) सदृश (**ध्रजन्तम्**) चलते हुए (**वातमिव**) वायु के सदृश (**रथतुरम्**) रथ के द्वारा शीघ्र चलने वाले (**पड्भिः**) पैरों से (**गृध्यन्तम्**) अभिकांक्षा करते हुए शत्रु के मारने को समर्थ होता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जिस राजा के राज्य में नीचा स्थान जल के सदृश और सब प्रकार से गुणों का पात्र एक होता है, उसके समीप योग्य पुरुष रहते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यः स्मारुन्धानो गध्या समत्सु सनुतरश्चरति गोषु गच्छन्।

आविर्ऋजीको विदथा निचिक्यत्तिरो अरतिं पर्याप आयोः॥४॥

यः। स्म। आऽरुन्धानः। गध्या। समत्ऽसु। सनुऽतरः। चरति। गोषु। गच्छन्। आविःऽऋजीकः। विदथा। निऽचिक्यत्। तिरः। अरतिम्। परि। आपः। आयोः॥४॥

पदार्थः-(**यः**) (**स्म**) (**आरुन्धानः**) समन्ताच्छत्रून्निरुन्धानः (**गध्या**) मिश्रीभूतान् (**समत्सु**) सङ्ग्रामेषु (**सनुतरः**) सनातनविद्यः (**चरति**) (**गोषु**) पृथिवीषु (**गच्छन्**) (**आविर्ऋजीकः**) प्रसिद्धसरलस्वभावः (**विदथा**) विज्ञानानि (**निचिक्यत्**) पश्यन् (**तिरः**) तिरस्करणे (**अरतिम्**) दुःखम् (**परि**) (**आपः**) जलानि (**आयोः**) आयुषः॥४॥

अन्वयः-हे राजन्! यः सनुतरः समत्सु गध्याऽऽरुन्धान आविर्ऋजीको गोषु गच्छन् निचिक्यच्छत्रूंस्तिरस्कृत्यारतिं निवार्य परि चरति आप इवाऽऽयोर्विदथा प्राप्नोति तं स्म भवानधिकारिणं कुर्य्यात्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! ये जनाः स्वराष्ट्रे शान्तिकराः शत्रुराष्ट्र उद्वेजका बलिष्ठा दीर्घायुषः प्रसिद्धकीर्त्तयः स्युस्तानेव शत्रुजयाय नियोजय॥४॥

पदार्थः-हे राजन्! **(यः)** जो **(सनुतरः)** सनातन विद्यायुक्त **(समत्सु)** संग्रामों में **(गध्या)** मिले हुए **(आरुन्धानः)** सब ओर से शत्रुओं को रोकता हुआ **(आविर्ऋजीकः)** प्रसिद्ध सरल अर्थात् कपटरहित स्वभाववाला **(गोषु)** पृथिवियों में **(गच्छन्)** चलता और **(निचिक्यत्)** देखता हुआ शत्रुओं का **(तिरः)** तिरस्कार और **(अरतिम्)** दुःख का निवारण करके **(परि, चरति)** भ्रमता है **(आपः)** जलों के सदृश **(आयोः)** अवस्था के **(विदथा)** विज्ञानों को प्राप्त होता है **(स्म)** उसी को आप अधिकारी करें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जो जन अपने राज्य में शान्ति करने, शत्रुओं के राज्य में भय देने और बलयुक्त, अधिक अवस्था वाले, प्रसिद्ध कीर्तियुक्त होवें, उन्हीं को शत्रुओं के जीतने के लिये नियुक्त करो॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत स्मैनं वस्त्रमथिं न तायुमनु क्रोशन्ति क्षितयो भरेषु।

नीचायमानं जसुरिं न श्येनं श्रवश्चाच्छा पशुमच्च यूथम्॥५॥११॥

उत। स्म। एनम्। वस्त्रऽमथिम्। न। तायुम्। अनु। क्रोशन्ति। क्षितयः। भरेषु। नीचा। अयमानम्। जसुरिम्। न। श्येनम्। श्रवः। च। अच्छ। पशुऽमत्। च। यूथम्॥५॥

पदार्थः-**(उत)** **(स्म)** **(एनम्)** **(वस्त्रमथिम्)** यो वस्त्राणि मथ्नाति तम् **(न)** इव **(तायुम्)** तस्करम् **(अनु)** **(क्रोशन्ति)** रुदन्ति **(क्षितयः)** मनुष्याः **(भरेषु)** सङ्ग्रामेषु **(नीचा)** नीचानि कर्म्माणि **(अयमानम्)** प्राप्नुवन्तम् **(जसुरिम्)** प्रयतमानम् **(न)** इव **(श्येनम्)** पक्षिविशेषम् **(श्रवः)** अन्नं श्रवणं वा **(च)** **(अच्छ)** अत्र संहितायामिति दीर्घः। **(पशुमत्)** पशवो विद्यन्ते यस्मिंस्तत् **(च)** **(यूथम्)** समूहम्॥५॥

अन्वयः-क्षितयो भरेषु यमेनं राजानं वस्त्रमथिं तायुं नाऽनु क्रोशन्ति जसुरिं श्येनं न नीचायमानं पशुमच्छ्रवश्चाऽच्छ यूथञ्चाऽनु क्रोशन्त्युत स स्म सद्यो विनश्यति॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यो राजा प्रजापालनेन विना करं हरति यस्य प्रजाभ्यो दुष्टा दुःखं ददति स स्वयं नीचकर्मा श्येनवद्धिंस्रः पशुवन्मूर्खो यस्य सेना च चोरवद्वर्त्तते तस्य सद्यो विनाशो भवतीति निश्चयः॥५॥

पदार्थः-(**क्षितयः**) मनुष्य (**भरेषु**) संग्रामों में जिस (**एनम्**) इस राजा को (**वस्त्रमथिम्**) वस्त्रों को मथने वाले (**तायुम्**) चोर को (**न**) जैसे वैसे (**अनु, क्रोशन्ति**) पीछे कोशते रोते हैं (**जसुरिम्**) प्रयत्न करते हुए (**श्येनम्**) पक्षिविशेष अर्थात् वाज के (**न**) सदृश (**नीचा**) नीच कर्मों को (**अयमानम्**) प्राप्त होने वाले को और (**पशुमत्**) पशुओं से युक्त (**श्रवः**) अन्न वा श्रवण को (**च**) भी (**अच्छ**) उत्तम प्रकार (**यूथम्, च**) तथा समूह के पीछे कोशते रोते हैं (**उत, स्म**) वही तो शीघ्र नष्ट होता है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजा प्रजापालन के विना कर लेता है, जिस राजा की प्रजा को दुष्ट जन दुःख देते हैं और जो राजा आप नीच कर्म करने वाला, वाज पक्षी के सदृश हिंसक, पशु के सदृश मूर्ख और जिस राजा की सेना चोर के सदृश वर्त्तमान है, उसका शीघ्र विनाश होता है, यह निश्चय है॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत स्मासु प्रथमः सरिष्यन्नि वेवेति श्रेणिभी रथानाम्।

स्रजं कृण्वानो जन्यो न शुभ्वा रेणुं रेरिहत्किरणं ददश्वान्॥६॥

उत। स्म। आसु। प्रथमः। सरिष्यन्। नि। वेवेति। श्रेणिऽभिः। रथानाम्। स्रजम्। कृण्वानः। जन्यः। न। शुभ्वा। रेणुम्। रेरिहत्। किरणम्। ददश्वान्॥६॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**स्म**) (**आसु**) सेनासु (**प्रथमः**) आदिमः (**सरिष्यन्**) गमिष्यन् (**नि**) (**वेवेति**) गच्छति (**श्रेणिभिः**) पङ्क्तिभिः (**रथानाम्**) यानानाम् (**स्रजम्**) मालामिव सेनाम् (**कृण्वानः**) कुर्वन् (**जन्यः**) यो जायते (**न**) इव (**शुभ्वा**) सुशोभमानः (**रेणुम्**) (**रेरिहत्**) (**किरणम्**) ज्योतिः (**ददश्वान्**) दत्तवान् वायुरिव॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य आसु रथानां श्रेणिभिः स्रजं कृण्वानः प्रथमः सरिष्यन् नि वेवेत्युत शुभ्वा जन्यो न किरणं ददश्वान् रेणुं रेरिहत् स स्मैव राजा सर्वतो वर्धते॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यो न्यायेन प्रजाः पालयन्त्सेनाष्वग्रगामी धनुर्वेदविद्विजयी दक्षो विद्वान् धार्मिकः सुसहायो राजा भवेत् स एव कीर्त्तिमान् भूत्वा महाराजः स्यात्॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**आसु**) इन सेनाओं में (**रथानाम्**) वाहनों की (**श्रेणिभिः**) पङ्क्तियों से (**स्रजम्**) माला के सदृश सेना को (**कृण्वानः**) करता और (**प्रथमः**) प्रथम (**सरिष्यन्**) चलने वाला होता हुआ (**नि, वेवेति**) जाता है (**उत**) और (**शुभ्वा**) उत्तम प्रकार शोभित (**जन्यः**) उत्पन्न होने वाले के (**न**) सदृश और (**किरणम्**) ज्योति को (**ददश्वान्**) देने वाले वायु के सदृश (**रेणुम्**) धूलि को (**रेरिहत्**) निरन्तर उड़ाता है (**स्म**) वही राजा सब ओर से वृद्धि को प्राप्त होता है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमावाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो न्याय से प्रजाओं का पालन करता हुआ सेनाओं में अग्रगामी, धनुर्वेद का जानने वाला, विजयी, चतुर, विद्वान्, धार्मिक और उत्तम सहाययुक्त राजा होवे, वही यशस्वी होकर महाराज होवे॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत स्य वाजी सहुरिर्ऋतावा शुश्रूषमाणस्तन्वा समर्ये।

तुरं यतीषु तुरयन्नृजिप्योऽधि भ्रुवोः किरते रेणुमृञ्जन्॥७॥

उत। स्यः। वाजी। सहुरिः। ऋतऽवा। शुश्रूषमाणः। तन्वा। सऽमर्ये। तुरम्। यतीषु। तुरयन्। ऋजिप्यः। अधि। भ्रुवोः। किरते। रेणुम्। ऋञ्जन्॥७॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**स्यः**) सः (**वाजी**) विज्ञानवान् (**सहुरिः**) सहनशीलः (**ऋतावा**) सत्याचरणः (**शुश्रूषमाणः**) सेवमानः (**तन्वा**) शरीरेण (**समर्ये**) सङ्ग्रामे (**तुरम्**) शीघ्रकारिणम् (**यतीषु**) नियतासु सेनासु (**तुरयन्**) सद्यो गमयन् (**ऋजिप्यः**) सरलगामिषु साधुः (**अधि**) (**भ्रुवोः**) (**किरते**) विकिरति (**रेणुम्**) धूलिम् (**ऋञ्जन्**) प्रसाध्नुवन्॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! स्य वाजी सहुरिर्ऋतावा यतीषु तुरं तुरयन्नृतर्जिप्यस्तन्वा शुश्रूषमाण ऋञ्जन् समर्ये भ्रुवो रेणुमधिकिरते स राजा विजयी सत्कर्त्तव्यः॥७॥

भावार्थः-स एव राज्यं कर्त्तुमर्हेद्यो विद्वान् सर्वैः सह सत्यसेवी उत्तमसेनः सरलस्वभावो भवेत्॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**स्यः**) वह (**वाजी**) विज्ञानयुक्त (**सहुरिः**) सहनेवाला (**ऋतावा**) सत्य आचरण से युक्त (**यतीषु**) नियत सेनाओं में (**तुरम्**) शीघ्र करने वाले को (**तुरयन्**) शीघ्र चलाता हुआ (**उत**) भी (**ऋजिप्यः**) सरलगति वालों में श्रेष्ठ (**तन्वा**) शरीर से (**शुश्रूषमाणः**) सेवन करता और (**ऋञ्जन्**) प्रसिद्ध करता हुआ (**समर्ये**) सङ्ग्राम में (**भ्रुवोः**) भौओं की (**रेणुम्**) धूलि को (**अधि, किरते**) उड़ाता है, वह राजा विजयी और सत्कार करने योग्य होता है॥७॥

भावार्थः-वही राज्य करने योग्य होवे जो विद्वान्, सब को सहने वाला, सत्य का सेवी, उत्तम सेना और सरल स्वभावयुक्त होवे॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत स्मास्य तन्यतोरिव द्योर्ऋघायतो अभियुजो भयन्ते।

यदा सहस्रमभि षीमयोधीद् दुर्वर्तुः स्मा भवति भीम ऋञ्जन्॥८॥

उत। स्म। अस्य। तन्यतोःऽइव। द्योः। ऋघायतः। अभिऽयुजः। भयन्ते। यदा। सहस्रम्। अभि। सीम्। अयोधीत्। दुःऽवर्तुः। स्म। भवति। भीमः। ऋञ्जन्॥८॥

पदार्थः-(**उत**) (**स्म**) (**अस्य**) (**तन्यतोरिव**) विद्युत इव (**द्योः**) प्रकाशमानायाः (**ऋघायतः**) हिंसतः (**अभियुजः**) योऽभियुङ्क्ते तस्य (**भयन्ते**) बिभ्यति (**यदा**) (**सहस्रम्**) असङ्ख्यम् (**अभि**) सर्वतः (**सीम्**) (**अयोधीत्**) योधयति (**दुर्वर्त्तुः**) यो दुःखेन वर्त्तते तस्य (**स्म**) अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**भवति**) (**भीमः**) बिभेति यस्मात्सः (**ऋञ्जन्**) विजयं प्रसाध्नुवन्॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः स्म भीम ऋञ्जन् भवति यो यदा सहस्रं सीमभ्ययोधीदस्य स्य दुर्वर्त्तुर्ऋघायत उताभियुजो द्योस्तन्यतोरिव सर्वे भयन्ते तदैव राजप्रतापः प्रवर्त्तते॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यो राजा विद्युद्वद् दुष्टान् हत्वा धार्मिकान् सत्करोति स एकोऽप्यसङ्ख्यैः सह योद्धुमर्हति यदाऽयं राजा न्यायेन प्रकटदण्डः स्यात्तदा सर्वे दुष्टा भीत्वा निलीयन्ते॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! [जो] (**स्म**) ही (**भीमः**) भयंकर (**ऋञ्जन्**) विजय को प्रसिद्ध करता हुआ (**भवति**) होता है जो (**यदा**) जब (**सहस्रम्**) सङ्ख्यारहित (**सीम्**) सब प्रकार (**अभि, अयोधीत्**) युद्ध करता है (**अस्य, स्म**) इसी (**दुर्वर्त्तुः**) दुःख से वर्त्तमान (**ऋघायतः**) हिंसा करते हुए (**उत**) और (**अभियुजः**) अभियोग करते हुए के समीप से (**द्योः**) प्रकाशमान (**तन्यतोरिव**) बिजुली के सदृश सब लोग (**भयन्ते**) भय करते हैं, तभी राजा का प्रताप प्रवृत्त होता है॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजा बिजुली के सदृश दुष्टों का नाश करके धार्मिकों का सत्कार करता है, वह एक भी संख्यारहित वीरों के साथ युद्ध करने योग्य होता है और जब वह राजा न्याय से प्रकट दण्ड देने वाला होवे, तब सब दुष्ट जन डर के छिप जाते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत स्मास्य पनयन्ति जना जूतिं कृष्टिप्रो अभिभूतिमाशोः।
उतैनमाहुः समिथे वियन्तः परा दधिक्रा असरत् सहस्रैः॥९॥

उत। स्म। अस्य। पनयन्ति। जनाः। जूतिम्। कृष्टिऽप्रः। अभिऽभूतिम्। आशोः। उत। एनम्। आहुः। सम्ऽइथे। विऽयन्तः। परा। दधिऽक्राः। असरत्। सहस्रैः॥९॥

पदार्थः-(**उत**) वितर्के (**स्म**) (**अस्य**) राज्ञः (**पनयन्ति**) व्यवहरन्ति स्तुवन्ति वा (**जनाः**) राजप्रजामनुष्याः (**जूतिम्**) न्यायवेगम् (**कृष्टिप्रः**) यः कृष्टीन् मनुष्यान् दूतचारैः प्राति तस्य (**अभिभूतिम्**) अभिभवं तिरस्कारम् (**आशोः**) सकलविद्याव्यापकस्य (**उत**) अपि (**एनम्**) (**आहुः**) कथयन्ति (**समिथे**)

सङ्ग्रामे **(वियन्तः)** विशेषेण प्राप्नुवन्तः **(परा)** **(दधिक्राः)** यो धारकैः सह क्रामति **(असरत्)** सरति गच्छति **(सहस्रैः)** असङ्ख्यैः॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! जना अस्य कृष्टिप्र आशोः सङ्ग्रामेऽभिभूतिं जूतिमुत पनयन्त्युतैनं समिथे वियन्त आहुर्यो दधिक्राः सहस्रैः परासरत् स स्म विजेतुं शक्नुयात्॥९॥

भावार्थः-तमेव राजानं विद्वांसः प्रशंसन्ति यः प्रजापालनतत्परः सन् सर्वान् व्यवहारयति॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(जनाः)** राजा और प्रजाजन **(अस्य)** इस **(कृष्टिप्रः)** मनुष्य को दूतचार अर्थात् गुप्त दूत आदि से पालना करने वाले **(आशोः)** सम्पूर्ण विद्याओं में व्याप्त राजा के सङ्ग्राम में **(अभिभूतिम्)** तिरस्कार और **(जूतिम्)** न्याय के वेग का **(उत)** तर्क-वितर्क के साथ **(पनयन्ति)** व्यवहार करते वा प्रशंसा करते हैं **(उत)** और भी **(एनम्)** इसको **(समिथे)** सङ्ग्राम में **(वियन्तः)** विशेष करके प्राप्त होते हुए **(आहुः)** कहते हैं और जो **(दधिक्राः)** धारण करने वालों के साथ चलने वाला **(सहस्रैः)** असङ्ख्यों के साथ **(परा, असरत्)** उत्कृष्ट चलता है **(स्म)** वही जीत सके॥९॥

भावार्थः-उसी राजा की विद्वान् जन प्रशंसा करते हैं, जो प्रजा के पालन में तत्पर हुआ सब के व्यवहारों को सिद्ध करता है॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ दधिक्राः शवसा पञ्च कृष्टीः सूर्यइव ज्योतिषापस्ततान।

सहस्रसाः शतसा वाज्यर्वा पृणक्तु मध्वा समिमा वचांसि॥१०॥१२॥

आ। दधिऽक्राः। शवसा। पञ्च। कृष्टीः। सूर्यःऽइव। ज्योतिषा। अपः। ततान। सहस्रऽसाः। शतऽसाः। वाजी। अर्वा। पृणक्तु। मध्वा। सम्। इमा। वचांसि॥१०॥

पदार्थः-**(आ)** **(दधिक्राः)** यो दधिभिर्धर्तृभिः क्रम्यते गम्यते सः **(शवसा)** बलेन **(पञ्च)** **(कृष्टीः)** मनुष्यान् **(सूर्य्यइव)** सवितेव **(ज्योतिषा)** प्रकाशेन **(अपः)** जलानि **(ततान)** विस्तृणोति **(सहस्रसाः)** यः सहस्राणि सनति विभजति सः **(शतसाः)** यः शतानि सनति सम्भजति **(वाजी)** वेगवान् **(अर्वा)** यः सद्यो मार्गान् गच्छति **(पृणक्तु)** स बध्नातु **(मध्वा)** क्षौद्रेण **(सम्)** **(इमा)** इमानि **(वचांसि)** वचनानि॥१०॥

अन्वयः-यो राजा शवसा सूर्य्यइव दधिक्राः पञ्च कृष्टी ज्योतिषा सूर्य्योऽप इवाऽऽततान सहस्रसाः शतसा वर्त्तमानोऽर्वा वाजी मध्वेमा वचांसि सम्पृणक्तु स एव राज्यं कर्त्तुमर्हति॥१०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यः सूर्य्यप्रकाश इव न्यायेन पञ्चविधाः प्रजाः पाति सोऽसङ्ख्यमानन्दमाप्नोति॥१०॥

अत्र राजधर्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टत्रिंशत्तमं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो राजा (**शवसा**) बल से (**सूर्य्यइव**) सूर्य्य के सदृश (**दधिक्राः**) धारण करने वालों से प्राप्त होने वाला (**पञ्च**) पांच (**कृष्टीः**) मनुष्यों को (**ज्योतिषा**) प्रकाश से सूर्य्य जैसे (**अपः**) जलों को वैसे (**आ, ततान**) विस्तृत करता है (**सहस्रसाः**) हजारों का विभाग करने वाला (**शतसाः**) और सैकड़ों का विभागकर्त्ता वर्त्तमान (**अर्वा**) शीघ्र मार्गों को जाने वाला (**वाजी**) वेगवान् (**मध्वा**) सहत [शहद] के साथ (**इमा**) इन (**वचांसि**) वचनों का (**सम्, पृणक्तु**) सम्बन्ध करे, वही राज्य करने के योग्य होता है॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो सूर्य्य के प्रकाश के सदृश न्याय से पांच प्रकार की प्रजाओं का पालन करता है, वह असंख्य आनन्द को प्राप्त होता है॥१०॥

इस सूक्त में राजा के धर्म का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह अड़तीसवां सूक्त और बारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षडर्चस्यैकोनचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। दधिक्रा देवताः। १, ३, ५ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ४ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ६ अनुष्टुप् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

अब छः ऋचा वाले उनतालीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में कैसा राजा हो, इस विषय को कहते हैं॥

आशुं दधिक्रां तमु नु ष्टवाम दिवस्पृथिव्या उत चर्किराम।
उच्छन्तीर्मामुषसः सूदयन्त्वति विश्वानि दुरितानि पर्षन्॥ १॥

आशुम्। दधिऽक्राम्। तम्। ऊम् इति। नु। स्तवाम। दिवः। पृथिव्याः। उत। चर्किराम। उच्छन्तीः। माम्। उषसः। सूदयन्तु। अति। विश्वानि। दुःऽइतानि। पर्षन्॥ १॥

पदार्थः-(**आशुम्**) सद्योगामिनम् (**दधिक्राम्**) धर्त्तव्यधरम् (**तम्**) (उ) (**नु**) (**स्तवाम**) प्रशंसेम (**दिवः**) प्रकाशस्य (**पृथिव्याः**) भूमेर्मध्ये (**उत**) (**चर्किराम**) भृशं विक्षेपयाम (**उच्छन्तीः**) सेवयन्तीः (**माम्**) (**उषसः**) प्रभातवेलाः (**सूदयन्तु**) क्षरयन्तु दूरीकुर्वन्तु (**अति**) (**विश्वानि**) समग्राणि (**दुरितानि**) दुःखानि दुष्टाचरणानि वा (**पर्षन्**) सिञ्चन्तु॥ १॥

अन्वयः-वयं दिवस्पृथिव्यास्तमाशुं दधिक्रां नु ष्टवामोत शत्रून् चर्किराम या मां पर्षंस्ता उच्छन्तीरुषसो विश्वानि दुरितान्यति सूदयन्तु॥ १॥

भावार्थः-यो राजास्मद् दुःखानि दूरे नीत्वोषा अन्धकारमिवाऽन्यायं दुष्टान्निषेधति तस्यैव वयं प्रशंसां कुर्य्याम॥ १॥

पदार्थः-हम लोग (**दिवः**) प्रकाश और (**पृथिव्याः**) भूमि के मध्य में (**तम्**) उस (**आशुम्**) शीघ्र चलने वाले (**दधिक्राम्**) धारण करने योग्य को धारण करने वाले की (**नु**) तर्क वितर्क के साथ (**स्तवाम**) प्रशंसा करें (**उत**) और शत्रुओं को (उ) भी (**चर्किराम**) निरन्तर फैकें और जो (**माम्**) मुझको (**पर्षन्**) सींचें उनकी (**उच्छन्तीः**) सेवा करती हुई (**उषसः**) प्रभात वेला (**विश्वानि**) सम्पूर्ण (**दुरितानि**) दुःखों वा दुष्टाचरणों को (**अति, सूदयन्तु**) अत्यन्त दूर करें॥ १॥

भावार्थः-जो राजा हम लोगों के दुःखों को दूर करके जैसे प्रातःकाल अन्धकार को वैसे अन्याय और दुष्टों का निषेध करता है, उसी की हम लोग प्रशंसा करें॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

महश्चर्कर्म्यर्वतः क्रतुप्रा दधिक्राव्णः पुरुवारस्य वृष्णः।

यं पूरुभ्यो दीदिवांसं नाग्निं दुदथुर्मित्रावरुणा ततुरिम्॥ २॥

महः। चर्कर्मि। अर्वतः। क्रतुऽप्राः। दधिऽक्राव्णः। पुरुऽवारस्य। वृष्णः। यम्। पूरुऽभ्यः। दीदिऽवांसम्। न। अग्निम्। दुदथुः। मित्रावरुणा। ततुरिम्॥ २॥

पदार्थः-(**महः**) महतः (**चर्कर्मि**) भृशं करोति (**अर्वतः**) अश्वानिव (**क्रतुप्राः**) ये प्रज्ञां पूरयन्ति ते (**दधिक्राव्णः**) यो विद्याधरान् कामयते तस्य (**पुरुवारस्य**) बहूत्तमजनस्वीकृतस्य (**वृष्णः**) सुखानां वर्षकस्य (**यम्**) (**पूरुभ्यः**) बहुभ्यः (**दीदिवांसम्**) देदीप्यमानम् (**न**) इव (**अग्निम्**) पावकम् (**ददथुः**) (**मित्रावरुणा**) प्राणोदानाविव वर्त्तमानौ सभासेनेशौ (**ततुरिम्**) त्वरमाणम्॥ २॥

अन्वयः-हे मित्रावरुणा! पूरुभ्यो यं ततुरिं दीदिवांसमग्निं न विनयं ददथुस्तस्य पुरुवारस्य दधिक्राव्णो वृष्णो ये क्रतुप्रास्तान् महोऽर्वतोऽहं कार्य्यं चर्कर्मि॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यो राजा प्रज्ञान् प्रज्ञाप्रदान् सदा धरति स सूर्य्य इव प्रतापी सन् सद्यः स्वकार्य्यं साद्धुं शक्नोति॥ २॥

पदार्थः-हे (**मित्रावरुणा**) प्राण और उदान वायु के सदृश वर्त्तमान सभा और सेना के ईश आप दो जन (**पूरुभ्यः**) बहुतों से (**यम्**) जिस (**ततुरिम्**) शीघ्रता करते हुए (**दीदिवांसम्**) प्रकाशमान (**अग्निम्**) अग्नि के (**न**) सदृश विनय को (**ददथुः**) देते हैं उस (**पुरुवारस्य**) बहुत श्रेष्ठ जनों से स्वीकार किय गये और (**दधिक्राव्णः**) विद्या की धारणा करने वालों की कामना करने और (**वृष्णः**) सुखों के वर्षाने वाले के जो (**क्रतुप्राः**) बुद्धि के पूर्ण करने वाले उन (**महः**) बड़े (**अर्वतः**) घोड़ों के सदृशों को और कार्य्य को मैं (**चर्कर्मि**) निरन्तर करता हूँ॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजा बुद्धि वाले और बुद्धि के देने वालों को सदा धारण करता है, वह सूर्य्य के सदृश प्रतापी होता हुआ शीघ्र अपने कार्य्य को सिद्ध कर सकता है॥ २॥

अथ प्रजाकृत्यमाह॥

अब प्रजाकृत्य को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यो अश्वस्य दधिक्राव्णो अकारीत् समिद्धे अग्ना उषसो व्युष्टौ।
अनागसं तमदितिः कृणोतु स मित्रेण वरुणेना सजोषाः॥ ३॥

यः। अश्वस्य। दधिऽक्राव्णः। अकारीत्। सम्ऽइद्धे। अग्नौ। उषसः। विऽउष्टौ। अनागसम्। तम्। अदितिः। कृणोतु। सः। मित्रेण। वरुणेन। सऽजोषाः॥ ३॥

पदार्थः-(**यः**) (**अश्वस्य**) महतो व्याप्तविद्यस्य (**दधिक्राव्णः**) धारकाणां क्रमयितुः (**अकारीत्**) करोति (**समिद्धे**) प्रदीप्ते (**अग्नौ**) विद्युद्रूपे पावके (**उषसः**) प्रभातस्य (**व्युष्टौ**) विविधरूपायां सेवायाम्

(अनागसम्) अनपराधम् **(तम्)** **(अदितिः)** माता पिता वा **(कृणोतु)** **(सः)** **(मित्रेण)** **(वरुणेन)** श्रेष्ठेन। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(सजोषाः)** समानप्रीतिसेवी॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो विद्वान् दधिक्राव्णोऽश्वस्योषसो व्युष्टौ समिद्धेऽग्नावनागसमकारीत् तमदितिरनागसं कृणोतु स च मित्रेण वरुणेन सजोषा भवेत्॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योग्नावबादीनां पदार्थानां संयोगं कर्त्तुं विजानीयात् यश्च सज्जनैः सह मित्रतां कृत्वा प्रातरुत्थाय सत्कर्माणि करोति स एव सदैव प्रसन्नो भवतीति विजानीत॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो विद्वान् **(दधिक्राव्णः)** धारण करने वालों को क्रमण कराने वाले **(अश्वस्य)** बड़े और विद्या में अर्थात् पदार्थविद्या के गुणों में व्याप्त **(उषसः)** प्रातःकाल की **(व्युष्टौ)** अनेक प्रकार की सेवा में और **(समिद्धे)** बहुत प्रदीप्त **(अग्नौ)** बिजुलीरूप अग्नि में **(अनागसम्)** अपराधरहित को **(अकारीत्)** करता है **(तम्)** उसको **(अदितिः)** माता व पिता निरपराध **(कृणोतु)** करे **(सः)** सो भी **(मित्रेण)** मित्र **(वरुणेन)** श्रेष्ठ के साथ **(सजोषाः)** तुल्य प्रीति सेवनेवाला हो॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो अग्नि में जल आदि पदार्थों के संयोग करने को जाने और जो सज्जनों के साथ मित्रता कर और प्रातःकाल उठ के श्रेष्ठ कर्मों को करता है, वही सदैव प्रसन्न होता है, यह जानो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दधिक्राव्ण इष ऊर्जो महो यदमन्महि मरुतां नाम भद्रम्।

स्वस्तये वरुणं मित्रमग्निं हवामह इन्द्रं वज्रबाहुम्॥४॥

दधिऽक्राव्णः। इषः। ऊर्जः। महः। यत्। अमन्महि। मरुताम्। नाम। भद्रम्। स्वस्तये। वरुणम्। मित्रम्। अग्निम्। हवामहे। इन्द्रम्। वज्रऽबाहुम्॥४॥

पदार्थः-**(दधिक्राव्णः)** धर्तॄणां प्रचालकस्य **(इषः)** अन्नादेः **(ऊर्जः)** पराक्रमस्य **(महः)** महत् **(यत्)** **(अमन्महि)** विजानीयाम **(मरुताम्)** मनुष्याणाम् **(नाम)** संज्ञाम् **(भद्रम्)** कल्याणकरम् **(स्वस्तये)** सुखाय **(वरुणम्)** जलमिव शान्त्यादिगुणम् **(मित्रम्)** प्राणवत्सर्वप्रियम् **(अग्निम्)** विद्युतमिव सकलगुणप्रकाशकम् **(हवामहे)** प्रशंसेमाऽऽदद्याम वा **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्य्यवन्तम् **(वज्रबाहुम्)** शस्त्रास्त्रभुजम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वयं स्वस्तये यन्महो दधिक्राव्ण इष ऊर्जो मरुतां च भद्रं नामाऽमन्महि। वरुणं मित्रमग्निं वज्रबाहुमिन्द्रं हवामहे तत्तं च यूयं ज्ञात्वाऽन्यान् प्रति प्रशंसत॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। येऽन्नादिसंस्कारभोजनसमयरीतीर्ज्ञात्वा स्वयमाचर्य्यान्यानुपदिशन्ति राजविरोधं कृत्वा प्रजया मित्रवदाचरन्ति त एव प्रशंसनीया भवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! हम लोग **(स्वस्तये)** सुख के लिये **(यत्)** जिस **(महः)** बड़ी **(दधिक्राव्णः)** धारण करने वालों के हिलाने वाले **(इषः)** अन्न आदि की **(ऊर्जः)** पराक्रम की **(मरुताम्)** और मनुष्यों के **(भद्रम्)** कल्याण करने वाली **(नाम)** संज्ञा को **(अमन्महि)** जानें। और **(वरुणम्)** जल के सदृश शान्ति आदि गुणों से युक्त **(मित्रम्)** प्राणों के सदृश सब के प्रिय **(अग्निम्)** बिजुली के सदृश सम्पूर्ण गुणों के प्रकाश करने वाले **(वज्रबाहुम्)** शस्त्र और अस्त्रों को सेवने वाले बाहुयुक्त **(इन्द्रम्)** अत्यन्त ऐश्वर्य्यवान् की **(हवामहे)** प्रशंसा करें वा ग्रहण करें, उस संज्ञा और ऐश्वर्य्यवान् को आप लोग जान के अन्यों के प्रति प्रशंसा करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो अन्न आदि संस्कार और भोजन के समय की रीतियों को जान और स्वयं आचरण करके अन्यों को उपदेश देते और राजा के साथ विरोध नहीं करके प्रजा के साथ मित्र के सदृश आचरण करते हैं, वे ही प्रशंसा करने योग्य होते हैं॥४॥

अथ राजप्रजाकृत्यमाह॥

अब राजप्रजाकृत्य को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रमिवेदुभये वि ह्वयन्त उदीराणा यज्ञमुपप्रयन्तः।

दधिक्रामु सूदनं मर्त्याय ददथुर्मित्रावरुणा नो अश्वम्॥५॥

इन्द्रम्ऽइव। इत्। उभये। वि। ह्वयन्ते। उत्ऽईराणाः। यज्ञम्। उपऽप्रयन्तः। दधिऽक्राम्। ऊम् इति। सूदनम्। मर्त्याय। ददथुः। मित्रावरुणा। नः। अश्वम्॥५॥

पदार्थः-**(इन्द्रमिव)** विद्युतमिव **(इत्)** एव **(उभये)** राजप्रजाजनाः **(वि)** विशेषेण **(ह्वयन्ते)** प्रशंसेयुः **(उदीराणाः)** उत्कृष्टतां प्राप्ताः **(यज्ञम्)** न्यायव्यवहारम् **(उपप्रयन्तः)** प्राप्नुवन्तः **(दधिक्राम्)** न्यायधर्त्तॄणां कामयितारम् **(उ)** **(सूदनम्)** क्षरणम् **(मर्त्याय)** **(ददथुः)** दद्यातम् **(मित्रावरुणा)** प्राणोदानवद् राजप्रधानामात्यौ **(नः)** अस्मभ्यम् **(अश्वम्)** आशु सुखकरं बोधम्॥५॥

अन्वयः-हे मित्रावरुणा! य उदीराणा यज्ञमुपप्रयन्त उभये मर्त्याय नोऽस्मभ्यं च दधिक्रां सूदनमश्वं च वि ह्वयन्ते तानुत्तमान् पदार्थान् युवां ददथुस्ताविन्द्रमिवेदु कृतज्ञौ स्याताम्॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये राजप्रजाजनाः पक्षपातरहितं न्याय्यं धर्ममाचरन्ति तेऽजातशत्रवस्सन्तः सर्वप्रिया भवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे **(मित्रावरुणा)** प्राण और उदान वायु के सदृश राजा के प्रधान और मन्त्री जो **(उदीराणाः)** उत्तमता को प्राप्त **(यज्ञम्)** न्याय व्यवहार को **(उपप्रयन्तः)** प्राप्त होते हुए **(उभये)** राजा और प्राजाजन **(मर्त्याय)** अन्य मनुष्य और **(नः)** हम लोगों के लिये **(दधिक्राम्)** न्याय धारण करने वालों

की कामना करने वाले **(सूदनम्)** जलादि बहने **(अश्वम्)** और शीघ्र सुख करने वाले बोध की **(वि)** विशेष करके **(ह्वयन्ते)** प्रशंसा करें और उन उत्तम पदार्थों को **(ददथुः)** तुम देओ वे आप **(इन्द्रमिव)** बिजुली के सदृश **(इत्, उ)** ही कृतज्ञ होओ॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजा और प्रजाजन पक्षपात से रहित, न्याययुक्त धर्म का आचरण करते हैं, वे शत्रुरहित हुए सब के प्रिय होते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः।

सुरभि नो मुखा करत् प्र ण आयूंषि तारिषत्॥६॥१३॥

दधिऽक्राव्णः। अकारिषम्। जिष्णोः। अश्वस्य। वाजिनः। सुरभि। नः। मुखा। करत्। प्र। नः। आयूंषि। तारिषत्॥६॥

पदार्थः-**(दधिक्राव्णः)** धर्मधरस्य क्रमयितुर्वा **(अकारिषम्)** कुर्य्याम् **(जिष्णोः)** जयशीलस्य **(अश्वस्य)** सकलशुभगुणव्याप्तस्य **(वाजिनः)** विज्ञानवतः **(सुरभि)** सुगन्धादिगुणयुक्तं द्रव्यम् **(नः)** अस्माकम् **(मुखा)** मुखेन सहचरितानि श्रोत्रादीनीन्द्रियाणि प्रति **(करत्)** कुर्य्यात् **(प्र)** **(नः)** अस्माकम् **(आयूंषि)** **(तारिषत्)** वर्द्धयेत्॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो नो मुखा सुरभि करन्न आयूंषि प्रतारिषत्तस्य दधिक्राव्णोऽश्वस्य वाजिनो जिष्णो राज्ञो यथाहमाज्ञामकारिषं तथैव यूयमपि कुरुत॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो राजा सुगन्धादियुक्तघृतादिहोमेन वायुवृष्टिजलादिं शोधयित्वा सर्वेषां रोगान्निवार्य्याऽऽयूंषि वर्धयति प्रयत्नेन सर्वाः प्रजाः पुत्रवत्पालयति च सोऽस्माभिः पितृवत्सत्कर्त्तव्योऽस्तीति॥६॥

अत्र राजप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इत्येकोनचत्वारिंशत्तमं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(नः)** हम लोगों के **(मुखा)** मुख के सहचरित श्रवण आदि इन्द्रियों के प्रति **(सुरभि)** सुगन्ध आदि गुणों से युक्त द्रव्य को **(करत्)** करे और **(नः)** हम लोगों की **(आयूंषि)** अवस्थाओं को **(प्र, तारिषत्)** बढ़ावे उस **(दधिक्राव्णः)** धर्म को धारण करने वा चलाने वाले **(अश्वस्य)** सम्पूर्ण उत्तम गुणों में व्याप्त **(वाजिनः)** विज्ञानवाले **(जिष्णोः)** जयशील राजा की जिस प्रकार मैं आज्ञा को **(अकारिषम्)** करूं, वैसे ही आप लोग भी करो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो राजा सुगन्ध आदि से युक्त घृत आदि के होम से वायु वृष्टि जलादि को पवित्र कर सब के रोगों का निवारण करके अवस्थाओं को बढ़ाता

है और प्रयत्न से सब प्रजाओं का पुत्र के सदृश पालन करता है, वह हम लोगों को पिता के सदृश सत्कार करने योग्य है॥६॥

इस सूक्त में राजा और प्रजा के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ संगति है, यह जानना चाहिये॥

यह उनतालीसवां सूक्त और तेरहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। १-४ दधिक्रावा। ५ सूर्य्यश्च देवताः। १ निचृत् त्रिष्टुप्। २ त्रिष्टुप्। ३ स्वराट् त्रिष्टुप्। ४ भुरिक्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ निचृत् जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ राजप्रजाकृत्यमाह॥

अब पांच ऋचा वाले चालीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा और प्रजा के कृत्य को कहते हैं॥

दधिक्राव्ण इदु नु चर्किराम विश्वा इन्मामुषसः सूदयन्तु।
अपामग्नेरुषसः सूर्यस्य बृहस्पतेराङ्गिरसस्य जिष्णोः॥१॥

दधिक्राऽव्णः। इत्। ऊम् इति। नु। चर्किराम। विश्वाः। इत्। माम्। उषसः। सूदयन्तु। अपाम्। अग्नेः। उषसः। सूर्यस्य। बृहस्पतेः। आङ्गिरसस्य। जिष्णोः॥१॥

पदार्थः-(**दधिक्राव्णः**) वाय्वादिकारणं क्रामयितुः (**इत्**) (**उ**) (**नु**) (**चर्किराम**) भृशं विक्षिपेम (**विश्वाः**) अखिलाः (**इत्**) (**माम्**) (**उषसः**) प्रभातवेलाः (**सूदयन्तु**) वर्षयन्तु वर्धयन्तु (**अपाम्**) जलानाम् (**अग्नेः**) विद्युतः (**उषसः**) (**सूर्य्यस्य**) सवितुः (**बृहस्पतेः**) बृहतां पालकस्य (**आङ्गिरसस्य**) अङ्गिरस्सु प्राणेषु भवस्य (**जिष्णोः**) जयशीलस्य॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा विश्वा उषसो दधिक्राव्ण आयुर्मा च सूदयन्तु तथेदु वयं सर्वाः प्रजाश्चर्किराम यथा विश्वा उषसोऽपामग्ने सूर्य्यस्य बृहस्पतेराङ्गिरसस्य जिष्णोर्जयशीलस्य राज्ञो दोषान् सूदयन्तु तथेदेव वयं सर्वाः प्रजाः सत्कर्मसु नु चर्किराम॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन् राजपुरुषा वा! यूयं यथा प्रातर्वेला सर्वान् चेतयति तथा न्यायेनाखिलाः प्रजाश्चेतयत यथोषसो निमित्तं सूर्यः सूर्य्यस्य निमित्तं विद्युद्विद्युतो निमित्तं वायुर्वायोः कारणं प्रकृतिः प्रकृतेरधिष्ठाता परमेश्वरोऽस्ति तथैव प्रजापालननिमित्तं भृत्या भृत्यनिमित्तमध्यक्षा अध्यक्षनिमित्तं प्रधानः प्रधाननिमित्तं राजा भवेत्॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**विश्वाः**) सम्पूर्ण (**उषसः**) प्रातर्वेला (**दधिक्राव्णः**) वायु आदि के कारण को चलाने वाले की अवस्था को और (**माम्**) मुझको (**सूदयन्तु**) वर्षावें बढ़ावें (**इत्, उ**) वैसे ही हम लोग सम्पूर्ण प्रजाओं को (**चर्किराम**) कार्य्यसंलग्न करावें और जैसे सम्पूर्ण (**उषसः**) प्रातःकाल (**अपाम्**) जलों (**अग्नेः**) बिजुली (**सूर्य्यस्य**) सूर्य्य (**बृहस्पतेः**) बड़ों के पालन करने वाले (**आङ्गिरसस्य**) प्राणों में उत्पन्न (**जिष्णोः**) और जयशील राजा के दोषों को प्रकट करें वैसे (**इत्**) ही हम लोग सब प्रजाओं को उत्तम कर्म्मों में (**नु**) शीघ्र संलग्न करावें॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन् वा राजपुरुषो! आप लोग जैसे प्रातर्वेला सब को चैतन्य करती है, वैसे न्याय से सम्पूर्ण प्रजाओं को चैतन्य करो और जैसे प्रातःकाल का

निमित्त सूर्य्य और सूर्य्य का निमित्त बिजुली, बिजुली का निमित्त वायु, वायु का कारण प्रकृति और प्रकृति का अधिष्ठाता परमेश्वर है, वैसे ही प्रजापालननिमित्त भृत्य, भृत्यनिमित्त अध्यक्ष, अध्यक्षों का निमित्त प्रधान और प्रधान का निमित्त राजा होवे॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सत्वा भरिषो गविषो दुवन्यसच्छ्रवस्यादिष उषसस्तुरण्यसत्।
सत्यो द्रवो द्रवरः पतङ्गरो दधिक्रावेषमूर्जं स्वर्जनत्॥२॥

सत्वा। भरिषः। गोऽइषः। दुवन्यऽसत्। श्रवस्यात्। इषः। उषसः। तुरण्यऽसत्। सत्यः। द्रवः। द्रवरः। पतङ्गरः। दधिऽक्रावा। इषम्। ऊर्जम्। स्वः। जनत्॥२॥

पदार्थः-(**सत्वा**) प्रापकः (**भरिषः**) धारणपोषणचतुरः (**गविषः**) गा इच्छन् (**दुवन्यसत्**) परिचरणमिच्छन् (**श्रवस्यात्**) आत्मनः श्रवणमिच्छेत् (**इषः**) इच्छाः (**उषसः**) प्रभातान् (**तुरण्यसत्**) आत्मनस्तुरणं त्वरणमिच्छन् (**सत्यः**) सत्सु साधुः (**द्रवः**) स्निग्धः (**द्रवरः**) यो द्रवे रमते द्रवान् ददाति वा (**पतङ्गरः**) यः पतङ्गेऽग्नौ रमते पतङ्गं ददाति वा (**दधिक्रावा**) धर्त्तव्ययानक्रमिता (**इषम्**) अन्नम् (**ऊर्जम्**) पराक्रमम् (**स्वः**) सुखम् (**जनत्**) जनयेत्॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः सत्वा भरिषो गविषो दुवन्यसदिष उषसस्तुरण्यसच्छ्रवस्याद्यः सत्यो द्रवो द्रवरः पतङ्गरो दधिक्रावेषमूर्जं स्वश्च जनत् स एव राजा युष्माभिः सत्कर्त्तव्योऽस्ति॥२॥

भावार्थः-प्रजाजनैर्यो राजा सत्यवादी जितेन्द्रियः सर्वेषां सुखमिच्छुर्न्यायकारी पितृवद्वर्त्तेत स एव प्रजाः पालयितुं शक्नोति॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**सत्वा**) प्राप्त करने वाला (**भरिषः**) धारण और पोषण में चतुर (**गविषः**) गौओं की और (**दुवन्यसत्**) सेवा की इच्छा करता हुआ तथा (**इषः**) इच्छाओं और (**उषसः**) प्रातःकालों को (**तुरण्यसत्**) अपनी शीघ्रता को चाहता हुआ (**श्रवस्यात्**) अपने श्रवण की इच्छा करे तथा जो (**सत्यः**) श्रेष्ठों में श्रेष्ठ (**द्रवः**) स्नेही (**द्रवरः**) द्रव में रमने वा द्रव अर्थात् गीले पदार्थों को देने और (**पतङ्गरः**) अग्नि में रमने वा अग्नि को देने वाला (**दधिक्रावा**) धारण करने योग्य वाहन पर जाता (**इषम्**) अन्न (**ऊर्जम्**) पराक्रम और (**स्वः**) सुख को (**जनत्**) उत्पन्न करे, वही राजा आप लोगों को सत्कार करने योग्य है॥२॥

भावार्थः-प्रजाजनों के साथ जो राजा सत्यवादी, जितेन्द्रिय, सब के सुख की इच्छा करता हुआ, न्यायकारी पिता के सदृश वर्ताव करे, वही प्रजाओं का पालन कर सकता है॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत स्मास्य द्रवतस्तुरण्यतः पर्णं न वेरनु वाति प्रगर्धिनः।

श्येनस्येव ध्रजतो अङ्कसं परि दधिक्राव्णः सहोर्जा तरित्रतः॥ ३॥

उत। स्म। अस्य। द्रवतः। तुरण्यतः। पर्णम्। न। वेः। अनु। वाति। प्रऽगर्धिनः। श्येनस्यऽइव। ध्रजतः। अङ्कसम्। परि। दधिऽक्राव्णः। सह। ऊर्जा। तरित्रतः॥ ३॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**स्म**) एव (**अस्य**) (**द्रवतः**) धावतः (**तुरण्यतः**) सद्यो गच्छतः (**पर्णम्**) प्रजापालनम् (**न**) इव (**वेः**) पक्षिणः (**अनु**) (**वाति**) अनुगच्छति (**प्रगर्धिनः**) प्रलुब्धस्य (**श्येनस्येव**) (**ध्रजतः**) वेगेन धावतः (**अङ्कसम्**) लक्षणम् (**परि**) सर्वतः (**दधिक्राव्णः**) धर्त्तृधरस्य वायोः (**सह**) (**ऊर्जा**) पराक्रमेण (**तरित्रतः**) अध्वनस्तरिता॥ ३॥

अन्वयः-यो जनोऽङ्कसं ध्रजतः प्रगर्धिनः श्येनस्येवोर्जा तरित्रतो दधिक्राव्णोऽस्योत द्रवतस्तुरण्यतः पर्णं न वेर्न राज्ञः पर्णं स्म पर्य्यनुवाति तेन सह सर्वेऽमात्या मन्त्रयन्तु॥ ३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यस्य राज्ञः श्येनेव सेना पराक्रमिणी वर्त्तते स तया प्रजापालनं कृत्वा दस्यून्निवारयेत्॥ ३॥

पदार्थः-जो जन (**अङ्कसम्**) लक्षण का (**ध्रजतः**) वेग से जाते हुए (**प्रगर्धिनः**) अत्यन्त लोभी (**श्येनस्येव**) वाज पक्षी के सदृश (**ऊर्जा**) पराक्रम से (**तरित्रतः**) मार्ग के पार उतारने और (**दधिक्राव्णः**) धारण करने वाले की धारणा करने वाले वायु (**अस्य, उत**) और इस (**द्रवतः**) दौड़ते तथा (**तुरण्यतः**) शीघ्र चलते हुए की (**पर्णम्**) प्रजापालना के (**न**) सदृश और (**वेः**) पक्षी के सदृश राजा की प्रजापालना के (**स्म**) ही (**परि**) सब प्रकार (**अनु, वाति**) पीछे चलता है उसके (**सह**) साथ मन्त्री जन सम्मति करें॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिस राजा की वाज पक्षिणी के सदृश सेना पराक्रम वाली है, वह उसके द्वारा प्रजा का पालन करके डाकू चोरों का निवारण करे॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत स्य वाजी क्षिपणिं तुरण्यति ग्रीवायां बद्धो अपिकक्ष आसनि।

क्रतुं दधिक्रा अनु संतवीत्वत् पथामङ्कांस्यन्वापनीफणत्॥ ४॥

उत। स्यः। वाजी। क्षिपणिम्। तुरण्यति। ग्रीवायाम्। बद्धः। अपिऽकक्षे। आसनि। क्रतुम्। दधिऽक्राः। अनु। सम्ऽतवीत्वत्। पथाम्। अङ्कांसि। अनु। आऽपनीफणत्॥ ४॥

पदार्थः-(**उत**) (**स्यः**) सः (**वाजी**) वेगवान् (**क्षिपणिम्**) शीघ्रकारिणम् (**तुरण्यति**) सद्यो गमयति (**ग्रीवायाम्**) कण्ठे (**बद्धः**) (**अपिकक्षे**) पार्श्वे (**आसनि**) मुखे (**क्रतुम्**) प्रज्ञां कर्म वा (**दधिक्राः**)

धर्त्तव्यानां धारकः **(अनु) (सन्तवीत्वत्)** बहुबलः सन् **(पथाम्)** मार्गाणाम् **(अङ्कांसि)** लक्षणानि चिह्नानि **(अनु) (आपनीफणत्)** अत्यन्तं गच्छति॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो वाजी ग्रीवायामपिकक्ष आसनि बद्धो दधिक्राः सन् क्षिपणिमनु तुरण्यत्युत सन्तवीत्वत् सन् पथामङ्कांसि क्रतुमन्वापनीफणत् स्य युष्माभिः कार्य्येषु नियोजनीयः॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा सर्वतोऽलङ्कृतो बन्धनेन सज्जोऽश्वः सद्यो गच्छति तथैवाग्न्यादिभिश्चालितेन यानेन सद्यो गच्छत॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(वाजी)** वेगयुक्त **(ग्रीवायाम्)** कण्ठ में **(अपिकक्षे)** कोख में **(आसनि)** मुख में **(बद्धः)** बंधा और **(दधिक्राः)** धारण करने योग्यों का धारण करने वाला हुआ **(क्षिपणिम्)** शीघ्र करने वाले को **(अनु, तुरण्यति)** शीघ्र चलाता है **(उत)** और **(सन्तवीत्वत्)** बहुत बलवान् होता हुआ **(पथाम्)** मार्गों के **(अङ्कांसि)** चिह्नों को **(क्रतुम्)** बुद्धि वा कर्म के **(अनु)** पीछे **(आपनीफणत्)** अत्यन्त प्राप्त होता है **(स्यः)** वह आप लोगों से कार्य्यों में नियुक्त करने योग्य है॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे सब प्रकार शोभित बन्धन से सन्नद्ध किया घोड़ा शीघ्र चलता है, वैसे ही अग्नि आदि से चलाये गये वाहन से शीघ्र जाओ॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

हंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत्।

नृषद्वरसदृतसद् व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम्॥५॥१४॥

हंसः। शुचिऽसत्। वसुः। अन्तरिक्षऽसत्। होता। वेदिऽसत्। अतिथिः। दुरोणऽसत्। नृऽसत्। वरऽसत्। ऋतऽसत्। व्योमऽसत्। अप्ऽजाः। गोऽजाः। ऋतऽजाः। अद्रिऽजाः। ऋतम्॥५॥

पदार्थः-**(हंसः)** यो हन्ति पापानि सः **(शुचिषत्)** यः शुचिषु पवित्रेषु सीदति **(वसुः)** यः शरीरादिषु वसति **(अन्तरिक्षसत्)** योऽन्तरिक्षे आकाशे वा सीदति **(होता)** दाता आदाता वा **(वेदिषत्)** यो वेद्यां सीदति **(अतिथिः)** अनियततिथिः **(दुरोणसत्)** यो दुरोणे गृहे सीदति **(नृषत्)** यो नरेषु सीदति **(वरसत्)** यो वरेषु श्रेष्ठेषु सीदति **(ऋतसत्)** यः सत्ये सीदति **(व्योमसत्)** यो व्योम्नि सीदति **(अब्जाः)** योऽद्भ्यो जातः **(गोजाः)** यो गोषु पृथिव्यादिषु जातः **(ऋतजाः)** यः सत्याज्जातः **(अद्रिजाः)** योऽद्रेर्मेघाज्जातः **(ऋतम्)**॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसन्नृषद्वरसद् व्योमसदृतसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा हंस ऋतमाचरति स एव जगदीश्वरप्रियो भवति॥५॥

भावार्थः-ये जीवाः शुभगुणकर्मस्वभावा ईश्वराज्ञानुकूला वर्त्तन्ते त एव परमेश्वरेण सहाऽऽनन्दं भुञ्जत इति॥५॥

अथ राजप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चत्वारिंशत्तमं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(शुचिषत्)** पवित्रों में स्थित होने **(वसुः)** शरीरादिकों में रहने **(अन्तरिक्षसत्)** अन्तरिक्ष वा आकाश में स्थित होने **(होता)** दान वा ग्रहण करने और **(वेदिषत्)** वेदी पर स्थित होने वाला **(अतिथिः)** जिसकी कोई तिथि नियत न हो वह **(दुरोणसत्)** गृह में **(नृषत्)** मनुष्यों में **(वरसत्)** श्रेष्ठों में **(व्योमसत्)** अन्तरिक्ष में **(ऋतसत्)** और सत्य में स्थित होने वाला **(अब्जाः)** जलों से उत्पन्न **(गोजाः)** वा पृथिवी आदिकों में उत्पन्न **(ऋतजाः)** तथा सत्य से और **(अद्रिजाः)** मेघों से उत्पन्न हुआ **(हंसः)** पापों को हन्ता है और **(ऋतम्)** सत्य का आचरण करता है, वही जगदीश्वर का प्रिय होता है॥५॥

भावार्थः-जो जीव उत्तम गुण, कर्म और स्वभाव वाले ईश्वर की आज्ञा के अनुकूल वर्त्ताव करते हैं, वे ही परमेश्वर के साथ आनन्द को भोगते हैं॥५॥

इस सूक्त में राजा और प्रजा के कृत्यों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह चालीसवां सूक्त और चौदहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्यैकाऽधिकचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रावरुणौ देवते। १, ५, ९, ११ त्रिष्टुप्। २, ४ निचृत् त्रिष्टुप्। ३, ६ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ७ पङ्क्तिः। ८, १० स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथाध्यापकोपदेशकविषयमाह॥

अब ग्यारह ऋचा वाले इकतालीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अध्यापक और उपदेशक के विषय को कहते हैं॥

इन्द्रा को वां वरुणा सुम्नमाप स्तोमो हविष्माँ अमृतो न होता।
यो वां हृदि क्रतुमाँ अस्मदुक्तः पस्पर्शदिन्द्रावरुणा नमस्वान्॥ १॥

इन्द्रा। कः। वाम्। वरुणा। सुम्नम्। आप। स्तोमः। हविष्मान्। अमृतः। न। होता। यः। वाम्। हृदि। क्रतुऽमान्। अस्मत्। उक्तः। पस्पर्शत्। इन्द्रावरुणा। नमस्वान्॥ १॥

पदार्थः-(**इन्द्रा**) परमैश्वर्य्ययुक्त (**कः**) (**वाम्**) युवाभ्याम् (**वरुणा**) श्रेष्ठाचारिन् (**सुम्नम्**) सुखम् (**आप**) प्राप्नुयात् (**स्तोमः**) प्रशंसा (**हविष्मान्**) बहुपदार्थहेतुः (**अमृतः**) नाशरहितः (**न**) इव (**होता**) दाता (**यः**) (**वाम्**) युवयोः (**हृदि**) (**क्रतुमान्**) बहुशुभप्रज्ञः (**अस्मत्**) (**उक्तः**) कथितः (**पस्पर्शत्**) (**इन्द्रावरुणा**) प्राणोदानवत् प्रियबलिनौ (**नमस्वान्**) बहूनि नमांस्यन्नादीनि सत्करणानि वा विद्यन्ते यस्य सः॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणाऽध्यापकोपदेशकौ! वां कः स्तोमः सुम्नं हविष्मानमृतो होता नाप। हे इन्द्रावरुणा! योऽस्मदुक्तो नमस्वान् क्रतुमान् वां हृदि पस्पर्शत्॥ १॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशकाः! ये होतृवत्पुरुषार्थिनो धीमन्तो नम्राः शान्ताः सत्कारिणो मातापितृभिः सुशिक्षिताः स्युस्तानध्याप्योपदिश्य श्रीमतः श्रेष्ठान् सम्पादयत॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्रा**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त (**वरुणा**) श्रेष्ठ आचरण करने वाले अध्यापक और उपदेशक जन! (**वाम्**) तुम दोनों से (**कः**) कौन (**स्तोमः**) प्रशंसा (**सुम्नम्**) सुख को (**हविष्मान्**) बहुत पदार्थों में कारण (**अमृतः**) नाश से रहित और (**होता**) दाता जन के (**न**) सदृश (**आप**) प्राप्त होवे। हे (**इन्द्रावरुणा**) प्राण और उदान वायु के सदृश प्रियबली जनो! (**यः**) जो (**अस्मत्**) हम लोगों से (**उक्तः**) कहा गया (**नमस्वान्**) बहुत अन्न आदि वा सत्करणों युक्त (**क्रतुमान्**) बहुत श्रेष्ठ बुद्धि वाला (**वाम्**) आप दोनों के (**हृदि**) हृदय में (**पस्पर्शत्**) स्पर्श करे॥ १॥

भावार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! जो दाता जन के सदृश पुरुषार्थी, बुद्धिमान्, नम्र, शान्त, सत्कार करने वाले और माता-पिता से उत्तम प्रकार शिक्षित होवें, उनको पढ़ा और उपदेश देकर लक्ष्मीयुक्त और श्रेष्ठ करो॥ १॥

अथ राजामात्यविषयमाह॥

अब राजा और अमात्य विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रा ह यो वरुणा चक्र आपी देवौ मर्तः सख्याय प्रयस्वान्।

स हन्ति वृत्रा समिथेषु शत्रूनवोभिर्वा महद्भिः स प्र शृण्वे॥ २॥

इन्द्रा। ह। यः। वरुणा। चक्रे। आपी इति। देवौ। मर्तः। सख्याय। प्रयस्वान्। सः। हन्ति। वृत्रा। सम्ऽइथेषु। शत्रून्। अवःऽभिः। वा। महत्ऽभिः। सः। प्र। शृण्वे॥ २॥

पदार्थः-(**इन्द्रा**) इन्द्र (**ह**) किल (**यः**) (**वरुणा**) श्रेष्ठः (**चक्रे**) (**आपी**) सकलविद्याः प्राप्तौ (**देवौ**) विद्वांसौ (**मर्त्तः**) मनुष्यः (**सख्याय**) सख्युर्भावाय (**प्रयस्वान्**) प्रयत्नवान् (**सः**) (**हन्ति**) (**वृत्रा**) वृत्राणि शत्रुसैन्यानि (**समिथेषु**) सङ्ग्रामेषु (**शत्रून्**) (**अवोभिः**) रक्षणादिभिः (**वा**) (**महद्भिः**) महाशयैः (**सः**) (**प्र**) (**शृण्वे**)॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्रा वरुणापी देवौ! युवयोर्यः प्रयस्वान् मर्त्तः सख्याय प्र चक्रे स हाऽवोभिस्स्स वा महद्भिः समिथेषु वृत्रा शत्रून् हन्ति तमहं कीर्तिमन्तं शृण्वे॥ २॥

भावार्थः-हे न्यायशीलौ राजामात्यौ! ये भवत्सत्कर्त्तारः शत्रूणां जेतारो महाशयास्सन्धयो भवत्सख्यप्रिया विजयिनो भवेयुस्तान् सत्कृत्य रक्षेतम्॥ २॥

पदार्थः-हे (**इन्द्रा**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त (**वरुणा**) उत्तम (**आपी**) सम्पूर्ण विद्याओं को प्राप्त (**देवौ**) विद्वान् जनो! आप लोगों के मध्य में (**यः**) (**प्रयस्वान्**) प्रयत्न करने वाला (**मर्त्तः**) मनुष्य (**सख्याय**) मित्रपन के लिये (**प्र, चक्रे**) उत्तमता करता है (**सः, ह**) वही (**अवोभिः**) रक्षण आदिकों के साथ (**वा**) वा (**सः**) वह (**महद्भिः**) महाशयों के साथ (**समिथेषु**) संग्रामों में (**वृत्रा**) शत्रुओं की सेनाओं और (**शत्रून्**) शत्रुओं का (**हन्ति**) नाश करता है, उसको मैं यशस्वी (**शृण्वे**) सुनता हूँ॥ २॥

भावार्थः-हे न्याय करने वाले राजा और मन्त्रीजनो! जो आप लोगों के सत्कार करने और शत्रुओं के जीतने वाले महाशय अर्थात् गम्भीर अभिप्राय वाले, मेलयुक्त, आप लोगों की मित्रता में प्रीतिकर्त्ता, विजयी होवें; उनका सत्कार करके रक्षा करो॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रा ह रत्नं वरुणा धेष्ठेत्था नृभ्यः शशमानेभ्यस्ता।

यदी सखाया सख्याय सोमैः सुतेभिः सुप्रयसा मादयैते॥ ३॥

इन्द्रा। ह। रत्नम्। वरुणा। धेष्ठा। इत्था। नृऽभ्यः। शशमानेभ्यः। ता। यदि। सखाया। सख्याय। सोमैः। सुतेभिः। सुऽप्रयसा। मादयैते। इति॥ ३॥

पदार्थः-(**इन्द्रा**) राजन् (**ह**) किल (**रत्नम्**) रमणीयं धनम् (**वरुणा**) शुभगुणयुक्तप्रधान (**धेष्ठा**) धातारौ (**इत्था**) एवं प्रकारेण (**नृभ्यः**) मनुष्येभ्यः (**शशमानेभ्यः**) प्रशंसमानेभ्यः (**ता**) तौ (**यदि**) अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**सखाया**) परस्परं सुहृदौ (**सख्याय**) सख्युर्भावाय (**सोमैः**) ऐश्वर्यैः (**सुतेभिः**) निष्पादितैः (**सुप्रयसा**) सुष्ठु प्रयत्नेन (**मादयैते**) सुखयेताम्॥३॥

अन्वयः-हे धेष्ठा इन्द्रावरुणा! यदि युवाभ्यां शशमानेभ्यो नृभ्यो ह रत्नं दत्तं तर्हि ता सखाया भवन्तौ सख्याय सुप्रयसा सुतेभिस्सोमैर्मादयैत इत्था युवामप्यानन्दितौ भवेथाम्॥३॥

भावार्थः-ये राजामात्याः शुभगुणानां जनानां धनादिना सत्कारं कुर्वन्ति त एवैश्वर्य्यं प्राप्य सदा मोदन्ते॥३॥

पदार्थः-हे (**धेष्ठा**) धाता जनो (**इन्द्रा**) राजन् (**वरुणा**) और उत्तम गुणों से युक्त प्रधान! (**यदी**) यदि जिन तुम दोनों ने (**शशमानेभ्यः**) प्रशंसा करते हुए (**नृभ्यः**) मनुष्यों के लिये (**ह**) ही (**रत्नम्**) सुन्दर धन दिया तो (**ता**) वे (**सखाया**) परस्पर मित्र आप दोनों (**सख्याय**) मित्रपन के लिये (**सुप्रयसा**) श्रेष्ठ प्रयत्न से (**सुतेभिः**) उत्पन्न किये गये (**सोमैः**) ऐश्वर्य्यों से (**मादयैते**) सुख को प्राप्त हों (**इत्था**) इस प्रकार से आप दोनों निश्चय आनन्दित हों॥३॥

भावार्थः-जो राजा और मन्त्रीजन उत्तम गुण वाले मनुष्यों का धन आदि से सत्कार करते हैं, वे ही ऐश्वर्य्य को प्राप्त होकर सदा आनन्दित होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रा युवं वरुणा दिद्युमस्मिन्नोजिष्ठमुग्रा नि वधिष्टं वज्रम्।

यो नो दुरेवो वृकतिर्दभीतिस्तस्मिन् मिमाथामभिभूत्योजः॥४॥

इन्द्रा। युवम्। वरुणा। दिद्युम्। अस्मिन्। ओजिष्ठम्। उग्रा। नि। वधिष्टम्। वज्रम्। यः। नः। दुःऽएवः। वृकतिः। दभीतिः। तस्मिन्। मिमाथाम्। अभिऽभूति। ओजः॥४॥

पदार्थः-(**इन्द्रा**) शत्रुविदारक राजन्! (**युवम्**) युवाम् (**वरुणा**) श्रेष्ठाऽमात्य (**दिद्युम्**) विद्यान्यायप्रकाशम् (**अस्मिन्**) (**ओजिष्ठम्**) अतिशयेन पराक्रमयुक्तम् (**उग्रा**) तेजस्विनी (**नि**) (**वधिष्टम्**) हन्यातम् (**वज्रम्**) (**यः**) (**नः**) अस्मान् (**दुरेवः**) दुःखेन प्राप्तुं योग्यः (**वृकतिः**) वृकवच्छत्रुहिंसकः (**दभीतिः**) हिंस्रः (**तस्मिन्**) (**मिमाथाम्**) रचयेतम् (**अभिभूति**) तिरस्कारकम् (**ओजः**) पराक्रमम्॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणोग्रा युवमस्मिन्नोजिष्ठं दिद्युं वज्रं गृहीत्वा शत्रून्नि वधिष्टं यो दुरेवो वृकतिर्दभीतिर्नोऽस्मभ्यमभिभूत्योजो तन् मिमाथां तस्मिन् विश्वासं कुर्य्यातम्॥४॥

भावार्थः-हे राजाऽमात्या! भवन्तो ब्रह्मचर्य्यविद्यासत्याचरणजितेन्द्रियत्वादिभिरतुलं बलं वर्द्धयित्वा शत्रून्निवार्य्य प्रजाः सम्पाल्य निष्कण्टकं राज्याऽऽनन्दं सततं भुञ्जाताम्॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्रा)** शत्रु के नाश करने वाले राजन् और **(वरुणा)** श्रेष्ठ मन्त्रीजन! **(उग्रा)** तेजस्वी **(युवम्)** आप दोनों **(अस्मिन्)** इस में **(ओजिष्ठम्)** अत्यन्त पराक्रमयुक्त **(दिद्युम्)** विद्या और न्याय के प्रकाशरूप **(वज्रम्)** वज्र को ग्रहण कर शत्रुओं का **(नि, वधिष्टम्)** निरन्तर नाश करो तथा **(यः)** जो **(दुरेवः)** दुःख से प्राप्त होने योग्य **(वृकतिः)** भेड़िये के सदृश शत्रुओं का नाश करने वाला **(दभीतिः)** हिंसक **(नः)** हम लोगों के लिये **(अभिभूति)** तिरस्कार करने वाला **(ओजः)** पराक्रम है उसको **(मिमाथाम्)** रचो और **(तस्मिन्)** उस में विश्वास को करो॥४॥

भावार्थः-हे राजा और मन्त्री जनो! आप ब्रह्मचर्य्य, विद्या, सत्याचरण और जितेन्द्रियत्वादि गुणों से अतुल बल को बढ़ाय के शत्रुओं का निवारण और प्रजाओं का अच्छे प्रकार पालन करके निष्कण्टक राज्यानन्द का निरन्तर भोग करें॥४॥

पुनरध्यापकोपदेशकविषयमाह॥

फिर अध्यापकोपदेशक विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रा युवं वरुणा भूतमस्या धियः प्रेतारा वृषभेव धेनोः।

सा नो दुहीयद्यवसेव गत्वी सहस्रधारा पयसा मही गौः॥५॥१५॥

इन्द्रा। युवम्। वरुणा। भूतम्। अस्याः। धियः। प्रेतारा। वृषभाऽइव। धेनोः। सा। नः। दुहीयत्। यवसाऽइव। गत्वी। सहस्रऽधारा। पयसा। मही। गौः॥५॥

पदार्थः-**(इन्द्रा)** विद्यैश्वर्य्ययुक्तौ **(युवम्)** युवाम् **(वरुणा)** प्रशंसितगुण **(भूतम्)** अतीतम् **(अस्याः)** **(धियः)** प्रज्ञायाः **(प्रेतारा)** प्राप्तारौ **(वृषभेव)** **(धेनोः)** **(सा)** **(नः)** अस्मान् **(दुहीयत्)** प्रपूरयेत् **(यवसेव)** बुसादिनेव **(गत्वी)** गत्वा प्राप्य **(सहस्रधारा)** सहस्राण्यसङ्ख्या धाराः प्रवाहा यस्या वाचः सा **(पयसा)** दुग्धादिना **(मही)** महती **(गौः)** गन्त्री॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणा प्रेतारा! युवमस्या धियो धेनोर्वृषभेव भूतं प्राप्नुतं यथा सा सहस्रधारा मही गौः पयसा यवसेव नोऽस्मान् गत्वी दुहीयत् तथा शुभगुणैः पूरयतम्॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे अध्यापकोपदेशका! भवन्तः सर्वेभ्यः ईदृशीं प्रज्ञां प्रयच्छेयुर्यथा सर्वेऽलङ्कामाः स्युः॥५॥

पदार्थः-हे **(इन्द्रा)** विद्या और ऐश्वर्य्य से युक्त **(वरुणा)** प्रशंसित गुणवान् **(प्रेतारा)** प्राप्त होने वाले! **(युवम्)** आप दोनों **(अस्याः)** इस **(धियः)** बुद्धि के **(धेनोः)** गौ के सम्बन्ध में **(वृषभेव)** बैल के सदृश **(भूतम्)** व्यतीत हुए विषय को प्राप्त होओ और जैसे **(सा)** वह **(सहस्रधारा)** असंख्य प्रवाह वाली वाणी **(मही)** बड़ी **(गौः)** चलने वाली गौ **(पयसा)** दुग्धादि से **(यवसेव)** भूसा आदि के सदृश **(नः)**

हम लोगों को **(गत्वी)** प्राप्त होकर **(दुहीयत्)** पूर्ण करे, वैसे श्रेष्ठ गुणों से पूर्ण करो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे अध्यापक और उपदेशक जनो! आप सब के लिये ऐसी बुद्धि देओ कि जिससे सब पूर्ण मनोरथ वाले होवें॥५॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राज विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तोके हिते तनय उर्वरासु सूरो दृशीके वृषणश्च पौंस्ये।

इन्द्रा नो अत्र वरुणा स्यातामवोभिर्दस्मा परितक्म्यायाम्॥६॥

तोके। हिते। तनये। उर्वरासु। सूरः। दृशीके। वृषणः। च। पौंस्ये। इन्द्रा। नः। अत्र। वरुणा। स्याताम्। अवःऽभिः। दस्मा। परिऽतक्म्यायाम्॥६॥

पदार्थः-**(तोके)** सद्यो जातेऽपत्ये **(हिते)** हितसाधके **(तनये)** कुमारे **(उर्वरासु)** भूमिषु **(सूरः)** सूर्य्यः **(दृशीके)** द्रष्टव्ये **(वृषणः)** बलिष्ठान् **(च)** **(पौंस्ये)** बले **(इन्द्रा)** ऐश्वर्य्यदातर्नृप **(नः)** अस्मान् **(अत्र)** अस्यां प्रजायाम् **(वरुणा)** श्रेष्ठसचिव **(स्याताम्)** **(अवोभिः)** रक्षणादिभिः **(दस्मा)** दुःखोपक्षयितारौ **(परितक्म्यायाम्)** परितस्तक्मानश्वो यस्यां तस्याम्॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्रा वरुणा! भवन्तावत्र परितक्म्यायां चोर्वरासु सूर इव हिते तोके तनये दृशीके पौंस्ये नो वृषणः कुर्वातामवोभिर्दस्मा स्याताम्॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। राजपुरुषा ब्रह्माण्डे सूर्य्य इव प्रजासु पितृवद्वर्त्तित्वा चोरान् निवार्य्य न्यायेन प्रजाः पालयेयुः॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्रा)** ऐश्वर्य्य के देने वाले राजन् **(वरुणा)** श्रेष्ठ मन्त्री! आप दोनों **(अत्र)** इस प्रजा में **(परितक्म्यायाम्)** सब ओर से घोड़ा जिसमें उस राज्य में **(च)** और **(उर्वरासु)** भूमियों में **(सूरः)** सूर्य्य के सदृश **(हिते)** हित के सिद्ध करने वाले **(तोके)** शीघ्र उत्पन्न हुए पुत्र **(तनये)** कुमार **(दृशीके)** और देखने योग्य **(पौंस्ये)** पुरुषार्थ के निमित्त **(नः)** हम लोगों को **(वृषणः)** बलयुक्त करें तथा **(अवोभिः)** रक्षा आदि से **(दस्मा)** दुःख के नाश करने वाले **(स्याताम्)** होवें॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। राजपुरुष जैसे ब्रह्माण्ड में सूर्य्य, वैसे प्रजाओं में पिता के सदृश वर्त्ताव कर और चोरों का निवारण करके न्याय से प्रजाओं का पालन करें॥६॥

अथ प्रजाविषयमाह॥

अब प्रजा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

युवामिद्ध्यवसे पूर्व्याय परि प्रभूती गविषः स्वापी।

वृणीमहे सख्याय प्रियाय शूरा मंहिष्ठा पितरेव शम्भू॥७॥

युवाम्। इत्। हि। अवसे। पूर्व्याय। परि। प्रभूती इति प्रऽभूती। गोऽइषः। स्वापी इति सुऽआपी। वृणीमहे। सख्याय। प्रियाय। शूरा। मंहिष्ठा। पितराऽइव। शम्भू इति शम्ऽभू॥७॥

पदार्थः-(**युवाम्**) (**इत्**) एव (**हि**) निश्चये (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**पूर्व्याय**) पूर्वै राजभिः कृताय (**परि**) (**प्रभूती**) समर्थौ (**गविषः**) गवामिच्छोः (**स्वापी**) शयानौ (**वृणीमहे**) स्वीकुर्महे (**सख्याय**) मित्रत्वाय (**प्रियाय**) कमनीयाय (**शूरा**) निर्भयौ शत्रुहिंसकौ (**मंहिष्ठा**) अतिशयेन सत्कर्त्तव्यौ (**पितरेव**) यथा जनकजनन्यौ (**शम्भू**) शं सुखं भावुकौ॥७॥

अन्वयः-हे राजाऽमात्यौ! युवां हि पूर्व्यायावसे इत्प्रभूती स्वापी शूरा मंहिष्ठा पितरेव शम्भू प्रियाय सख्याय गविषो वयं परि वृणीमहे तस्माद्युवामस्माकं पालकौ सततं भवेतम्॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे प्रजाजना भवन्तस्तानेव राजादीन् स्वीकुर्वन्तु ये पितृवत्सर्वान् पालयितुं समर्थाः स्युः॥७॥

पदार्थः-हे राजा और मन्त्रीजनो! (**युवाम्**) तुम दोनों (**हि**) ही को (**पूर्व्याय**) पूर्व राजाओं ने किये (**अवसे**) रक्षण आदि के लिये (**इत्**) ही (**प्रभूती**) समर्थ (**स्वापी**) शयन करते हुए (**शूरा**) भयरहित और शत्रुओं के नाश करने वाले (**मंहिष्ठा**) अत्यन्त सत्कार करने योग्य (**पितरेव**) जैसे पिता और माता, वैसे (**शम्भू**) सुख को हुवानेवाले **[=करनेवाले]** (**प्रियाय**) सुन्दर (**सख्याय**) मित्रपन के लिये (**गविषः**) गौओं की इच्छा करने वाले का हम लोग (**परि, वृणीमहे**) स्वीकार करते हैं, इससे आप दोनों हम लोगों के पालन करनेवाले निरन्तर होवें॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे प्रजाजनो! आप लोग उन्हीं राजा आदिकों को स्वीकार करो कि जो पिता के सदृश सब लोगों के पालन करने को समर्थ होवें॥७॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ता वां धियोऽवसे वाजयन्तीराजिं न जग्मुर्युवयूः सुदानू।

श्रिये न गाव उप सोममस्थुरिन्द्रं गिरो वरुणं मे मनीषाः॥८॥

ताः। वाम्। धियः। अवसे। वाजऽयन्तीः। आजिम्। न। जग्मुः। युवऽयूः। सुदानू इति सुऽदानू। श्रिये। न। गावः। उप। सोमम्। अस्थुः। इन्द्रम्। गिरः। वरुणम्। मे। मनीषाः॥८॥

पदार्थः-(**ताः**) (**वाम्**) युवयोः (**धियः**) प्रज्ञाः कर्माणि वा (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**वाजयन्तीः**) ज्ञापयन्त्यः (**आजिम्**) सङ्ग्रामम् (**न**) इव (**जग्मुः**) प्राप्नुयुः (**युवयूः**) युवां कामयमानाः (**सुदानू**) सुष्ठु दातारौ (**श्रिये**) धनाय (**न**) इव (**गावः**) पृथिव्यो धेनवो वा (**उप**) (**सोमम्**) ऐश्वर्य्यम् (**अस्थुः**) प्राप्नुवन्तु

(इन्द्रम्) परमसुखकारकम् **(गिरः)** सुशिक्षिता वाण्यः **(वरुणम्)** श्रेष्ठं जनम् **(मे)** मम **(मनीषाः)** प्रज्ञाः॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा मे गिरो मनीषाश्च श्रिये गावो न सोममिन्द्रं वरुणमुपास्थुस्तथैव या वां धियोऽवसे वाजयन्तीराजिं न सुदानू युवयूः प्रजा जग्मुस्ता युवां सततं पालयत॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा विदुष्यो मातरः स्वापत्यानि सुशिक्ष्य सम्पाल्य विद्यायुक्तानि कृत्वा सुखयन्ति तथैव राजा प्रजाः प्रति वर्त्तेत॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(मे)** मेरी **(गिरः)** उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियाँ और **(मनीषाः)** बुद्धियाँ **(श्रिये)** धन के लिये **(गावः)** पृथिवी वा गौओं के **(न)** सदृश **(सोमम्)** ऐश्वर्य्य **(इन्द्रम्)** अत्यन्त सुख करने वाले **(वरुणम्)** श्रेष्ठ जन के **(उप, अस्थुः)** समीप प्राप्त होवें, वैसे ही जो **(वाम्)** आप दोनों की **(धियः)** बुद्धियाँ वा कर्म **(अवसे)** रक्षण आदि के लिये **(वाजयन्तीः)** जनाती हुई **(आजिम्)** संग्राम के **(न)** सदृश **(सुदानू)** उत्तम प्रकार दाता जनों को और **(युवयूः)** आप दोनों की कामना करते हुए प्रजाजनों को **(जग्मुः)** प्राप्त होवें **(ता)** उनका आप दोनों निरन्तर पालन करो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे विद्या वाली माता अपने सन्तानों को उत्तम प्रकार शिक्षा दे पालन कर और विद्या से युक्त करके सुखी करती है, वैसे ही राजा प्रजा के प्रति वर्त्ताव करे॥८॥

अथ राजप्रजाकृत्यमाह॥

अब राजा और प्रजा के कर्त्तव्य विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इ॒मा इन्द्रं॒ वरु॑णं मे मनी॒षा अग्म॒न्नुप॒ द्रवि॑णमि॒च्छमा॑नाः।

उपे॑मस्थुर्जो॒ष्टार॑इव॒ वस्वो॑ र॒घ्वीरि॑व॒ श्रव॑सो॒ भिक्ष॑माणाः॥९॥

इ॒माः। इन्द्र॑म्। वरु॑णम्। मे॒। म॒नी॒षाः। अग्म॑न्। उप॑। द्रवि॑णम्। इ॒च्छमा॑नाः। उप॑। ई॒म्। अ॒स्थुः। जो॒ष्टार॑ःऽइव। वस्वः॑। र॒घ्वीःऽइ॑व। श्रव॑सः। भिक्ष॑माणाः॥९॥

पदार्थः-**(इमाः)** प्रत्यक्षाः **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्य्यम् **(वरुणम्)** श्रेष्ठं स्वभावम् **(मे)** मम **(मनीषाः)** **(अग्मन्)** प्राप्नुवन्तु **(उप)** **(द्रविणम्)** धनं यशो वा **(इच्छमानाः)** **(उप)** **(ईम्)** **(अस्थुः)** तिष्ठन्ति **(जोष्टारइव)** सेवमाना इव **(वस्वः)** धनस्य **(रघ्वीरिव)** लघ्व्यो ब्रह्मचारिण्य इव **(श्रवसः)** अन्नस्य **(भिक्षमाणाः)** याचमानाः॥९॥

अन्वयः-हे राजन्! या इमाः कुमार्यो ब्रह्मचारिण्यो मे मनीषा इवेन्द्रं द्रविणं वरुणमिच्छमाना अध्यापिका अग्मन् जोष्टारइव वस्व उपास्थुरीं श्रवसो रघ्वीरिव भिक्षमाणा अध्यापिका उप तस्थुस्ता एव प्रवरा जायन्ते॥९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन्! यथा कन्या ब्रह्मचर्य्येण गृहीताभ्यां विद्यासुशिक्षाभ्यां यशस्विन्यो विदुष्यो भूत्वा स्वसदृशान् पतीन् प्राप्य सदाऽऽनन्दन्ति तथैव प्रजाभिः सह भवान् भवता सह प्रजाः सततमानन्दन्तु॥९॥

पदार्थः-हे राजन्! जो **(इमाः)** ये प्रत्यक्ष कुमारी ब्रह्मचारिणियाँ **(मे)** मेरी **(मनीषाः)** बुद्धियों के सदृश **(इन्द्रम्)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य **(द्रविणम्)** धन वा यश और **(वरुणम्)** श्रेष्ठ स्वभाव की **(इच्छमानाः)** इच्छा करती हुई पढ़ानेवालियों को **(अग्मन्)** प्राप्त होवें और **(जोष्टारइव)** सेवा करते हुए पुरुषों के समान **(वस्वः)** धन के **(उप, अस्थुः)** समीप स्थित होती **(ईम्)** और प्रत्यक्ष **(श्रवसः)** अन्न की **(रघ्वीरिव)** छोटी ब्रह्मचारिणियों के सदृश **(भिक्षमाणाः)** याचना करती हुई पढ़ाने वाली स्त्रियों के **(उप)** समीप स्थित हुई वे ही कन्या अत्यन्त श्रेष्ठ होती हैं॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! जैसे कन्याजन ब्रह्मचर्य्य से ग्रहण की गई विद्या और उत्तम शिक्षा से यशयुक्त और विद्या वाली होकर अपने अनुकूल पतियों को प्राप्त होकर सदा आनन्दित होती हैं, वैसे ही प्रजाओं के साथ आप और आपके साथ प्रजाजन निरन्तर आनन्द करें॥९॥

अथ प्रजाविषयमाह॥

अब प्रजा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अश्व्य॑स्य त्मना॒ रथ्य॑स्य पु॒ष्टेर्नित्य॑स्य रा॒यः पत॑यः स्याम।

ता च॑क्रा॒णा ऊ॒तिभि॒र्नव्य॑सीभिरस्म॒त्रा रायो॑ नि॒युतः॑ सचन्ताम्॥१०॥

अश्व्य॑स्य। त्मना॑। रथ्य॑स्य। पु॒ष्टेः। नित्य॑स्य। रा॒यः। पत॑यः। स्या॒म॒। ता। च॒क्रा॒णौ। ऊ॒तिऽभिः॑। नव्य॑सीभिः। अ॒स्म॒ऽत्रा। राय॑ः। नि॒ऽयुतः॑। स॒च॒न्ता॒म्॥१०॥

पदार्थः-**(अश्व्यस्य)** अश्वेष्वाशुगामिषु भवस्य **(त्मना)** आत्मना **(रथ्यस्य)** रथेषु रमणीयेषु साधोः **(पुष्टेः)** **(नित्यस्य)** **(रायः)** धनस्य **(पतयः)** स्वामिनः **(स्याम)** **(ता)** तौ **(चक्राणौ)** कुर्वन्तौ **(ऊतिभिः)** रक्षादिभिः **(नव्यसीभिः)** **(अस्मत्रा)** अस्मासु वर्त्तमानस्य **(रायः)** **(नियुतः)** निश्चययुक्ताः **(सचन्ताम्)** सम्बध्नन्तु॥१०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा ता चक्राणौ नव्यसीभिरूतिभिरस्मत्रा रायः सम्बन्धं प्राप्नुयातां नियुतश्च सचन्तां तथा वयं त्मना स्वस्याश्व्यस्य रथ्यस्य पुष्टेर्नित्यस्य रायः पतयः स्याम॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्यथा युक्ताः पुरुषाः सर्वैश्वर्य्यमाप्नुवन्ति तथैव वयं सर्वाऽऽनन्दं प्राप्नुयामेतीच्छा कार्य्या॥१०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(ता)** वे **(चक्राणौ)** करते हुए दो जन **(नव्यसीभिः)** नवीन **(ऊतिभिः)** रक्षा आदि कर्मों से **(अस्मत्रा)** हम लोगों में वर्त्तमान **(रायः)** धन के सम्बन्ध को प्राप्त होवें और **(नियुतः)** निश्चययुक्त पदार्थ **(सचन्ताम्)** सम्बद्ध होवें, वैसे हम लोग **(त्मना)** आत्मा से अपने

(अश्व्यस्य) शीघ्र चलने वालों में उत्पन्न हुए **(रथ्यस्य)** रमण करने योग्य वाहनों में श्रेष्ठ **(पुष्टेः)** पुष्टि के सम्बन्ध में **(नित्यस्य)** नित्य वर्त्तमान **(रायः)** धन के **(पतयः)** स्वामी **(स्याम)** होवें॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि जैसे युक्त अर्थात् कार्य में लगे हुए पुरुष सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य को प्राप्त होते हैं, वैसे हम लोग सम्पूर्ण आनन्द को प्राप्त होवें, ऐसी इच्छा करें॥१०॥

पुना राजप्रजाविषयमाह॥

फिर राजप्रजाविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ नो बृहन्ता बृहतीभिरूती इन्द्र यातं वरुण वाजसातौ।

यद् दिद्यवः पृतनासु प्रक्रीळान् तस्य वां स्याम सनितार आजेः॥११॥१६॥

आ। नः। बृहन्ता। बृहतीभिः। ऊती। इन्द्र। यातम्। वरुण। वाजऽसातौ। यत्। दिद्यवः। पृतनासु। प्रऽक्रीळान्। तस्य। वाम्। स्याम। सनितारः। आजेः॥११॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(नः)** अस्मान् **(बृहन्ता)** सद्गुणैर्महान्तौ **(बृहतीभिः)** महतीभिः **(ऊती)** रक्षाभिः। अत्र **सुपां सुलुगि**ति भिसो लुक्। **(इन्द्र)** दुष्टदलक राजन् **(यातम्)** प्राप्नुतम् **(वरुण)** सेनेश **(वाजसातौ)** सङ्ग्रामे **(यत्)** ये **(दिद्यवः)** विद्याविनयाभ्यां प्रकाशमानास्तेजस्विनः **(पृतनासु)** सेनासु **(प्रक्रीळान्)** प्रकृष्टान् विहारान् **(तस्य)** **(वाम्)** युवाभ्याम् **(स्याम)** **(सनितारः)** विभक्तारः **(आजेः)** सङ्ग्रामस्य॥११॥

अन्वयः-हे इन्द्र वरुण! बृहन्ता युवां बृहतीभिरूती वाजसातौ न आ यातम्। यद्ये दिद्यवस्तस्याजेः सनितारो वयं पृतनासु प्रक्रीळान् प्राप्य वां क्रीडां प्राप्ताः स्याम तानस्मान् युवां सत्कुर्य्यातम्॥११॥

भावार्थः-हे राजन्! यथा वयं भवतः प्रति प्रीत्या वर्त्तेमहि तथैव भवताप्यस्मासु वर्त्तितव्यमिति॥११॥

अत्राध्यापकोपदेशकराजप्रजापत्यकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकचत्वारिंशत्तमं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** दुष्टों के दलन करने वाले राजन् और **(वरुण)** सेना के ईश! **(बृहन्ता)** श्रेष्ठ गुणों से बड़े आप दोनों **(बृहतीभिः)** बड़ी **(ऊती)** रक्षा आदिकों से **(वाजसातौ)** सङ्ग्राम में **(नः)** हम लोगों को **(आ)** सब ओर से **(यातम्)** प्राप्त हूजिये **(यत्)** जो **(दिद्यवः)** विद्या और विनय से प्रकाशमान तेजस्वी **(तस्य)** उस **(आजेः)** सङ्ग्राम के **(सनितारः)** विभाग करने वाले हम **(पृतनासु)** सेनाओं में **(प्रक्रीळान्)** उत्तम क्रीड़ा अर्थात् विहारों को प्राप्त होकर **(वाम्)** आप दोनों से विहार को प्राप्त हुए **(स्याम)** होवें, उन हम लोगों का आप दोनों सत्कार करें॥११॥

भावार्थः-हे राजन्! जैसे हम लोग आपके प्रति प्रीति से वर्त्ताव करें, वैसा ही आपको भी चाहिये

कि हम लोगों में वर्त्ताव करें॥११॥

इस सूक्त में अध्यापक, उपदेशक, राजा, प्रजा और मन्त्री के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इकतालीसवां सूक्त और सोलहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ दशर्चस्य द्विचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य। १-१० त्रसदस्युः पौरुकुत्स्य ऋषिः। १-६ आत्मा। ७-१० इन्द्रावरुणौ देवते। १-६,९ निचृत्त्रिष्टुप्। ७ विराट् त्रिष्टुप्। ८ भुरिक् त्रिष्टुप्। १० त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ राजविषयमाह॥

अब दश ऋचावाले बयालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजविषय को कहते हैं॥

मम॑ द्वि॒ता रा॒ष्ट्रं क्ष॒त्रिय॑स्य वि॒श्वायो॒र्विश्वे॑ अ॒मृता॒ यथा॑ नः।

क्रतुं॑ सचन्ते॒ वरु॑णस्य दे॒वा राजा॑मि कृ॒ष्टेरु॑प॒मस्य॑ व॒व्रेः॥१॥

मम॑। द्वि॒ता। रा॒ष्ट्रम्। क्ष॒त्रिय॑स्य। वि॒श्वऽआ॑योः। विश्वे॑। अ॒मृता॑ः। यथा॑। नः॒। क्रतु॑म्। स॒च॒न्ते॒। वरु॑णस्य। दे॒वाः। राजा॑मि। कृ॒ष्टेः। उ॒प॒ऽमस्य॑। व॒व्रेः॥१॥

पदार्थः-(**मम**) (**द्विता**) द्वयोर्भावः (**राष्ट्रम्**) (**क्षत्रियस्य**) (**विश्वायोः**) विश्वं पूर्णमायुर्यस्य तस्य (**विश्वे**) सर्वे (**अमृताः**) नाशरहिताः (**यथा**) (**नः**) अस्माकम् (**क्रतुम्**) प्रज्ञाम् (**सचन्ते**) सम्बध्नन्ति (**वरुणस्य**) श्रेष्ठस्य (**देवाः**) देदीप्यमानाः (**राजामि**) (**कृष्टेः**) कृष्टस्य (**उपमस्य**) उपमा विद्यते यस्य तस्य (**वव्रेः**) स्वीकर्तुः॥१॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा मम विश्वायोः क्षत्रियस्य द्विता विश्व अमृता नो राष्ट्रं क्रतुञ्च सचन्ते वरुणस्य कृष्टेरुपमस्य वव्रेर्मम क्रतुं देवाः सचन्ते तथैवैतेष्वहं राजामि॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! अस्मिञ्जगति स्वामी स्वं वा द्वावेव पदार्थौ वर्त्तेते यत्र दीर्घजीविनो न्यायशीलवृत्ता धार्मिका अमात्याः सर्वतो गुणग्राहकाः श्रेष्ठोपमा वर्त्तन्ते तत्रैव निवसन्त्सज्जनः सुखमत्यन्तमश्नुते॥१॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**यथा**) जैसे (**मम**) मुझ (**विश्वायोः**) पूर्ण अवस्था वाले (**क्षत्रियस्य**) क्षत्रिय के (**द्विता**) दो का होना तथा (**विश्वे**) सम्पूर्ण (**अमृताः**) नाश से रहित जन (**नः**) हम लोगों के (**राष्ट्रम्**) राज्य (**क्रतुम्**) और बुद्धि को (**सचन्ते**) संबन्धयुक्त करते हैं और (**वरुणस्य**) श्रेष्ठ (**कृष्टेः**) खींचते हुए (**उपमस्य**) उपमायुक्त (**वव्रेः**) स्वीकार करनेवाले मुझ जन की बुद्धि को (**देवाः**) प्रकाशमान जन मेलते हैं, वैसे ही इन में मैं (**राजामि**) शोभित होता हूँ॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! इस संसार में स्वामी और स्वम् अर्थात् अपना ये दो ही पदार्थ वर्त्तमान हैं और जिस देश में दीर्घकालपर्य्यन्त जीवने और न्याययुक्त स्वभाव वाले धार्मिक मन्त्री जन सब प्रकार के गुणग्रहणकर्त्ता श्रेष्ठ उपमा से युक्त वर्त्तमान हैं, वहाँ ही रहता हुआ सज्जन सुख का अत्यन्त भोग करता है॥१॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वरविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अहं राजा वरुणो मह्यं तान्यसुर्याणि प्रथमा धारयन्त।

क्रतुं सचन्ते वरुणस्य देवा राजामि कृष्टेरुपमस्य वव्रेः॥२॥

अहम्। राजा। वरुणः। मह्यम्। तानि। असुर्याणि। प्रथमा। धारयन्त। क्रतुम्। सचन्ते। वरुणस्य। देवाः। राजामि। कृष्टेः। उपऽमस्य। वव्रेः॥२॥

पदार्थः-(अहम्) जगदीश्वरः **(राजा)** प्रकाशमानः **(वरुणः)** सर्वोत्तमप्रबन्धकर्त्ता **(मह्यम्) (तानि) (असुर्य्याणि)** असुराणां मेघादीनामिमानि चिह्नानि **(प्रथमा)** आदिमानि **(धारयन्त)** धरन्ति **(क्रतुम्)** प्रज्ञाम् **(सचन्ते)** प्राप्नुवन्ति **(वरुणस्य)** सम्बन्धस्योत्तमस्य **(देवाः)** विद्वांसः **(राजामि)** प्रकाशे **(कृष्टेः)** मनुष्यस्य **(उपमस्य)** उपमायुक्तस्य **(वव्रेः)** स्वीकर्त्तव्यस्य॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा यो वरुणो राजाऽहं वरुणस्य वव्रेः कृष्टेरुपमस्य जगतो मध्ये राजामि तस्मै मह्यं देवाः प्रीणन्ति यानि प्रथमाऽसुर्य्याणि तानि धारयन्त क्रतुं सचन्ते तथा यूयमप्याचरत॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सर्वत्र व्याप्तं बुद्धिधनप्रदं जगतः स्वामिनं मां परमात्मानं भजन्ते ते सर्वाणि भजन्ते॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे जो **(वरुणः)** सम्पूर्ण उत्तम प्रबन्धों का कर्त्ता **(राजा)** प्रकाशमान **(अहम्)** मैं जगदीश्वर **(वरुणस्य)** उत्तम सम्बन्ध में और **(वव्रेः)** स्वीकार करने योग्य **(कृष्टेः)** मनुष्य के सम्बन्ध में तथा **(उपमस्य)** उपमायुक्त जगत् के बीच में **(राजामि)** प्रकाशित होता हूँ उस **(मह्यम्)** मेरे लिये **(देवाः)** विद्वान् जन तृप्त होते हैं तथा जो **(प्रथमा)** आदि से वर्त्तमान **(असुर्य्याणि)** मेघादिकों के चिह्न **(तानि)** उनको **(धारयन्त)** धारण करते हैं और **(क्रतुम्)** बुद्धि को **(सचन्ते)** प्राप्त होते हैं, वैसे तुम लोग भी आचरण करो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य सर्वत्र व्याप्त, बुद्धि और धन के देने वाले जगत् के स्वामी मुझ परमात्मा को भजते हैं, वे सब सुखों को भजते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अहमिन्द्रो वरुणस्ते महित्वोर्वी गभीरे रजसी सुमेके।

त्वष्टेव विश्वा भुवनानि विद्वान्त्समैरयं रोदसी धारयं च॥३॥

अहम्। इन्द्रः। वरुणः। ते इति। महिऽत्वा। उर्वी इति। गभीरे इति। रजसी इति। सुमेके इति सुऽमेके। त्वष्टाऽइव। विश्वा। भुवनानि। विद्वान्। सम्। ऐरयम्। रोदसी इति। धारयम्। च॥३॥

पदार्थः-(**अहम्**) महान् व्याप्तः (**इन्द्रः**) परमैश्वर्य्यवान् (**वरुणः**) सर्वत उत्कृष्टः (**ते**) (**महित्वा**) पूजयित्वा (**ऊर्वी**) बहुपदार्थधरे (**गभीरे**) विस्तीर्णे (**रजसी**) द्यावापृथिव्यौ (**सुमेके**) शोभने मया सृष्टे सुष्ठु क्षिप्ते (**त्वष्टेव**) उत्तमः शिल्पीव (**विश्वा**) सर्वाणि (**भुवनानि**) लोकान् (**विद्वान्**) सकलविद्यावित् (**सम्**) एकीभावे (**ऐरयम्**) प्रेरयेयम् (**रोदसी**) सूर्य्यभूलोकौ (**धारयम्**) धरेयं धारयेयं वा (**च**)॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! इन्द्रो वरुणोऽहं विद्वांस्त्वष्टेव गभीरे सुमेके रजसी महित्वा ते उर्वी रोदसी रचयित्वाऽत्र विश्वा भुवनानि समैरयन्धारयञ्चेति विजानीत॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा दक्षा विचक्षणाः पूर्णविद्याः शिल्पिन उत्तमानि वस्तूनि निर्मिमते तथैव मया विचित्रमुत्तमं जगन्निर्मितं ध्रियते यथा मया रचितं तथाऽन्यस्य जीवस्य सामर्थ्यं रचयितुं नास्ति किन्तु मत्कृतात् कार्य्यात् किञ्चिद् गृहीत्वा यथामति रचयन्तीति वेद्यम्॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्य्यवान् (**वरुणः**) सब से उत्तम (**अहम्**) अतीव व्याप्त मैं (**विद्वान्**) सकलविद्यावेत्ता (**त्वष्टेव**) उत्तम शिल्पी के सदृश (**गभीरे**) विस्तारयुक्त (**सुमेके**) सुन्दर मुझ से रचे और उत्तम प्रकार फैलाये गये (**रजसी**) सूर्य्य और पृथिवी को (**महित्वा**) पूजित कर (**ते**) उन (**उर्वी**) बहुत पदार्थों को धारण करने वाले (**रोदसी**) सूर्य्य और पृथिवी लोकों को रच के यहाँ (**विश्वा**) सब (**भुवनानि**) लोकों को (**सम्**) एक होने में (**ऐरयम्**) प्रेरणा करूं (**धारयम् च,**) और धारण करूं वा धारण कराऊं, यह जानो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे चतुर पण्डित, पूर्ण विद्यावान्, शिल्पी जन उत्तम वस्तुओं को रचते हैं, वैसे ही मुझ से विचित्र उत्तम उत्तम जगत् रचा गया धारण किया जाता है और जैसे मैंने रचा वैसे अन्य जीव का सामर्थ्य रचने का नहीं है, किन्तु मेरे किये हुए कार्य्य से कुछ ग्रहण करके अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार रचते हैं, यह जानना चाहिये॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अहमपो अपिन्वमुक्षमाणा धारयं दिवं सदन ऋतस्य।

ऋतेन पुत्रो अदितेर्ऋतावोत त्रिधातु प्रथयद्वि भूम॥४॥

अहम्। अपः। अपिन्वम्। उक्षमाणाः। धारयम्। दिवम्। सदने। ऋतस्य। ऋतेन। पुत्रः। अदितेः। ऋतऽवा। उत। त्रिऽधातु। प्रथयत्। वि। भूम॥४॥

पदार्थः-(**अहम्**) परमात्मा (**अपः**) जलान्यन्तरिक्षं वा (**अपिन्वम्**) सेवे (**उक्षमाणाः**) सेवमानाः (**धारयम्**) (**दिवम्**) विद्युतम् (**सदने**) सर्वस्थित्यर्थे जगति (**ऋतस्य**) सत्यस्य प्रकृत्याख्यस्य (**ऋतेन**) सत्येन कारणेन (**पुत्रः**) तनय इव (**अदितेः**) अखण्डितस्यान्तरिक्षस्य (**ऋतावा**) ऋतं सत्यं विद्यते यस्मिन्

सः **(उत)** अपि **(त्रिधातु)** त्रयः सत्वरजस्तमांसि गुणा धारका यस्मिंस्तत् सर्वं जगत् **(प्रथयत्)** **(वि)** विविधम् **(भूम)** बहुविधम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! अहमेवर्त्तस्य सदने दिवमुक्षमाणा अपोऽपिन्वमृतेनादितेर्ऋतावा पुत्र उत भूम त्रिधातु वि प्रथयत् तमहं धारयम्॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! मदृतेनास्य जगतो धर्त्ताऽन्यः कश्चिदपि नास्ति यादृशं त्रिगुणमयं कारणमस्ति तादृशमेवेदं कार्य्यं पश्यत॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(अहम्)** मैं परमात्मा ही **(ऋतस्य)** सत्य प्रकृति नामक के **(सदने)** सदन में अर्थात् सब के ठहरने के लिये जो संसार उसमें **(दिवम्)** बिजुली की **(उक्षमाणाः)** सेवा करते हुए **(अपः)** जलों वा अन्तरिक्ष की **(अपिन्वम्)** सेवा करता हूँ और **(ऋतेन)** सत्य कारण से **(अदितेः)** खण्डरहित अन्तरिक्ष का **(ऋतावा)** सत्य से युक्त **(पुत्रः)** पुत्र के सदृश वर्त्तमान **(उत)** निश्चय से **(भूम)** अनेक प्रकार के **(त्रिधातु)** तीन अर्थात् सत्त्वगुण रजोगुण और तमोगुण धारण करने वाले जिसमें उस सम्पूर्ण जगत् को **(वि, प्रथयत्)** विविध प्रकट करे, उसको मैं **(धारयम्)** धारण करूं॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! मेरे विना इस संसार का धारण करने वाला अन्य कोई भी नहीं है और जैसा तीन अर्थात् सत्त्वादिगुणमय कारण है, वैसे ही इस कार्य्य को देखो॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मां नरः स्वश्वा वाजयन्तो मां वृताः समरणे हवन्ते।

कृणोम्याजिं मघवाहमिन्द्र इयर्मि रेणुमभिभूत्योजाः॥५॥१७॥

माम्। नरः। सुऽअश्वाः। वाजयन्तः। माम्। वृताः। सम्ऽअरणे। हवन्ते। कृणोमि। आजिम्। मघऽवा। अहम्। इन्द्रः। इयर्मि। रेणुम्। अभिभूतिऽओजाः॥५॥

पदार्थः-**(माम्)** **(नरः)** नायकाः **(स्वश्वाः)** शोभना अश्वास्तुरङ्गा अग्न्यादयः पदार्था वा येषान्ते **(वाजयन्तः)** जानन्तो ज्ञापयन्तो वा **(माम्)** **(वृताः)** कृतस्वीकाराः **(समरणे)** सङ्ग्रामे **(हवन्ते)** स्पर्द्धन्ते स्वीकुर्वन्ति **(कृणोमि)** करोमि **(आजिम्)** सङ्ग्रामम् **(मघवा)** परमपूजितधनः **(अहम्)** **(इन्द्रः)** **(इयर्मि)** प्राप्नोमि **(रेणुम्)** रजः **(अभिभूत्योजाः)** अभिभूतिर्दुष्टानामभिभवकर्त्रोजो यस्य सः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा स्वश्वा मां वाजयन्तो वृता नरो समरणे मां हवन्ते तत्र मघवेन्द्रोऽभिभूत्योजा अहमाजिं कृणोमि रेणुमियर्मि तथा यूयमपि मां वृणोत॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये सर्वव्यापकं सर्वान्तर्यामिणं सर्वशक्तिमन्तं परमात्मानं सङ्ग्रामे प्रार्थयन्ति तेषामेवाहं विजयं कारयामि ये च धर्म्येण युध्यन्ते तेषामेव सहायो भवामि॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(स्वश्वाः)** सुन्दर घोड़े वा अग्नि आदि जिनके विद्यमान और **(माम्)** मुझको **(वाजयन्तः)** जानते वा जनाते हुए **(वृताः)** स्वीकार जिन्होंने किया वे **(नरः)** नायक जन **(समरणे)** संग्राम में **(माम्)** मेरी **(हवन्ते)** स्पर्द्धा अर्थात् स्वीकार करते हैं वहाँ **(मघवा)** अत्यन्त श्रेष्ठ धनयुक्त **(इन्द्रः)** तेजस्वी **(अभिभूत्योजाः)** दुष्टों का अभिभव करने वाले बल से युक्त **(अहम्)** मैं **(आजिम्)** संग्राम को **(कृणोमि)** करता हूँ **(रेणुम्)** धूलि को **(इयर्मि)** प्राप्त होता हूँ, वैसे तुम लोग भी मेरा स्वीकार करो॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो जन सब वस्तुओं में प्राप्त होने वाले, सब के अन्तर्यामि और सर्वशक्तिमान् मुझ परमात्मा की संग्राम में प्रार्थना करते हैं, उन्हीं का मैं विजय कराता हूँ और जो धर्म से युद्ध करते हैं, उन्हीं का मैं सहायक होता हूँ॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒हं ता विश्वा॑ चक॒रं नकि॑र्मा॒ दैव्यं॒ सहो॑ वरते॒ अप्र॑तीतम्।

यन्मा॒ सोमा॑सो म॒मद॒न् यदु॒क्थोभे भय॑ेते॒ रज॑सी अपा॒रे॥६॥

अ॒हम्। ता। विश्वा॑। च॒क॒रम्। नकि॑ः। मा॒। दैव्य॑म्। सह॑ः। व॒र॒ते॒। अप्र॑तिऽइतम्। यत्। मा॒। सोमा॑सः। म॒मद॑न्। यत्। उ॒क्था। उ॒भे इति॑। भ॒येते॒ इति॑। रज॑सी॒ इति॑। अ॒पा॒रे इति॑॥६॥

पदार्थः-**(अहम्) (ता)** तानि **(विश्वा)** सर्वाणि **(चकरम्)** भृशं करोमि **(नकिः)** निषेधे **(मा)** माम् **(दैव्यम्)** देवेषु विद्वत्सु प्रियम् **(सहः)** बलम् **(वरते)** स्वीकरोति **(अप्रतीतम्)** अप्रज्ञातम् **(यत्)** यम् **(मा)** माम् **(सोमासः)** ऐश्वर्य्यवन्तः **(ममदन्)** हर्षन्ति **(यत्)** यम् **(उक्था)** प्रशंसनीये **(उभे) (भयेते) (रजसी)** द्यावापृथिव्यौ **(अपारे)** पाररहितेऽपरिमिते॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽहं ता विश्वा चकरं जीवो यद् दैव्यं माप्रतीतं सहो वरते यद्यं माश्रिताः सोमासो ममदन् मत्त उक्थोभे अपारे रजसी भयेते तेन मया सदृशः कोऽपि नकिरस्ति॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये पदार्था दृश्यन्ते ये चाऽदृष्टाः सन्ति ते सर्वे मयैव निर्मिता मय्यप्रमेयं बलं मां प्राप्य सर्वानन्दं लभन्ते ममैव भयात् सर्वैर्लोकैः सहचरिता जीवा बिभ्यति॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(अहम्)** मैं **(ता)** उन **(विश्वा)** सब कामों को **(चकरम्)** निरन्तर करता हूँ तथा जीव **(यत्)** जिस **(दैव्यम्)** विद्वानों में प्रिय **(मा)** मुझको और **(अप्रतीतम्)** नहीं जाने गये **(सहः)** बल को **(वरते)** स्वीकार करता है **(यत्)** जिस **(मा)** मेरी सेवा करते **(सोमासः)** ऐश्वर्य्यवाले **(ममदन्)** प्रसन्न होते हैं और मुझ से **(उक्था)** प्रशंसा करने योग्य **(उभे)** दोनों **(अपारे)** पाररहित अपरिमित **(रजसी)** सूर्य्यलोक और भूमिलोक **(भयेते)** कंपते हैं, उस मेरे सदृश कोई भी **(नकिः)** नहीं है॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो पदार्थ प्रत्यक्ष और जो नहीं प्रत्यक्ष हैं, वे सब मुझ से ही बनाये गये,

मेरे में अनन्त बल है, मुझको प्राप्त होकर सम्पूर्ण आनन्द को प्राप्त होते हैं और मेरे ही भय से सब लोगों के सहचारी जीव डरते हैं॥६॥

अथेश्वरोपासनाविषयमाह॥

अब ईश्वरोपासना विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विदुष्टे विश्वा भुवनानि तस्य ता प्र ब्रवीषि वरुणाय वेधः।

त्वं वृत्राणि शृण्विषे जघन्वान्त्वं वृताँ अरिणा इन्द्र सिन्धून्॥७॥

विदुः। ते। विश्वा। भुवनानि। तस्य। ता। प्र। ब्रवीषि। वरुणाय। वेधः। त्वम्। वृत्राणि। शृण्विषे। जघन्वान्। त्वम्। वृतान्। अरिणाः। इन्द्र। सिन्धून्॥७॥

पदार्थः-(**विदुः**) जानन्ति (**ते**) तव (**विश्वा**) सर्वाणि (**भुवनानि**) (**तस्य**) (**ता**) तानि (**प्र**) (**ब्रवीषि**) उपदिशति (**वरुणाय**) श्रेष्ठाय जनाय (**वेधः**) अनन्तविद्य (**त्वम्**) (**वृत्राणि**) धनानि (**शृण्विषे**) शृणोषि (**जघन्वान्**) हतवान् (**त्वम्**) (**वृतान्**) स्वीकृतान् (**अरिणाः**) प्राप्नुयाः (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्यप्रद (**सिन्धून्**) समुद्रान्नदीर्वा॥७॥

अन्वयः-हे वेध इन्द्र जगदीश्वर! यस्त्वं वरुणाय वेदान् प्र ब्रवीषि तस्य ते ता विश्वा भुवनानि विद्वांसो राज्यं विदुर्यस्त्वं वृत्राणि शृण्विषे सिन्धून् वृतानरिणाः स त्वं दुष्टानधर्मिणो जघन्वान्॥७॥

भावार्थः-हे परमेश्वर! यस्माद्भवता कृपां कृत्वाऽस्माकं कल्याणाय वेदा उपदिष्टा येनाऽस्माकं दोषा विनाशिता वर्षाद्वारा पालनं च क्रियते तमेव वयमुपास्महे॥७॥

पदार्थः-हे (**वेधः**) अनन्तविद्यायुक्त (**इन्द्र**) अतीव ऐश्वर्य्य के दाता जगदीश्वर! जो (**त्वम्**) आप (**वरुणाय**) श्रेष्ठ जन के लिये वेदों का (**प्र, ब्रवीषि**) उपदेश देते हो (**तस्य**) उन (**ते**) आप का (**ता**) उन (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**भुवनानि**) लोकों को विद्वान् जन राज्य (**विदुः**) जानते हैं और जो (**त्वम्**) आप (**वृत्राणि**) धनों को (**शृण्विषे**) सुनते हो (**सिन्धून्**) समुद्र वा नदियों को और (**वृतान्**) स्वीकार किये हुओं को (**अरिणाः**) प्राप्त होओ, वह आप दुष्ट अधर्मियों के (**जघन्वान्**) नाशकारी हो॥७॥

भावार्थः-हे परमेश्वर! जिससे आपने कृपा करके हम लोगों के कल्याण के लिये वेदों का उपदेश किया, जिससे हम लोगों के दोष नाश किये गये और वर्षा के द्वारा पालन किया जाता है, उस ही की हम लोग उपासना करते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्माकमत्र पितरस्त आसन्त्सप्त ऋषयो दौर्गहे बध्यमाने।

त आयजन्त त्रसदस्युमस्या इन्द्रं न वृत्रतुरमर्धदेवम्॥८॥

अस्माकम्। अत्र। पितरः। ते। आसन्। सप्त। ऋषयः। दौःऽगहे। बध्यमाने। ते। आ। अयजन्त। त्रसदस्युम्। अस्याः। इन्द्रम्। न। वृत्रऽतुरम्। अर्धऽदेवम्॥८॥

पदार्थः-(अस्माकम्) (अत्र) अस्मिन् जगति **(पितरः)** पालकाः **(ते) (आसन्)** सन्ति **(सप्त)** षड्तवो वायुश्च सप्तमः **(ऋषयः)** प्राप्ताः **(दौर्गहे)** दुर्गहने **(बध्यमाने)** ताड्यमाने **(ते) (आ) (अयजन्त)** समन्तात् सङ्गच्छन्ते **(त्रसदस्युम्)** त्रस्यन्ति दस्यवो यस्मात्तम् **(अस्याः)** सृष्टेर्मध्ये **(इन्द्रम्)** सूर्य्यम् **(न)** इव **(वृत्रतुरम्)** यो वृत्रं मेघं धनं वा त्वरयति तम् **(अर्द्धदेवम्)** देवस्यार्द्धस्य जगतो देवं वा॥८॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर! भवत्कृपया येऽत्रास्माकं सप्त ऋषयः पितर आसँस्ते दौर्गहे बध्यमाने वृत्रतुरमर्द्धदेवमिन्द्रं नास्याः सृष्टेर्मध्ये त्रसदस्युमायजन्त तेऽस्माकं सुखकराः सन्तु॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन जगदीश्वरेण सर्वेषां रक्षणायर्त्वादयः पदार्था निर्मिता तमुपास्य दुर्जयं दुःखं विजयध्वम्॥८॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर आपकी कृपा से **(अत्र)** जो इस संसार में **(अस्माकम्)** हम लोगों के **(सप्त)** छः ऋतु और सातवां वायु **(ऋषयः)** प्राप्त हुए **(पितरः)** पालन करने वाले **(आसन्)** हैं **(ते)** वे **(दौर्गहे)** अत्यन्त गहन **(बध्यमाने)** ताड़ना दिये जाते हुए में **(वृत्रतुरम्)** जो मेघ वा धन की शीघ्रता कराता है उस **(अर्द्धदेवम्)** देव के आधे जगत् के देव को **(इन्द्रम्)** सूर्य्य के **(न)** सदृश तथा **(अस्याः)** इस सृष्टि के मध्य में **(त्रसदस्युम्)** दुष्ट डाकू जिससे डरते हैं उसको **(आ, अयजन्त)** सब प्रकार मिलते हैं **(ते)** वे हमारे सुख के करनेवाले हों॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस जगदीश्वर ने सब के रक्षण के लिये ऋतु आदि पदार्थ रचे, उसकी उपासना करके दुःख से जीतने योग्य दुःख को जीतो॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पुरुकुत्सानी हि वामदाशद्धव्येभिरिन्द्रावरुणा नमोभिः।
अथा राजानं त्रसदस्युमस्या वृत्रहणं ददथुरर्धदेवम्॥९॥

पुरुऽकुत्सानी। हि। वाम्। अदाशत्। हव्येभिः। इन्द्रावरुणा। नमःऽभिः। अथ। राजानम्। त्रसदस्युम्। अस्याः। वृत्रऽहनम्। ददथुः। अर्धऽदेवम्॥९॥

पदार्थः-(पुरुकुत्सानी) पुरूणि कुत्सानि यस्यां सा **(हि)** यतः **(वाम्)** युवाम् **(अदाशत्)** ददाति **(हव्येभिः)** आदातुमर्हैः **(इन्द्रावरुणा)** वायुविद्युताविव **(नमोभिः)** अन्नादिभिः **(अथा)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(राजानम्) (त्रसदस्युम्)** त्रस्यन्ति दस्यवो यस्मात्तम् **(अस्याः)** पृथिव्याः **(वृत्रहणम्)** यो वृत्रं मेघं हन्ति तम् **(ददथुः)** दद्यातम् **(अर्द्धदेवम्)** अर्द्धं जगत् प्रकाशकं सूर्य्यम्॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणा! या पुरुकुत्सानी हव्येभिर्नमोभिर्युवां सुखमदाशदथास्या वृत्रहणमर्द्धदेवमिव त्रसदस्युं राजानं वां ददथुस्तां तौ हि वयं विजानीमः॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्य कृपया सकला पृथिवी शस्याढ्या जाता सूर्य्यश्च तं सततमुपाध्वम्॥९॥

पदार्थः-हे **(इन्द्रावरुणा)** वायु और बिजुली के सदृश वर्त्तमान! जो **(पुरुकुत्सानी)** बहुत निन्दित कर्मों से विशिष्ट **(हव्येभिः)** ग्रहण करने योग्य **(नमोभिः)** अन्नादिकों से आप दोनों को सुख **(अदाशत्)** देती है **(अथा)** इसके अनन्तर **(अस्याः)** इस पृथिवी के **(वृत्रहणम्)** मेघ को नाश करने और **(अर्द्धदेवम्)** आधे जगत् को प्रकाश करनेवाले सूर्य्य के सदृश **(त्रसदस्युम्)** जिससे दुष्ट डाकू जन डरते हैं उस **(राजानम्)** राजा को **(वाम्)** आप दोनों **(ददथुः)** दीजिये उसको और उनको **(हि)** जिससे हम लोग जानें॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसकी कृपा से सम्पूर्ण पृथिवी धान्य से युक्त हुई और सूर्य्य प्रकट हुआ उसकी निरन्तर उपासना करो॥९॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वद्विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

राया वयं ससवांसो मदेम हव्येन देवा यवसेन गावः।

तां धेनुमिन्द्रावरुणा युवं नो विश्वाहा धत्तमनपस्फुरन्तीम्॥१०॥१८॥

राया। वयम्। ससऽवांसः। मदेम। हव्येन। देवाः। यवसेन। गावः। ताम्। धेनुम्। इन्द्रावरुणा। युवम्। नः। विश्वाहा। धत्तम्। अनपऽस्फुरन्तीम्॥१०॥

पदार्थः-**(राया)** धनेन **(वयम्)** **(ससवांसः)** सुशयाना इव **(मदेम)** **(हव्येन)** दातुमादातुमर्हेण **(देवाः)** विद्वांसः **(यवसेन)** बुसादिनेव **(गावः)** **(ताम्)** **(धेनुम्)** सर्वकामदोग्ध्रीं वाचम् **(इन्द्रावरुणा)** अध्यापकोपदेशकौ **(युवम्)** युवाम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(विश्वाहा)** सर्वाणि दिनानि **(धत्तम्)** **(अनपस्फुरन्तीम्)** दृढां निश्चलां प्रज्ञां सम्पादयन्तीम्॥१०॥

अन्वयः-हव्येन देवा यवसेन गावो राया वयं ससवांसो मदेम। हे इन्द्रावरुणा! युवं विश्वाहानपस्फुरन्तीं तां धेनुं नो धत्तम्॥१०॥

भावार्थः-हे विद्वांसोऽस्मासु तादृशीं सर्वशास्त्रोक्तपदार्थविषयां वाचं स्थापयत येन वयं सदैवाऽऽनन्दिताः स्यामेति॥१०॥

अत्र राजेश्वरोपासनाविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेदितव्यम्॥

इति द्विचत्वारिंशत्तमं सूक्तमष्टादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-(हव्येन) देने और ग्रहण करने योग्य वस्तु से **(देवाः)** विद्वान् जन **(यवसेन)** भूसा आदि से जैसे **(गावः)** गौवें वैसे **(राया)** धन से **(वयम्)** हम लोग **(ससवांसः)** उत्तम प्रकार शयन करते हुए से **(मदेम)** आनन्द करें। और हे **(इन्द्रावरुणा)** अध्यापक और उपदेशको! **(युवम्)** आप दोनों **(विश्वाहा)** सब दिन **(अनपस्फुरन्तीम्)** दृढ़ निश्चल बुद्धि को उत्पन्न करती और **(ताम्, धेनुम्)** सम्पूर्ण मनोरथों को पूर्ण करती हुई उस वाणी को **(नः)** हम लोगों के लिये **(धत्तम्)** धारण कीजिये॥१०॥

भावार्थः-हे विद्वानो! हम लोगों में वैसी सम्पूर्ण शास्त्रों में कहे पदार्थविषयक वाणी को स्थित करो, जिससे हम लोग सदा ही आनन्दित होवें॥१०॥

इस सूक्त में राजा, ईश्वरोपासना और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये।

यह बयालीसवां सूक्त और अठारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य त्रिचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य पुरुमीळाजमीळौ सौहोत्रावृषी। अश्विनौ देवते। १ त्रिष्टुप्। २, ३, ५-७ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथाध्यापकोपदेशकविषये प्रश्नोत्तरविषयमाह॥

अब सात ऋचा वाले तेंतालीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अध्यापकोपदेशकविषय में प्रश्नोत्तर विषय को कहते हैं॥

क उ श्रवत्कतमो यज्ञियानां वन्दारु देवः कतमो जुषाते।

कस्येमां देवीममृतेषु प्रेष्ठां हृदि श्रेषाम सुष्टुतिं सुहव्याम्॥ १॥

कः। ऊम् इति। श्रवत्। कतमः। यज्ञियानाम्। वन्दारु। देवः। कतमः। जुषाते। कस्य। इमाम्। देवीम्। अमृतेषु। प्रेष्ठाम्। हृदि। श्रेषाम। सुऽस्तुतिम्। सुऽहव्याम्॥ १॥

पदार्थः-(**कः**) (उ) (**श्रवत्**) शृणोति (**कतमः**) (**यज्ञियानाम्**) यज्ञसिद्धिकर्त्तॄणाम् (**वन्दारु**) वन्दनशीलम् (**देवः**) विद्वान् (**कतमः**) (**जुषाते**) सेवते (**कस्य**) (**इमाम्**) (**देवीम्**) देदीप्यमानां विदुषीम् (**अमृतेषु**) मरणरहितेषु (**प्रेष्ठाम्**) अतिशयेन प्रियाम् (**हृदि**) (**श्रेषाम**) सेवेम (**सुष्टुतिम्**) शोभना प्रशंसा यस्यास्ताम् (**सुहव्याम्**) सुष्ठु गृहीतव्याम्॥१॥

अन्वयः-हे विद्वन्! क उ कतमो देवो यज्ञियानां वन्दारु श्रवत्कतमश्च जुषाते। कस्य हृदीमां प्रेष्ठां सुष्टुतिं सुहव्याममृतेषु देवीं श्रेषाम॥१॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! कोऽत्र यज्ञः के यज्ञसम्पादकाः को देवः का देवी किममृतं सेवनीयं श्रवणीयञ्चेति पृच्छ्यते, उत्तरमग्रे॥१॥

पदार्थः-हे विद्वन्! (**कः**) कौन (उ) और (**कतमः**) कौनसा (**देवः**) विद्वान् (**यज्ञियानाम्**) यज्ञ की सिद्धि करने वालों की (**वन्दारु**) वन्दना करने वाले स्वभाव को (**श्रवत्**) सुनता है और (**कतमः**) कौनसा (**जुषाते**) सेवन करता है (**कस्य**) किस के (**हृदि**) हृदय के निमित्त (**इमाम्**) इस (**प्रेष्ठाम्**) अत्यन्त प्रिय (**सुष्टुतिम्**) उत्तम प्रशंसा युक्त (**सुहव्याम्**) उत्तम प्रकार ग्रहण करने योग्य और (**अमृतेषु**) मरणरहितों में (**देवीम्**) प्रकाशमान और विद्यायुक्त स्त्री की (**श्रेषाम**) सेवा करें॥१॥

भावार्थः-हे विद्वानो! कौन इस संसार में यज्ञ, कौन यज्ञ के करने वाले, कौन विद्वान्, कौन विद्यायुक्त स्त्री तथा कौन अमृत और कौन सेवने और सुनने योग्य है, यह पूछा है, उत्तर आगे हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

को मृळाति कतम आगमिष्ठो देवानामु कतमः शंभविष्ठः।

रथं कमाहुर्द्रवदश्वमाशुं यं सूर्यस्य दुहितावृणीत॥ २॥

कः। मृळाति। कतमः। आऽगमिष्ठः। देवानाम्। ऊम् इति। कतमः। शम्ऽभविष्ठः। रथम्। कम्। आहुः। द्रवत्ऽअश्वम्। आशुम्। यम्। सूर्यस्य। दुहिता। अवृणीत॥ २॥

पदार्थः-(**कः**) (**मृळाति**) सुखयति (**कतमः**) (**आगमिष्ठः**) अतिशयेनागन्ता (**देवानाम्**) विदुषां मध्ये पृथिव्यादीनां वा (**उ**) (**कतमः**) (**शम्भविष्ठः**) अतिशयेन कल्याणकारकः (**रथम्**) रमणीयं यानम् (**कम्**) (**आहुः**) कथयन्ति (**द्रवदश्वम्**) द्रवन्तो द्रुतं गच्छन्तोऽश्वा यस्मिँस्तम् (**आशुम्**) सद्यो गामिनम् (**यम्**) (**सूर्य्यस्य**) (**दुहिता**) दुहितेव कान्तिः (**अवृणीत**) स्वीकुरुते॥ २॥

अन्वयः-को देवानां मृळाति कतम आगमिष्ठः उ कतमः शम्भविष्ठो देवः कं द्रवदश्वमाशुं रथमाहुर्यं सूर्य्यस्य दुहितावृणीत॥ २॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! वयं कं सुखकरं भृशमागन्तारं सुष्ठु कल्याणकरं पदार्थमग्निजलाश्वरथं विजानीयामेति मन्त्रद्वयोक्तानां प्रश्नानामिमान्युत्तराणि। य उषा सूर्य्यमिवाऽध्यापकाच्छृणोति वायुमिव विद्यां सेवते पतिव्रतेव विदुषी प्रशंसनीयं पतिं वृणुते यः परोपकारी स सुखकरो विद्युदतिशयेनागन्त्री परमेश्वरोऽतिशयेन कल्याणकरो विदुषां मध्ये विद्वाञ्जलाग्निकलाकौशलेन चालितं विमानादियानं प्रशंसनीयं भवतीति विज्ञेयम्॥ २॥

पदार्थः-(**कः**) कौन (**देवानाम्**) विद्वानों के बीच वा पृथिव्यादिकों में (**मृळाति**) सुख देता है (**कतमः**) कौनसा (**आगमिष्ठः**) अत्यन्त आने वाला (**उ**) और (**कतमः**) कौनसा (**शम्भविष्ठः**) अत्यन्त कल्याण करने वाला विद्वान् (**कम्**) किस (**द्रवदश्वम्**) शीघ्र चलने वाले घोड़ों से युक्त (**आशुम्**) शीघ्रगामी (**रथम्**) रमण करने योग्य वाहन को (**आहुः**) कहते हैं (**यम्**) जिसको (**सूर्य्यस्य**) सूर्य्य की (**दुहिता**) कन्या के सदृश कान्ति (**अवृणीत**) स्वीकार करती है॥ २॥

भावार्थः-हे विद्वानो! हम लोग किस सुखकारक निरन्तर आने वाले उत्तम प्रकार कल्याणकारक पदार्थ तथा अग्नि और जल के द्वारा चलने वाले वाहन को उत्तम प्रकार जानें, इस प्रकार दो मन्त्रों में कहे हुए प्रश्नों के ये उत्तर हैं। जो जैसे प्रातर्वेला उषा सूर्य्य को वैसे अध्यापक से सुनता, वायु के सदृश विद्या का सेवन करता है और पतिव्रता स्त्री के सदृश विद्यायुक्त स्त्री प्रशंसा के योग्य पति को स्वीकार करती है, जो परोपकारी है, वह सुख करने वाला, बिजुली अतीव आने वाली, परमेश्वर अत्यन्त कल्याण करने वाला, विद्वानों के मध्य में विद्वान्, जल-अग्नि [के] कलाकौशल से चलाया गया विमान आदि यान प्रशंसा के योग्य होता है, ऐसा जानो॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मक्षू हि ष्मा गच्छथ ईवतो द्यूनिन्द्रो न शक्तिं परितक्म्यायाम्।

दिव आजाता दिव्या सुपर्णा कया शचीनां भवथः शचिष्ठा॥३॥

मक्षु। हि। स्म। गच्छथः। ईवतः। द्यून्। इन्द्रः। न। शक्तिम्। परिऽतक्म्यायाम्। दिवः। आऽजाता। दिव्या। सुऽपर्णा। कया। शचीनाम्। भवथः। शचिष्ठा॥३॥

पदार्थः-(मक्षु) सद्यः **(हि)** **(स्मा)** एव। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(गच्छथः)** **(ईवतः)** बहुगतिमतः **(द्यून्)** प्रकाशान् **(इन्द्रः)** विद्युत् **(न)** इव **(शक्तिम्)** सामर्थ्यम् **(परितक्म्यायाम्)** परितः सर्वतस्तकन्ति हसन्ति यस्यां सृष्टौ तस्याम् **(दिवः)** विद्याप्रकाशात् **(आजाता)** समन्ताज्जातौ **(दिव्या)** दिवि शुद्धे व्यवहारे भवौ **(सुपर्णा)** सुष्ठु पर्णानि पालनानि ययोस्तौ **(कया)** **(शचीनाम्)** प्रज्ञानां वाचां वा **(भवथः)** **(शचिष्ठा)** अतिशयेन प्राज्ञौ॥३॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ दिव्या सुपर्णा दिव आजाता शचिष्ठा! भवन्ताविन्द्र ईवतो द्यून्न परितक्म्यायां शक्तिं गच्छथो हि कया स्मा शचीनां शचिष्ठा मक्षु भवथः॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये विद्युद्वत्सामर्थ्यं वर्द्धयन्ति ते धीमन्तो भूत्वाऽतुलां श्रियं जगति लभन्ते॥३॥

पदार्थः-हे अध्यापकोपदेशको **(दिव्या)** शुद्ध व्यवहार में उत्पन्न **(सुपर्णा)** उत्तम पालनों से युक्त **(दिवः)** विद्या के प्रकाश से **(आजाता)** सब प्रकार उत्पन्न हुए **(शचिष्ठा)** अत्यन्त बुद्धिमानो! आप **(इन्द्रः)** बिजुली **(ईवतः)** बहुत गति वाले **(द्यून्)** प्रकाशों को जैसे **(न)** वैसे **(परितक्म्यायाम्)** सब प्रकार हंसने वालों से युक्त सृष्टि में **(शक्तिम्)** सामर्थ्य को **(गच्छथः)** प्राप्त होते हैं **(हि)** ही हो और **(कया, स्मा)** किसी से **(शचीनाम्)** बुद्धियों वा वाणियों के अत्यन्त जानने वाले **(मक्षु)** शीघ्र **(भवथः)** होते हो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो बिजुली के सदृश सामर्थ्य को बढ़ाते हैं, वे बुद्धिमान् होकर अतुल लक्ष्मी को संसार में प्राप्त होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

का वां भूदुपमातिः कया न आश्विना गमथो हूयमाना।

को वां महश्चित् त्यजसो अभीक उरुष्यतं माध्वी दस्रा न ऊती॥४॥

का। वाम्। भूत्। उपऽमातिः। कया। नः। आ। अश्विना। गमथः। हूयमाना। कः। वाम्। महः। चित्। त्यजसः। अभीके। उरुष्यतम्। माध्वी इति। दस्रा। नः। ऊती॥४॥

पदार्थः-(का) **(वाम्)** युवयोः **(भूत्)** भवति **(उपमातिः)** उपमानम् **(कया)** **(नः)** अस्मान् **(आ)** **(अश्विना)** व्याप्तविद्यावध्यापकोपदेशकौ **(गमथः)** प्राप्नुथः **(हूयमाना)** कृताह्वानौ प्रशंसितौ **(कः)**

(वाम्) युवयोः **(महः)** महान् **(चित्)** **(त्यजसः)** त्यक्तुं योग्यो व्यवहारः **(अभीके)** समीपे **(उरुष्यतम्)** सेवेतम् **(माध्वी)** माधुर्यादिगुणोपेतौ **(दस्रा)** दुःखोपक्षयितारौ **(नः)** अस्मान् **(ऊती)** रक्षणादिक्रियया॥४॥

अन्वयः-हे हूयमाना माध्वी दस्राऽश्विना! वां कोपमातिर्भूत्। युवां कया रीत्या न आ गमथः को वामभीके महश्चित् त्यजसोऽस्त्यभीके कयोती न उरुष्यतम्॥४॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशकौ! तदैव युवयोरुत्तमोपमा जायते यदाऽस्मान् विद्यावतः कुर्य्यातं दुष्टान् दोषान् दूरे गमयतम्॥४॥

पदार्थः-हे **(हूयमाना)** आह्वान के किये अर्थात् बुलावा दिये हुए प्रशंसा को प्राप्त **(माध्वी)** मधुरता आदि गुणों से युक्त **(दस्रा)** दुःख के नाश करने वाले **(अश्विना)** विद्या व्याप्त अध्यापक और उपदेशकजनो! **(वाम्)** आप दोनों का **(का)** कौन **(उपमातिः)** उपमान **(भूत्)** होता है। और आप दोनों **(कया)** किस रीति से **(नः)** हम लोगों को **(आ, गमथः)** प्राप्त होते हो और **(कः)** कौन **(वाम्)** आप दोनों के **(अभीके)** समीप में **(महः)** बड़ा **(चित्)** भी **(त्यजसः)** त्याग करने योग्य व्यवहार है और समीप में किस **(ऊती)** रक्षण आदि क्रिया से **(नः)** हम लोगों की **(उरुष्यतम्)** सेवा करो॥४॥

भावार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक जनो! तभी आप दोनों की श्रेष्ठ उपमा होती है कि जब हम लोगों को विद्यावान् करो और दुष्ट दोषों को दूर पहुंचाओ॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उरु वां रथः परि नक्षति द्यामा यत्समुद्रादभि वर्तते वाम्।

मध्वा माध्वी मधु वां प्रुषायन् यत्सीं वां पृक्षो भुरजन्त पक्वाः॥५॥

उरु। वाम्। रथः। परि। नक्षति। द्याम्। आ। यत्। समुद्रात्। अभि। वर्तते। वाम्। मध्वा। माध्वी इति। मधु। वाम्। प्रुषायन्। यत्। सीम्। वाम्। पृक्षः। भुरजन्त। पक्वाः॥५॥

पदार्थः-**(उरु)** बहु **(वाम्)** युवयोः **(रथः)** **(परि)** सर्वतः **(नक्षति)** व्याप्नोति **(द्याम्)** **(आ)** **(यत्)** यः **(समुद्रात्)** अन्तरिक्षाज्जलाशयाद्वा **(अभि)** आभिमुख्ये **(वर्त्तते)** **(वाम्)** युवाम् **(मध्वा)** मधुना **(माध्वी)** मधुरा नीतिः **(मधु)** **(वाम्)** युवाम् **(प्रुषायन्)** प्राप्नुवन्ति **(यत्)** ये **(सीम्)** सर्वतः **(वाम्)** युवाम् **(पृक्षः)** सम्बन्धिनः **(भुरजन्त)** प्राप्नुवन्ति **(पक्वाः)** परिपक्वज्ञानाः परिपक्वस्वरूपा वा॥५॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! यो वां रथो द्यामुरु परि नक्षति यद्यो वां समुद्रादभ्या वर्त्तते वां माध्वी मध्वा मधु सीम्भुरजन्त यद्ये पृक्षः पक्वा वां प्रुषायँस्तान् विदुषो युवां सम्पादयेतम्॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये युष्मान् विदुषः कुर्य्युस्तान् सेवध्वम्॥५॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक जनो! जो **(वाम्)** आप दोनों का **(रथः)** वाहन **(द्याम्)** आकाश को **(उरु)** बहुत **(परि)** सब ओर से **(नक्षति)** व्याप्त होता है **(यत्)** जो **(वाम्)** आप दोनों को **(समुद्रात्)** अन्तरिक्ष वा जलाशय से **(अभि)** सम्मुख **(आ, वर्त्तते)** वर्त्तमान होता है तथा **(वाम्)** आप दोनों और **(माध्वी)** मधुर नीति **(मध्वा)** मधुर गुण से **(मधु)** मधुरकर्म्म को **(सीम्)** सब ओर से **(भुरजन्त)** प्राप्त होती हैं और **(यत्)** जो **(पृक्षः)** सम्बन्धी जन **(पक्वाः)** पूर्ण ज्ञान से युक्त वा जिनका स्वरूप परिपक्व अर्थात् पूर्ण अवस्था वाले **(वाम्)** आप दोनों को **(प्रुषायन्)** प्राप्त होते हैं, उनको विद्वान् आप दोनों करें॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो आप लोगों को विद्वान् करें, उनकी निरन्तर सेवा करो॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सिन्धुर्ह वां रसया सिञ्चदश्वान् घृणा वयोऽरुषासः परि ग्मन्।

तदू षु वामजिरं चेति यानं येन पती भवथः सूर्यायाः॥६॥

सिन्धुः। ह। वाम्। रसया। सिञ्चत्। अश्वान्। घृणा। वयः। अरुषासः। परि। ग्मन्। तत्। ऊम् इति। सु। वाम्। अजिरम्। चेति। यानम्। येन। पती इति। भवथः। सूर्यायाः॥६॥

पदार्थः-**(सिन्धुः)** नदी समुद्रो वा **(ह)** किल **(वाम्)** **(रसया)** रसादिना **(सिञ्चत्)** सिञ्चति **(अश्वान्)** सद्यो गामिनोऽग्न्यादीन् **(घृणा)** प्रदीप्ताः **(वयः)** व्यापिनः **(अरुषासः)** रक्तगुणविशिष्टाः **(परि)** **(ग्मन्)** गच्छन्ति **(तत्)** **(उ)** **(सु)** **(वाम्)** युवाम् **(अजिरम्)** प्राप्तव्यं प्रक्षेपकं वा **(चेति)** जानाति। अत्र विकरणस्य लुक् **(यानम्)** **(येन)** **(पती)** पालकौ **(भवथः)** **(सूर्य्यायाः)** सूर्य्यस्येयं कान्तिरुषास्तस्याः॥६॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! यः सिन्धू रसयो वां सिञ्चद्वयो घृणाऽरुषासोऽश्वान् परि ग्मँस्तदु वामजिरं सु चेति येन यानं प्राप्य सूर्य्यायाः पती भवथस्तौ ह विजानीयाताम्॥६॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशकौ! भवन्तौ यथा सुरसेन जलेन वृक्षान् क्षेत्रादिकं च संसिच्य वर्द्धयित्वैतेभ्यः फलानि प्राप्नुवन्ति तथैवं सर्वान् मनुष्यानध्याप्योपदिश्य प्रज्ञया वर्धयित्वा सुखफलौ भवेताम्॥६॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक जनो! जो **(सिन्धुः)** नदी वा समुद्र **(रसया)** रस आदि से **(उ)** तो **(वाम्)** आप दोनों को **(सिञ्चत्)** सींचता है तथा **(वयः)** व्याप्त होने वाले **(घृणा)** प्रदीप्त **(अरुषासः)** रक्त गुण से विशिष्ट पदार्थ **(अश्वान्)** शीघ्र चलने वाले अग्न्यादिकों को **(परि, ग्मन्)** सब ओर से प्राप्त होते हैं **(तत्)** उनको और **(वाम्)** आप दोनों को वा **(अजिरम्)** प्राप्त होने योग्य और फेंकने वाले को **(सु चेति)** उत्तम प्रकार जानता है वा **(येन)** जिससे **(यानम्)** वाहन को प्राप्त होकर

(सूर्य्यायाः) सूर्य्य की कान्तिरूप प्रातःकाल के **(पती)** पालन करने वाले **(भवथः)** होते हो, उन [दोनों] को **(ह)** निश्चय जानो॥६॥

भावार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक जनो! आप जैसे उत्तम रस युक्त जल से वृक्षों और क्षेत्रादि को उत्तम प्रकार सिञ्चन कर और बढ़ाय के इन से फलों को प्राप्त होते हैं, वैसे ही सब मनुष्यों को पढ़ा उपदेश दे और बुद्धि से बढ़ाय कर सुखरूपी फलयुक्त होओ॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इहेह यद्वां समना पपृक्षे सेयमस्मे सुमतिर्वाजरत्ना।

उरुष्यतं जरितारं युवं ह श्रितः कामो नासत्या युवद्रिक्॥७॥१९॥

इहऽइह। यत्। वाम्। समना। पपृक्षे। सा। इयम्। अस्मे इति। सुऽमतिः। वाजऽरत्ना। उरुष्यतम्। जरितारम्। युवम्। ह। श्रितः। कामः। नासत्या। युवद्रिक्॥७॥

पदार्थः-**(इहेह)** अस्मिन् संसारे **(यत्)** या **(वाम्)** युवाम् **(समना)** समनस्कौ **(पपृक्षे)** सम्बध्नाति **(सा)** **(इयम्)** **(अस्मे)** अस्मान् **(सुमतिः)** शोभना प्रज्ञा **(वाजरत्ना)** वाजो बोधो रत्नं धनं ययोस्तौ **(उरुष्यतम्)** सेवेथाम् **(जरितारम्)** स्तावकम् **(युवम्)** युवाम् **(ह)** **(श्रितः)** आश्रितः **(कामः)** इच्छा **(नासत्या)** अविद्यमानासत्याचरणौ **(युवद्रिक्)** युवां प्राप्नुवन्॥७॥

अन्वयः-हे वाजरत्ना नासत्या समना यद्या सुमतिर्वो पपृक्षे सेयमिहेहास्मे सुसेवतां युवं ह जरितारमुरुष्यतं तौ वां युवद्रिच्छ्रितः कामः सेवताम्॥७॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशका! भवन्त इह या प्रज्ञा युष्मान् प्राप्नुयात् तां सर्वेभ्यः प्रयच्छत यादृशी स्वहितायेच्छा क्रियते तादृशी सर्वार्था कार्य्या॥७॥

अत्राऽध्यापकोपदेशकाऽध्याप्योपदेश्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रिचत्वारिंशत्तमं सूक्तमेकोनविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(वाजरत्ना)** बोधरूपरत्न धन जिनके वे **(नासत्या)** असत्य आचरण से रहित **(समना)** तुल्य मन वाले और **(यत्)** जो **(सुमतिः)** उत्तम बुद्धि **(वाम्)** आप दोनों को **(पपृक्षे)** सम्बन्धित होती है **(सा, इयम्)** सो यह **(इहेह)** इस संसार में **(अस्मे)** हम लोगों की उत्तम प्रकार सेवा करे **(युवम्)** आप दोनों **(ह)** ही **(जरितारम्)** स्तुति करने वाले की **(उरुष्यतम्)** सेवा करें उन **(युवद्रिक्)** आप दोनों को प्राप्त होती **(श्रितः)** और आश्रित हुई **(कामः)** इच्छा सेवे॥७॥

भावार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक जनो! आप लोग इस संसार में जो बुद्धि आप लोगों को प्राप्त होवे उसको सब के लिये देओ और जैसी अपने हित के लिये इच्छा करते हो, वैसी सब के लिये करो॥७॥

इस सूक्त में अध्यापक और उपदेशक, पढ़ने और उपदेश सुनने वाले के गुणवर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तेतालीसवां सूक्त और उन्नीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य चतुश्चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य पुरुमीढाजमीढौ सौहोत्रावृषी। अश्विनौ देवते। १, ३, ६, ७ निचृत्त्रिष्टुप्। २ त्रिष्टुप्। ५ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथाध्यापकोपदेशकविषये शिल्पविद्याविषयमाह॥

अब सात ऋचा वाले चवालीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अध्यापक और उपदेशकविषय में शिल्पविद्याविषय को कहते हैं॥

तं वां रथं वयमद्या हुवेम पृथुज्रयमश्विना संगतिं गोः।

यः सूर्यां वहति वन्धुरायुर्गिर्वाहसं पुरुतमं वसूयुम्॥१॥

तम्। वाम्। रथम्। वयम्। अद्य। हुवेम। पृथुऽज्रयम्। अश्विना। सम्ऽगतिम्। गोः। यः। सूर्याम्। वहति। वन्धुरऽयुः। गिर्वाहसम्। पुरुऽतमम्। वसुऽयुम्॥१॥

पदार्थः-(**तम्**) (**वाम्**) (**रथम्**) रमणीयं यानम् (**वयम्**) (**अद्या**) अस्मिन्नहनि। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**हुवेम**) आदद्याम (**पृथुज्रयम्**) विस्तीर्णं बहुगतिम् (**अश्विना**) अध्यापकोपदेशकौ (**सङ्गतिम्**) (**गोः**) पृथिव्याः (**यः**) (**सूर्य्याम्**) सूर्य्यसम्बन्धिनीं कान्तिम् (**वहति**) (**वन्धुरायुः**) वन्धुरमायुर्यस्य सः (**गिर्वाहसम्**) यो गिरा वहति प्राप्यते वा तम् (**पुरुतमम्**) यः पुरून् बहून् ताम्यति तम् (**वसूयुम्**) आत्मनो वसु द्रव्यमिच्छुम्॥१॥

अन्वयः-हे अश्विना! वयमद्या वां पृथुज्रयन्तं रथं हुवेम गोः सङ्गतिं हुवेम यो वन्धुरायुः सूर्य्यां वहति यं पुरुतमं गिर्वाहसं वसूयुं हुवेम स एव सुखी भवति॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येनाग्निजलाभ्यां शिल्पविद्यासाधनं रथादिकं सम्पाद्यते स एव स्वात्मवत् सर्वान् प्रीणाति॥१॥

पदार्थः-हे (**अश्विना**) अध्यापक और उपदेशक जनो! (**वयम्**) हम लोग (**अद्या**) आज (**वाम्**) तुम दोनों के (**पृथुज्रयम्**) विस्तीर्ण और बहुत गति वाले (**तम्**) उस (**रथम्**) रमण करने योग्य वाहन को (**हुवेम**) ग्रहण करें और (**गोः**) पृथिवी के (**सङ्गतिम्**) सङ्ग को ग्रहण करें (**यः**) जो (**वन्धुरायुः**) थोड़ी अवस्था वाला (**सूर्य्याम्**) सूर्य्यसम्बन्धिनी कान्ति अर्थात् तेज की (**वहति**) प्राप्ति करता है जिस (**पुरुतमम्**) बहुतों को ग्लानि करने (**गिर्वाहसम्**) वाणी से प्राप्त करने वा प्राप्त होने (**वसूयुम्**) और अपने को द्रव्य की इच्छा करने वाले का ग्रहण करें, वही सुखी होता है॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस अग्नि और जल से शिल्पविद्या ही साधन जिसका ऐसा रथ आदि उत्पन्न किया जाता है, वही अपने आत्मा के तुल्य सब को प्रसन्न करता है॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

युवं श्रियमश्विना देवता तां दिवो नपाता वनथः शचीभिः।
युवोर्वपुरभि पृक्षः सचन्ते वहन्ति यत्ककुहासो रथे वाम्॥२॥

युवम्। श्रियम्। अश्विना। देवता। ताम्। दिवः। नपाता। वनथः। शचीभिः। युवोः। वपुः। अभि। पृक्षः। सचन्ते। वहन्ति। यत्। ककुहासः। रथे। वाम्॥२॥

पदार्थः-(**युवम्**) युवाम् (**श्रियम्**) लक्ष्मीम् (**अश्विना**) अध्यापकोपदेशकौ (**देवता**) दिव्यगुणसम्पन्नौ (**ताम्**) (**दिवः**) द्युलोकस्य (**नपाता**) पातरहितौ (**वनथः**) संसेवेथाम् (**शचीभिः**) प्रज्ञाभिः (**युवोः**) युवयोः (**वपुः**) शरीरम् (**अभि**) आभिमुख्ये (**पृक्षः**) सम्पर्कः (**सचन्ते**) सम्बध्नन्ति (**वहन्ति**) (**यत्**) याम् (**ककुहासः**) सर्वा दिशः (**रथे**) (**वाम्**) युवयोः॥२॥

अन्वयः-हे दिवो नपाता देवताश्विना! युवं शचीभिः तां श्रियं वनथो यद्यां वां रथे युवोः पृक्षो वपुरभि सचन्ते ककुहासो वहन्ति॥२॥

भावार्थः-ये विद्वांसः प्रज्ञां प्राप्याऽन्येभ्यो ददति ते सर्वासु दिक्षु पूज्या भवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे (**दिवः**) द्रष्टव्य अत्यन्त सुख के (**नपाता**) पतन से रहित (**देवता**) दिव्यगुणसम्पन्न (**अश्विना**) अध्यापक और उपदेशक जनो! (**युवम्**) आप दोनों (**शचीभिः**) बुद्धियों से (**ताम्**) उस (**श्रियम्**) लक्ष्मी का (**वनथः**) सेवन करो (**यत्**) जिसको (**वाम्**) आप दोनों के (**रथे**) वाहन में (**युवोः**) आप दोनों के (**पृक्षः**) सम्बन्ध और (**वपुः**) शरीर को (**अभि**) सम्मुख (**सचन्ते**) सम्बन्धयुक्त करती (**ककुहासः**) सम्पूर्ण दिशा (**वहन्ति**) प्राप्त होती हैं॥२॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन बुद्धि को प्राप्त होकर अन्य जनों के लिये देते हैं, वे सम्पूर्ण दिशाओं में पूजने अर्थात् सत्कार करने योग्य होते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

को वामद्या करते रातहव्य ऊतये वा सुतपेयाय वार्कैः।
ऋतस्य वा वनुषे पूर्व्याय नमो येमानो अश्विना ववर्तत्॥३॥

कः। वाम्। अद्य। करते। रातऽहव्यः। ऊतये। वा। सुतऽपेयाय। वा। अर्कैः। ऋतस्य। वा। वनुषे। पूर्व्याय। नमः। येमानः। अश्विना। आ। ववर्तत्॥३॥

पदार्थः-(**कः**) (**वाम्**) युवाम् (**अद्या**) अस्मिन्नहनि (**करते**) करोति (**रातहव्यः**) दत्तदातव्यः (**ऊतये**) रक्षणाद्याय (**वा**) (**सुतपेयाय**) निष्पन्नरसपातव्याय (**वा**) (**अर्कैः**) सत्कारैः (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**वा**) (**वनुषे**) याचसे (**पूर्व्याय**) पूर्वेषु कुशलाय (**नमः**) अन्नम् (**येमानः**) नियच्छन्तः (**अश्विना**) अध्यापकोपदेशकौ (**आ**) (**ववर्त्तत्**) वर्त्तते॥३॥

अन्वयः-हे अश्विनाऽद्या वां को रातहव्य ऊतये वाद्या सुतपेयाय करते वाऽर्कैः सत्करोति वर्त्तस्य पूर्व्याय नमो ददाति अनुकूलो आ ववर्त्तत् तद्ये येमानः सत्कुर्वन्ति तान् युवां सत्कुर्य्यातम्। हे विद्वन्! यतस्त्वमाभ्यां विद्यां वनुषे तस्मादेतौ सततं सत्कुरु॥३॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशकौ! ये युवां सत्कुर्य्युस्तान् सुशिक्षितान् सभ्यान् सम्पादयतम्, येभ्यो विद्यां ग्राहयतं तान् सततं पूजयतं च॥३॥

पदार्थः-हे **(अश्विना)** अध्यापक और उपदेशक जनो! **(अद्या)** आज **(वाम्)** आप दोनों को **(कः)** कौन **(रातहव्यः)** देने योग्य को दिये हुए **(ऊतये)** रक्षण आदि के लिये **(वा)** वा आज **(सुतपेयाय)** उत्पन्न जो पीने योग्य रस उसके लिये **(करते)** करता अर्थात् प्रयत्नयुक्त करता **(वा)** वा **(अर्कैः)** सत्कारों से सत्कार करता **(वा)** वा **(ऋतस्य)** सत्य के सम्बन्ध में **(पूर्व्याय)** प्राचीन जनों में चतुर के लिये **(नमः)** अन्न को देता और अनुकूल हुआ **(आ, ववर्त्तत्)** वर्त्ताव करता है, उसका **(येमानः)** जो नियम करते हुए सत्कार करते हैं, उनका आप दोनों सत्कार करें। और हे विद्वन्! जिस कारण आप इन दोनों से विद्या को **(वनुषे)** मांगते हो, इससे इन दोनों का निरन्तर सत्कार करो॥३॥

भावार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक जनो! जो आप दोनों का सत्कार करें, उनको उत्तम प्रकार शिक्षित और सभ्य अर्थात् सभा के योग्य करो और जिनसे विद्या का ग्रहण कराओ, उनका निरन्तर सत्कार भी करो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

हि॒र॒ण्यये॑न पुरुभू॒ रथे॑ने॒मं य॒ज्ञं ना॑स॒त्योप॑ यातम्।

पिबा॑थ॒ इन्मधु॑नः सो॒म्यस्य॒ दध॑थो॒ रत्नं॑ विध॒ते जना॑य॥४॥

हि॒र॒ण्यये॑न। पु॒रु॒भू॒ इति॑ पुरुऽभू। रथे॑न। इ॒मम्। य॒ज्ञम्। ना॒स॒त्या। उप॑। या॒त॒म्। पिबा॑थः। इत्। मधु॑नः। सो॒म्यस्य॑। दध॑थः। रत्न॑म्। वि॒ध॒ते। जना॑य॥४॥

पदार्थः-**(हिरण्ययेन)** ज्योतिर्मयेन सुवर्णाद्यलङ्कृतेन **(पुरुभू)** यो पुरून् भावयतस्तौ **(रथेन)** यानेन **(इमम्)** **(यज्ञम्)** अध्यापनाऽध्ययनाख्यम् **(नासत्या)** सत्याचरणावध्यापकोपदेशकौ **(उप)** **(यातम्)** **(पिबाथः)** पिबतम् **(इत्)** एव **(मधुनः)** मधुरादिगुणयुक्तस्य **(सोम्यस्य)** सोमेषु भवस्य **(दधथः)** **(रत्नम्)** रमणीयं धनम् **(विधते)** पुरुषार्थं कुर्वते **(जनाय)** मनुष्याय॥४॥

अन्वयः-हे पुरुभू नासत्याऽश्विनौ! युवां हिरण्ययेन रथेनेमं यज्ञमुपयातं मधुनः सोम्यस्य रसं पिबाथो विधते जनाय रत्नं दधथस्तावित्सुखिनौ कथं न भवेतम्॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये विद्याप्रचारकाः स्युस्त एव जगत्सुखकरा भवेयुः॥४॥

पदार्थः-हे **(पुरुभू)** बहुतों की भावना कराने और **(नासत्या)** सत्य आचरण वाले अध्यापक और उपदेशक जनो! आप दोनों **(हिरण्ययेन)** ज्योतिर्मय और सुवर्ण आदि से शोभित **(रथेन)** वाहन से **(इमम्)** इस **(यज्ञम्)** पढ़ाने और पढ़ने रूप यज्ञ को **(उप, यातम्)** प्राप्त होओ और **(मधुनः)** मधुर आदि गुणों से युक्त **(सोम्यस्य)** सोमलतारूप ओषधियों में उत्पन्न पदार्थ के रस का **(पिबाथः)** पान करो और **(विधते)** पुरुषार्थ को करते हुए **(जनाय)** मनुष्य के लिये **(रत्नम्)** सुन्दर धन को **(दधथः)** तुम धारण करते हो वे [दोनों] **(इत्)** ही सुखी कैसे न होओ॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो शिल्पविद्या के प्रचार करने वाले हों, वे ही संसार के सुख करने वाले होवें॥४॥

अथ राजामात्यविषयमाह॥

अब राजा और अमात्य विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ नो यातं दिवो अच्छा पृथिव्या हिरण्ययेन सुवृता रथेन।
मा वामन्ये नि यमन् देवयन्तः सं यद्दे नाभिः पूर्व्या वाम्॥५॥

आ। नः। यातम्। दिवः। अच्छ। पृथिव्याः। हिरण्ययेन। सुऽवृता। रथेन। मा। वाम्। अन्ये। नि। यमन्। देवऽयन्तः। सम्। यत्। ददे। नाभिः। पूर्व्या। वाम्॥५॥

पदार्थः-**(आ)** **(नः)** **(यातम्)** प्राप्नुतम् **(दिवः)** कामयमानाम् **(अच्छा)** सम्यक्। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(पृथिव्याः)** भूम्याः **(हिरण्ययेन)** सुवर्णादिनाऽलङ्कृतेन **(सुवृता)** शोभनावरणेन **(रथेन)** विमानादियानेन **(मा)** **(वाम्)** युवयोः **(अन्ये)** **(नि)** **(यमन्)** निग्रहं कुर्वन्तु **(देवयन्तः)** कामयन्तः **(सम्)** **(यत्)** **(ददे)** ददामि **(नाभिः)** नाभिरिव वर्त्तमानः **(पूर्व्या)** पूर्वैः कृतेषु कुशलौ **(वाम्)** युवाभ्याम्॥५॥

अन्वयः-हे पूर्व्या राजाऽमात्यौ! वां सुवृता हिरण्ययेन रथेन पृथिव्या दिवो नोऽच्छाऽऽयातम्। यतोऽन्ये देवयन्तो वां मा नियमन् यदहं नाभिरिव वां सन्ददे तद्गृह्णीतम्॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। सर्वे प्रजाराजजना राज्ञो राजपुरुषाणाञ्च सङ्गं सदैवेच्छेयुः सदैव सुखदुःखे भुञ्जीरन्॥५॥

पदार्थः-हे **(पूर्व्या)** प्राचीनों से किये हुओं में चतुर राजा औ मन्त्री जनो! **(वाम्)** आप दोनों के **(सुवृता)** सुन्दर परदे से युक्त **(हिरण्ययेन)** सुवर्ण आदि से शोभित **(रथेन)** विमान आदि वाहन से **(पृथिव्याः)** भूमि की **(दिवः)** कामना करते हुए **(नः)** हम लोगों को **(अच्छा)** उत्तम प्रकार **(आ, यातम्)** प्राप्त होओ जिससे **(अन्ये)** अन्य जन **(देवयन्तः)** कामना करते हुए **(वाम्)** आप दोनों से **(मा)** नहीं **(नि, यमन्)** निग्रह करें और **(यत्)** जिसको मैं **(नाभिः)** नाभि के सदृश वर्त्तमान आप दोनों को **(सम्, ददे)** अच्छे प्रकार देता हूँ, उसका ग्रहण करो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। सब प्रजा और राजाजन, राजा और राजा के पुरुषों के सङ्ग की सदा ही इच्छा करें और सदैव सुख और दु:ख को भोगें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू नो र॒यिं पु॑रु॒वीरं॑ बृ॒हन्तं॒ दस्रा॒ मिमा॑थामु॒भये॑ष्व॒स्मे।

नरो॒ यद्वा॑मश्विना॒ स्तोम॒माव॑न्त्स॒धस्तु॑तिमाजमी॒ळ्हासो॑ अग्मन्॥६॥

नु। नः॒। र॒यिम्। पु॒रु॒ऽवीर॑म्। बृ॒हन्त॑म्। दस्रा॑। मिमा॑थाम्। उ॒भये॑षु। अ॒स्मे इति॑। नरः॑। यत्। वा॒म्। अ॒श्वि॒ना॒। स्तोम॑म्। आव॑न्। स॒धऽस्तु॑तिम्। आ॒ज॒ऽमी॒ळ्हास॑ः। अ॒ग्म॒न्॥६॥

पदार्थः-(**नु**) सद्यः (**नः**) अस्मभ्यम् (**रयिम्**) (**पुरुवीरम्**) बहवो वीरा यस्मात्तम् (**बृहन्तम्**) महान्तम् (**दस्रा**) दु:खोपक्षयितारौ (**मिमाथाम्**) विधत्तम् (**उभयेषु**) राजप्रजाजनेषु (**अस्मे**) अस्मासु (**नरः**) नायकाः (**यत्**) ये (**वाम्**) युवाम् (**अश्विना**) सूर्य्याचन्द्रमसाविव शुभगुणयुक्तौ (**स्तोमम्**) प्रशंसाम् (**आवन्**) प्राप्नुयामः (**सधस्तुतिम्**) सहकीर्त्तिम् (**आजमीळ्हासः**) येऽजान् विद्यया सिञ्चन्ति तदपत्यानि (**अग्मन्**) प्राप्नुवन्ति॥६॥

अन्वयः-हे दस्राऽश्विना यदाजमीळ्हासो नरो! वां सधस्तुतिमग्मन्त्स्तोममावँस्तेभ्यो नोऽस्मभ्यं युवां पुरुवीरं बृहन्तं रयिं मिमाथाम्। यदुभयेष्वस्मे श्रीर्नु वर्द्धेत॥६॥

भावार्थः-हे राजमुख्याऽमात्यौ! भवन्तौ सूर्य्याचन्द्रवदस्मासु वर्तेथाम्। पुष्कलां श्रियं स्थापयत यतो वयं धनाढ्या स्याम॥६॥

पदार्थः-हे (**दस्रा**) दु:ख के नाश करने वाले (**अश्विना**) सूर्य्य और चन्द्रमा के सदृश श्रेष्ठ गुणों से युक्त (**यत्**) जो (**आजमीळ्हासः**) बकरों को विद्या से सिञ्चन करने वालों के पुत्र (**नरः**) नायकजन! (**वाम्**) आप दोनों को और (**सधस्तुतिम्**) साथ कीर्त्ति को (**अग्मन्**) प्राप्त होते और (**स्तोमम्**) प्रशंसा को (**आवन्**) हम प्राप्त होते हैं उन (**नः**) हम सब लोगों के लिये आप दोनों (**पुरुवीरम्**) बहुत वीर हों जिससे उस (**बृहन्तम्**) बड़े (**रयिम्**) धन को (**मिमाथाम्**) धारण करो जिससे (**उभयेषु**) दोनों राजा और प्रजा जनों [में] (**अस्मे**) हम लोगों में लक्ष्मी (**नु**) शीघ्र बड़े॥६॥

भावार्थः-हे राजन् और मुख्य मन्त्रीजनो! आप दोनों सूर्य्य और चन्द्रमा के सदृश हम लोगों में वर्त्ताव कीजिये और बहुत लक्ष्मी को स्थापित कीजिये, जिससे हम लोग धन से युक्त होवें॥६॥

अथ सज्जनगुणविषयमाह॥

अब सज्जन विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इ॒हेह॒ यद्वां॑ सम॒ना प॑पृ॒क्षे सेयम॒स्मे सु॑म॒तिर्वा॑जरत्ना।

उरुष्यतं जरितारं युवं ह श्रितः कामो नासत्या युवद्रिक्॥७॥२०॥

इहऽइह। यत्। वाम्। समना। पपृक्षे। सा। इयम्। अस्मे इति। सुऽमतिः। वाजरत्ना। उरुष्यतम्। जरितारम्। युवम्। ह। श्रितः। कामः। नासत्या। युवद्रिक्॥७॥

पदार्थः-**(इहेह)** अस्मिञ्जगति **(यत्)** या **(वाम्)** **(समना)** सान्त्वनादिगुणयुक्ता **(पपृक्षे)** सम्बध्नातु **(सा)** **(इयम्)** **(अस्मे)** अस्मान् **(सुमतिः)** **(वाजरत्ना)** विज्ञानधनप्राप्तिसाधिका **(उरुष्यतम्)** सेवेतम् **(जरितारम्)** सकलविद्यास्तावकम् **(युवम्)** युवाम् **(ह)** खलु **(श्रितः)** आश्रितः **(कामः)** **(नासत्या)** धर्म्मात्मानौ **(युवद्रिक्)** युवां प्रापकः॥७॥

अन्वयः-हे नासत्याऽध्यापकोपदेशकाविहेह वां यद्या समना वाजरत्ना सुमतिरस्ति सेयमस्मे पपृक्षे योऽयं युवद्रिक् कामो जरितारं श्रितस्तं ह युवमुरुष्यतम्॥७॥

भावार्थः-मनुष्यैः सदात्राप्तानां प्रज्ञेषणीया सत्यस्य कामना च याभ्यां सर्वेच्छा पूर्णा स्यादिति॥७॥

अत्राऽध्यापकोपदेशकराजामात्यसज्जनगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुश्चत्वारिंशत्तमं सूक्तं विंशो वर्गश्च समाप्तः।

पदार्थः-हे **(नासत्या)** धर्मात्मा अध्यापक और उपदेशक जनो! **(इहेह)** इस संसार में **(वाम्)** आप दोनों की **(यत्)** जो **(समना)** शान्ति आदि गुणों से युक्त **(वाजरत्ना)** विज्ञान रूप धन की प्राप्ति सिद्ध करने वाली **(सुमतिः)** श्रेष्ठ मति है **(सा)** सो **(इयम्)** यह **(अस्मे)** हम लोगों को **(पपृक्षे)** सम्बन्धयुक्त करे जो यह और **(युवद्रिक्)** आप दोनों को प्राप्त कराने वाला **(कामः)** मनोरथ **(जरिताम्)** सम्पूर्ण विद्याओं के स्तुति करने वाले को **(श्रितः)** आश्रित है **(ह)** उसी का **(युवम्)** आप **(उरुष्यतम्)** सेवन करें॥७॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये सदा इस संसार में यथार्थवक्ता पुरुषों की बुद्धि की इच्छा करें और सत्य की कामना करें, जिससे सम्पूर्ण इच्छा पूर्ण होवे॥७॥

इस सूक्त में अध्यापक, उपदेशक, राजा, अमात्य और सज्जन के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चवालीसवां सूक्त और बीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य पञ्चचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अश्विनौ देवते। १, ३, ४ जगती। ५ निचृज्जगती। ६ विराट् जगती छन्दः। निषादः स्वरः। २ भुरिक् त्रिष्टुप्। ७ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ सूर्य्यविषयमाह॥

अब सात ऋचा वाले पैंतालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र से सूर्य्यविषय को कहते हैं॥

एष स्य भानुरुदियर्ति युज्यते रथः परिज्मा दिवो अस्य सानवि।
पृक्षासो अस्मिन् मिथुना अधि त्रयो दृतिस्तुरीयो मधुनो वि रप्शते॥१॥

एषः। स्यः। भानुः। उत्। इयर्ति। युज्यते। रथः। परिऽज्मा। दिवः। अस्य। सानवि। पृक्षासः। अस्मिन्। मिथुनाः। अधि। त्रयः। दृतिः। तुरीयः। मधुनः। वि। रप्शते॥१॥

पदार्थः-(**एषः**) (**स्यः**) सः (**भानुः**) सूर्य्यः (**उत्**) ऊर्ध्वम् (**इयर्त्ति**) प्राप्नोति (**युज्यते**) (**रथः**) (**परिज्मा**) परितः सर्वतो ज्मायां भूमौ गच्छति त्यजति वा। **ज्मेति पृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१) (**दिवः**) प्रशंसायुक्तस्यान्तरिक्षस्य मध्ये (**अस्य**) (**सानवि**) आकाशप्रदेशे (**पृक्षासः**) सम्बद्धाः (**अस्मिन्**) (**मिथुनाः**) द्वन्द्वा द्वौ द्वौ मिलिताः (**अधि**) उपरिभावे (**त्रयः**) वायुजलविद्युतः (**दृतिः**) मेघः। **दृतिरिति मेघनामसु पठितम्।** (निघं०१.१०) (**तुरीयः**) चतुर्थः (**मधुनः**) मधुरगुणयुक्तस्य (**वि**) (**रप्शते**) विशेषेण राजते॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! एषः स्यः परिज्मा भानुरुदियर्त्ति, अस्य सानवि रथो युज्यतेऽस्मिंस्त्रयः पृक्षासो मिथुनाः प्रकाशन्ते, अस्य मधुनो मध्ये तुरीयो दृतिर्दिवोऽधि वि रप्शते तान् सर्वान् विजानीत॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो हि प्रकाशमानः सूर्य्यो ब्रह्माण्डस्य मध्ये विराजतेऽस्याभितो बहवो भूगोलाः सम्बद्धाः सन्ति भूचन्द्रलोकौ च युक्तौ भ्रमतो यस्य प्रभावेन वर्षा जायन्त इति विजानीत॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**एषः, स्यः**) सो वह (**परिज्मा**) सब ओर से भूमि में चलता वा त्यागता (**भानुः**) सूर्य्य (**उत्**) ऊपर को (**इयर्त्ति**) प्राप्त होता है (**अस्य**) इसके (**सानवि**) आकाशप्रदेश में (**रथः**) वाहन (**युज्यते**) जोड़ा जाता है (**अस्मिन्**) इस में (**त्रयः**) वायु, जल और बिजुली (**पृक्षासः**) सम्बन्ध को प्राप्त (**मिथुनाः**) दो दो मिले हुए प्रकाशित होते हैं इस (**मधुनः**) मधुर गुण से युक्त के बीच (**तुरीयः**) चौथा (**दृतिः**) मेघ (**दिवः**) प्रशंसायुक्त अन्तरिक्ष के बीच (**अधि**) ऊपर (**वि, रप्शते**) विशेष करके शोभित होता है, उन सबको जानिये॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो प्रकाशमान सूर्य्य ब्रह्माण्ड के मध्य में विराजित है और इसके चारों ओर बहुत भूगोल सम्बन्धयुक्त हैं तथा पृथिवी और चन्द्रलोक एक साथ घूमते हैं और जिसके प्रभाव से वृष्टियाँ होती हैं, इस सम्पूर्ण को जानो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उद्वां पृक्षासो मधुमन्त ईरते रथा अश्वास उषसो व्युष्टिषु।

अपोर्णुवन्तस्तम आ परीवृतं स्वर्ण शुक्रं तन्वन्त आ रजः॥ २॥

उत्। वाम्। पृक्षासः। मधुऽमन्तः। ईरते। रथाः। अश्वासः। उषसः। विऽउंष्टिषु। अपऽऊर्णुवन्तः। तमः। आ। परिऽवृतम्। स्वः। न। शुक्रम्। तन्वन्तः। आ। रजः॥ २॥

पदार्थः-(**उत्**) (**वाम्**) युवाम् (**पृक्षासः**) संसिक्ताः (**मधुमन्तः**) मधुरादिगुणयुक्ताः (**ईरते**) कम्पन्ते गच्छन्ति (**रथाः**) यथा यानानि (**अश्वासः**) तुरङ्गाः (**उषसः**) प्रभातवेलायाः (**व्युष्टिषु**) विविधासु सेवासु (**अपोर्णुवन्तः**) निवारयन्तः (**तमः**) रात्रीम् (**आ**) (**परीवृतम्**) सर्वत आवृतम् (**स्वः**) आदित्यः (**न**) इव (**शुक्रम्**) शुद्धम् (**तन्वन्तः**) विस्तृणन्तः (**आ**) (**रजः**) लोकलोकान्तरम्॥ २॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! यथा मधुमन्तः पृक्षास उषसस्तमोऽपोर्णुवन्तो व्युष्टिषु रथा अश्वास इवा परीवृतं स्वर्ण शुक्रमारजस्तन्वन्तस्सूर्यकिरणा वामुदीरते तान् यूयं विजानीत॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! इमे सर्वे लोकाः सूर्य्यस्याऽभितो भ्रमन्ति यथा सूर्य्यकिरणा भूगोलार्धस्थं तमो निवार्य्य प्रकाशं जनयन्ति तथैव विद्वांसो विद्यादानेनाविद्यान् निवार्य्य विद्यां जनयेयुः॥ २॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक जनो! जैसे (**मधुमन्तः**) मधुर आदि गुणों से युक्त (**पृक्षासः**) उत्तम प्रकार सींचे गये (**उषसः**) प्रभात वेला की (**तमः**) रात्रि को (**अपोर्णुवन्तः**) निवारण करते अर्थात् हटाते हुए (**व्युष्टिषु**) अनेक प्रकार की सेवाओं में (**रथाः**) वाहनों और (**अश्वासः**) घोड़ों के सदृश (**आ, परीवृतम्**) सब प्रकार से घिरे हुए को (**स्वः**) सूर्य्य के (**न**) सदृश (**शुक्रम्**) शुद्ध (**आ, रजः**) लोक-लोकान्तर को (**तन्वन्तः**) विस्तृत करते हुए सूर्य्यकिरण (**वाम्**) आप दोनों को (**उत्, ईरते**) कंपते, चञ्चल होते, ऊपर से प्राप्त होते हैं, उनको आप लोग विशेष करके जानो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! ये सब लोक सूर्य्य के सब ओर घूमते हैं और जैसे सूर्य्य की किरणें भूगोल के आधे भाग में स्थित अन्धकार को निवारण करके प्रकाश उत्पन्न करते हैं, वैसे ही विद्वान् जन विद्या के दान से अविद्या को निवारण करके विद्या को उत्पन्न करें॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मध्वः पिबतं मधुपेभिरासभिरुत प्रियं मधुने युञ्जाथां रथम्।

आ वर्तनिं मधुना जिन्वथस्पथो दृतिं वहेथे मधुमन्तमश्विना॥ ३॥

मध्वः। पिबतम्। मधुऽपेभिः। आसऽभिः। उत। प्रियम्। मधुने। युञ्जाथाम्। रथम्। आ। वर्तनिम्। मधुना। जिन्वथः। पथः। दृतिम्। वहेथे इति। मधुऽमन्तम्। अश्विना॥ ३॥

पदार्थः-(**मध्वः**) मधुरादिगुणयुक्तस्य (**पिबतम्**) (**मधुपेभिः**) ये मधुरान् रसान् पिबन्ति तैः सह (**आसभिः**) आस्यैर्मुखैः (**उत**) अपि (**प्रियम्**) कमनीयम् (**मधुने**) विज्ञाताय मार्गाय (**युञ्जाथाम्**) (**रथम्**) विमानादियानम् (**आ**) (**वर्त्तनिम्**) वर्त्तन्ते यस्मिँस्तं मार्गम् (**मधुना**) माधुर्य्यगुणोपेतेन (**जिन्वथः**) गच्छथः (**पथः**) मार्गान् (**दृतिम्**) दृतिमिव वर्त्तमानं मेघम् (**वहेथे**) प्रापयेताम्। अत्र पुरुषव्यत्ययः। (**मधुमन्तम्**) मधुरादिगुणयुक्तम् (**अश्विना**) सेनेशयोद्धारौ॥ ३॥

अन्वयः-हे अश्विना! युवां मधुपेभिर्वीरैः सहासभिर्मध्वः प्रियं रसं पिबतमुत मधुने रथं युञ्जाथां मधुना वर्त्तनिमा जिन्वथः पथो जिन्वथो मधुमन्तं दृतिं सूर्य्यवायू वहेथे तथमं वहेथाम्॥ ३॥

भावार्थः-हे सेनेशयोद्धारो! यूयं सेनास्थवीरैः सहेदृशानि भोजनानि कुरुत यानानि रचयत यैर्बलवृद्धिः श्रीप्राप्तिश्च स्याद्यथा वायुविद्युतौ वृष्टिं कृत्वा सर्वान् सुखयतस्तथा प्रजाः सुखयथ॥ ३॥

पदार्थः-हे (**अश्विना**) सेना के ईश और योद्धा जन आप दोनों (**मधुपेभिः**) मधुर रसों को पीने वाले वीर पुरुषों के साथ (**आसभिः**) मुखों से (**मध्वः**) मधुर आदि गुण से युक्त पदार्थ के (**प्रियम्**) मनोहर रस को (**पिबतम्**) पिओ (**उत**) और (**मधुने**) जाने गये मार्ग के लिये (**रथम्**) विमान आदि वाहन को (**युञ्जाथाम्**) युक्त करो तथा (**मधुना**) मधुरता गुण युक्त पदार्थ से (**वर्त्तनिम्**) जिसमें वर्त्तमान होते उस मार्ग को (**आ, जिन्वथः**) सब प्रकार प्राप्त होते हो और अन्य (**पथः**) मार्गों को प्राप्त होते हो और जैसे (**मधुमन्तम्**) मधुर आदि गुणों से युक्त (**दृतिम्**) जल के चर्मपात्र के सदृश वर्त्तमान मेघ को सूर्य्य और वायु (**वहेथे**) धारण करते हैं, वैसे इस व्यवहार को धारण करो॥ ३॥

भावार्थः-हे सेना के ईश और योद्धाजनो! तुम सेनास्थ वीरों के साथ ऐसे भोजन करो और वाहनों को रचो जिनसे बल की वृद्धि और लक्ष्मी की प्राप्ति हो, जैसे वायु और बिजुली वर्षा करके सबको सुखी करते हैं, वैसे प्रजा को सुखी करो॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

हंसासो ये वां मधुमन्तो अस्रिधो हिरण्यपर्णा उहुव उषर्बुधः।
उदप्रुतो मन्दिनो मन्दिनिस्पृशो मध्वो न मक्षः सवनानि गच्छथः॥ ४॥

हंसासः। ये। वाम्। मधुऽमन्तः। अस्रिधः। हिरण्यऽपर्णाः। उहुवः। उषःऽबुधः। उदऽप्रुतः। मन्दिनः। मन्दिऽनिस्पृशः। मध्वः। न। मक्षः। सवनानि। गच्छथः॥ ४॥

पदार्थः-(हंसासः) हंस इव सद्यो गन्तारोऽश्वाः। **हंसास इत्यश्वनामसु पठितम्।** (निघं०१.१४) **(ये) (वाम्)** युवयोः **(मधुमन्तः)** मधुगत्योपेताः **(अस्रिधः)** अहिंसिताः **(हिरण्यपर्णाः)** हिरण्यानि पर्णाः पक्षा येषान्ते **(उहुवः)** भाराणां वोढारः **(उषर्बुधः)** उषसि बोधयुक्ताः **(उदप्रुतः)** उदकस्य गमयितारः **(मन्दिनः)** आनन्दयितारः **(मन्दिनिस्पृशः)** आनन्दस्य स्पर्शयितारः **(मध्वः)** मधुनः **(न)** इव **(मक्षः)** मक्षिराजः **(सवनानि)** ऐश्वर्याणि **(गच्छथः)**॥४॥

अन्वयः-हे राजसेनेशौ! वां ये मधुमन्तोऽस्रिधो हिरण्यपर्णा उषर्बुध उहुव उदप्रुतो मन्दिनः मन्दिनिस्पृशो मध्वो मक्षो न हंसासः सन्ति तैः सवनानि युवां गच्छथः॥४॥

भावार्थः-हे राजपुरुषा! भवन्तो यानयन्त्रेष्वग्निजलादिसम्प्रयोगात् सद्योगत्वाऽऽगत्यैश्वर्य्यं चिकीर्षेयुस्तर्हि किं रत्नं नोपलभेरन्॥४॥

पदार्थः-हे राजा और सेना के ईश जन! **(वाम्)** आप दोनों के **(ये)** जो **(मधुमन्तः)** मधुर गमन से युक्त **(अस्रिधः)** नहीं मारे गये **(हिरण्यपर्णाः)** तेजमय वा सुवर्ण आदि से बने हुए पंख जिनके **(उषर्बुधः)** जो प्रातःकाल में बोध से युक्त **(उहुवः)** भारों के ले चलने **(उदप्रुतः)** जल के चलाने **(मन्दिनः)** आनन्द के देने और **(मन्दिनिस्पृशः)** आनन्द के स्पर्श कराने वाले **(मध्वः)** मधुर पदार्थ के सम्बन्ध में **(मक्षः)** मक्षियों के राजा के **(न)** सदृश **(हंसासः)** तथा हंस के सदृश शीघ्र चलने वाले घोड़े हैं उनसे **(सवनानि)** ऐश्वर्य्यों को आप दोनों **(गच्छथः)** प्राप्त होते हैं॥४॥

भावार्थः-हे राजपुरुषो! आप लोग वाहनों की कलों में अग्निजलादि के संप्रयोग से शीघ्र आ आकर ऐश्वर्य्य की इच्छा करें तो क्या रत्न को न प्राप्त होवें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्वध्वरासो मधुमन्तो अग्नयं उस्रा जरन्ते प्रति वस्तोरश्विना।

यन्निक्तहस्तस्तरणिर्विचक्षणः सोमं सुषाव मधुमन्तमद्रिभिः॥५॥

सुऽअध्वरासः। मधुऽमन्तः। अग्नयः। उस्रा। जरन्ते। प्रति। वस्तोः। अश्विना। यत्। निक्तऽहस्तः। तरणिः। विऽचक्षणः। सोमम्। सुसाव। मधुऽमन्तम्। अद्रिऽभिः॥५॥

पदार्थः-(स्वध्वरासः) सुष्ठ्वध्वराः क्रियायोगसिद्धयो येभ्यस्ते **(मधुमन्तः)** मधुरादिरसोपेताः **(अग्नयः)** पावकाः **(उस्रा)** रश्मीन्। **उस्रा इति रश्मिनामसु पठितम्।** (निघं०१.५) **(जरन्ते)** स्तुवन्ति **(प्रति) (वस्तोः)** दिनस्य **(अश्विना)** राजाऽमात्यौ **(यत्)** यः **(निक्तहस्तः)** शुद्धहस्तः **(तरणिः)** दुःखेभ्यस्तारकः **(विचक्षणः)** अतीव धीमान् **(सोमम्)** ओषधिसमूहम् **(सुषाव)** सुनोति **(मधुमन्तम्)** मधुरादिगुणोपेतम् **(अद्रिभिः)** मेघैः॥५॥

अन्वयः-हे अश्विना! यथा प्रति वस्तोः स्वध्वरासो मधुमन्तोऽग्नय उस्रा जरन्ते यद्यो निक्तहस्तस्तरणिर्विचक्षणोऽद्रिभिर्मधुमन्तं सोमं सुषाव ताँस्तञ्च युवां साध्नुतम्॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं शिल्पिनां विदुषां सङ्गेनाऽग्न्यादिसोमलतादीन् पदार्थान् विज्ञाय सम्प्रयोज्याऽभीष्टानि कार्य्याणि साध्नुत॥५॥

पदार्थः-हे (**अश्विना**) राजा और मन्त्री जनो! जैसे (**प्रति, वस्तोः**) प्रतिदिन को (**स्वध्वरासः**) उत्तम प्रकार क्रियायोगों की सिद्धियाँ जिनसे वे (**मधुमन्तः**) मधुर आदि गुणों से युक्त (**अग्नयः**) अग्नि (**उस्रा**) किरणों की (**जरन्ते**) स्तुति करते अर्थात् उन्हें प्रशंसित करते हैं और (**यत्**) जो (**निक्तहस्तः**) शुद्ध हाथों युक्त (**तरणिः**) दुःखों से पार करने वाला (**विचक्षणः**) अत्यन्त बुद्धिमान् (**अद्रिभिः**) मेघों से (**मधुमन्तम्**) मधुर आदि गुणयुक्त (**सोमम्**) ओषधियों के समूह को (**सुषाव**) उत्पन्न करता है, उन और उसको आप दोनों सिद्ध करो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! आप लोग शिल्पी विद्वानों के सङ्ग से अग्नि आदि और सोमलता आदि पदार्थों को जान के और अच्छे प्रकार प्रयोग करके अभीष्ट कार्य्यों को सिद्ध करो॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आकेनिपासो अहभिर्दविध्वतः स्वर्ण शुक्रं तन्वन्त आ रजः।

सूरश्चिदश्वान् युयुजान ईयते विश्वाँ अनु स्वधया चेतथस्पथः॥६॥

आकेऽनिपासः। अहऽभिः। दविध्वतः। स्वः। न। शुक्रम्। तन्वन्तः। आ। रजः। सूरः। चित्। अश्वान्। युयुजानः। ईयते। विश्वान्। अनु। स्वधया। चेतथः। पथः॥६॥

पदार्थः-(**आकेनिपासः**) य आके समीपे नितरां पान्ति ते किरणाः (**अहभिः**) दिनैः। अत्र **वाच्छन्दसी**ति रुत्वाभावो नलोपश्च। (**दविध्वतः**) पदार्थान् ध्वंसयन्तः (**स्वः**) आदित्यः (**न**) इव (**शुक्रम्**) जलम् (**तन्वन्तः**) विस्तारयन्तः (**आ**) (**रजः**) लोकम् (**सूरः**) सूर्य्यः (**चित्**) (**अश्वान्**) आशुगामिनः किरणान् (**युयुजानः**) युक्तान् कुर्वन् (**ईयते**) गच्छति (**विश्वान्**) सर्वान् (**अनु**) (**स्वधया**) अन्नादिना (**चेतथः**) ज्ञापयथः (**पथः**) मार्गान्॥६॥

अन्वयः-हे क्रियाकुशलौ याननिर्मातृप्रचालकौ! युवां यथाहभिर्दविध्वत आकेनिपासः किरणाः शुक्रं रजश्चातन्वन्तः स्वर्ण विराजन्ते यथा कश्चित् सूरश्चिदश्वान् युयुजान ईयते तथा युवां स्वधया विश्वान् पदार्थान् विज्ञाय पथोऽनु चेतथः॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे मनुष्या! यदि यूयं किरणवत्सूर्य्यवद्यानेष्वग्निना जलं तनुत तर्हि जलस्थलान्तरिक्षमार्गान् सुखेन गच्छथ॥६॥

पदार्थः-हे क्रियाओं में कुशल वाहनों के बनाने और चलाने वाले! आप दोनों जैसे **(अहभिः)** दिनों से **(दविध्वतः)** पदार्थों का नाश करती हुईं **(आकेनिपासः)** समीप में अत्यन्त पालन करने वाली किरणें **(शुक्रम्)** जल और **(रजः)** लोक को **(आ, तन्वतः)** विस्तारयुक्त करते हुए **(स्वः)** सूर्य्य के **(न)** सदृश प्रकाशित होते हैं वा जैसे कोई **(सूरः)** सूर्य्य **(चित्)** भी **(अश्वान्)** शीघ्र चलने वाले किरणों को **(युयुजानः)** युक्त करता **(ईयते)** प्राप्त होता है, वैसे आप दोनों **(स्वधया)** अन्न आदि से **(विश्वान्)** सम्पूर्ण पदार्थों को जान के **(पथः)** मार्गों को **(अनु, चेतथः)** अनुकूल जनाते हो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे मनुष्यो! जो आप लोग किरणों और सूर्य्य के सदृश वाहनों में अग्नि से जल को विस्तारो तो जल, स्थल और आकाशमार्गों को सुख से जाओ॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र वामवोचमश्विना धियंधा रथः स्वश्वो अजरो यो अस्ति।

येन सद्यः परि रजांसि याथो हविष्मन्तं तरणिं भोजमच्छ॥७॥२१॥४॥

प्र। वाम्। अवोचम्। अश्विना। धियम्ऽधाः। रथः। सुऽअश्वः। अजरः। यः। अस्ति। येन। सद्यः। परि। रजांसि। याथः। हविष्मन्तम्। तरणिम्। भोजम्। अच्छ॥७॥

पदार्थः-**(प्र)** **(वाम्)** युवाम् **(अवोचम्)** उपदिशेयम् **(अश्विना)** अध्यापकोपदेशकौ **(धियन्धाः)** यो धियं प्रज्ञां शिल्पविद्यां कर्म दधाति **(रथः)** रमणीययानः **(स्वश्वः)** शोभनाश्वः **(अजरः)** **(यः)** **(अस्ति)** **(येन)** **(सद्यः)** शीघ्रम् **(परि)** **(रजांसि)** लोकानैश्वर्य्याणि वा **(याथः)** गच्छथः **(हविष्मन्तम्)** बहुसामग्रीयुक्तम् **(तरणिम्)** तारकम् **(भोजम्)** भोक्तुं योग्यम् **(अच्छ)**॥७॥

अन्वयः-हे अश्विना! यः स्वश्वोऽजरो रथोऽस्ति तद्विद्या धियन्धा अहं वां प्रावोचं येन युवां हविष्मन्तं तरणिं भोजं रजांसि सद्योऽच्छ परियाथः॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! विद्वांसो वयं युष्मान् याः शिल्पविद्या ग्राहयेम ताभिर्यूयं विमानादीनि यानानि निर्माय सद्यो गमनागमने कृत्वा पुष्कलान् भोगान् प्राप्नुतेति॥७॥

अत्र सूर्य्याश्वगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चचत्वारिंशत्तमं सूक्तमेकविंशो वर्गश्चतुर्थोऽनुवाकश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अश्विना)** अध्यापक और उपदेशक जनो! **(यः)** जो **(स्वश्वः)** उत्तमोत्तम घोड़ों से युक्त **(अजरः)** वृद्धावस्थारहित **(रथः)** सुन्दर वाहन **(अस्ति)** है उसकी विद्या को **(धियन्धाः)** बुद्धि अर्थात् शिल्पविद्या रूप कर्म को धारण करने वाला मैं **(वाम्)** आप दोनों को **(प्र, अवोचम्)** उत्तम उपदेश करूं **(येन)** जिससे आप दोनों **(हविष्मन्तम्)** बहुत सामग्री से युक्त **(तरणिम्)** तारने वाले

(भोजम्) खाने योग्य पदार्थ और **(रजांसि)** लोक वा ऐश्वर्य्यों को **(सद्य:)** शीघ्र **(अच्छ)** उत्तम प्रकार **(परि, याथ:)** सब ओर से प्राप्त होते हैं॥७॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! विद्वान् हम लोग आप लोगों को जिन शिल्पविद्याओं का ग्रहण करावें, उन विद्याओं से आप लोग विमान आदि वाहनों को रच शीघ्र गमन और आगमन को करके बहुत भोगों को प्राप्त होओ॥७॥

इस सूक्त में सूर्य्य और अश्वि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पैंतालीसवां सूक्त और इक्कीसवां वर्ग और चौथा अनुवाक समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य षट्चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्रवायू देवते। १ विराड् गायत्री। २, ३, ५-७ गायत्री। ४ निचृद्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ विद्युद्विद्याविषयमाह॥

अब सात ऋचा वाले छियालीसवें सूक्त का आरम्भ हैं उसके प्रथम मन्त्र में बिजुली की विद्या के विषय को कहते हैं॥

अग्रं॑ पिबा॒ मधू॑नां सु॒तं वा॑यो॒ दिवि॑ष्टिषु। त्वं हि पू॒र्व॒पा असि॑॥१॥

अग्र॑म्। पि॒ब॒। मधू॑नाम्। सु॒तम्। वा॒यो॒। इति॑। दिवि॑ष्टिषु। त्वम्। हि। पू॒र्व॒ऽपाः। असि॑॥१॥

पदार्थः-**(अग्रम्)** उत्तमम् **(पिबा)**। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(मधूनाम्)** मधुराणां रसानां मध्ये **(सुतम्)** निष्पादितम् **(वायो)** वायुरिव बलिष्ठ **(दिविष्टिषु)** दिव्यासु क्रियासु **(त्वम्)** **(हि)** यतः **(पूर्वपाः)** यः पूर्वान् पाति सः **(असि)**॥१॥

अन्वयः-हे वायो! हि त्वं दिविष्टिषु पूर्वपा असि तस्मान्मधूनामग्रं सुतं रसं पिबा॥१॥

भावार्थः-हे विद्वन्! यतस्त्वं सनातनीर्विद्या रक्षित्वा सर्वेभ्यो ददासि तस्माद्भवानेतासु क्रियास्वग्रगण्यो भवति॥१॥

पदार्थः-हे **(वायो)** वायु के सदृश बलयुक्त **(हि)** जिससे **(त्वम्)** आप **(दिविष्टिषु)** श्रेष्ठ क्रियाओं में **(पूर्वपाः)** पूर्व वर्त्तमान जनों का पालन करने वाले **(असि)** हो इससे **(मधूनाम्)** मधुर रसों के बीच में **(अग्रम्)** उत्तम **(सुतम्)** उत्पन्न किये गये रस का **(पिबा)** पान कीजिये॥१॥

भावार्थः-हे विद्वन्! जिससे आप सनातन विद्याओं की रक्षा करके सब के लिये देते हो, इससे आप इन क्रियाओं में मुखिया होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

श॒तेना॑ नो अ॒भिष्टि॑भिर्नि॒युत्वाँ॒ इन्द्र॑सारथिः। वायो॑ सु॒तस्य॑ तृम्पतम्॥२॥

श॒तेन॑। नः॒। अ॒भिष्टि॑ऽभिः। नि॒युत्वा॑न्। इन्द्र॑ऽसारथिः। वायो॒ इति॑। सु॒तस्य॑। तृ॒म्प॒त॒म्॥२॥

पदार्थः-**(शतेना)** असङ्ख्येन। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(नः)** अस्मान् **(अभिष्टिभिः)** अभीष्टाभिः क्रियाभिः **(नियुत्वान्)** बलवान् समर्थो वायुः **(इन्द्रसारथिः)** इन्द्रो विद्युत् सारथिर्यस्य सः **(वायो)** वायुवद्वर्त्तमान विज्ञानयुक्त **(सुतस्य)** निष्पादितस्य **(तृम्पतम्)**॥२॥

अन्वयः-हे वायो वायुवद्वर्त्तमानविज्ञानयुक्ताध्यापकोपदेशकावभिष्टिभिर्यथेन्द्रसारथिर्नियुत्वाञ्छतेना नोऽस्मान् तर्पयति तथा सुतस्य च युवां तृम्पतम्॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा वायुना सह विद्युद्विद्युता सह वायुश्चानेकाः क्रिया जनयतस्तथा पृथिवीजलादिभिर्यूयमनेकानि कार्य्याणि साध्नुत॥२॥

पदार्थः-हे **(वायो)** वायुवद्वर्त्तमान विज्ञानयुक्त अध्यापक और उपदेशक! **(अभिष्टिभिः)** अभीष्ट क्रियाओं से जैसे **(इन्द्रसारथिः)** बिजुलीरूप सारथि जिसका वह **(नियुत्वान्)** बलवान् समर्थ वायु **(शतेना)** असङ्ख्य से **(नः)** हम लोगों को तृप्त करता है, वैसे **(सुतस्य)** उत्पन्न किये गये के सम्बन्ध में आप दोनों **(तृम्पतम्)** तृप्त होओ॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे वायु के साथ बिजुली, बिजुली के साथ वायु अनेक क्रियाओं को उत्पन्न करते हैं, वैसे पृथिवी और जलादिकों से आप अनेक कार्य्यों को सिद्ध करो॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ वां सहस्रं हरय इन्द्रवायू अभि प्रयः। वहन्तु सोमपीतये॥३॥

आ। वाम्। सहस्रम्। हरयः। इन्द्रवायू इति। अभि। प्रयः। वहन्तु। सोमऽपीतये॥३॥

पदार्थः-**(आ)** **(वाम्)** युवाम् **(सहस्रम्)** असङ्ख्यम् **(हरयः)** हरणशीला मनुष्याः **(इन्द्रवायू)** सूर्य्यपवनौ **(अभि)** **(प्रयः)** कमनीयम् **(वहन्तु)** **(सोमपीतये)** सोमस्य पानाय॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्रवायू! ये हरयो वां सोमपीतये सहस्रं प्रय आवहन्तु तान् युवामभिबोधयतम्॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये विद्वांसो युष्मानध्याप्य सुशिक्ष्य विदुषः कुर्वन्ति तान् सततं सेवध्वम्॥३॥

पदार्थः-हे **(इन्द्रवायू)** सूर्य्य और पवन! जो **(हरयः)** हरने वाले मनुष्य **(वाम्)** आप दोनों को **(सोमपीतये)** सोमलता के पान करने के लिये **(सहस्रम्)** असंख्य **(प्रयः)** मनोहर भाव जैसे हों वैसे **(आ, वहन्तु)** प्राप्त करें, उनको आप दोनों **(अभि)** सब ओर से बोध दीजिये॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो विद्वान् जन आप लोगों को पढ़ाय और उत्तम प्रकार शिक्षा देकर विद्वान् करते हैं, उनकी निरन्तर सेवा करो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

रथं हिरण्यवन्धुरमिन्द्रवायू स्वध्वरम्। आ हि स्थाथो दिविस्पृशम्॥४॥

रथम्। हिरण्यऽवन्धुरम्। इन्द्रवायू इति। सुऽअध्वरम् आ। हि। स्थाथः। दिविऽस्पृशम्॥४॥

पदार्थः-(**रथम्**) रमणीयं यानम् (**हिरण्यवन्धुरम्**) हिरण्यानि सुवर्णानि वन्धुराणि बन्धनानि यस्मिंस्तम् (**इन्द्रवायू**) वायुविद्युद्वच्छीघ्रकारिणौ शिल्पविद्याऽध्यापकोपदेशकौ (**स्वध्वरम्**) सुष्ठ्वध्वरा अहिंसिता क्रिया यस्मात्तम् (**आ**) (**हि**) (**स्थाथः**) भवथः (**दिविस्पृशम्**) दिवि स्पृशति येन तम्॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्रवायू! युवां स्वध्वरं हिरण्यवन्धुरं दिविस्पृशं रथं ह्यास्थाथः॥४॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशका! भवन्तः प्रीत्या सुवर्णादिजटितानां यानानां विद्यां मनुष्येभ्यः सततमुपदिशन्तु यैरेतेऽन्तरिक्षादिषु गन्तुं शक्नुयुः॥४॥

पदार्थः-हे (**इन्द्रवायू**) वायु और बिजुली के सदृश शीघ्रकारी शिल्पविद्या के अध्यापक और उपदेशक जनो! आप दोनों (**स्वध्वरम्**) नहीं नष्ट हुई उत्तम क्रिया जिससे और (**हिरण्यवन्धुरम्**) सुवर्ण हैं बन्धन जिसमें उस (**दिविस्पृशम्**) आकाश में चलने वाले (**रथम्**) सुन्दर वाहन को (**हि**) ही (**आ, स्थाथः**) आ स्थित होओ॥४॥

भावार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक जनो! आप लोग प्रीति से सुवर्ण आदि से जड़े हुए वाहनों की विद्या का मनुष्यों के लिये निरन्तर उपदेश देओ कि जिन वाहनों से ये लोग अन्तरिक्ष आदिकों में जा सकें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

रथे॑न पृथुपाज॑सा दा॒श्वांस॒मुप॑ गच्छतम्। इन्द्र॑वायू इ॒हा ग॑तम्॥५॥

रथे॑न। पृथु॒ऽपाज॑सा। दा॒श्वांस॑म्। उप॑। ग॒च्छ॒त॒म्। इन्द्र॑वायू॒ इति॑। इ॒ह। आ। ग॒त॒म्॥५॥

पदार्थः-(**रथेन**) रमणीयेन यानेन (**पृथुपाजसा**) विस्तीर्णबलेन (**दाश्वांसम्**) दातारम् (**उप**) (**गच्छतम्**) (**इन्द्रवायू**) वायुविद्युदग्नी इव राजसेनेशौ (**इह**) अस्मिन् सङ्ग्रामे (**आ**) (**गतम्**)॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्रवायू इव प्रतापिनौ राजसेनेशौ! युवां पृथुपाजसा रथेनेहाऽऽगतं दाश्वांसमुपगच्छतम्॥५॥

भावार्थः-यथा वायुविद्युतौ महाप्रतापयुक्तौ वर्त्तेते तथैव राजाऽमात्यौ भवेताम्॥५॥

पदार्थः-हे (**इन्द्रवायू**) वायु और बिजुलीरूप अग्नि के सदृश प्रतापी राजा और सेना के ईश जनो! आप दोनों (**पृथुपाजसा**) विस्तीर्ण बलयुक्त (**रथेन**) रमणीय वाहन से (**इह**) इस संग्राम में (**आ, गतम्**) आओ और (**दाश्वासंम्**) दाता जन के (**उप, गच्छतम्**) समीप प्राप्त होओ॥५॥

भावार्थः-जैसे वायु और बिजुली बड़े प्रताप से युक्त वर्त्तमान हैं, वैसे ही राजा और मन्त्रीजन होवें॥५॥

अथ सूर्य्ययुक्तवायुविषयमाह॥

अब सूर्य्ययुक्त वायु विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र॑वायू अ॒यं सु॒तस्तं दे॒वेभि॑: स॒जोष॑सा। पिब॑तं दा॒शुषो॑ गृ॒हे॥६॥

इन्द्र॑वायू॒ इति॑। अ॒यम्। सु॒तः। तम्। दे॒वेभि॑ः। स॒ऽजोष॑सा। पिब॑तम्। दा॒शुष॑ः। गृ॒हे॥६॥

पदार्थः-(**इन्द्रवायू**) सूर्य्यवायू इवाध्यापकोपदेशकौ (**अयम्**) (**सुतः**) निष्पादितः (**तम्**) (**देवेभिः**) विद्वद्भिर्दिव्यैः पदार्थैर्वा (**सजोषसा**) समानप्रीतिकामौ (**पिबतम्**) (**दाशुषः**) दातुः (**गृहे**)॥६॥

अन्वयः-हे सजोषसेन्द्रवायू! योऽयं दाशुषो गृहे सुतस्तं देवेभिस्सह यथा पिबतं तथैव सूर्य्यवायू सर्वेभ्यो रसं पिबतः॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽर्कपवनौ सर्वेषामुपकारं सततं कुरुतस्तथैव विद्वद्भिरनुष्ठेयम्॥६॥

पदार्थः-हे (**सजोषसा**) तुल्य प्रीति की कामना करने वाले (**इन्द्रवायू**) सूर्य्य और वायु के सदृश अध्यापक और उपदेशको! जो (**अयम्**) यह (**दाशुषः**) दाता जन के (**गृहे**) गृह में (**सुतः**) उत्पन्न किया गया (**तम्**) उसको (**देवेभिः**) विद्वानों वा श्रेष्ठ पदार्थों के साथ जैसे (**पिबतम्**) पान करो, वैसे ही सूर्य्य और वायु सब से रस पीते हैं॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य और पवन सब के उपकार को निरन्तर करते हैं, वैसे ही विद्वानों को करना चाहिये॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इ॒ह प्र॒याण॑मस्तु वा॒मिन्द्र॑वायू वि॒मोच॑नम्। इ॒ह वां॒ सोम॑पीतये॥७॥२२॥

इ॒ह। प्र॒ऽयान॑म्। अ॒स्तु॒। वा॒म्। इन्द्र॑वायू॒ इति॑। वि॒ऽमोच॑नम्। इ॒ह। वा॒म्। सोम॑ऽपीतये॥७॥

पदार्थः-(**इह**) अस्मिन् (**प्रयाणम्**) गमनम् (**अस्तु**) (**वाम्**) युवयोः (**इन्द्रवायू**) वायुविद्युद्वद्वर्त्तमानौ राजाऽमात्यौ (**विमोचनम्**) (**इह**) (**वाम्**) युवयोः (**सोमपीतये**) सोमस्य पानाय॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्रवायू! यथेह वां प्रयाणमस्तु यथेह वां सोमपीतये विमोचनमस्तु तथैव वायुविद्युतौ वर्त्तेत इति विजानीतम्॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो नित्यमितस्ततः कार्य्यसिद्धये गच्छेदागच्छेत्तमेव राजानं मन्यध्वमिति॥७॥

अत्रेन्द्रवायुगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति षट्चत्वारिंशत्तमं सूक्तं द्वाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**इन्द्रवायू**) वायु और बिजुली के सदृश वर्त्तमान राजा और मन्त्री जनो! जैसे (**इह**) इस में (**वाम्**) आप दोनों का (**प्रयाणम्**) गमन (**अस्तु**) हो और जैसे (**इह**) इस में (**वाम्**) आप दोनों का

(सोमपीतये) सोमपान के लिये **(विमोचनम्)** त्याग हो, वैसे ही वायु और बिजुली वर्त्तमान हैं, ऐसा जानो॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो नित्य इधर उधर कार्य्यसिद्धि के लिय जावे और आवे उसी को राजा मानो॥७॥

इस सूक्त में बिजुली और वायु के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति है, यह जानना चाहिये॥

यह छियालीसवां सूक्त और बाईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ चतुर्ऋचस्य सप्तचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। १ वायुः। २-४ इन्द्रवायू देवते। १, ३ अनुष्टुप्। ४ निचृदनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। २ भुरिगुष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ वायुसादृश्येन विद्वद्गुणानाह॥

अब चार ऋचा वाले सैंतालीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में वायुसादृश्य से विद्वानों के गुणों को कहते हैं॥

वायो॑ शु॒क्रो अ॑यामि ते॒ मध्वो॒ अग्रं॒ दिवि॑ष्टिषु।

आ या॑हि॒ सोम॑पीतये स्पा॒र्हो दे॑व नि॒युत्व॑ता॥ १॥

वायो॒ इति॑। शु॒क्रः। अ॒या॒मि॒। ते॒। मध्वः॑। अग्र॑म्। दिवि॑ष्टिषु। आ। या॒हि॒। सोम॑ऽपीतये। स्पा॒र्हः। दे॒व॒। नि॒युत्व॑ता॥ १॥

पदार्थः-(**वायो**) (**शुक्रः**) शुद्धस्वभावः (**अयामि**) प्राप्नोमि (**ते**) तव (**मध्वः**) मधुरस्य (**अग्रम्**) (**दिविष्टिषु**) प्रकाशे स्थितासु क्रियासु (**आ**) (**याहि**) (**सोमपीतये**) उत्तमरसपानाय (**स्पार्हः**) स्पर्हणीयः (**देव**) (**नियुत्वता**) प्रभुणा राज्ञा सह॥ १॥

अन्वयः-हे देव वायो! स्पार्हः शुक्रोऽहं दिविष्टिषु नियुत्वता सह सोमपीतये ते मध्वोऽग्रं यथायामि तथा त्वमायाहि॥ १॥

भावार्थः-ये वायुवत्सर्वत्र विहृत्य विद्याग्रहणं कुर्वन्ति ते सर्वत्र स्पर्हणीया जायन्ते॥ १॥

पदार्थः-हे (**देव**) विद्वन् (**वायो**) वायु के सदृश वर्त्तमान! (**स्पार्हः**) ईप्सा करने योग्य (**शुक्रः**) शुद्ध स्वभाव वाला मैं (**दिविष्टिषु**) प्रकाश के बीच जो स्थित क्रिया उनमें (**नियुत्वता**) समर्थ राजा के साथ (**सोमपीतये**) उत्तम रस के पान के लिये (**ते**) आपके (**मध्वः**) मधुर रस के (**अग्रम्**) अग्रभाग को जैसे (**अयामि**) प्राप्त होता हूँ, वैसे आप (**आ, याहि**) प्राप्त होओ॥ १॥

भावार्थः-जो वायु के सदृश सर्वत्र विहार करके विद्या का ग्रहण करते हैं, वे सर्वत्र ईप्सा करने योग्य होते हैं॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र॑श्च वायवेषां॒ सोमा॑नां पी॒तिम॑र्हथः।

यु॒वां हि यन्तीन्द॑वो नि॒म्नमापो॒ न स॒ध्र्य॑क्॥ २॥

इन्द्रः॑। च॒। वा॒यो॒ इति॑। ए॒षा॒म्। सोमा॑नाम्। पी॒तिम्। अ॒र्ह॒थः। यु॒वाम्। हि। यन्ति॑। इन्द॑वः। नि॒म्नम्। आपः॑। न। स॒ध्र्य॑क्॥ २॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) परमैश्वर्य्यवान् (**च**) (**वायो**) बलयुक्त (**एषाम्**) (**सोमानाम्**) ओषध्युत्पन्नानां रसानाम् (**पीतिम्**) पानम् (**अर्हथः**) (**युवाम्**) (**हि**) (**यन्ति**) (**इन्दवः**) सङ्गन्तारः पूजनीयाः। **इन्दुरिति यज्ञनामसु पठितम्।** (निघं०३.१७) (**निम्नम्**) (**आपः**) (**न**) इव (**सध्र्यक्**) यः सहाञ्चति॥२॥

अन्वयः-हे वायो! त्वमिन्द्रश्च युवामापो निम्नं न यथेन्दवः सध्र्यक् यन्ति तथा हि युवामेषां सोमानां पीतिमर्हथः॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथा यज्ञा अपो गच्छन्ति तथैव विद्वांसो विद्याव्यवहारमर्हन्ति॥२॥

पदार्थः-हे (**वायो**) बल से युक्त! आप (**च**) और (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्यवान् (**युवाम्**) आप दोनों (**आपः**) जैसे जल (**निम्नम्**) नीचे के स्थल के (**न**) वैसे जिस प्रकार (**इन्दवः**) मिलने वाले और सत्कार करने योग्य जन और (**सध्र्यक्**) एक साथ सत्कार करने वाला ये सब (**यन्ति**) प्राप्त होते हैं (**हि**) उसी प्रकार आप दोनों (**एषाम्**) इन (**सोमानाम्**) ओषधियों से उत्पन्न हुए रसों के (**पीतिम्**) पान के (**अर्हथः**) योग्य हैं॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे यज्ञ जलों को प्राप्त होते हैं, वैसे ही विद्वान् विद्याव्यवहार के योग्य होते हैं॥२॥

अथ राजामात्यगुणानाह॥

अब राजा और अमात्य के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वायविन्द्रश्च शुष्मिणा सुरथं शवसस्पती।

नियुत्वन्ता न ऊतय आ यातं सोमपीतये॥३॥

वायो इति। इन्द्रः। च। शुष्मिणा। सुऽरथम्। शवसः। पती इति। नियुत्वन्ता। नः। ऊतये। आ। यातम्। सोमऽपीतये॥३॥

पदार्थः-(**वायो**) महाबल (**इन्द्रः**) राजा (**च**) (**शुष्मिणा**) बलिष्ठौ (**सरथम्**) समानं यानम् (**शवसः**) बलस्य (**पती**) पालकौ (**नियुत्वन्ता**) प्रभुसमर्थौ (**नः**) अस्माकम् (**ऊतये**) रक्षणाय (**आ**) (**यातम्**) (**सोमपीतये**) ऐश्वर्यपालनाय॥३॥

अन्वयः-हे शुष्मिणा शवसस्पती नियुत्वन्ता वायविन्द्रश्च न ऊतये सोमपीतये सरथमायातम्॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये राज्ञोऽमात्याश्च बलवर्द्धिनः समर्था न्यायकारिणः स्युस्ते युष्माकं पालकाः सन्तु॥३॥

पदार्थः-हे (**शुष्मिणा**) बलयुक्त और (**शवसः**) बल के (**पती**) पालन करने वाले (**नियुत्वन्ता**) स्वामी और समर्थ (**वायो**) बड़े बल से युक्त (**इन्द्रः, च**) और राजा (**नः**) हम लोगों के (**ऊतये**) रक्षण

आदि के और **(सोमपीतये)** ऐश्वर्य्य के पालन के लिये **(सरथम्)** समान वाहन को **(आ, यातम्)** प्राप्त होओ॥३॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो राजा के मन्त्री जन बल के बढ़ाने वाले सामर्थ्य युक्त और न्यायकारी होवें, वे आप लोगों के पालन करने वाले हों॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

या वां सन्ति पुरुस्पृहो नियुतो दाशुषे नरा।

अस्मे ता यज्ञवाहसेन्द्रवायू नि यच्छतम्॥४॥२३॥

याः। वाम्। सन्ति। पुरुऽस्पृहः। निऽयुतः। दाशुषे। नरा। अस्मे इति। ताः। यज्ञऽवाहसा। इन्द्रवायू इति। नि। यच्छतम्॥४॥

पदार्थ:-(याः) (वाम्) युवयोः **(सन्ति) (पुरुस्पृहः)** बहुभिः स्पर्हणीयाः क्रियाः **(नियुतः)** निश्चितः **(दाशुषे)** दात्रे **(नरा)** नायकौ **(अस्मे)** अस्मभ्यम् **(ताः) (यज्ञवाहसा)** यज्ञप्रापकौ **(इन्द्रवायू)** धनिविद्वांसौ राजामात्यौ **(नि) (यच्छतम्)** नितरां दद्यातम्॥४॥

अन्वय:-हे यज्ञवाहसा नरेन्द्रवायू! वां या नियुतः पुरुस्पृहो दाशुषे सन्ति ता अस्मे नि यच्छतम्॥४॥

भावार्थ:-हे राजाऽमात्या! युष्माभिरस्माकं प्रजाजनानामिच्छाः पूर्णाः काऱ्या यतो वयं युष्माकमलं कामं कुर्य्याम॥४॥

अत्र विद्वद्राजामात्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति बोध्यम्॥

इति सप्तचत्वारिंशत्तमं सूक्तं त्रयोविंशो वर्गश्च समाप्तः।

पदार्थ:-हे **(यज्ञवाहसा)** यज्ञ को प्राप्त कराने वाले **(नरा)** नायक **(इन्द्रवायू)** धनी और विद्वान् तथा राजा और मन्त्री जनो! **(वाम्)** आप दोनों की **(याः)** जो **(नियुतः)** निश्चित **(पुरुस्पृहः)** बहुतों से ईप्सा करने योग्य क्रिया **(दाशुषे)** दाता जन के लिये **(सन्ति)** हैं **(ताः)** उन क्रियाओं को **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(नि, यच्छतम्)** अतिशय करके दीजिये॥४॥

भावार्थ:-हे राजा और मन्त्री जनो! आप लोगों को चाहिये कि हम प्रजा जनों की इच्छा पूर्ण करें, जिससे हम लोग आप लोगों का पूर्ण काम करें॥४॥

इस सूक्त में विद्वान्, राजा और अमात्य के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ संगति है, यह जानना चाहिये॥

यह सैंतालीसवाँ सूक्त और तेईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्याष्टचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। वायुर्देवता। १ निचृदनुष्टुप्। २ अनुष्टुप्। ३-५ भुरिगनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः।

अथ राजा प्रजाभिः सह कथं वर्त्तेतेत्याह॥

[अब पाँच ऋचावाले अड़तालीसवें सूक्त का आरम्भ है।] अब राजा प्रजा के साथ कैसे वर्ते, इस विषय को प्रथम मन्त्र में कहते हैं॥

विहि होत्रा अवीता विपो न रायो अर्यः।

वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये॥१॥

विहि। होत्राः। अवीताः। विपः। न। रायः। अर्यः। वायो इति। आ। चन्द्रेण। रथेन। याहि। सुतस्य। पीतये॥१॥

पदार्थः-(**विहि**) व्याप्नुहि। अत्र **वाच्छन्दसी**ति ह्रस्वः। (**होत्राः**) आददानाः (**अवीताः**) नाशरहिताः (**विपः**) मेधावी (**न**) इव (**रायः**) धनानि (**अर्यः**) वैश्यः (**वायो**) विद्वन् (**आ**) (**चन्द्रेण**) सुवर्णमयेन (**रथेन**) यानेन (**याहि**) आगच्छ (**सुतस्य**) निष्पादितस्य (**पीतये**) रक्षणाय॥१॥

अन्वयः-हे वायो विपस्त्वमर्यो रायो नावीता होत्रा विहि सुतस्य पीतये चन्द्रेण रथेनाऽऽयाहि॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा धीमान् वणिग्जनः प्रीत्या धनं रक्षति तथैव भवान् भवद्भृत्याश्च सम्प्रीत्या प्रजाः सततं रक्षन्तु॥१॥

पदार्थः-हे (**वायो**) विद्वान् (**विपः**) बुद्धिमान्! आप (**अर्यः**) वैश्यजन (**रायः**) धनों के (**न**) जैसे वैसे (**अवीताः**) नाश से रहित क्रियाओं को (**होत्राः**) ग्रहण करते हुए (**विहि**) व्याप्त हूजिये और (**सुतस्य**) उत्पन्न किये रस की (**पीतये**) रक्षा के लिये (**चन्द्रेण**) सुवर्णमय (**रथेन**) वाहन से (**आ, याहि**) प्राप्त हूजिये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे बुद्धिमान् वैश्यजन प्रीति से धन की रक्षा करता है, वैसे ही आप और आपके भृत्यजन अच्छी प्रीति से प्रजाओं की निरन्तर रक्षा करो॥१॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

निर्युवाणो अशस्तीर्नियुत्वाँ इन्द्रसारथिः।

वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये॥२॥

निःऽयुवानः। अशस्तीः। नियुत्वान्। इन्द्रऽसारथिः। वायो इति। आ। चन्द्रेण। रथेन। याहि। सुतस्य। पीतये॥२॥

पदार्थः-(**निर्युवाणः**) निर्गता युवानो यस्मन्नितरां युवानो वा (**अशस्तीः**) अहिंसाः (**नियुत्वान्**) नियतगतिर्वायुः (**इन्द्रसारथिः**) इन्द्रस्य विद्युतः सूर्य्यस्याऽग्नेर्वा नियमेन गमयिता (**वायो**) वायुवद्गुणविशिष्ट (**आ**) (**चन्द्रेण**) आह्लादकेन सुवर्णादिजटितेन (**रथेन**) (**याहि**) आगच्छ (**सुतस्य**) निष्पन्नस्य रसस्य (**पीतये**) पानाय॥२॥

अन्वयः-हे वायो राजँस्त्वं नियुत्वानिन्द्रसारथिरिव चन्द्रेण रथेन सुतस्य पीतय आयाहि यथा निर्युवाणोऽशस्तीश्चरन्ति तथा चर॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा वायुनाग्निर्वर्धते सद्यो गच्छति तथैव न्यायेन पालितया प्रजया राजा वर्धते ये हिंसां नाचरन्ति तेऽजातशत्रवः सन्तः सर्वप्रिया भवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे (**वायो**) वायु के सदृश गुणों से विशिष्ट राजन्! आप (**नियुत्वान्**) नियमयुक्त गमन वाले वायु के और (**इन्द्रसारथिः**) बिजुली सूर्य्य वा अग्नि को नियम से चलाने वाले के सदृश (**चन्द्रेण**) आनन्द देने वाले सुवर्ण आदि से जड़े हुए (**रथेन**) वाहन से (**सुतस्य**) उत्पन्न हुए रस के (**पीतये**) पान करने के लिये (**आ याहि**) आइये और जैसे (**निर्युवाणः**) निकल गये युवा जन जिससे वा निरन्तर युवाजन (**अशस्तीः**) अहिंसाओं का आचरण करते अर्थात् हिंसाओं को नहीं करते हैं, वैसे कीजिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे वायु से अग्नि बढ़ती और शीघ्र चलती है, वैसे ही न्याय से पालन की गई प्रजा से राजा वृद्धि को प्राप्त होता है और जो हिंसा नहीं करते हैं, वे शत्रुओं से रहित हुए सब के प्रिय होते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अनु॑ कृष्णे वसु॑धिती येमाते॑ विश्वपे॑शसा।

वायवा चन्द्रेण रथे॑न याहि सुतस्य॑ पीतये॑॥३॥

अनु॑। कृष्णे। इति॑। वसु॑धिती इति वसु॑ऽधिती। येमाते इति॑। विश्वऽपे॑शसा। वायो इति॑। आ। चन्द्रेण॑। रथे॑न। याहि। सुतस्य॑। पीतये॑॥३॥

पदार्थः-(**अनु**) (**कृष्णे**) कर्षिते (**वसुधिती**) वसूनां धितिर्ययोर्द्यावापृथिव्योस्ते (**येमाते**) नियमेन गच्छतः (**विश्वपेशसा**) सर्वस्वरूपेण (**वायो**) राजन् (**आ**) (**चन्द्रेण**) रत्नजटितेन (**रथेन**) (**याहि**) (**सुतस्य**) (**पीतये**) रक्षणाय॥३॥

अन्वयः-हे वायो! यथा विश्वपेशसा कृष्णे वसुधिती अनु येमाते तथैव सुतस्य पीतये चन्द्रेण रथेन त्वमा याहि॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! यथा भूमिसूर्य्यौ बहुफलदौ वर्त्तेते नियमेन गच्छतस्तथा बहुफलदो भूत्वा विद्याविनयनियमेन सततं गच्छेः॥३॥

पदार्थः-हे **(वायो)** राजन्! जैसे **(विश्वपेशसा)** सम्पूर्ण उत्तमरूप से **(कृष्णे)** खींची गई **(वसुधिती)** सम्पूर्ण लोकों की स्थिति जिनमें वे अन्तरिक्ष और पृथिवी **(अनु, येमाते)** नियम से चलती हैं, वैसे ही **(सुतस्य)** उत्पन्न किये गये पदार्थ की **(पीतये)** रक्षा के लिये **(चन्द्रेण)** रत्नों से जड़े हुए **(रथेन)** वाहन के द्वारा आप **(आ, याहि)** प्राप्त हूजिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जैसे भूमि और सूर्य्य बहुत फल देने वाले वर्त्तमान और नियम से चलते हैं, वैसे बहुत फलों के देने वाले होकर विद्या और विनय के नियम से निरन्तर जाइये॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वहन्तु त्वा मनोयुजो युक्तासो नवतिर्नव।

वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये॥४॥

वहन्तु। त्वा। मनःऽयुजः। युक्तासः। नवतिः। नव। वायो इति। आ। चन्द्रेण। रथेन। याहि। सुतस्य। पीतये॥४॥

पदार्थः-**(वहन्तु)** प्राप्नुवन्तु प्रापयन्तु वा **(त्वा)** त्वां राजानम् **(मनोयुजः)** ये मनसा ब्रह्म युञ्जते ते **(युक्तासः)** कृतयोगाभ्यासाः **(नवतिः)** **(नव)** नवगुणिता **(वायो)** बलिष्ठ राजन् **(आ)** **(चन्द्रेण)** **(रथेन)** **(याहि)** **(सुतस्य)** प्राप्तस्य राज्यस्य **(पीतये)** रक्षणाय॥४॥

अन्वयः-हे वायो! मनोयुजो युक्तासो नव नवतिर्नाड्य इव त्वा वहन्तु त्वमेषां सुतस्य पीतये चन्द्रेण रथेनाऽऽयाहि॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! यद्युत्तमा आप्तजनास्तव सहायाः स्युस्तर्हि भवान् यद्यदिच्छेत् तत्तत्सर्वं सिद्ध्येत्॥४॥

पदार्थः-हे **(वायो)** बलवान् राजन्! **(मनोयुजः)** मन से ब्रह्म का योग करने वाले **(युक्तासः)** जिन्होंने योगाभ्यास किया वे **(नव)** नौ वार गुनी गईं **(नवतिः)** नव्वे संख्या से युक्त नाड़ियो के सदृश **(त्वा)** आप राजा को **(वहन्तु)** प्राप्त हों वा प्राप्त करावें आप इनके **(सुतस्य)** प्राप्त राज्य के **(पीतये)** रक्षण आदि के लिये **(चन्द्रेण)** सुवर्ण आदि से बने हुए **(रथेन)** वाहन से **(आ, याहि)** आइये॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! जो श्रेष्ठ यथार्थवक्ता जन आपके सहायक होवें तो आप जिस-जिस पदार्थ की इच्छा करें, वह-वह सब सिद्ध होवें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वायो॑ श॒तं हरी॑णां यु॒वस्व॒ पोष्या॑णाम्।

उ॒त वा॑ ते सह॒स्रिणो॒ रथ॒ आ या॑तु॒ पाज॑सा॥५॥२४॥

वायो॒ इति॑ श॒तम्। हरी॑णाम्। यु॒वस्व॑। पोष्या॑णाम्। उ॒त। वा॒। ते॒। स॒ह॒स्रिणः॑। रथः॑। आ। या॒तु॒। पाज॑सा॥५॥

पदार्थः-(**वायो**) (**राजन्**) (**शतम्**) असङ्ख्यम् (**हरीणाम्**) मनुष्याणाम् (**युवस्व**) कर्मसु प्रेर्स्व (**पोष्याणाम्**) पोषितुं योग्यानाम् (**उत**) (**वा**) (**ते**) तव (**सहस्रिणः**) असङ्ख्यपुरुषधनयुक्तस्य (**रथः**) (**आ**) (**यातु**) समन्तात्प्राप्नोतु (**पाजसा**) बलेन॥५॥

अन्वयः-हे वायो राजंस्त्वं पोष्याणां हरीणां शतं युवस्वोत वा सहस्रिणस्ते पाजसा रथ आयातु॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि राज्यं कर्त्तुमिच्छेस्तर्हि सुसहायान् गृह्णीति॥५॥

अत्र राजगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टाचत्वारिंशत्तमं सूक्तं चतुर्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**वायो**) राजन्! आप (**पोष्याणाम्**) पोषण करने योग्य (**हरीणाम्**) मनुष्यों के (**शतम्**) असङ्ख्य को (**युवस्व**) कर्मों के बीच प्रेरणा देओ (**उत, वा**) अथवा (**सहस्रिणः**) असंख्य पुरुष और धन से युक्त (**ते**) आपके (**पाजसा**) बल से (**रथः**) वाहन (**आ, यातु**) सब ओर से प्राप्त हो॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! जो राज्य करने की इच्छा करो तो उत्तम सहायों का ग्रहण करो॥५॥

इस सूक्त में राजगुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह अड़तालीसवां सूक्त और चौबीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षड्चस्यैकोनपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। इन्द्राबृहस्पती देवते। १ निचृद्गायत्री। २-६ गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ राजमनुष्याः कथं वर्धेरन्नित्याह॥

अब छः ऋचा वाले उनचासवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा और प्रजा की कैसे वृद्धि हो, इस विषय को कहते हैं॥

इदं वामास्ये हविः प्रियमिन्द्राबृहस्पती। उक्थं मदश्च शस्यते॥ १॥

इदम्। वाम्। आस्ये। हविः। प्रियम्। इन्द्राबृहस्पती इति। उक्थम्। मदः। च। शस्यते॥ १॥

पदार्थः-**(इदम्) (वाम्) (आस्ये)** मुखे **(हविः)** अत्तुमर्हं संस्कृतमन्नम् **(प्रियम्)** कमनीयम् **(इन्द्राबृहस्पती)** विद्युत्सूर्य्याविव प्रधानराजानौ **(उक्थम्)** प्रशंसनीयम् **(मदः)** आनन्दः **(च) (शस्यते)** स्तूयते॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्राबृहस्पती! वामास्य इदं प्रियमुक्थं मदश्च हविः शस्यते॥१॥

भावार्थः-यदि राजादयो मनुष्याः सुसंस्कृतान्नं भुञ्जते तर्हि प्रकाशवन्तो दीर्घायुषो बलिष्ठाश्च जायन्ते॥१॥

पदार्थः-हे **(इन्द्राबृहस्पती)** बिजुली और सूर्य के सदृश मन्त्री और राजा! **(वाम्)** आप दोनों के **(आस्ये)** सुख में **(इदम्)** यह **(प्रियम्)** सुन्दर **(उक्थम्)** प्रशंसा करने योग्य **(मदः)** आनन्द **(च)** और **(हविः)** खाने योग्य वस्तु **(शस्यते)** स्तुति किया जाता है॥१॥

भावार्थः-जो राजा आदि मनुष्य उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्न को खाते हैं तो प्रकाशयुक्त अधिक अवस्था वाले और बलवान् होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयं वां परि षिच्यते सोम इन्द्राबृहस्पती। चारुर्मदाय पीतये॥ २॥

अयम्। वाम्। परि। सिच्यते। सोमः। इन्द्राबृहस्पती इति। चारुः। मदाय पीतये॥ २॥

पदार्थः-**(अयम्) (वाम्)** युवयोः **(परि)** सर्वतः **(सिञ्चते) (सोमः)** महौषधिरसः **(इन्द्राबृहस्पती)** राजोपदेशकविद्वांसौ **(चारुः)** अत्युत्तमः **(मदाय)** आनन्दाय **(पीतये)** पानाय॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्राबृहस्पती! वामास्ये मदाय पीतये चारुः सोमोऽयं परिषिच्यतेऽनेन भवान्त्समर्थौ भवेत्॥२॥

भावार्थः-यथोत्तमाऽन्नं सेव्यते तथैव श्रेष्ठो रसोऽपि सेव्येत॥२॥

पदार्थः-हे **(इन्द्राबृहस्पती)** राजा और उपदेशक विद्वान् जनो! **(वाम्)** आप दोनों के मुख में

(मदाय) आनन्द के लिये **(पीतये)** पान करने को **(चारुः)** अति उत्तम **(सोमः)** बड़ी ओषधि का रस **(अयम्)** यह **(परि)** सब प्रकार से **(सिच्यते)** सींचा जाता है, इससे आप समर्थ होवें॥२॥

भावार्थः-जैसे उत्तमान्न सेवन किया जाता, वैसे ही उत्तम रस भी सेवन किया जावे॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ नं इन्द्राबृहस्पती गृहमिन्द्रश्च गच्छतम्। सोमपा सोमपीतये॥३॥

आ। नः। इन्द्राबृहस्पती इति। गृहम्। इन्द्रः। च। गच्छतम्। सोमऽपा। सोमऽपीतये॥३॥

पदार्थः-(आ) (नः) अस्माकम् **(इन्द्राबृहस्पती)** राजाऽध्यापकौ **(गृहम्)** **(इन्द्रः)** ऐश्वर्य्यवान् **(च)** **(गच्छतम्)** **(सोमपा)** यो सोमं पिबतस्तौ **(सोमपीतये)** सोमस्योत्तमरसपानाय॥३॥

अन्वयः-हे सोमपा इन्द्राबृहस्पती! युवां नो गृहं सोमपीतय आ गच्छतमिन्द्रश्चागच्छेत्॥३॥

भावार्थः-हे राजाऽमात्यधनाढ्या यथा वयं युष्मान्निमन्त्र्याऽन्नादिना सत्कुर्य्याम तथैव यूयमस्मान् सत्कुरुत॥३॥

पदार्थः-हे **(सोमपा)** सोमलता के रस को पीने वाले **(इन्द्राबृहस्पती)** राजा और अध्यापक आप दोनों **(नः)** हम लोगों के **(गृहम्)** घर को **(सोमपीतये)** सोमलता के उत्तम रस पीने के लिये **(आ, गच्छतम्)** आओ **(इन्द्रः)** और ऐश्वर्य्य वाला जन **(च)** भी आवे॥३॥

भावार्थः-हे राजा, मन्त्री और धनी जनो! जैसे हम लोग आप लोगों को निमन्त्रण देकर अन्न आदि से सत्कार करें, वैसे ही आप हम लोगों का सत्कार करो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्मे इन्द्राबृहस्पती रयिं धत्तं शतग्विनम्। अश्वावन्तं सहस्रिणम्॥४॥

अस्मे इति। इन्द्राबृहस्पती इति। रयिम्। धत्तम्। शतऽग्विनम्। अश्वऽवन्तम्। सहस्रिणम्॥४॥

पदार्थः-(अस्मे) अस्मभ्यम्। अत्र **शे** इति सूत्रेण प्रगृह्यसञ्ज्ञा, **प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यमि**ति सन्ध्यभावः। **(इन्द्राबृहस्पती)** विद्युत्सूर्य्याविव राजप्रधानौ **(रयिम्)** धनम् **(धत्तम्)** **(शतग्विनम्)** शतग्वोऽसङ्ख्याता गावो विद्यन्ते यस्मिँस्तम् **(अश्वावन्तम्)** प्रशस्ताऽश्वादिसहितम् **(सहस्रिणम्)** सहस्रमसङ्ख्याः पदार्था विद्यन्ते यस्मिँस्तम्॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्राबृहस्पती! युवामस्मे शतग्विनमश्वावन्तं सहस्रिणं रयिं धत्तम्॥४॥

भावार्थः-तदैव राजप्रधानादीनां प्रशंसा जायेत यदा सर्वां प्रजां धनाढ्यां विदुषीं च ते कुर्य्युः॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्राबृहस्पती)** बिजुली और सूर्य्य के सदृश राजा और प्रधान जनो! आप दोनों

(अस्मे) हम लोगों के लिये **(शतग्विनम्)** असङ्ख्यात गौओं और **(अश्वावन्तम्)** उत्तम घोड़ों आदि से युक्त **(सहस्रिणम्)** असंख्य पदार्थ जिसमें विद्यमान उस **(रयिम्)** धन को **(धत्तम्)** धारण करो॥४॥

भावार्थ:-तभी राजा और प्रधानादिकों की प्रशंसा होवे कि जब सब प्रजा को धन और विद्या से युक्त करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्राबृहस्पती वयं सुते गीर्भिर्हवामहे। अस्य सोमस्य पीतये॥५॥

इन्द्राबृहस्पती इति। वयम्। सुते। गीःऽभिः। हवामहे। अस्य। सोमस्य। पीतये॥५॥

पदार्थ:-(इन्द्राबृहस्पती) अध्यापकोपदेशकौ **(वयम्)** **(सुते)** निष्पन्ने **(गीर्भिः)** **(हवामहे)** स्वीकुर्महे **(अस्य)** **(सोमस्य)** ओषधिजातस्य रसस्य **(पीतये)** पानाय॥५॥

अन्वय:-[हे] इन्द्राबृहस्पती! यथा वयं गीर्भिरस्य सोमस्य पीतये युवां हवामहे तथा सुतेऽस्मानाह्वयत॥५॥

भावार्थ:-राजप्रजाजनैः परस्परस्य सत्कारेण महदैश्वर्य्यं भोक्तव्यम्॥५॥

पदार्थ:-हे **(इन्द्राबृहस्पती)** अध्यापक और उपदेशकजनो! जैसे **(वयम्)** हम लोग **(गीर्भिः)** वाणियों से **(अस्य)** इस **(सोमस्य)** ओषधियों से उत्पन्न हुए रस के **(पीतये)** पान के लिये आप दोनों का **(हवामहे)** स्वीकार करते हैं, वैसे **(सुते)** रस के उत्पन्न होने पर हम लोगों का स्वीकार करो॥५॥

भावार्थ:-राजा और प्रजाजनों को चाहिये कि परस्पर के सत्कार से बड़े ऐश्वर्य्य का भोग करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सोममिन्द्राबृहस्पती पिबतं दाशुषो गृहे। मादयेथां तदोकसा॥६॥२५॥

सोमम्। इन्द्राबृहस्पती इति। पिबतम्। दाशुषः। गृहे। मादयेथाम्। तत्ऽओकसा॥६॥

पदार्थ:-(सोमम्) अत्युत्तमं रसम् **(इन्द्राबृहस्पती)** राजामात्यौ **(पिबतम्)** **(दाशुषः)** दातुः **(गृहे)** **(मादयेथाम्)** हर्षयेतम् **(तदोकसा)** तदोकः स्थानं ययोस्तौ॥६॥

अन्वय:-हे तदोकसेन्द्राबृहस्पती! युवां दाशुषो गृहे सोमं पिबतमस्मान् सततम्मादयेथाम्॥६॥

भावार्थ:-राजादयो जना यथा स्वयं विद्यावन्तो धार्मिका न्यायशीला आनन्दिनः स्युस्तथा प्रजाजनानपि कुर्य्युः॥६॥

अत्र राजप्रजादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेदितव्यम्॥

इत्येकोनपञ्चाशत्तमं सूक्तं पञ्चविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(तदोकसा)** उस स्थान वाले **(इन्द्राबृहस्पती)** राजा और मन्त्री जनो! आप दोनों **(दाशुषः)** दाता जन के **(गृहे)** स्थान में **(सोमम्)** अति उत्तम रस का **(पिबतम्)** पान करो और हम लोगों को निरन्तर **(मादयेथाम्)** आनन्द देओ॥६॥

भावार्थः-राजा आदि जन जैसे स्वयं विद्यायुक्त, धार्मिक, न्यायकारी और आनन्दित होवें, वैसे प्रजाजनों को भी करें॥६॥

इस सूक्त में राजा और प्रजादि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह उनचासवां सूक्त और पच्चीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्य पञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। १-९ बृहस्पतिः। १०, ११ इन्द्राबृहस्पती देवते। १-३, ६, ७, ९ निचृत्त्रिष्टुप्। ५, ४, ११ विराट् त्रिष्टुप्। ८, १० त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वांसः किं कुर्य्युरित्याह॥

अब ग्यारह ऋचा वाले पचासवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यस्तुस्तम्भ सहसा वि ज्मो अन्तान् बृहस्पतिस्त्रिषधस्थो रवेण।

तं प्रत्नास ऋषयो दीध्यानाः पुरो विप्रा दधिरे मन्द्रजिह्वम्॥१॥

यः। तस्तम्भ। सहसा। वि। ज्मः। अन्तान्। बृहस्पतिः। त्रिऽसधस्थः। रवेण। तम्। प्रत्नासः। ऋषयः। दीध्यानाः। पुरः। विप्राः। दधिरे। मन्द्रऽजिह्वम्॥१॥

पदार्थः-(**यः**) विद्वान् राजा (**तस्तम्भ**) धरेत् (**सहसा**) बलेन (**वि**) (**ज्मः**) पृथिव्याः (**अन्तान्**) समीपान् (**बृहस्पतिः**) महान् बृहतां पतिर्वा (**त्रिषधस्थः**) त्रिषु समानस्थानेषु कर्मोपासनाज्ञानेषु वा तिष्ठति (**रवेण**) उपदेशेन (**तम**) (**प्रत्नासः**) प्राक्तनाः पूर्वमधीतविद्याः (**ऋषयः**) मन्त्रार्थवेत्तारः (**दीध्यानाः**) शुभैर्गुणैः प्रकाशमानाः (**पुरः**) महान्ति नगराणि (**विप्राः**) मेधाविनः (**दधिरे**) धरन्तु (**मन्द्रजिह्वम्**) मन्द्राऽऽनन्ददा कल्याणकरी जिह्वा यस्य तं विद्वांसम्॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा त्रिषधस्थो बृहस्पतिः सूर्य्यः सहसा ज्मोऽन्तान् वि तस्तम्भ तथा त्रिषधस्थो बृहस्पतिर्यो विद्वान् रवेण जनान् दध्यात् तं मन्द्रजिह्वमेषां पुरो दीध्यानाः प्रत्नास ऋषयो विप्रा दधिरे॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्य्यस्स्वाकर्षणेन भूगोलान् दधाति तत्रस्थान् पदर्थांश्च तथैव विद्वांसो सर्वान् मनुष्यान् धृत्वा तेषामन्तःकरणानि प्रकाशयेयुः॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**त्रिषधस्थः**) तीन तुल्य स्थानों वा कर्म, उपासना ज्ञान में स्थित होने वाला (**बृहस्पतिः**) महान् वा बड़े पदार्थों का पालने वाला सूर्य्य (**सहसा**) बल से (**ज्मः**) पृथिवी के (**अन्तान्**) समीपों को (**वि, तस्तम्भ**) धारण करे, वैसे कर्मोपासना और ज्ञान में स्थित होने और बड़े पदार्थों का पालने वाला (**यः**) जो विद्वान् (**रवेण**) उपदेश से जनों को धारण करे (**तम्**) उस (**मन्द्रजिह्वम्**) आनन्द देने और कल्याण करने वाली जिह्वा से युक्त विद्वान् को इनके (**पुरः**) बड़े नगरों को (**दीध्यानाः**) उत्तम गुणों से प्रकाशित करते हुए (**प्रत्नासः**) प्राचीन और प्रथम जिन्होंने विद्या पढ़ी ऐसे (**ऋषयः**) मन्त्रों के अर्थ जानने वाले (**विप्राः**) बुद्धिमान् जन (**दधिरे**) धारण करें॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य अपनी आकर्षणशक्ति से भूगोलों को धारण करता और भूगोलों में वर्त्तमान पदार्थों को धारण करता है, वैसे ही विद्वान् लोग

सब मनुष्यों को धारण करके उनके अन्त:करणों को प्रकाशित करें॥१॥

अथ के प्रशंसनीया भवन्तीत्याह॥

अब कौन प्रशंसा के योग्य होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

धुनेतय: सुप्रकेतं मदन्तो बृहस्पते अभि ये नस्ततस्रे।

पृषन्तं सृप्रमदब्धमूर्वं बृहस्पते रक्षतादस्य योनिम्॥२॥

धुनऽइतय:। सुऽप्रकेतम्। मदन्त:। बृहस्पते। अभि। ये। न:। ततस्रे। पृषन्तम्। सृप्रम्। अदब्धम्। ऊर्वम्। बृहस्पते। रक्षतात्। अस्य। योनिम्॥२॥

पदार्थ:-(**धुनेतय:**) ये धुनान् धर्मात्मनां कम्पकान् कम्पयन्ति ते (**सुप्रकेतम्**) सुष्ठु प्रकृष्ट: केत: प्रज्ञा यस्य तमध्यापकम् (**मदन्त:**) आनन्दयन्त: (**बृहस्पते**) बृहत्या वाच: पालक (**अभि**) (**ये**) (**न:**) अस्मान् (**ततस्रे**) उपक्षयन्ति (**पृषन्तम्**) विद्यादिशुभगुणान् सिञ्चन्तम् (**सृप्रम्**) प्राप्तशुभगुणम् (**अदब्धम्**) अहिंसितम् (**ऊर्वम्**) हिंसकम् (**बृहस्पते**) बृहतां पालक (**रक्षतात्**) (**अस्य**) विद्याव्यवहारस्य (**योनिम्**) कारणम्॥२॥

अन्वय:-हे बृहस्पते! ये मदन्तो धुनेतय: सुप्रकेतं पृषन्तं सृप्रमदब्धमूर्वं जनं ततस्रे नोऽस्माँश्चाभि ततस्रे तान्निवार्य तांस्त्वं निवारय। हे बृहस्पते! येषां निरोधेनास्य योनिं भवान् रक्षतात्॥२॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! ये दस्युचोरादीन्निवार्य धार्म्मिकान् विदुष: सुखयित्वा साङ्गोपाङ्गं विद्यावृद्धिव्यवहारं वर्धयेयुस्ते युष्माभि: सत्कर्त्तव्या: स्यु:॥२॥

पदार्थ:-हे (**बृहस्पते**) बड़ी वाणी के पालन करने वाले (**ये**) जो (**मदन्त:**) आनन्द देते हुए (**धुनेतय:**) धर्मात्मा जनों के कंपाने वालों को कम्पाने वाले (**सुप्रकेतम्**) उत्तम तीक्ष्ण बुद्धि वाले (**पृषन्तम्**) विद्यादि उत्तम गुणों को सींचते हुए (**सृप्रम्**) उत्तम गुणों को प्राप्त (**अदब्धम्**) नहीं हिंसित (**ऊर्वम्**) हिंसा करने वाले जन का (**ततस्रे**) नाश करते हैं और (**न:**) हम लोगों को (**अभि**) चारों ओर से नाश करते हैं, उनका निवारण करके आप उनका निवारण करो। हे (**बृहस्पते**) बड़ी वस्तुओं के पालन करने वाले! जिनके रोकने से (**अस्य**) इस विद्याव्यवहार के (**योनिम्**) कारण की आप (**रक्षतात्**) रक्षा करें॥२॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो लोग डाकू और चोरादिकों का निवारण कर धार्मिक विद्वानों को सुख दे कर अङ्ग और उपाङ्गों के सहित विद्या के व्यवहार को बढ़ावें, उनका आप लोग सत्कार करें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

बृहस्पते या परमा परावदत आ त ऋतस्पृशो नि षेदु:।

तुभ्यं खाता अवता अद्रिदुग्धा मध्वः श्चोतन्त्यभितो विरप्शम्॥३॥

बृहस्पते। या। परमा। पराऽवत्। अतः। आ। ते। ऋतऽस्पृशः। नि। सेदुः। तुभ्यम्। खाताः। अवताः। अद्रिऽदुग्धाः। मध्वः। श्चोतन्ति। अभितः। विऽरप्शम्॥३॥

पदार्थः-(बृहस्पते) बृहतो राष्ट्रस्य पालक **(या)** **(परमा)** उत्कृष्टा नीतिः **(परावत्)** परा गुणा विद्यन्ते यस्मिन् **(अतः)** अस्मात् **(आ)** **(ते)** तव **(ऋतस्पृशः)** सत्यस्पर्शस्य **(नि)** **(सेदुः)** निषीदेयुः **(तुभ्यम्)** **(खाताः)** खनिताः **(अवताः)** कूपाः **(अद्रिदुग्धाः)** मेघेन पूर्णाः **(मध्वः)** मधुरादिगुणयुक्तजलोपेताः **(श्चोतन्ति)** सिञ्चन्ति **(अभितः)** सर्वतः **(विरप्शम्)** महान्तं संसारम्॥३॥

अन्वयः-हे बृहस्पते! ते या परमा नीतिरस्ति सत्यर्तस्पृशस्तेऽद्रिदुग्धाः खाता मध्वोऽवतास्तुभ्यमभितः श्चोतन्ति विरप्शमा निषेदुरतस्तान् वयं परावत् सत्कुर्य्याम॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! भवन्तो वृद्धानां विदुषां राज्ञां सकाशात् सनातनीं नीतिं गृहीत्वा मेघवत्प्रजाः सुखेन सिञ्चन्तु॥३॥

पदार्थः-हे **(बृहस्पते)** बड़े राज्य के पालन करने **(ते)** आपकी **(या)** जो **(परमा)** उत्तम नीति है उससे **(ऋतस्पृशः)** सत्य का स्पर्श करने वाले आपके **(अद्रिदुग्धाः)** मेघ से पूर्ण **(खाताः)** खोदे गये **(मध्वः)** मधुर आदि गुण वाले जल से युक्त **(अवताः)** कूप **(तुभ्यम्)** आपके लिये **(अभितः)** सब प्रकार से **(श्चोतन्ति)** सींचते हैं और **(विरप्शम्)** महान् संसार को **(आ, निषेदुः)** सब ओर से स्थित करें **(अतः)** इससे उनका हम लोग **(परावत्)** गुणयुक्त सत्कार करें॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग वृद्ध विद्वान् राजा लोगों के समीप से अनादि काल से सिद्ध नीति को ग्रहण करके मेघों के सदृश प्रजाओं को सुख से सींचो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

बृहस्पतिः प्रथमं जायमानो महो ज्योतिषः परमे व्योमन्।
सप्तास्यस्तुविजातो रवेण वि सप्तरश्मिरधमत्तमांसि॥४॥

बृहस्पतिः। प्रथमम्। जायमानः। महः। ज्योतिषः। परमे। विऽओमन्। सप्तऽआस्यः। तुविऽजातः। रवेण। वि। सप्तऽरश्मिः। अधमत्। तमांसि॥४॥

पदार्थः-(बृहस्पतिः) महान् **(प्रथमम्)** आदौ **(जायमानः)** **(महः)** महतः **(ज्योतिषः)** प्रकाशात् **(परमे)** प्रकृष्टे **(व्योमन्)** व्यापके **(सप्तास्यः)** सप्तकिरणा आस्यानि यस्य **(तुविजातः)** बहुषु प्रसिद्धः **(रवेण)** शब्देन **(वि)** **(सप्तरश्मिः)** सप्तविधकिरणः **(अधमत्)** धमति निराकरोति **(तमांसि)** रात्रीः॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा परमे व्योमन् महो ज्योतिषः प्रथमं जायमानः सप्तास्यस्तुविजात-स्सप्तरश्मिर्बृहस्पतिस्सूर्य्यो रवेण तमांसि व्यधमत् तथैव महान् विद्वानुपदेशेनाऽविद्यां निवार्य्य विद्यां जनयेत्॥४॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यथा सूर्य्ये सप्तविधरूपाणि तत्त्वानि मिलितानि यैः सर्वेभ्यो रसान् गृह्णाति तथैव पञ्चभिर्ज्ञानेन्द्रियैर्मनसात्मना च सर्वा विद्याः सङ्गृह्याऽध्यापनोपदेशाभ्यां सर्वेषामज्ञानं निवार्य्य विद्याप्रकाशं जनयन्तु॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(परमे)** उत्तम **(व्योमन्)** व्यापक में **(महः)** बड़े **(ज्योतिषः)** प्रकाश से **(प्रथमम्)** पहिले **(जायमानः)** उत्पन्न हुआ **(सप्तास्यः)** सात किरणरूप मुखों से युक्त **(तुविजातः)** बहुतों में प्रसिद्ध **(सप्तरश्मिः)** सात प्रकार के किरणों से युक्त **(बृहस्पतिः)** बड़ा सूर्य **(रवेण)** शब्द से अर्थात् गति शब्द से **(तमांसि)** रात्रियों को **(वि, अधमत्)** दूर करता है, वैसे बड़ा विद्वान् उपदेश से अविद्या का निवारण करके विद्या को प्रकट करे॥४॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जैसे सूर्य्य में सात प्रकार के रूप वाले तत्त्व मिले हुए वर्त्तमान हैं, जिन किरणों के द्वारा सब से रसों को ग्रहण करता है, वैसे पाँच ज्ञानेन्द्रिय, मन और आत्मा से सब विद्याओं को ग्रहण करके पढ़ाने और उपदेश करने से सबके अज्ञान को दूर करके विद्या के प्रकाश को उत्पन्न करो॥४॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स सुष्टुभा स ऋक्वता गणेन वलं रुरोज फलिगं रवेण।

बृहस्पतिरुस्रिया हव्यसूदः कनिक्रदद्वावशतीरुदाजत्॥५॥२६॥

सः। सुऽस्तुभा। सः। ऋक्वता। गणेन। वलम्। रुरोज। फलिऽगम्। रवेण। बृहस्पतिः। उस्रियाः। हव्यऽसूदः। कनिक्रदत्। वावशतीः। उत्। आजत्॥५॥

पदार्थः-**(सः)** विद्वान् **(सुष्टुभा)** शोभनेन प्रशंसितेन **(सः)** **(ऋक्वता)** बहुप्रशंसायुक्तेन **(गणेन)** किरणसमूहेनोपदेश्यविद्यार्थिसमुदायेन **(वलम्)** वक्रगतिम् **(रुरोज)** रुजेत् **(फलिगम्)** मेघम्। **फलिग इति मेघनामसु पठितम्।** (निघं०१.१०) **(रवेण)** शब्देन **(बृहस्पतिः)** महान् सर्वेषां पालकः **(उस्रियाः)** पृथिव्यां वर्त्तमानाः **(हव्यसूदः)** यो हव्यानि सूदयति क्षरयति सः **(कनिक्रदत्)** भृशं शब्दयन् **(वावशतीः)** भृशं कामयमानाः प्रजाः **(उत्)** **(आजत्)** प्राप्नोति॥५॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा स हव्यसूदः कनिक्रदद् बृहस्पतिः सूर्य्यः सुष्टुभा गणेन फलिगं रुरोज स ऋक्वता गणेन रवेण वलं रुरोजोस्रिया वावशतीरुदाजत् तथा त्वं वर्त्तस्व॥५॥

भावार्थः-यथा सविता वृष्टिद्वारा सर्वाः प्रजा रक्षति विद्युच्छब्देन सर्वान् प्रज्ञापयति तथैव सर्वे विद्वांसो विद्याद्वारा सर्वात्मनः प्रकाशयेयुः॥५॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जैसे **(सः)** वह **(हव्यसूदः)** हवन करने योग्य पदार्थों को क्षरण कराने अर्थात् अपने प्रताप से अणुरूप कराने वाला **(कनिक्रदत्)** अत्यन्त शब्द करता हुआ **(बृहस्पतिः)** बड़ा और सब का पालन करने वाला सूर्य्य **(सुष्टुभा)** सुन्दर प्रशंसित **(गणेन)** किरणसमूह से **(फलिगम्)** मेघ को **(रुरोज)** भङ्ग करे और **(सः)** वह विद्वान् **(ऋक्वता)** बहुत प्रशंसायुक्त उपदेश देने योग्य विद्यार्थियों के समूह से **(रवेण)** शब्द से **(वलम्)** कुटिल चाल को भंग करे और **(उस्रियाः)** पृथिवी के बीच वर्त्तमान **(वावशतीः)** अत्यन्त कामना करती हुई प्रजाओं को **(उत्, आजत्)** प्राप्त होता है, वैसे आप वर्त्ताव करो॥५॥

भावार्थः-जैसे सूर्य्य वृष्टि के द्वारा सब प्रजाओं की रक्षा करता और बिजुली के शब्द से सब को जनाता है, वैसे ही सब विद्वान् जन विद्या के द्वारा सब के द्वारा सब के आत्माओं को प्रकाशित करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवा पित्रे विश्वदेवाय वृष्णे यज्ञैर्विधेम नमसा हविर्भिः।

बृहस्पते सुप्रजा वीरवन्तो वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥६॥

एव। पित्रे। विश्वऽदेवाय। वृष्णे। यज्ञैः। विधेम। नमसा। हविःऽभिः। बृहस्पते। सुऽप्रजाः। वीरऽवन्तः। वयम्। स्याम। पतयः। रयीणाम्॥६॥

पदार्थः-**(एवा)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(पित्रे)** पालकाय **(विश्वदेवाय)** विश्वस्य प्रकाशकाय **(वृष्णे)** वृष्टिकराय **(यज्ञैः)** सङ्गतैः कर्मभिः **(विधेम)** कुर्य्याम **(नमसा)** सत्कारेणान्नादिना वा **(हविर्भिः)** आदातुं योग्यैरुपदेशैर्द्रव्यैर्वा **(बृहस्पते)** बृहतां पालक **(सुप्रजाः)** विद्याविनययुक्ताः श्रेष्ठाः प्रजा येषान्ते **(वीरवन्तः)** वीरपुत्राः **(वयम्) (स्याम) (पतयः)** स्वामिनः **(रयीणाम्)** धनानाम्॥६॥

अन्वयः-हे बृहस्पते! यथा वयं यज्ञैर्विश्वदेवाय वृष्णे पित्रे नमसा हविर्भिर्विधेम सुप्रजा वीरवन्तो वयं रयीणां पतयस्स्याम तथैवा त्वं भव॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्य्यो मेघालङ्कारेण सर्वेषां पालको वर्त्तते तथैव वयं वर्त्तित्वाऽत्युत्तमपुरुषा राज्याऽधिपतयो भवेम॥६॥

पदार्थः-हे **(बृहस्पते)** बड़ों के पालन करने वाले जैसे हम लोग **(यज्ञैः)** मिले हुए कर्मों से **(विश्वदेवाय)** संसार के प्रकाशक **(वृष्णे)** वृष्टि करने और **(पित्रे)** पालन करने वाले के लिये **(नमसा)** सत्कार वा अन्न आदि से **(हविर्भिः)** ग्रहण करने योग्य उपदेश वा द्रव्यों से **(विधेम)** करें और अर्थात् क्रिया विधान करें तथा **(सुप्रजाः)** विद्या और विनय वाली श्रेष्ठ प्रजाओं से युक्त **(वीरवन्तः)** वीर पुत्रों

वाले **(वयम्)** हम लोग **(रयीणाम्)** धनों के **(पतयः)** स्वामी **(स्याम)** होवें **(एवा)** वैसे ही आप हूजिये॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य मेघ के अलङ्कार से सब का पालन करने वाला है, वैसे ही हम लोग वर्त्ताव करके अति उत्तम पुरुष और राज्य के स्वामी होवें॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स इद्राजा प्रतिजन्यानि विश्वा शुष्मेण तस्थावभि वीर्येण।

बृहस्पतिं यः सुभृतं बिभर्ति वल्गूयति वन्दते पूर्वभाजम्॥७॥

सः। इत्। राजा। प्रतिऽजन्यानि। विश्वा। शुष्मेण। तस्थौ। अभि। वीर्येण। बृहस्पतिम्। यः। सुऽभृतम्। बिभर्त्ति। वल्गुऽयति। वन्दते। पूर्वऽभाजम्॥७॥

पदार्थः-(**सः**) जगदीश्वरः (**इत्**) (**राजा**) सर्वप्रकाशकः (**प्रतिजन्यानि**) प्रत्यक्षेण जनितुं योग्यानि (**विश्वा**) सर्वाणि (**शुष्मेण**) बलेन (**तस्थौ**) तिष्ठति (**अभि**) आभिमुख्ये (**वीर्य्येण**) पराक्रमेण (**बृहस्पतिम्**) महतां महान्तम् (**यः**) (**सुभृतम्**) सुष्ठु धृतम् (**बिभर्त्ति**) धरति (**वल्गूयति**) सत्करोति। **वल्गूयतीत्यर्चतिकर्मा।** (निघं०३.१४) (**वन्दते**) कामयते (**पूर्वभाजम्**) पूर्वैर्भजनीयम्॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः सुभृतं बृहस्पतिं पूर्वभाजं बिभर्त्ति वल्गूयति वन्दते यः शुष्मेण वीर्य्येण विश्वा प्रतिजन्यान्यभि तस्थौ स इदेव राजा सर्वैर्भजनीयोऽस्ति॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः परमेश्वरः सर्वं जगदभिव्याप्य धृत्वा सूर्य्यमपि धरति सर्वान् वेदानुपदिश्य प्रशंसितो वर्त्तते यस्य सेवां योगिराजाः कुर्वन्ति तमेव नित्यमुपाध्वम्॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**सुभृतम्**) उत्तम प्रकार धारण किये गये (**बृहस्पतिम्**) बड़ों में बड़े (**पूर्वभाजम्**) प्राचीनों से सेवा करने योग्य का (**बिभर्त्ति**) धारण करता (**वल्गूयति**) सत्कार करता और (**वन्दते**) कामना करता है जो (**शुष्मेण**) बल (**वीर्य्येण**) और पराक्रम से (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**प्रतिजन्यानि**) प्रत्यक्ष से उत्पन्न होने योग्यों के (**अभि**) सम्मुख (**तस्थौ**) स्थित होता है (**सः, इत्**) वही जगदीश्वर (**राजा**) सब का प्रकाश करने वाला सब लोगों के सेवा करने योग्य है॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो परमेश्वर सम्पूर्ण जगत् को अभिव्याप्त होकर और धारके सूर्य्य को भी धारता है और सम्पूर्ण वेदों का उपदेश देकर प्रशंसित वर्त्तमान है और जिसकी सेवा योगिराज करते हैं, उसी की नित्य उपासना करो॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स इत्क्षेति सुधित ओकसि स्वे तस्मा इळा पिन्वते विश्वदानीम्।

तस्मै विशः स्वयमेवा नमन्ते यस्मिन् ब्रह्मा राजनि पूर्व एति॥८॥

सः। इत्। क्षेति। सुऽधितः। ओकसि। स्वे। तस्मै। इळा। पिन्वते। विश्वऽदानीम्। तस्मै। विशः। स्वयम्। एव। नमन्ते। यस्मिन्। ब्रह्मा। राजनि। पूर्वः। एति॥८॥

पदार्थः-(**सः**) (**इत्**) एव (**क्षेति**) निवसति (**सुधितः**) सुहितस्तृप्तः। अत्र **सुधितवसुधितेति** सूत्रेण हस्य धः। (**ओकसि**) निवासस्थाने (**स्वे**) स्वकीये (**तस्मै**) (**इळा**) प्रशंसिता वाग्भूमिर्वा (**पिन्वते**) सेवते (**विश्वदानीम्**) सर्वस्मिन् काले (**तस्मै**) (**विशः**) प्रजाः (**स्वयम्**) (**एवा**) अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**नमन्ते**) नम्रीभूता भवन्ति (**यस्मिन्**) परमात्मनि (**ब्रह्मा**) चतुर्वेदवित् (**राजनि**) प्रकाशमाने (**पूर्वः**) अनादिभूत आदिमः (**एति**) प्राप्नोति॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो जनः परमेश्वरं भजते स इद् सुधितः सन् स्व ओकसि क्षेति विश्वदानीं तस्मा इळा पिन्वते यस्मिन् राजनि ब्रह्मा पूर्व एति तस्मै राज्ञे विशः स्वयमेवा नमन्ते॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यद्यन्यान् सर्वान् विहायैकं परमेश्वरमेव यूयं भजत तर्हि युष्मासु श्री राज्यं प्रतिष्ठा यशश्च सदैव निवसेत्॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो जन परमेश्वर का भजन करता है (**सः, इत्**) वही (**सुधितः**) उत्तम प्रकार तृप्त हुआ (**स्वे**) अपने (**ओकसि**) निवासस्थान में (**क्षेति**) निवास करता है तथा (**विश्वदानीम्**) सब काल में (**तस्मै**) उसके लिये (**इळा**) प्रशंसित वाणी वा भूमि (**पिन्वते**) सेवन करती है (**यस्मिन्**) जिस (**राजनि**) प्रकाशमान परमात्मा में (**ब्रह्मा**) चार वेद का जानने वाला (**पूर्वः**) अनादि से हुआ प्रथम (**एति**) प्राप्त होता है (**तस्मै**) उस राजा के लिये (**विशः**) प्रजा (**स्वयम्**) (**एवा**) आप ही (**नमन्ते**) नम्र होती हैं॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो अन्य सब का त्याग करके एक परमेश्वर ही की आप लोग सेवा करें तो आप लोगों में लक्ष्मी, राज्य, प्रतिष्ठा और यश सदा ही निवास करें॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अप्रतीतो जयति सं धनानि प्रतिजन्यान्युत या सजन्या।

अवस्यवे यो वरिवः कृणोति ब्रह्मणे राजा तमवन्ति देवाः॥९॥

अप्रतिऽइतः। जयति। सम्। धनानि। प्रतिऽजन्यानि। उत। या। सऽजन्या। अवस्यवे। यः। वरिवः। कृणोति। ब्रह्मणे। राजा। तम्। अवन्ति। देवाः॥९॥

पदार्थः-(**अप्रतीतः**) शत्रुभिरपराजितः (**जयति**) (**सम्**) (**धनानि**) (**प्रतिजन्यानि**) जनं जनं प्रति योग्यानि (**उत**) (**या**) यानि (**सजन्या**) समानैर्जन्यैः सह वर्त्तमानानि (**अवस्यवे**) रक्षामिच्छवे (**यः**) (**वरिवः**) सेवनम् (**कृणोति**) (**ब्रह्मणे**) परमात्मने (**राजा**) (**तम्**) (**अवन्ति**) रक्षन्ति (**देवाः**) विद्वांसः॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽप्रतीतो राजा अवस्यवे ब्रह्मणे वरिवः कृणोति तं देवा अवन्ति या सजन्योत प्रतिजन्यानि धनानि सन्ति तानि सहजस्वभावेन सञ्जयति॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो राजा परमात्मानमेवोपास्त आप्तान् विदुषस्सेवते स एवाक्षतं राष्ट्रं धनं च प्राप्य सदैव विजयी जायते॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**अप्रतीतः**) शत्रुओं से नहीं पराजित किया गया (**राजा**) राजा (**अवस्यवे**) रक्षा की इच्छा करते हुए (**ब्रह्मणे**) परमात्मा के लिये (**वरिवः**) सेवन को (**कृणोति**) करता है (**तम्**) उसकी (**देवाः**) विद्वान् जन (**अवन्ति**) रक्षा करते हैं और (**या**) जो (**सजन्या**) तुल्य उत्पन्न हुए पदार्थों के साथ वर्त्तमान (**उत**) भी (**प्रतिजन्यानि**) मनुष्य-मनुष्य के प्रति वर्त्तमान (**धनानि**) धन हैं उनको सहज स्वभाव से (**सम्, जयति**) अच्छे प्रकार जीतता है॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो राजा परमात्मा ही की उपासना करता और यथार्थवक्ता विद्वानों की सेवा करता है, वही नहीं नाश होने वाले राज्य और धन को प्राप्त होकर सदा ही विजयी होता है॥९॥

अथ राजानः कीदृशो भवेयुरित्याह॥

अब राजा कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रश्च सोमं पिबतं बृहस्पतेऽस्मिन् यज्ञे मन्दसाना वृषण्वसू।

आ वां विशन्त्विन्दवः स्वाभुवोऽस्मे रयिं सर्ववीरं नि यच्छतम्॥१०॥

इन्द्रः। च। सोमम्। पिबतम्। बृहस्पते। अस्मिन्। यज्ञे। मन्दसाना। वृषण्वसू इति वृषण्ऽवसू। आ। वाम्। विशन्तु। इन्दवः। सुऽआभुवः। अस्मे इति। रयिम्। सर्वऽवीरम्। नि। यच्छतम्॥१०॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) परमैश्वर्यवान् (**च**) (**सोमम्**) सदोषधिरसम् (**पिबतम्**) (**बृहस्पते**) पूर्णविद्वन्! (**अस्मिन्**) (**यज्ञे**) राज्यपालनाख्ये व्यवहारे (**मन्दसाना**) प्रशंसितावानन्दितौ (**वृषण्वसू**) यौ वृष्णो बलिष्ठान् वीरान् वासयतस्तौ (**आ**) (**वाम्**) युवाम् (**विशन्तु**) प्राप्नुवन्तु (**इन्दवः**) ऐश्वर्य्याणि (**स्वाभुवः**) ये स्वयं भवन्ति ते (**अस्मे**) अस्मभ्यम् (**रयिम्**) धनम् (**सर्ववीरम्**) सर्वे वीरा यस्मात्तम् (**नि**) नितराम् (**यच्छतम्**) प्रदद्यातम्॥१०॥

अन्वयः-हे बृहस्पते! इन्द्रश्च मन्दसाना वृषण्वसू युवामस्मिन् यज्ञे सोमं पिबतं यथा स्वाभुव इन्दवो वामा विशन्तु तथाऽस्मे सर्ववीरं रयिं युवां नियच्छतम्॥१०॥

भावार्थः-हे राजराजोपदेशकौ! युवां कदाचिदपि मादकद्रव्यं मा सेवेथां राज्यपालनेन सत्योपदेशेनैव प्रजाः सम्पाल्य सदैवानन्देतमस्मभ्यं सर्वैश्वर्य्यं प्रदद्यातम्॥१०॥

पदार्थः-हे **(बृहस्पते)** पूर्णविद्वन्! **(च)** और **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य वाला **(मन्दसाना)** प्रशंसित और आनन्दयुक्त **(वृषण्वसू)** बलिष्ठ वीर पुरुषों को निवास कराने वाले आप दोनों **(अस्मिन्)** इस **(यज्ञे)** राज्यपालननामक व्यवहार में **(सोमम्)** उत्तम ओषधियों के रस का **(पिबतम्)** पान करो और जैसे **(स्वाभुवः)** आप होने वाले **(इन्दवः)** ऐश्वर्य्य **(वाम्)** आप दोनों को **(आ, विशन्तु)** प्राप्त हों, वैसे **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(सर्ववीरम्)** सब वीर हों जिससे उस **(रयिम्)** धन को आप दोनों **(नि, यच्छतम्)** उत्तम प्रकार दीजिये॥१०॥

भावार्थः-हे राजा और राजोपदेशको! तुम कभी मदकारक वस्तु का सेवन न करो और राज्यपालन तथा सत्योपदेश से ही प्रजाओं का पालन कर सदैव आनन्दित होओ और हम लोगों के लिये सब ऐश्वर्य्य अच्छे प्रकार देओ॥१०॥

अथ प्रजाविषयमाह॥

अब प्रजाविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

बृह॑स्पत इन्द्र॒ वर्ध॑तं नः॒ सचा॒ सा वां॑ सुम॒तिर्भू॑त्व॒स्मे।

अ॒वि॒ष्टं धियो॑ जिगृ॒तं पुर॑न्धीर्जज॒स्तम॒र्यो व॒नुषा॒मरा॑तीः॥११॥२७॥७॥

बृह॑स्पते। इन्द्र॒। वर्ध॑तम्। नः॒। सचा॑। सा। वा॒म्। सु॒ऽम॒तिः। भू॒तु॒। अ॒स्मे इति॑। अ॒वि॒ष्टम्। धियः॑। जि॒गृ॒तम्। पुर॑म्ऽधीः। ज॒ज॒स्तम्। अ॒र्यः। व॒नुषा॑म्। अरा॑तीः॥११॥

पदार्थः-**(बृहस्पते)** सकलविद्याप्राप्त **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्य राजन्! **(वर्धतम्)** वर्धेथाम्। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्। **(नः)** अस्माकम् **(सचा)** सत्येन **(सा)** **(वाम्)** युवयोः **(सुमतिः)** श्रेष्ठा प्रज्ञा **(भूतु)** भवतु **(अस्मे)** अस्मान् **(अविष्टम्)** प्राप्नुयातम् **(धियः)** प्रज्ञाः **(जिगृतम्)** उपदेशयतम् **(पुरन्धीः)** बहुविद्याधराः **(जजस्तम्)** योधयतम् **(अर्य्यः)** स्वामी **(वनुषाम्)** संविभाजकानाम् **(अरातीः)** शत्रून्॥११॥

अन्वयः-हे बृहस्पते इन्द्र! या वां सुमतिर्भूतु सा वनुषां नः सचा भूतु तयास्मान् वर्धतम्। युवां याः पुरन्धीर्धियोऽविष्टं यया जिगृतं ता अस्मे प्राप्नुवन्तु यथाऽर्य्यः स्वामी तथा युवामस्माक-मरातीर्जजस्तम्॥११॥

भावार्थः-मनुष्यैः सर्वदा विद्वद्भ्यो विद्याप्राप्तिर्याचनीया ययोत्तमाः प्रज्ञा जायेरञ्छत्रवश्च दूरतः प्लवेरन्निति॥११॥

अत्र विद्वद्राजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्याणां श्रीमद्विरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण दयानन्दसरस्वतीस्वामिना

विरचिते संस्कृतार्य्यभाषाभ्यां विभूषिते सुप्रमाणयुक्त ऋग्वेदभाष्ये तृतीयाष्टके सप्तमेऽध्याये सप्तविंशो वर्गः सप्तमोऽध्यायश्चतुर्थे मण्डले पञ्चमानुवाकः पञ्चाशत्तमं सूक्तञ्च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे **(बृहस्पते)** सम्पूर्ण विद्याओं को प्राप्त **(इन्द्र)** और अत्यन्त ऐश्वर्य्य वाले राजन्! जो **(वाम्)** आप दोनों की **(सुमतिः)** श्रेष्ठ बुद्धि **(भूतु)** हो **(सा)** वह **(वनुषाम्)** संविभाग करने वाले **(नः)** हमारे **(सचा)** सत्य के साथ हो और उससे हम लोगों की **(वर्धतम्)** वृद्धि करो, आप दोनों जो **(पुरन्धीः)** बहुत विद्याओं को धारण करने वाली **(धियः)** बुद्धियों को **(अविष्टम्)** प्राप्त होइये जिससे **(जिगृतम्)** उपदेश दीजिये वे **(अस्मे)** हम लोगों को प्राप्त होवें और जैसे **(अर्य्यः)** स्वामी, वैसे आप दोनों हम लोगों के **(अरातीः)** शत्रुओं को **(जजस्तम्)** युद्ध कराइये॥११॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सर्वदा विद्वानों से विद्याप्राप्ति विषयक याचना करें, जिससे उत्तम बुद्धियाँ होवें और शत्रुजन दूर से भागें॥११॥

इस सूक्त में विद्वान्, राजा और प्रजा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्य श्रीमान् विरजानन्द सरस्वती स्वामीजी के शिष्य दयानन्द सरस्वती स्वामिविरचित संस्कृतार्य्यभाषासुशोभित सुप्रमाणयुक्त ऋग्वेदभाष्य में तृतीय अष्टक के सप्तम अध्याय में सत्ताईसवाँ वर्ग तथा सातवाँ अध्याय और चतुर्थमण्डल में पाँचवाँ अनुवाक और पचासवाँ सूक्त समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथाष्टमाध्याय:॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथैकादशर्चस्यैकाधिकपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषि:। उषा देवता। १, ५, ८ त्रिष्टुप्। ३ विराट् त्रिष्टुप्। ४, ६, ७, ९, ११ निचृत्त्रिष्टुप् छन्द:। धैवत: स्वर:। २ पङ्क्ति:। १० भुरिक्पङ्क्तिश्छन्द:। पञ्चम: स्वर:॥

अथ प्रातर्वर्णनविषयमाह॥

अब ग्यारह ऋचा वाले इक्कावनवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में प्रात:काल का वर्णन जिसमें ऐसे विषय को कहते हैं॥

इ॒दमु॒ त्यत्पु॑रु॒तमं॑ पु॒रस्ता॒ज्ज्योति॒स्तम॑सो व॒युना॑वदस्थात्।
नू॒नं दि॒वो दु॑हि॒तरो॑ विभा॒तीर्गा॒तुं कृ॑णवन्नु॒षसो॒ जना॑य॥१॥

इ॒दम्। ऊ॒म् इति॑। त्यत्। पु॒रु॒ऽतम॑म्। पु॒रस्ता॑त्। ज्योति॑:। तम॑स:। व॒युन॑ऽवत्। अ॒स्था॒त्। नू॒नम्। दि॒व:। दु॒हि॒तर॑:। वि॒ऽभा॒ती:। गा॒तुम्। कृ॒ण॒व॒न्। उ॒षस॑:। जना॑य॥१॥

पदार्थ:-(**इदम्**) (उ) (**त्यत्**) तत् (**पुरुतमम्**) अतिशयेन बहुप्रकारम् (**पुरस्तात्**) पूर्वम् (**ज्योति:**) तेज: (**तमस:**) रात्रे: (**वयुनावत्**) प्रज्ञानवत् (**अस्थात्**) वर्त्तते (**नूनम्**) (**दिव:**) प्रकाशस्य (**दुहितर:**) कन्या इव वर्त्तमाना: (**विभाती:**) प्रकाशयन्त्य: (**गातुम्**) पृथिवीम् (**कृणवन्**) कुर्वन्ति (**उषस:**) प्रभाता: (**जनाय**) मनुष्याद्याय॥१॥

अन्वय:-हे मनुष्यास्त्यदिदं पुरुतमं ज्योतिर्वयुनावत्तमस: पुरस्तादस्थात्तस्य दिवो विभातीर्दुहितर उषसो जनाय गातुमु नूनं प्रकाशितां कृणवन्निति विजानीत॥१॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! भवन्त: पुरुषार्थेन सूर्य्यप्रकाशवद्विज्ञानं प्राप्य तमोनिवृत्तिवदविद्यां निवार्य्याऽऽनन्दिता: भवन्तु॥१॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! (**त्यत्**) सो (**इदम्**) यह (**पुरुतमम्**) अतिशय करके अनेक प्रकार का (**ज्योति:**) तेज अर्थात् प्रकाश (**वयुनावत्**) प्रज्ञान के सदृश (**तमस:**) रात्रि से (**पुरस्तात्**) प्रथम (**अस्थात्**) वर्त्तमान है उस (**दिव:**) प्रकाश के सम्बन्ध से (**विभाती:**) प्रकाश करती हुई (**दुहितर:**) कन्याओं के सदृश वर्त्तमान (**उषस:**) प्रभातवेलाएं (**जनाय**) मनुष्य आदि के लिये (**गातुम्**) भूमि को (उ) तो (**नूनम्**) निश्चय प्रकाशित (**कृणवन्**) करती हैं, यह जानो॥१॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! आप लोग पुरुषार्थ से सूर्य्य के प्रकाश के सदृश विज्ञान को प्राप्त होकर,

अन्धकार की निवृत्ति के सदृश अविद्या का निवारण करके आनन्दित होओ॥१॥

अथ स्त्रीपुरुषविषयमाह॥

अब स्त्री पुरुष के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अस्थुरु चित्रा उषसः पुरस्तान्मिताइव स्वरवोऽध्वरेषु।
व्यू व्रजस्य तमसो द्वारोच्छन्तीरव्रञ्छुचयः पावकाः॥२॥

अस्थुः। ऊँ इति। चित्राः। उषसः। पुरस्तात्। मिताःऽइव। स्वरवः। अध्वरेषु। वि। ऊम् इति। व्रजस्य। तमसः। द्वारा। उच्छन्तीः। अव्रन्। शुचयः। पावकाः॥२॥

पदार्थः-(**अस्थुः**) तिष्ठन्ति (उ) (**चित्राः**) विचित्रगुणकर्मस्वभावाः (**उषसः**) प्रभातवेला इव दुहितरः (**पुरस्तात्**) पूर्वस्मात् (**मिताइव**) विद्यया सकलपदार्थवेदित्र्य इव (**स्वरवः**) प्रतापयुक्ताः (**अध्वरेषु**) गृहाश्रमव्यवहाराऽनुष्ठानेषु (**वि**) (उ) (**व्रजस्य**) (**तमसः**) अन्धकारस्य (**द्वारा**) द्वाराणि (**उच्छन्तीः**) विवासयन्त्यः (**अव्रन्**) वृणुयुः (**शुचयः**) पवित्राः (**पावकाः**) पवित्रकर्मकर्त्र्यः॥२॥

अन्वयः-हे ब्रह्मचारिणो! या उ अध्वरेषु शुचयः पावकाः स्वरवः पुरस्तान्मिता इवोषसो व्रजस्य तमसो द्वारा व्युच्छन्तीरिव चित्रा अस्थुस्ता उ विवाहायाव्रन्॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे ब्रह्मचारिणो! या ब्रह्मचारिण्यो मेघस्वना मितभाषिण्यः पवित्रा विदुष्यः स्युस्ता एव पूर्वे सम्परीक्ष्य वोढव्याः॥२॥

पदार्थः-हे ब्रह्मचारी जनो! जो (**उ**) ही (**अध्वरेषु**) गृहाश्रम के व्यवहारों के अनुष्ठानों में (**शुचयः**) पवित्र (**पावकः**) पवित्र कर्म करने वाली (**स्वरवः**) प्रताप से युक्त (**पुरस्तात्**) पूर्व से (**मिताइव**) विद्या से सम्पूर्ण पदार्थों को जानती सी हुईं (**उषसः**) प्रभात वेलाओं के सदृश कन्याएँ (**व्रजस्य**) प्राप्त (**तमसः**) अन्धकार के (**द्वारा**) द्वारों को (**वि, उच्छन्तीः**) विवास कराती हुईं सी (**चित्राः**) विचित्र गुण, कर्म, स्वभावयुक्त ब्रह्मचारिणी (**अस्थुः**) स्थित होती हैं (**उ**) उन्हीं को विवाह के लिये (**अव्रन्**) स्वीकार करो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे ब्रह्मचारी जनो! जो ब्रह्मचारिणी मेघ के सदृश गम्भीर शब्दयुक्त, थोड़ा बोलने वाली, पवित्र और विद्यायुक्त होवें, वही प्रथम उत्तम प्रकार परीक्षा करके विवाहने योग्य हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उच्छन्तीरद्य चितयन्त भोजान् राधोदेयायोषसो मघोनीः।
अचित्रे अन्तः पणयः ससन्त्वबुध्यमानास्तमसो विमध्ये॥३॥

उच्छन्तीः। अद्य। चितयन्त। भोजान्। राधःऽदेयाय। उषसः। मघोनीः। अचित्रे। अन्तरिति। पणयः। ससन्तु। अबुध्यमानाः। तमसः। विऽमध्ये॥३॥

पदार्थः-(उच्छन्तीः) सुवासयन्त्यः **(अद्य)** **(चितयन्त)** विज्ञापयन्ति **(भोजान्)** पालकान् पतीन् **(राधोदेयाय)** धनं दातुं योग्याय व्यवहाराय **(उषसः)** प्रातर्वेला इव **(मघोनीः)** सत्कृतधनानां स्त्रियः **(अचित्रे)** अनाश्चर्ये **(अन्तः)** मध्ये **(पणयः)** प्रशंसनीयाः **(ससन्तु)** शयीरन् **(अबुध्यमानाः)** बोधरहिताः **(तमसः)** रात्रेः **(विमध्ये)** विशेषान्धकारे॥३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! या तमसोऽचित्रे विमध्य उषस इव मघोनीरुच्छन्तीरन्तोऽबुध्यमानाः पणयः स्त्रियः सुखेन ससन्तु राधोदेयाय भोजानद्य चितयन्त ता सङ्ग्रहीतव्याः॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे पुरुषा! याः कन्याः स्वसदृश्यो विदुष्यः शुभगुणकर्मस्वभावाः स्युस्ता एव भार्य्यत्वायाङ्गीकार्याः॥३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो **(तमसः)** रात्रि के **(अचित्रे)** नहीं आश्चर्य जिसमें ऐसे **(विमध्ये)** विशेष अन्धकार में **(उषसः)** प्रातर्वेलाओं के सदृश **(मघोनीः)** सत्कार किया धन का जिन्होंने उनकी स्त्रियाँ **(उच्छन्तीः)** और उत्तम प्रकार वास देती हुई **(अन्तः)** मध्य में **(अबुध्यमानाः)** बोधरहित **(पणयः)** प्रशंसा करने योग्य स्त्रियाँ **(ससन्तु)** सुख से सोवें और **(राधोदेयाय)** धन देने योग्य व्यवहार के लिये **(भोजान्)** पालन करने वाले पतियों को **(अद्य)** आज **(चितयन्त)** जनाती हैं, वे अच्छे प्रकार ग्रहण करनी चाहिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे पुरुषो! जो कन्या अपने सदृश विदुषी और शुभ गुण, कर्म, स्वभाव वाली होवें, वे ही स्त्री होने के लिये स्वीकार करने योग्य हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कुवित्स देवीः सनयो नवो वा यामो बभूयादुषसो वो अद्य।

येना नवग्वे अङ्गिरे दशग्वे सप्तास्ये रेवती रेवदूष॥४॥

कुवित्। सः। देवीः। सनयः। नवः। वा। यामः। बभूयात्। उषसः। वः। अद्य। येन। नवऽग्वे। अङ्गिरे। दशऽग्वे। सप्तऽआस्ये। रेवतीः। रेवत्। ऊष॥४॥

पदार्थः-(कुवित्) महान् **(सः)** **(देवीः)** **(सनयः)** विभक्त्र्यः **(नवः)** नवीनविद्यावयस्कः **(वा)** **(यामः)** यो याति सः **(बभूयात्)** भृशं भूयात् **(उषसः)** प्रभाताः **(वः)** युष्मान् **(अद्य)** **(येना)** अत्र संहितायामिति दीर्घः। **(नवग्वे)** नव गावो विद्यन्ते यस्य तस्मै **(अङ्गिरे)** प्राणवत्प्रिये पत्यौ **(दशग्वे)** दश

गावो यस्य तस्मै **(सप्तास्ये)** सप्त प्राणा आस्ये यस्य तस्मिन् **(रेवती:)** बहुधनशोभायुक्ता: **(रेवत्)** बहुप्रशंसितधनवत् **(ऊष)** निवासयन्ति॥४॥

अन्वय:-हे पुरुषा: ! स कुविद्यामो नवस्त्वं बभूयात् तद्वद् रेवती: सनयो देवीरुषस इव वो रेवदूष वा येनाद्य नवग्वे दशग्वे अङ्गिरे सप्तास्ये वर्त्तन्तेऽतस्ता गृहाश्रमाय सेवध्वम्॥४॥

भावार्थ:-योऽधिकविद्याबल: समानरूपो नवयौवन: सुशीलो विद्वान् स्वसदृशीं स्त्रियमुपयच्छेत् स सुखी भूयात्। या स्त्री पतिं कामयमाना धनविद्योन्नतिं कुर्यात् सा सर्वान् मनुष्यान् सुखयितुमर्हेत्॥४॥

पदार्थ:-हे पुरुषो! **(स:)** वह **(कुवित्)** बड़े **(याम:)** चलने वाले **(नव)** नवीन विद्या अवस्था युक्त आप **(बभूयात्)** निरन्तर हूजिये उसी प्रकार **(रेवती:)** बहुत धन और शोभा से युक्त **(सनय:)** विभाग करने वाली **(देवी:)** प्रकाशमान **(उषस:)** प्रभात वेलाओं के सदृश कन्या **(व:)** आप लोगों को **(रेवत्)** बहुत प्रशंसित धनवान् जैसे हो वैसे **(ऊष)** निरन्तर वसाती हैं **(वा)** अथवा **(येना)** जिस कारण **(अद्य)** आज दिन **(नवग्वे)** नौ गौओं से युक्त **(दशग्वे)** और दश गौओं से युक्त **(अङ्गिरे)** प्राणों के सदृश प्रिय पति के निमित्त **(सप्तास्ये)** सात प्राण मुख में जिसके उसमें वर्तमान हैं, इससे उनकी गृहाश्रम के लिये सेवा करो॥४॥

भावार्थ:-जो अधिक विद्या, बल, तुल्य रूप, नवीन युवावस्थायुक्त और सुशील, विद्वान् अपने सदृश स्त्री को स्वीकार करे; वह सुखी होवे और जो स्त्री पति की कामना करती हुई धन और विद्या की उन्नति करे; वह सब मनुष्यों को सुखी करने के योग्य होवे॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यूयं हि देवीर्ऋतयुग्भिरश्वैः परिप्रयाथ भुवनानि सद्यः।

प्रबोधयन्तीरुषसः ससन्तं द्विपाच्चतुष्पाच्चरथाय जीवम्॥५॥१॥

यूयम्। हि। देवीः। ऋतयुक्ऽभिः। अश्वैः। परिऽप्रयाथ। भुवनानि। सद्यः। प्रऽबोधयन्तीः। उषसः। ससन्तम्। द्विऽपात्। चतुःऽपात्। चरथाय। जीवम्॥५॥

पदार्थ:-**(यूयम्)** **(हि)** **(देवी:)** दिव्यगुणकर्मस्वभावा: **(ऋतयुग्भि:)** य ऋतेन सत्येन युञ्जते तै: **(अश्वै:)** महाबलिष्ठै: पुरुषार्थयुक्तै: **(परिप्रयाथ)** सर्वत: प्राप्नुयात् **(भुवनानि)** लोकलोकान्तराणि **(सद्य:)** शीघ्रम् **(प्रबोधयन्ती:)** जागरयन्त्य: **(उषस:)** **(ससन्तम्)** शयानम् **(द्विपात्)** द्वौ पादौ यस्य स मनुष्यादि: **(चतुष्पात्)** चत्वार: पादा यस्य स गवादि: **(चरथाय)** **(जीवम्)** प्राणधारिणम्॥५॥

अन्वय:-हे नरा! यूयं यथा चरथाय ससन्तं जीवं प्रबोधयन्तीरुषसो द्विपाच्चतुष्पाद्वत्सद्यो भुवनानि गच्छन्ति तथा ह्यृतयुग्भिरश्वैर्देवी: स्त्रिय: परिप्रयाथ॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये शुभगुणान्विता विदुषीर्हृद्याः स्वसदृशीर्भार्याः प्राप्नुवन्ति ते सदैवोषर्वत्प्रकाशमानाः सर्वेषां ज्ञापका भवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यूयम्)** आप लोग जैसे **(चरथाय)** भ्रमण के लिये **(ससन्तम्)** शयन करते हुए **(जीवम्)** प्राणधारी को **(प्रबोधयन्तीः)** जगाती हुई **(उषसः)** प्रातर्वेला **(द्विपात्)** दो पाद वाले मनुष्य आदि और **(चतुष्पात्)** चार पैर वाली गौ आदि के सदृश **(सद्यः)** शीघ्र **(भुवनानि)** लोक-लोकान्तरों को प्राप्त होती हैं, वैसे **(हि)** ही **(ऋतयुग्भिः)** सत्य से युक्त **(अश्वैः)** बड़े बलिष्ठ और पुरुषार्थियों के साथ **(देवीः)** दिव्य गुण, कर्म, स्वभाव युक्त स्त्रियों को **(परिप्रयाथ)** सब ओर से प्राप्त होओ॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो जन उत्तम गुणों से युक्त, विदुषी, सुन्दर, अपने सदृश स्त्रियों को प्राप्त होते हैं; वे सदा ही प्रातःकाल के सदृश प्रकाशमान और सब के बोधक होते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

क्व॑ स्विदासां कत॒मा पु॑रा॒णी यया॑ वि॒धाना॑ वि॒द॒धुर्ऋ॒भू॒णाम्।

शुभं॒ यच्छु॒भ्रा उ॒षस॒श्चर॑न्ति न वि ज्ञा॑यन्ते स॒दृशी॑र॒जु॒र्याः॥६॥

क्व॑। स्वि॒त्। आ॒सा॒म्। क॒त॒मा। पु॒रा॒णी। यया॑। वि॒ऽधाना॑। वि॒ऽद॒धुः। ऋ॒भू॒णाम्। शु॒भम्। यत्। शु॒भ्राः। उ॒षस॑ः। चर॑न्ति। न। वि। ज्ञा॒य॒न्ते॒। स॒ऽदृशी॑ः। अ॒जु॒र्याः॥६॥

पदार्थः-**(क्व)** कस्मिन् **(स्वित्)** प्रश्ने **(आसाम्)** **(कतमा)** **(पुराणी)** पुरातनी **(यया)** **(विधाना)** **(विदधुः)** विदध्यासुः **(ऋभूणाम्)** धीमताम् **(शुभम्)** कल्याणम् **(यत्)** याः **(शुभ्राः)** भास्वराः **(उषसः)** प्रातर्वेलाः **(चरन्ति)** गच्छन्ति **(न)** निषेधे **(वि)** **(ज्ञायन्ते)** **(सदृशीः)** समानाः **(अजुर्याः)** अजीर्णाः॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा शुभ्राः सदृशीरजुर्या उषसः शुभं चरन्त्यासां कतमा पुराणी क्व विधाना ययर्भूणां स्विद् किं विदधुरेवं न वि ज्ञायन्ते इत्थंभूताः स्त्रियो वरा विजानीत॥६॥

भावार्थः-यथा सर्वाः प्रातर्वेलाः सदृश्यः सन्ति तथैव पतिभिः सदृशा भार्याः प्रशंसनीया भवन्ति ताः सदैव युवावस्थायां यूनः प्राप्यानन्दन्तु नैव विज्ञायते का नवीना का प्राचीनोषा वर्त्तते तद्वत्कृतब्रह्मचर्याः कन्या भवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्)** जो **(शुभ्राः)** चमकीली **(सदृशीः)** तुल्य **(अजुर्याः)** नहीं जीर्ण अर्थात् नवीन **(उषसः)** प्रातर्वेलायें **(शुभम्)** कल्याण को **(चरन्ति)** प्राप्त होती हैं **(आसाम्)** इनके मध्य में **(कतमा)** कौन सी **(पुराणी)** पुरानी **(क्व)** किस में **(विधाना)** करती **(यया)** जिससे **(ऋभूणाम्)** बुद्धिमानों को **(स्वित्)** क्या **(विदधुः)** विधान करें ऐसा **(न)** नहीं **(वि, ज्ञायन्ते)** जाना जाता है, इस प्रकार की स्त्रियों को श्रेष्ठ जानें॥६॥

भावार्थ:-जैसे सम्पूर्ण प्रातर्वेला तुल्य होती हैं, वैसे ही पतियों के साथ सदृश स्त्रियाँ प्रशंसा करने योग्य होती हैं, वह सदा ही युवावस्था में युवा पुरुषों को प्राप्त होकर आनन्दित हों, नहीं जाना जाता है कि कौन नवीन कौन प्राचीन प्रातर्वेला होती है, वैसे ब्रह्मचर्य्य से युक्त कन्या होती हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ता घा ता भद्रा उषसः पुरासुरभिष्टिद्युम्ना ऋतजातसत्याः।

यास्वीजानः शशमान उक्थैः स्तुवञ्छंसन् द्रविणं सद्य आप॥७॥

ताः। घ। ताः। भद्राः। उषसः। पुरा। आसुः। अभिष्टिऽद्युम्नाः। ऋतजातऽसत्याः। यासु। ईजानः। शशमानः। उक्थैः। स्तुवन्। शंसन्। द्रविणम्। सद्यः। आप॥७॥

पदार्थः-(**ताः**) (**घा**) एव। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**ताः**) (**भद्राः**) कल्याणकारीः (**उषसः**) प्रभातवेलाः (**पुरा**) (**आसुः**) आसन् (**अभिष्टिद्युम्नाः**) प्रशंसितयशोधनाः (**ऋतजातसत्याः**) ऋताज्जातेषु व्यवहारेषु सत्सु साध्व्यः (**यासु**) (**ईजानः**) (**शशमानः**) प्राप्तप्रशंसः सन् (**उक्थैः**) वक्तुमर्हैर्वचनैः (**स्तुवन्**) (**शंसन्**) प्रशंसन् (**द्रविणम्**) धनं यशो वा (**सद्यः**) शीघ्रम् (**आप**) प्राप्नोति॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ईजानः शशमान उक्थैः स्तुवञ्छंसन् यासु द्रविणं सद्य आप ता उषसो भद्रा यादृश्यः पुराऽऽसुस्तादृश्यः पुनर्वर्त्तन्ते तद्वद्या अभिष्टिद्युम्ना ऋतजातसत्या ब्रह्मचारिण्यः सन्ति ता घा यूयं गृहाश्रमाय प्राप्नुत॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्येण सहोषा सदा वर्त्तते तथैव कृतस्वयंवरौ स्त्रीपुरुषौ यशस्विनौ सत्याचरणौ भवेताम्॥७॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! (**ईजानः**) गमन करने वाला जन (**शशमानः**) प्रशंसा को प्राप्त होता (**उक्थैः**) कहने योग्य वचनों से (**स्तुवन्**) स्तुति करता और (**शंसन्**) प्रशंसा करता हुआ (**यासु**) जिनमें (**द्रविणम्**) धन वा यश को (**सद्यः**) शीघ्र (**आप**) प्राप्त होता है (**ताः**) वे (**उषसः**) प्रभात वेला (**भद्राः**) कल्याण करने वाली जैसी (**पुरा**) पहिले (**आसुः**) हुईं वैसी फिर वर्त्तमान हैं, उनके समान जो (**अभिष्टिद्युम्ना**) प्रशंसित यशरूप धन से युक्त (**ऋतजातसत्याः**) सत्य से उत्पन्न हुए व्यवहारों में श्रेष्ठ ब्रह्मचारिणी हैं (**ताः, घा**) उन्हीं को आप लोग गृहाश्रम के लिये प्राप्त होओ॥७॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य के साथ प्रातर्वेला सदा वर्त्तमान है, वैसे ही स्वयंवर जिन्होंने किया ऐसे स्त्री-पुरुष यशस्वी और सत्य आचरण वाले होवें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ता आ च॑रन्ति सम॒ना पु॒रस्ता॑त् समा॒नत॑: सम॒ना प॑प्रथा॒ना:।

ऋ॒तस्य॑ दे॒वी: सद॑सो बुधा॒ना ग॒वां न सर्गा॑ उ॒षसो॑ जरन्ते॥८॥

ता:। आ। च॒र॒न्ति॒। स॒म॒ना। पु॒रस्ता॑त्। स॒मा॒नत॑:। स॒म॒ना। प॒प्र॒था॒ना:। ऋ॒तस्य॑। दे॒वी:। स॒द॑स:। बु॒धा॒ना:। गवा॑म्। न। सर्गा॑:। उ॒षस॑:। ज॒र॒न्ते॒॥८॥

पदार्थ:-(**ता**) (**आ**) (**चरन्ति**) (**समना**) समाना:। अत्र **सुपां सुलुगिति** जसो लुक्। (**पुरस्तात्**) (**समानत:**) सदृशेभ्य: पतिभ्य: (**समना**) समानगुणकर्मस्वभावा: (**पप्रथाना:**) विस्तीर्णविद्यासौन्दर्यादिगुणा: (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**देवी:**) विदुष्य: (**सदस:**) सभ्यान् (**बुधाना:**) प्रबोधयन्त्य: (**गवाम्**) (**न**) इव (**सर्गा:**) उत्पद्यमाना: (**उषस:**) प्रातर्वेला: (**जरन्ते**) स्तुवन्ति॥८॥

अन्वय:-हे मनुष्या! या पुरस्तात् कृतब्रह्मचर्य्यपरीक्षा: समानत: समना ऋतस्य देवी: पप्रथाना: सदसो बुधाना उषस: समना गवां सर्गा ना चरन्ति जरन्ते ता उपयच्छन्तु॥८॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! गृहीतशिक्षा रूपलावण्यादिशुभगुणाढ्या विदुष्यो ब्रह्मचारिण्य: स्युस्ता एव यथायोग्यं विवहन्तु॥८॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो (**पुरस्तात्**) पुरस्तात् कृत ब्रह्मचर्य्य परीक्षा अर्थात् प्रथम ब्रह्मचर्य्य की परीक्षा जिनकी की [गयी] ऐसी (**समानत:**) सदृश पतियों से (**समना**) तुल्य गुण, कर्म और स्वभाव वाली (**ऋतस्य**) सत्य की (**देवी:**) जानने वाली पण्डिता (**पप्रथाना:**) विस्तीर्ण विद्या और सौन्दर्य्य आदि गुणयुक्त कन्या (**सदस:**) श्रेष्ठ पुरुषों को (**बुधाना:**) ज्ञान से जगाती (**उषस:**) प्रातर्वेलाओं के (**समना**) समान और (**गवाम्**) गौओं के (**सर्गा:**) उत्पन्न हुए वृन्दों के (**न**) समान (**आ, चरन्ति**) आचरण करती और (**जरन्ते**) स्तुति करती हैं (**ता:**) उनको विवाहो॥८॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो शिक्षा को ग्रहण किये हुए, रूप और कान्ति आदि उत्तम गुणों से युक्त, विदुषी, ब्रह्मचारिणी कन्या होवें; उन्हीं को यथायोग्य विवाहो॥८॥

अथ स्त्रीभ्य उपदेशविषयमाह॥

अब स्त्रियों के लिये उपदेशविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ता इन्न्वे३॑व स॑म॒ना स॑मा॒नीरमी॑तवर्णा उ॒षस॑श्चरन्ति।

गूह॑न्ती॒रभ्व॒मसि॑तं॒ रुश॑द्भि: शु॒क्रास्त॒नूभि॒: शुच॑यो रुचा॒ना:॥९॥

ता:। इत्। नु। ए॒व। स॒म॒ना। स॒मा॒नी:। अमी॑तऽवर्णा:। उ॒षस॑:। च॒र॒न्ति॒। गूह॑न्ती:। अभ्व॑म्। असि॑तम्। रुश॑त्ऽभि:। शु॒क्रा:। त॒नूभि॑:। शुच॑य:। रु॒चा॒ना:॥९॥

पदार्थ:-(**ता:**) (**इत्**) एव (**नु**) सद्य: (**एव**) (**समना**) समाना: (**समानी:**) (**अमीतवर्णा:**) अहिंसितवर्णा: (**उषस:**) प्रभातवेला इव (**चरन्ति**) (**गूहन्ती:**) संवृण्वत्य: (**अभ्वम्**) महान्तम् (**असितम्**)

निकृष्टवर्णन्तमः **(रुशद्भिः)** हिंसकैर्गुणैः **(शुक्राः)** प्रदीप्ताः **(तनूभिः)** विस्तृतशरीरैः **(शुचयः)** पवित्राः **(रुचानाः)** रुचिकर्य्यः॥९॥

अन्वयः-हे स्त्रियो! या अमीतवर्णाः समना समानी रुशद्भिरभ्वमसितं गूहन्तीस्तनूभिः शुक्राः शुचयो रुचाना उषसश्चरन्ति ता इन्वेव यथा सुखं प्रयच्छन्ति तथैव सर्वान्त्सुखयत॥९॥

भावार्थः-याः स्त्रिय उषर्वद् दुःखध्वंसिका सुखजनित्र्यः स्युस्ता एवाऽऽह्लादिका भवेयुः॥९॥

पदार्थः-हे स्त्रियो! जो **(अमीतवर्णाः)** विद्यमान वर्ण वाली **(समना)** तुल्य **(समानीः)** तुल्यविचारशील **(रुशद्भिः)** नाश करने वाले गुणों से **(अभ्वम्)** बड़े **(असितम्)** निकृष्ट वर्ण वाले अन्धकार को **(गूहन्तीः)** ढांपती हुई **(तनूभिः)** विस्तृत शरीरों से **(शुक्राः)** कान्तिमती और **(शुचयः)** पवित्र **(रुचानाः)** प्रीति करने वाली **(उषसः)** प्रभातवेलाओं के सदृश **(चरन्ति)** चलती हैं **(ताः)** वे **(इत्)** ही **(नु)** शीघ्र **(एव)** ही जैसे सुख देती हैं, वैसे सब को सुखी करो॥९॥

भावार्थः-जो स्त्रियाँ प्रातर्वेला के सदृश दुःख को नाश करने वाली और सुख को उत्पन्न करने वाली हों, वे ही आनन्द देने वाली होवें॥९॥

अथाग्रिमेण स्वयंवर उच्यते

अब अगले मन्त्र से स्वयंवर विवाह कहा है॥

रयिं दिवो दुहितरो विभातीः प्रजावन्तं यच्छतास्मासु देवीः।

स्योनादा वः प्रतिबुध्यमानाः सुवीर्यस्य पतयः स्याम॥१०॥

रयिम्। दिवः। दुहितरः। विऽभातीः। प्रजाऽवन्तम्। यच्छत। अस्मासु। देवीः। स्योनात्। आ। वः। प्रतिऽबुध्यमानाः। सुऽवीर्यस्य। पतयः। स्याम॥१०॥

पदार्थः-**(रयिम्)** धनम् **(दिवः)** सूर्य्यस्य **(दुहितरः)** कन्या इव किरणाः **(विभातीः)** प्रकाशयन्त्यः **(प्रजावन्तम्)** बह्व्यः प्रजा विद्यन्ते यस्य तम् **(यच्छत)** गृह्णीत **(अस्मासु)** **(देवीः)** विदुष्यः **(स्योनात्)** सुखात् **(आ)** **(वः)** युष्माकम् **(प्रतिबुध्यमानाः)** **(सुवीर्य्यस्य)** सुष्ठु पराक्रमयुक्तस्य सैन्यस्य **(पतयः)** **(स्याम)**॥१०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा दिवो विभातीर्दुहितरः किरणाः प्रकाशं ददति। हे देवीर्देव्यस्तथास्मासु स्योनात् प्रजावन्तं रयिमायच्छत वः प्रतिबुध्यमाना वयं सुवीर्य्यस्य पतयः स्याम॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। याः कन्याः प्रभातवेलावत्सुशोभिताः सुखं जनयन्ति ताभिः सह स्वयंवरेण विवाहेनैव मनुष्याः श्रीमन्तो जायन्ते॥१०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(दिवः)** सूर्य्य की **(विभातीः)** प्रकाश करती हुई **(दुहितरः)** कन्याओं के सदृश वर्त्तमान किरणें प्रकाश को देती हैं। हे **(देवीः)** विदुषियों! वैसे **(अस्मासु)** हम लोगों में

(स्योनात्) सुख से **(प्रजावन्तम्)** बहुत प्रजायुक्त **(रयिम्)** धन को **(आ, यच्छत)** ग्रहण करो **(वः)** तुम को **(प्रतिबुध्यमानाः)** प्रतिबोध कराते हुए हम लोग **(सुवीर्यस्य)** उत्तम पराक्रम युक्त सेना के **(पतयः)** स्वामी **(स्याम)** होवें॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो कन्या प्रभात वेला के सदृश उत्तम प्रकार शोभित सुख को उत्पन्न करती हैं, उनके साथ स्वयंवर विवाह से ही मनुष्य श्रीमान् होते हैं॥१०॥

अथ पुरुषविषयमाह॥

अब पुरुष विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तद्वो दिवो दुहितरो विभातीरुप ब्रुव उषसो यज्ञकेतुः।

वयं स्याम यशसो जनेषु तद् द्यौश्च धत्तां पृथिवी च देवी॥११॥ २॥

तत्। वः। दिवः। दुहितरः। विऽभातीः। उप। ब्रुवे। उषसः। यज्ञऽकेतुः। वयम्। स्याम। यशसः। जनेषु। तत्। द्यौः। च। धत्ताम्। पृथिवी। च। देवी॥११॥

पदार्थः-(तत्) (वः) युष्माकम् **(दिवः)** प्रकाशस्य **(दुहितरः)** कन्या इव वर्त्तमानाः **(विभातीः)** प्रकाशयन्त्यः **(उप) (ब्रुवे)** उपदिशामि **(उषसः)** प्रातर्वेलायाः **(यज्ञकेतुः)** यज्ञस्य प्रापकः **(वयम्) (स्याम) (यशसः)** यशस्विनः **(जनेषु)** विद्वत्सु **(तत्) (द्यौः)** विद्युत् **(च) (धत्ताम्) (पृथिवी) (च) (देवी)** देदीप्यमाना॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! विभातीर्दिवो दुहितर उषस इव स्त्रियो वो यद् ब्रूयुस्तद्यज्ञकेतुरहं युष्मानुप ब्रुवे यथा तद्देवी द्यौश्च पृथिवी च धत्तां तथा वयं जनेषु यशसः स्याम॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये परस्परानुपदिश्य सत्यं ग्राहयन्ति ते सूर्यवत्प्रकाशका भूमिवत्प्रजाधर्त्तारो भवन्तीति॥११॥

अत्रोषःस्त्रीपुरुषगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकाधिकपञ्चाशत्तमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(विभातीः)** प्रकाश करती हुईं **(दिवः)** प्रकाश की **(दुहितरः)** कन्याओं के सदृश वर्त्तमान **(उषसः)** प्रातर्वेला के सदृश स्त्रियाँ **(वः)** आप लोगों का जो विषय कहें **(तत्)** उसको **(यज्ञकेतुः)** यज्ञ को जनाने वाला मैं आप लोगों को **(उप, ब्रुवे)** उपदेश देता हूँ जैसे **(तत्)** उसको **(देवी)** प्रकाश **(द्यौः)** बिजुली **(च)** और **(पृथिवी)** पृथिवी **(च)** भी **(धत्ताम्)** धारण करें, वैसे **(वयम्)** हम लोग **(जनेषु)** विद्वानों में **(यशसः)** यशस्वी **(स्याम)** होवें॥११॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो परस्पर जनों को उपदेश देकर सत्य का ग्रहण कराते हैं, वे सूर्य्य के सदृश प्रकाश करने और भूमि के सदृश प्रजा के धारण करने वाले होते हैं॥११॥

इस सूक्त में प्रात:काल, स्त्री और पुरुष के गुण कर्म वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह इक्क्यावनवां सूक्त और दूसरा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य द्विपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। उषा देवता। १-६ निचृद्गायत्री। ५, ७ गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथोषर्वत्स्त्रीगुणानाह॥

अब सात ऋचा वाले बावनवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में उषा की तुल्यता से स्त्री के गुणों का वर्णन करते हैं॥

प्रति ष्या सूनरी जनी व्युच्छन्ती परि स्वसुः। दिवो अदर्शि दुहिता॥ १॥

प्रति। स्या। सूनरी। जनी। विऽउच्छन्ती। परि। स्वसुः। दिवः। अदर्शि। दुहिता॥ १॥

पदार्थः-(**प्रति**) (**स्या**) सा (**सूनरी**) सुष्ठु नेत्री (**जनी**) जनयित्री (**व्युच्छन्ती**) निवासयन्ती (**परि**) (**स्वसुः**) भगिन्याः (**दिवः**) कमनीयायाः (**अदर्शि**) दृश्यते (**दुहिता**) कन्येव वर्त्तमाना॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या दिवः स्वसुर्जनी सूनरी परिव्युच्छन्ती दुहितेवोषाः प्रत्यदर्शि स्या जागृतेन मनुष्येण द्रष्टव्या॥१॥

भावार्थः-सैव स्त्री वरा या उषर्वद्वर्त्तते॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**दिवः**) सुन्दर (**स्वसुः**) भगिनी को (**जनी**) उत्पन्न करने वाली (**सूनरी**) उत्तम पहुंचाती और (**परि, व्युच्छन्ती**) सब ओर से निवास देती हुई (**दुहिता**) कन्या के सदृश वर्त्तमान प्रातर्वेला (**प्रति, अदर्शि**) एक के प्रति एक देखी जाती है (**स्या**) वह जागे हुए मनुष्य से देखने योग्य है॥१॥

भावार्थः-वही स्त्री श्रेष्ठ, जो प्रातर्वेला के सदृश वर्त्तमान है॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अश्वेव चित्रारुषी माता गवामृतावरी। सखाभूदश्विनोरुषाः॥ २॥

अश्वाऽइव। चित्रा। अरुषी। माता। गवाम्। ऋतऽवरी। सखा। अभूत्। अश्विनोः। उषाः॥ २॥

पदार्थः-(**अश्वेव**) अश्वावद्वर्तमाना (**चित्रा**) अद्भुतगुणकर्म्मस्वभावा (**अरुषी**) आरक्ता (**माता**) जननी (**गवाम्**) किरणानाम् (**ऋतावरी**) बहुसत्यप्रकाशिका (**सखा**) (**अभूत्**) (**अश्विनोः**) सूर्य्याचन्द्रमसोः (**उषाः**)॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या चित्राऽरुष्यृतावरी उषा अश्वेवाश्विनोः सखाऽभूत् सा गवां मातेव पालिका वेद्या॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! या मातृवत्सखिवद्वर्त्तमानोषा वर्त्तते सा युक्त्या सर्वैः सेवनीया॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(चित्रा)** अद्भुत गुण, कर्म और स्वभावयुक्त **(अरुषी)** ईषत् लाल वर्ण **(ऋतावरी)** बहुत सत्य का प्रकाश कराने वाली **(उषाः)** प्रातर्वेला **(अश्वेव)** घोड़ी के सदृश वर्त्तमान **(अश्विनोः)** सूर्य और चन्द्रमा की **(सखा)** मित्र **(अभूत्)** हुई वह **(गवाम्)** किरणों की **(माता)** माता के सदृश पालन करने वाली जाननी चाहिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो माता और मित्र के सदृश वर्त्तमान प्रातर्वेला है, वह युक्ति से सब पुरुषों से सेवन करने योग्य है॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत सखास्यश्विनोरुत माता गवामसि। उतोषो वस्व ईशिषे॥३॥

उत। सखा। असि। अश्विनोः। उत। माता। गवाम्। असि। उत। उषः। वस्वः। ईशिषे॥३॥

पदार्थः-**(उत)** **(सखा)** **(असि)** **(अश्विनोः)** सूर्य्याचन्द्रमसोरिवाऽध्यापकोपदेशकयोः **(उत)** **(माता)** जननीव **(गवाम्)** किरणानां धेनूनां वा **(असि)** **(उत)** **(उषः)** उष इव शुम्भमाने **(वस्वः)** धनस्य **(ईशिषे)** इच्छसि॥३॥

अन्वयः-हे उष इव वर्त्तमाने स्त्रि! त्वं पत्युः सखेवासि उताऽश्विनोः सखासि उत गवां मातासि उत वस्व ईशिषे॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। सैव स्त्री सुखप्रदा या सुहृद्वदाज्ञानुकारिणी सेविका वर्त्तते सैवोषर्वत् कुलप्रकाशिका भवति॥३॥

पदार्थः-हे **(उषः)** प्रातर्वेला के सदृश वर्त्तमान सुन्दर स्त्री! तू अपने पति की **(सखा)** सखी के सदृश वर्त्तमान **(असि)** है **(उत)** और **(अश्विनोः)** सूर्य्य और चन्द्रमा के सदृश अध्यापक और उपदेशक की सखी **(असि)** है **(उत)** और **(गवाम्)** किरण वा गौओं की **(माता)** माता **(उत)** और **(वस्वः)** धन की **(ईशिषे)** इच्छा करती है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वही स्त्री सुख देने वाली जो मित्र के सदृश आज्ञा मानने और सेवा करने वाली है, वही प्रातर्वेला के सदृश कुल की प्रकाशिका होती है॥३॥

पुनः स्त्रीगुणानाह॥

फिर स्त्री गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यावयद् द्वेषसं त्वा चिकित्वित्सूनृतावरि। प्रति स्तोमैरभूत्स्महि॥४॥

यवयत्ऽद्वेषसम्। त्वा। चिकित्वित्। सूनृताऽवरि। प्रति। स्तोमैः। अभूत्स्महि॥४॥

पदार्थः-(**यावयद्द्वेषसम्**) यावयन्तं द्वेष्टारं द्वेषसं द्वेष्टारं पृथक्कारयन्तीम् (**त्वा**) त्वाम् (**चिकित्वित्**) ज्ञापयन्तीम् (**सूनृतावरि**) सत्यवाक्प्रकाशिके (**प्रति**) (**स्तोमैः**) प्रशंसाभिः (**अभूत्स्महि**) विजानीयाम॥४॥

अन्वयः-हे चिकित्वित् सूनृतावरि स्त्रि! वयं स्तौमैर्यावयद्द्वेषसं त्वा प्रत्यभूत्स्महि॥४॥

भावार्थः-या कदाचिद् द्वेषं द्वेष्टृसङ्गञ्च करोति सत्यवाक् प्रशंसिता वर्त्तते सैव स्त्री वरा॥४॥

पदार्थः-हे (**चिकित्वित्**) जनाने और (**सूनृतावरि**) सत्यवाणी का प्रकाश करने वाली स्त्री! हम लोग (**स्तोमैः**) प्रशंसाओं से (**यावयद्द्वेषसम्**) द्वेष करने वाले को पृथक् कराने वाली (**त्वा**) तुझको (**प्रति, अभूत्स्महि**) जानें॥४॥

भावार्थः-जो कभी द्वेष और द्वेष करने वाले के सङ्ग को नहीं करती और सत्यवाणी और प्रशंसायुक्त है, वही स्त्री श्रेष्ठ है॥४॥

अथ स्त्रीणामुत्तमव्यवहारेषु प्रशंसामाह॥

अब स्त्रियों की उत्तम व्यवहारों में प्रशंसा कहते हैं॥

प्रति॑ भ॒द्रा अ॑दृक्षत॒ गवां॒ सर्गा॒ न र॒श्मयः॑। ओषा अ॑प्रा उ॒रु ज्रयः॑॥५॥

प्रति॑। भ॒द्राः। अ॒दृ॒क्ष॒त॒। गवा॑म्। सर्गाः॑। न। र॒श्मयः॑। आ। उ॒षाः। अ॒प्राः। उ॒रु। ज्रयः॑॥५॥

पदार्थः-(**प्रति**) (**भद्राः**) कल्याणकर्यः (**अदृक्षत**) दृश्यन्ते (**गवाम्**) पृथिवीनाम् (**सर्गाः**) सृष्टयः (**न**) इव (**रश्मयः**) किरणाः (**आ**) (**उषाः**) प्रभातवेला (**अप्राः**) प्राति व्याप्नोति (**उरु**) बहु (**ज्रयः**) अतितेजोमय॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या उरु ज्रयो रश्मयो न भद्रा गवां सर्गाः प्रत्यदृक्षत यथोषास्ता आऽप्रास्तथा स्त्री भवेत्॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। याः स्त्रियो रश्मिवदुत्तमान् व्यवहारान् प्रकाशयन्ति ताः सततं कल्याणाय कुलोन्नतिकर्य्यो जायन्ते॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**उरु**) बहुत (**ज्रयः**) अत्यन्त तेजःस्वरूप मण्डल को (**रश्मयः**) किरणों के (**न**) सदृश (**भद्राः**) कल्याण करने वाली (**गवाम्**) पृथिवियों की (**सर्गाः**) सृष्टियां, रचना (**प्रति, अदृक्षत**) प्रति समय देखी जाती हैं जैसे (**उषाः**) प्रभातवेला उनको (**आ, अप्राः**) व्याप्त होती है, वैसे स्त्री हो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो स्त्रियाँ किरणों के समान उत्तम व्यवहारों का प्रकाश कराती हैं, वे निरन्तर कल्याण के लिये कुल की उन्नति करने वाली होती हैं॥५॥

पुनरुषर्वत्स्त्रीकर्त्तव्यकर्म्माण्याह॥

अब उषा के तुल्य स्त्रियों के कर्त्तव्य कामों को कहते हैं॥

आपप्रुषी विभावरि व्यावर्ज्योतिषा तमः। उषो अनु स्वधामव॥६॥

आऽपप्रुषी। विभाऽवरि। वि आवः। ज्योतिषा। तमः। उषः। अनु। स्वधाम्। अव॥६॥

पदार्थः-(**आपप्रुषी**) समन्तात् सर्वा विद्या व्याप्नुवती (**विभावरि**) प्रशस्तविविधप्रकाशयुक्ते (**वि**) (**आवः**) विरक्ष (**ज्योतिषा**) प्रकाशेन (**तमः**) अन्धकारम् (**उषः**) उषर्वत्सुप्रकाशे (**अनु**) (**स्वधाम्**) अन्नादिकम् (**अव**) रक्ष॥६॥

अन्वयः-हे उष इव विभावरि शुभगुणे स्त्रि! आपप्रुषी त्वं ज्योतिषा तम इव दोषान् व्यावोऽनु स्वधामव॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथोषाः स्वप्रकाशेनान्धकारं निवारयति तथैव विदुष्यः स्त्रियः स्वोत्तमस्वभावेन दोषान्निवार्य्य सुसंस्कृतान्नादिना सर्वान् संरक्षन्तु॥६॥

पदार्थः-हे (**उषः**) प्रभात वेला के सदृश उत्तम प्रकाश और (**विभावरि**) प्रशंसित विविध प्रकाश से युक्त उत्तम गुणवाली स्त्री! (**आपप्रुषी**) सब ओर से सर्व विद्याओं को व्याप्त तू (**ज्योतिषा**) प्रकाश से (**तमः**) अन्धकार के सदृश दोषों को (**वि, आवः**) विगतरक्षा अर्थात् रखने के विरुद्ध निकाल और (**अनु, स्वधाम्**) अनुकूल अन्न आदि की (**अव**) रक्षा कर॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे प्रभात वेला अपने प्रकाश से अन्धकार का निवारण करती है, वैसे ही विद्यायुक्त स्त्रियाँ अपने उत्तम स्वभाव से दोषों का निवारण करके उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्न आदि से सब की उत्तम प्रकार रक्षा करें॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ द्यां तनोषि रश्मिभिरान्तरिक्षमुरु प्रियम्। उषः शुक्रेण शोचिषा॥७॥३॥

आ। द्याम्। तनोषि। रश्मिऽभिः। आ। अन्तरिक्षम्। उरु। प्रियम्। उषः। शुक्रेण। शोचिषा॥७॥

पदार्थः-(**आ**) (**द्याम्**) प्रकाशम् (**तनोषि**) विस्तृणासि (**रश्मिभिः**) किरणैः (**आ**) सर्वतः (**अन्तरिक्षम्**) (**उरु**) बहु (**प्रियम्**) कमनीयं पतिम् (**उषः**) (**शुक्रेण**) शुद्धेन (**शोचिषा**) प्रकाशेन॥७॥

अन्वयः-हे उषरिव वर्त्तमाने स्त्रि! यथोषा रश्मिभिर्द्यामुर्वाऽन्तरिक्षञ्च प्रकाशयति तथैव त्वं शुक्रेण शोचिषा प्रियं पतिमातनोषि तस्मात् सत्कर्त्तव्यासि॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। सैव स्त्री बहुसुखं प्राप्नोति या विद्याविनयसुशीलादिभिः स्वपतिं सदैव प्रीणातीति॥७॥

अत्रोषर्वत्स्त्रीगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्विपञ्चाशत्तमं सूक्तं तृतीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(उषः)** प्रभात वेला के सदृश वर्त्तमान स्त्री जैसे प्रभातवेला **(रश्मिभिः)** किरणों से **(द्याम्)** प्रकाश और **(उरु)** बहुत **(आ, अन्तरिक्षम्)** सब ओर से अन्तरिक्ष को प्रकाशित करती है, वैसे ही तू **(शुक्रेण)** शुद्ध **(शोचिषा)** प्रकाश से **(प्रियम्)** सुन्दर पति का **(आ, तनोषि)** विस्तार करती अर्थात् पति की कीर्त्ति बढ़ाती है, इससे सत्कार करने योग्य है॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वही स्त्री बहुत सुख को प्राप्त होती है, जो विद्या, विनय और उत्तम स्वभावादिकों से अपने पति को नित्य प्रसन्न करती है॥७॥

इस सूक्त में प्रभात वेला के सदृश स्त्रियों के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बावनवां सूक्त और तृतीय वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य त्रिपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। सविता देवता। १, ३, ६, ७ निचृज्जगती। २ विराड्जगती। ४ स्वराड्जगती। ५ जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ सवितुर्गुणानाह॥

अब सात ऋचा वाले त्रेपनवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में सविता परमात्मा के गुणों का वर्णन करते हैं॥

तद्देवस्य सवितुर्वार्यं महद् वृणीमहे असुरस्य प्रचेतसः।

छर्दिर्येन दाशुषे यच्छति त्मना तन्नो महाँ उदयान् देवो अक्तुभिः॥१॥

तत्। देवस्य। सवितुः। वार्यम्। महत्। वृणीमहे। असुरस्य। प्रऽचेतसः। छर्दिः। येन। दाशुषे। यच्छति। त्मना। तत्। नः। महान्। उत्। अयान्। देवः। अक्तुऽभिः॥१॥

पदार्थः-(**तत्**) (**देवस्य**) देदीप्यमानस्य (**सवितुः**) वृष्ट्यादीनां प्रसवकर्त्तुः (**वार्यम्**) वरणीयेषु वा जलेषु भवम् (**महत्**) (**वृणीमहे**) स्वीकुर्म्महे (**असुरस्य**) मेघस्य (**प्रचेतसः**) प्रज्ञापकस्य (**छर्दिः**) गृहम्। **छर्दिरिति गृहनामसु पठितम्।** (निघं०३.४) (**येन**) (**दाशुषे**) दात्रे (**यच्छति**) (**त्मना**) आत्मना (**तत्**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**महान्**) (**उत्**) (**अयान्**) यच्छतु (**देवः**) द्योतमानः (**अक्तुभिः**) रात्रिभिः॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वयं यत्सवितुर्देवस्य प्रचेतसोऽसुरस्य मेघस्य महद्वार्यं छर्दिर्वृणीमहे तद्यूयं स्वीकुरुत येन विद्वांस्त्मना दाशुषे वार्यं महच्छर्दिर्यच्छति तन्महान् देवोऽक्तुभिर्न उदयान्॥१॥

भावार्थः-ये विद्वांसो मेघस्य सूर्य्यस्य च सम्बन्धविद्यां जानन्ति तेऽहोरात्रेषु महत्कार्य्यं संसाध्याऽऽनन्दन्ति॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! हम लोग जिस (**सवितुः**) वृष्टि आदि की उत्पत्ति करने वाले (**देवस्य**) निरन्तर प्रकाशमान (**प्रचेतसः**) जनानेवाले (**असुरस्य**) मेघ के (**महत्**) बड़े (**वार्यम्**) स्वीकार करने योग्य पदार्थों वा जलों में उत्पन्न (**छर्दिः**) गृह का (**वृणीमहे**) स्वीकार करते हैं (**तत्**) उसका आप लोग स्वीकार करो (**येन**) जिस कारण से विद्वान् जन (**त्मना**) आत्मा से (**दाशुषे**) दाता जन के लिये स्वीकार करने योग्यों वा जलों में उत्पन्न हुए बड़े गृह को (**यच्छति**) देता है (**तत्**) उसको (**महान्**) बड़ा (**देवः**) प्रकाशमान होता हुआ (**अक्तुभिः**) रात्रियों से (**नः**) हम लोगों के लिये (**उत्, अयान्**) उत्कृष्टता से देवे॥१॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन मेघ और सूर्य्य के सम्बन्ध की विद्या को जानते हैं, वे दिन और रात्रियों में बड़े कार्य्य को सिद्ध करके आनन्दित होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दि॒वो ध॒र्ता भुव॑नस्य प्र॒जाप॑तिः पि॒शङ्गं॑ द्रा॒पिं प्रति॑ मुञ्चते क॒विः।

वि॒च॒क्ष॒णः प्र॒थय॑न्नापृ॒णन्नु॒र्वजी॑जनत् सवि॒ता सु॒म्नमु॒क्थ्य॑म्॥ २॥

दि॒वः। ध॒र्ता। भुव॑नस्य। प्र॒जाऽप॑तिः। पि॒शङ्ग॑म्। द्रा॒पिम्। प्रति॑। मु॒ञ्च॒ते। क॒विः। वि॒ऽच॒क्ष॒णः। प्र॒थय॑न्। आ॒ऽपृ॒णन्। उ॒रु। अजी॑जनत्। स॒वि॒ता। सु॒म्नम्। उ॒क्थ्य॑म्॥ २॥

पदार्थः-(**दिवः**) प्रकाशस्य (**धर्त्ता**) (**भुवनस्य**) अनेकभूगोलालङ्कृतस्य (**प्रजापतिः**) प्रजायाः पालकः (**पिशङ्गम्**) विचित्ररूपम् (**द्रापिम्**) कवचम् (**प्रति**) (**मुञ्चते**) त्यजति (**कविः**) क्रान्तदर्शनः (**विचक्षणः**) विविधपदार्थानां प्रकाशकः (**प्रथयन्**) विस्तारयन् (**आपृणन्**) समन्तात् पूरयन् (**उरु**) बहु (**अजीजनत्**) जनयति (**सविता**) सकलैश्वर्य्ययोक्ता प्रभ्वैश्वर्य्यदाननिमित्तो वा (**सुम्नम्**) सुखम् (**उक्थ्यम्**) प्रशंसनीयम्॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! योऽयं दिवो भुवनस्य धर्त्ता प्रजापतिः कविः पिशङ्गं द्रापिं प्रति मुञ्चते विचक्षणः प्रथयन्नापृणन्त्सवितोरुक्थ्यं सुम्नमजीजनत् स युष्माभिर्यथावद्वेदितव्यः॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन परमेश्वरेण प्रजाया धारणाय प्रकाशाय पालनाय सूर्य्यो निर्मितस्तमेव परमेश्वरमुपास्य बहु सुखं प्राप्नुत॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! जो यह (**दिवः**) प्रकाश और (**भुवनस्य**) अनेक भूगोलों से अलङ्कृत अर्थात् शोभित संसार का (**धर्त्ता**) धारण करने वाला (**प्रजापतिः**) प्रजा का पालनकर्त्ता (**कविः**) तेजयुक्त दर्शनवाला (**पिशङ्गम्**) विचित्र रूपवाले (**द्रापिम्**) कवच को (**प्रति, मुञ्चते**) त्याग करता है और (**विचक्षणः**) अनेक प्रकार से पदार्थों का प्रकाश करने वाला (**प्रथयन्**) विस्तार करता और (**आपृणन्**) सब प्रकार से पूर्ण करता हुआ (**सविता**) सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यों से युक्त करने वाला वा समर्थ ऐश्वर्य्यों के देने का निमित्त (**उरु**) बहुत (**उक्थ्यम्**) प्रशंसा करने योग्य (**सुम्नम्**) सुख को (**अजीजनत्**) उत्पन्न करता है, वह आप लोगों को यथावत् जानने योग्य है॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस परमेश्वर ने प्रजा के धारण प्रकाश और पालन के लिये सूर्य्य बनाया, उसी परमेश्वर की उपासना करके बहुत सुख को प्राप्त होइये॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आप्रा॒ रजां॑सि दि॒व्यानि॒ पार्थि॑वा॒ श्लोकं॑ दे॒वः कृ॑णुते॒ स्वाय॒ धर्म॑णे।

प्र बा॒हू अ॑स्राक् सवि॒ता सवी॑मनि निवे॒शय॑न् प्रसु॒वन्न॒क्तुभि॒र्जग॑त्॥ ३॥

आ। अ॒प्राः॒। रजां॑सि। दि॒व्यानि॑। पार्थि॑वा। श्लोक॑म्। दे॒वः। कृ॒णु॒ते॒। स्वाय॑। धर्म॑णे। प्र। बा॒हू इति॑। अ॒स्रा॒क्। स॒वि॒ता। सवी॑मनि। नि॒ऽवे॒शय॑न्। प्र॒ऽसु॒वन्। अ॒क्तुऽभिः॑। जग॑त्॥ ३॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**अप्राः**) व्याप्नोति (**रजांसि**) लोकान् (**दिव्यानि**) शुद्धानि (**पार्थिवा**) पृथिव्यां विदितानि (**श्लोकम्**) श्लाघनीयां वाचम् (**देवः**) (**कृणुते**) (**स्वाय**) (**धर्म्मणे**) धर्मोन्नतये (**प्र**) (**बाहू**) भुजौ (**अस्राक्**) यः सृजति (**सविता**) सकलजगदुत्पादकः (**सवीमनि**) महैश्वर्ये (**निवेशयन्**) (**प्रसुवन्**) उत्पादयन् (**अक्तुभिः**) रात्रिभिः सह (**जगत्**) सर्वं विश्वम्॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः सविता देवः सवीमन्यक्तुभिर्जगन्निवेशयन् प्रसुवन् बाहू अस्राक् स देवः स्वाय धर्म्मणे श्लोकं प्र कृणुते सविता दिव्यानि पार्थिवा रजांस्याऽऽप्राः॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वरः सर्वं जगदभिव्याप्य निर्माय धर्म्मं वेदवाणीं प्रचार्य्य जगद् व्यवस्थापयति तमेव सर्वस्वामिनं विज्ञाय सततमुपाध्वम्॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**सविता**) सम्पूर्ण जगत् का उत्पन्न करने वाला (**देवः**) प्रकाशमान विद्वान् (**सवीमनि**) बड़े ऐश्वर्य्य में (**अक्तुभिः**) रात्रियों के साथ (**जगत्**) सम्पूर्ण संसार को (**निवेशयन्**) प्रवेश कराता और (**प्रसुवन्**) उत्पन्न करता हुआ (**बाहू**) भुजाओं को (**अस्राक्**) उत्पन्न करता वह विद्वान् (**स्वाय**) अपनी (**धर्म्मणे**) धर्म्म की उन्नति के लिये (**श्लोकम्**) श्लाघा प्रशंसा करने योग्य वाणी को (**प्र, कृणुते**) उत्पन्न करता, परमात्मा और (**दिव्यानि**) शुद्ध (**पार्थिवा**) पृथिवीं में विदित (**रजांसि**) लोकों को (**आ, अप्राः**) व्याप्त होता है॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर सम्पूर्ण जगत् में अभिव्याप्त हो और उस जगत् को रच के धर्म्म और वेदवाणी का प्रचार करके संसार को व्यवस्थित अर्थात् जैसा चाहिये वैसा नियत करता, उसीको सब का स्वामी जानके निरन्तर उपासना करो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अदाभ्यो भुवनानि प्रचाकशद् व्रतानि देवः सविताभि रक्षते।

प्रास्राग्बाहू भुवनस्य प्रजाभ्यो धृतव्रतो महो अज्मस्य राजति॥४॥

अदाभ्यः। भुवनानि। प्रऽचाकशत्। व्रतानि। देवः। सविता। अभि। रक्षते। प्र। अस्राक्। बाहू इति। भुवनस्य। प्रऽजाभ्यः। धृतऽव्रतः। महः। अज्मस्य। राजति॥४॥

पदार्थः-(**अदाभ्यः**) अहिंसनीयः (**भुवनानि**) सर्वाणि लोकजातानि (**प्रचाकशत्**) प्रकाशते (**व्रतानि**) सत्यभाषणादीनि (**देवः**) कमनीयः (**सविता**) सूर्य्यः (**अभि**) आभिमुख्ये (**रक्षते**) (**प्र**) (**अस्राक्**) सृजति (**बाहू**) बलवीर्य्ये (**भुवनस्य**) (**प्रजाभ्यः**) (**धृतव्रतः**) धृतानि व्रतानि येन सः (**महः**) महतः (**अज्मस्य**) अन्तरिक्षे प्रक्षिप्तस्य (**राजति**)॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽदाभ्यः सविता धृतव्रतो देवो महोऽज्मस्य भुवनस्य मध्ये प्रजाभ्यो व्रतानि भुवनानि प्रचाकशद् बाहू प्रास्राक् सर्वमभि रक्षते राजति स एव सर्वैरुपासनीयः॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन परमेश्वरेण प्रजासु सर्वं हितं साधितं योऽन्तर्बहिरभिव्याप्य सर्वेभ्यः कर्मफलानि प्रयच्छति स एव सततं ध्येयः॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(अदाभ्यः)** नहीं नष्ट होने योग्य अर्थात् नहीं मन से छोड़ने योग्य **(सविता)** सूर्य्य **(धृतव्रतः)** व्रतों को धारण करने वाला **(देवः)** सुन्दर **(महः)** बड़े **(अज्मस्य)** अन्तरिक्ष में छोड़े हुए **(भुवनस्य)** लोक **(प्रजाभ्यः)** प्रजाओं के लिये **(व्रतानि)** सत्यभाषण आदि व्रतों को और **(भुवनानि)** लोकोत्पन्न समस्त वस्तुओं को **(प्रचाकशत्)** प्रकाश करता **(बाहू)** बल और वीर्य्य को **(प्र, अस्राक्)** उत्पन्न करता सब की **(अभि)** प्रत्यक्ष **(रक्षते)** रक्षा करता और **(राजति)** प्रकाश करता है, वही सब लोगों को उपासना करने योग्य है॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस परमेश्वर ने प्रजाओं में सम्पूर्ण हित सिद्ध किया और जो भीतर-बाहर अभिव्याप्त होके सब के लिये कर्म्मों का फल देता है, वही निरन्तर ध्यान करने योग्य है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्रिर॒न्तरि॑क्षं सवि॒ता म॑हित्व॒ना त्री रजां॑सि परि॒भूस्त्रीणि॑ रोच॒ना।

ति॒स्रो दिवः॑ पृथि॒वीस्ति॒स्र इ॑न्वति त्रि॒भिर्व्र॒तैर॒भि नो॑ रक्षति॒ त्मना॑॥५॥

त्रिः। अ॒न्तरि॑क्षम्। स॒वि॒ता। म॒हि॒ऽत्व॒ना। त्री। रजां॑सि। प॒रि॒ऽभूः। त्रीणि॑। रो॒च॒ना। ति॒स्रः। दिवः॑। पृ॒थि॒वीः। ति॒स्रः। इ॒न्व॒ति॒। त्रि॒ऽभिः। व्र॒तैः। अ॒भि। नः॒। र॒क्ष॒ति॒। त्मना॑॥५॥

पदार्थः-**(त्रिः)** त्रिवारम् **(अन्तरिक्षम्)** अन्तरक्षयमाकशम् **(सविता)** सकलैश्वर्य्योत्पादकः **(महित्वना)** महत्त्वेन **(त्री)** त्रीणि त्रिप्रकारका **(रजांसि)** उत्तममध्यमनिकृष्टानि **(परिभूः)** यः सर्वतो भवति सर्वेषामुपरि विराजमानः **(त्रीणि)** त्रिप्रकाराणि **(रोचना)** विद्युद्भौतिकसूर्यरूपाणि ज्योतींषि **(तिस्रः)** त्रिविधाः **(दिवः)** प्रकाशान् **(पृथिवीः)** भूमीः **(तिस्रः)** **(इन्वति)** व्याप्नोति **(त्रिभिः)** **(व्रतैः)** नियमैः **(अभि)** **(नः)** अस्मान् **(रक्षति)** **(त्मना)** आत्मना॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः परिभूः सविता परमेश्वरो महित्वना त्मनाऽन्तरिक्षं त्रिरिन्वति त्री रजांसीन्वति त्रीणि रोचनेन्वति तिस्रो दिवस्तिस्रः पृथिवीरिन्वति त्रिभिर्व्रतैर्नोऽभि रक्षति स एव सर्वदा भजनीयः॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः परमेश्वरस्त्रिविधं सर्वं त्रिगुणमयं जगन्निर्माय सुनियमैः पालयति तमेवोपाध्वम्॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(परिभूः)** सब स्थानों में वर्त्तमान और सब के ऊपर विराजमान **(सविता)** सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यों का उत्पन्न करने वाला परमेश्वर **(महित्वना)** महिमा और **(त्मना)** आत्मा से **(अन्तरिक्षम्)** भीतर नहीं नाश होने वाले आकाश को **(त्रिः)** तीन वार **(इन्वति)** व्याप्त होता **(त्री)** तीन

प्रकार के **(रजांसि)** उत्तम मध्यम निकृष्ट लोकों को व्याप्त होता **(त्रीणि)** तीन प्रकार के **(रोचना)** बिजुली, भौतिक और सूर्यरूप ज्योतियों को व्याप्त होता **(तिस्रः)** तीन प्रकार के **(दिवः)** प्रकाशों और **(तिस्रः)** तीन प्रकार की **(पृथिवीः)** भूमियों को व्याप्त होता और **(त्रिभिः)** तीन **(व्रतैः)** नियमों से **(नः)** हम लोगों की **(अभि)** सब ओर से **(रक्षति)** रक्षा करता है, वही सर्वदा सेवा करने योग्य है॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो परमेश्वर तीन प्रकार के सम्पूर्ण त्रिगुण अर्थात् सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण स्वरूप जगत् को रच के उत्तम नियमों से पालन करता है, उसी की उपासना करो॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

बृहत्सु॑म्नः प्रसवी॒ता नि॒वेश॑नो॒ जग॑तः स्था॒तुरु॒भय॑स्य॒ यो व॒शी।
स नो॑ दे॒वः स॑वि॒ता शर्म॑ यच्छत्व॒स्मे क्षया॑य त्रि॒वरू॑थ॒मंह॑सः॥६॥

बृहत्ऽसु॒म्नः। प्र॒ऽस॒वि॒ता। नि॒ऽवेश॑नः। जग॑तः। स्था॒तुः। उ॒भय॑स्य। यः। व॒शी। सः। नः॒। दे॒वः। स॒वि॒ता। शर्म॑। य॒च्छ॒तु॒। अ॒स्मे इति॑। क्षया॑य। त्रि॒ऽवरू॑थम्। अंह॑सः॥६॥

पदार्थः-**(बृहत्सुम्नः)** महतः सुखस्य **(प्रसवीता)** उत्पादकः। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(निवेशनः)** निवेशस्य कर्त्ता **(जगतः)** जङ्गमस्य **(स्थातुः)** स्थिरस्य स्थावरस्य **(उभयस्य)** द्विविधस्य **(यः)** **(वशी)** वशीकर्त्तुं समर्थः **(सः)** **(नः)** अस्मभ्यम् **(देवः)** दाता **(सविता)** सकलैश्वर्यः **(शर्म)** सुसुखं गृहम् **(यच्छतु)** ददातु **(अस्मे)** अस्माकम् **(क्षयाय)** निवासाय **(त्रिवरूथम्)** त्रीणि वरूथानि गृहाणि यस्मिन् **(अंहसः)** दुःखात्पृथग्भूतम्॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो नो बृहत्सुम्नः प्रसवीता जगतः स्थातुर्निवेशन उभयस्य वशी देवो जगदीश्वरो नो विद्यां यच्छतु स सविताऽस्मे क्षयायांऽहसः पृथग्भूतं त्रिवरूथं शर्म यच्छतु स एवास्माकमुपासनीयो देवो भवतु॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वरः सर्वस्य जगतो नियन्ता सर्वेषां जीवानां निवासायाऽनेकविधस्य स्थानस्य निर्माताऽस्ति तं विहायाऽन्यस्य कस्याप्युपासनं मा कुरुत॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(नः)** हम लोगों के लिये **(बृहत्सुम्नः)** अत्यन्त सुख का **(प्रसवीता)** उत्पन्न करने वाला और **(जगतः)** जङ्गम अर्थात् चेतनता युक्त मनुष्य आदि और **(स्थातुः)** स्थिर स्थावर अर्थात् नहीं चलने-फिरने वाले वृक्ष आदि जगत् के **(निवेशनः)** निवेश अर्थात् स्थिति का करने वाला **(उभयस्य)** दो प्रकार के जगत् के **(वशी)** वश करने को समर्थ **(देवः)** दाता जगदीश्वर हम लोगों के लिये विद्या को **(यच्छतु)** देवे **(सः)** वह **(सविता)** सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य से युक्त **(अस्मे)** हम लोगों के **(क्षयाय)** निवास के लिये **(अंहसः)** दुःख से अलग हुए **(त्रिवरूथम्)** तीन गृह जिसमें उस **(शर्म)** उत्तम प्रकार सुख देने वाले स्थान को देवे, वही हम लोगों का उपासना करने योग्य देव हो॥६॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर सब जगत् का नियामक और सब जीवों के निवास के लिये अनेक प्रकार के स्थान का रचने वाला है, उसको छोड़ के अन्य किसी की भी उपासना न करो॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आगन् देव ऋतुभिर्वर्धतु क्षयं दधातु नः सविता सुप्रजामिषम्।

स नः क्षपाभिरहभिश्च जिन्वतु प्रजावन्तं रयिमस्मे समिन्वतु॥७॥४॥

आ। अगन्। देवः। ऋतुऽभिः। वर्धतु। क्षयम्। दधातु। नः। सविता। सुऽप्रजाम्। इषम्। सः। नः। क्षपाभिः। अहंऽभिः। च। जिन्वतु। प्रजाऽवन्तम्। रयिम्। अस्मे इति। सम्। इन्वतु॥७॥

पदार्थ:-**(आ)** समन्तात् **(अगन्)** आगच्छतु **(देवः)** देदीप्यमानः **(ऋतुभिः)** वसन्तादिभिः **(वर्धतु)** वर्धताम्। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्। **(क्षयम्)** निवासम् **(दधातु)** **(नः)** अस्माकम् **(सविता)** सकलजगज्जनकः **(सुप्रजाम्)** उत्तमां प्रजाम् **(इषम्)** अन्नादिकम् **(सः)** **(नः)** अस्मान् **(क्षपाभिः)** रात्रिभिः **(अहभिः)** दिनैः सह **(च)** **(जिन्वतु)** प्रीणात्वानन्दतु **(प्रजावन्तम्)** बहुप्रजायुक्तम् **(रयिम्)** धनम् **(अस्मे)** अस्मभ्यम् **(सम्)** **(इन्वतु)** ददातु॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्सविता देवो जगदीश्वर ऋतुभिर्नः क्षयं वर्धत्वस्मानागन् सुप्रजामिषं च दधातु स क्षपाभिरहभिश्च नो जिन्वत्वस्मे प्रजावन्तं रयिं समिन्वतु॥७॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यः परमात्मा सर्वेष्वहोरात्रेषु सर्वं जगत्सर्वथा रक्षति सर्वान् पदार्थान् निर्मायाऽस्मभ्यं दत्वाऽस्मान् सततमानन्दयति सोऽस्माभिः सदैवोपासनीय इति॥७॥

अत्र सवितृगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रिपञ्चाशत्तमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(सविता)** सम्पूर्ण जगत् का उत्पन्न करने वाला **(देवः)** निरन्तर प्रकाशमान जगदीश्वर **(ऋतुभिः)** वसन्त आदि ऋतुओं से **(नः)** हम लोगों के **(क्षयम्)** निवास की **(वर्धतु)** वृद्धि करें और हम लोगों को **(आ)** सब प्रकार से **(अगन्)** प्राप्त हो **(सुप्रजाम्)** उत्तम प्रजा और **(इषम्)** अन्न आदि को **(दधातु)** धारण करे **(सः)** वह **(क्षपाभिः)** रात्रियों और **(अहभिः)** दिनों के साथ **(च)** भी **(नः)** हम लोगों को **(जिन्वतु)** प्रसन्न और आनन्दित करे और **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(प्रजावन्तम्)** बहुत प्रजाओं से युक्त **(रयिम्)** धन को **(सम्, इन्वतु)** अच्छे प्रकार देवे॥७॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो परमात्मा सब दिन, सब रात्रियों में सब जगत् की सब प्रकार से रक्षा करता है, सब पदार्थों को रच के हम लोगों के लिये देकर हम लोगों को निरन्तर आनन्दित करता है, वह हम लोगों को सदा उपासना करने योग्य है॥७॥

इस सूक्त में सविता अर्थात् सकल जगत् के उत्पन्न करने वाले परमात्मा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तिरपनवां सूक्त और चौथा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षड्चस्य चतु:पञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषि:। सविता देवता। १ भुरिक् त्रिष्टुप्। २ निचृत्त्रिष्टुप्। ३-५ स्वराट् त्रिष्टुप्। ६ त्रिष्टुप् छन्द:। धैवत: स्वर:॥

अथ सवितृगुणानाह॥

अब छ: ऋचा वाले चौपनवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में सविता परमात्मा के गुणों का वर्णन करते हैं॥

अभूद् देव: सविता वन्द्यो नु न इदानीमह्न उपवाच्यो नृभि:।
वि यो रत्ना भजति मानवेभ्य: श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दधत्॥१॥

अभूत्। देव:। सविता। वन्द्य:। नु। न:। इदानीम्। अह्न:। उपऽवाच्य:। नृऽभि:। वि। य:। रत्ना। भजति। मानवेभ्य:। श्रेष्ठम्। न:। अत्र। द्रविणम्। यथा। दधत्॥ १॥

पदार्थ:-(**अभूत्**) भवति (**देव:**) सर्वसुखप्रदाता (**सविता**) सर्वैश्वर्य्यप्रद: (**वन्द्य:**) प्रशंसनीय: (**नु**) सद्य: (**न:**) अस्माकम् (**इदानीम्**) (**अह्न:**) दिनस्य मध्ये (**उपवाच्य:**) उपदेशनीय: (**नृभि:**) नायकैर्मनुष्यै: (**वि**) (**य:**) (**रत्ना**) रमणीयानि धनानि (**भजति**) (**मानवेभ्य:**) मननशीलेभ्य: (**श्रेष्ठम्**) अत्युत्तमम् (**न:**) अस्मभ्यम् (**अत्र**) (**द्रविणम्**) धनं यशो वा (**यथा**) (**दधत्**) दध्यात्॥१॥

अन्वय:-हे मनुष्या! य इदानीमह्नो यथा नृभिरुपवाच्यो नो वन्द्य: सविता देवोऽभूद्यो नो मानवेभ्यो रत्ना यथा विभजत्यत्र श्रेष्ठं द्रविणं नु दधत्तथैवाऽस्माभि: सत्कर्त्तव्योऽस्ति॥१॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। नष्टं तेषां भाग्यं ये सकलैश्वर्य्यकीर्त्तिप्रदातारं वन्दनीयं स्तोतुमुपासितुमुपदेष्टुमर्हं परमात्मानं विहायाऽन्यं भजन्ति॥१॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! (**य:**) जो (**इदानीम्**) इस समय (**अह्न:**) दिन के मध्य में जैसे (**नृभि:**) नायक अर्थात् मुखिया मनुष्यों से (**उपवाच्य:**) उपदेश योग्य और (**न:**) हम लोगों के (**वन्द्य:**) प्रशंसा करने योग्य (**सविता**) सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यों को और (**देव:**) सम्पूर्ण सुखों को देने वाला (**अभूत्**) होता है जो (**न:**) हम (**मानवेभ्य:**) विचारशीलों के लिये (**रत्ना**) रमण करने योग्य धनों को (**यथा**) जैसे (**वि, भजति**) बांटता और (**अत्र**) इस संसार में (**श्रेष्ठम्**) अत्यन्त उत्तम (**द्रविणम्**) धन वा यश को (**नु**) शीघ्र (**दधत्**) धारण करे, वैसे ही हम लोगों को सत्कार करने योग्य है॥१॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। नष्ट उनका भाग्य जो सम्पूर्ण ऐश्वर्य और यश के देने वाले वन्दना करने योग्य तथा स्तुति, उपासना और उपदेश करने योग्य परमात्मा को छोड़ के अन्य की उपासना करते हैं॥१॥

पुनरीश्वरगुणानाह॥

फिर ईश्वर के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

देवेभ्यो हि प्रथमं यज्ञियेभ्योऽमृतत्वं सुवसि भागमुत्तमम्।
आदिद् दामानं सवितर्व्यूर्णुषेऽनूचीना जीविता मानुषेभ्यः॥ २॥

देवेभ्यः। हि। प्रथमम्। यज्ञियेभ्यः। अमृतऽत्वम्। सुवसि। भागम्। उत्ऽतमम्। आत्। इत्। दामानम्। सवितरिति। वि। ऊर्णुषे। अनूचीना। जीविता। मानुषेभ्यः॥ २॥

पदार्थः-(**देवेभ्यः**) दिव्यगुणकर्मस्वभावेभ्यो जीवेभ्यः (**हि**) यतः (**प्रथमम्**) आदौ (**यज्ञियेभ्यः**) सत्यभाषणादियज्ञानुष्ठातृभ्यः (**अमृतत्वम्**) मोक्षसुखम् (**सुवसि**) प्रेरयसि (**भागम्**) भजनीयम् (**उत्तमम्**) (**आत्**) आनन्तर्य्ये (**इत्**) (**दामानम्**) दातारम् (**सवितः**) सकलजगदुत्पादक जगदीश्वर (**वि**) (**ऊर्णुषे**) स्वव्याप्त्याऽऽच्छादयसि (**अनूचीना**) यान्यनुचरन्ति तानि (**जीविता**) जीवितानि (**मानुषेभ्यः**)॥ २॥

अन्वयः-हे सवितर्जगदुत्पादक! हि त्वं यज्ञियेभ्यो देवेभ्यः प्रथमं भागमुत्तमममृतत्वं सुवस्याद् दामानं व्यूर्णुषेऽनूचीना जीवितेन्मानुषेभ्यो ददासि तस्मादस्माभिरुपास्योऽसि॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः परमात्मा सत्याचारे प्रेरयति मुक्तिसुखं प्रदाय सर्वानानन्दयति तमेव सदोपाध्वम्॥ २॥

पदार्थः-हे (**सवितः**) सम्पूर्ण संसार के उत्पन्न करने वाले जगदीश्वर! (**हि**) जिससे आप (**यज्ञियेभ्यः**) सत्यभाषण आदि यज्ञानुष्ठान करने वाले (**देवेभ्यः**) श्रेष्ठ गुण, कर्म्म और स्वभावयुक्त जीवों के लिये (**प्रथमम्**) पहिले (**भागम्**) भजने योग्य (**उत्तमम्**) श्रेष्ठ (**अमृतत्वम्**) मोक्षसुख की (**सुवसि**) प्रेरणा करते हो (**आत्**) इसके अनन्तर (**दामानम्**) दाता जन को (**वि, ऊर्णुषे**) अपनी व्याप्ति से ढांपते हो (**अनूचीना**) अनुचर (**जीविता**) जीवनों को (**इत्**) ही (**मानुषेभ्यः**) मनुष्यों के लिये देते हो, इससे हम लोगों को उपासना करने योग्य हो॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो परमात्मा सत्य आचरण में प्रेरणा करता और मुक्तिसुख को देकर सब को आनन्दित करता है, उसी की सदा उपासना करो॥ २॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब विद्वानों के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अचित्ती यच्चकृमा दैव्ये जने दीनैर्दक्षैः प्रभूती पूरुषत्वता।
देवेषु च सवितर्मानुषेषु च त्वं नो अत्र सुवतादनागसः॥ ३॥

अचित्ती। यत्। चकृम। दैव्ये। जने। दीनैः। दक्षैः। प्रऽभूती। पुरुषत्वता। देवेषु। च। सवितरिति। मानुषेषु। च। त्वम्। नः। अत्र। सुवतात्। अनागसः॥ ३॥

पदार्थः-(**अचित्ती**) अचित्त्या अविद्यया (**यत्**) कर्म्म (**चकृमा**) कुर्य्याम। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**दैव्ये**) देवेषु विद्वत्सु कुशले (**जने**) विदुषि (**दीनैः**) क्षीणैः (**दक्षैः**) चतुरैः (**प्रभूती**) बहुत्वेन

(पूरुषत्वता) उत्तमाः पुरुषा विद्यन्तेऽस्मिंस्तेन **(देवेषु)** विद्वत्सु **(च)** **(सवितः)** सकलजगदुत्पादक **(मानुषेषु)** अविद्वत्सु **(च)** **(त्वम्)** **(नः)** अस्मान् **(अत्र)** अस्मिन् **(सुवतात्)** प्रेरय **(अनागसः)** अनपराधिनः॥३॥

अन्वयः-हे सवितरचित्ती प्रभूती दीनैर्दक्षैः पूरुषत्वता दैव्ये जने देवेषु च मानुषेषु च यच्चकृमाऽत्र नोऽनागसस्त्वं सुवतात्॥३॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यूयं यद् वयमविद्यया युष्माकमपराधं कुर्याम स क्षन्तव्योऽस्मानध्यापनोपदेशाभ्यां निरपराधिनः कुरुत॥३॥

पदार्थः-हे **(सवितः)** सम्पूर्ण जगत् के उत्पन्न करने वाले! **(अचित्ती)** अविद्या से **(प्रभूती)** बहुत्व से **(दीनैः)** क्षीण अर्थात् दुर्बल **(दक्षैः)** चतुरों से और **(पूरुषत्वता)** उत्तम पुरुषवान् से **(दैव्ये)** विद्वानों में चतुर **(जने)** विद्वान् में **(देवेषु)** विद्वानों **(च)** और **(मानुषेषु)** अविद्वानों में **(च)** भी **(यत्)** जो कर्म्म **(चकृमा)** हम लोग करें **(अत्र)** इस में **(नः)** हम **(अनागसः)** अनपराधियों को **(त्वम्)** आप **(सुवतात्)** प्रेरणा करो॥३॥

भावार्थः-हे विद्वानो! आप लोग जो हम लोग अविद्या से आप लोगों का अपराध करें, वह क्षमा करने योग्य है और हम लोगों को अध्यापन और उपदेश से निरपराधी करो॥३॥

अथ विद्वत्कर्त्तव्यकर्माह॥

अब विद्वानों के करने योग्य काम को कहते हैं॥

न प्रमिये सवितुर्दैव्यस्य तद्यथा विश्वं भुवनं धारयिष्यति।

यत्पृथिव्या वरिमन्ना स्वङ्गुरिर्वर्ष्मन् दिवः सुवति सत्यमस्य तत्॥४॥

न। प्रऽमिये। सवितुः। दैव्यस्य। तत्। यथा। विश्वम्। भुवनम्। धारयिष्यति। यत्। पृथिव्याः। वरिमन्। आ। सुऽअङ्गुरिः। वर्ष्मन्। दिवः। सुवति। सत्यम्। अस्य। तत्॥४॥

पदार्थः-**(न)** निषेधे **(प्रमिये)** मरणं प्राप्नुयाम् **(सवितुः)** सकलजगदुत्पादकस्य **(दैव्यस्य)** दिव्येषु पदार्थेषु साक्षात्कृतस्य **(तत्)** **(यथा)** **(विश्वम्)** समग्रम् **(भुवनम्)** भवन्ति भूतानि यस्मिंस्तत् **(धारयिष्यति)** **(यत्)** **(पृथिव्याः)** भूमेः **(वरिमन्)** बहुगुणयुक्त **(आ)** समन्तात् **(स्वङ्गुरिः)** शोभना अङ्गुलयो यस्य सः **(वर्ष्मन्)** यो वर्षति तत्सम्बुद्धौ **(दिवः)** कमनीयस्य **(सुवति)** **(सत्यम्)** **(अस्य)** **(तत्)**॥४॥

अन्वयः-हे वरिमन् वर्ष्मन् विद्वन्! यथा सवितुर्दैव्यस्य मध्ये यद् विश्वं भुवनं धारयिष्यति पृथिव्याः स्वङ्गुरिः सन्नस्य दिवोऽस्य यत्सत्यं तत्सुवति तत्प्राप्य यथाऽहं न प्रमिये तथैव त्वमाचर॥४॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यद्ब्रह्म सर्वं जगद्धरति सूर्यवायुभ्यां धारयति च वेदद्वारा सर्वं सत्यं प्रकाशयति च तदेव वयमुपास्महे॥४॥

पदार्थः-हे **(वरिमन्)** बहुत गुणों से युक्त **(वर्ष्मन्)** वर्षने वाले विद्वन्! **(यथा)** जैसे **(सवितुः)** सम्पूर्ण संसार के उत्पन्न करने वाले **(दैव्यस्य)** श्रेष्ठ पदार्थों में साक्षात् किये गये के मध्य में **(यत्)** जो **(विश्वम्)** सम्पूर्ण **(भुवनम्)** संसार को जिसमें प्राणी होते हैं **(धारयिष्यति)** धारण करावेगा **(पृथिव्याः)** और भूमि के सम्बन्ध में **(स्वङ्गुरिः)** श्रेष्ठ अंगुलियों से युक्त हस्तवाला हुआ **(अस्य)** इस **(दिवः)** सुन्दर का **(यत्)** जो **(सत्यम्)** सत्य **(तत्)** उसको **(सुवति)** प्रेरणा करता है **(तत्)** उसको प्राप्त होकर जैसे मैं **(न)** नहीं **(प्रमिये)** मरण को प्राप्त होऊँ, वैसे ही आप **(आ)** आचरण करो॥४॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जो ब्रह्म सब जगत् को धारण करता और सूर्य और वायु से धारण कराता है, वेद के द्वारा सब सत्य का प्रकाश कराता है, उसी की हम लोग उपासना करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र॑ज्येष्ठान् बृ॒हद्भ्यः॒ पर्व॑तेभ्यः॒ क्षयाँ॑ एभ्यः सुवसि प॒स्त्या॑वतः।

यथा॑यथा प॒तय॑न्तो वियेमि॒र ए॒वैव त॑स्थुः सवितः स॒वाय॑ ते॥५॥

इन्द्र॑ऽज्येष्ठान्। बृ॒हत्ऽभ्यः॑। पर्व॑तेभ्यः। क्षया॑न्। ए॒भ्यः॒। सु॒व॒सि॒। प॒स्त्य॑ऽवतः। यथा॑ऽयथा। प॒तय॑न्तः। वि॒ऽये॒मि॒रे। ए॒व। ए॒व। त॒स्थुः॒। स॒वि॒त॒रिति॑। स॒वाय॑ ते॒॥५॥

पदार्थः-**(इन्द्रज्येष्ठान्)** इन्द्रो विद्युत्सूर्यो वा ज्येष्ठो येषां तान् **(बृहद्भ्यः)** महद्भ्यः **(पर्वतेभ्यः)** मेघादिभ्यः **(क्षयान्)** निवासान् **(एभ्यः)** **(सुवसि)** **(पस्त्यावतः)** प्रशंसितानि पस्त्यानि विद्यन्ते येषु तान् **(यथायथा)** **(पतयन्तः)** पतिरिवाचरन्तः **(वियेमिरे)** विशेषेण नियच्छन्ति **(एव)** निश्चये **(एव)** **(तस्थुः)** तिष्ठन्ति **(सवितः)** जगदीश्वर **(सवाय)** ऐश्वर्याय **(ते)** तव॥५॥

अन्वयः-हे सवितर्जगदीश्वर! त्वं यथायथा बृहद्भ्य एभ्यः पर्वतेभ्यः पस्त्यावत इन्द्रज्येष्ठान् क्षयान् सुवसि तथा तथा पतयन्त एव सर्वे वियेमिरे ते सवायैव तस्थुः॥५॥

भावार्थः-हे भगवन्! भवता सर्वेषां जीवानां निवासादिव्यवहाराय भूम्यादिलोका निर्मिता अत एव भवन्तं धन्यवादान् समर्प्य वयं तवैश्वर्य्ये निवसाम॥५॥

पदार्थः-हे **(सवितः)** जगदीश्वर! आप **(यथायथा)** जैसे जैसे **(बृहद्भ्यः)** बड़े **(एभ्यः)** इन **(पर्वतेभ्यः)** मेघादिकों से **(पस्त्यावतः)** प्रशंसित गृहों से युक्त **(इन्द्रज्येष्ठान्)** बिजुली वा सूर्य्य बड़े जिनमें उन **(क्षयान्)** निवासों को **(सुवसि)** प्रेरणा करते हो, वैसे-वैसे **(पतयन्तः)** पति के सदृश आचरण करते हुए **(एव)** ही सब **(वियेमिरे)** विशेष करके देते हैं और **(ते)** आपके **(सवाय)** ऐश्वर्य्य के लिये **(एव)** ही **(तस्थुः)** स्थित होते हैं॥५॥

भावार्थ:-हे भगवन्! आपने सब जीवों के निवासादि व्यवहार के लिये भूमि आदि लोक रचे, इसी से आपके लिये धन्यवादों को समर्पण करके हम लोग आपके ऐश्वर्य्य में निवास करें॥५॥

अथ पदार्थोद्दिशेनेश्वरसेवनमाह॥

अब पदार्थोद्देश से ईश्वर की सेवा को कहते हैं॥

ये ते त्रिरहन्त्सवितः सवासो दिवेदिवे सौभगमासुवन्ति।

इन्द्रो द्यावापृथिवी सिन्धुरद्भिरादित्यैर्नो अदितिः शर्म यंसत्॥६॥५॥

ये। ते। त्रिः। अहन्। सवितरिति। सवासः। दिवेऽदिवे। सौभगम्। आऽसुवन्ति। इन्द्रः। द्यावापृथिवी इति। सिन्धुः। अत्ऽभिः। आदित्यैः। नः। अदितिः। शर्मः। यंसत्॥६॥

पदार्थ:-(**ये**) (**ते**) तव (**त्रिः**) (**अहन्**) अहनि (**सवितः**) परमेश्वर (**सवासः**) उत्पन्नाः पदार्थाः (**दिवेदिवे**) प्रतिदिनम् (**सौभगम्**) सुभगस्य श्रेष्ठैश्वर्य्यस्य भावम् (**आसुवन्ति**) उत्पादयन्ति (**इन्द्रः**) सूर्य्यः (**द्यावापृथिवी**) प्रकाशभूमी (**सिन्धुः**) (**अद्भिः**) जलैः (**आदित्यैः**) मासैः (**नः**) अस्मभ्यम् (**अदितिः**) अखण्डितः परमात्मा (**शर्म**) सुखम् (**यंसत्**) प्रदद्यात्॥६॥

अन्वयः-हे सवितर्जगदीश्वर! ते तव ये सवासोऽहन् दिवेदिवे सौभगं त्रिरासुवन्ति। अद्भिरादित्यैस्सह इन्द्रो द्यावापृथिवी सिन्धुश्चासुवन्ति सोऽदितिर्भवान्नः शर्म यंसत्॥६॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यस्य जगदीश्वरस्य सृष्टौ वयमत्यन्तैश्वर्य्यवन्तो भवामोऽस्माकरक्षकाः सर्वे पदार्थाः सन्ति तमेव वयं सततं भजेमेति॥६॥

अत्र सवित्रीश्वरविद्वत्पदार्थगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुःपञ्चाशत्तमं सूक्तं पञ्चमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे (**सवितः**) परमेश्वर (**ते**) आपके (**ये**) जो (**सवासः**) उत्पन्न पदार्थ (**अहन्**) दिन में (**दिवेदिवे**) प्रतिदिन (**सौभगम्**) श्रेष्ठ ऐश्वर्य्य के होने को (**त्रिः**) तीन वार (**आसुवन्ति**) उत्पन्न कराते हैं तथा (**अद्भिः**) जलों और (**आदित्यैः**) और महीनों के साथ (**इन्द्रः**) सूर्य्य (**द्यावापृथिवी**) प्रकाश-भूमि और (**सिन्धुः**) समुद्र भी उत्पन्न करते हैं, वह (**अदितिः**) खण्डरहित परमात्मा आप (**नः**) हम लोगों के लिये (**शर्म**) सुख को (**यंसत्**) दीजिये॥६॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जिस जगदीश्वर की सृष्टि में हम लोग ऐश्वर्य्य वाले होते हैं और हम लोगों के रक्षा करने वाले सम्पूर्ण पदार्थ हैं, उसी का हम लोग निरन्तर भजन करें॥६॥

इस सूक्त में सविता, ईश्वर, विद्वान् और पदार्थों के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चौवनवाँ सूक्त और पांचवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ दशर्चस्य पञ्चपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। विश्वेदेवा देवताः। १ त्रिष्टुप्। २, ४ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३, ५ भुरिक् पङ्क्तिः। ६, ७ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ८, ९ विराड्गायत्री। १० गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब दश ऋचा वाले पचपनवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् के गुणों का वर्णन करते हैं॥

को वस्त्राता वसवः को वरूता द्यावाभूमी अदिते त्रासीथां नः।

सहीयसो वरुण मित्र मर्तात्को वोऽध्वरे वरिवो धाति देवाः॥१॥

कः। वः। त्राता। वसवः। कः। वरूता। द्यावाभूमी इति। अदिते। त्रासीथाम्। नः। सहीयसः। वरुण। मित्र। मर्तात्। कः। वः। अध्वरे। वरिवः। धाति। देवाः॥१॥

पदार्थः-(**कः**) (**वः**) युष्माकम् (**त्राता**) रक्षकः (**वसवः**) ये वसन्ति तत्सम्बुद्धौ (**कः**) (**वरूता**) स्वीकर्त्ता (**द्यावाभूमी**) प्रकाशपृथिव्यौ (**अदिते**) अविनाशिन् (**त्रासीथाम्**) रक्षेथाम् (**नः**) अस्माकम् (**सहीयसः**) अतिशयेन सहनशीलान् बलिष्ठान् (**वरुण**) उत्कृष्टविद्वन्नध्यापक (**मित्र**) सर्वसुहृदुपदेशक (**मर्त्तात्**) मनुष्यात् (**कः**) (**वः**) युष्माकम् (**अध्वरे**) सत्ये व्यवहारे (**वरिवः**) परिचरणं सेवनम् (**धाति**) दधाति (**देवाः**) विद्वांसः॥१॥

अन्वयः-हे वरुण मित्र सहीयसो! नो वोऽध्वरे को मर्त्ताद्वरिवो धाति द्यावाभूमी इव युवामस्मान् त्रासीथाम्। हे वसवो देवा! वः वस्त्राताऽस्ति। हे अदिते जगदीश्वर! तव को वरुताऽस्ति॥१॥

भावार्थः-यो हि परमेश्वराज्ञां पालयति स परमेश्वरेण स्वीक्रियते। हे मनुष्या! योऽस्माकं युष्माकञ्च रक्षकः स एवाऽस्माभिर्भजनीयः येऽहिंसया सर्वान् मनुष्यान् विज्ञाने दधति स ते च सदैव सत्कर्त्तव्याः॥१॥

पदार्थः-हे (**वरुण**) उत्तम विद्वन् अध्यापक (**मित्र**) सम्पूर्ण मित्रों के उपदेशक (**सहीयसः**) अत्यन्त सहने वाले बलिष्ठ! (**नः**) हम लोगों के और (**वः**) आप लोगों के (**अध्वरे**) सत्य व्यवहार में (**कः**) कौन (**मर्त्तात्**) मनुष्य से (**वरिवः**) सेवन को (**धाति**) धारण करता है (**द्यावाभूमी**) प्रकाश और पृथिवी के सदृश आप दोनों हम लोगों की (**त्रासीथाम्**) रक्षा करो हे (**वसवः**) रहने वाले (**देवाः**) विद्वानो! (**वः**) आप लोगों का (**कः**) कौन (**त्राता**) रक्षक है। हे (**अदिते**) नहीं नाश होने वाले जगदीश्वर! आप का (**कः**) कौन (**वरूता**) स्वीकार करने वाला है॥१॥

भावार्थः-जो परमेश्वर की आज्ञा का पालन करता है, वह परमेश्वर से स्वीकार किया जाता है। हे मनुष्यो! जो हमारा और आप लोगों का रक्षक है, वही हम लोगों से सेवा करने योग्य है और जो अहिंसा से सब मनुष्यों को विज्ञान में धारण करते हैं, वह और वे सदा सत्कार करने योग्य हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र ये धामा॑नि पू॒र्व्याण्यर्चा॒न् वि यदु॒च्छान् वि॑यो॒तारो॑ अमू॑राः।

वि॒धा॒तारो॒ वि ते द॑धु॒रज॑स्रा ऋ॒तधी॑तयो रुरुचन्त द॒स्माः॥ २॥

प्र। ये। धामा॑नि। पू॒र्व्याणि॑। अर्चा॑न्। वि। यत्। उ॒च्छान्। वि॒ऽयो॒तारः॑। अमू॑राः। वि॒ऽधा॒तारः॑। वि। ते॒। द॒धुः॒। अज॑स्राः। ऋ॒तऽधी॑तयः। रु॒रु॒च॒न्त॒। द॒स्माः॥ २॥

पदार्थः-(**प्र**) (**ये**) (**धामानि**) जन्मनामस्थानानि (**पूर्व्याणि**) पूर्वैः साक्षात्कृतानि (**अर्चान्**) सत्कुर्य्युः (**वि**) (**यत्**) ये (**उच्छान्**) विवासयेयुः (**वियोतारः**) विभाजकाः (**अमूराः**) अमूढाः (**विधातारः**) निर्मातारः (**वि**) (**ते**) (**दधुः**) दध्युः (**अजस्राः**) अहिंसकाः (**ऋतधीतयः**) ऋतस्य धीतिर्धारणं येषान्ते (**रुरुचन्त**) सुशोभन्ते (**दस्माः**) दुःखानां विनाशकाः॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये पूर्व्याणि धामानि प्रार्चान् यद्येऽमूरा वियोतारः पूर्व्याणि धामानि व्युच्छान् येऽजस्रा ऋतधीतयो विधातारो दस्मा रुरुचन्त ते सततं वि दधुः॥ २॥

भावार्थः-ये आप्ताः सर्वेषां सुखमिच्छुका विद्वांसस्स्युस्त एव सर्वेषां सर्वाणि सुखानि कर्त्तुमर्हेयुः॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**ये**) जो (**पूर्व्याणि**) प्राचीन जनों से प्रत्यक्ष किये गये (**धामानि**) जन्म, नाम, स्थानों का (**प्र, अर्चान्**) उत्तम सत्कार करें और (**यत्**) जो (**अमूराः**) नहीं मूर्ख (**वियोतारः**) विभाग करने वाले जन प्राचीन जनों से प्रत्यक्ष किये गये जन्म, नाम, स्थानों का (**वि, उच्छान्**) विवास करावें और जो (**अजस्राः**) नहीं हिंसा करने और (**ऋतधीतयः**) सत्य के धारण करने वाले (**विधातारः**) निर्माणकर्त्ता (**दस्माः**) दुःखों के विनाशक जन (**रुरुचन्त**) उत्तम प्रकार शोभित होते हैं (**ते**) वे निरन्तर (**वि, दधुः**) विधान करें॥ २॥

भावार्थः-जो यथार्थवक्ता सब के सुख की इच्छा करने वाले विद्वान् जन हों, वे ही सब के सब सुखों के करने योग्य होवें॥ २॥

अथ विद्वद्विषये गार्हस्थ्यकर्माह॥

अब विद्वानों के विषय में गृहस्थ के कर्म को कहते हैं॥

प्र प॒स्त्या॒३॒॑मदि॑तिं॒ सिन्धु॑म॒र्कैः स्व॒स्तिमी॑ळे स॒ख्याय॑ दे॒वीम्।

उ॒भे यथा॑ नो॒ अह॑नी नि॒पात॑ उ॒षासा॒नक्ता॑ करता॒मद॑ब्धे॥ ३॥

प्र। प॒स्त्या॑म्। अदि॑तिम्। सिन्धु॑म्। अ॒र्कैः। स्व॒स्तिम्। ई॒ळे॒। स॒ख्याय॑। दे॒वीम्। उ॒भे इति॑। यथा॑। न॒ः। अह॑नी इति॑। नि॒ऽपात॑ः। उ॒षसा॒नक्ता॑। क॒र॒ता॒म्। अद॑ब्धे॒ इति॑॥ ३॥

पदार्थः-(**प्र**) (**पस्त्याम्**) गृहम् (**अदितिम्**) अखण्डिताम् (**सिन्धुम्**) नदीम् (**अर्कैः**) मन्त्रैः (**स्वस्तिम्**) सुखम् (**ईळे**) अध्यन्विच्छामि (**सख्याय**) मित्रभावाय (**देवीम्**) कमनीयां विदुषीं स्त्रियम् (**उभे**) (**यथा**) (**नः**) अस्माकम् (**अहनी**) रात्रिदिने (**निपातः**) यो नितरां पाति (**उषासानक्ता**) रात्रिदिवसौ (**करताम्**) (**अदब्धे**) अहिंसिते॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथोभे अहनी उषासानक्ता अदब्धे करतां तथा नो निपातोऽहमर्कैरदितिं पस्त्यां सिन्धुं स्वस्ति सख्याय देवीं प्रेळे॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा रात्रिदिने सम्बद्धे वर्त्तित्वा सर्वव्यवहारसिद्धे निमित्ते भवतस्तथाऽऽवां विहितौ सखिवद्वर्त्तमानौ स्त्रीपुरुषौ श्रेष्ठं गृहं पुष्कलं सुखं सर्वदोन्नयेय॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यथा**) जैसे (**उभे**) दोनों (**अहनी**) रात्रि और दिन (**उषासानक्ता**) रात्रि और दिन को (**अदब्धे**) नहीं हिंसित (**करताम्**) करें, वैसे (**नः**) हम लोगों का अर्थात् अपना (**निपातः**) अतिशय पालन करने वाला मैं (**अर्कैः**) मन्त्रों से (**अदितिम्**) खण्डरहित (**प्रस्त्याम्**) गृह और (**सिन्धुम्**) नदी की (**स्वस्तिम्**) सुख की और (**सख्याय**) मित्रपने के लिये (**देवीम्**) सुन्दर विद्यायुक्त स्त्री की (**प्र, ईळे**) विशेष इच्छा करता हूँ॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे रात्रि और दिन मिले हुए वर्ताव करके सम्पूर्ण व्यवहार में कारण होते हैं, वैसे हम दोनों विशेष करके हित चाहते हुए मित्र के सदृश वर्तमान स्त्री और पुरुष उत्तम गृह और बहुत सुख की सदा उन्नति करें॥३॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वद्विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

व्य॑र्य॒मा वरु॑णश्चेति॒ पन्था॑मि॒षस्पति॑: सुवि॒तं गा॒तुम॒ग्निः।

इन्द्रा॑विष्णू नृ॒वदु॒ षु स्तवा॑ना॒ शर्म॑ नो यन्त॒मम॑वद्वरू॑थम्॥४॥

वि। अ॒र्य॒मा। वरु॑णः। चे॒ति॒। पन्था॑म्। इ॒षः। पति॑ः। सु॒वि॒तम्। गा॒तुम्। अ॒ग्निः। इन्द्रा॑विष्णू इति॑। नृ॒ऽवत्। ऊ॒म् इति॑। सु। स्तवा॑ना। शर्म॑। नः॒। य॒न्त॒म्। अम॑ऽवत्। वरू॑थम्॥४॥

पदार्थः-(**वि**) (**अर्यमा**) न्यायकर्त्ता (**वरुणः**) श्रेष्ठः (**चेति**) विजानाति (**पन्थाम्**) धर्म्ममार्गम् (**इषः**) अन्नादेः (**पतिः**) स्वामी (**सुवितम्**) सुष्ठूत्पादितम् (**गातुम्**) पृथिवीम् (**अग्निः**) अग्निरिव वर्त्तमानः (**इन्द्राविष्णू**) विद्युद्वायू (**नृवत्**) नायकवत् (उ) (**सु**) (**स्तवाना**) सत्यप्रशंसकौ (**शर्म**) सुखम् (**नः**) अस्माकम् (**यन्तम्**) प्राप्नुतम् (**अमवत्**) प्रशस्तरूपयुक्तम्। (**वरूथम्**) गृहम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽर्यमा वरुणश्च पन्थां वि चेति गातुमग्निरिषस्पतिः सुवितं वि चेति। हे अध्यापकोपदेशकौ युवामिन्द्राविष्णू इव स्तवाना! नृवदु नोऽमवच्छर्म वरूथं सु यन्तम्॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा न्यायशीला विद्वांसोऽधर्म्यमार्गं विहाय धर्म्ये गच्छन्ति तथा यूयमपि गच्छत॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(अर्यमा)** न्यायकर्त्ता और **(वरुणः)** श्रेष्ठ पुरुष **(पन्थाम्)** धर्मसम्बन्धी मार्ग को **(वि, चेति)** विशेष कर जानता है **(गातुम्)** पृथिवी को **(अग्निः)** अग्नि जैसे वैसे वर्त्तमान **(इषः)** अन्न आदि का **(पतिः)** स्वामी **(सुवितम्)** उत्तम प्रकार उत्पन्न किये गये को विशेष कर जानता है। और हे अध्यापकोपदेशको आप दोनों **(इन्द्राविष्णू)** बिजुली और वायु के सदृश **(स्तवाना)** सत्य की प्रशंसा करने वालो! **(नृवत्)** प्रधान पुरुष के सदृश **(उ)** और **(नः)** हम लोगों के **(अमवत्)** प्रशस्तरूप से युक्त **(शर्म)** सुख और **(वरूथम्)** गृह को **(सु, यन्तम्)** अच्छे प्रकार प्राप्त होओ॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे न्यायकारी विद्वान् लोग अधर्मसम्बन्धी मार्ग का त्याग करके धर्मसम्बन्धी मार्ग में चलते हैं, वैसे आप लोग भी चलें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ पर्वतस्य मरुतामवांसि देवस्य त्रातुरव्रि भगस्य।

पात् पतिर्जन्यादंहसो नो मित्रो मित्रियादुत न उरुष्येत्॥५॥६॥

आ। पर्वतस्य। मरुताम्। अवांसि। देवस्य। त्रातुः। अव्रि। भगस्य। पात्। पतिः। जन्यात्। अंहसः। नः। मित्रः। मित्रियात्। उत। नः। उरुष्येत्॥५॥

पदार्थः-**(आ)** **(पर्वतस्य)** मेघस्य **(मरुताम्)** मनुष्याणाम् **(अवांसि)** बहुविधानि रक्षणानि **(देवस्य)** दिव्यसुखप्रापकस्य **(त्रातुः)** रक्षकस्य **(अव्रि)** आवृणोमि **(भगस्य)** ऐश्वर्य्यस्य **(पात्)** रक्षतु **(पतिः)** स्वामी **(जन्यात्)** उत्पत्स्यमानात् **(अंहसः)** अपराधात् **(नः)** अस्मान् **(मित्रः)** सखा **(मित्रियात्)** मित्रात् **(उत)** **(नः)** अस्मान् **(उरुष्येत्)** सेवेत॥५॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथाऽहं पर्वतस्य देवस्य भगस्य त्रातुर्मरुतामवांस्यहमाऽऽव्रि तथा पतिर्भवान्नो जन्यादंहसः पान्न उत मित्रो मित्रियादुरुष्येत्॥५॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सत्यं ज्ञातुमाचरितुमिच्छेयुस्ते सत्यं ज्ञानं प्राप्य सत्याचारिणो भवेयुः॥५॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जैसे मैं **(पर्वतस्य)** मेघ के **(देवस्य)** उत्तम सुख प्राप्त कराने वाले के **(भगस्य)** ऐश्वर्य्य के **(त्रातुः)** रक्षा करने वाले और **(मरुताम्)** मनुष्यों के **(अवांसि)** अनेक प्रकार रक्षणों का मैं **(आ, अव्रि)** स्वीकार करता हूँ, वैसे **(पतिः)** स्वामी आप **(नः)** हम लोगों की **(जन्यात्)** उत्पन्न होने वाले **(अंहसः)** अपराध से **(पात्)** रक्षा करो और **(नः)** हम लोगों को **(उत)** तो **(मित्रः)** मित्र **(मित्रियात्)** मित्र से **(उरुष्येत्)** सेवन करे॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य सत्य के जानने और उसके आचरण करने की इच्छा करें, वे सत्य ज्ञान को प्राप्त होकर सत्य के आचरण करने वाले होवें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू रोदसी अहिना बुध्न्येन स्तुवीत देवी अप्येभिरिष्टैः।

समुद्रं न संचरणे सनिष्यवो घर्मस्वरसो नद्यो३ अप व्रन्॥६॥

नु। रोदसी इति। अहिना। बुध्न्येन। स्तुवीत। देवी इति। अप्येभिः। इष्टैः। समुद्रम्। न। सम्ऽचरणे। सनिष्यवः। घर्मऽस्वरसः। नद्यः। अप। व्रन्॥६॥

पदार्थः-**(नू)** सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(अहिना)** मेघेन **(बुध्न्येन)** अन्तरिक्षे भवेन **(स्तुवीत)** प्रशंसेत् **(देवी)** देदीप्यमाने **(अप्येभिः)** अप्सु भवैः **(इष्टैः)** सङ्गन्तुं प्राप्तुमर्हैः **(समुद्रम्)** अन्तरिक्षम् **(न)** इव **(सञ्चरणे)** सम्यग्गमने **(सनिष्यवः)** विभागं करिष्यमाणाः **(घर्मस्वरसः)** घर्मे यज्ञे स्वकीयो रसो यस्य सः **(नद्यः)** सरितः **(अप)** **(व्रन्)** अपवृण्वन्ति॥६॥

अन्वयः-हे विद्वन्! घर्मस्वरसो भवान् यथेष्टैरप्येभिस्सह सनिष्यवो नद्यः सञ्चरणे समुद्रं नापव्रँस्तथा बुध्न्येनाहिना सहिते देवी रोदसी नू स्तुवीत॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा मेघजलैः पूर्णा नद्य आवरणानि छित्त्वाऽन्तिरक्ष आपो गच्छन्ति तथैव यूयं विद्याकाशं गत्वा सर्वा विद्याः प्रशंसत॥६॥

पदार्थः-हे विद्वन्! **(घर्मस्वरसः)** यज्ञ में अपने रस वाले आप जैसे **(इष्टैः)** मिलने और प्राप्त होने योग्य **(अप्येभिः)** जल में उत्पन्न हुए पदार्थों के साथ **(सनिष्यवः)** विभाग करती हुई **(नद्यः)** नदियाँ **(सञ्चरणे)** सुन्दर गमन में **(समुद्रम्)** अन्तरिक्ष के **(न)** तुल्य **(अप, व्रन्)** ढांपती हैं, वैसे **(बुध्न्येन)** अन्तरिक्ष में हुए **(अहिना)** मेघ के सहित **(देवी)** प्रकाशमान **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी की **(नू)** शीघ्र **(स्तुवीत)** प्रशंसा करें॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे मेघों के जलों से पूर्ण नदियाँ आवरणों को काट कर अन्तरिक्ष में जलों को प्राप्त होती हैं, वैसे ही आप लोग विद्या की दीप्ति को प्राप्त होकर सब विद्याओं की प्रशंसा करो॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

देवैर्नो देव्यदितिर्नि पातु देवस्त्राता त्रायतामप्रयुच्छन्।

नहि मित्रस्य वरुणस्य धासिमर्हामसि प्रमियं सान्वग्नेः॥७॥

देवैः। नः। देवी। अदितिः। नि। पातु। देवः। त्राता। त्रायताम्। अप्रऽयुच्छन्। नहि। मित्रस्य। वरुणस्य। धासिम्। अर्हामसि। प्रऽमियम्। सानु। अग्नेः॥७॥

पदार्थः-(देवैः) विद्वद्भिः पृथिव्यादिभिस्सह वा **(नः)** अस्मान् **(देवी)** देदीप्यमाना विदुषी माता **(अदितिः)** अखण्डितज्ञाना **(नि)** **(पातु)** रक्षतु **(देवः)** विद्वान् पिता **(त्राता)** रक्षकः **(त्रायताम्)** पालयतु **(अप्रयुच्छन्)** अप्रमाद्यन् **(नहि)** निषेधे **(मित्रस्य)** **(वरुणस्य)** **(धासिम्)** अन्नम् **(अर्हामसि)** योग्या भवामः **(प्रमियम्)** प्रहिंसितुम् **(सानु)** शिखरम् **(अग्नेः)** पावकस्य॥७॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा वयं वरुणस्य मित्रस्याग्नेः सानु धासिं प्रमियं नह्यर्हामसि तथा देवैस्सह देव्यदितिर्नो नि पात्वप्रयुच्छँस्त्राता देवोऽस्माँस्त्रायताम्॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। केनाऽपि मनुष्येण कस्याऽपि जनस्य पदार्थस्य वा हिंसा मादकद्रव्यसेवनञ्च सदैव न कार्य्यं सदा विदुषां मातुः पितुश्च शिक्षा सङ्ग्राह्या॥७॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जैसे हम लोग **(वरुणस्य)** श्रेष्ठ पुरुष **(मित्रस्य)** मित्र और **(अग्नेः)** अग्नि के **(सानु)** शिखर और **(धासिम्)** अन्न के **(प्रमियम्)** नाश करने को **(नहि)** नहीं **(अर्हामसि)** योग्य होते हैं, वैसे **(देवैः)** विद्वानों वा पृथिवी आदिकों के साथ **(देवी)** प्रकाशमान विद्यायुक्त माता **(अदितिः)** अखण्डित ज्ञानवाली **(नः)** हम लोगों की **(नि, पातु)** रक्षा करे और **(अप्रयुच्छन्)** नहीं प्रमाद करता हुआ **(त्राता)** रक्षा करने वाला **(देवः)** विद्वान् पिता हम लोगों का **(त्रायताम्)** पालन करे॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। प्रत्येक मनुष्य को चाहिये कि किसी सज्जन वा किसी पदार्थ का नाश और नशा करने वाले द्रव्य का सेवन सदा ही न करे और सदा विद्वानों और माता-पिता की शिक्षा को ग्रहण करे॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अग्निरीशे वसव्यस्याग्निर्महः सौभगस्य। तान्यस्मभ्यं रासते॥८॥

अग्निः। ईशे। वसव्यस्य। अग्निः। महः। सौभगस्य। तानि। अस्मभ्यम्। रासते॥८॥

पदार्थः-(अग्निः) अग्निरिव पुरुषार्थी **(ईशे)** ईष्टे **(वसव्यस्य)** वसुषु धनेषु साधोः **(अग्निः)** पावकः **(महः)** महतः **(सौभगस्य)** सुष्ठ्वैश्वर्य्यभावस्य **(तानि)** **(अस्मभ्यम्)** **(रासते)** ददाति॥८॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथाऽग्निर्वसव्यस्य यथाऽग्निर्महः सौभगस्येशे तान्यस्मभ्यं रासते तथा त्वं कुरु॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथा विद्ययोपजितोऽग्निः कार्य्याणि संसाध्य महदैश्वर्य्यं प्रापयति तथैव सेविता यूयं विद्योपदेशादिकार्य्याणि संसाध्य सर्वानैश्वर्य्ययुक्तान् कुरुत॥८॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जैसे **(अग्निः)** अग्नि के सदृश पुरुषार्थी **(वसव्यस्य)** धनों में श्रेष्ठ का और जैसे **(अग्निः)** अग्नि **(महः)** बड़े **(सौभगस्य)** उत्तम ऐश्वर्य्य के होने की **(ईशे)** इच्छा करता है **(तानि)** उनको **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(रासते)** देता है, वैसे आप करो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जैसे विद्या से उपार्जित अर्थात् वश में किया गया अग्नि, कार्य्यों को सिद्ध करके बड़े ऐश्वर्य्य को प्राप्त कराता है, वैसे ही सेवा किये गये आप लोग विद्या और उपदेश आदि कार्य्यों को सिद्ध करके सब को ऐश्वर्य्ययुक्त करो॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उषो मघोन्या वह सूनृते वार्या पुरु। अस्मभ्यं वाजिनीवति॥९॥

उषः। मघोनि। आ। वह। सूनृते। वार्या। पुरु। अस्मभ्यम्। वाजिनीऽवति॥९॥

पदार्थः-**(उषः)** उषर्वद्वर्त्तमाने **(मघोनि)** प्रशंसितधनकारिके **(आ) (वह)** समन्तात् प्रापय **(सूनृते)** सत्यवाक् **(वार्या)** वर्त्तुमर्हाणि वस्तूनि **(पुरु) (अस्मभ्यम्) (वाजिनीवति)** उत्तमविद्यायुक्ते॥९॥

अन्वयः-हे उषर्वद्वर्त्तमाने सूनृते मघोनि वाजिनीवति! पत्नी त्वमस्मभ्यं पुरु वार्याऽऽवह॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथोषाः सर्वजीवानां प्रियकारिणी वर्त्तते तथैव विदुषी स्त्री सर्वप्रिया जायते॥९॥

पदार्थः-हे **(उषः)** प्रातःकाल के सदृश वर्त्तमान **(सूनृते)** सत्यवाणीयुक्त **(मघोनि)** प्रशंसित धन को करने वाली **(वाजिनीवति)** उत्तम विद्या से युक्त पत्नी तू **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(पुरु)** बहुत **(वार्या)** वर्त्ताव में लाने योग्य वस्तुओं को **(आ, वह)** सब प्रकार से प्राप्त कराओ॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे प्रभातवेला सब जीवों की प्रिय करने वाली है, वैसे ही विद्यायुक्त स्त्री सब को प्रिय होती है॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तत्सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा। इन्द्रो नो राधसा गमत्॥१०॥७॥

तत्। सु। नः। सविता। भगः। वरुणः। मित्रः। अर्यमा। इन्द्रः। नः। राधसा। आ। गमत्॥१०॥

पदार्थः-**(तत्)** तेन **(सु) (नः)** अस्मान् **(सविता)** सूर्य्यः **(भगः)** भजनीयः पदार्थसमुदायः **(वरुणः)** उदानः **(मित्रः)** प्राणः **(अर्यमा)** न्यायकारी **(इन्द्रः)** विद्युत् **(नः)** अस्मान् **(राधसा)** धनेन **(आ)** समन्तात् **(गमत्)** गच्छति॥१०॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा सविता भगो वरुणो मित्रोऽर्यमा तद्राधसा न आ गमदिन्द्रो नः सु गमत्तथा त्वं भव॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे अध्यापकोपदेशका! यथा नियमेन सूर्य्यवायू प्राणादयो विद्युच्च प्राप्ताः सन्ति तथैवाऽस्मान् सततं प्राप्ता भवत॥१०॥

अत्र विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चपञ्चाशत्तमं सूक्तं सप्तमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जैसे **(सविता)** सूर्य **(भगः)** सेवन करने योग्य पदार्थसमुदाय **(वरुणः)** उदानवायु **(मित्रः)** प्राणवायु **(अर्यमा)** न्यायकारी **(तत्)** उस **(राधसा)** धन से **(नः)** हम लोगों को **(आ)** सब प्रकार **(गमत्)** प्राप्त होता और **(इन्द्रः)** बिजुली **(नः)** हम लोगों को **(सु)** उत्तम प्रकार प्राप्त होती है, वैसे आप हूजिये॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे अध्यापक और उपदेशक जनो! जैसे नियम से सूर्य, वायु, प्राण आदि और बिजुली प्राप्त हैं, वैसे ही आप हम लोगों को निरन्तर प्राप्त हूजिये॥१०॥

इस सूक्त में विद्वानों के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पचपनवाँ सूक्त और सप्तम वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य षट्पञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। द्यावापृथिव्यौ देवते। १, २ त्रिष्टुप्। ४ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ५ निचृद्गायत्री। ६ विराट् गायत्री। ७ गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ द्यावापृथिव्योर्गुणानाह॥

अब सात ऋचा वाले छप्पनवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में द्यावापृथिवी अर्थात् प्रकाश और भूमि के गुणों को कहते हैं॥

म॒ही द्यावा॑पृथि॒वी इ॒ह ज्येष्ठे॑ रु॒चा भ॑वतां शु॒चय॑द्भिर॒र्कैः।

यत्सीं॒ वरि॑ष्ठे बृह॒ती वि॑मि॒न्वन् रु॒वद्धो॒क्षा प॑प्रथा॒नेभि॒रेवैः॑॥ १॥

म॒ही इति॑। द्यावा॑पृथि॒वी इति॑। इ॒ह। ज्येष्ठे॒ इति॑। रु॒चा। भ॒व॒ता॒म्। शु॒चय॑त्ऽभिः। अ॒र्कैः। यत्। सी॒म्। वरि॑ष्ठे॒ इति॑। बृ॒ह॒ती इति॑। वि॒ऽमि॒न्वन्। रु॒वत्। ह॒। उ॒क्षा। प॒प्र॒था॒नेभिः॑। एवैः॑॥ १॥

पदार्थः-(**मही**) महत्यौ (**द्यावापृथिवी**) सूर्यभूमी (**इह**) (**ज्येष्ठे**) अतिशयेन प्रशस्ये (**रुचा**) रुचिकर्यौ (**भवताम्**) (**शुचयद्भिः**) पवित्रयद्भिः (**अर्कैः**) अर्चनीयैः (**यत्**) यः (**सीम्**) सर्वतः (**वरिष्ठे**) अतिशयेन वरे (**बृहती**) बृहन्त्यौ (**विमिन्वन्**) विशेषेण प्रक्षिपन् (**रुवत्**) प्रशस्तशब्दवत् (**ह**) किल (**उक्षा**) सूर्यः (**पप्रथानेभिः**) भृशं विस्तृतैः (**एवैः**) सुखप्रापकैः॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्यो विमिन्वन् रुवद्धोक्षेव विद्वानिह सीं शुचयद्भिरर्कैः पप्रथानेभिरेवैर्गुणै-स्सह वर्त्तमाने वरिष्ठे बृहती मही ज्येष्ठे रुचा द्यावापृथिवी भवतां ते [=तान्] यथावद्विजानाति स एव सर्वेषां कल्याणकरो भवति॥१॥

भावार्थः-ये मनुष्याः पृथिवीमारभ्य सूर्यपर्य्यन्तान् पदार्थाञ्च जानन्ति त ऐश्वर्य्यवन्तो भूत्वा सर्वान् सुखयन्तु॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यत्**) जो (**विमिन्वन्**) विशेष करके फेंकता हुआ (**रुवन्**) प्रशंसित शब्दवान् जैसे हो वैसे (**ह**) ही (**उक्षा**) सूर्य्य के समान विद्वान् (**इह**) यहाँ (**सीम्**) सब ओर से (**शुचयद्भिः**) पवित्र करते हुए (**अर्कैः**) सेवा करने योग्य और (**पप्रथानेभिः**) अत्यन्त विस्तारयुक्त (**एवैः**) सुख को प्राप्त कराने वाले गुणों के साथ वर्त्तमान (**वरिष्ठे**) अतीव श्रेष्ठ (**बृहती**) बढ़ते हुए (**मही**) बड़े (**ज्येष्ठे**) अत्यन्त प्रशंसा करने योग्य (**रुचा**) रुचिकर (**द्यावापृथिवी**) सूर्य्य और भूमि (**भवताम्**) होते हैं, उनको यथावत् विशेष करके जानता है, वही सब का कल्याण करने वाला होता है॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य पृथिवी से लेके सूर्य्यपर्य्यन्त पदार्थों को जानते हैं, वे धनवान् होकर सब को सुखी करें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दे॒वी दे॒वेभि॑र्यज॒ते यज॑त्रै॒रमि॑नती तस्थतुरु॒क्षमा॑णे।

ऋ॒तावरी॑ अ॒द्रुहा॑ दे॒वपु॑त्रे य॒ज्ञस्य॑ ने॒त्री शु॒चय॑द्भिर॒र्कैः॥ २॥

दे॒वी इति॑। दे॒वेभिः॑। य॒ज॒ते इति॑। यज॑त्रैः। अमि॑नती॒ इति॑। त॒स्थ॒तुः॒। उ॒क्षमा॑णे॒ इति॑। ऋ॒तव॑री॒ इत्यृ॒तऽव॑री। अ॒द्रुहा॑। दे॒वपु॑त्रे॒ इति॑ दे॒वऽपु॑त्रे। य॒ज्ञस्य॑। ने॒त्री इति॑। शु॒चय॑त्ऽभिः। अ॒र्कैः॥ २॥

पदार्थः-(**देवी**) देदीप्यमाने (**देवेभिः**) दिव्यैर्गुणैर्विद्वद्भिर्वा (**यजते**) सङ्गन्तव्ये (**यजत्रैः**) सङ्गन्तव्यैः (**अमिनती**) अहिंसके (**तस्थतुः**) तिष्ठतः (**उक्षमाणे**) सर्वान् प्राणिनः सुखैः सिञ्चमाने (**ऋतावरी**) बह्वृतं सत्यं विद्यते ययोस्ते (**अद्रुहा**) अद्रोग्धव्ये (**देवपुत्रे**) देवा विद्वांसः पुत्रा ययोस्ते (**यज्ञस्य**) संसारव्यवहारस्य (**नेत्री**) नयनकर्त्र्यौ (**शुचयद्भिः**) शुचिमाचक्षाणैः (**अर्कैः**) सत्कर्त्तव्यैः॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! अर्कैः शुचयद्भिर्यजत्रैर्देवेभिर्विद्वद्भिर्ये देवी अमिनती ऋतावरी अद्रुहा देवपुत्रे यज्ञस्य नेत्री उक्षमाणे यजते द्यावापृथिवी तस्थतुर्विज्ञायैते यो यजते स एव भाग्यशाली जायते॥ २॥

भावार्थः-ये मनुष्या पृथिवीमारभ्य प्रकृतिपर्य्यन्तान् पदार्थान् यथावद् विज्ञाय कार्यसिद्धये सम्प्रयुञ्जते ते सदैव भाग्यशालिनो भवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**अर्कैः**) सत्कार करने योग्य (**शुचयद्भिः**) पवित्रता को कहते हुए (**यजत्रैः**) मिलने योग्य (**देवेभिः**) श्रेष्ठ गुणों वा विद्वानों से जो (**देवी**) प्रकाशमान (**अमिनती**) नहीं हिंसा करने वाले (**ऋतावरी**) बहुत सत्य से युक्त (**अद्रुहा**) नहीं द्रोह करने योग्य (**देवपुत्रे**) विद्वान् जन पुत्र जिनके वे (**यज्ञस्य**) संसार के व्यवहार के (**नेत्री**) चलाने वाले (**उक्षमाणे**) सब प्राणियों को सुखों से सींचते हुए (**यजते**) मिलने योग्य सूर्य्य और भूमि (**तस्थतुः**) स्थित होते हैं, उनको जान के जो व्यवहारों में संयुक्त करता है, वही भाग्यशाली होता है॥ २॥

भावार्थः-जो मनुष्य पृथिवी से लेके प्रकृति अर्थात् प्रधानपर्य्यन्त पदार्थों को उनके गुण, कर्म्म, स्वभाव से यथावत् जान के कार्य्य की सिद्धि के लिये सम्प्रयोग करते हैं, वे सदा ही भाग्यशाली होते हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स इत्स्व॒पा भुव॑नेष्वास॒ य इ॒मे द्यावा॑पृथि॒वी ज॒जान॑।

उ॒र्वी ग॑भी॒रे रज॑सी सु॒मेके॑ अ॒वं॒शे धीरः॒ शच्या॒ समै॑रत्॥ ३॥

सः। इत्। सु॒ऽअपाः॑। भुव॑नेषु। आ॒स॒। यः। इ॒मे इति॑। द्यावा॑पृथि॒वी इति॑। ज॒जान॑। उ॒र्वी। ग॒भी॒रे इति॑। रज॑सी॒ इति॑। सु॒मेके॒ इति॑ सु॒ऽमेके॑। अ॒वं॒शे। धीरः॑। शच्या॑। सम्। ऐ॒र॒त्॥ ३॥

पदार्थः-(**सः**) (**इत्**) एव (**स्वपाः**) शोभानान्यपांसि कर्माणि यस्य सः (**भुवनेषु**) लोकेषु (**आस**) आस्ते (**यः**) (**इमे**) (**द्यावापृथिवी**) सूर्य्यभूमी (**जजान**) उत्पादितवान् (**उर्वी**) बहुपदार्थयुक्ते (**गभीरे**) गाम्भीर्यादिगुणसहिते (**रजसी**) रजोभिर्निर्मिते (**सुमेके**) एकीभूते सम्बद्धे (**अवंशे**) अविद्यमानो वंशो ययोस्ते अन्तरिक्षस्थे (**धीरः**) (**शच्या**) प्रज्ञया (**सम्**) (**ऐरत्**) कम्पयति यथाक्रमं चालयति॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! युष्माभिर्यः स्वपा धीरो जगदीश्वरो भुवनेष्वासेमे उर्वी गभीरे रजसी सुमेके अवंशे द्यावापृथिवी जजान शच्या समैरत्स इदेव सदोपासनीयोऽस्ति॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन जगदीश्वरेणाऽसङ्ख्या भूमयश्चाकाशे निर्मिता व्यवस्थया चाल्यन्ते स एव सदैव भजनीयः॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! आप लोगों को (**यः**) जो (**स्वपाः**) श्रेष्ठ कर्मों से युक्त (**धीरः**) धीर जगदीश्वर (**भुवनेषु**) लोकों में (**आस**) विद्यमान है (**इमे**) इन (**उर्वी**) बहुत पदार्थों से युक्त (**गभीरे**) गाम्भीर्य्य आदि गुणसहित (**रजसी**) रजोवृन्दों से बनाये गये (**सुमेके**) एक हुए अर्थात् परस्पर सम्बन्धयुक्त (**अवंशे**) वंश अर्थात् उत्पत्तिक्रम से आगे को रहित और अन्तरिक्ष में स्थित (**द्यावापृथिवी**) सूर्य्य और भूमि को (**जजान**) उत्पन्न किया (**शच्या**) बुद्धि से (**सम्, ऐरत्**) कम्पाता अर्थात् क्रम से अनुकूल चलाता है (**सः, इत्**) वही सदा उपासना करने योग्य है॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस जगदीश्वर ने असङ्ख्य भूमि आदि लोक आकाश में रचे और व्यवस्था से चलाये हैं, वह सदा ही उपासना करने योग्य है॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू रोदसी बृहद्भिर्नो वरूथैः पत्नीवद्भिरिषयन्ती सजोषाः।

उरूची विश्वे यजते नि पातं धिया स्याम रथ्यः सदासाः॥४॥

नु। रोदसी इति। बृहत्ऽभिः। नः। वरूथैः। पत्नीवत्ऽभिः। इषयन्ती इति। सऽजोषाः। उरूची इति। विश्वे इति। यजते इति। नि। पातम्। धिया। स्याम। रथ्यः। सदाऽसाः॥४॥

पदार्थः-(**नु**) सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघे**ति दीर्घः। (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**बृहद्भिः**) महद्भिः (**नः**) अस्मान् (**वरूथैः**) उत्तमैर्गृहैः (**पत्नीवद्भिः**) बह्व्यः पत्न्यो विद्यन्ते येषु तैः (**इषयन्ती**) सुखं प्रापयन्त्यौ (**सजोषाः**) समानप्रीतिसेवी (**उरूची**) य उरून् बहूनञ्चतस्ते (**विश्वे**) अन्तरिक्षे प्रविष्टे (**यजते**) सङ्गन्तव्ये (**नि**) नितराम् (**पातम्**) रक्षतः। अत्र पुरुषव्यत्ययः। (**धिया**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**स्याम**) भवेम (**रथ्यः**) बहुरथादियुक्ताः (**सदासाः**) ससेवकाः॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सजोषा विद्वान् धिया ये इषयन्ती उरूची विश्वे यजते बृहद्भिः पत्नीवद्भिर्वरूथैस्सह वर्त्तमाने रोदसी नोऽस्मान् नि पातं ते जानाति तथैते विदित्वा वयं रथ्यः सदासा नू स्याम॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या बहुभिर्बृहद्भिः पदार्थैर्युक्ते विद्युद्भूमी विजानन्ति ते सद्यः श्रीमन्तो जायन्ते॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(सजोषाः)** तुल्य प्रीति का सेवन करने वाला विद्वान् **(धिया)** बुद्धि वा कर्म्म से जो **(इषयन्ती)** सुख को प्राप्त कराती हुईं **(उरूची)** बहुतों का आदर करने वाली **(विश्वे)** अन्तरिक्ष में प्रविष्ट **(यजते)** मिलने योग्य और **(बृहद्भिः)** जो बड़े **(पत्नीवद्भिः)** बहुत स्त्रियों से युक्त **(वरूथैः)** उत्तम गृह उनके साथ वर्त्तमान **(रोदसी)** सूर्य्य और पृथिवी **(नः)** हम लोगों की **(नि)** अत्यन्त **(पातम्)** रक्षा करती हैं उनको जानता है, वैसे इनको जान के हम लोग **(रथ्यः)** बहुत रथ आदि से युक्त **(सदासाः)** सेवकों के सहित **(नू)** शीघ्र **(स्याम)** होवें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य बहुत और बड़े पदार्थों से युक्त बिजुली और भूमि को विशेष करके जानते हैं, वे शीघ्र लक्ष्मीवान् होते हैं॥४॥

अथ शिल्पविद्याशिक्षामाह॥

अब शिल्पविद्या की शिक्षा की अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र वां महि द्यवी अभ्युपस्तुतिं भरामहे। शुची उप प्रशस्तये॥५॥

प्र। वाम्। महि। द्यवी इति। अभि। उपऽस्तुतिम्। भरामहे। शुची इति। उप। प्रऽशस्तये॥५॥

पदार्थः-**(प्र)** **(वाम्)** युवयोरध्यापकक्रियाकर्त्रोः **(महि)** महागुणे **(द्यवी)** द्योतमाने **(अभि)** **(उपस्तुतिम्)** उपमितां प्रशंसाम् **(भरामहे)** धरामहे **(शुची)** पवित्रे **(उप)** **(प्रशस्तये)**॥५॥

अन्वयः-हे शिल्पविद्याप्रवीणौ! यतो वयं प्रशस्तये शुची महि द्यवी अभ्युप प्रभरामहे तस्माद् वामुपस्तुतिं कुर्महे॥५॥

भावार्थः-येषां सकाशाच्छिल्पादिविद्या गृह्यन्ते तेषां मान्यं मनुष्याः सदा कुर्वन्तु॥५॥

पदार्थः-हे शिल्पविद्या में प्रवीणो! जिससे हम लोग **(प्रशस्तये)** प्रशंसित **(शुची)** पवित्र **(महि)** महागुणयुक्त **(द्यवी)** प्रकाशमान को **(अभि, उप, प्र, भरामहे)** सब ओर से अच्छे प्रकार धारण करते हैं इससे **(वाम्)** आप दोनों अध्यापक और क्रिया करने वालों की **(उपस्तुतिम्)** उपमायुक्त प्रशंसा करते हैं॥५॥

भावार्थः-जिनके समीप से शिल्प आदि विद्या ग्रहण की जाती हैं, उनका आदर मनुष्य सदा करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पुनाने तन्वा मिथः स्वेन दक्षेण राजथः। ऊह्याथे सनादृतम्॥६॥

पुनाने इति। तन्वा। मिथः। स्वेन। दक्षेण। राजथः। ऊह्याथे इति। सनात्। ऋतम्॥६॥

पदार्थः-(पुनाने) पवित्रकारिके **(तन्वा)** शरीरेण **(मिथः)** परस्परम् **(स्वेन)** स्वकीयेन **(दक्षेण)** बलयुक्तेन **(राजथः)** **(ऊह्याथे)** वितर्कयथः **(सनात्)** सनातनात् **(ऋतम्)** सत्यम्॥६॥

अन्वयः-यौ शिल्पविद्यापकाऽध्येतारौ स्वेन दक्षेण तन्वा पुनाने विदित्वा मिथो राजथः सनाद् ऋतमूह्याथे तौ सत्कर्त्तव्यौ भवथः॥६॥

भावार्थः-ये शिल्पविद्यायां निपुणा जायन्ते तेषां सत्कारो यथायोग्यं राजादिभिः कर्त्तव्यः॥६॥

पदार्थः-जो शिल्पविद्या के पढ़ाने और पढ़ने वाले **(स्वेन)** अपने **(दक्षेण)** बलयुक्त **(तन्वा)** शरीर से **(पुनाने)** पवित्र करनेवाली सूर्य और पृथिवी को जान के **(मिथः)** परस्पर **(राजथः)** शोभित होते हैं और **(सनात्)** सनातन से **(ऋतम्)** सत्य का **(ऊह्याथे)** ऊहापोह करते हैं, वे सत्कार के योग्य होते हैं॥६॥

भावार्थः-जो शिल्पविद्या में निपुण होते हैं, उनका सत्कार यथायोग्य राजा आदि को करना चाहिये॥६॥

पुनः शिल्पविद्याविषयमाह॥

फिर शिल्पविद्या विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मही मित्रस्य साधथस्तरन्ती पिप्रती ऋतम्। परि यज्ञं नि षेदथुः॥७॥८॥

मही इति। मित्रस्य। साधथः। तरन्ती इति। पिप्रती इति। ऋतम्। परि। यज्ञम्। नि। सेदथुः॥७॥

पदार्थः-(मही) महत्यौ **(मित्रस्य)** सर्वस्य सुहृदः **(साधथः)** साध्नुतः। अत्र व्यत्ययः। **(तरन्ती)** दुःखं प्लावयन्त्यौ **(पिप्रती)** सर्वानन्दं प्रपूरयन्त्यौ **(ऋतम्)** सत्यं कारणम् **(परि)** सर्वतः **(यज्ञम्)** सङ्गन्तव्यम् **(नि)** **(सेदथुः)** निषीदतः॥७॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! ये तरन्ती पिप्रती मही ऋतं यज्ञं परि नि षेदथुर्मित्रस्य कार्याणि साधथस्ते यथावद्विज्ञाय सम्प्रयुग्ध्वम्॥७॥

भावार्थः-मनुष्यैः सर्वाधारे सर्वकार्यसाधिके द्यावापृथिवी विज्ञायाभीष्टानि कार्याणि साधनीयानीति॥७॥

अत्र द्यावापृथिव्योर्गुणशिल्पविद्याशिक्षावर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षट्पञ्चाशत्तमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वानो जो **(तरन्ती)** दुःख से पार उतारती और **(पिप्रती)** सम्पूर्ण आनन्द को पूर्ण

करती हुईं **(मही)** बड़े सूर्य और पृथिवी **(ऋतम्)** सत्यकारणरूप **(यज्ञम्)** संग करने अर्थात् आरम्भ करने योग्य यज्ञ को **(परि)** सब प्रकार से **(नि, सेदथुः)** सिद्धि करती और **(मित्रस्य)** सब के मित्र के कार्य्यों को **(साधथः)** सिद्ध करती उन सूर्य्य और भूमि को यथावत् जान के उनका संयोग करो अर्थात् काम [में] लाओ॥७॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये सब के आधारभूत सब कार्य्य सिद्ध करने वाली सूर्य और पृथिवी को जान के अभीष्ट कार्य्यों को सिद्ध करें॥७॥

इस सूक्त में सूर्य्य और पृथिवी के गुण और शिल्पविद्या शिक्षा वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥७॥

यह छप्पनवाँ सूक्त और आठवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

अथाष्टर्चस्य सप्तपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। १-३ क्षेत्रपतिः। ४ शुनः। ५, ८ शुनासीरौ। ६, ७ सीता देवता। १, ४, ६, ७ अनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। २, ३, ८ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ पुर उष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ कृषिकर्माह॥

अब आठ ऋचा वाले सत्तावनवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में कृषिकर्म को कहते हैं॥

क्षेत्र॑स्य॒ पति॑ना व॒यं हि॒तेने॑व जयामसि।

गामश्वं॑ पोषयि॒त्न्वा स नो॑ मृळाती॒दृशे॑॥ १॥

क्षेत्र॑स्य। पति॑ना। व॒यम्। हि॒तेन॑ऽइव। ज॒या॒म॒सि॒। गाम्। अश्व॑म्। पो॒ष॒यि॒त्नु। आ। सः। नः। मृ॒ळा॒ति॒। ई॒दृशे॑॥ १॥

पदार्थः-(क्षेत्रस्य) शस्यस्योपत्त्यधिकरणस्य **(पतिना)** स्वामिना। अत्र **षष्ठीयुक्तश्छन्दसि वे**ति पतिशब्दस्य घिसंज्ञा। **(वयम्) (हितेनेव)** हितसाधकेन सैन्येनेव **(जयामसि)** जयामः **(गाम्)** पृथिवीम् **(अश्वम्)** तुरङ्गम् **(पोषयित्नु)** पुष्टिकरम् **(आ) (सः) (नः)** अस्मान् **(मृळाति) (ईदृशे)**॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! येन क्षेत्रस्य पतिना सहिता वयं हितेनेव गामश्वं पोषयित्नु द्रव्यं जयामसि स क्षेत्रपतिरीदृशे न आ मृळाति सुखयेत्॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सुशिक्षितेनानुरक्तेन सैन्येन वीरा विजयं प्राप्नुवन्ति तथैव कृषिकर्मसु कुशला ऐश्वर्यं लभन्ते॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस **(क्षेत्रस्य)** अन्न की उत्पत्ति के आधारस्थान अर्थात् खेत के **(पतिना)** स्वामी से **(वयम्)** हम लोग **(हितेनेव)** हित की सिद्धि करने वाली सेना के सदृश **(गाम्)** पृथिवी **(अश्वम्)** घोड़ा **(पोषयित्नु)** और पुष्टि करने वाले द्रव्य को **(जयामसि)** जीतते हैं **(सः)** वह क्षेत्र का स्वामी **(ईदृशे)** ऐसे में **(नः)** हम लोगों को **(आ, मृळाति)** सुख देवें॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। उस उत्तम प्रकार शिक्षित और अनुरक्त सेना से वीरजन विजय को प्राप्त होते हैं, वैसे ही कृषि अर्थात् खेतीकर्म्म में चतुर जन ऐश्वर्य्य को प्राप्त होते हैं॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

क्षेत्र॑स्य पते॒ मधु॑मन्तमू॒र्मिं धे॒नुरि॑व॒ पयो॑ अ॒स्मासु॑ धुक्ष्व।

म॒धु॒श्चुतं॑ घृ॒तमि॑व॒ सुपू॑तमृ॒तस्य॑ नः॒ पत॑यो मृळयन्तु॥ २॥

क्षेत्र॑स्य। पते॑। मधु॑ऽमन्तम्। ऊ॒र्मिम्। धे॒नुःऽइ॑व। पयः॑। अ॒स्मासु॑। धु॒क्ष्व॒। म॒धु॒ऽश्चुत॑म्। घृ॒तम्ऽइ॑व। सु॒ऽपू॑तम्। ऋ॒तस्य॑। नः॒। पत॑यः। मृ॒ळ॒य॒न्तु॒॥ २॥

पदार्थः-(**क्षेत्रस्य**) (**पते**) स्वामिन् (**मधुमन्तम्**) मधुरादिगुणयुक्तम् (**ऊर्मिम्**) जलधाराम् (**धेनुरिव**) (**पयः**) दुग्धम् (**अस्मासु**) (**धुक्ष्व**) पूर्णं कुरु (**मधुश्चुतम्**) मधुरादिगुणयुक्तम् (**घृतमिव**) (**सुपूतम्**) सुष्ठु पवित्रम् (**ऋतस्य**) (**नः**) अस्मान् (**पतयः**) स्वामिनः (**मृळयन्तु**)॥ २॥

अन्वयः-हे क्षेत्रस्य पते! यथर्तस्य पतयो घृतमिव मधुश्चुतं सुपूतं विज्ञानं प्राप्य नो मृळयन्तु तथा धेनुरिव मधुमन्तमूर्मिं पयोऽस्मासु धुक्ष्व॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा धीमन्तः कृषीवलाः सुन्दराणि शुद्धान्यन्नान्युत्पाद्य सर्वानानन्दयन्ति तथैव कृषीवलान् संरक्ष्य सदैवोत्साहयेत्॥ २॥

पदार्थः-हे (**क्षेत्रस्य**) अन्न के उत्पन्न होने की आधारभूमि के (**पते**) स्वामी जैसे (**ऋतस्य**) सत्य के (**पतयः**) स्वामी (**घृतमिव**) घृत के सदृश (**मधुश्चुतम्**) मधुर आदि गुणों से युक्त (**सुपूतम्**) उत्तम प्रकार पवित्र विज्ञान को प्राप्त होकर (**नः**) हम लोगों को (**मृळयन्तु**) सुख दीजिये तथा (**धेनुरिव**) गौ के सदृश (**मधुमन्तम्**) मधुर आदि गुणों से युक्त (**ऊर्मिम्**) जलधारा और (**पयः**) दुग्ध को (**अस्मासु**) हम लोगों में (**धुक्ष्व**) पूर्ण करो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे बुद्धिमान् खेती करने वाले जन सुन्दर शुद्ध अन्नों को उत्पन्न करके सब को आनन्द देते हैं, वैसे ही खेती करने वाले जनों की उत्तम प्रकार रक्षा करके सदा उत्साह युक्त करे॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मधु॑मती॒रोष॑धी॒र्द्याव॒ आपो॒ मधु॑मन्नो भवत्व॒न्तरि॑क्षम्।

क्षेत्र॑स्य॒ पति॒र्मधु॑मान्नो अ॒स्त्वरि॑ष्यन्तो॒ अन्वे॑नं चरेम॥ ३॥

मधु॑ऽमतीः। ओष॑धीः। द्यावः॑। आपः॑। मधु॑ऽमत्। नः॒। भ॒व॒तु॒। अ॒न्तरि॑क्षम्। क्षेत्र॑स्य। पतिः॑। मधु॑ऽमान्। नः॒। अ॒स्तु॒। अरि॑ष्यन्तः। अनु॑। ए॒न॒म्। च॒रे॒म॒॥ ३॥

पदार्थः-(**मधुमतीः**) मधुरादिगुणयुक्ताः (**ओषधीः**) यवाद्या ओषधयः (**द्यावः**) सूर्य्यादिप्रकाशाः (**आपः**) जलानि (**मधुमत्**) मधुरादिगुणयुक्तम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**भवतु**) (**अन्तरिक्षम्**) आकाशम् (**क्षेत्रस्य**) (**पतिः**) स्वामी (**मधुमान्**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**अस्तु**) (**अरिष्यन्तः**) अन्यैरहिंसिष्यन्तः (**अनु**) (**एनम्**) (**चरेम**)॥ ३॥

अन्वय:-हे मनुष्या! न ओषधीर्द्याव आपश्च मधुमती: सन्तु अन्तरिक्षं मधुमद्भवतु क्षेत्रस्य पतिर्नो मधुमानस्त्वरिष्यन्तो वयमेनमनु चरेम॥३॥

भावार्थ:-सर्वैर्मनुष्यैर्यथा स्वार्थमुत्तमा: पदार्था इष्यन्ते तथैवाऽन्यार्थमप्येष्टव्या:॥३॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! **(न:)** हम लोगों के लिये **(ओषधी:)** यव आदि ओषधियाँ **(द्याव:)** सूर्य्य आदि प्रकाश और **(आप:)** जल **(मधुमती:)** मधुर आदि गुणों से युक्त हों **(अन्तरिक्षम्)** आकाश **(मधुमत्)** मधुर आदि गुणों से युक्त **(भवतु)** हो **(क्षेत्रस्य)** अन्न के उत्पन्न होने की भूमि का **(पति:)** स्वामी **(न:)** हम लोगों के लिये **(मधुमान्)** मधुर गुण वाला **(अस्तु)** हो और **(अरिष्यन्त:)** अन्यों के साथ नहीं हिंसा करने वाले हम लोग **(एनम्)** इसको **(अनु, चरेम)** अनुकूल वर्त्तें॥३॥

भावार्थ:-सब मनुष्यों को चाहिये कि वे जैसे अपने लिये उत्तम पदार्थ चाहते हैं, वैसे ही अन्य जनों के लिये भी इच्छा करें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनं वाहा: शुनं नर: शुनं कृषतु लाङ्गलम्।

शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गय॥४॥

शुनम्। वाहा:। शुनम्। नर:। शुनम्। कृषतु। लाङ्गलम्। शुनम्। वरत्रा:। बध्यन्ताम्। शुनम्। अष्ट्राम्। उत्। इङ्गय॥४॥

पदार्थ:-**(शुनम्)** सुखम् **(वाहा:)** वृषभादय: **(शुनम्)** **(नर:)** नेतार: कृषीवला: **(शुनम्)** **(कृषतु)** **(लाङ्गलम्)** हलावयव: **(शुनम्)** **(वरत्रा:)** रश्मय: **(बध्यन्ताम्)** **(शुनम्)** **(अष्ट्राम्)** कृषिसाधनावयवम् **(उत्)** **(इङ्गय)** गमय॥४॥

अन्वय:-हे कृषीवल! यथा वाहा: शुनं गच्छन्तु नर: शुनं कुर्वन्तु लाङ्गलं शुनं कृषतु वरत्रा: शुनं बध्यन्तां तथाऽष्ट्रां शुनमुदिङ्गय॥४॥

भावार्थ:-कृषीवला उत्तमानि हलादिसामग्रीवृषभबीजानि सम्पाद्य क्षेत्राणि सुष्ठु निष्पाद्य तत्रोत्तमान्यन्नानि निष्पादयन्तु॥४॥

पदार्थ:-हे खेती करने वाले जन! जैसे **(वाहा:)** बैल आदि पशु **(शुनम्)** सुख को प्राप्त हों **(नर:)** मुखिया कृषीवल **(शुनम्)** सुख को करें **(लाङ्गलम्)** हल का अवयव **(शुनम्)** सुख जैसे हो, वैसे **(कृषतु)** पृथिवी में प्रविष्ट हो और **(वरत्रा:)** बैल की रस्सी **(शुनम्)** सुखपूर्वक **(बध्यन्ताम्)** बांधी जायें, वैसे **(अष्ट्राम्)** खेती के साधन के अवयव को **(शुनम्)** सुखपूर्वक **(उत्, इङ्गय)** ऊपर चलाओ॥४॥

भावार्थ:-खेती करने वाले जन उत्तम हल आदि सामग्री, वृषभ और बीजों को इकट्ठे करके

खेतों को उत्तम प्रकार जोत कर उनमें उत्तम अन्नों को उत्पन्न करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनासीराविमां वाचं जुषेथां यद्दिवि चक्रथुः पयः। तेनेमामुप सिञ्चतम्॥५॥

शुनासीरौ। इमाम्। वाचम्। जुषेथाम्। यत्। दिवि। चक्रथुः। पयः। तेन। इमाम्। उप। सिञ्चतम्॥५॥

पदार्थः-(शुनासीरौ) क्षेत्रपतिभृत्यौ **(इमाम्)** कृषिविद्याप्रकाशिकां **(वाचम्)** वाणीम् **(जुषेथाम्)** सेवेथाम् **(यत्)** यम् **(दिवि)** कृषिविद्याप्रकाशे **(चक्रथुः) (पयः)** उदकम् **(तेन) (इमाम्)** भूमिम् **(उप) (सिञ्चतम्)**॥५॥

अन्वयः-हे शुनासीरौ! युवां यद्यामिमां वाचं पयश्च दिवि चक्रथुस्ते जुषेथां तेनेमामुप सिञ्चतम्॥५॥

भावार्थः-कृषीवलाः पूर्वं कृषिविद्यां गृहीत्वा पुनर्यथायोग्यां कृषिं कृत्वा धनधान्ययुक्ताः सदा भवन्तु॥५॥

पदार्थः-हे **(शुनासीरौ)** क्षेत्र के स्वामी और भृत्य! आप दोनों **(यत्)** जिस **(इमाम्)** इस कृषिविद्या की प्रकाश करने वाली **(वाचम्)** वाणी और **(पयः)** जल को **(दिवि)** कृषिविद्या के प्रकाश में **(चक्रथुः)** करते हैं उनकी **(जुषेथाम्)** सेवा करो **(तेन)** इससे **(इमाम्)** इस भूमि को **(उप, सिञ्चतम्)** सींचो॥५॥

भावार्थः-खेती करने वाले जन प्रथम खेती के करने की विद्या को ग्रहण करके पश्चात् यथायोग्य खेती कर धन और धान्य से युक्त सदा हों॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अर्वाची सुभगे भव सीते वन्दामहे त्वा।

यथा नः सुभगासंसि यथा नः सुफलासंसि॥६॥

अर्वाची। सुऽभगे। भव। सीते। वन्दामहे। त्वा। यथा। नः। सुऽभगा। असंसि। यथा। नः। सुऽफला। असंसि॥६॥

पदार्थः-(अर्वाची) याऽर्वागधोऽञ्चति **(सुभगे)** सुष्ठ्वैश्वर्य्यवर्द्धिके **(भव) (सीते)** हलादिकर्षणावयवाप्रेनिर्मिता **(वन्दामहे)** कामयामहे **(त्वा)** त्वाम् **(यथा) (नः)** अस्माकम् **(सुभगा)** सौभाग्ययुक्ता **(असंसि)** असि। अत्र **बहुलं छन्दसी**ति शपो लुगभावः। **(यथा) (नः)** अस्माकम् **(सुफला)** शोभनानि फलानि यस्यां सा **(असंसि)**॥६॥

अन्वयः-हे सुभगे! यथाऽर्वाची सीते सीतास्ति तथा त्वं भव यथा भूमिः सुभगास्ति तथा त्वं नोऽससि यथा भूमिः सुफलास्ति तथा त्वं नोऽससि, अतो वयं त्वा वन्दामहे॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे मनुष्या! यथा सुष्ठु सम्पादिता क्षेत्रभूमिरुत्तमानि शस्यानि जनयति तथैव ब्रह्मचर्य्येण प्राप्तविद्यः सुसन्तानान् सूते यथा भूमिराज्यमैश्वर्य्यकरं वर्त्तते तथा परस्परं प्रीतौ स्त्रीपुरुषौ महैश्वर्य्यौ भवतः॥६॥

पदार्थः-हे **(सुभगे)** उत्तम प्रकार ऐश्वर्य्य की बढ़ाने वाली **(यथा)** जैसे **(अर्वाची)** नीचे को चलने वाली **(सीते)** हल आदि के खींचने वाले अवयव लोहे से बनाई गयी सीता है, वैसे आप **(भव)** हूजिये और जैसे भूमि **(सुभगा)** सौभाग्य से युक्त है वैसे तू **(नः)** हम लोगों की **(अससि)** है और **(यथा)** जैसे भूमि **(सुफला)** उत्तम फलों से युक्त है, वैसे तू **(नः)** हम लोगों की **(अससि)** है, इससे हम लोग **(त्वा)** तेरी **(वन्दामहे)** कामना करते हैं॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे मनुष्यो! जैसे उत्तम प्रकार सम्पादित खेत की धरती उत्तम अन्नों को उत्पन्न करती है, वैसे ही ब्रह्मचर्य्य से विद्या को प्राप्त हुआ जन उत्तम सन्तानों को उत्पन्न करता है और जैसे भूमि का राज्य ऐश्वर्य्यकारक है, वैसे परस्पर प्रसन्न स्त्री और पुरुष बड़े ऐश्वर्य्यवाले होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषानु यच्छतु।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम्॥७॥

इन्द्रः। सीताम्। नि। गृह्णातु। ताम्। पूषा। अनु। यच्छतु। सा। नः। पयस्वती। दुहाम्। उत्तराम्ऽउत्तराम्। समाम्॥७॥

पदार्थः-**(इन्द्रः)** भूमेदारयिता **(सीताम्)** भूमिकर्षिकाम् **(नि)** **(गृह्णातु)** **(ताम्)** **(पूषा)** पुष्टिकर्त्ता **(अनु)** **(यच्छतु)** अनुगृह्णातु **(सा)** **(नः)** अस्मभ्यम् **(पयस्वती)** बहूदकयुक्ता **(दुहाम्)** प्रापूरिकाम् **(उत्तरामुत्तराम्)** पुनः पुनर्निर्मिताम् **(समाम्)** शुद्धाम्॥७॥

अन्वयः-हे कृषीवला! या पयस्वती नोऽनु यच्छतु सा युष्मानपि प्राप्नोतु यां सीतामिन्द्रो नि गृह्णातु तां दुहामुत्तरामुत्तरां समां सीतां पूषानु यच्छतु तां यूयमपि सम्प्रयुङ्ध्वम्॥७॥

भावार्थः-सर्वे कृषीवला विदुषां कर्षकानामनुकरणं कृत्वा कृष्युन्नतिं निष्पादयेयुः॥७॥

पदार्थः-हे खेती करने वाले जनो! जो **(पयस्वती)** बहुत जल से युक्त **(नः)** हम लोगों के लिये **(अनु, यच्छतु)** अनुग्रह करे **(सा)** वह आप लोगों को भी प्राप्त हो और जिस **(सीताम्)** भूमि जुताने

वाले वस्तु को **(इन्द्रः)** भूमि को दारण करानेवाला **(नि, गृह्णातु)** ग्रहण करे **(ताम्)** उस **(दुहाम्)** प्रपूरण करने वाली **(उत्तरामुत्तराम्)** फिर-फिर बनाई गई **(समाम्)** शुद्ध सीता अर्थात् भूमि जुताने वाले वस्तु को **(पूषा)** पुष्टि करनेवाला देवे, उसका आप लोग भी संयोग करें॥७॥

भावार्थः-सब कृषिकर्म करने वाले जन विद्वान् क्षेत्र जोतने वालों का अनुकरण करके कृषि की वृद्धि को उत्पन्न करें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनं नः फाला वि कृषन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अभि यन्तु वाहैः।
शुनं पर्जन्यो मधुना पयोभिः शुनासीरा शुनमस्मासु धत्तम्॥८॥९॥

शुनम्। नः। फालाः। वि। कृषन्तु। भूमिम्। शुनम्। कीनाशाः। अभि। यन्तु। वाहैः। शुनम्। पर्जन्यः। मधुना। पयःऽभिः। शुनासीरा। शुनम्। अस्मासु। धत्तम्॥८॥

पदार्थः-(शुनम्) सुखम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(फालाः)** अयोनिर्मिता भूमिविलेखनार्थाः **(वि) (कृषन्तु) (भूमिम्) (शुनम्)** सुखम् **(कीनाशाः)** कृषीवलाः **(अभि) (यन्तु) (वाहैः)** वृषभादिभिः **(शुनम्) (पर्जन्यः)** मेघः **(मधुना)** मधुरादिगुणेन **(पयोभिः)** उदकैः **(शुनासीरा)** सुखदस्वामिभृत्यौ कृषीवलौ **(शुनम्) (अस्मासु) (धत्तम्)** धरतम्॥८॥

अन्वयः-यथा फाला वाहैर्नो भूमिं शुनं वि कृषन्तु कीनाशाः शुनमभि यन्तु पर्जन्यो मधुना पयोभिः शुनमभिवर्षतु तथा शुनासीरास्मासु शुनं धत्तम्॥८॥

भावार्थः-कृषीवला मनुष्या अत्युत्तमानि फालादीनि निर्माय हलादिना भूमिमुत्तमां निष्कृष्योत्तमं सुखं प्राप्नुवन्तु तथैवान्येभ्यो राजादिभ्यः सुखं प्रयच्छन्त्विति॥८॥

अत्र कृषिक्रियावर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तपञ्चाशत्तमं सूक्तं नवमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जैसे **(फालाः)** लोहे से बनाई गई भूमि के खोदने के लिये वस्तुयें **(वाहैः)** बैल आदिकों के द्वारा **(नः)** हम लोगों के लिये **(भूमिम्)** भूमि को **(शुनम्)** सुखपूर्वक **(वि, कृषन्तु)** खोदें **(कीनाशाः)** कृषिकर्म्म करने वाले **(शुनम्)** सुख को **(अभि, यन्तु)** प्राप्त हों **(पर्जन्यः)** मेघ **(मधुना)** मधुर आदि गुण से **(पयोभिः)** और जलों से **(शुनम्)** सुख को वर्षावे, वैसे **(शुनासीरा)** अर्थात् सुख

देने वाले स्वामी और भृत्य कृषिकर्म करनेवाले तुम दोनों **(अस्मासु)** हम लोगों में **(शुनम्)** सुख को **(धत्तम्)** धारण करो॥८॥

भावार्थः-कृषिकर्म्म करनेवाले मनुष्यों को चाहिये कि उत्तम फाल आदि वस्तुओं को बनाय के हल आदि से भूमि को उत्तम करके अर्थात् गोड़ के उत्तम सुख को प्राप्त हों, वैसे ही अन्य राजा आदि के लिये सुख देवें॥८॥

इस सूक्त में कृषिकर्म्म के वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह सत्तावनवां सूक्त और नवम वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्याष्टपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य वामदेव ऋषिः। अग्निः सूर्यो वाऽपो वा गावो वा घृतं वा देवताः। १ निचृत्त्रिष्टुप्। २, ८-१० त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ४ अनुष्टुप्। ६, ७ निचृदनुष्टुप् छन्दः। ११ स्वराट् त्रिष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। ५ निचृदुष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथोदकविषयमाह॥

अब ग्यारह ऋचावाले अट्ठावनवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में उदकविषय को कहते हैं॥

समुद्रादूर्मिर्मधुमाँ उदारदुपांशुना सममृतत्वमानट्।
घृतस्य नाम गुह्यं यदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः॥ १॥

समुद्रात्। ऊर्मिः। मधुऽमान्। उत्। आरत्। उप। अंशुना। सम्। अमृतऽत्वम्। आनट्। घृतस्य। नाम। गुह्यम्। यत्। अस्ति। जिह्वा। देवानाम्। अमृतस्य। नाभिः॥ १॥

पदार्थः-(**समुद्रात्**) अन्तरिक्षात् (**ऊर्मिः**) जलसमूहः (**मधुमान्**) मधुरगुणः (**उत्**) (**आरत्**) उत्कृष्टतया प्राप्नोति (**उप**) (**अंशुना**) सूर्य्येण (**सम्**) (**अमृतत्वम्**) (**आनट्**) व्याप्नोति (**घृतस्य**) उदकस्य (**नाम**) (**गुह्यम्**) गुप्तम् (**यत्**) (**अस्ति**) (**जिह्वा**) (**देवानाम्**) विदुषां दिव्यानां गुणानां वा (**अमृतस्य**) अमृतात्मकस्य कारणस्य (**नाभिः**) नाभिरिव॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योंऽशुना समुद्रान्मधुमानूर्मिरुपोदारदमृतत्वं समानट् यद् घृतस्य गुह्यं नामास्ति तदमृतस्य नाभिर्देवानां जिह्वेवास्ति तद्विद्यां यूयं विजानीत॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! भूमेः सकाशात् सूर्यप्रतापेन वायुद्वारा यावदुदकमन्तरिक्षं गच्छति तत्रेश्वरसृष्टिक्रमेण मधुरादिगुणयुक्तं भूत्वा वर्षित्वाऽमृतात्मकं भवतीति विजानीत॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अंशुना**) सूर्य से (**समुद्रात्**) अन्तरिक्ष से (**मधुमान्**) मधुरगुणयुक्त (**ऊर्मिः**) जल का समूह (**उप, उत्, आरत्**) उत्तमता से प्राप्त होता और (**अमृतत्वम्**) अमृतपन को (**सम्, आनट्**) व्याप्त होता है (**यत्**) जो (**घृतस्य**) जल की (**गुह्यम्**) गुप्त (**नाम**) संज्ञा (**अस्ति**) है, वह (**अमृतस्य**) अमृतात्मक कारण की (**नाभिः**) नाभि के सदृश और (**देवानाम्**) विद्वानों वा श्रेष्ठ गुणों की (**जिह्वा**) जिह्वा के सदृश है, उस विद्या को आप लोग जानो॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! भूमि के समीप से सूर्य्य के प्रताप से वायु के द्वारा जितना जल आकाश में जाता है, वहाँ ईश्वर की सृष्टि के क्रम से मधुर आदि गुणों से युक्त होके और वह वर्ष के अमृतस्वरूप होता है, यह जानो॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

व॒यं नाम॒ प्र ब्र॑वामा घृ॒तस्या॒स्मिन् य॒ज्ञे धा॑रयामा॒ नमो॑भिः।
उप॑ ब्र॒ह्मा शृ॑णवच्छ॒स्यमा॑नं॒ चतुः॑शृङ्गोऽवमीद् गौ॒र ए॒तत्॥ २॥

व॒यम्। नाम॑। प्र। ब्र॒वा॒म॒। घृ॒तस्य॑। अ॒स्मिन्। य॒ज्ञे। धा॒र॒या॒म॒। नमः॑ऽभि। उप॑। ब्र॒ह्मा। शृ॒ण॒व॒त्। श॒स्यमा॑नम्। चतुः॑ऽशृङ्गः। अ॒व॒मी॒त्। गौ॒रः। ए॒तत्॥ २॥

पदार्थः-(**वयम्**) (**नाम**) (**प्र**) (**ब्रवाम**) उपदिशेम। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**घृतस्य**) उदकस्य (**अस्मिन्**) (**यज्ञे**) वर्षादिजलव्यवहारे (**धारयाम**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**नमोभिः**) अन्नादिभिः (**उप**) (**ब्रह्मा**) चतुर्वेदवित् (**शृणवत्**) शृणुयात् (**शस्यमानम्**) प्रशंसनीयम् (**चतुःशृङ्गः**) चत्वारो वेदाः शृङ्गाणीव यस्य (**अवमीत्**) उपदिशेत् (**गौरः**) यो गवि सुशिक्षितायां वाचि रमते सः (**एतत्**)॥ २॥

अन्वयः-चतुःशृङ्गो ब्रह्मा यं शस्यमानमुप शृणवद् गौरो यदवमीत्तदेतद् घृतस्य नाम वयं प्र ब्रवामास्मिन् यज्ञे नमोभिस्तं धारयाम॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्याश्चतुर्वेदविदाप्तो यादृशमुपदेशं कुर्य्याद् यं सिद्धान्तं निश्चिनुयात् तादृशमेव वयमप्युपदिशेम निश्चिनुयाम च॥ २॥

पदार्थः-(**चतुःशृङ्गः**) चारवेद शृङ्गों अर्थात् शिखरों के सदृश जिसके ऐसा (**ब्रह्मा**) चार वेदों का जानने वाला जिस (**शस्यमानम्**) प्रशंसा करने योग्य को (**उप, शृणवत्**) समीप में सुने और (**गौरः**) उत्तम प्रकार शिक्षित वाणी में रमने वाला जो (**अवमीत्**) उपदेश देवे सो (**एतत्**) इस (**घृतस्य**) जल की (**नाम**) संज्ञा को (**वयम्**) हम लोग (**प्र, ब्रवाम**) उपदेश देवें और (**अस्मिन्**) इस (**यज्ञे**) वर्षा आदि जलव्यवहार में (**नमोभिः**) अन्न आदि पदार्थों से उसको (**धारयाम**) धारण करावें॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! चारवेद का जानने वाला यथार्थवक्ता जन जैसा उपदेश करे और जिस सिद्धान्त का निश्चय करे, वैसे सिद्धान्त का हम लोग भी उपदेश और निश्चय करें॥ २॥

अथेश्वरविज्ञानमाह॥

अब अगले मन्त्र में ईश्वर के विज्ञान को कहते हैं॥

च॒त्वारि॒ शृङ्गा॒ त्रयो॑ अ॒स्य॒ पादा॒ द्वे शी॒र्षे स॒प्त हस्ता॑सो अ॒स्य।
त्रिधा॑ ब॒द्धो वृ॑ष॒भो रो॑रवीति म॒हो दे॒वो मर्त्याँ॒ आ वि॑वेश॥ ३॥

च॒त्वारि॑। शृङ्गा॑। त्रयः॑। अ॒स्य॒। पादाः॑। द्वे इति॑। शी॒र्षे इति॑। स॒प्त। हस्ता॑सः। अ॒स्य॒। त्रिधा॑। ब॒द्धः। वृ॒ष॒भः। रो॒र॒वी॒ति॒। म॒हः। दे॒वः। मर्त्या॑न्। आ। वि॒वे॒श॒॥ ३॥

पदार्थः-(**चत्वारि**) चत्वारो वेदाः (**शृङ्गा**) शृङ्गाणीव (**त्रयः**) कर्मोपासनाज्ञानानि (**अस्य**) धर्म्यव्यवहारस्य (**पादाः**) पत्तव्याः (**द्वे**) अभ्युदयनिःश्रेयसे (**शीर्षे**) शिरसी इव (**सप्त**) पञ्च ज्ञानेन्द्रियाणि

वा कर्म्मेन्द्रियाण्यन्तःकरणमात्मा च **(हस्तासः)** हस्तवद्वर्त्तमानाः **(अस्य)** धर्मयुक्तस्य नित्यनैमित्तिकस्य **(त्रिधा)** श्रद्धापुरुषार्थयोगाभ्यासैः **(बद्धः)** **(वृषभः)** सुखानां वर्षणात् **(रोरवीति)** भृशमुपदिशति **(महः)** महान् पूजनीयः **(देवः)** स्वप्रकाशः सर्वसुखप्रदाता **(मर्त्यान्)** मरणधर्मान् मनुष्यादीन् **(आ)** समन्तात् **(विवेश)** व्याप्नोति॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो महो देवो मर्त्याना विवेश यो वृषभस्त्रिधा बद्धो रोरवीति अस्य परमात्मनो बोधस्य द्वे शीर्षे त्रयः पादाश्चत्वारि शृङ्गा च युष्माभिर्वेदितव्यान्यस्य च सप्त हस्तासस्त्रिधा बद्धो व्यवहारश्च वेदितव्यः॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! अस्मिन् परमेश्वरव्याप्ते जगति यज्ञस्य चत्वारो वेदा नामाख्यातोपसर्गनिपाता विश्वतैजसप्राज्ञतुरीयधर्मार्थकाममोक्षाश्चेत्यादीनि शृङ्गाणि, त्रीणि सवनानि त्रयः कालाः कर्म्मोपासनाज्ञानानि मनोवाक्छरीराणि चेत्यादीनि पादाः, द्वौ व्यवहारपरमार्थौ नित्यकार्यौ शब्दात्मानावुदगयनप्रायणीया अध्यापकोपदेशकौ चेत्यादीनि शिरांसि, गायत्र्यादीनि सप्त छन्दांसि सप्त विभक्तयः सप्त प्राणाः पञ्च कर्मेन्द्रियाणि शरीरमात्मा चेत्यादयो हस्तास्त्रिषु मन्त्रब्राह्मणकल्पेषूरसि कण्ठे शिरसि श्रवणमनननिदिध्यासनेषु ब्रह्मचर्य्यसुकर्मसुविचारेषु सिद्धोऽयं व्यवहारो महान् सत्कर्तव्यो मनुष्येषु प्रविष्टोऽस्तीति सर्वे विजानन्तु॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(महः)** बड़ा सेवा और आदर करने योग्य **(देवः)** स्वप्रकाशस्वरूप और सब को सुख देने वाला **(मर्त्यान्)** मरणधर्मवाले मनुष्य आदिकों को **(आ)** सब प्रकार से **(विवेश)** व्याप्त होता है **(वृषभः)** और जो सुखों को वर्षाने वाला **(त्रिधा)** तीन श्रद्धा, पुरुषार्थ और योगाभ्यास से **(बद्धः)** बँधा हुआ **(रोरवीति)** निरन्तर उपदेश देता है **(अस्य)** इस धर्म से युक्त नित्य और नैमित्तिक परमात्मा के बोध के **(द्वे)** दो उन्नति और मोक्षरूप **(शीर्षे)** शिरस्थानापन्न **(त्रयः)** तीन अर्थात् कर्म, उपासना और ज्ञानरूप **(पादाः)** चलने योग्य पैर **(चत्वारि)** और चार वेद **(शृङ्गा)** शृङ्गों के सदृश आप लोगों को जानने योग्य हैं और **(अस्य)** इस धर्म व्यवहार के **(सप्त)** पांच ज्ञानेन्द्रिय वा पांच कर्मेन्द्रिय अन्तःकरण और आत्मा ये सात **(हस्तासः)** हाथों के सदृश वर्त्तमान हैं और उक्त तीन प्रकार से बँधा हुआ व्यवहार भी जानने योग्य है॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! इस परमेश्वर से व्याप्त संसार में यज्ञ के चार वेद और नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात; विश्व, तैजस, प्राज्ञ, तुरीय और धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष आदि शृङ्ग हैं। तीन सवन अर्थात् त्रैकालिक यज्ञकर्म; तीन काल; कर्म, उपासना, ज्ञान; मन, वाणी, शरीर इत्यादि पाद हैं। दो व्यवहार और परमार्थ; नित्य, कार्य्य; शब्दस्वरूप उदगयन और प्रायणीय; अध्यापक और उपदेशक इत्यादि शिर हैं। गायत्री आदि सात छन्द सात विभक्तियाँ, सात प्राण, पांच कर्म्मेन्द्रिय शरीर और आत्मा इत्यादि **[सात]** हस्त हैं। तीन मन्त्र, ब्राह्मण, कल्प; और हृदय, कण्ठ, शिर में; श्रवण, मनन, निदिध्यासनों

में; ब्रह्मचर्य्य, श्रेष्ठ कर्म, उत्तम विचारों के बीच सिद्ध यह व्यवहार महान् सत्कर्त्तव्य और मनुष्यों के बीच प्रविष्ट है, यह सब जानें॥३॥

अथ सूर्यदृष्टान्तेन विद्वद्विषयमाह॥

अब सूर्यदृष्टान्त से विद्वद्विषय को कहते हैं॥

त्रिधा॑ हि॒तं प॒णिभि॑र्गु॒ह्यमा॑नं॒ गवि॑ दे॒वासो॑ घृ॒तमन्व॑विन्दन्।

इन्द्र॒ एकं॒ सूर्य॒ एकं॑ जजान वे॒नादेकं॑ स्व॒धया॒ निष्ट॑तक्षुः॥४॥

त्रिधा॑। हि॒तम्। प॒णिऽभिः॑। गु॒ह्यमा॑नम्। गवि॑। दे॒वासः॑। घृ॒तम्। अनु॑। अ॒वि॒न्द॒न्। इन्द्रः॑। एक॑म्। सूर्यः॑। एक॑म्। ज॒जा॒न॒। वे॒नात्। एक॑म्। स्व॒धया॑। निः। त॒त॒क्षुः॥४॥

पदार्थः-(**त्रिधा**) त्रिभिः प्रकारैः (**हितम्**) स्थितम् (**पणिभिः**) प्रशंसितैर्व्यवहर्तृभिः (**गुह्यमानम्**) गोप्यमानम् (**गवि**) वाचि (**देवासः**) विद्वांसः (**घृतम्**) घृतमिवानन्दप्रदं विज्ञानम् (**अनु**) (**अविन्दन्**) लभन्ते (**इन्द्रः**) विद्युत् (**एकम्**) (**सूर्यः**) सविता (**एकम्**) निःश्रेयसम् (**जजान**) जनयति (**वेनात्**) कमनीयात् परमात्मनः सकाशात् (**एकम्**) अव्यक्तम् (**स्वधया**) स्वकीयया धृतया प्रज्ञया (**निः**) नितराम् (**ततक्षुः**) विस्तृण्वन्ति॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा देवासः पणिभिः सह गवि गुह्यमानं त्रिधा हितं घृतमिवान्वविन्दन् स्वधया निष्टतक्षुर्यथेन्द्रो वेनादेकं सूर्यश्चैकं जजान तथा यूयमप्येकमनुतिष्ठत॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा प्रशंसितैर्व्यवहारैः सह वर्त्तमाना विद्वांसः सुशिक्षितां वाचं प्रज्ञां च लब्ध्वा विद्युदादिविद्यां प्राप्य परमेश्वरं बुद्ध्वा तदाज्ञामनुसृत्य सुखं वितन्वन्ति तथैव सर्वे समाचरन्तु॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**देवासः**) विद्वान् जन (**पणिभिः**) प्रशंसित व्यवहार करने वालों के साथ (**गवि**) वाणी में (**गुह्यमानम्**) गुप्त कराया जाता (**त्रिधा**) तीन प्रकारों से (**हितम्**) स्थित और (**घृतम्**) घृत के सदृश आनन्द देने वाले विज्ञान को (**अनु, अविन्दन्**) अनुकूल प्राप्त होते और (**स्वधया**) अपनी धारण की हुई बुद्धि से (**निः, ततक्षुः**) निरन्तर विस्तार करते हैं। और जैसे (**इन्द्रः**) बिजुली (**वेनात्**) सुन्दर परमात्मा के समीप से (**एकम्**) अव्यक्त अर्थात् प्रकृति को और (**सूर्यः**) सूर्य (**एकम्**) एक को (**जजान**) उत्पन्न करता है, वैसे आप लोग भी (**एकम्**) निरन्तर सुख अर्थात् मोक्ष को सिद्ध करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे श्रेष्ठ व्यवहारों के साथ वर्त्तमान विद्वान् जन, उत्तम प्रकार शिक्षित वाणी और बुद्धि को तथा बिजुली आदि की विद्या को प्राप्त हो परमेश्वर को जान और उसकी आज्ञा पालन करके सुख का विस्तार करते हैं, वैसे ही सब लोग अच्छा आचरण करें॥४॥

अथ मेघविषयमाह॥

अब मेघविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एता अर्षन्ति हृद्यात् समुद्राच्छतव्रजा रिपुणा नावचक्षे।

घृतस्य धारा अभि चाकशीमि हिरण्ययो वेतसो मध्य आसाम्॥५॥१०॥

एताः। अर्षन्ति। हृद्यात्। समुद्रात्। शतऽव्रजाः। रिपुणा। न। अवऽचक्षे। घृतस्य। धाराः। अभि। चाकशीमि। हिरण्ययः। वेतसः। मध्ये। आसाम्॥५॥

पदार्थः-(**एताः**) (**अर्षन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**हृद्यात्**) हृदयस्य प्रियात् (**समुद्रात्**) अन्तरिक्षात् (**शतव्रजाः**) अपरिमितगतयः (**रिपुणा**) शत्रुणा (**न**) (**अवचक्षे**) प्रख्यातम् (**घृतस्य**) उदकस्य (**धाराः**) (**अभि, चाकशीमि**) प्रकाशयामि (**हिरण्ययः**) तेजोमयः सुवर्णमयो वा (**वेतसः**) कमनीयः (**मध्ये**) (**आसाम्**) धाराणाम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽऽसां मध्ये हिरण्ययो वेतसोऽहं या घृतस्यैताः शतव्रजा धारा हृद्यात् समुद्रादर्षन्ति ता अवचक्षेऽभि चाकशामि रिपुणा सह न वसामि तथा यूयं विजानीत॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथाऽऽकाशात् पतिता वर्षा सर्वं जगत् पालयन्ति तथैव युष्मन्निसृता विज्ञानस्य वाचः सर्वं जगद्रक्षन्ति॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**आसाम्**) इन धाराओं के (**मध्ये**) मध्य में (**हिरण्ययः**) तेजःस्वरूप वा सुवर्णस्वरूप (**वेतसः**) सुन्दर मैं जो (**घृतस्य**) जल की (**एताः**) ये (**शतव्रजाः**) अपरिमित [गति] वाली (**धाराः**) धारायें (**हृद्यात्**) हृदय के प्रिय (**समुद्रात्**) अन्तरिक्ष से (**अर्षन्ति**) प्राप्त होती हैं, उनको (**अवचक्षे**) कहने को (**अभि, चाकशीमि**) प्रकाश करता हूँ और (**रिपुणा**) शत्रु के साथ (**न**) नहीं वसता हूँ, वैसे आप लोग जानो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जैसे आकाश से गिरी हुई वर्षा सब जगत् का पालन करती हैं, वैसे ही आप लोगों से निकली हुई विज्ञान की वाणियाँ सब जगत् की रक्षा करती हैं॥५॥

पुनरुदकविषयमाह॥

फिर उदकविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सम्यक्स्रवन्ति सरितो न धेना अन्तर्हृदा मनसा पूयमानाः।

एते अर्षन्त्यूर्मयो घृतस्य मृगाइव क्षिपणोरीषमाणाः॥६॥

सम्यक्। स्रवन्ति। सरितः। न। धेनाः। अन्तः। हृदा। मनसा। पूयमानाः। एते। अर्षन्ति। ऊर्मयः। घृतस्य। मृगाःऽइव। क्षिपणोः। ईषमाणाः॥६॥

पदार्थः-(**सम्यक्**) (**स्रवन्ति**) चलन्ति (**सरितः**) नद्यः (**न**) इव (**धेनाः**) विद्यायुक्ता वाचः (**अन्तः, हृदा**) अन्तःस्थितेनात्मना (**मनसा**) शुद्धेनान्तःकरणेन (**पूयमानाः**) पवित्रतां कुर्वाणाः (**एते**) (**अर्षन्ति**) गच्छन्ति (**ऊर्मयः**) तरङ्गाः (**घृतस्य**) उदकस्य (**मृगाइव**) (**क्षिपणोः**) प्रेषकात् (**ईषमाणाः**) गच्छन्तः॥६॥

अन्वयः-येषां विदुषामन्तर्हृदा मनसा पूयमाना धेनाः सरितो न सम्यक् स्रवन्ति त एते घृतस्योर्मयः क्षिपणोर्मृगाइवेषमाणाः सर्वां कीर्त्तिमर्षन्ति॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये सत्यं वदन्ति त एव पवित्रात्मानो भूत्वा जलवच्छान्ताः सन्तो मृगा इव सद्य इष्टं सुखं प्राप्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-जिन विद्वानों के (**अन्तः, हृदा**) अन्तर्विराजमान आत्मा और (**मनसा**) शुद्ध अन्तःकरण से (**पूयमानाः**) पवित्रता करती हुई (**धेनाः**) विद्यायुक्त वाणियाँ (**सरितः**) नदियों के (**न**) सदृश (**सम्यक्**) उत्तम प्रकार (**स्रवन्ति**) चलती हैं सो (**एते**) ये विद्वान् (**घृतस्य**) जल की (**ऊर्मयः**) लहरियों और (**क्षिपणोः**) प्रेरणा देने वाले से (**मृगाइव**) हरिणों के सदृश (**ईषमाणः**) चलते हुए सब कीर्ति को (**अर्षन्ति**) प्राप्त होते हैं॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो सत्य कहते हैं वे ही पवित्रात्मा होके जल के सदृश शान्त होते हुए मृगों के सदृश शीघ्र ही अपेक्षित सुख को प्राप्त होते हैं॥६॥

अथ जलदृष्टान्तेन वाग्विषयमाह॥

अब जलदृष्टान्त से वाणीविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः।

घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः॥७॥

सिन्धोःऽइव। प्रऽअध्वने। शूघनासः। वातऽप्रमियः। पतयन्ति। यह्वाः। घृतस्य। धाराः। अरुषः। न। वाजी। काष्ठाः। भिन्दन्। ऊर्मिभिः। पिन्वमानः॥७॥

पदार्थः-(**सिन्धोरिव**) नद्या इव (**प्राध्वने**) प्रकृष्टतया गन्तव्याय मार्गाय (**शूघनासः**) आशुगन्त्र्यः (**वातप्रमियः**) या वातं वायुं प्रमिन्वन्ति ताः (**पतयन्ति**) पतिरिवाचरन्ति (**यह्वाः**) महत्यः (**घृतस्य**) जलस्य (**धाराः**) (**अरुषः**) अरुणरूपः (**न**) इव (**वाजी**) अश्वः (**काष्ठाः**) दिश इव तटीः (**भिन्दन्**) विदृणन्ति (**ऊर्म्मिभिः**) तरङ्गैः (**पिन्वमानः**) प्रसादयन्॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! पिन्वमानोऽहं यथा शूघनासो यह्वा वातप्रमियः प्राध्वने सिन्धोरिव पतयन्त्यरुषो वाजी न घृतस्य धारा ऊर्म्मिभिः काष्ठा भिन्दँस्तथोपदेशान् वर्षयित्वाऽविद्यां भिनद्मि॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। येषां विदुषां नदीप्रवाहा इव सदुपदेशाश्चलन्ति अश्व इव दुःखान्तं गमयन्ति ते एव महान्तः सन्तः सन्ति॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(पिन्वमानः)** प्रसन्न करता हुआ मैं जैसे **(शूघनाशः)** शीघ्रगामिनी **(यह्वाः)** बड़ी **(वातप्रमियः)** वायु को मापने वाली और **(प्राध्वने)** उत्तम प्रकार से चलने योग्य मार्ग के लिये **(सिन्धोरिव)** नदियों के अर्थात् नदियों की तरङ्गों के समान **(पतयन्ति)** पति के सदृश आचरण करती हैं तथा **(अरुषः)** लाल रूप वाले **(वाजी)** घोड़ों के **(न)** सदृश **(घृतस्य)** जल की **(धाराः)** धारा **(ऊर्म्मिभिः)** तरङ्गों से **(काष्ठाः)** दिशाओं के समान तटों को **(भिन्दन्)** विदीर्ण करती हैं, वैसे उपदेशों की वृष्टि करके अविद्याओं का नाश करता हूँ॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जिन विद्वानों के नदियों के प्रवाह सदृश उत्तम उपदेश प्रचरित होते और घोड़ों के समान दुःखों के पार कराते हैं, वे ही बड़े श्रेष्ठ पुरुष हैं॥७॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वद्विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभि प्रवन्त समनेव योषाः कल्याण्य१ः स्मयमानासो अग्निम्।

घृतस्य धाराः समिधो नसन्त ता जुषाणो हर्यति जातवेदाः॥८॥

अभि। प्रवन्त। समनाऽइव। योषाः। कल्याण्यः। स्मयमानासः। अग्निम्। घृतस्य। धाराः। सम्ऽइधः। नसन्त। ताः। जुषाणः। हर्यति। जातऽवेदाः॥८॥

पदार्थः-**(अभि)** **(प्रवन्त)** गच्छन्तु **(समनेव)** समानमनस्का पतिव्रतेव **(योषाः)** स्त्रियः **(कल्याण्यः)** कल्याणकारिण्यः **(स्मयमानासः)** किञ्चिद्धसन्त्यो मितहासाः **(अग्निम्)** पावकम् **(घृतस्य)** आज्यस्य **(धाराः)** **(समिधः)** काष्ठानि **(नसन्त)** प्राप्नुवन्ति **(ताः)** **(जुषाणः)** प्रीतः सन् **(हर्यति)** कामयते **(जातवेदाः)** जातविज्ञानः॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा घृतस्य धाराः समिधश्चाग्निं नसन्त तथा कल्याण्यः स्मयमानासो योषाः समनेवाभीष्टान् पत्नीनभि प्रवन्त यथा ताः सुखं लभन्ते तथा विद्याधर्म्मौ जुषाणो जातवेदाः सर्वं प्रियं हर्यति॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथाग्नीन्धनसंयोगेन प्रकाशो जायते तथोत्तमाऽध्यापकाऽध्येतृसम्बन्धेन विद्याप्रकाशो भवति। यथा स्वयंवरौ स्त्रीपुरुषौ परस्परस्य सुखं कामयेते तथैवोत्पन्नविद्यायोगिनः सर्वस्य सुखं भावयन्ति॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(घृतस्य)** घृत की **(धाराः)** धारा और **(समिधः)** काष्ठ **(अग्निम्)** अग्नि को **(नसन्त)** प्राप्त होते हैं, वैसे **(कल्याण्यः)** कल्याण करने वाली **(स्मयमानासः)** कुछ हंसती हुई प्रमाणयुक्त हंसने वाली **(योषाः)** स्त्रियाँ **(समनेव)** तुल्य मन वाली पतिव्रता स्त्री के सदृश अभीष्ट

पतियों को **(अभि, प्रवन्त)** सम्मुख प्राप्त हों और जैसे **(ताः)** वे सुख को प्राप्त होती हैं, वैसे विद्या और धर्म का **(जुषाणः)** सेवन करता हुआ **(जातवेदाः)** विज्ञान से युक्त विद्वान् सब के प्रिय की **(हर्यति)** कामना करता है॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोमालङ्कार हैं। जैसे अग्नि और इन्धन के संयोग से प्रकाश होता है, वैसे उत्तम अध्यापक और पढ़ने वाले के सम्बन्ध से विद्या का प्रकाश होता है और जैसे स्वयंवर जिन्होंने किया ऐसे स्त्री-पुरुष परस्पर के सुख की कामना करते हैं, वैसे ही उत्पन्न हुई विद्या जिनको ऐसे योगी जन सब का सुख उत्पन्न कराते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कन्याइव वहतुमेतवा उ अञ्ज्यञ्जाना अभि चाकशीमि।

यत्र सोमः सूयते यत्र यज्ञो घृतस्य धारा अभि तत्पवन्ते॥९॥

कन्याःऽइव। वहतुम्। एतवै। ऊम् इति। अञ्जि। अञ्जानाः। अभि। चाकशीमि। यत्र। सोमः। सूयते। यत्र। यज्ञः। घृतस्य। धाराः। अभि। तत्। पवन्ते॥९॥

पदार्थः-**(कन्याइव)** यथा कुमार्य्यः **(वहतुम्)** वोढारम् **(एतवै)** प्राप्तुम् **(उ)** **(अञ्जि)** व्यक्तं सुलक्षणम् **(अञ्जानाः)** प्रकटयन्त्यः **(अभि)** **(चाकशीमि)** प्रकाशयामि **(यत्र)** **(सोमः)** ऐश्वर्यमोषधिगणो वा **(सूयते)** निष्पद्यते **(यत्र)** **(यज्ञः)** अनुष्ठातुमर्हो व्यवहारः **(घृतस्य)** प्रकाशस्य **(धाराः)** वाचः **(अभि)** **(तत्)** कर्म **(पवन्ते)** शोधयन्ति॥९॥

अन्वयः-या वहतुमेतवै कन्याइवाञ्ज्यञ्जाना घृतस्य धारा उ यत्र सोमो यत्र यज्ञः सूयते तत्कर्माभि पवन्ते ता अहमभि चाकशीमि॥९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा स्वयंवरा कन्या स्वसदृशं पतिं प्राप्तुमहर्निशं परीक्षयति पुरुषश्च तथाऽध्यापकोपदेशकौ परीक्षकौ स्याताम्, येन कर्म्मणैश्वर्य्यं क्रिया शुद्धिश्च जायते तदेव वचनं भाषितुं योग्यमस्ति॥९॥

पदार्थः-जो **(वहतुम्)** धारण करने वाले को **(एतवै)** प्राप्त होने की **(कन्याइव)** जैसे कुमारी वैसे **(अञ्जि)** व्यक्त उत्तम लक्षण को **(अञ्जानाः)** प्रकट करती हुई **(घृतस्य)** प्रकाशसम्बन्धिनी **(धाराः)** वाणियाँ **(उ)** और **(यत्र)** जहाँ **(सोमः)** ऐश्वर्य्य वा ओषधियों का समूह और **(यत्र)** जहाँ **(यज्ञः)** करने योग्य व्यवहार **(सूयते)** उत्पन्न होता है **(तत्)** उस कर्म्म को **(अभि, पवन्ते)** पवित्र कराती हैं, उनको मैं **(अभि, चाकशीमि)** प्रकाशित करता हूँ॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे स्वयंवर करने वाली कन्या अपने सदृश पति को प्राप्त होने की दिन-रात्रि परीक्षा करती है और ऐसे ही पुरुष परीक्षा करता है, वैसे अध्यापक और

उपदेशक परीक्षक होवें और जिस कर्म्म से ऐश्वर्य्य और क्रिया की शुद्धि होवे, वही वचन कहने योग्य है॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒भ्य॑र्षत सुष्टु॒तिं गव्य॑मा॒जिम॒स्मासु॑ भ॒द्रा द्रवि॑णानि धत्त।

इ॒मं य॒ज्ञं न॑यत दे॒वता॑ नो घृ॒तस्य॒ धारा॒ मधु॑मत्पवन्ते॥ १०॥

अ॒भि। अ॒र्ष॒त। सु॒ऽस्तु॒तिम्। गव्य॑म्। आ॒जिम्। अ॒स्मासु॑। भ॒द्रा। द्रवि॑णानि। ध॒त्त। इ॒मम्। य॒ज्ञम्। न॒य॒त। दे॒वता। नः॒। घृ॒तस्य॑। धारा॑ः। मधु॑ऽमत्। प॒व॒न्ते॒॥ १०॥

पदार्थः-(**अभि**) (**अर्षत**) प्राप्नुत (**सुष्टुतिम्**) शोभनां प्रशंसाम् (**गव्यम्**) गवे वाचे हितं व्यवहारम् (**आजिम्**) प्रसिद्धम् (**अस्मासु**) (**भद्रा**) भजनीयसुखप्रदानि (**द्रविणानि**) धनानि यशांसि वा (**धत्त**) (**इमम्**) (**यज्ञम्**) (**नयत**) प्रापयत (**देवता**) देव एव देवता विद्वानेव। **देवात्तल्** इति स्वार्थे तल् जातावेकवचनं च। (**नः**) अस्मान् (**घृतस्य**) प्रकाशितस्य बोधस्य (**धाराः**) प्रकाशिका वाचः (**मधुमत्**) प्रशस्तविज्ञानयुक्तं कर्म्म (**पवन्ते**) शोधयन्ति॥१०॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यूयमस्मास्वाजिं गव्यं भद्रा द्रविणानि च धत्त देवता यूयमिमं यज्ञं नो नयत यथा घृतस्य धारा मधुमत्पवन्ते तथाऽस्मान् पवित्रान् कृत्वा सुष्टुतिमभ्यर्षत॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। तेषामेव विदुषां प्रशंसा जायते ये सर्वेषु मनुष्येषूपदेशेनोत्तमान् गुणान् दधति॥१०॥

पदार्थः-हे विद्वानो! आप लोग (**अस्मासु**) हम लोगों में (**आजिम्**) प्रसिद्ध (**गव्यम्**) वाणी के लिये हितकारक व्यवहार को और (**भद्रा**) सेवने योग्य अपेक्षित सुख देने वाले (**द्रविणानि**) धनों वा यशों को (**धत्त**) धारण करो (**देवता**) विद्वान् जन आप लोग (**इमम्**) इस (**यज्ञम्**) यज्ञ को (**नः**) हम लोगों के लिये (**नयत**) प्राप्त कराओ और जैसे (**घृतस्य**) प्रकाशित बोध के (**धाराः**) प्रकाश करने वाली वाणियाँ (**मधुमत्**) श्रेष्ठविज्ञान से युक्त कर्म्म को (**पवन्ते**) शुद्ध करती हैं, वैसे हम लोगों को पवित्र करके (**सुष्टुतिम्**) उत्तम प्रशंसा को (**अभि, अर्षत**) प्राप्त हूजिये॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। उन्हीं विद्वानों की प्रशंसा होती है, जो सब मनुष्यों में उपदेश द्वारा उत्तम गुणों को धारण करते हैं॥१०॥

पुनरीश्वरविषयमाह॥

फिर ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

धाम॑न्ते॒ विश्वं॒ भुव॑न॒मधि॑ श्रि॒तम॒न्तः स॑मु॒द्रे हृ॒द्य१॒॑न्तरायु॑षि।

अपामनीके समिथे य आभृतस्तमश्याम मधुमन्तं त ऊर्मिम्॥ ११॥ ११॥ ५॥ ४॥

धामन्। ते। विश्वम्। भुवनम्। अधि। श्रितम्। अन्तः। समुद्रे। हृदि। अन्तः। आयुषि। अपाम्। अनीके। सम्ऽइथे। यः। आऽभृतः। तम्। अश्याम। मधुऽमन्तम्। ते। ऊर्मिम्॥ ११॥

पदार्थः-(**धामन्**) आधारे (**ते**) तव (**विश्वम्**) सर्वम् (**भुवनम्**) जगत् (**अधि**) उपरि (**श्रितम्**) स्थितम् (**अन्तः**) (**समुद्रे**) अन्तरिक्षे (**हृदि**) हृदये (**अन्तः**) मध्ये (**आयुषि**) जीवननिमित्ते प्राणे (**अपाम्**) प्राणानाम् (**अनीके**) सैन्ये (**समिथे**) सङ्ग्रामे (**यः**) (**आभृतः**) समन्ताद् धृतः (**तम्**) (**अश्याम**) प्राप्नुयाम (**मधुमन्तम्**) माधुर्य्यगुणोपेतम् (**ते**) तव (**ऊर्मिम्**) रक्षणादिकम्॥ ११॥

अन्वयः-हे भगवन्! यस्य ते धामन्नन्तः समुद्रे हृद्यन्तरायुष्यपामनीके समिथे विश्वं भुवनमधि श्रितं यस्ते विद्वद्भिराभृतस्तं मधुमन्तमूर्मिमानन्दं वयमश्याम तदुपासनां सततं कुर्य्याम॥ ११॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वरो जगदभिव्याप्य सर्वं धृत्वा संरक्ष्यान्तर्यामिरूपेण सर्वत्र व्याप्तोऽस्ति यस्य कृपया विज्ञानं चिरजीवनं विजयश्च प्राप्यते तमेव सततं भजतेति॥ ११॥

अत्रोदकमेघसूर्यवाग्विद्वदीश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेदितव्यम्॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्याणां परमविदुषां श्रीमद्विरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना निर्मिते संस्कृतार्य्यभाषाभ्यां विभूषित ऋग्वेदभाष्ये चतुर्थमण्डले पञ्चमोऽनुवाकोऽष्टपञ्चाशत्तमं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे भगवन्! जिस (**ते**) आपके (**धामन्**) आधाररूप (**अन्तः**) मध्य (**समुद्रे**) अन्तरिक्ष और (**हृदि**) हृदय के (**अन्तः**) मध्य में (**आयुषि**) जीवन के निमित्त प्राण में (**अपाम्**) प्राणों की (**अनीके**) सेना में और (**समिथे**) संग्राम में (**विश्वम्**) सम्पूर्ण (**भुवनम्**) जगत् (**अधि**) ऊपर (**श्रितम्**) स्थित है तथा (**यः**) जो (**ते**) आप की विद्वानों से (**आभृतः**) सब प्रकार धारण किया गया (**तम्**) उस (**मधुमन्तम्**) माधुर्य्यगुण से युक्त (**ऊर्मिम्**) रक्षा आदि व्यवहार और आनन्द को हम लोग (**अश्याम**) प्राप्त होवें, उस आपकी उपासना को निरन्तर करें॥ ११॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर जगत् को अभिव्याप्त होके सब को धारण कर और उत्तम प्रकार रक्षा करके अन्तर्य्यामिरूप से सर्वत्र व्याप्त है और जिसकी कृपा से विज्ञान, बहुत कालपर्य्यन्त जीवन और विजय प्राप्त होता है, उसी की निरन्तर सेवा करो॥ ११॥

इस सूक्त में जल, मेघ, सूर्य्य, वाणी, विद्वान् और ईश्वर के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह श्रीमान् परमहंसपरिव्राजकाचार्य्य परम विद्वान् श्रीमद् विरजानन्द सरस्वती स्वामी जी के शिष्य श्रीमान् दयानन्द सरस्वती स्वामी जी के बनाये हुए, संस्कृत और आर्य्यभाषा से सुशोभित, ऋग्वेदभाष्य के चतुर्थ मण्डल में पञ्चम अनुवाक, अट्ठावनवाँ सूक्त और ग्यारहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

इति चतुर्थं मण्डलम्॥